

जायसी की विस्व योजना

(A STUDY OF IMAGERY IN JAYASI)

(भागरा विद्वद्विद्यालय की पी-एच० डी० उपाधि के लिए
स्वीकृत शोध प्रबन्ध)

मेसिका

डॉ० सुधा सबसेना एम० ए० पी-एच० डी०

हिन्दी विभाग

गवर्नमेंट कॉलेज, तिमारपुर

दिल्ली विश्वविद्यालय दिल्ली ।

प्रकाशक



अशोध प्रकाशन

नई सड़क दिल्ली ६

प्रकाशक
असोक प्रकाशन
नई राइफ बिस्वी ६

सर्वाधिकार सुरक्षित हैं ।
प्रथम संस्करण १९६६
पृष्ठ १५००

मुद्रक
असोक प्रिंटिंग प्रेस, बिस्वी ।

प्रस्तावना

सामान्यतः काव्य के दो पक्ष सब स्वीकृत हैं मात्र पक्ष धीर कहा पक्ष । इसे ही हमने मर्मों में हम मात्र की अनुभूति धीर उसकी अभिव्यक्ति कह सकते हैं । अनुभूति धीर अभिव्यक्ति स्पष्ट रूप से दो अलग अलग तर्क हैं परन्तु काव्य में इनकी सत्ता अन्वयान्वाहित है । अनुभूति अभिव्यक्ति में स्थापित होकर ही साधारणीकृत हो सकती है धीर अभिव्यक्ति भी अनुभूति को सम्यक रूप से प्रस्तुत करके मजबूत हो सकती है । परन्तु अनुभूति सबैक अभिव्यक्त होकर काव्य नहीं बनती कल्पना का पुत्र ही उसे काव्यात्मक अभिव्यक्ति का रूप देता है । इस रूप में काव्य जगत में अनुभूति धीर अभिव्यक्ति के बीच का सोपान है कल्पना । धीर कल्पना का प्रमुख काय है विम्व विधान । कवि की कल्पना का अध्ययन उसकी विम्व-यात्रा का अध्ययन ही है ।

कवि क विम्व विधान का अध्ययन उसके समग्र व्यक्तित्व का अध्ययन है । वह हमें केवल कवि के काव्य तक सीमित नहीं रक्ता बल्कि कवि के एकदम निष्कट से पाता है वहां हम उनके संस्कारों मर्मों विचारों तथियों बहानों प्रभावों परिस्थितियों धीर मन स्थिति तक को स्पष्ट देख सकते हैं । बन्तुन विम्व दर्शन है जिनमें कवि के व्यक्तित्व का प्रतिबिम्ब दिखाई देता है । कवि के मात्र विम्व काव्य का अध्ययन भी करना है । काव्य में सविन्यात्मकता प्रेषणीयता प्राणवता-सभी विम्वों के द्वारा सम्भव हो सकती है । बस्तुतः कवि धीर काव्य का इतना समग्र अध्ययन विम्व के प्रतिरिक्त विम्वो अन्य प्रणाली में हो ही नहीं सकता ।

वहीं विम्व-विधान के आधार पर अध्ययन के प्रमुख सूत्री कवि जायसी का एक अध्ययन किया गया है जिनमें जायसी के कवि धीर काव्य दोनों का विशेषम विम्वेयक करने का प्रयत्न किया गया है । यह प्रयत्न हिन्दी भाषा के साहित्यिक शोध प्रबन्धों में एक नया माग है । यही तर्क इस दृष्टि को लेकर एक भी शोध प्रबन्ध हमारे सामने नहीं आया है । शोध प्रबन्धों में इतर आलोचना के क्षेत्र में भी कोई एक पुस्तक कल्पना धीर विम्व विधान पर नहीं है मुदतुन रूप से इसकी सामान्य चर्चा ही उपलब्ध है । पी केदारनाथसिंह ने अक्षय छापाखाना के संस्करण में कल्पना की चर्चा अपनी पुस्तक 'कल्पना धीर छायावाद' में की है जो इस विषय पर हिन्दी में एक मात्र पुस्तक बनी जा सकती है परन्तु विम्व विधान का विवेचन उसमें अल्पव्य है । विवेचनों में एक दृष्टि का लेकर अनेक प्रबन्ध धीर पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं जिनमें स्वतंत्रिय की 'शास्त्रीवर' में इमजरी एण्ड वाट इट टेलम दू अम फोगम की वि स्त्री धार इमजरी इन कोटम एंड सीनी बनीदीन की 'दि डेवेलपमेंट ऑफ रोडनरीरियन इमेजरी ग्दुब की 'एजिडारेसन एण्ड मेटाफिजिकल इमजरी' धारि धारि पुस्तकें विशेष उल्लेखनीय हैं ।

सापुनिक हिन्दी आलोचकों में यह विम्वों के अध्ययन की धीर गति बढ़नी जा रही है । परन्तु इनका मुख्य श्रव्य सापुनिक छापाखाना कवि है । प्राचीन कवियों

का बिम्ब विधान की दृष्टि से अध्ययन करने की धीर ने विशेष प्रयत्नशील नहीं है। प्राथमिक कवि स्वयं बिम्ब विधान की धीर प्रयत्नशील हैं। अंध भी साहित्य के प्रभाव से विदारक अभिव्यक्ति को बहु निरन्तर अधिक महत्व देते जा रहे हैं। परन्तु बिम्ब गुण विशेष की विशेषता नहीं है बल्कि प्रत्येक युग और प्रत्येक देश की कविता का एक सारबत तरह है। इसीलिए हमने प्राचीन कवि जो इन मायताओं (बिम्ब विषय) से अपरिचित वा का अध्ययन किया है। साहित्यिक परम्पराओं से अल्प मध्यकालीन कवियों की अपेक्षागत जामसी दूर धीर प्रकृत है। इससे साहित्य के सहज गुण उसके बाह्यमय म धा मने हैं जो अल्पमय कुरीत है। उसने धनने धनुमय को अपनी स्वतंत्र कल्पना दृष्टि से काव्य में उतारा है जिसके कारण उसके बिम्बों में बहु लचीलता लावनी और प्राणवला है जो अल्पमय असम्भव है। इस दृष्टि से देखने पर हमें कवि जामसी सभी सुखी कवियों से महान् धीर हिन्दी कवियों में धनाशा प्रतीत हुआ है। उसका बिम्ब विधान ही हम इस निष्कर्ष पर आता है।

प्रस्तुत प्रबन्ध में बिम्ब के सिद्धान्त पक्ष पर काफ़ी समय धीर बत दिया गया है जिसका कारण है। अभी तक हिन्दी धाराधना में बिम्ब पर बहुत कम विवेचन हुआ है जिसके कारण काव्य में बिम्ब की उपयोगिता महत्व स्वरूप कार्य कल्पना में उसका स्थान कल्पना के अल्प व्यापारों से अतर भाव से संबंध धारि धारि मूलभूत तर्कों से भी हम धनभिन्न हैं। बिम्ब के स्वरूप में विषय में अभी तक कोई निश्चित धारणा नहीं बन पाई है। इसी धमाधम को दूर करने का प्रयत्न प्रबन्ध में बिम्ब का सिद्धान्त पक्ष करता है जो भी यह हमारे सभी धनुसधानों की भूमिका है। बिम्ब के विषय में कोई मठ निश्चित किये बिना जामसी के बिम्ब विधान का अध्ययन असम्भव वा। धागे जो भी नाम बिम्ब विधान पर हुआ हम धाया है उसके लिए भी बहु नीब का काम होगा।

प्रबन्ध के प्रथम अध्याय में भारतीय धीर पादधत्य काव्य दृष्टियों का विवेचन है। काव्य को सभी में बिम्ब दृष्टिकोणों में देखा है धीर बिम्ब तर्कों को काव्य में प्रतिष्ठा दी है। परन्तु प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में सर्व स्वीकृत तरह बिम्ब है। वस्तुतः वही काव्य का प्राच्यतत्व है धीर विशेष महत्व का धनिकारी है।

द्वितीय अध्याय में बिम्ब का स्वरूप परिचय है। उसका स्वरूप महत्व गुण उपयोगिता निर्माण प्रक्रिया धीर भाषा में उसकी स्थिति धारि से धनमत कराया गया है।

तृतीय अध्याय में बिम्ब की जन्मदात्री कल्पना का विवेचन है। इसके साथ ही कल्पना के अल्प रूप प्रतीक उपमा धारि की जन्म है धीर उनके साथ बिम्बों के संबंध पर विचार किया गया है।

चतुर्थ अध्याय बिम्ब का भाव धीर भाषा से सम्बन्ध स्पष्ट करता है। बिम्ब भाव धीर भाषा के बीच की स्थिति है। महा रस सिद्धान्त जो भारतीय काव्य सिद्धान्त में प्रधान रूप में पोषित धीर स्वीकृत है के साथ बिम्ब के सम्बन्ध का विचार किया गया है।

पंचम अध्याय जामसी की बिम्ब योजना से प्रारम्भ होता है। इसमें उपात्त वस्तु धनिकारी जामसी बिम्बों की प्रकृति धीर अभिव्यक्ति में रूप के धाधार पर

उनका वर्गीकरण किया गया है।

षष्ठ अध्याय में जायसी के सफल और असफल बिम्बों का परीक्षण है। साथ ही प्राचीन परम्पराओं से वृद्धि उपमाओं एवं कवि की कल्पना दृष्टि से उद्भूत नवीन उपमाओं का विश्लेषण भी है।

सप्तम अध्याय में जायसी के भावों विचारों एवं चित्र के सम्बन्ध का विश्लेषण किया गया है। यहाँ प्राकृति के आचार पर परम्परित चित्रों विशिष्ट स्वतन्त्र की विशिष्ट बिम्ब योजना जायसी के विचारों और भावों का बिम्बों द्वारा प्रकाशन और पद्मावत की समाशान्ति व पात्रा की प्रतीकात्मकता का विश्लेषण किया गया है।

अष्टम अध्याय में मध्यकालीन बिम्बों योजना में जायसी का स्थान और समग्र अध्ययन के आचार पर जायसी के व्यक्तित्व का विश्लेषण किया गया है। नवम् अध्याय प्रबन्ध का उपसंहार है।

बहु कालकमानुसार कवि क कई ग्रंथ प्राप्त होते हैं बहुत बिम्ब के विकास के आचार पर कवि के व्यक्तित्व के विकास का अध्ययन किया जा सकता है। यह अध्ययन कवि को समझने में कुछ अधिक योग दे सकता है। परन्तु हमें जायसी में यह सुविधा नहीं मिली है। उसके मात्र तीन ग्रंथ ही प्राप्त हुए हैं उनमें भी पद्यावत ही केवल विशेष उल्लेखनीय है। अतः बिम्बों के विकास का अध्ययन यहाँ नहीं हो सकता। एक ही ग्रंथ बिम्ब का विकास सूचित नहीं कर सकता। अतः यह तब तक अध्ययन में प्रयुक्त ही रह गया है। अतः ही मैं इस प्रकार के अध्ययन हुए हैं। कवीर्षभ का अक्षयमेव पाठ संस्मृतिरयम् इत्येवम् इति प्रकार का प्रयास है।

अतः मैं इस प्रबंध की लिखने में मैंने बिन पुस्तकों से सहायता ली है उन सभी के विज्ञान सेलकों के प्रति ध्यामात्र प्रकट करना मैं अपना कर्तव्य समझती हूँ। इसके साथ ही अपने निदेशक प्राध्यापक डॉ० मनाहर माध गौड़ धर्म मनाहर कविज्ञानीयता की भी मैं बड़ी ध्यामात्र हूँ क्योंकि उनका स्नेह और सुनिर्माण के बिना यह कार्य सम्भव नहीं था। मैं अक्षयमेव पाठ संस्मृतिरयम् इति पाठ में बिम्ब प्रतीक विद्या विद्यालय प्रतीक के प्रति भी मैं ध्यामात्र हूँ किन्तु अक्षय मेव इति तब मैंने मेरी सहायता की और मेरा पत्र प्रकाश किया। तब भी जो सहायता देना भी मैं नहीं भूल सकती जो मैंने ही मेरे प्रकट रहे हैं। अक्षय जी और डॉ० कमलेश्वर शरण प्रकाश भी मैं विशेष रूप से ध्यामात्र हूँ किन्तु अक्षय समय समय पर अपनी अमूल्य सम्मतिपत्र भेजकर मुझे प्रोत्साहित किया। साथ ही अपनी बहुत सीमा और छोटी-सी रहने वृत्त को भी ध्यामात्र देना मैं नहीं भूलूंगी किन्तु अक्षय ने पाठसिद्धि के लिए करवाने और दूसरी के द्वारा अपना स्थान रखने में मेरी बहुत सहायता की थी।

अतः मैं मैं उन सभी के प्रति ध्यामात्र प्रकट करती हूँ किन्तु अक्षय इस प्रबंध के सम्पूर्ण होने में किसी भी प्रकार मेरी सहायता की है।

—मुभा सरसना

शेखर :—अक्षय मैं का बहुरंग शरण प्रकाश की अक्षय की मूल और अक्षय की मूल (१९९९) का पाठ प्रकट गया है। उनके पत्रों को अक्षय व अक्षयों की अक्षय को ही अक्षय के लिए दिया गया है। अक्षय व अक्षयों के अक्षय के अक्षयों को अक्षय का, का अक्षय का अक्षय का अक्षय है।

विषय-सूची

पृष्ठ

१२७

प्रथम अध्याय काव्य का प्राग तत्त्व

- १ भारतीय दृष्टि मीन्द्र्य अभिव्यक्ति प्रमाण और जीवन मीमांसा ।
- २ पाश्चात्य दृष्टि भाव भाषा और कल्पना ।

द्वितीय अध्याय द्विव

२८-८३

- १ प्रयोग महत्त्व और परिभाषा ।
- २ बिम्ब के आधारभूत तत्त्व अनुभूति भाव भावेग और ऐन्द्रियता ।
- ३ बिम्ब के गुण भाव को उत्तेजना देने की शक्ति तीव्र करने की शक्ति नवीकता परिचितता उर्बरता औचित्य ।
- ४ उपयोपिता एवं कार्य संबेदानात्मकता प्रसंकरण प्रमविष्णुता प्राणवता कभवतता बाह्य वस्तु जगत से भावनात्मक सम्बन्ध प्रमूर्त भाव व विचारों को मूर्तता प्रदान करना मर्मस्पर्धी भावों की अभिव्यक्ति करना ।
- ५ बिम्ब निर्मात्र प्रक्रिया प्रत्यक्ष बिम्ब स्मृत बिम्ब और वास्तविक बिम्ब ।
- ६ बिम्ब की स्थिति भाष्यों म भाष्यागो में ।

तृतीय अध्याय द्विव और कल्पना

८४-१३०

- १ कल्पना परिभाषा स्वल्प भव, कार्य अभिव्यक्ति म उसके रूप ।
- २ प्रतीक परिभाषा कार्य भव प्रयोग बिम्ब से सम्बन्ध ।
- ३ उपमान परिभाषा बिम्ब से प्रस्तुत उपमाओं का प्रयोग व बिम्ब साम्य का आधार और बिम्ब प्रकाशक और बिम्ब ।

चतुर्थ अध्याय द्विव भाव और भाषा

१३१-१७१

- १ भाव भाव की अनिवार्यता भाव की प्रकृता भाव की प्रकटना भाव की प्रेषणीयता भावात्मक तन्मयता प्रकृतिरव भाव रस्य श्रेणी सम्बन्ध ।

- २ उस सिद्धांत स्वल्प और बिम्ब की अनिवार्यता उस सामग्री विनाश धनुनाय व्यक्तिचारी भाव और बिम्ब ।
- ३ भावा समकारकता, समकारहीनता, व्यक्तता सरलता ।

पंचम अध्याय आसती की बिब योजना

१७२ २६६

- १ उपाय वस्तु के आधार पर प्रकृति—बलीय प्राकाशीय बनस्पतीय पक्षीय खनिज समन और मीसम बीब-वस्तु पशु पक्षी व वस्तु । बीबन—लोक बीबन मानव बीबन विचार, सेलफुल उजसी बीबन धानपान दहनपत्रन ।
- २ सविबनाशों के आधार पर दृष्टि परक, स्था परक घास परक धवन परक स्वाव परक ।
- ३ भावों के आधार पर रति-संयोग व बियाय उल्लाह एवं भाव मय भावधर्म लोक, धम वा निबदन ।
- ४ बिम्बों की प्रकृति के आधार पर मूर्तता का आधार धमूर्तता का मूर्तीकरण धमूर्तता ।
- ५ धमिभ्यक्ति के रूप के आधार पर धमिभा द्वारा मराभा द्वारा धसंकारों द्वारा मानवीकरण द्वारा मुहावरे व लोकोक्तिवों से बतीकों द्वारा ।

षष्ठ अध्याय आसती की बिब योजना का बरीक्षण

२६७-२२४

- १ सफल बिब उत्तेजकता तीव्रता नवीनता, परिचितता व्यक्तता धीबिल्य क्या में योगदान भावों का प्रकाशन ।
- २ असफल बिब भाव धमुपकारकता कक्षिणता सवर्न की उपेक्षा धमि नवीनता धीबिल्य, धनीबिल्य ।
- ३ परम्परगत बिब सिद्ध और भाव सप्रदाय से भारतीय प्रेमास्थानकों से साहित्यिक व लोक परम्पराओं से कारणी मसनबियों से ।

सप्तम अध्याय बिब एवं भावों के संबंध का विचार

१२३ ३३३

- १ बिधिष्ट रूपों पर बिम्बों का प्रयोग और उनका कारण बिधिष्ट रूपों की बनना कारण—वैमवीर—भाता व सङ्घर्ष कवि मूठी साधक ।
- २ परम्परित बिब और बिचारों का लगने चन्द्र और पूर्व ज्योति कवन इन्द्र, मरावर ।

- ३ विभों द्वारा ज्ञायसी के भावों विचारों एवं सिद्धांतों का प्रकाशन पुरु प्रेम संसार ईश्वर, श्रीव दान इत्य ।
 ४ विव और पद्मावत की समासोक्ति—पार्वी की प्रतीकात्मकता पद्मावती रत्नसेन नागमती रावव वेठम अनाद्रीम निष्कर्ष ।

प्रथम अध्याय (क) मध्यकालीन विव योजना व ज्ञायसी ३६६-४२५

(ख) ज्ञायसी का व्यक्तित्व

(क) मध्यकालीन विव योजना

- १ विव की उत्पत्त वस्तु ।
- २ विववत संविदना ।
- ३ विव श्रीर भाव ।
- ४ अमूर्त तथा मूर्त विव विधान ।
- ५ विवगत मुन ।

(ख) ज्ञायसी का व्यक्तित्व ।

द्वितीय अध्याय : उपसंहार ४२६-४३५

परिशिष्ट सहायक ग्रंथों की सूची ४३६-४४०

अध्याय १

काव्य का प्राण तत्व

बाम्यार्जव एक अनिर्बन्धीय तत्व है। उसका विवेचन-विरलेपन उतना ही कठिन है जितना ब्रह्मानन्द का परलु मानव का जिज्ञानु मन ब्रह्मानन्द का भी प्राप्ति का प्रयत्न करता है और उमी प्रकार काव्य के अन्तर्गत भी उस समातन तत्व को खोजने का प्रयत्न करता है जो उसे जीवन्त बनाता है और उसे काव्य मत्ता से विभूषित करता है। इस अन्वेषण में विद्वानों ने तरह-तरह के प्रयत्न किये और उनके विभिन्न परिणाम भी प्ति किए हैं। प्रस्तुत अध्याय में हम यह देखने का प्रयत्न करेंगे कि इन मान्यताओं के मूल में किम्ब विषयक कोई धारणा रही है या नहीं? अगर है तो उतका रूप क्या रहा है?

भारतीय दृष्टि

संस्कृत और हिन्दी में अनेक विद्वानों में काव्य की धारणा को लेकर अर्थात् विचार-विमर्श हुआ है। कुछ समीक्षकों ने काव्य के अनिर्बन्धीय तत्व को सौन्दर्य का रूप दिया है तो कुछ ने इसके विपरीत सहृदय पर पड़ काव्य के प्रभाव को अनिर्बन्धीय तत्व माना है। कुछ बुद्धि पथ के समर्थकों ने काव्य में भाव को मूल न मानकर बौद्धिक जीवन्त मीमांसा को प्रधानता दी है। इस प्रकार मत वैविध्य का धारण पर हिन्दी व संस्कृत काव्य समीक्षा में विभिन्न बातों एवं संप्रदायों का जन्म हुआ। इन काव्य संप्रदायों के अन्तर्गत काव्य के चार तत्वों का विचार हुआ है। यह है—सौन्दर्य, अनिर्बन्धीय प्रभाव और जीवन्त मीमांसा।

सौन्दर्य

व्यापक रूप से सौन्दर्य यह है जो हमारी ज्ञानेन्द्रियों को प्रिय मने। प्रियता का भाव सौन्दर्य का मूल है। सुन्दर दृष्ट को मनोर का रूप माना गया है। स-+मर अर्थात् अर्थात् धारणी। यह अर्थात् उतकी प्रियता में निहित है। सौन्दर्य का यह भाव विषयगत या विषयीयत दोनों ही सचता है। सौन्दर्य का मूल सामंजस्य अथवा अनुचित सयजन (Harmony) में निहित है। सौन्दर्य किसी एक वस्तु में निहित नहीं

है बरन् सबका सम्मक गठन सम्यक पृष्ठभूमि में तर्क्य ही सौन्दर्य सर्जन में समर्थ हो सकता है ।^१

सौन्दर्य सत्य का प्रयोग यहाँ व्यापक ढाँचों में नहीं किया जा सकता । क्योंकि उक्त व्यापकत्व में काव्य ही नहीं बरन् समस्त जीवन समाहित हो सकता है । यहाँ सौन्दर्य का एक भीमित ढाँच है । यह ढाँच सौन्दर्य के वाद्य पद से सम्बन्धित है और मूलतः वस्तुपरक है । इसका प्रयोग यहाँ असत्कार या बाह्य रूप सज्जा बनिता सौन्दर्य के विभिन्न स्तरों के रूप में किया गया है ।

अधिकार काव्य समीक्षकों ने काव्य के अस्तर्गत सौन्दर्य तरंग को सर्वाधिक प्रतिष्ठा दी है परन्तु इष्ट एक होने-पर भी साधन की विभिन्नता के कारण वह सब एक ही धेती के नहीं बह जा सकते । कोई सौन्दर्य तक असत्कारों के मार्ग से पहुँचा है कोई रीति मार्ग से कोई गुणों के माध्यम से और कोई कक्षा के माध्यम से ।

यहाँ सर्वप्रथम असत्कार मान का विवक्षित किया जायगा ।

असत्कार सम्प्रदाय के प्रवक्तक भाषार्य भामह हैं । भामह मुख्यतः सौन्दर्यदर्शी गमीक्षक हैं । भामह के साथ उक्त बड़ी भावदेव धारि न भी असत्कारों को प्रमाणता दी है । प्रथम समीक्षकों ने यद्यपि उक्त भाष्यार्य का रूप में नहीं स्वीकार किया परन्तु सौन्दर्य के प्रमुख हस्तु के रूप में उक्त स्वीकारा है ।

असत्कार शब्द के व्युत्पत्तिगत ढाँच—बरतु को असत्कृत या घोषित करने वाला से ही उक्त घोषाकारक ढाँच स्पष्ट हो जाता है । उक्त यही ढाँच काव्य में मान्य है ।^२ भामह का मत है कि निरसत्कार काव्य कभी सुन्दर नहीं हो सकता उसी प्रकार जिस प्रकार स्थानाधिक मुक्तता से पुन होने पर भी असत्कारों के अभाव में बनिता के मुख गणन पर अभाव दृष्टिबोध नहीं होती । बड़ी का आग्रह ता असत्कारों के लिए इतना अधिक है कि असत्कारों की अनुपस्थिति में काव्य के स्वाभाव में भी उक्त अभाव होती है । अतएव काव्य का ही वह स्वामी काव्य मान सके हैं^३ भामह ने कहा कि असत्कारों में सौन्दर्य मात्र ही इतनी सामर्थ्य है कि दुष्कृत भी रमणीय लगने लगता है ।^४ इसी से भोजदेव ने निरसत्कार कविता को काव्य का शेष कहा है । द्विती

1 That which is beautiful is harmonious and proportionable what is harmonious and proportionable is true, and what is at once both beautiful and true is of consequence agreeable and good Beauty is recognised by the mind only Good is fundamental beauty beauty and goodness proceed from the same fount. What is Art—Leo Tolstoy p 2.

२ अर्थकरोटीत अत्र अत्र अत्र अर्थकरोटीत अत्र अत्र अत्र अर्थकरोटीत ।

३ काव्य शोभाशालम् अर्थान् अर्थकरोटीत अर्थकरोटीत । ११ काव्यशाला

४ न काव्यमपि निभू र्ब विमर्षित बनिता सुमर्ष । १११ काव्यशाला

५ अर्थकरोटीत अत्र अत्र अत्र अर्थकरोटीत । १११ काव्यशाला

६ मन्विता निरसत्कृतु दुष्कृत मर्षि शाला १११ काव्यशाला

७ काव्यशाला अर्थकरोटीत अत्र अत्र अत्र अर्थकरोटीत १११ काव्यशाला

काव्य का प्राण तत्व

धर्मकारवादी भी धर्मकार को काव्य का प्राण स्वीकार करते हैं। वह प्रकृष्टी धेवी की मुग्ध बर्ण मुग्ध छन्द घोर गम् कविता को मात्र धर्मकारों के धर्माव के कारण उत्तम कौटि की कविता नहीं मानते। काव्य की गोमा के लिए न गुण उन युक्त है न भाव कोई तब मात्र धर्मकार ही इसका विधान करने में समर्थ हैं ऐसा उन समय के सभी धाषायों का सामान्य मत था।

धर्मकार के इन धारण कृताप्रा क विबन्धन में स्पष्ट है कि यह सभी काव्य धारणी धर्मकार का काव्य का निम्न धर्म मौख्य घोर धामा का मूल कारण मानते हैं। धर्मकार के गोमा विधान क इस दात्र में बहु ग्म गुण गीति प्रादि सभी तत्वों को समाहित कर मन है। उन्होंने उनका प्रथम प्रादि धर्मकार भदा का निर्माण करके इसका लन बहुत व्यापक कर दिया है। उन्होंने धर्मकार को मौख्य उद्दीपक या सौन्दर्य का निमाता नहीं बरन् स्वय मौख्य का पर्याय मान लिया है। घोर उन काव्य के प्राण तत्व के रूप में प्रतिष्ठित किया है। यह सभी सौन्दर्य को काव्य का इष्ट मानते हैं। घोर उनका लिए धर्मकारों का विधान धाषायक गममत्त है।

यहाँ उन धाषायों का मत भी उल्लेखनीय है जो धर्मकार का प्राण तत्व तो नहीं मानते परन्तु उन मौख्य विधायक धर्मम्य स्वीकार करते हैं। य धाषाय है विबन्धनाव मम्म कष्ट धागन्दबर्धन प्रादि।

ये सभी धाषाय धामतु घोर हरी में विपरीत काव्य धारणा के स्थापित का कारण मन का मानते हैं धर्मकार को नहीं। मम्मट में स्पष्ट कहा है कि धर्मकार हारानिक धामुपणों क समान है। य कदाचित हा मन का उपकार करने है मयदा नहीं जहाँ मन है वहाँ भी धर्मकार रह सकता है। इसवादी विबन्धनाव न धर्मकार को काव्य का धर्मिय धम माना है जो काव्य में गोमा के धर्मिय के लिए प्रयुक्त होता है।^१ शिव प्रयत्न य भाव की धर्मियकिक का जन्म होता है उनी में यदि धर्मकार

१ अ नि मुक्ति मु किला १ ग्म म्म ग्म ।
कृष्ण विनु न शिखर किला किला नि । । १ ।
२ (घ) मगुव धर्मियन न् उदय गीता न् का
गष्ट धर्म गारा कवित क उदि । । का । विनामिन्वकता २१० कविकुल
कम्प म्म ।

(घ) मगुव कदाव न्पु विनु शिख ग्म म्मट
कृष्ण गुण कवि कन १) ज कवि कम्पुट ।
मोनाय—युट कष्ट म ग्म म्मट म्मि
३ काव्य धर्म म्मट न् प्रेय क ११० का विबन्ध ।
४ उद्दीपकिक न् म्मट म्मट म्मट म्मट ।
हरिधर्मिकिका कम्पुमामन व । —१० कम्पुमाम ।
५ म्मट म्मट म्मट म्मट म्मट म्मट ।
६ म्मट म्मट म्मट म्मट म्मट म्मट ।

विधान ही काय तो उसका आधार है अथवा कवि का पृथक और बुद्धिपूर्व प्रयास नहीं होना चाहिये। स्पष्ट है कि अस्कार काव्य को प्राणवान नहीं बनाता केवल घोमा विधान में सहायक होता है। अस्कार प्रतिभा के प्राग्रह से स्वतः ही काव्य में प्रकट होता है भावों के प्रवाह में स्वतः प्रवाहित होता है^१ अतः कवि को उसके लिए अस्कार से प्रयत्न करने की कोई आवश्यकता न होनी चाहिए। जैसे जैसे भावना समृद्ध होती जाती है अस्कार वाणी में स्वतः प्रकट होते जाते हैं।^२ सप्रयास साए गये अस्कार काव्य की घोमा-बुद्धि में कमी सहायक नहीं हो सकता। हिन्दी के कुछ अस्कार शास्त्रियों ने इसी मान्यता को स्वीकारा है। एक सीमा तक ही अस्कारों का महत्व उन्हें मान्य रहा है। आचार्य वेद अस्कार को रस का मुक्तापेखी मानने हुए कहते हैं कि काव्य के छंद बपी शरीर में रस जीवन के सदस्य है और अस्कार आभूषणों के सदस्य। इनमें आभूषण न होने पर तन (छंद या काव्य) की सत्ता बनी रह सकती है परन्तु रस बपी जीवन के अभाव में तो उसकी अस्तित्व ही नहीं की जा सकती।

हिन्दी के प्रसिद्ध आलोचक गुप्त जी भी भावों के उत्कर्ष में सहायक अस्कारों को ही अस्कार की संज्ञा देकर रस से उसकी गीतता को सिद्ध करते हैं। उन्होंने कहा है। 'अस्कार' एक मुक्ति या वर्णन नहीं मात्र है। यह हीसी सर्वत्र काव्यास्कार नहीं कहसा सकती' अस्कार में रमणीयता होनी चाहिए भावानुभव में बुद्धि करने वाले गुण का नाम ही रमणीयता है।^३ सामान्य रूप से सभी विद्वानों ने अस्कार को आंतरिक अस्कार को काव्य प्राण तो माना ही नहीं उसका सप्रयास प्रह्व भी निवनीय बताया गया क्योंकि अस्कार केवल वाणी की उच्चारण के लिए नहीं है। वे भाव की अति व्यक्ति के विक्षेप द्वार हैं।^४ आधुनिक युग में अस्कारों को रस का अनुसामी माना गया। मात्र छन्द आस या बाह्य रूप अस्कार के लिए उनका प्रयोग अनुचित माना गया।

१ प्रतिभासुप्रह कसम् एतदेव संवत्ते । अदिभद परती

२ As emotion increases, expression swells and figure foam forth. Some Concepts on Alankar Shastra by Dr Raghavan.

३ The more emotions grow upon a man the more his speech if he makes any effort to express his emotions abounds in figures
—The World of Imagery S J Brown

४ अस्कार मूल्य कुरुत जात अरु एक भाव ।
तत्र अस्कार ह भिनु भिनु भिनु अस्कार तत्र रस ।

—राज्य अस्कार

५ अस्कार गुणमीरस १ १ ०-१०

—अस्कार, १ १६

इस समय विवेचन से स्पष्ट है कि धर्मकार को ग्युनाधिक रूप में सौन्दर्य का पोषक व स्वयं सौन्दर्य दोनों माना गया। संस्कृत ने रसवादी व हिन्दी ने अधिकांश विद्वानों ने उस सौन्दर्य का पोषक समझ है और कुछ विद्वानों ने स्वयं सौन्दर्य का प्रयोग। इनकी भारणा प्रारम्भ में भागवत सौन्दर्य को तीव्र करने की रूढ़ि थी जो बाद में मात्र वैश्विभ्य की प्रतीक बन गई है। इसकी धर्मव्यक्ति का मूल तत्व वा सादस्य धर्मात् समानता या असमानता विभाकर, वस्तु के रूप गुण धर्म प्रावि का बोध कराना। धरने मूल में धर्मकारवाद की मान्यता विन्म ने बहुत निष्कट है। विन्म का मरम है ऐश्वर्यपम्यता के द्वारा मानस साक्षात्कार जो बहुधा सादस्य के द्वारा होता है। धर्मकार जब कबल धर्मकार का पोषक हूँ जाता है तब उसकी विन्म से दूरी बढ़ जाती है परन्तु जब तक वह रस का पोषक और भाव की सौन्दर्य-सम्पन्न धर्मव्यक्ति पर बल देता है विन्म के बहुत निष्कट है। धर्मव्यक्त रूप में धर्मकार की मान्यता विन्म का ही पोषण करती है।

धर्मकारवाद के बाद अब हम उस सौन्दर्यवाद का अभ्ययन करेंगे जिसमें सौन्दर्य विभाग के लिए रीति या गुण की प्रायता भी गई।

काव्यात्मिकार मूल के मसक धाचाम वामन रीति सम्प्रदाय के प्रवर्तक हैं। उन्होंने रीति का काव्य की आत्मा माना और उसका धर्म इतना व्यापक कर दिया कि काव्य के धर्म सभी गुण उसमें धर्मभूत हो गये। काव्यात्मा रीति का स्पष्ट करते हुए उन्होंने कहा कि गुणों के कारण पद रचना में जा विनिष्कटा भा जाती है वही रीति है। रीतियों में काव्य इसी प्रकार निहित है जैसे देवार्थों के अंतर्गत किन्हीं धर्मकार को काव्य का धर्मिय धर्म कहते हैं और गुण को निरप। केवल गुण सौन्दर्य की सृष्टि कर सकते हैं कबल धर्मकार नहीं। धोभावारक धर्म तो गुण हैं धर्मकार उसमें केवल प्रतिधमता जाते हैं।^१

स्पष्टतः वामन का दृष्ट सौन्दर्य ही है। रीति का मूल प्रयोजन सौन्दर्य धर्मन है। कभी वह धर्मगत है कभी धर्मगत। डा० रामलाल मिह ने स्पष्ट कहा है कि सौन्दर्य सृष्टि ही इसका मध्य है। वामन से पूर्व ब्रह्म ने भी रीति की बर्णा की थी। उन्होंने 'काव्यमात्र' में प्रथम बार गौरीचित्य के आधार पर रीति का बयन किया था।^२ रामदास न रीति के साथ कृति का सम्बन्ध जोड़ा और उसके अनेक विभागों

१ रीतिधम्या काव्यत्व। १।१।१। काव्यात्मिकार मूल

२ विद्यापी गुणप्रदा। १।१।१०

३ विद्यापी वर रचना रीति। १।१।१० काव्यात्मिकार मूल

४ धर्मव्यक्त रीतिवु देवा सिन्ध किम काव्य प्रतिधमनिति। १४, १४।

५ काव्यात्मिकार कर्तरी धर्म गुण। १।१।१० वर

६ उद्दिष्टमहत्तव रक्षकक कस्य। १।१।१० वरी

७ सनीका वराम का रामलाल विद्य। १०।१००

८ भारतीय सन्दर्भकारण धर्म १ वी० वलदेव वपण्यल - १६५

की कल्पना की। कुत्क ने रीति को मार्ग का नाम दिया और व्यक्ति के स्वभाव के आधार पर इसका वर्गीकरण किया।

इन धारणियों ने रीति का कोई मौलिक मसजद नहीं दिया। स्थूनाधिक म्म में बामन का लक्षण ही इन्हें मान्य रहा। बिम्बनाथ ने इसकी रसवादी विवक्षता करते हुए कहा कि जिस प्रकार कामिनी के शरीर में सब धर्मों का परस्पर अनुकूल संगठन होता है—मय धर्म एक प्रकार से निवृत्त किये जान पर ही लोभाभावक होते हैं ठीक उसी प्रकार पशु की मजदना रीति कहमाती है और वह रसादि काव्य सौन्दर्य के उन्मीलन के लिए उपकार करने वाली होती है।^१ प्राधुनिक युग में रीति का स्थान शैली (स्टाइल) ने ले लिया है जो उससे अधिक व्यापक तत्व है।

समष्टि में रीतिधारियों की रीति की कल्पना उनकी सौन्दर्य बृत्ति की परिणामक है। विशिष्टता सौन्दर्य उत्पादन करने काव्य को जीवन्त बनाती है। गुण और धर्माकार का आधार भी सौन्दर्य की उत्पत्ति और बृद्धि के लिए है। इन सौन्दर्यधारियों की दृष्टि भी कवि-कल्पना और मूर्ति निर्माण पर लगी गई है। विशिष्टता बिम्ब से आ सकती है परन्तु रीति का विवचन और क्षेत्र बिम्बगत धारणा से नितास्त भिन्न रहा है। विशिष्टता में बाध-विन्धास धर्म योजना मानुष धर्म आदि गुणों पर भी बस दिया जाता है जिनका बिम्ब में कोई विशेष सम्बन्ध नहीं है। रीति और बिम्ब अपने सिद्धान्तों और प्रयोगों में नितास्त भिन्न हैं।

रीति सम्प्रदाय के पश्चात् काव्य सम्प्रदाय में बर्जोक्ति सम्प्रदाय का विशेष महत्त्व है। वक्तव्य सम्प्रदाय के प्रवक्तव्य धारणियों कुत्क हैं। बर्जोक्ति की परिभाषा देते हुए कुत्क ने कहा है कवि-कर्म-कुशलता से प्रवृत्त सौन्दर्य पर धारित एक कथन प्रकार ही बर्जोक्ति है।^२ प्रसिद्ध कथन शैली से भिन्न उक्ति जो कवि कौशल कल्पना ने मुक्त हो बर्जोक्ति है। यह बर्जोक्ति शब्द और अर्थ दोनों में विद्यमान रहती है। यह प्रत्येक काव्य तत्व में निहित है और सम्मिलित रूप में उसी प्रकार प्रकट होती है जैसे प्रत्येक तिस से निकला हुआ तिस का तल।^३ वे कल्पना मकर प्रवृत्त तत्व में बर्जोक्ति की सम्माम्य स्थित स्वीकार कर लेते हैं। कुत्क से पूर्व धामहू ने बर्जोक्ति का विवचन धर्माकार रूप में किया था। उनको बर्जोक्ति धर्माकारोक्ति का विवचन पर्याय वाली है। और मूलतः दोनों एक ही हैं। धर्म बर्जोक्ति और धर्म बर्जोक्ति—दोनों का सम्मिलित रूप बर्जोक्ति है या धर्माकार की मूल है।^४

१ यह संदर्भ रानि धर्म संस्था निरीक्षण उपस्था रानीनाम्

२ उद्योगधर्मशास्त्र का पुनर्निर्माण

बर्जोक्ति का वैयक्तिक धर्माकारोक्ति रूप। बर्जोक्ति धर्माकार

३ बर्जोक्ति का तल मूलतः धर्माकारोक्ति की धर्मशास्त्र २५४

४ धर्माकारोक्ति धर्माकारोक्ति का धर्माकारोक्ति २१९ धर्माकारोक्ति

प्रतिपत्ता या ब्रह्मा का विवेक करते हुए भासू कहते हैं कि प्रतिपत्ता 'साक्षात्कृत गोपता का नाम है। अर्थात् लोक का प्रतिभ्रमण अथवा सोच सामान्य स वैश्विय। अतः प्रतिपत्ति (ब्रह्मप्रति) प्रतिभ्रमण + उक्ति—ऐसी उक्ति है जिसमें उक्त व अथ का सोकोत्तर अर्थात् मात्र समामान्य प्रयोग होता है।' परन्तु परबर्ती प्रालोचना में कुछ ही काम्यारथा रीति संकुचित स संकुचिततर होती गई और मात्र एक अर्थकार के रूप में ही जीवित रही।

कुछ ठक तथा ब्रह्मोक्ति के समर्थक अथ्य आचार्य उन गौन्द्य का मानन ही मानते हैं। ब्रह्मा हीन्दर्व का ही एक नाम है उनक द्वारा काम्यारथा रूप में स्वीकृत आर्षेदण्य अथवा ईदण्यमवीभक्ति का मध्य काव्य में वैश्विय अथवा आरख का विधान करना है। ब्रह्मप्रति क इम मत में बिम्ब की धारणा और भी पूर है। अथन का वैश्विय अर्थक मात्र का उपकारक नहीं होता न ही कर् दृश्यता उत्पन्न करने में अर्थक ही मक्या है जो बिम्ब क लिए नितात आरख है। वैश्विय प्राय वाञ्छ अम ल्कार बन कर ही आता है। जबकि बिम्ब काम्य का धारण में है। अर्थात् ब्रह्मा आरख का विधान करती है ब्रह्मा बिम्ब की मृष्टि समझ हा सकती है। परन्तु ब्रह्मोक्ति के मूल में बिम्ब की सम्भावना निहित हागी ऐसा प्रतीत नहीं होता।

हीन्दर्व तत्त्व की पूर्ण ग्था करने और प्रति स्थापित क रूप में मुक्त हाकर काम्य का उचित रूप निर्देश करने वालों में श्रीचित्त विचार अर्थ के प्रगता दामेन्द्र का नाम उल्लेखनीय है। य श्रीचित्त सम्प्रदाय व प्रवर्तक है।¹

श्रीचित्त सम्प्रदाय ही अस्तुत्—ऐसा सम्प्रदाय है जिसने काम्य की अतिरिचनी मता को सबसे सही रूप में समझा है। इसमें काम्य व सभी भाषों का समन्वय प्रस्तुत किया गया है। शोमेन्द्र ने श्रीचित्त की परिभाषा करते हुए कहा कि उचित का मात्र ही श्रीचित्त है और यह उचित का मात्र अस्तु अस्तुप्रता (हारमनी) अर्थात् अनुमान का ही एक नाम है। उनसे कहा कि मुक्त अर्थकार अर्थात् ही समझा जाता अर्थ है जब तक उनकी मुनियोजित करने वाले तत्त्व श्रीचित्त का परिपालन समझ न हो।² उक्त में शोमेन्द्र से पूर्व हा श्रीचित्त की विवेक महत्त्व दिया था और भरत न मरुति श्रीचित्त तत्त्व का उल्लेख नहीं किया पर उनकी आवश्यकता को उन्होंने अर्थक अस्तुप्रता किया था। अस्तुप्रता को काम्य का उपादान बताते हुए उन्होंने कहा कि मात्रक म पार्श्व की वेदाभ्यास बोधी (भाषा) अर्थात् म श्रीचित्त की ग्था आवश्यक है नहीं ता

¹ निमित्तमे व को पनु सोक्षात्प्रतिपत्तकम् ।

अथन द्वितीयोक्ति उपसर्कवदता दना (११०२) अर्थकनक

² प्रतिपत्तुत्तरात्पर्यं आरख विव मय्य कत
अविदम्ब य को आरखसौचित्यं अर्थकत । ७ अर्थक विवर पत्नी

³ अर्थकवदतनकरे कि द्विपदा अर्थकगुणे
काम्य अर्थक श्रीचित्त निमित्तवि म अर्थक १४

वह उतने ही हास्यास्पद बन जाते हैं बिना कष्ट में मेसका और कमर में हार पहुँचे हुए व्यक्ति।^१

स्पष्ट है कि सोमेन्द्र काव्य के सौन्दर्य के प्रबल समर्थक हैं। सहृदय पर पड़े काव्य के प्रभाव-रस को वे प्रभावता देते हैं पर काव्य के सभी तत्वों का उचित और सम्यक निरूपण ही उनकी दृष्टि में विशेष महत्त्व रखता है। उन्होंने काव्यगत तत्वों की सफलता का प्रमाण रमणीयता और मनोज्ञता को माना जिनमें विम्ब का स्थान प्रबल रहा होगा। प्रसंकार और भावगत प्रौचित्य विम्ब की सम्भावनाओं को प्रकट करते हैं। प्रौचित्य मार्ग यद्यपि विम्ब का पूर्वजपेन समर्थक नहीं है पर छादस्म भर्षित विम्ब के सुनियोजन पर उसकी दृष्टि धारण रही है।

समष्टि में सौन्दर्य के पक्षपाती इन प्राचाओं के अध्ययन से स्पष्ट है कि इन्होंने सौन्दर्य को (अधिकतर) व्यापक रूप में नहीं देखा है। और उसे मुख्यतः काव्य-राश्री के अन्तर्गत ही खोजने का प्रयत्न किया है। सौन्दर्य के इन समर्थकों के साथ विम्ब का सम्बन्ध विशेष निकट का नहीं है क्योंकि विम्ब काव्य में केवल सौन्दर्य वृद्धि ही नहीं करता वह काव्य के भावों को दृश्य बना कर उसे प्रेषणीयता भी देता है। सौन्दर्य के समर्थक प्रसंकार रीति बन्धोक्ति और प्रौचित्य प्रादि मुख्यतः काव्य के बाह्य सौन्दर्य तक सीमित हैं जबकि विम्ब काव्य का प्राण है उसका प्रधान घातरिक गुण है। भाव से भी इनका कोई विशेष सम्बन्ध प्रतीत नहीं होता इस रूप में भी यह विम्ब से दूर हो जाते हैं। विम्ब का लक्ष्य भाव या विचार की ऐन्द्रियवन्मय अनुभूति कराना है जबकि प्रौचित्य के अतिरिक्त इन सौन्दर्यवादियों ने नहीं भाव की विशेष महत्ता स्वीकार नहीं की है। विम्ब की धारणा में स्पष्टतः इन सौन्दर्यवादियों के प्रयत्न विशेष सहायक सिद्ध नहीं हुए हैं।

अभिव्यक्ति

सौन्दर्य के अतिरिक्त काव्य के प्रामाण्य के रूप में दूसरा तत्व भी हमारे सम्मुख आता है वह है अभिव्यक्ति। अभिव्यक्ति अथवा 'एक्सप्रेसन' का अर्थ है। अभिव्यक्ति मुख्यतः कवि के व्यक्तित्व पर निर्भर करती है, और काव्य में कवि को उपस्थित करने के कारण उसका विषय महत्त्व है। अभिव्यक्ति की विद्युत्ता ही काव्य को जगृह्यता प्रदान करती है। भाव और अभिव्यक्ति मूल में एक हैं यद्यपि अभिव्यक्ति अर्थात् व्यक्त स्वभाव के अतिरिक्त अर्थका कोई अन्य अस्तित्व अस्मत्कीय है। अभिव्यक्ति भाव के साथ साथ स्वयं कवि के मानस से उद्भूत होती है। भाव के अभिव्यक्ति रूप के अतिरिक्त कवि के मानस में उसका कोई अन्य रूप ना। यह एकरूप अस्मत्कीय है। आत्माभिव्यक्ति के परे काव्य कोई और तत्व नहीं है। वेदक भाव (अवस्टेम्प)

१ अडे मिरलता निरुद्धते तारण इत्येव वा
पत्नी मुरुर वर्यमेव करणे मुरुर पत्नी वा
गोमेव प्रपते दिती कश्यवा नत्वाति के हात्वात्

धीरे उसकी बाह्यादृति (धर्म) बस्तु एक ही बस्तु के दो रूप हैं। परन्तु धुनिभा के अनुसार इसकी बिनाशित रूप लिया गया है और काव्य के दो तत्व भाव और प्रतिब्यक्ति स्वीकार किये गये हैं। प्रतिब्यक्ति की सत्ता बहि की अनुभूति से युक्त है अर्थात् बहि अपनी अनुभूति को वैसा रूप देता है वह प्रतिब्यक्ति अर्थात् काव्य का बाह्य परा है। प्रतिब्यक्ति का लेख बड़ा व्यापक है। भाषा से लेकर अक्षरकार तक की धारि सभी इसमें समाहित हो जाती है।

ध्वनि सम्प्रदाय के प्राचार्य आनन्दकर्मण काव्य में प्रतिब्यक्ति तत्व के परत पाती है। परन्तु वह उसकी समस्त बाह्याकार के रूप में न लेकर प्रतिब्यक्तिता अर्थात् त्रिसम व्यञ्जना प्रयास हो के विनिष्ट धर्म में सत् है। इस प्रकार वह उस प्रतिब्यक्ति के समर्थक है जो व्यञ्जक (मैकेटिक) हो। साधारण प्रतिब्यक्ति (ध्वनि) बाह्य वह पीछे घुम धारि से युक्त हो उनकी दृष्टि में काव्य नहीं है। व्यञ्जना उनके काव्य सिद्धान्तों का मूलाधार है। आनन्दकर्मण ने काव्य की प्राग्भा 'ध्वनि को स्वीकार किया'। यह ध्वनि व्यञ्जना का ही एक नाम है। ध्वनि काव्य की रमणीयता में तो बुद्धि कर ही गैरी है, भाव ही उसमें रागात्मकता का सनिबन्ध भी करती है। वह काव्य को लने लपे लकटापुत्रि' वाली मुन्दरता से समन्वित कर देती है। काव्य में मौल्य्य धरवा कति किमी बन्धकार या बैगिष्ट्य द्वारा प्रकट नहीं होती बल्कि ध्वनि होती है उसी प्रकार त्रिस प्रकार रमणी के मुम्बर छोटी से साव्य।¹ यह काव्य किमी एक धम किमी एक धानूपन या किसी एक उपकरण से नहीं पाठा बल्कि यह उनके समस्त रूप समस्त साजसज्जा से ध्वनित होता है। अतः साव्य किमी एक विशेष तत्व का नाम नहीं है बल्कि समस्त तत्वों से ध्वनित सौन्दर्य का भाव है।

आनन्दकर्मण ने काव्य के ध्वनयत तत्वों के तीन व्यापार स्वीकृत किये हैं एक ध्वनिबा दुमरा मसणा तीमरा व्यञ्जना। उनका मत है कि काव्य का तत्त्व व्यापार मसणा धरवा व्यञ्जना मूम्बर होना चाहिये। क्योंकि काव्य की प्रमुख मसति भाव है और भाव कभी कभी ध्वनिभा से प्रकट नहीं हो सक्ता वह मदेव ही ध्वनित होता है। अतः काव्य की प्रमुख लक्ष्य व्यञ्जना ही है।² काव्य का यह तत्व इतना मूम धीरे बाह्य है कि काव्य सम्प्रदाय वाली भी इसकी उपला नहीं कर सके। धाधुनिर छायावादी बहि तक ध्वनि की माव्यता का सम्मान बरन है।

1 काव्यशास्त्र ध्वनि 1111—ध्वनि शोध

2 काव्यशास्त्र ध्वनि 1111—ध्वनि शोध

3 Language has two uses, the evocative and indicative. It evokes feelings or emotions and indicates objects. Poetic language... is a development of the former

आधुनिक कवि विनकर कहते हैं 'सायद ध्वनि से शारीक तत्व कविता में शीर कोई है ही नहीं।'

ध्वनि क गर्वप्रथम विवेचक काव्यशास्त्री नहीं थे बरम् ब्रैयाकरण थे। उन्होंने ध्वनि प्रण का व्युत्पत्ति मूलक प्रथं बताते हुये कहा था कि जो ध्वनित हो रही ध्वनि है। आनन्दबर्धन ने इसी मान्यता को प्रसार दिया। आनन्दबर्धन काव्य म रस के समक भी थे। रस ध्वनि उनकी दृष्टि में अष्ट ध्वनि थी। रस अमकार रीति आदि सभी व्यञ्जक होकर उनके मत म समाहित हो जाते हैं इस रूप में ध्वनि का क्षेत्र वशा व्यापक हो जाता है। बिदधानाथ आचार्य भी ध्वनि के पोषक हैं काव्य म अभिधा से परे प्रपञ्चा अभिधा क प्रतिरिक्त भी जो प्रथं अनिहित रहता है उसे बहु व्यञ्जना प्रथवा ध्वनि कहते हैं बहु ध्वनि को 'वाष्पातिघायी व्यप्य' के नाम से प्रकृत करते हैं^१ पर बिद्वानाथ उसी ध्वनि को अष्ट कहते हैं जो रस के उत्कर्ष में सहायक हो। उनकी दृष्टि रस पर प्रधान रूप से है ध्वनि को बहु उसी क माध्यम से देखते हैं। 'कविकाव की दृष्टि इसक विपरीत विरोधन ध्वनि पर ही है। उन्होंने कहा है कि व्यंघ्यार्थ प्रधान एक शारदा प्रधान कविता ही ध्वनि काव्य है।'^२ यही काव्य का अष्ट रूप है। उन्होंने ध्वनि क आधार पर काव्य को उत्तम मध्यम शीर अधम तीन श्रेणियों म विभाजित किया। जिसमें व्यंघ्यार्थ प्रधान हो बहु उत्तम जिसमें अधधान हो बहु मध्यम शीर जिसमें न हो बहु अधम काव्य है। आनन्दबर्धन के परचात मम्मट ने ध्वनि की प्रीति व्याप्या प्रस्तुत की है। उन्होने कहा कि कस्ता मोठा ध्वनि का विकार वाक्य वाक्य समीपवर्ती मनुष्य प्रकरण बेध काम आदि की विक्षिप्तता के सन्निबल में प्रतिमासामी स्थिति को वाष्पार्थ शीर व्यंघ्यार्थ के प्रतिरिक्त जिस अर्थ्य अर्थ की प्राप्ति होती है उस ध्वनि कहते हैं यही व्यंघ्यार्थ है।^३ ध्वनिकार इसे ही 'काव्य शरीर म आत्मा के समान मुख्य (गुणामकार मुख्य) उचित (रमादि के अनुकूल) रचना के कारण रमणीय काव्य के सार रूप म स्थित शीर सहृदय प्रसंसित कहते हैं।'^४

१ काव्य का भूमिका १ > विनकर

२ एक-को अनेक इति ध्वनिः । अनेक ध्वनिः अनेक ध्वनि इति वा ध्वनिः अनेक इति ध्वनि

३ वाष्पातिघायिनि -व्यंघ्यध्वनिल्लङ्कारमुत्तमम् > कविका सप्रतिस्वरपत्र

४ कवार्थ शब्दो वा तन्मनुष्यसर्करी कृत रचनी

ध्वनि काव्य विरोध स ध्वनिरिति कृत्रिमि कविता रचनालोके

५ मनुष्य बोधक्य काव्य वाक्य व्यंघ्यार्थ

प्रकार है। वाक्य रसे विविधरूप म प्रतिमासुप्राम

को ध्वनि-वाक्य वा अनु वाक्यो ध्वनिकोच सा

मध्यकालीन काव्यसाहित्यियों ने भी ध्वनि पर बल दिया है यद्यपि यह बहुत प्रौढ़ नहीं है पर इससे उनका सापेक्ष स्पष्ट है। कवि मिजारीदास ने ध्वनि काव्य को उत्तम काव्य कहा है।^१ आचार्य चिन्तामणि त्रिपाठी ने भी ध्वनि काव्य को श्रेष्ठ काव्य कहा और आचार्य आनन्दबर्बन ने काव्य कथ की विभाजन को यथावृत्त करके रखा।^२ धापुनिक युग में भी ध्वनि की महत्त्व दिया गया। महाकवि हरिश्चोष ध्वनि की प्रधानता स्वीकार करते हुए कहते हैं कविता में ध्वजना ही प्रधान होती है जहाँ इस शक्ति से नाम न लिया जाकर ध्वनिवा से नाम लिया जाता है वहाँ कविता अपना महत्त्व खा बैठती है। धापुनिक प्रयत्नवादी कवि भी जिस धमत्कार की ध्वनि ध्वजना का काव्य का उत्तम नाम समझते हैं वह भी कुछ और नहीं ध्वनि ही है। यद्यपि न काव्य के रस को स्पष्ट करन हुए कहा है काव्य का रस कवि में या कवि के जीवन में वर्णविषय प्रपवा अनुभूति में या किसी शब्द विशेष में नहीं है वह काव्य रचना की धमत्कारिक तीव्रता में है।^३ उनकी धमत्कारिक तीव्रता और नवीन ध्वनि ध्वजना की समस्या ध्वनि की ही है। समष्टि में ध्वनि तत्व की धापुनिक काम एक किन्हीं न किन्हीं रूप में साम्यता प्राप्त हुई है।

ध्वनि सिद्धान्त स्पष्टत ही प्रथम मनी देहवादी सिद्धान्त में ध्वनि व्यापक है। उनमें ध्वनिध्वजित की ध्वनिध्वजना के धर्म में महत्त्व देकर देहवादियों और आत्मवादियों (रसवादियों) के बीच कड़ी जोड़ने का प्रयत्न किया है। एक ओर वह ध्वजना की प्रधानता देकर रस की ध्वनिध्वजित स्थिति को पोषित करता है और दूसरी ओर काव्य की ध्वनिध्वजित धर्मत्व शब्दिकता से ऊपर उठा कर काव्याय की महत्त्व देकर देहवादियों में स्थित हो जाता है।

देहवादी सम्प्रदायों में प्रथम ध्वनि उप्रदाय की धारणा भी ध्वनि के वृत्त निश्चय नहीं है। ध्वजना का ध्वनि का एक ध्वजनायक गुण है इस रूप में यह ध्वनि के निश्चय प्रतीत होता है परन्तु ध्वनि ऐन्द्रियता पर बल देता है और ध्वनिध्वजित में भी उसका प्रथम हो सकता है। इस रूप में यह ध्वनि ने स्थित हो जाता है। ध्वनि ध्वजना का ध्वनि की ध्वजना का प्रथम है ध्वनि सिद्धान्त उनके निश्चय है पर ध्वनि ध्वजना ध्वनिध्वजितता पर बल देता है वहाँ ध्वनि सिद्धान्त उत्तम दूर हो जाता है। ध्वनि

१. काव्यध्वजित ध्वनि में ध्वजनायक ध्वनिध्वजित

ध्वनि ध्वजना का ध्वनि है उत्तम काव्य ध्वनिध्वजित — काव्य ध्वनिध्वजित

२. काव्य ध्वजित ध्वनि ध्वनि ध्वजनायक ध्वनिध्वजित

ध्वनि ध्वजनायक ध्वनिध्वजित ध्वनि ध्वजनायक ध्वनिध्वजित

३. उत्तम काव्य ध्वजित ध्वनि ध्वजनायक ध्वनिध्वजित

ध्वनि ध्वजनायक ध्वनिध्वजित ध्वनि ध्वजनायक ध्वनिध्वजित

४. उत्तम काव्य ध्वजित ध्वनि ध्वजनायक ध्वनिध्वजित ध्वनि ध्वजनायक ध्वनिध्वजित

५. ध्वनि ध्वजनायक ध्वनिध्वजित ध्वनि ध्वजनायक ध्वनिध्वजित

घौर ध्वनि गैनों के क्षेत्र समय प्रथम है, जिनकी सीमारेखाएँ कभी कभी ही एक दूसरे को छूती हैं।

प्रभाव

काव्य में काव्य तत्त्वा क अतिरिक्त भी कोई तत्व है जो पाठक को प्रभावित करता है ? इस प्रश्न की सार्थकता ने रस की माय्यता को जन्म दिया। अब तक काव्य के प्राण तत्व के अन्वेषकों ने पाठक पर पड़े काव्य के प्रभाव से घपन को दूर रखा था रस-सिद्धान्त के अन्तर्गत सर्वप्रथम उस विभिन्न प्रभाव की खोज हुई जिसके कारण पाठक काव्य पढ़ता है अभिभूत होता है और अग्रतिम आनन्द की प्राप्ति करता है। यह अग्रतिम आनन्द ही रस की सम्भावनाओं का मूल है।

काव्य के प्रभाव को महत्व देने वाला सम्प्रदाय रस सम्प्रदाय है। रस सम्प्रदाय के समर्थकों का मत है कि काव्य के पठन-पाठन में जो आनन्द आता है वह हमारे हृदय के सुप्त आनन्द का ही स्वरूप है जो काव्यगत उपादानों से परिपक्व होता है। इस तरह काव्यानन्द घौर काव्य की अभिव्यक्तनीयता का स्वान स्वयं सङ्घटन में ही विद्यमान है। काव्यानन्द का कारण रस है जो भाव रूप में सङ्घटन में निबाध करता है और अग्र काव्यगत उपकरणों से परिपक्व होकर रस रूप में हम आनन्द प्रदान करता है। यह 'रस सबया विषयीमत है। सङ्घटन की आत्मा में ही इसकी स्थिति है, वस्तु में नहीं वस्तु तो केवल उसको उद्बुद्ध करती है।'

प्रभाव की माय्यता देने वाले इन आचार्यों ने सर्वप्रथम सङ्घटन की आकाशकता को अनुभव किया। यद्यपि भारतीय काव्य-शास्त्र का समस्त विचार विनिमय सङ्घटन घपना सामाजिक की दृष्टि से किया गया है प्रपेता या कवि की दृष्टि से नहीं परन्तु काव्यानन्द में सङ्घटन का स्वान कितना महत्वपूर्ण है इस पर कभी विचार नहीं हुआ। केवल रस सिद्धान्त की कल्पना ही सङ्घटन के प्रभाव में प्रयुक्त रह जाती है।

रस सम्प्रदाय के धारि आचार्य भरत हैं। यद्यपि इससे पूर्व मन्विकेश्वर धारि नाटकों के प्रसंग में रस की खोज कर चुके थे पर उसे व्यवस्थित रूप में भरत ने ही प्रकट किया। भरत का नाट्यशास्त्र रस का विश्लेषण करने वाला सर्वप्रथम प्राप्य ग्रन्थ है। भरत ने भी नाटकों के प्रसंग से रस का विश्लेषण किया है। उन्होंने कहा कि नाटकों में रस ही प्रधान है और उसके प्रभाव में नाटक की रचना नहीं हो सकती न नाट्यार्थ प्रकटित हो सकता है।'

रस काव्य का व्युत्पत्ति मूलक धर्म है जिसका रस सिमा नाम नहीं रस है।' इसके अनुसार रस आस्वादीय वस्तु का नाम प्रतीत होता है। भरत ने भी इसे

१ रसिकशास्त्र की मूलिका—डा. शोभा ५ ५४

२ य दि रसादे कश्चित्कच प्रवर्तते — १ ७१ आत्मशास्त्र

३ रसते इति रस'

आम्बाजन योष्य ही माना था ।^१ उन्होंने कहा कि जिन प्रकार सहृदय व्यक्ति विभिन्न प्रकार के व्यक्तों से पके भोजन को खाते हुए रस का स्वाद प्राप्त करते हैं उसी प्रकार दर्दक कष्टका गतिक भी माना भावों के भ्रमिणय से व्यञ्जित तथा बाणी भंग और तत्त्व से मिले हुए स्थायी भावों का आस्वादन करता है ।^२ भावों के आस्वादनीय होने की यह स्थिति ही रस है। भरत ने इनकी उत्पत्ति के सम्बन्ध में कहा कि जिन प्रकार के व्यक्तों के प्रीतिपथियों के सयोग से रस उत्पन्न हुआ करता है उसी प्रकार माना भावों के संयोग से नाट्य रस उत्पन्न होता है ।^३ विभाव अनुभाव एवं संचारी भावों के सयोग से रस की उत्पत्ति होती है ।

यह सम्प्रदाय अपनी स्थािति में अत्यन्त सम्प्रदायों की अपेक्षा बहुत प्राग है और काव्यात्मा रस को उसके उचित रूप में प्रस्तुत कर मना है। रस सम्प्रदाय काव्य के बाह्य आकरकों—कमलार, बिदायिता आदि में सम्मग्न नहीं है बरन् काव्यात्मा का रस रूप में दर्शन करने में यत्न हुआ है। भरण द्वारा बसित भाव और रस को काव्य के प्राण हैं अथवा अभिन्न हैं बिना भाव की मत्ता से रस की स्थिति असंभवनीय है और भाव की मत्ता भी रसमेव ही है। रसहीन भाव हा ही नहीं सकता। यह भाव और रस दोनों ही सहृदय पर पड़े काव्यगत उपकरणों के प्रभाव के परिणाम हैं। काव्य अस्तु रस उत्पन्न कर सकती है भाव की व्यञ्जना कर सकती है परन्तु स्वयं वह रस ही न भाव। भाव सहृदयमत तत्त्व है जो काव्यानुशीलन से प्राप्त हुआ जान है और फिर काव्यगत तत्त्वों से उद्गीत होकर रस रसा को प्राप्त हो पाते हैं ।

भरण के पश्चात् काव्यशास्त्र के प्रणेता प्रमुक्त धर्तकारवादी थे इनमें भावही और बड़ी प्रमुक्त थे। यह धारणा रस तत्त्व से परिचित हो से पर उसको प्रमाणता इन्हें माय्य न थी।, बड़ी का मत था बहुत उलझना-मा है। रस तत्त्व से बड़ी प्रभावित था अथवा य पर उमका स्वरूप स्याद कि महत्त्व बहु ठीर से समझ मही पाये और फिर धर्तकारवादी का धारणा भी उन्हें अंधिक्त था रसगत रचना को बहु माय्य गुण युक्त मानते हैं ।^४ पर रस को बहु काव्य का प्रमुक्त तत्त्व न स्वीकार कर

१ अम्बाजनान् रस — कालदास

२ कथा बहु इष्य सुनीष्य उभैव-वियुक्तं

सम्बन्धिनो बुद्ध्या बुद्धेर्बुद्ध्या जना । १११३

भाः भिन्नय भुक्तः कथा स-स-ले बुद्धे

सम्बन्धिनो बुद्ध्या बुद्धेर्बुद्ध्या जना । १११३

३ कथा स-स-ले बुद्ध्या बुद्धेर्बुद्ध्या जना । १११३

४ विमलदास अर्थिकी संशोधन-संस्थान । काव्यशास्त्र

५ स-स-ले बुद्ध्या बुद्धेर्बुद्ध्या जना ।

ब-स-ले बुद्ध्या बुद्धेर्बुद्ध्या जना । — १११३, कालदास

६ कथा स-स-ले बुद्ध्या बुद्धेर्बुद्ध्या जना ।

ब-स-ले बुद्ध्या बुद्धेर्बुद्ध्या जना । — १११३

सके। बन्धोक्तिकार रामन ने रस को कांति-गुण के अन्तर्गत समाहित कर लिया है। और धर्मकारबायी उद्भट ने रसवत् प्रेयस और उन्मत्त धर्मकारों के अन्तर्गत रस का समन्वित कर लिया। उन्होंने रसवत् के अन्तर्गत स्वाधी संघारी धादि भाव एवं विमार्शों धादि का उल्लेख भी किया है। उद्भट की भाँति उद्भट म भी रस को धादिक रूप में स्वीकृत किया उन्होंने कहा कि काव्य की धरमता का अर्थ रस को है। (सांस्कृतिकता के कारण) देदीप्यमान और बोधाभाव के कारण निर्मल रचना का निर्माता महाकवि सरस काव्य की रचना करता हुआ थपुछा को प्राप्त होता है।^१ ध्वनिधार धार्मदबधन भी धर्मकार की धपेला रस के धादिक गसपाठी हैं। उन्होंने ध्वनि काव्य को उत्तम काव्य कहा और समस्त ध्वनियों में रस-ध्वनि का सर्वथेष्ठ कहा।^२ और इस प्रकार स्पष्ट किया कि धर्मकार गीति धादि सभी तरहों में रस प्रधान है।

मध्ययुगीन हिन्दी भाषायों ने भी रस को प्रधानता दी। महाकवि वेव रस के प्रबल समर्थक थे उन्होंने अपने काव्य सलन में यद्यपि सभी तरहों का समन्वय प्रस्तुत किया है। परन्तु रस सिद्ध कविता को ही कविता कहा। उन्होंने धार्षार्थ को काव्य का सार और रस को धार्षार्थ का सार कहा।^३ उनके मत से काव्य के धर्मकार तो मात्र धर्मकार (धामूपण) है। छत्र तन है और रस बीच धर्मवत् जीवन (प्राण) है छत्र धर्मवा काव्य धरीर बिना धामूपण (धर्मकार) के तो जीवित रस मकता है परन्तु काव्यारमा रस के धर्माव म छत्र धर्मवा कविता धरीर रास के समान ध्यव है।^४ यी पति धादि में भी रस का समर्पन किया है।

हिन्दी के काव्य धास्त्रियो एक कविता ने भी धादिकागत रस को ही काव्यारमा के रूप में मान्यता दी है। धाधाय द्विवेदी ने कहा था रस ही कविता का प्राण है और जो धर्माव कवि है उसकी रचना म रस धर्मव्य होता है। नीरस कविता कविता ही नहीं।^५ प रामनरेव त्रिपाठी भी द्विवेदी की ही भाँति सरस कविता को कविता कहने का बिचार रखते हैं वह कहते हैं जिस रचना के मुनने ध हृदय में रस की उत्पत्ति न हो उस रचना को कविता कहना ही क्यों चाहिये? रस

१ रसवर्तित रूप्य रा गाँरि रसावध

महाधर धादि संघारि निमलधिनिका रसम् । — १० काल्याणक

२ मधुबधधनधरकउर सरसं सुसंधाकवि कव्यन

रसुधमाकव्यधर्म प्रासधनेर्धत करा परस्धादि । ५४ — काल्याणक

३ रसमारलरामान ध्यमसाध्याधिर कमराः ।

धनेररसाधधिमभावेन धसुमालो ध्यधिकाः । २१३ धनधाना३

४ राधर मार राधान को रस सेधि काव्य तुमार । — राधरसाधन

५ धर्मकार मधुन सरस बीच धर्म तन भास ।

तन धून धिनु हू धिनो धिनु धून तन राध । — राधरसाधन

६ प्राधीव धधिन त्रैर कवि—महाधीर ममार द्विवेदी ५ ३२

स्वामाबिध है अर्थात् यदि रस का महापद है तो स्वामाबिध है नहीं तो प्रस्वामाबिध है। अतः रस ही काव्य का मूल तत्त्व निश्चय होता है क्योंकि अंत या भाषा केवल बचान मात्र है अथवा उनको धारीत कह लीजिए भाव और विचार ही उत्कृष्ट (कविताओं के) प्रायः हैं। छायावादी कवि पद्य भी अर्थात् कवि के विवेकी होने की बात कहकर काव्य में भाव की प्रतिष्ठा करते हैं। रस की पृष्ठभूमि है। १। रामकृष्ण बर्मा भी रस को मान्यता देते हुए कहते हैं 'मेरी दृष्टि में रस अथवा है वह काव्य का महत्वपूर्ण अंग भी है। जब तक काव्य रहता रस का मृष्टि निरन्तर जानी रहती।' प्रायुक्ति कवि विनय से कवि के हृदयपत्र रस की अभिव्यक्ति का कविता माना उक्तों ने कहा कविता तो कवि की आत्मा का आभोग है उनके हृदय का रस है जो बाह्य की वस्तु का अन्तर्भाव कर पूरा पड़ता है।^१ अतः प्रायुक्ति और मध्यकालीन नयी युवा में रसवादा मान्यता की प्रतिष्ठा मिली है।

रस के महत्त्वा की मान्यता अतः जन पर स्पष्ट है कि काव्यात्मा रस महत्त्व में उल्लस जाती है और महत्त्व में उसकी पूरा प्रकल्पन स्थिति होती है। अतः रस रस का अन्तर्भाव काव्यगत प्रभाव का ही अन्तर्भाव है यह प्रभाव रस का कारण अथवा स्वयं रस रूप है। काव्य में यह अन्तर्भाव उन्मत्तता में उन्मत्तता है अतः इसको किसी एक उपकरण में सीमित करना अनुचित है। यह हृदय में स्थित स्वाधीनता का परिपक्व रूप है। यहाँ मौल्य अभिव्यक्ति और रस का अर्थ एक विधान की सूचना देता है। यह विकास स्तुत न मूल की धार है। अतः काव्यात्मा अन्तर्भाव मूल तत्त्व है किसी भी स्तुत तत्त्व में इसकी व्याख्या अन्तर्भाव है। मूल रस ही अन्तर्भाव काव्यात्मा की उचित व्याख्या हो सकती है।

परन्तु अन्तर्भाव अभिव्यक्ति के लिए इस सूत्र तत्त्व को या स्तुत तत्त्व की आवश्यकता होती है। काव्य में यह अन्तर्भाव मूल होकर जाता है क्योंकि अन्तर्भाव नयी प्रेयसीनता बन सकता है। रस की सूत्रता और अन्तर्भाव की प्रेयसीयता के लिए यह अन्तर्भाव और स्तुत रूप के लिये अभिव्यक्ति के एक ही माध्यम की आवश्यकता होती है। इसी आवश्यकता की पूर्ति करता है बिम्ब। बिम्ब भाव और रस का मूल रूप है रस या भाव रूप से प्रकट नहीं हो सकने वह व्यक्त हो सकता है। बिम्ब ही रस और भाव की व्यञ्जना करती है। इस रूप में बिम्ब रसवाद के अन्तर्भाव निरूप

१ कविता केन्द्र की अन्तर्भाव—रसवादी कविता १ १ ३

२ कविता का—रसवादी १११ १ ३३

३ कविता का अन्तर्भाव—रसवादी १११ १ ३३

उत्तर ११ अन्तर्भाव में अन्तर्भाव की अन्तर्भाव कविता का अन्तर्भाव।—रसवादी ११ १ ३३

४ अन्तर्भाव—रसवादी १११ १ ३३

५ कविता का अन्तर्भाव—रसवादी १११ १ ३३

या जाता है। उस के उपकरण जिनके द्वारा उस आस्वाद्यनीय बनता है बिम्ब अनुभाव आदि सर्वत्र बिम्बवारणक होते हैं। दूसरे और ऐतिव्यगम्य वर्णनों के द्वारा ही भाव और उस प्रतिबिम्बिता पाते हैं। बिम्ब ही रस और भाव को अनुभवयम्य बनाता है। इस रूप में बिम्ब और भाव—एक दूसरे के पूरक—अन्वयान्वित प्रतीत होते हैं। बिम्ब सर्वत्र भाव का उपकार उसकी अनुभवयम्य व्यवस्था के द्वारा करता है और भाव सर्वत्र स्थापित होने के लिए अथवा आस्वाद्यनीय बनने के लिए बिम्ब के माध्यम से प्रकट होता है।

जीवन-मीमांसा

काम्य के प्राण तत्त्व के रूप में प्राकृतिक युग में एक अल्प तत्त्व भी स्वीकार किया गया। यह तत्त्व है जीवन मीमांसा।

भाव के युग की बौद्धिकता सामाजिक विषमता और धार्मिक भ्रोषण ने कवि और काम्य दोनों के मन में एक भयानक उबल-गुथस मचा दी है। इससे नैतिक मूर्खों के साथ काम्यगत मूर्खों में भी अन्तर आया है। पहले कविता का सत्य धर्म धर्म काम मोक्ष की प्राप्ति कहा गया है और कवि ने सर्वत्र इन्हीं को वर्ण्य बनाने का प्रयत्न भी किया। सूफी संतों मध्ययुगीन भक्तों और रीति-नुपीन शृंगार प्रिय कवियों का सत्य क्रमण मोक्ष धर्म और काम था। 'अथ अथ तक प्रकृता वा। १६ के बाद की कविता में धार्मिक वैषम्य उभरने लगा। कवि ने इस और पीड़ा को भोगा यह पीड़ा उसकी अपनी नहीं थी बरन् समाज और धर्म की अनुचित व्यवस्था से उभर कर उस तक आई थी। इससे कवि को बिड़ोही बनाकर तात्कालिक जीवन की मीमांसा करने पर विवश कर दिया। भारतभू युग में राष्ट्रीयता का रंग धार्मिक गहरा रहा और आजादाद में कसा का बिड़ोह धार्मिक रहा बस्तु की नवीनता उसमें कम थी वह मुख्यतः काम और मोक्ष की समस्या को लेकर चला है। पर १९३३ के बाद में भारत-स्वतन्त्रता के बाद जब धार्मिक सामाजिक वर्ण-गत और छोड़ित व धोषक की समस्याओं ने जीवन को बहुत प्रकृषित किया तब मार्क्स के भौतिकवादी दर्शन को आजाद में रखकर कवियों ने इस बुरे बर्षित किया। आगे चलकर वह भी अनुभव हुआ कि समस्याएँ केवल बाहरी ही नहीं आंतरिक भी हैं समाज की ही नहीं व्यक्ति की भी हैं। आज सबसे बड़ी समस्या सबसे बड़ी बिड़म्बना (ट्रेनेडी) स्वयं व्यक्ति है—अचेतन और जागरूक व्यक्ति। आज का व्यक्ति स्वयं समस्या प्रिय है अपने हृदय के अन्तर्गत बुद्धि-हृदय के संघर्ष उसमें ही और धर्मियों (कम्प्लेक्स) को वह स्वयं प्रयय देता है क्योंकि यही उसके बौद्धिक व्यक्तित्व की धर्मिण्यं सर्व हैं। आज का कवि भी ऐसी ही एक जागरूक संघर्षप्रिय, बौद्धिक-चेतना होने के नाते स्वयं एक बिड़म्बना है। काम्य में वह अपने मन और बुद्धि के संघर्षों को बिभिन्न स्तरों पर रखकर उनका समाधान खोजने का प्रयत्न करता है। अन्त में कवि बाह्य जीवन की मीमांसा नहीं करता बरन्

धरने घातक जीवन की घमस्माधों का समाधान खोजता है। इस प्रकार जीवन मीमांसा के दो रूप स्वीकृत हो चुके हैं एक बाह्य जीवन नो मीमांसा दुसरा घातक जीवन की मीमांसा और काव्य के प्रगतिवाद व प्रयोपवाद (मई कविता) इसी की अभिव्यक्तियाँ हैं। इमें एक की दृष्टि अन्तमुखी है दूसरे की बहिर्मुखी एक के सम्मुख मन और बुद्धि की उमझमें है ता दूसरे के सम्मुख तन और धन को। एक व्यक्ति के पीड़ित घट्ट मन और बुद्धि के अन्तर्मुख का गायक है ता दूसरा समाज के दमित, दमित बग का उद्धारकर्ता। यहाँ प्रथम प्रगतिवाद तत्पश्चात् प्रयोपवाद के जीवन मीमांसक रूप और बिन्दु की मायता को अन्त का प्रयत्न किया जायगा।

प्रगतिवाद

प्राचीन कवियों और धार्मिकों के सम्मुख रमणीयता और रमयता काव्य का धारावाहक का और धारान्व प्राप्ति कराना उनका सर्व स्वीकृत उद्देश्य था परन्तु प्रापृनिक युग में यह मानव्य बरसा और धार्मिकों को निगना पडा कि मुखर और स्वल्प निर्माण ही कविता का उद्देश्य है। नात्यमान अनुबेरी म कहा कविता को कुछ लाभ बिलान या बिना मानने हैं किन्तु यथाय कविता बिलान नहीं बह तो एक निर्माण है महान निर्माण। हिमात्म की तरह स्वाधी गता की तरह उपमागी मूर्धे किरणों की तरह प्राकश्यर और वायु की तरह अनिवाय।' धार की कविता स्वल्प मोर अथवा कल्पना मोर के रलीन र्भाव में भी बिरताम मरी करती बह जीवन निर्माण की इच्छुक है इसी लिए धार-जीवन ने हरी हुई कविता माहिर्य की मधमे बड़ी निर्मग्नता मानी धानी है। धार के कवि ने अनुभव किया कि स्वल्पों का कल्पना मोर धार के धार्मिक संबध बन र्भव्य में जी बर्ही मकता उमकी मबदतगीम कल्पनाएँ धार के पून पुनार और कीचड़ में बम तोर देती हैं। पन ने निना टम मुक की कविता स्वल्पों में महीं पन मकती। उमकी बड़ों को धानी पोषण मामपी ब्रह्म काने क लिए कदोर धरती वा धापय मेमा पड़ रहा है। और कुन-जीवन ने उमके बिर मविन मुक स्वल्पों को जो चुनेनी ही है। उमको उमे स्वीकार करना पड़ रहा है।' जीवन की धनेव सपस्यावा की कवि ने अनुभव किया। उमने जीवन के धाममग्य को अन्त हूये पठने सापत्रम्य स्वानित करने की बच्छा की ययोकि 'बाह्य अनुपगतता के बूह में गड़े होकर आन्तरिक तौन्य की उगायता महीं हो मचनी निरल्प धीर निरमम अन्ता से बीच गड़े होकर धाप परिणों के मोन्वय नाक की कल्पना मरी कर मचन। धमन कविता जीवन की उपासक उमकी मुन्दर बनाने की इच्छक हा जाती। इस

१ मादिबेदेग—नात्यमान अनुबेरी १० १३३।

२ प्रापृनिक कविता ३ धार व धानुमर बनी १० ३।

३ कल्पना—कल।

४ धार के पून—दि १, १० १८१।

कविता की परिभाषा नहीं दृष्टि से की गई। अथल ने कहा 'कविता सामाजिक व्यक्तियों की अभिव्यक्ति और कवि के सामाजिक अनुभवों की स्वतंत्र व्यक्तता है। अंशम जी पुनः इसी स्वर में कहते हैं 'साहित्य मनुष्य में उसकी परिस्थितियों या वातावरण के पारम्परिक संघाम का व्यक्तीकरण है। प्रगतिवादियों ने काव्य को एक सामूहिक चेतना माना जिसमें व्यक्तिगत सुख-दुःख के पीछे याना मानवता के प्रति अपराध था। व्यक्तिगत अनुभूतियों के विषय में अंशम ने कहा प्रगतिवाद का मूल ही उस समाज की स्थापना है जिसमें व्यक्ति और समाज के पारस्परिक संबंधों की रक्षा न होनी। उस वैयक्तिक अनुभूति का क्या महत्व जो व्यक्ति को सर्वप्रधान बनाकर समाज के लिये अपरिचित रख जाती है। इस प्रकार उन्होंने अनुभूति का अर्थ व्यक्तिगत अनुभूति से न लेकर समाजगत अनुभूति से लिया। यह अनुभूति सौपितों की पीड़ा और वर्ग संघर्ष की भीषणता से प्राप्त होती थी। आर्थिक वैयक्तिक उनके काव्य की प्रेरणा थी और इसको दूर करके बड़े साम्य स्थापित करना उनका स्वप्न था और इस स्वप्न को संजीव करने का प्रयत्न था उनका काव्य। प्रगतिवादी सुमन ने कहा था कवि सबसे बड़ा समाजशास्त्री होता है 'काव्य उसका उपलक्ष्य हो जाता है और लक्ष्य होता है उस सामाजिक सत्य और मानवीय जीवन-योजना की पूर्णता का ऐश्वर्य बोध को सामाजिक चेतन्य का मार्मिक आधार है। 'यद्यपि इस माध्यमों को सर्वसम्मति नहीं प्राप्त हुई फिर भी यह प्रगतिवादी काव्य की समाजशास्त्रीय व्याख्या का अच्छा विरोधम करती है।

इस प्रकार प्राचीन काव्ययुग मायताओं का दाय हुआ और काव्य की अनिर्वायता का अर्थ जीवन मीमांसा मानी गई। कवि ने अपने सामाजिक उत्तरदायित्व को समझ और समस्त अर्थ आबन्धक तर्कों—एक कल्पना प्रति आदि को सामाजिक काव्य की अनिर्वायता समझ कर नये रूप में प्रस्तुत किया। कल्पना के विषय में उन्होंने कहा प्रगतिवाद को उपनों से प्राप्त नहीं है। परन्तु वे स्वप्न एक गुहन सुन्दर परिपूर्ण और प्रायस जीवन के निर्माण के प्रतीक होने चाहिये।^१ निर्माणवादी होने के लिए कल्पना का अनुभूति के आधार हुआ आबन्धक है। अनुभूति प्रधान रचना में कल्पना की स्वतंत्र संतुलित और गरिमायुगी अभिव्यक्ति ही उन्हें स्वीकार है। अंशम ने इस तथ्य को स्पष्ट करते हुए लिखा 'काव्यात्मक सर्जन में मैं कल्पना को अनुभूति की मुतापेक्षी मानता हूँ। यदि अनुभूति में यहूतई सीधता और व्यापकता होगी तो उसका अंशम करके याही कल्पना भी उदात्त विद्यत

१ काव्य संघर्ष—आर्य सूत्रिका १ ३४।

२ साहित्य और साहित्य—अंशम अनुभव १ ।

३ काव्य संघर्ष आर्य सूत्रिका १ ३२।

४ साहित्य—अनुभव सूत्रिका १ २।

५ अंशम ३, ४, ५, ६—अनुभव १ २३।

म्यान्वीमा घोर प्राणवान होगी नहीं तो वह केवल कविगत घोर सार के व्यक्त केंद्रित जैसी निष्पन्न होगी।¹ इस प्रकार समाज के सबधान का निर्माण सबधान बर्षों को स्थापना का समय के प्रति शक्ति ही उनकी कविता के साथ प घोर अन्य काव्यगत समस्त तत्त्व उनके साधन रूप में प्रयुक्त हुए हैं।

इस प्रकार काव्य में बर्षों इन्होंने पुरानी मान्यताओं का खंडन किया वहीं काव्य के उपकरणों के प्रति भी बिड़े पकट किया। अलवार सर मयोनात्मकता का इनकी दृष्टि में बहुत अधिक महत्त्व न था परन्तु कल्पना को वह विस्मृत न कर सके उन्होंने उस लोच-समयकारी रूप में स्वीकृत किया। दीन-हीन जनता बगमपय पदों से काव्य में मुक्त नहीं हो सक्ता था उसके लिए क्यो भी धारदारता थी। फलतः हिम्बों का प्रयोग इनकी कविता में लुब हुआ है। यद्यपि उनका सत घोर प्रयोग मानव जीवन घोर लोचपगय हो गया है पर अल विरोध सामाजिक विपयता घोषित केला को बापी देने के लिए हिम्बों का प्रयोग भी धारदारक हो गया। इस समय तक कला के क्षेत्र में भी पर्याप्त आन्दोलन हो चुका था। कवि कल्पना घोर मूर्ति निर्माण की उपयोमित को लुब गमक कर प। प्रयतिवारी पत धारदारक काम में ही पम्बक का मुक्ति में म्भर घोर मक्ति म्भों पर बल दे चुक प फलतः काव्य में हिम्ब विचार का पकट निर्दिष्ट विष्ट किया का चक प घोर कविता में बर्णयत में हिम्बों का प्रयोग किया। "य प्रकार स्पष्ट है कि बाध्यात्मा के रूप में जीवन-मीमाणा के माप-माप कल्पना घोर मूर्ति निर्माण की कारणा भी बनवनी हो गई। हिम्ब-विधान की धारदारता प्रयतिवार में सर्वक बनी रही है।

प्रयोगवा

जीवन मीमाणा का दूसरा रूप प्रयोगवाद में मानने आया। यह प्रयतिवारी मीतिधता घोर कल्पनात्मकता के विराय में मानव के धाने धारदारक इन्नों के प्रकाशन का स्वल्प है। प्रयतिवार बन्धु में अधिक म्भविष्य है घोर प्रयोगवा कला म। प्रयतिवार में धारमानुमिति का धमाक था। उनकी धनधारिता न ध्यतिन की धितन धारा को बन्धु न हन कर धारणा की घोर मोठ दिया त्रियके पम्बकम मर्द कविता धारका प्रयोगवाद का जन्म हुआ।

प्रयोगवादी कवि काव्य में ध्यतिन को विधेय महत्त्व देने हैं उन्होंने ध्यतिन के धन-नपयों घोर सब कुटि के इन्होंने घोर मग्ग्यारों को धनने काव्य का कल्प विधय बनया। वे समाज घोर ध्यतिन क जीवन की धितन उनमिधियों के प्रति म्भविष्यारी हैं। वे नवीन धारों क धम्बक हैं। तारन-तक की मुक्ति का धन प ने लिया था। व 'किसी म्भितन पर पट्टे नहीं हैं धभी पारी हैं पारी नहीं पारों से धम्बेरी।

१ अरविन्द, तारन-नियम, १९२९ पृ ४०२।

२ कल्प, मन्दिता, पृ १०।

उनमें मरैबय नहीं है सभी महत्वपूर्ण बिषयों पर उनकी राय प्रसंग-प्रसंग है।^१ इसके प्राठ साल बाद भी धर्मोप यही कहें उनके 'ये कवि धर्मो विराम स्वप्न पर नहीं पहुँचे हैं लेकिन उनके प्रागे प्रशस्त पद्य है और एक भासोक्ति सिद्धि रेखा।^२ और प्राब भी समस्त उनके सिंग यही कहा जा सकता है।

काव्यगत शर्यों में उ होने कसा-साधना पर बिधेय वस दिया। उन्होंने कहा 'केवल बिषय या वस्तु का शरय भी उतना ही प्रबूरा है बिठना कि केवल बिषयी या शरियक का। कवि या साहित्य स्रष्टा के लिये यह प्रबूरापन बिधेय रूप से उतरमाक है। क्योंकि इन दोनों को देखना और देखते रहना और प्रबूक डम से प्रविष्ट करना ही कवि काम का बिधेय उतरसायिरक है।^३ प्राबपस में वह प्रातमगत प्राब के बिठ्य हैं। प्राब का समाब में प्रेषणीय होना प्राबपयक है इसलिए कविता को प्रातमानिब्यक्ति की सीमाओं से दूर रखा प्राय। उन्होंने कवि की उटस्व प्रबूति पर बस देठ हुए कहा है काव्य रचना मूलतः प्रपने को प्रपनी प्रबूभूति से प्रबूक करने का प्रयास है। प्रपने ही प्राबों के निर्बन्धीकरण की वेष्टा। बिना उसके काव्य निरा प्रातम निबेदन है और उच होकर भी इतना प्रविष्टपठ है कि काव्य की प्रभिवा के मोम्य नहीं है— उचयनीमता की कसीटी पर उच नहीं उतरता।^४ इनकी उच्यसिद्धि मान्यताओं में वो उच स्वष्ट हूँते है पहुसा यह कि काव्य में प्रातमानिब्यक्ति का उतना स्वाग नहीं है बिठना निर्बन्धीक प्रभिब्यक्ति का प्रसर यह कि काव्य कसा साधना है। प्राया और शर्यों की समस्या उचय उसके समुख बनी रहती है। परन्तु इनके प्रयोयों से इनकी मान्यताओं का समर्बन नहीं होता यह कवि और प्रबूक्तिबानी है और प्रातमानिब्यक्ति ही इनके काव्य का मूस है। बास्तव में प्रति प्रबूक्तिबानी कवियों की यह मान्यताए एक प्रकार का बिरोधाभास उतपन्न करती है।^५

प्रयोगबारी कवि कल्पना को भी काव्य में महत्वपूर्ण स्थान देता है। उचकी उचिबना प्राबु बगत से उच्यपिठ है प्रस्तः उसकी कल्पना का बिवास मूठम से स्वून की और रहता है। कल्पना के बिषय में प्रमदीर मारती कहते हैं कल्पना और प्रबार्ब दोनों ही मानय प्रीबन के प्रग हैं। साहित्य में भी केवल प्रबार्बबारी सीनी से मनुम्य कभी समुष्ट नहीं रह सकता और प्रुम उिर कर सायाबारी सीनी का प्राग प्राबपयक है।^६ स्वष्टतः कल्पना को वह काव्य की प्राबपयकता समझते हैं।

प्रयोगबारी प्रपवा मये कवि बिब बिधान के सम्बन्ध में प्रपने स्वष्ट बिचार रखते हैं। उन पर इतिवट मोरेस पाठ्य प्राधि का प्रपक प्रमाब है जिसक कारक

१ एर उच्य—सी कवेब मूिका १ १-५।

२ एर उच्य—सी कवेब मूिका १० १५।

३ मरै कवेब प्रक १ १० १०।

४ क्वि—कवेब मरिग १० १।

५ प्रबूक्ति बिरो कवेब के काव्य सिद्धि—टा मूिग पन् १५५, १ ११

६ प्रवतेषाड क मनासा प्रदीर प्राता, १ १११ १११

बिम्ब विद्या के लिए उनका विरोध था वह है। उन्होंने प्राचीन प्रतीकों और उपमाओं को छोड़कर नवीन उपमान और प्रतीक ग्रहण करने का आग्रह किया है। इसी प्रवृत्ति का स्पष्टीकरण गिरिजाकुमार माधुर करते हैं।

‘वह (मया कवि) अपने माध्यमों में तेजी से रद्दोबदल करने लगा, अन्य और उपमाओं को उसट-पसट कर नई जमीन खोजने लगा। अपने पहले और सूदम मतोंमेंगी की अभिव्यक्ति के लिए परिचित प्रतीक जुटाये गया।’

यहां अक्षर का मूर्त से बिम्ब बिम्ब की धारणा की ही स्वीकृति है। नये कवियों में नवीनता का विशेष आग्रह था। क्योंकि प्राचीन उपमान निरन्तर प्रयुक्त होकर रूढ़ और अर्थ मात्र रह गए थे बिम्ब विद्या को उचित उनमें न थी। नवीनता के लिए गिरिजाकुमार ने कहा ‘अपने जैसे और एक परिचित क्षेत्रों में भूमने वाले प्रतीक—उपमाओं के स्थान पर वस्तु जगत के समस्त किम्बाऊओं को उसने अपनी वर्तमान अवस्थियों से छुट्ट कर उन्हें ग्रहण किया है। मानसिक जगत की अनेक सूक्ष्म प्रतिबिम्बों के नये उदाहरण हैं।’

धर्मकार अन्ध, समीप आदि को नई कविता में विरोध महसूस नहीं मिला पर अनुभूति की बिभारमकता व बिम्ब विद्या की नवीनता पर इनकी विरोध दृष्टि रही। समग्र नई कविता अपने आप में एक-एक अनुभूतिमय क्षण की बिम्बारमक अभिव्यक्ति है। कल्पना और उसके मूर्तनिर्माण के व्यापार को प्रथम बार यह स्पष्ट महसूस प्राप्त हुई है। प्रथम रूप से यदि बिम्ब को सबसे स्वीकार्य है पर उसका स्पष्ट उल्लेख प्रथम बार नये कवियों ने ही किया। स्पष्टता जीवन भीमता उनके काव्य में प्रयास है पर कला और अनुभूति की अभिव्यक्ति की दृष्टि से इस युग में बिम्ब को विरोध महसूस मिला।

समष्टि में सभी भारतीय दृष्टिकोणों से परिचित हो जाने के उपरान्त यह कहा जा सकता है कि यद्यपि भारतीय समीपकों की दृष्टि कल्पना और उसके व्यापार बिम्ब विद्या पर प्रत्यक्ष नहीं गई है पर अप्रत्यक्ष रूप से सभी ने कल्पना की स्वीकार किया है। कल्पना की दृढ़ धारणा उनमें नहीं थी पर कल्पना की सम्भावनाएँ उनके विचारों में अवश्य रही थीं। धार्मिक युग में कल्पना की और कवियों का विरोध था वह रहा और समीपता भी कल्पना का ही परिचित हो गई। धार्मिक कवियों ने बिम्ब विद्या के महसूस को समझा है और स्पष्ट रूप में उसका उल्लेख भी किया है। इस प्रकार प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से बिम्ब की धारणा को सर्वत्र प्रथम मिला है।

पारंपारिक दृष्टि

हिन्दी साहित्य के पारम्परिक होने के कारण हमारा विरोध प्रयोजन हिन्दी व

१. नूतन कवि विचारधारा, पृ. ३०

२. वही, पृ. ११

संस्कृत साहित्य के समीक्षकों से ही है परन्तु यहाँ संक्षेप में एक विह्वल दृष्टि से पाश्चात्य धारणाओं का वर्णन कर लेना भी उपाय ही होगा। क्योंकि यहाँ कल्पना और बिम्ब विधान की प्रावश्यकता को स्पष्टतः और बहुत पहले से स्वीकार किया है। काव्य के प्रवाल तत्वों के विषय में हब्सन ने काव्य के चार तत्वों की घोषणा की है।^१ ये चार तत्व हैं

१ विचार Intellectual Element thought

२ भाव Emotional Element feeling

३ कल्पना Element of Imagination

४ धर्मिभक्ति Technical Element or the Element of composition

काव्य में यही तत्व विशेष महत्त्व के धर्मिकारी हैं। इनमें भाव और विचार वस्तुतः एक ही सत्ता के दो स्वरूप हैं। उनमें मूलभूत अन्तर नहीं है केवल रूपगत अन्तर है। अतः इन चार तत्वों को तीन विभागों के अन्तर्गत सरसता से रखा जा सकता है। ये तीन विभाग हैं—भाव (विचार) भाषा और कल्पना। यहाँ हम इन्हीं तीन तत्वों के समर्पण कर्ता विद्वानों की मान्यताओं का उल्लेख करेंगे। और उनमें कल्पना व बिम्ब की मान्यता को समझने का प्रयत्न करेंगे।

१ भाव

ग्रंथ जी के धर्मिकाय धारणाक भाव की धर्मिकार्य सत्ता को स्वीकार करते हैं। होमर और जर्बिस से लेकर प्राच्य कवि तक काव्य में भाव सत्ता का प्रयोग और समर्पण दोनों अन्तर्गत हैं। सभी रोमांटिक और उनके परवर्ती कवियों ने इसका स्पष्ट उल्लेख किया है और काव्य में भाव की सत्ता को विद्युत् स्थान दिया है।

वर्डस्वर्थ ने कविता की परिभाषा देते हुए कहा है प्रबल बेगबती भावनाओं की स्वाभाविक उमड़न ही कविता का रूप-धारण करती है और प्रघात तत्वों में स्मृत मनोवेगा से ही इसकी उत्पत्ति होती है। 'यहाँ कविता की प्रबल बेगबती भावनाओं की स्वाभाविक उमड़न की धर्मिभक्ति कह कर भाव सत्ता पर कवि ने विशेष बल दिया है। धारणाक मूल में कविता क्या है? के प्रश्न के उत्तर में कहा कि कविता विचार और वाक्य है जिनमें भावना स्वाभाविक रूप में सन्निहित रहती है।'^२ धारणाक

१ Introduction to the Study of Literature—Hudson, p 15

२ Poetry is the spontaneous overflow of powerful feelings, it takes its origin from emotions recollected in tranquillity

—Wordsworth

३ What is poetry but the thought and words in which emotion spontaneously embodies itself?

—Will quoted by Hudson in Introduction the Study of Literature, n. 82.

काव्य का प्रायः सब

ईजमिट में भी काव्य में भाव सत्ता को बिलोप महत्व दिया। उसने कहा कि कविता को भावात्मकता और भावना की भाषा होती है। काव्यशास्त्र में भी यहाँ पर निबन्ध लिखते हुए इसी तरह पर बत दिया था। वह कहता है कि प्रत्येक कविता काव्यशास्त्र के भाषा की दृष्टि उपस्थित करती है। उसके अर्थ का विकास बिचारों और भावों की उन्नत भूमि से स्वाभाविक रूप से इस प्रकार स्थिर हो जाता है जैसे घड़ियों का पहार वर्षीय बृक्ष जिसमें न कोई पत्ता और न कोई पत्ती उड़ जाती है। इसी भावनात्मकता की भाँति रस्किन ने भी भाव सत्ता पर बिलोप बत दिया है उसने कहा कि काव्य रचना कल्पना के द्वारा उदात्त भावों के उदात्त स्वर को घोर सनेत करती है। रस्किन के इस कथन में कल्पना और उदात्त भावों की घोर बिलोप बत दिया गया है। उदात्त भावों में वह भद्रा प्रेम, प्रशंसा आनन्द आदि की गणना करता है। इस प्रकार काव्य में भावसत्ता का वह पूरा समग्र है। सभी रोमांटिकों की भावसत्ता के प्रति बिलोप रचि है। कवि यही भी भाव को काव्य का एक अनिवार्य पंग मानता है। उसने दुर्गात्मक भाव को मधुर काव्य मान कर काव्य में भाव की अनिवार्यता को स्वीकार किया है। बस्तुतः काव्य में भाव की स्थिति है भी अनिवार्य त्वक और भावात्मक बताया था। कवियों और भावोक्तों ने सर्व्व इस तरह की प्रशानता दी। भावोक्त कोर्टहोर ने कविता की उन्नत भाषा में अभिव्यक्ति है। कविता कल्पना सम्पन्न भाव और बिचारों की उन्नत भाषा में अभिव्यक्ति है। भावोक्त बिलोपक बाद्स बटन ने भी कविता में भावात्मक और सतीतात्मकता पर बत दिया है। उसने कविता को मानव मस्तिष्क की मूर्त्ती और कलात्मक अभिव्यक्ति को भावात्मक और सत्यपूर्ण भाषा में हुषा माना। वेबस लैहट आदि भावोक्तों ने भी कविता में भाव और कल्पना पर बिलोप बत दिया है। कैंबेन में

1) Poetry is the language of the imagination and the passion. —Hazlitt, quoted by Hudson, An Intro p. 83

2) उन्नत भाषा और भाव का परस्परान्वयन के सिद्धांत १ ०
 2) Poetry is the suggestion by the imagination of noble ground for noble creation. —Ruskin quoted by Hudson, p. 84

3) We look before and after find for what is naught... Our sweetest songs are those that tell of the saddest thought. —Shelley

4) Poetry should simple, sensuous and passionate. —Milton.
 5) Poetry is the art of producing pleasure by the just expression of imaginative thought and feeling in metrical language. —Court
 hope, quoted by Hudson, Ibid P 84
 6. Encyclopaedia Britannica, Volume 18, p. 106

कहा कि कविता प्रबल भावनाओं और उन्नत कल्पना का प्रकाशन है।^१ बौहट ने भी कहा कि कविता सक्ति सत्त्व और शौन्दर्य के लिये भावों का प्रकाशन है। वह अपने विचार कल्पना और विकल्पना से घनिष्ठ करके या उनके द्वारा स्पष्ट करती है। और बिम्बत्व में एकत्व के सिद्धान्त पर भाषा का निर्माण करती है।^२ यहाँ भी काव्य के भाव और विचार तत्त्व पर बल दिया गया है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि ग्रंथों के भाव सभी कवि और प्रासंगिकों ने भाव प्रकटा विचार को काव्य में प्रमुख स्थान दिया। भाव ही उनके मत से वह तत्व है जिसके आधार पर काव्य का निर्माण होता है। परन्तु इसमें उनकी दृष्टि प्रायः एकांगी नहीं रही है। उन्होंने भाव तत्त्व पर बल देने के साथ साथ काव्य के अन्य तत्वों पर भी दृष्टिपात किया है। कल्पना और धर्मिस्वस्ति को बर्हिस्त्वर्ण सेली इंटन रसिकता प्रादि ने स्पष्टतः स्वीकार किया है। यद्यपि उनका भाव के लिए विशेष प्रापह है परन्तु वे सिद्धान्तकारी नहीं हैं बल्कि समन्वयकारी हैं। उन्होंने अन्य तत्वों का भी बराबर उल्लेख किया है। कल्पना की ओर इनकी प्रमुख दृष्टि रही है। काव्य में कल्पना और मूर्तीकरण को किसी न किसी रूप में सभी ने मान्यता प्रदान की है। 'शेक्सपियर जैसे विद्वानों ने तो काव्य की भाषा को स्पष्टतः मूर्त (कॉन्क्रीट) भाषा कहा है। अन्य विद्वानों ने भी बिम्ब विधान को स्वीकार किया है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि ग्रंथों की समालोचकों में भावप्रकटा के समर्थक प्रासंगिकों ने भी कल्पना की अपेक्षा नहीं है। वह भाव का कल्पना के द्वारा ही काव्य में धर्मिस्वस्ति करने का समर्थन करते हैं। इस प्रकार स्पष्ट है कि भाव प्रकटा का प्रापह करने पर भी बिम्ब विधान से प्रासंगिक समीक्षक पूर्णतः परिचित थे। बिम्ब की प्रासंगिकता को वह पर्याप्त समझते थे। इसी कारण काव्य में बिम्ब विधान मूर्तता प्रकटा सबैदनात्मकता की ओर उनकी दृष्टि बराबर रही है। भाव के साथ साथ बिम्ब विधान का महत्त्व सभी प्रासंगिकों और कवियों को मान्य रहा है। कवि दृष्टि से विचार करने के कारण कल्पना से वह बहुत पूर्व ही परिचित हो चुके थे अतः उसके प्रमुख व्यापार मूर्ति निर्माण की धर्मिस्वस्ति और प्रासंगिकता को वह खूब समझ सकें थे। इसी कारण भाव के साथ कल्पना और बिम्ब विधान पर वे सबैद बल देते रहे हैं। स्पष्ट है कि ग्रंथों की समीक्षा में भाव को प्रधानता देने वाले विद्वानों ने बिम्ब विधान का पर्याप्त प्रादर था।

१. Poetry is a vent for overcharged feeling or a full imagination.
—Keble, quoted by Hudson Introduction to the Study of Literature, p 84

२. Poetry is the utterance of a passion for truth, beauty and power embodying and illustrating its conceptions by imagination and fancy and modulating its language on the principle of variety in unity —Leigh Hunt. Ibid, p. 83.

ध्व का मुख तब

माया

मात्र के प्रतिरिक्त धरोपी विद्वानों ने माया धर्मात् प्रमित्यक्ति पर विरोध बस दिया है। प्रमित्यक्ति पर बस देने वालों में सर्वप्रथम और सर्वाधिक उल्लेखनीय नाम है जोसे का। जोसे काव्य में प्रमित्यक्ति को ही एकमात्र तब मानता है। परन्तु उनको हम कबल माया का समर्थक नहीं कह सकते। प्रमित्यक्ति से उनका ग्रथ मात्र और मात्र के प्रमित्यक्त स्वरूप दोनों से है। इस कारण यद्यपि वह माया धर्मात् प्रमित्यक्ति को काव्य में विरोध महत्त्व देता है परन्तु माया को अपेक्षा भी वह नहीं करता। उसका प्रायः केवल मात्र और मात्र को एक मानने के विषय में है। उनकी स्थिति उनकी दृष्टि में एक है अलग अलग नहीं। व्यापक रूप में वह मात्र और मात्र दोनों ही तबों पर बस देता है यह स्वीकार किया जा सकता है अतः प्रमित्यक्ततावादी होने पर भी वह मायावादी नहीं है। मात्र की प्रतिबन्धिता उस भी मात्र है।

काव्य क बाह्य पक्ष माया के संगीतात्मक होने की आवश्यकता भी कई विद्वानों ने अनुभव की है। संगीतात्मक और सयपूर्ण माया में प्रमित्यक्त भावनाओं को ही वह कविता की मन्त्रा बसके हैं। बार्नाइस न कहा या कि कविता को हम संगीतात्मक विचार कह सकते हैं।^१ ड्राइडन न भी इसी से निमत-नुमत विचार प्रस्तुत किये हैं।^२ प्रसिद्ध विद्वान एडगर ऐलेन पी भी कविता की संगीतात्मकता पर विरोध बस देते हैं। उन्होंने कहा कि कविता सौन्दर्य का सयपूर्ण मर्मन है।^३ इस प्रकार स्पष्ट है कि इनकी दृष्टि काव्य के धार्मिक तब मात्र से हट कर काव्य के बाह्य तब मात्र की सयपूर्णता और संगीतात्मकता पर धारि है। संगीत और सय का उन्होंने काव्य का प्रतिबन्ध ग्रंथ माना है। परन्तु ये धार्मिक भी एकाकी नहीं है। वह कबल सयपूर्ण माया को काव्य नहीं कहते बल्कि कविता में सयपूर्ण माया को एक प्रतिबन्धिता मानते हैं। उन्होंने मात्र धारि तबों पर भी बस दिया है। इस प्रकार यद्यपि इनका विरोध प्रायः सय और संगीतात्मकता के लिए है पर काव्य के ग्रंथ तबों की अपेक्षा भी उनमें नहीं है। वे मात्र और काव्यता का भी बराबर उल्लेख करते रहे हैं।

इस प्रकार स्पष्ट है कि ग्रंथों की धार्मिकता में माया पर ही केवल बस देने काई जाना मत नहीं है। प्रायः साम्प्रस्य पूर्ण दृष्टि से ही काव्य को परमत्र वा प्रयत्न किया गया है। इतनी काव्य में माया की संगीतात्मकता धारि पर बस देते हुए या वह केवल उनकी प्रतिबन्धिता स्वीकार नहीं करते बल्कि मात्र और काव्यता का भी महत्त्व स्वीकार करते हैं। यद्यपि इन विचारों में विचित्र विधान का कोई स्पष्ट संकेत नहीं पाता परन्तु उनकी समन्वयपूर्ण दृष्टि में मात्र और काव्यता के साथ साथ विचित्र विधान का स्थान भी धर्म्य होया ऐसा अनुमान सहज ही किया जा सकता है।

^१ Poetry we will call musical thought. —Ibid., p. 83.

^२ Poetry is an articulate music. —Dryden.

^३ Poetry is the rhythmic creation of beauty —Edgar Allan Poe.

quoted by Hudson, Ibid., p. 83—84

कल्पना

काव्य का तृतीय, प्रीर प्रतिम तत्व कल्पना है। कल्पना को पाश्चात्य साहित्यकारों ने विशेष महत्त्व दिया है। काव्य में कल्पना को बहु धनिधार्य तथ्य घोषित करते हैं। कवि शेर्ली ने कल्पना पर बल देते हुए कहा था कि कविता कल्पना की धर्मिभ्यक्ति है।^१ ड्राइडन ने भी कल्पना पर बल दिया है। उसने कल्पना को एसी शक्ति माना जो एक ठोस शिकारी कुत्ते की तरह स्मृति-श्लेष पर ऐसे भावों की खोज में दौड़ मारती है जिनके द्वारा वह धनुभृतियों को सज्जी तरह प्रवर्धित कर सके।^२ हेबलिट भी काव्य में कल्पना पर विशेष बल देता है। उसने कविता की परिभाषा करते हुए उसे कल्पना प्रीर भाषात्मक भावों की धर्मिभ्यक्ति माना था। धामोचक आनसन ने कविता में भाव के साथ कल्पना को भी महत्त्व दिया उसने कहा कविता कल्पना की सहायता से तर्क (विचार) के द्वारा धामन्द प्रीर तत्व का विधान करती है।^३ धामोचक हब्सन ने भी कल्पना पर बल दिया। उसने कहा कि कविता जेप्टा प्रीर कल्पना के द्वारा जीवन की धर्मिभ्यक्ति है।^४ मैकले या धामह भी कल्पना के लिए बहुत धमिक है। उसने कल्पना को समग्र रूप में ही महत्त्व नहीं दिया बरन् पृथक् रूप से बिम्ब-विधान पर विशेष बल दिया। उसने कविता को बिम्ब विधान ही माना। उसने कहा कि कविता से हमारा धर्म धर्मों को इस रूप में निर्मित करता है कि हमारी कल्पना में एक भ्रम की सृष्टि हो सके। धर्मों के द्वारा वही काम करने का है जो चित्तकार रंगों द्वारा करता है।^५ इस प्रकार उसने बिम्ब विधान या मूर्ति विधान पर विशेष बल दिया है। धामुनिज सभी धामोचक बिम्ब विधान के विशेष पक्ष पाती है उनके। बिम्ब-विधान विषयक विशेष धामह का धामयन धवल धाम्याय में किया जायगा। यहाँ यही बिलाना पर्याप्त होगा कि प्रयेजी धामोचना में भाव के साथ साथ कल्पना तत्व को पर्याप्त धामनता दी गई है बरन् किन्ही धामोचकों ने भी उसे ही काव्य का प्रधान तत्व स्वीकार दिया है।

बिम्ब की प्रधानता के धामार पर धयेजी में बिम्बवाद (इमेजिज्म) नाम है

१ Poetry in a general sense may be defined as the expression of Imagination. —Shelley Ibid, p 83

२ ड्राइडन पाश्चात्य साहित्यालोचना जीवाणु गुण्ड द्वारा उद्धृत पृ ६१

३ Poetry is the language of imagination and passion —Hazlitt, quoted by Hudson, p 83

४ Poetry is the art of uniting pleasure with truth by calling imagination to the help of reason. —Johnson, Ibid p 81

५ Poetry is the interpretation of life through imagination and action. —Hudson.

६ By poetry we mean the art of employing words in such a manner as to produce an illusion on imagination, the art of doing by means of words what painters does by means of colours. —Macaulay quoted by Hudson, p. 83

एक मूल विधेय का प्रतिपादन की हुआ है। बिम्बवाद का पिता सृष्टिकार ह्यूस्म और मैता एबरा पाउंड वा। दोनों ही बिम्ब के विधेय समर्पक थे। एबरा पाउंड ने कहा था कि जीवन में घसकों रचनाएँ करने की अपेक्षा केवल एक बिम्ब का निर्माण करना कहीं अधिक उत्तम है।^१ परन्तु बिम्बवाद और बिम्ब एक ही नहीं है। बिम्बवाद एक ध्यात्मोपन है जो कि बिम्ब को विधेय मान्त्व वेता है पर स्यात्मकता यादि ध्येय अनेक तत्वों पर भी उसका आग्रह रहा है Poetry a magazine of verse में पाउंड ने बिम्बवाद के कुछ विद्वान्त प्रकाशित कराये थे जो इस प्रकार हैं

१—वस्तु का ध्यात्ममय या वस्तुमय प्रत्यक्ष बभन करना।

२—तिरर्पक शब्दों का प्रयोग न करना।

३—लय का छंदबद्धता के अनुसार नहीं बल्कि संगीतारमकता के अनुसार निर्माण करना।

४—बिम्बवादियों के हस को हड़ बनाना।^२

इस प्रकार स्पष्ट है कि बिम्बवाद यद्यपि बिम्ब विधान पर विधेय बस देता है। परन्तु बिम्ब केवल वही तक सीमित नहीं है। बिम्ब को किसी ध्यात्मोपन की अपेक्षा नहीं है बल्कि वह कविता का सहज स्वाभाविक तत्व है जिसे प्रत्येक युग के प्रत्येक कवि ने स्वीकार किया है।

भ्रमण्ड में इस ध्यात्मयन से स्पष्ट है कि भारतीय और पारश्चात्य ध्यात्मोपन में काव्य के विभिन्न तत्वों को समर्पण प्राप्त हुआ है। परन्तु बिम्ब काव्य का अनिवार्य तत्व है जो वेद ज्ञान की सीमाओं से परे है। इसी कारण ध्येय माहिरय चाह वह किसी कास का हो या किसी जाति का हो रसवारी हो भाववारी हो, या कल्पना वारी बिम्ब या पोषण धारक है। बिम्ब ध्येय का सबसे बड़ा तत्व है। इस आधार पर यह सहज ही कहा जा सकता है कि भारतीय और पारश्चात्य ध्यात्मोपन में यद्यपि पर्याप्त अंतर है परन्तु बिम्ब विधान को दोनों ने, एक ही में स्वीकार धारक किया है। भारतीय ध्यात्मोपन धारक ने उन प्रकृत्यन रूप से स्वीकार्य है जिसे उलकी अनिवार्य सन्भावना का अनुमान लगाया जा सकता है जबकि पारश्चात्य ध्यात्मोपन में उसे स्पष्ट स्वीकार किया है। जो भी हो बिम्ब काव्य का प्रधान तत्व धारक रहा है। वस्तुतः वही एक ऐसा तत्व है जिसे वेद ज्ञान और जाति की सीमाओं से मुक्त काव्य का एक भाव प्राप्त तत्व कहा जा सकता है

^१ Make it new — Ezra Pound, quoted by Lewis Poetic Image. 25.
^२ Imagism and Imagism. —Hughes p. 26-27

अध्याय २ विम्ब

विम्ब बड़ा व्यापक शब्द है। समस्त मानव जीवन धीरे उद्यते सम्बन्धित प्रत्येक वस्तु इतने या सखती है। पृथ्वी तक के समस्त उपादान और समस्त क्रिया व्यापार अपने आप में सभी एक विम्ब हैं। इसलिये कवि ब्लेक ने कहा था कि बहु प्रत्येक वस्तु जिस पर विश्वास किया जाता है सत्य का विम्ब है।^१ साधारणतः विम्ब शब्द का प्रयोग छा। प्रतिच्छाया अनुकृति आदि के रूप में होता है। प्रबोधी कोप ने इस शब्द का अर्थ इसी रूप में दिया है। विम्ब को किसी वस्तु की छाया अनुकृति सादृश्यता अथवा समानता^२ माना गया है। विश्वकोप ने भी इसको प्रतिच्छाया के रूप में ग्रहण किया गया है। व्यक्ति या वस्तु के प्रतिविम्ब को बड़ा 'विम्ब' ही माना गया और प्रतिपादित किया गया कि साहित्य एवं अन्य कलाओं में इसका अर्थ है किसी सजीव या निर्जीव वस्तु की प्रतिच्छाया या उसके समान^३। यद्यपि विम्ब शब्द से हमारे साहित्यशास्त्रियों ने छाया प्रतिच्छाया का आशय ही लिया है वह वास्तविक वस्तु नहीं है परन्तु उससे भिन्न होते हुए भी अत्यन्त ही समान होने लगे भी उसके अनुकृत्य ही होती है। अनुकृत होते हुए भी वह सत्य का आभास बिसाती है।

विम्ब शब्द का बड़ा व्यापक प्रयोग होता है। मनोविज्ञान दर्शन और साहित्य के क्षेत्रों में इसका विद्येय महत्त्व है और इस प्रकार इस पर पर्याप्त विचार-विमर्श भी हुआ है।

मनोविज्ञान में विम्ब शब्द से 'मानसिक पुनर्निर्माण' (mental re-creation) का अर्थ लिया जाता है। विश्वकोप में मनोवैज्ञानिक विम्ब को इन शब्दों के द्वारा स्पष्ट किया गया है 'विम्ब चेतन स्मृतियाँ हैं जो विचारों की मौसिक उत्तेजना के अभाव में उस विचार को संपूर्ण रूप में या आंशिक रूप में प्रस्तुत करती है।'^४ यहाँ विम्ब से

१ Every thing possible to be believed is an image of truth.
—W Blake quoted by Lewis, *Poetic Image*, p. 27

२ New English Dictionary

३ Images are representation or likeness of an animate and inanimate object.—Encyclopaedia Britannica, Vol. 14 page 528.

४ ... a useful psychological definition is that of C.W Bray Image are 'conscious memories which reproduce a previous perception, in whole or in part in the absence of the original stimulus to the perception. —Ency Brit. Vol. 12 page 103.

बिम्ब

उत्तेजना का प्रतिबिम्बान करने या उसको पुनः अनुभूत करा देने के लक्ष्य पर इस विषय
 गया है। ग्रन्थक १४ में बिम्बकोप में ही मानसिक पुनर्निर्माण के लक्ष्य को प्रीर
 धयिक स्पष्ट करत हुए कहा गया है कि यह बिम्ब निर्माण पूषत मानसिक व्यापार है
 प्रीर बिम्ब मस्तिष्क की घासों में देखी जाने वाली वस्तु है। उसका सम्बन्ध व्यापार है
 की प्रत्यक्ष इन्द्रियों से नहीं वरन् उसकी कल्पना शक्ति से होता है। इसी से मनो-
 वैज्ञानिक फर्लॉंग (Furlong) ने कहा कि जगन्माथ व्यक्ति भी बिम्ब बिम्बान कर सकते
 हैं। यह पूर्वान एक मन-व्यापार प्रकृता मस्तिष्क की शक्ति से होता है। इसी से मनो-
 सम्बन्ध नहीं है। अन्तर कबल इतना रहता है कि अनान्य व्यक्ति रूप की स्मृतियों के
 प्रभाव के कारण साधारण मनुष्य की अपेक्षा बिम्ब में समप्रता कम सा पाता है उसका
 बिम्ब निर्माण बिम्बबन्धित होता है।

मनाविज्ञान में बिम्ब का प्रयोग कई रूपों में किया जाता है। उसका सर्वप्रथम
 प्रयोग पश्चात् प्रतिमा (after image) के रूप में होता है। पश्चात् प्रतिमा को हम
 पश्च-अप्ययना (after sensation) कह सकते हैं। प्रायः किसी देवी मूर्ती या अनुभूत
 की हुई वस्तु में मानसिक संवेदना का काम होता है। यह उत्तेजना प्रत्यक्ष वस्तु के
 वयम या अनुभव या बिम्बों प्रीर भावों को जन्म देती है। परन्तु उस प्रत्यक्ष वस्तु के
 न रहने पर हम उसको फील याद भी उस उत्तेजना में बिम्बों एवं भावों का प्रहल
 करते रहते हैं। प्रत्यक्ष का साधारण होने पर भी मानसिक संवेदना बनी रहती है।
 जब ऐसी स्थिति में हम प्रत्यक्ष की स्थानापन्न जिस अप्रत्यक्ष अनुभूति या वस्तु से
 उत्तेजना प्रहल करते हैं वह पश्चात् प्रतिमा कहलाती है। यह मानस प्रत्यक्ष होता है
 जो हम घासों को बन्ध या सुती रककर भी कर सकते हैं। (घासों को सुती रकन में
 बन्दुत हम किसी वस्तु को देखन हुए भी नहीं देखत। उस समय हम एक नया फोकस
 तैयार करते हैं जो वस्तु की सगह से कहीं असंग हमारी अपनी कल्पना में होता है)
 पश्चात् प्रतिमा में हमारी इच्छा शक्ति का महत्त्व बहुत कम होता है। उसकी उपस्थिति
 या अनुपस्थिति के लिए हमें कोई प्रयत्न नहीं करना पड़ता है न ही उस पर हमारा

- The strictly psychological use of the term image is for a purely mental idea, which is taken as being observed by the eye of mind — Ency Brit., Vol 14 p 378.
- His (blind man's) experience will have the qualities of constancy and coherence, and presumably his mind will work rationally and non rationally in a way similar to that of sighted man. — Imagination — E.T Furlong p 74
- We can still say that the visual after image is located or localizable in the space of physical objects. It shares also within the actual after image the property that its entrance and exit depend little on our volition — Ibid., p 76.

किसी प्रकार का अधिकार ही रहता है। परन्तु इसकी उत्पत्ति भ्रमवा चर्जन के सिद्धे भौतिक वातावरण (Physical environments) की प्राबल्यता अनिवार्य है। प्रतिमा का दूसरा रूप काल्पनिक प्रतिमा (imagination image) या प्राथमिक स्मृत बिम्ब (Primary memory image) है। जब किसी प्रत्यक्ष वस्तु के अभाव में जबकि उसकी पक्ष-संवेदना भी नहीं होती हम अपनी इच्छा एतित में किसी पूर्वानुभूत को अपनी कल्पना में प्रत्यक्ष कर लेते हैं। तब यह काल्पनिक रूपविधान काल्पनिक बिम्ब कहा जाता है। यह मानस प्रत्यक्ष हमारी अपनी इच्छा पर निर्भर होता है। अन्धे व्यवधान के परभाव भी वस्तु का मानस प्रत्यक्ष हो सकता है। इसमें भौतिक वातावरण की प्राबल्यता भी नहीं होती। इसके सिद्धे केवल तीव्र कल्पनाशक्ति की प्राबल्यता होती है। मनोविज्ञान में प्रयुक्त बिम्ब के इन रूपों से स्पष्ट हो जाता है कि मनोविज्ञान में बिम्ब का अर्थ वास्तविक वस्तु के अभाव में उसका मानस प्रत्यक्ष^१।

परन्तु साहित्यिक बिम्ब और मनोवैज्ञानिक बिम्ब में पर्याप्त अन्तर है। ये दोनों समानार्थी नहीं हैं। मनोवैज्ञानिक बिम्ब बड़ा वस्तु की मात्र प्रतिरूपित या प्रतिच्छाया तक सीमित है। बड़ा साहित्यिक बिम्ब प्राबल्यता का पोषक है। वह बिम्ब एक मृत, निर्जीव और संवेदनारहित वस्तु है जबकि वह भाव या विचार का इस रूप में प्रस्तुत करता है कि वह मूल वस्तु की निर्जीव छाया न प्रतीत होकर सजीव और सप्राय होते हैं। मूल वस्तु के अनुकूल होने पर भी उनकी पृथक् सत्ता पृथक् अस्तित्व हाता है। मनोवैज्ञानिक बिम्ब का मानवीय भावनाओं के साथ सम्बन्ध नहीं होता जबकि साहित्यिक बिम्ब जीवन और अर्थ के मानवीय सम्बन्धों का प्रकाशन करते हैं। जीवन में संदर्भ में ही उनको प्रस्तुत किया जाता है। केवल विचारों (Perceptual experiences) के पुननिर्माण को महत्त्व देते हैं जबकि इसमें भावनात्मक चर्जन का स्थान विधिष्ट है। साहित्यिक बिम्ब के तीन अनिवार्य तत्वों—अनुभूति भावना आशय—का भी मनोवैज्ञानिक पुननिर्माण में कोई स्थान नहीं मिलता। स्पष्ट है कि इन दोनों में स्पष्ट और मूलभूत अन्तर है।

१ Such a representation of the object by an effort of the will, when the stimuli ceased to act on the senses and when the excitations too no longer exist, is called a primary memory image.

A critical study of Shelley's imagery and revolution of his poetic arts. (Original thesis)—Dr J.B. Singh p.3

• It may be noted that the image in this sense refers to the revival, however partial or imperfect of a perceptual experience. —Ibid, p. 3

ध्यात्म शास्त्र में भी विग्रह पर विचार किया जाता है। उनकी मायता है भाषा के अन्तर्गत बिम्ब धार्मिक विचारों की जितनी स्पष्ट प्रतिबिम्बित करे वह उतना भाषा का कोई अन्य माध्यम नहीं बन सकता। धार्मिक विचारों की स्पष्ट भाषा बना देने के लिए बिम्ब का आशय उतना आवश्यक है। ध्यात्मशास्त्री अन्वय न बताया कि हम अपने वाक्यांशों में धार्मिक भाषा से भी अधिक कई अन्य भाषाओं का प्रयोग करते हैं साधारणतः 'गणों में अधिक हम रूप रूप में जान प्राप्त करते हैं।' इस प्रकार बिम्ब धार्मिक विचारों के विनिमय का एक बड़ा साधन प्रयोज्य होता है। इन बिम्बों में मानव जीवन के सभी तन्मयी अर्थ गभीर भावनाएँ आ जाती हैं। मानव जीवन से सम्बन्धित प्रत्येक वस्तु इनसे प्रतिबिम्बित हो जाती है। गुरु विभाग की प्रतिबिम्बित देने के कारण ध्यात्मशास्त्री मेंमंसि न बनाया कि वादविम जो ध्यात्म से पूर्णतः प्रेरित है सभी धार्मिक मर्तों एवं सम्प्रदायों की धनी है और सर्व ईश्वर का प्रकाशित रूप है अपने धार्मिक विचारों को स्पष्ट करने में बहुत ही कम रमती है उसकी भावप्रतिबिम्ब का साधन विग्रह ही है। इस प्रकार अपनी प्रतिबिम्बित में वादविम विन्दी ध्यात्मशास्त्री का उद्धार न होकर बलि का बचन है। परमात्मा की भाषा की सभी वाचनिका धनवाचनियों में रूपकों धरवा बिम्बों की भाषा बताया है। पुराण में कहा गया है 'परमात्मा जिसे चाहता है अपनी व्योमिति की धीर प्रसर करता है। अस्माह सब कुछ का जानने वाला है धीर मनुष्यों से वह रूपकों की भाषा में बोलता है।'

स्पष्ट है कि ध्यात्मशास्त्रियों का बिम्ब वा विवेचन साहित्यिक बिम्ब के बहुत निकट है। उन्होंने हमें भाषा धीर भाषा के सम्बन्ध में कुछ रूप से

the moods or the facts of human spirit were conveyed by something other than speech, by shapes or colours or by some other languages besides the verbal. — G. K. Chesterton quoted by L. L. Mascoll. — Words and Images, p. 110

to point out that one of the greatest methods of communication is by the use of artistic images. — Words and Images p. 110

that the Bible, which is universally accepted by Christians as embodying the revelation of God and as being source from which Christian theology flows, makes very little use indeed of the language of metaphysics. Its typical instrument of communication is not the concept but the Image Ibid., p. 109

समझ है जिसको साहित्य में भी स्वीकार किया जा सकता है। बिम्ब की समस्या वही माया की समस्या के रूप में प्रस्तुत हुई है और माया के सर्वम—ज्ञान और उसकी प्रेयनीमता—के अन्तर्गत उसका विचार किया गया है। उनका मत है कि अतीन्द्रिय रहस्यरमकता और ब्रह्म का प्रकाशन बिम्ब द्वारा सम्भव हो सकता है। अर्थात्पत्त में रहस्य का स्थान प्रधान है और रहस्य के स्पष्टीकरण करने वाले माध्यमों में बिम्ब का स्थान प्रमुख है। अर्थात्पत्तवारी बिम्ब को स्वयं ईश्वर के मनुष्यों से बोलने का एक माध्यम मानता है। भारतीय धर्म का अद्वैतवाद भी बिम्ब की प्रतिभावता को प्रकट करता है। धर्मशास्त्रियों ने अनुभव किया था कि धर्म और 'ईश्वर के महान यमीर रहस्य मानव की सहज बुद्धि के लिए अग्रम्य हैं। उनके लिए मूर्त माध्यम आवश्यक है जिससे जनजीवन उन रहस्यों को ग्रहण कर सकें। स्वयं अपनी रहस्यात्मक अनुभूति को उन्होंने शब्दों से नहीं बल्कि बिम्बों के माध्यम से प्रकट किया। राम-सीता कृष्ण राधा उनके अपूर्ण भावों के लिए चुने गये बिम्ब हैं। मक्ति का मनुष्य मार्ग एक प्रकार से मानव की बिम्बों द्वारा समझने और समझने की प्रवृत्ति का चोख है। मल्लिकार्जुन सूर म इसी से कहा था कि जीवन के निराकार रहस्य ईश्वर के निर्गुण स्वरूप को समझने में मन अमित हो जाता है उसक लिए किसी मूर्त आचार की आवश्यकता है

रूप रस गुण जाति क्षयति बिन्दु निरामन्त्र मन अक्षत बावै ।

सव बिदि अगम विचारहि तातै सूर सगुन लीला पद पाव ॥

और 'सूर के कृष्ण उनके अमूर्त विचारों अरूप अनुभूतियों के मूर्त और लघुवृत्त बिम्ब थे। इस प्रकार पद्मिनी ईश्वर और गूढ रहस्यों का आनाघ लेकर अर्थात्पत्त तथा धर्म के क्षेत्र में इसे अधिक रहस्यपूर्ण बना लिया गया है फिर भी उनकी भाव्यताएँ साहित्यिक बिम्ब के बहुत निकट हैं।

साहित्य के अन्तर्गत बिम्ब का बड़ा व्यापक महत्व है। भावों और विचारों का जितना सफ़्त और सहज प्रकाशन बिम्बों द्वारा हो सकता है उतना अग्र्य किसी साहित्यिक विधि से नहीं हो सकता। पारश्चात्य समीक्षा में काव्य पर विचार करते हुए कल्पना और उसके बिम्ब निर्माण के कार्य पर पर्याप्त ध्यान दिया गया है और बड़े विस्तृत रूप में इसकी व्याख्या की गई है परन्तु भारतीय साहित्यशास्त्र में ऐसा कोई विश्लेषण नहीं मिलता। उन्होंने कल्पना को भी भावविभी और कारविभी प्रतिभाओं

१ See Words and Images Ch. V

२ The supernatural mystery the divinely provided medium, the evolution of grace, the appropriation of divine life in contemplation all these are brought together in a profound and coherent synthesis and in this the Image as God's -chosen means of speaking the man, occupies the central place. —Words and Images —E.L. Maschall, p. 120

बिम्ब

में समाहित कर लिया है। इसका कारण है कि पादशास्य साहित्य में काव्य में कवि को महत्व दिया गया है और कवि की दृष्टि में काव्य को पढ़ा गया है अर्थात् इस बात पर पहले विचार-विमर्श हुआ कि कवि कविता का निर्माण क्या और कैसे करता है? स्वतः ही वहाँ प्रेरणा (इंस्पिरेशन) अनुभूति (प्रेरणा) भावना (इमोशन) व्यपना (इमैजिनेशन) परन्तु भावना (प्रेरणा) भावना न काव्य की समस्या को बिलकुल विपरीत ढंग से पकड़ा। उन्होंने पहले यह विचार किया कि पाठक काव्य क्यों पढ़ता है? फलतः पहले रम-मिडान्त का आविर्भाव हुआ जिसमें कवि को प्रधान बनाकर पाठक की प्रधानता को खोकार दिया गया। इसी कारण हमारे शास्त्रों में कवि की कल्पना का विवर्णन कही उपसर्ग नहीं होता। परन्तु बिम्ब शास्त्र का नहीं बल्कि काव्य का एक आधार तत्व है जो सर्व विद्यमान काव्य का। यहाँ इस बना करने का तात्पर्य निक यह बताया जा कि बिम्ब व महत्व व उसके रूप विपरीत विचारों को जानने के लिए हमें प्रतिबन्ध रूप में पादशास्य विद्वानों का मुतापसी होता पड़ेगा। कुछ प्राथमिक भारतीय विद्वानों ने प्रथम 'सुष्यत' पादशास्य विचारों के प्रसार से) बिम्ब पर विचार किया है यत्र तत्र उनका उल्लेख भी किया जायगा। अस्तु।

(१) महत्त्व

बिम्ब काव्य का मूलभूत तत्व है। महाकवि बहन्वय ने इसीलिए समस्त काव्य को मानव धरणा प्रकृति का बिम्ब कहा था। 'धरणी विवर्णन में कविता की परिभाषा दत्त हुए बंटन न उसकी 'विजययी धर्मियक्ति पर विरोध बन दिया था। उसमें कहा 'कविता मानव हृदय की विजययी धर्मियक्ति पर धर्मियक्ति है जो तावनात्मक व सत्यपूर्ण भाषा में प्रकट होती है।' काव्य भाषा की विजयययी धर्मियक्ति है। बिम्बों की मोहकता में कवि पाठक को गह्र ही उन भावभूमि पर ले जाता है जहाँ वह कवि की अनुभूति का प्रत्यक्षीकरण करने में समर्थ होता है। क्योंकि बिम्बों का प्रयोग धीरे धीरे का प्रहण मनुष्य की स्वाभाविक प्रकृति है। बिम्बों में कहा जा 'कविता मानव मन की पहली प्रकृति है। मनुष्य स्वाभाविक व्यापक नियमों तक पहुँचने में पूर्व वास्तविक बिम्बों का मन्त्र करता है। यथायं का स्वच्छ प्रतिबिम्बित करने से पूर्व वह अपनी जलदी धीरे धीरे बन्तना में बन्तु की प्रहण करता है। इससे पूर्व कि वह स्वच्छ उच्चारण कर वह कुछ धर्मिय धर्मिय धीरे

- 1
- 1 Poetry is the image of man and nature — Wordsworth — English
 Critical Essays, 19th Century p. 14
 2 Absolute poetry is the concrete and artistic expression of the human mind in the emotional and rhythmical language — T.W. Dunton. — Ency Brit. Vol. 18, page 106.

सबैतों से काम सेता है। इससे पूर्व कि वह गद्य बोले निसर्गत उससे कविता का सर्जन होता है। इससे पूर्व कि वह पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग करे, वह बपकों (बिम्ब) का प्रयोग करता है और बपकों का प्रयोग उसके लिए पर्याप्त स्वाभाविक होता है।^१ मनुष्य मात्र की यह स्वाभाविक प्रकृति काव्य की मूल धीर स्वतः उद्भूत प्रकृति है। हिनकर जी का कथन उचित ही है— 'वित्र कविता का एक पर्याप्त प्रावश्यक गुण है प्रत्युत कहना चाहिए कि यह कविता का एकमात्र सारवत तत्व है जो उससे कमी नहीं छूटता।'^२ बित्रभाषा के महत्त्व को सभी कवियों ने समझा है। बिम्बबाण के पिता' ह्युम ने कहा कि कविता रोचमर्त की भाषा नहीं है बल्कि 'एस्य अपवा मूर्त भाषा है जो व्यक्ति के सम्मुख प्रमूर्त वस्तु का मूल रूप प्रकट करती है काव्य में बिम्बविज्ञान मात्र प्रकटकरण के लिए नहीं होता बल्कि वह कविता का प्राण है।'^३ प्राबुनिक कवि पन्त ने भी बित्रभाषा के महत्त्व की पर्याप्त की प्रामिका में स्वीकार किया है। उन्होंने लिखा 'कविता के लिए बित्रभाषा की प्रावश्यकता पड़ती है, उसके प्रथम सस्वर होने चाहिए, जो बोलते हों उस की तरह जिसके उस की मधुर मासिमा नीतर न समा सकने के कारण बाहर प्रकट पड़े जो अपने मात को धरती ही धरति में धाकों के सामने बित्रित कर सकें जो संसार में वित्र धीर बित्र में प्रकट हों।'^४

१ Poetry is the primary activity of the human mind. Man, before, he has arrived at the stage of forming universals, forms imaginary ideas. Before he reflects with a clear mind, he apprehends with faculties confused and disturbed before he can articulate, he sings before speaking in prose, he speaks in verse before using technical terms, he uses metaphors and the metaphorical use of words is as natural to him as that which we call 'natural'—Vico, quoted by C.D. Lewis, Poetic Image, p. 26

२ कालकल, भूमिका उपपत्तीसिद्ध हिनकर १ ७५

३ Poetry is not a counter language, but a visual concrete one. It is a compromise for a language of intuition which hand over sensation bodily. It always endeavours to arrest you and to make you gilding through an abstract process. Visual meanings can only be transferred by the new bowl of metaphor. prose is an old pot that lets them leak out. Images in verse are not mere decoration, but the very essence of an intuitive language, —Speculation—T.E. Hulme p 135

४ कालकल, प्रवेश—भूमिकासिद्ध हिनकर १ १७

अनेक बिम्बों ने बिम्ब को महान काव्य का परिचायक माना। बिम्बाल बाएँ निक भरस्तु ने कहा था कि 'हथकों पर अधिकार करना कवि का प्रथम कर्म है क्योंकि वही कवि प्रतिमा के परिचायक है।' आलोचक सुर्वेस भी बिम्ब की चारबलता और महानता का समर्थक है। वह कहता है कि बिम्ब ही कवि का मूल प्रतिपादक है। समय के परिवर्तन के साथ-साथ काव्य के उपकरण भी परिवर्तित होते हैं उस परम्परा विषय-वस्तु आबगत प्रवृत्तियाँ यहाँ तक कि काव्य का मूलभूत विषय प्रतिपादन तक परिवर्तित हो जाता है परन्तु बिम्ब सब विद्यमान रहता है उमम कभी परिवर्तन नहीं आता।^१ बिम्ब की इस चारबलता और महानता को कविता का जीवन उमकी बिम्ब ने भी स्वीकार किया कि कविता की महानता और कविता का जीवन उमकी बिम्ब प्रस्तुत करने की शक्ति में निहित है।^२ हिंदी के सुप्रसिद्ध आलोचक प्राधाय पुत्रम ने भी बिम्बों के महत्त्व को समझा था। उन्होंने धर्मस्तुत रूप बिम्बान के नाम में साहि स्यपत कल्पनाशिर्षों का सम्यजन किया। कल्पित रूप बिम्बान के धर्ममत बिम्बों के महत्त्व को उन्होंने इन शब्दों में प्रस्तुत किया 'कविता में कही बात बिम्ब रूप में हमारे सामने आनी चाहिए।' तन्मयता का म्पिति उत्पन्न करने में वह बिम्ब का महत्त्व स्वीकार करते हैं। समीमांसा में वे कहते हैं 'काव्य की कोई उक्ति मान में पकते समय जब काव्य वस्तु के साथ बल्य या बोधम्य पात्र की कई मूल भावना सी लकी रहती है तभी पूरी तन्मयता प्राप्त होती है।'^३

प्राथमिक आलाचकों और कवियों का बिम्ब के लिए विशेष प्राग्रह है। बिम्ब का के प्रमुख कवि और नेता एजरा पाठ इ अपने बिम्बों के लिए पर्याप्त प्रसिद्ध हैं। उन्होंने बिम्ब निर्माण को कवि का उच्चतम कर्म स्वीकार किया है। अपनी पुस्तक 'दिक इट यू में' उन्होंने बिम्बों की उच्चता के विषय में कहा कि कवि जीवन में अपनेको कवियों का निर्माण करने की घनेसा केवल एक (यफल) बिम्ब का निर्माण

- १ The greatest thing by far is to have a command of metaphors. This alone can't be imparted by another. It is the mark of genius. —Aristotle quoted by Lewis, P. Image, p. 17
- २ Yet the image is the constant in all poetry and every poem is itself an image. Trends come and go, diction alters, fashions change even the elemental subject matters may change but metaphors remains the life principle of poetry. the poet's chief test glory —Poetic Image, G. Day Lewis page 17
- ३ Imagination is, in itself, the very height and life of poetry. —Dryden quoted by Lewis, —Poetic Image, page 18.
- ४ कल्पना—उत्कृष्ट रूप (कला र)
- ५ समीमांसा—समकाल रूप

करना कहीं अधिक प्रशंसा है।^१ आलोचक हर्बर्ट रीड ने कहा कि हमें केवल बिम्ब के आधार पर किसी कवि का परीक्षण करना चाहिये।^२ उसके बिम्बों की उत्कृष्टता उसकी प्रतिभा की समृद्धि की परिचायक है। इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि काव्य में बिम्ब का महत्वपूर्ण स्थान है। समस्त विद्वान् आलोचकों में बिम्ब को काव्य का मूलत्व और कवि प्रतिभा का एकमात्र परिचायक माना।

(२) स्वल्प

बिम्ब की इस महत्ता व उपयोग के पश्चात् बिम्ब के स्वरूप के विषय में भी कुछ बातें सना उपयोगी होंगी। पाश्चात्य विद्वानों ने बिम्ब के स्वल्प के विषय में पर्याप्त विचार किया है पर शाब्दिक अक्षरों के प्रतिरिक्त उनकी माध्यताभा में बिम्ब अक्षर नहीं है। अक्सपीरियन इमैजरी एण्ड ज़ाट इट टेलस टू घरा' पुस्तक की सुप्रसिद्ध लेखिका मिस कोरोसिन स्पॉजिमन ने बिम्ब के स्वरूप के विषय में लिखा कि काव्य में प्रयुक्त प्रत्येक उपमा रूपक कल्पनाविश्व या काव्यमय अनुभूति जिसे कवि अपने विचारों और भावों से समन्वित करके प्रस्तुत करता है बिम्ब के अन्त में आते हैं। व्यापक रूप में प्रत्येक रूप और अर्थों की समानता प्रदर्शित करने के लिए आए जाते हैं बिम्ब हैं।^३ स्पॉजिमन ने बिम्ब का क्षेत्र बड़ा व्यापक माना। मादस्य विद्यालय के विद्वानों ने भी यह ही कहते हैं उनके मत से वे सभी बिम्ब कहें जा सकते हैं केवल भावात्मकता और विचारारमकता समता का होना उनके लिए आवश्यक है। 'ब बरुब आब इमैजरी' के लेखक स्टीफन ब्राउन ने भी बिम्ब को व्यापकता प्रदान की। उन्होंने कहा कि रूपक उपमा मानवीकरण स्मिथेडोज मेटोनिमी समासोक्ति, मुहाबत, मोरुकपा प्रतीक बिम्ब—सब यदि किसी एक सामान्य धीपक के अन्तर्गत रख जा सकते हैं तो वह है बिम्ब।^४ आगे बिम्ब को स्पष्ट करते हुए उन्होंने लिखा कि बिम्ब किसी धर्म प्रकार के भावों या विचारों के लिए सामान्य गणों से युक्त वस्तुविधान है जो वास्तविक या भौतिकीयों में प्रकट होता है। बिम्ब मुख्य वस्तु का दार्शनिक स्वाभाविक है जो सादृश्यता में ही प्रकट हो सकता है और उसके बिना भी

१ It is better to present one image in a life time than to produce voluminous works —Make it New Ezra Pound quoted by Lewis P Image p 25

२ We should always be prepared to judge a poet by the force and originality of his metaphors —Herbert Read quoted by Lewis, Poetic Image, Page 17

३ Shakespeare's Imagery and what it. —Miss Spurgeon, p 5

४ The world of Imagery Stephan J Brown p 1

बिम्ब —
हो सकता है। इन प्रकार बातम न बिम्ब के क्षेत्र को व्यापकता की धीर सादर्य
भावात्मक धीर विचारामक अनुभूतियों का प्रकाशन व ऐन्द्रियता धारि को बिम्ब के
अन्तगत मान्यता प्रदान की।

द इमैजरी धार् कीट्स एण्ड शैली' के प्रसिद्ध लेखक रिचर्ड एच० फोलेस न
बिम्ब की व्याख्या करते हुए उसके संबेदनात्मकता के गुण पर विशेष बल दिया। उनसे
कहा कि मनोवैज्ञानिका एवं भाषाशास्त्रियों में कविता को संबेदना की अनुभूति का प्रकाशन
मानने की धारणा है यह संबेदना जो विभिन्न-दृश्य घटना धारा स्पष्ट
प्रकारों से धारिता है। मन्त्रिक के सम्मुख मूस धीर मौलिक संबेदना को अधिक से अधिक
बिम्बकेवले संबेदना का प्रकाशन है। स्पष्ट है कि फोलेस न बिम्ब के संबेदनात्मकता
क गुण का विशेष महत्व दिया है।

बिम्बगत इन सब मान्यताओं क पदबाध इस निष्कर्ष पर पहुँचा जा सकता है
कि बिम्ब हमारी पूर्वानुभूतियों एवं भावनाओं का सूचकत्व हा जिसम एन्द्रियता धने
सिद्ध है। धारण संबेदना एव भावना इसकी मूल धारण्यकृताएँ हैं। यह धरकाटा
अपमानों, रूपकों मूहावतों धारि में या इन सबस पूर्वक होकर भी धमिष्यधत होता
है। धारणात्मकता समीपक कारकिर् में इन्ही तथ्या को कुछ परिवर्तन के साथ
एकदर बिम्ब की सबाँग पूर्ण व्याख्या की। उनसे कहा 'बिम्ब किसी संबेदना की
अनुभूति कोई भाव कोई मानसिक घटना कोई धरकार या वस्तुओं की तुलनात्मक
कहाँ तक हो सकता है केवल अमन किसी तथ्य को अनुभूत करने की सामप्य होनी
धाहिसे'।

1 Imagery may be defined as words or phrases denoting a sense perceptible object... but some other object of thought belonging to a different order and category of being. The sense perceptible object or image in question becomes a medium for conveying to the mind some notion regarding that other object of thought. The image is momentarily substitute for the object. This substitution may involve a comparison or it may not. —Stephen J Brown, page 2.

2 See —The Imagery of Keats & Shelley R. H. Fogle p. 3
3 An image may be, for example a visual image, a copy of sense something or it may be an idea, any event in mind which represents something or it may be a figure of speech, a double unit involving comparison. Coleridge, quoted by I.A. Richards Coleridge on Imagination.

बिम्ब की इन व्याख्याओं में बिम्ब के कुछ आधारभूत तथ्यों पर हमारी दृष्टि जाती है जो बिम्ब को सफ़सला प्रदान करते हैं। ये हैं (१) अनुभूति (क्रीमिग) (२) भाव (इमोशन) (३) धारित्र (पैशन) (४) ऐन्द्रियता (सेन्सुअसनेस)। अब हम इन विशिष्टताओं के संघर्ष में बिम्ब का विवेचन करेंगे।

(१) अनुभूति—बिम्ब हमारी स्मृति अथवा पूर्वानुभूतियों की अभिव्यक्ति है। यद्यपि यह कल्पना का एक व्यापार है। परन्तु अनुभूतियों से विशेष रूप से सम्बन्ध है। कल्पना पूर्वानुभूतियों को ही रूप देती है और बिम्ब हमारे दृष्ट वस्तु या अनुभूति जीवन की भावपूर्ण व्याख्या है। साधारणतः बटनाएँ या स्मृतियाँ स्वयं बिम्ब नहीं होतीं बल्कि अनुभूति की एक निश्चित गहराई उन्हें इस स्तर तक पहुँचा देती है।^१ इसीलिए आलोचक मूरिस ने कहा था कि बिम्ब वस्तु का केवल चित्रण नहीं होता बल्कि पूर्वानुभूति के एक विशिष्ट संघर्ष से उसका आकलन होता है यह संघर्ष उसकी एक मूल आसक्ति है।^२ अनुभूतियों के इस व्यापक प्रसारण के कारण बिम्ब आलोचक मूरिस बिम्ब को मानव हृदय का ही दूसरा रूप कहता है जो प्रत्येक बराबर वस्तु के साथ अपने संघर्ष की भोषणा करता है (अनुभूतियों के प्रकाशन के माध्यम से) और उस सिद्धि भी करता है।^३ बिम्ब का अनुभूति से इतना गहरा संबंध है कि आलोचक बैसी ने तो बिम्ब की निर्माण प्रक्रिया को स्मृतियों के संघर्ष में अनुभूतियों की व्याख्या करना ही कहा। भावार्थक प्रतिमाओं में अनुभूतियों का वैभव स्पष्ट परिलक्षित होता है। संबन्धार्थक प्रतिमा में अनुभूति कोई बाहर से समाहित हो जाने वाली वस्तु नहीं है बल्कि अनुभूति ही प्रतिमा है। आलोचक बैसी कहता है कि अनुभूतियाँ स्मृति में समाहित रहती हैं उनका स्वरूप मिथित होता है। और जब वह मिथित स्वरूप अभिव्यक्त होने के लिए कोई आकार खोजता है तब काव्य या कला

१ Such memories may have symbolic value, but of what we can't tell, for they come to represent the death of feelings into which we can't peer. T. S. Eliot, *Points of view from the uses of Poetry and Criticism*, p. 53

२ Every image recreates not merely an object, but an object in the context of an experience, and thus an object as part of a relationship being in the very nature of metaphors. —*Poetic Image*, Lewis, page 29

३ Poetic Image is the human mind claiming kinship with every things that lives or has lived and making good his claim. —*Poetic Image* C.D Lewis, page 35

४ It is a energetic charge of feeling upon the contents of memory the feeling stamped upon image from the image of the ordinary man. —*Poetic Process*, George Whalley page 76.

बिम्ब —

या स्मृतियों में बिम्ब का निर्माण होता है। काव्य में धनुस्मृति और स्मृति एक तार में धनुस्मृत हाकर बिम्ब द्वारा प्रकट होती है। इस रूप में बिम्ब व्यक्ति का प्रकटा बिम्बपथ करता है। व्यक्ति की धनुस्मृतियाँ और स्मृतियाँ—सभी उसके द्वारा प्रकट होती हैं। इसीसे घामासक मित्रिम डे मुईस न कहा या कि बिम्बों में धनु की घायल प्रतिष्ठाया मात्र नहीं होनी बरन् बहु एक तर्पण की भाँति होता है जिसमें वेहरे की रूपरेखाओं में परे उससे मर्बिधत किनी सत्य का उद्घाटन होता है। यह सत्य कवि का व्यक्तित्व उनकी अपनी धनुस्मृतियाँ स्मृतियाँ घादि—है। बिम्ब मात्रा काव्य की भाषा नहीं है बरन् कवि का मुखर स्वरूप है। इस प्रकार काव्यात्मक बिम्ब में धनुस्मृति और स्मृति का महत्त्व निम्नकार स्वीकार किया जा सकता है।

(२) भाव काव्यगत बिम्ब का दूसरा प्रमुख तत्व है भाव (इमाजन)। भाव धनुस्मृत काव्य का मूलपाथ है। भाव या बिचार काव्य की आधार शिलाएँ हैं जिनके प्रभाव में काव्य का निर्माण सर्वथा घसंभव है। काव्यगत बिम्ब में भी भाव को प्रमुख स्थान दिया गया है। (यहां भाव शब्द में ही बिचार को समाहित कर लिया गया है)। बिम्बवाद के प्रमुख कवि एजरा पाउंड ने बिम्ब की व्याख्या में भाव प्रथम बिचार की प्रमुखता दी है। उमने कहा 'बिम्ब एक निरिधत समय में भावनात्मक भावना भी होता है मर्बिध कवि समय और काल की सीमाओं से ऊपर उठ जाता है और बिम्ब के निर्माण में एक घचानक उत्पत्ति का घामास प्राप्त करता है। बिम्ब का यह घबन्मान् उद्भव भाव और बिचारों में धनुप्रानित होकर ही होता है यही धेवट बिम्ब का परिचायक है।' पाउंड ने इन दोनों बिचारों में भावनात्मकता व बिचार

... feeling is not something added on the sensory images but that the feeling is the image, that it is the feeling that abides in memory secretly combining with and modifying other feelings. When these feelings emerge into the light and seeks a body they take on the aspect of image in poetry or painting or sculpture. —Poetic Process, George Whalley p 176.

Poetic image conveys to our imagination something more than the accurate reflection of an external reality.....it looks out from a mirror in which life perceives not so much of its face as some truth about its face. —Poetic Image Lewis, page 18.

... that which presents an intellectual and emotional complex in an instant of time. —Make it New Ezra Pound, page 36.

It is a presentation of such a complex instantaneously which gives that sense of sudden liberation, that sense of freedom from time limits and space limits, that sudden growth, which we can experience in the presence of the greatest works of Art. —Ibid. page 336.

त्मकता पर विशेष बल दिया है। काव्य में दोनों सापेक्ष महत्त्व रखते हैं। भाव की इस प्रधानता के कारण विन्म एक भावावेद्यमय साधन की उत्पत्ति माना जाता है। इस प्रक्रिया में कवि की अर्धचेतनात्मकता रहती है। वह देश काल से परे उस अद्वितीय अनुभूति को भाव से अनुमानित कर चित्र रूप में प्रस्तुत करता है। आलोचक रिचर्ड्स इसी से विन्म निर्माण की प्रक्रिया को एक 'अर्ध-अन्व-विश्वासमयी पद्धति' कहता है। आलोचक कार्ल बेस ने विन्म की भावनात्मकता पर बल देते हुए कहा कि वस्तुतः यही भाव का आरोपण काव्य की वस्तु को साधारण वस्तु से पृथक् करता है और उसे विशिष्ट बनाता है। यह भावनात्मक विशिष्टता सर्वत्र ही चित्रमयता के मूल में विद्यमान रहती है। स्पष्ट है कि विन्मों में भाव अथवा विचार की स्थिति अनिवार्य है। मिस स्पेन्सिंग ने विन्म की परिभाषा देते हुए उसकी भावनात्मकता अथवा विचार-त्मकता पर भी बल दिया। उन्होंने कहा कि एक वर्णन या भाव जो तुलना या उपमा के द्वारा प्रस्तुत किया या समझाया जाये भावनात्मकता और संदर्भ का पुट लिए ही एक समग्रता का परिचय दे साब ही लेखक की बहुराई और समृद्धि से भी परिचित कराये और स्पष्ट करे कि वह क्या कहना चाहता है एक विन्म कहा जा सकता है। स्पष्ट है कि भाव का योग विन्म के लिये आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी है।

(१) आशय : विन्म का तीसरा प्रमुख तत्व है आशय (परिचय)। वस्तुतः यही वह तत्व है जो उसे इतिहासकारों अथवा पत्रकारों के विवरण आदि से पृथक् कर देता है। इतिहास आदि में भी कभी कभी अनुभूतिमय भाव का ऐसा चित्रण मिलता है जो काव्यगत विन्म के बहुत निकट आ जाता है परन्तु आशय अथवा संकेत के अभाव के कारण हम इसे साहित्यिक विन्म नहीं कह सकते। उसकी उदत्कता की स्थिति उसके संकेतहीन होने की सूचक है। साहित्य की दृष्टि में यह उदत्कता नहीं रहती। कवि अपने काव्य में उदत्क वर्णन नहीं करता बल्कि काव्य के प्रतिपाद्य में स्वयं अपने को

{ But poetry is like scientific argument, it is 'impure'. Its emotions are attached to real objects and this gives them a certain particularity. Reality hovers in the ego's vision. This means that poetry is concrete and particularised although, of course in each case the concretion and generality refers to different spheres of reality. — Illusion & Reality C. Caudwell, page 133

'a description or an idea, which by comparison or analogy stated or understood, with something else, transmits to us through the emotions and associations it arouses, something of the "wholeness" the depth and richness of the way the writers views, conceives or has felt what he is telling us. — Shakespeare's Imagery and what it tell to us. — Miss C. Surgeon, page 9

बिम्ब

प्रस्तुत करता है। काव्य में अपने आपको प्रस्तुत करने में वह भावों पूर्ण होता है और उसके बिम्ब भी भावों से पूर्ण होते हैं। भावों पूर्ण होने के कारण ही वह साहित्यिक बिम्बों की कोटि में आते हैं। इसी कारण कासरिज ने कहा था बिम्ब जितना भी सुन्दर क्यों न हो जब तक वह कवि की शक्तिलाली वासना या भावों से संयुक्त नहीं हो जाता कवि की बिदिष्टता (व्यक्तित्व) को नहीं प्रतिपादित कर सकता।¹ स्पष्ट है कि काव्यगत बिम्ब जो कवि के व्यक्तित्व का प्रकाशक होता है का भावों समुच्च होना आवश्यक है।

(४) ऐंग्रियता बिम्ब में संवेदना की अनुभूति वा होना भी आवश्यक है। बिदिष्टता बिम्ब की एक अनिवार्यता है। यह आवश्यक नहीं कि बिम्ब दृश्य ही हो वह किसी भी ऐंग्रिय अनुभव की अनुभूति हो सकता है। यद्यपि दृश्य बिम्बों की संख्या सर्वाधिक होती है परन्तु वह प्राणपरक व्यवहारक भावों भी हो सकते हैं। दृश्यग्रिय का व्यापार जीवन में सबसे अधिक होने के कारण काव्य में भी दृश्य बिम्बों का प्राधान्य रहता है। सभी कवियों में दृश्य संवेदनाओं में युक्त बिम्ब अधिक मिलते हैं। यह ऐंग्रिय संवेदनाओं की अनुभूति काव्य में उनकी बिदिष्टता समझी जाती है। घट में संवेदना की महत्ता के लिये प्रतिम रूप में आलोचक सिमिस व मूरिस का कहना उद्धृत किया जा सकता है। उनके अनुसार बिम्ब घटा में चित्रित किया जाने वाला वह न्यूनाधिक संवेदनात्मक चित्र है जो कुछ घंटों में रूपकामक होता है और घन संदम में मानवीय अनुभूतियों में सम्बन्धित होता है पर साथ ही साथ कवि की बिदिष्ट भावना और भावों का भी वादकी पर प्रस्तुत करता है।² स्पष्ट है कि ऐंग्रियता बिम्ब की एक मूलभूत आवश्यकता है।

स्पष्ट है कि अनुभूति मात्र भावों व ऐंग्रियता काव्यात्मक बिम्ब के समुच्च तत्व है। इसी के द्वारा बिम्ब जीवंत बनता है और काव्य में बिदिष्ट महत्त्व का भविष्यवादी होता है।

1. Images, however beautiful do not of themselves characterize the poet. They become proofs of original genius only as far as they modified by a predominant passion or by associated thoughts or images awakened by that passion. —Coleridge quoted by Lewis, Poetic Image, page 19

We began to see then, that the poetic image is a more or less sensuous picture in words of some degree metaphorical with an undertone of some human emotion in its contexts, but also charged with and releasing into the reader a special poetic emotion or passion. —Poetic Image C. D. Lewis, page 22

३) विम्ब के गुणों

विम्ब काव्य का आवश्यक तत्व है। यह ध्यान देने पर यह प्रश्न स्वतः उद्भूत होता है कि विम्ब में वह क्या गुण हैं जो उन्हें काव्य में इतनी महत्ता प्रदान करते हैं और विम्ब पाठकों को क्यों आकर्षित करते हैं। उनके आकर्षित करने का कारण विम्ब वह गुण है जो अमिष्यकित की किसी अन्य विधा में इतनी समग्रता से नहीं मिल सकते। और यही गुण काव्य में विम्ब की महत्ता को प्रतिपादित करते हैं यद्यपि इन चो के आधार पर विम्बों को किसी दृढ़ विभाग में नहीं रखा जा सकता ना एक ही या किसी एक विम्ब में अनुप्राणित है ऐसा कहा जा सकता है। काव्यगत विम्ब में नका प्रायः मिश्रित रूप प्रस्तुत होता है क्योंकि विम्ब काव्य का स्वतः उद्भूत तत्व है और यदि उसका विश्लेषण किया जाय तो वह अपने सौन्दर्य की कुछ न कुछ क्षति उही सेता है। जो भी विम्ब अनुभूति और भाव से उत्पन्न होता है जिसका विश्लेषण अर्थात् गुणों के आधार पर विभाजन नहीं किया जा सकता। विश्लेषण बुद्धि का धर्म और विम्ब विधान कल्पना का और इन दोनों को एक दूसरे पर आरोपित नहीं हया जा सकता। ऐसा करने पर बड़ी परिणाम होगा जो ठितनी की सुन्दरता का विश्लेषण करने के लिए उसके चरों को अलग अलग कर देने से होता है। विम्ब एक मय होता है उसका सौन्दर्य उसके सम्पूर्ण अस्तित्व में निहित है। फलतः उसे किसी नेमित रूप में बन्ध नहीं किया जा सकता। यहाँ विम्ब के बिन गुणों का अस्तेज हया जायगा वह प्रायः एक दूसरे की सीमा रेखा को स्पर्श करते हैं और उनके अन्तर्गत के रूप में धाये विम्बों में केवल बही एक गुण है, ऐसा नहीं कहा जा सकता क्योंकि प्रत्येक विम्ब में दो या उससे अधिक गुण सर्वत्र मिश्रित रहते हैं।

विभिन्न के सुदृष्ट ने विम्बों का विश्लेषण करते हुए उनके निम्नांकित गुणों ने मान्यता दी है जो क्रिचित् परिवर्तन के माध यहा प्रस्तुत किए जा रहे हैं

- (१) भावनाओं को उल्लिखित करने की शक्ति (Evocateness)
- (२) भाव को तीव्रता के साथ प्रस्तुत करने की सामर्थ्य (Intensity)
- (३) अमिष्यकित की नवीनता (novelty) व ताजगी (freshness)
- (४) परिचितता (familiarity)
- (५) उर्वरता (fertility)
- (६) औचित्य (congruity)

(१) भावनाओं को उल्लिखित करने की शक्ति—विम्ब में हमारी सुप्त भावनाओं को जाग्रत करने की सामर्थ्य होनी चाहिये कि वह एक घटके के साथ

The imagery of a poem is part of a living growth even decorative and conventional images can hardly be detached for examination, without losing some of their sparkle. —Poetic Image Lewis page 40.

बिम्ब

हमारी वाचमालक अनुभूतियों को तीव्र कर दे इसी उल्लेखना में हम कवि की कल्पना से साक्षात् कर उसकी भावना का उचित बहस कर सकते हैं। यह उल्लेखना प्रदान करने की गति बिम्ब के किसी घंश में नहीं होती बल्कि उसका समग्र रूप हमें उल्लेखना देता है। उसका शब्द ध्वन्य भावों को प्रस्तुत करने का ढंग—सब उसकी मानवीय भावनाओं को उल्लेखित करने की शक्ति का परिचय देता है। भावों का उल्लेखित करने के लिए यह आवश्यक नहीं कि बिम्ब में नवीनता हो बहिनत उपमान भी कभी-कभी ऐसे स्वल्प रूपका संदर्भ में प्रस्तुत किये जाते हैं कि उनमें उल्लेखना पुरित कर देने की सामर्थ्य या जाती है। समग्र बिम्ब से प्रथम कभी-कभी एक शब्द में भी बिम्ब का बीजत बना देने की शक्ति होती है।

कुर्मि ने बिम्ब के इस गुण को स्पष्ट करते हुए बताया कि यह तब पूर्णतः व्यक्ति (पाठक) पर निर्भर है। इस इतको कि 'ही सामाजिक भावनाया से नहीं परख सकते यह पूर्णतः वैयक्तिक व्यापार है।' परन्तु मेरे विचार से अनुभूतियां को उल्लेखित करने की सामर्थ्य बिम्ब में ही निहित होती है जो व्यक्ति मात्र के लिए साम्य है और मानवीय अनुभूतियां भी मूलरूप में हर वेतन रूप में विधान कर्णी हैं। परत वैयक्तिकता का प्रत्य वही इतना प्रयुक्त नहीं है यद्यपि ऐसा हो सकता है कि कोई बिद्विष्ट बिम्ब किसी बिद्विष्ट व्यक्ति को ध्यिक उल्लेखित करे सामान्यन पेमा न कर सके पर एमी स्थिति में इसके लिए कोई विशेष कारण होगा जो मणोवैज्ञानिक बिम्लेयन से ही स्पष्ट हो सकता है। ही उल्लेखना की मात्रा ग्युनाधिक हो सकती है पर उमरा स्थान वही आवश्यक ही होगा। यदि बिम्ब में उल्लेखना प्रदान करने की अनुभूतियों को जमाने की शक्ति है तो वह हर व्यक्ति पर प्रथमा प्रभाव आसगा यह प्रभाव ध्यिक या कम हो सकता है पर प्रभाव न हा उल्लेखना प्रभूत ही न हो यह सामान्यतः मान्य नहीं है। वैयक्तिक शक्ति का महत्व प्रथम है परन्तु वही मात्र कुछ नहीं है।

बाध्य में धनेक बिम्ब ऐसे होत हैं जो हमारी अनुभूतियों को संतुष्ट कर देते हैं। यह शक्ति बहूत घंशों में उगमें नवीनता और ताकती के संयोग में जाती है। यहाँ उल्लेखना के लिए मध्यकालीन कवि यतार्जुन का बिम्ब इष्टव्य है

जगत्ते धति गुडर धामन गौट, सके गुग राजन वातन धर्ष ।
हृत् कोलन में धवि पूतन की घर्षा उर झरर जात है हर्षे ।

सह कोल कोल करे कसकंड कनी कतजाबलित हर्षे ।
धंभ धय तरंय उठे कुति की बरिहै मनो रूप धर्ष पर ध्ये ॥१११॥

2 For evocative power then, there is only the individual, subjective test

गा भीरव बहु वैहि हिनौरा अनु अकास दृढ बहु घोरा ।

उठे लहरि परबत की नाई होइ चिरं जीवन लख साई ।

परती लेन सगग लेहि बाड़ा सकस समुद्र अगहू भा ठाड़ा ॥११५॥११४

यहाँ कवि किसकिनाती समुद्र की अपानक लहरी का आभास देना चाहता है पर पर्वत के समान उठती हुई लहरों के कड़ने से सम्भवतः कवि को संतोष नहीं है इसलिए वह समुद्र के लगे होने का रूप प्रस्तुत करता है जो बिस्तार को स्पष्ट कर देता है। इससे यहाँ कवि सम्यकरता की जो छीमा देना चाहता था वह भी धा जाती है। यहाँ सकस समुद्र जानहु भा ठाड़ा पद कवि के भाव को तीव्रतम रूप में प्रस्तुत करने में समर्थ है। यही तीव्रता कवि को अभीष्ट यी जो बिम्ब के द्वारा प्राप्त होती है।

(३) नवीनता और ताजगी—बिम्ब की उपलब्धता का बहुत बड़ा धर्म बिम्ब के नवीन व ताजा (फेस) होने के दुर्गों पर निर्भर करता है। पुराने बिम्ब काव्य में निरन्तर प्रयुक्त होते होते कभी-कभी इतने बड़े और प्रभावहीन बन जाते हैं कि न वह अनुभूतियों को संकट कर पाते हैं और न काव्य का कोई उपकार ही कर पाते हैं। कुछ असकारवादिनों एवं परम्परावास्त कवियों में प्रायः ऐसे बिम्ब पाये जाते हैं। उनके बिम्ब कोई रूप प्रस्तुत नहीं करते केवल भाषा के रूप में ही उनका उपयोग रह गया है। उनसे काव्य का किसी प्रकार का उपकार नहीं होता। आँखों के लिए जब सर्वप्रथम संजन का बिम्ब प्रस्तुत किया गया होगा तब उसमें भावोद्वापन—बचलता को साकार कर देने की—अपूर्व क्षमता होगी पर जब निरन्तर प्रयुक्त होते होते वह आँखों के लिए मात्र एक बिन्दु के रूप में रह गया है। कमल इस अमर मीन आदि के उपमान भी ऐसे ही हैं। इनमें कमल (मुग के लिये) उपमान था ऐसा है जो कभी सर्वाधिक जीवन्त होमा पर आज सर्वाधिक प्राचहीन है। तुमसी का कमल का प्रयोग यहाँ उल्लेखनीय है

धी रामचन्द्र दृपालु भञ्जमल हरण जय मय राकम् ।

नव संज भोजन संज मूल करकंज पद कंजदरुं ॥

वस्तुतः यह कमल के बिम्ब का सबसे बड़ा दुरुपयोग है और कवि की कल्पना की बहिष्कार का परिचायक है। बिम्ब की समपता बार बार प्राकृति के कारण बिल्कुल ही समाप्त हो गई है। उसमें न संवेदना देने की शक्ति है न प्रभावोत्पादकता। इसी शक्ति के कारण कमल उपमान आज निष्प्राण हो गया है जब तक कि इसका किसी अभिनव रूप या अभिनव प्रसंग में उल्लेख न किया गया हो। अस्तु! काव्य में बिम्ब की नवीनता का महत्त्व निर्विवाद है।

बिम्ब की नवीनता के द्वारा कवि पाठक को जागृति के त्रिध स्तर पर ले जाता है वह अपूर्व होता है। पाठक के हृदय पर नवीनता का गहरा प्रभाव पड़ता है जैसे इस बिम्ब में

सागहि बार बारें बस बाक फिर फिर संजसि न बाक' ॥

यह नबीनता इष्टम्ब है। कवि बिरह की दग्धता के समस्त प्राचीन उपकरणों को छोड़कर बीबन से इहोत एक नबीन कल्पना प्रस्तुत करता है जो बड़ी व्यंजन है।

बिब के बयन का लोच यहाँ अत्यन्त नबीन है पर वह बुद्धि के घटपटेपन को उमारेने बासा नहीं है बल्कि हृदय में भाव को अत्यन्त स्पष्टता के साथ संकित कर देता है।

बिबों की नबीनता का सुन्दर प्रयोग प्रागुनिक युग के प्रयोगवादी कवियों में प्रायः मिल जाते हैं। नये बिबों का निर्माण ही उनकी कल्पना की उत्कृष्टता है। यद्यपि पतिव्रता के कारण कहीं-कहीं यह नबीनता में भटक गये हैं फिर भी बिबों के उपकरणों की मूतनता के लिए उनका योग प्रशंसनीय है। अन्त में यह बिब योजना मूतनता के लिए प्रशंसनीय है। अन्त में यह

बिब योजना मूतनता के लिए प्रशंसनीय है। अन्त में यह

अन्त में यह

या शहर के भीर की मीहार ग्हाई हुई

टटकी बली बन्धे की, बयेरह ती

नहीं कारण कि मेरा हृदय अपना या कि मुना है

याकि मेरा प्यार मेला है

बिबि केबल यही, यह उपमान मसे हो गये हैं

कभी बासन अथिक घितने से मुलम्मा पूट जाता है

अन्त में प्रस्तुत बिब अथनी मूतनता में अत्युत्तम है। साथ ही भाव व्यंजना की पत्रितीय सामर्थ्य रखता है। सिर्फ एक यही बिब अन्त में भी के भाव को पूर्णतः प्रकट कर पठा है। पुराने बिबों के बिरोध में नये बिबों का यह निर्माण अत्यन्त सफल है और कला की उत्कृष्टता का प्रतिपादन है।

नबीनता के साथ-साथ ताजगी का सम्बन्ध नबीनता से है पर न प्रत्येक ताजगी बिब नबीन होता है। ताजगी के लिए जहाँ एक घोर नबीनता की आवश्यकता है। जहाँ बन्धु के साथ रागात्मक सम्बन्ध होना भी नितात्मक आवश्यक है। इसी से संस्कृत घोर मध्यमामीन कविता में प्रायः उपमान प्रायः नबीन न होत हुए भी ताजगी प्रदान करते हैं। उपावादी कविता ताजगी से पुरित उपमानों से बिरोध समृद्ध है।

नारी पत्नी का बिबय कवि पन्त इन मन्त्रों में बरत है जो कवि के प्रभाव में तो है ही पर अपरिचित भी नहीं है और भाव की प्रेषणीयता में पूर्ण सहायक है।

नबल मपुरितु निहुँब में प्रस्तः
प्रबल कलिका ती अरकुट मात

पा नीरज यह बेहि हिलौरा, अनु प्रकाश हूँ अनु भोरा ।

उठे लहरि परबत की नाई होइ फिरि औगन नज ताई ।

परतो नेत सग्न सेहि बाड़ा सकल समुद अगनु भा ठाड़ा ॥१४३॥२॥४

यहा कवि कितकिमाठी समुद्र की भयाणक सहरोँ का धामास बेना चाहता है पर पर्वत क समान उठती हुई लहरों के कहने से सम्भवतः कवि को संतोष नहीं है इसलिए यह समुद्र क लहे हाने का रूप प्रस्तुत करता है जो बिस्तार को स्पष्ट कर देता है। इससे जहां कवि भयंकरता की भी सीमा देना चाहता था वह भी धा जाती है। यहा सऊस समुन्ध जानहु भा ठाड़ा पर कवि के भाव को तीव्रतम रूप में प्रस्तुत करने में समर्थ है। यही तीव्रता कवि को धमीष्ट भी जो बिम्ब के द्वारा प्राप्ता होती है।

(१) नवीनता धीर ताजगी—बिंब की सफसता का बहुत बड़ा अय बिंब के नवीन व ताजा (फरा) होने के गुणों पर निर्भर करता है। पुराने बिंब काव्य में निरन्तर प्रयुक्त होते होते कभी-कभी इतने बड़ धीर प्रभावहीन बन जाते हैं कि न वह धनुभूतियों को भङ्ग कर पाते है धीर न काव्य का कोई उपकार ही कर पाते हैं। कुछ प्रसंकारवाधियों एवं परम्परापस्त कवियों में प्राय ऐसे बिंब पाये जाते हैं। उनके बिंब कोई रूप प्रस्तुत नहीं करते केवल मापा के रूप में ही उनका उपयोग रह गया है। उनसे काव्य का किसी प्रकार का उपकार नहीं होता। धालों के लिए जब सर्वप्रथम लंजन का विष प्रस्तुत किया गया होगा तब उसमें भावोद्बोधन—बचसता को साकार कर देने की—धपूर्व क्षमता होपी पर जब निरन्तर प्रयुक्त होते होते यह धालों क लिए मात्र एक बिम्ब के रूप से रह गया है। कमल हस भमर मीन धादि के उपमान भी ऐसे ही हैं। इनमे कमल (मुल के जिये) उपमान तो ऐसा है जो कभी सर्वाधिक पीबन्त होगा पर धाज सर्वाधिक प्राणहीन है। तुमसी का कमल का प्रयोग यहा उस्तेलनीय है

धी रामचन्द्र वृपालु मजमन हरय भय मर बाचनम् ।

नच कंज लौचन कंज मुन करकंज पर कंजाचन ॥

वस्तुतः यह कमल के बिंब का सबसे बड़ा दुरपयोग है धीर कवि की कल्पना की बरिष्ठता का परिचायक है। बिंब की समयता बार बार धादृति के कारण बिस्तृत ही समाप्त हो गई है। उसमें न सुबेहना देने की धक्ति है न प्रभावोत्पादकता। इसी धति के कारण कमल उपमान धाज निप्राण हो गया है जब तक कि इसका किसी धभिनय रूप या धभिनय प्रसंग में उल्लेख न किया गया हो। वस्तु! काव्य में बिंब की नवीनता का महत्त्व निबिधाद है।

बिंब की नवीनता के द्वारा कवि पाठक को भावभूमि के बिंस स्तर पर ले जाता है यह धपूर्व होता है। पाठक के हृदय पर नवीनता का गहरा प्रभाव पड़ता है जैसे इस बिंब में

जापड़ि बर बर बस बाक फिर फिर संवसि न बाक^१ ॥

यह नवीनता इष्टव्य है। कवि विरह की दग्धता के समस्त प्राचीन उपकरणों को छोड़कर जीवन से गृहीत एक नवीन कल्पना प्रस्तुत करता है, जो बड़ी व्यक्त है। विन्ध के चयन का क्षेत्र यहाँ प्रबल नवीन है पर वह बुद्धि के धटपटेपन को उबारने वाला नहीं है बरन् हृदय में भाव को धत्वन्त स्पष्टता के साथ धकित कर देता है।

बिंबों की नवीनता का सुन्दर प्रयोग प्रायुक्तिक युग के प्रयोगवादी कवियों में प्रायः मिस पाते हैं। नये बिंबों का निर्माण ही उनकी कल्पना की उन्नतता है। यद्यपि प्रतिबन्धिता के कारण कहीं-कहीं यह नवीनता में जटक बने स लगते हैं फिर भी बिंबों के उपकरणों की मूलनता के लिए उनका योग प्रयत्नशील है। प्रथम की यह विन्ध नवीनता मूलनता के लिए प्रयत्नशील है

घर में तुमको मलाती साज के नम की चकेली तारिका

घब नहीं कहता

या घर के मोर की नीहार म्हाई हुई

टटकी कसी बम्बे की नर्मरह, तो

नहीं कारण कि मेरा हृदय उचला या कि तुम है

याकि मेरा प्यार मंता है

बन्धित बैबल यही यह उचमान बँजे हो गये हैं

बैबल इन प्रतीकों के कर गये हैं कूब

कभी बासन अधिक चित्तन से मुसम्मा मूत्र जाता है^२

धन्विम पंक्ति में प्रस्तुत विन्ध प्रथमी मूलनता में अनुपम है। साथ ही भाव व्यंजना की प्रथितीय साधर्म्य रखता है। तिरक एक यही विन्ध प्रथम की के भाव को पूर्णतः प्रकट कर देता है। पुरान बिंबों के विरोध में नये बिंबों का यह निर्माण धावन्त सफल है और कला की उत्कृष्टता का प्रतिपादक है।

नवीनता के साथ-साथ ताजगी का सम्बन्ध नवीनता से है पर न प्रत्येक ताजगी विन्ध नवीन होता है। ताजगी के लिए जहाँ एक मोर नवीनता की आवश्यकता है। जहाँ वस्तु के साथ सामासिक सम्बन्ध होना भी नितान्त आवश्यक है। इन्हीं से संस्कृत और मध्यकालीन कविता में साथ उपमान प्रायः नवीन न होते हुए भी ताजगी प्रदान करते हैं। छायावादी कविता ताजगी से पूर्णतः उचमानों से विशेष संपृक्त है। ताजगी पानी का बिजल कवि पन्त इन ताजगी में करता है जो कड़ि के समान में तो है ही पर अपवित्रित भी नहीं है और भाव की प्रेषनीयता में पूर्ण सहायक है

नवल सपुरितु निकुब में प्राल-

प्रथम कलिका सी धक्कुर पात

१. उन्परित मालु—मुनडी ३२४ २

२. इती कालु पर सप मर—इन्देव, १० ३०

नील नम स्रस्तःपुर में तबि ।
 बूझ की नभा सवृष्य नबजात ॥
 बिकम्पित उर मुहु पुसकित गात
 सान्कित क्योस्तमा सी चुपचाप
 अङ्कित पर नवित पलक दृप पात ।^१

स्पष्ट है कि बिम्ब की ताजगी का प्रथम उसकी नवीनता से बहुत शिक्य का है। पर कमी-कमी अत्यधिक नवीन उपमान भी अपनी अपरिचितता के कारण सपेय भीय नहीं बन पात।

(४) परिचितता काव्यगत बिम्ब में नवीनता के साथ-साथ परिचय का प्रस्तुत भी सहज ही उठता है। पाठक केवल उन्ही कल्पनाओं उन्हीं बिंबों के द्वारा भाव ग्रहण कर सकते हैं जो उनके अपने जीवन के बीच क हों और सहज ही उन भाव को बहान करने की सामर्थ्य रखते हो अर्थात् पाठकों के साथ बिंब का पूर्वपर सायात्मक सम्बन्ध होना चाहिए। नवीनता की प्रतिस्पर्धता केवल बुद्धि को चमत्कृत कर पाती है भाव व्यञ्जना में उससे व्यवधान ही पड़ता है। परन्तु परिचय को कड़ि और परपरा के रूप में ग्रहण करना उचित नहीं है जैसा कि ग्रामोष्क सुईस में किया है^२ क्योंकि ऐसी परिचितता नवीनता एवं ताजगी के घमाव में सफल नहीं कही जा सकती परिचितता बिंब की सफलता का एक सौपाल होना चाहिये।

यह परिचितता बहुत कुछ वैयक्तिक आतीय व एकदेशीय होती है। व्यक्ति, जाति, देश आदि के कारण स्वभाव का अन्तर होने से एक स्थान पर परिचित उपमान ग्रन्थ के लिए अपरिचित बन जाता है। अरब जी कवि चौमर का एक उपमान इष्टव्य है जो देवीय मिनता को प्रकट करता है 'बह इतना चुपचाप या ख्य या जैसे अरैल में बास पर गिरती हुई घोस बूवें।' एक भारतीय के लिए यह बिंब उतना उत्तेजक नहीं हा सकता जितना एक यूरोप वासी के लिए। बास पर पड़ी घोस बूव की कल्पना उत्तेजक प्रभाव है पर अरैल में घोस बूव की कल्पना कोई अतिक्र मुन्दर बिंब सामने नहीं साठी कारण कि भारतीय जीवन में यह उतना परिचित नहीं है।

यहाँ आयसी का एक बिंब और उल्लेखनीय है

सरबर हिया घटत निल आई इकि इकि होइ होइ बिहराई ।

बिहरत हिया करहुं पिउ टैका बीठि बंगरा मेरबहु देका ॥

^१ गु बन मुनिबाल्पन क०, १ ४ ४३

^२ Familiarity can be found in those concrete images, I have mentioned words like rose, hill, west, moon—which through constant use in emotional contexts have created a permanent right of way through our hearts. —Poetic Image, Lewis, page 45.

^३ Chaucer quoted by Lewis in Poetic Image p 45.

बिम्ब

यहाँ बिम्ब को सफ़ाई प्रदान करने में परिचय का बड़ा योग है। लोक जीवन से इहीत यह बिम्ब उस व्यक्ति को कमी माओं की अनुपस्थिति नहीं करा सकता बिम्बने कमी सरोवर के तल की मिट्टी को तोंघ प्रीप्य म बरक बरक कर फटते म देखा हो। बिह्वरत हिया उसके लिए सवित्र दण्ड नहीं बन सकता माब ही जिसने बंबपर घनाइ की प्रथम झूठी ने बाद उस मिट्टी मे धार्क मूमपता प्रौर कोमसता को नहीं देना हो बह भी नाममती के संभावित मुल की बल्पता नहीं कर सकता। बिह्वरत हिया प्रौर बबगरा धारों ही मरद परिचय क धमाब म सोक बीबन से धमंबड व्यक्ति के लिए अपने मरदर अपूब धममा रलत हुए भी व्यर्ब हा जात है। यही परिचितता का प्रथन वैयक्तिक है।

यत कवि को पाहिए कि बह उन्ही बिबा का प्रयोग कने त्रिमन उसक पाठक भी परिचित हों। पत म इसी प्रौर इगित करते हुए मिला बा कि यदि सेधक अपने अनुमनों प्रौर बिचारों को अपने ही ममात्र से त्रिसे कि उसक पाठक भी अधिक परिचित हैं परिचितिया प्रौर बाह्य उपकरण कुत कर व्यक्त कर सके प्रौर पाठका स परिचित साँचों में बासकर अपनी इतिया का मामन रन मक तो निमंदेह उसक रचनात्मक बिचारों में अधिक शक्ति होगी प्रौर उसकी कया म अधिक प्रभाव हागा। प्राथुनिक कवि मबीन बिम्बों को प्रस्तुत करने म जहाँ इस मुल का बिम्बून कर गय है वही उनके बिब धसफल गिड हुए हैं। उनकी धमफलता बा कारण उनका बहूत अधिक वैयक्तिक होना है। बह मान कवि को ही प्रभावित कर सक है पाठका म उनका कोई संकष नहीं होता।

(३) उबरता—माओं की उबरता प्रदान करन की शक्ति भी बिब का प्राब प्यक मुम है। बिब बेबल माब को धमिम्यक्त करक ही म यह प्राप बरन् हमारे कम्मून माओं की एव परम्परा निमित्त कर हें हम बेबल भ्रान ही म हा प्राप बिबांग भी हा सकें बिब द्वारा प्राप्रत उस माब म देर तक धरणाहन कर सकें। सामान्य रूप में बिब की उत्तेजना प्रदान करन की शक्ति प्रौर उबरता की शक्ति एक ही बस्तु क दो मिल्न नाम प्रनोड होत हैं परन्तु मूम परीक्षण से मान होता है कि दोनों में पर्याप्त अन्तर है। बेतना को संकृत कर देने वाली बस्तु मनेब उबरती होती होली अपने पीछे बिचारों की श्रुतता नहीं छोड़ जाती। बिब की धमिन उनके प्रभाववाली बनाने में अपूर्ब योग देती है। उबरता क लिए बिब का शक्ति एक एवं व्यक्त होना अपेक्षित है। जहाँ धम प्रत्यनों का धर्मान् सविन्धार मुगतिता (धारेक्षिणी) क शक्तिता रहती है वहाँ बिब उबरता के मुनों म सम्मन् हो जाता है। उबरता के लिए प्रापमी बा एक बिब इच्छ्य है।

— मैं निमित्त धम तनि बरतनी रात्र देनि मुगति करि बमी।
धर्मान् शक्ति होत पर पचाबती फिर बगमा की शक्ति प्रभावित हुई। उबा म

देखा भूमि फिर बस गई बी । प्रथम मिलन के पश्चात् नसिन हुई पद्यावती पुन लसी
 सीन्दर्य से मंडित हो गई बी बिचसे पहले बी । महा 'पुष्पि फिर बसी' मुखाररे के रूप
 में प्रयुक्त बिंब है जिसमें अपूर्व उर्बरता है । इस उर्बरता के कारण हम प्रथम पंक्ति में
 प्रयुक्त बिंब को बिस्तृत-मा कर जाते हैं यद्यपि वह भी सुन्दर है । यहाँ मबिस्तार बर्णन
 नहीं है सोड़े शब्दों में शब्दों की गहनता को प्रस्तुत किया गया है । यह केवल पद्यावती
 के समूह सीन्दर्य का ही बिंब नहीं है बरन् उनकी मिलोपरांत स्थिति राजा की भीम
 पूर्ण मनोवृत्ति को भी प्रकट करता है । केवल एक बिंब भावा की इस लंबी श्रृंखला
 को व्यक्त करने के कारण अत्यन्त सफल हुआ है । इसमें उर्बरता की अपूर्व क्षमता है ।
 बिंब की शर्ष गहनता में पाठक भाव विभोर हो जाते हैं ।

भाव विभोर करने की क्षमता और भाव की गहनता की दृष्टि से एक बिंब
 और उल्लेखनीय है ।

Give your hearts, but not into each other's keeping
 For only the hand of life can contain your heart's
 And stand together yet not too near together
 For the pillars of the temple stands apart,
 And the oak tree and the cypress grow not into each other's
 shadow²

इसके अन्तिम दो बिंब—तुम एक साथ रहो पर एक दूसरे में अपने व्यक्तित्व
 का विलय न करो क्योंकि मन्दिर के समूह अलग अलग ही खड़े रहते हैं और प्रीक व
 साइप्रस एक दूसरे की छाया में नहीं बढ़ सकते । भाव की सखमता के साथ प्रस्तुत
 करते हैं और पाठक को स्त्री-मुरूप के सम्बन्धों पर सोचने के लिए बिचस कर बेते हैं ।
 भाव व्यंजना को अपूर्व पूर्णता के साथ प्रस्तुत करने के कारण यह बिंब विषय सफल
 कहे जा सकते हैं । स्पष्ट है कि बिंब की उर्बरता क्षमता उसकी प्रभावशाली और
 सफल बनाने में अपूर्व योग देती है ।

(१) प्रौचित्य—वस्तुतः प्रौचित्य एक ऐसा तत्व है जो जीवन और जगत के
 प्रत्येक क्षेत्र के लिए अनिवार्य है । बिंब के लिए भी प्रौचित्य के निर्बाह की क्षमता
 होने की अत्यन्त आवश्यकता है प्रौचित्य के अभाव में बिंब कभी सफल नहीं हो
 सकता । इस कारण केवल प्रौचित्य को ही बिंब का मूल तत्व माना जा सकता है ।³
 केवल यही वह तत्व है जो अन्तः पूर्णों को एक सम्यक अनुपात में प्रस्तुत करके बिंब
 को सफल बनाने में पूर्ण सहायक होता है । अर्थात् किसी एक तुल्य की प्रति हो जाने

१ Propbet, Khalil Gibran, page 13

२ If there is any essential in imagery it is not boldness, or intensity
 but congruity—that the image should be congruous with the
 passionate argument and also with the form of the poem—Poetic
 Image,—G.D Lewis, page 46.

पर बिम्ब प्रत्येक मुक्तों से सम्पन्न रहने पर भी केवल प्रौचित्य के प्रभाव में प्रभावित्वा बन में घसमर्ष हो जाता है और केवल उपहास का उपकरण ही बन जाता है।^१ प्रौचित्य का संबंध बिम्ब के प्रयोग पर निर्भर है और तीव्रता लचीलता घाड़ि भी इस पर आबागित है। इसके प्रतिरिक्त काव्य के मर्मम ब बिम्ब के अयन में भी प्रौचित्य का बड़ा महत्व है। किस भाव के लिए क्या बिम्ब सफल हो सकता है यह सब प्रौचित्य के संदर्भ में ही विचार्य जाता है। प्रौचित्य के कारण बिम्ब बिम्बों म प्रत्य मुक्तों का कोई विशेष स्वान नहीं रहता बह भी सफल बन जाते हैं। उपकरणों के बड़ और परम्परागत होने पर भी निर्माकित बिम्ब परिस्थितिलत प्रौचित्य के कारण भाषा बिव्यक्ति की सपूर्व क्षमता रहता है।

बड़ा प्रसाद गगन धन गात्रा, साजा बिरह दु ब हल बात्रा :

ब्रूम स्वाम धीरे धन धामे सेत धुत्रा बह पाति रिताए ।

अरम बीनु बमक बहू धोरा, दु ब काम बरिसे धन घोरा :

इसमें यद्यपि उपकरण प्राचीन हैं पर प्रसाद भास की प्रकृति के समुक्त्य होने के कारण इस रूपक में सपूर्व क्षमता प्रा गई है। यही बिम्ब यदि भास बिरह की अंधता का ध्यान में रहकर प्रीष्म माम आदि के किसी और मयम म दिया जाता तब संभवत इसमें इतकी प्रभावित्वायकता न होती। यहाँ संदर्भ—प्रसाद माम म बर्षा का रूपक—के कारण ही यह बिम्ब सफल हुआ है जो प्रौचित्य पर आबागित है।

प्रौचित्य का निर्बाह मूरबाम के काव्य में भी पूर्णता स हुआ है। उनके अनेक बड़े-बड़े रूपकों को केवल रूप के आरोपण के कारण ही नहीं मराहा जा सकता बरन् अपने प्रौचित्य-संदर्भगत भागवत आदि के कारण भी वे प्रतामनीय हैं।

ऊपी भली करो तुम धाए ।

बिधि दुनास कीगु कबि घर, ते तुम धान पकाए ।

रंग बीगुही ही कागु संबारे धंग धन बिब धनाये ।

घाली सरै न बंध मेह ते धबधि घटा बर छाए ।

ब्रज करि धबा जोग करि ईवन मुरति धग्नि तुलपाये ।

फू क जसात विरह परिजारिण संप ध्यान बरम तियराये ।

बरे संबुरम सकल प्रम जल तुबन म काहू पाए ।

राज काज ते गये मूर प्रमु नंब मंरन कर लाए^२ ।

१ In this knowledge of proportion lies the essential character of great imagery which till it embodies fitting conceptions is not great, but like that giant's robe upon a dwarf to which one of the speakers in macbeth compared and usurpers empty title—Aspects of Elizabethan Imagery—Miss Elizabeth Holmes, quoted by Lewin p. Image p. 47

२ संविज्ञ मूरबाम संख्या १९११ १० ४३१

कसछों के निर्माण का यह रूपक अन्तिम पंक्ति राज काज से गये के प्रभाव में भी भाव को सफलता से अर्पणित कर सकता था पर राज्याभियेक के लिए कसछों की आशयकता का उल्लेख इस रूपक को सर्वगत धींचित्य के कारण सफल बनाता है। सरबास सिर्फ कसछों के सारे व्यापार शोधियों के ऊपर आरोपित करने के लिए नहीं देते बरन कृष्ण का राज्याभियेक होना ठब मंगल कसछों की आशयकता होबी इस परिस्थिति को रत्नकर इस बिब को प्रस्तुत करते हैं, इस परिस्थिति के कारण यह बिब अधिक सफल है।

धींचिय बिब का भूम तत्व है। धनींचित्य के कारण अनेक सुन्दर से सुन्दर बिब भी अपना सीन्दर्य समाप्त कर देते हैं। विबपत धनींचित्य के लिए हमारे हिन्दी काव्य में दो श्रेण बड़े समृद्ध हैं—एक केशव का काव्यश्रेण दूसरा नये कवियों का काव्य।

उपमन्त्रिका के अनेक सचित्र उपमान व रूपक धनींचित्य के कारण उपहासास्पद बन बये हैं। यथा

अरुण पात अति पद्मिनी प्राणनाथ मय ।
 मामहुं केशवबास कोरुनव कोरु प्रेम मय ।
 परिपूरण सिङ्गर पुर कैंची मंगल बट ।
 किची अन्न के छत्र महुंयो मानिक ममुक पट ।

कं श्लोचित कलित कपाल यहु किन कापालिक काम को ।
 यहु ललित माल कैंची लसत विमामिनी के नाम को ॥^१

किची सुनि शापहुत किची बहू होप रत ।
 किची सिद्धि भूत, सिद्ध परन बिरत हूँ ।
 किची कौरु ठय हो, ठगोरी लीन्हें किची तुन ।
 हरि हर की हूँ शिवा बाहुत किरत हूँ ॥^२

यहां दोनों स्वलों पर भागवत धनींचित्य है। प्रथम में प्रभात के दृश्य को साकार करने के लिए कवि ने कई रूप रंग से परिपूर्ण चित्र बिये हैं। पर बहू केशव रंग साम्य के आधार पर अपने कापालिक का चित्र भी है बिया है जो भाव के एकदम विपरीत है। सुयोग्य को देखकर बहू भाव नहीं घाटा जो इस चित्र से घाटा है। दोनों में एकदम अन्तर है और इस कारण भागवत व्यवचाल घा जाने से बिब का सीन्दर्य मष्ट हो जाता है। द्वितीय में भी उपमन्त्र के लिए ठय घादिक का उपमान भाव में व्यवमान बलता है। इस धनींचित्य के कारण ये दोनों बिब सफल नहीं कहे जा सकते ।

१ उपमन्त्रिका केरुण ५ १४

२ वही ५ ७१

विषय

कवियों का पनीचिन्त्य नये कवियों में भी मिलता है । बिब का इनके काव्य में प्रमुख स्थान है । जहाँ इन्होंने नये नये ब सुन्दर बिब दिये हैं वहाँ उनकी कविता मफत है पर जहाँ उनमें पनीचिन्त्य है वहाँ उनकी कविता उत्कृष्ट नहीं बही जा सकती । बन्धुता नबीमता का श्रुत इन पर सिधबाय पर सायर की प्रेतात्मा की तरह पड़ा हुआ है । इसी श्रोक में वे नये नये बिब लो प्रस्तुत करते हैं पर उनकी उपयो-यिता वहाँ तक है इसको बिन्धुत कर जाते हैं । पनीचिन्त्य के कितने ही उदाहरण उनके काव्य से दिये जा सकते हैं ।

- (१) मोर के बलिष्ठ हाथों ने
पूरब की मटटी से लाल लाल बहकता गोमा निकाल ।
पर वह निकलते ही रात की काली संबासी से
फूट गिलै ही हुसक बना पचिछम ली घोर ।^१
- (२) सोने की वह मेघ नील
घपने पंखों में से संयकार बंठ गयी, रिन घंटे पर^२ ।
- (३) गुम यहीं बेठी रही,
उड़ता रहे बिड़ियों सरीखा वह गुम्हारा इवेत प्रांबल ।^३
- (४) उबर उस नीम की कसगी पकड़ने को
भुके बाबल ।^४
- (५) ये जो बाँद से ककरोले लमुघों में विकते हैं
ये मुझे उकसाते हैं ।^५
- (६) उल दूर सितिल की छाती पर
छासे सा
सहसा
एक सितारा पूज गया ।^६

यहाँ समस्त स्थलों में मायबत पनीचिन्त्य है । कम माम्य के कारण माब की हत्या भी गई है । म जाने नये कवियों को बाँद तारे घोर छासों में बना माम्य रिस्ताई बैठा है कि बही बाँद को छासा घोर बही छासे को बाँद बहा गया है । बन्धुन- यह पनीचिन्त्य के छासे हैं जो उनके काव्य घरीर पर बटून अधिक उमर कर घाये हैं जिस से उमरी बुरकपता में ही बुद्धि हुई है । नये कवियों न प्रयोगों को इनका अधिक महत्त्व

१ अरीया गुल्ल इस्लामीयान शानो इत्त बरत काव्य शैर बना ५० ।
 २ अरानुमार मेदना इत्त सजक ५० । ३
 ३ बी ५ । ५३
 ४ इस्लामीय काव्य इत्त सजक ५ ६७
 ५ इब्न-अमर लखनेकीन बनी इत्त बरत स मरी कविता के मनीजम ५ । ५७
 ६ अरीर बरटी इत्त सजक ५ २३३

बिंबा है कि परम्पराओं की अपेक्षा ही कर गये हैं। परम्परा और प्रयोग का सम्बन्ध निम्न ही किसी वस्तु को सफल बना सकता है। बिंब के सिधे भी यह सध्य प्राप्त है।

समष्टि में बिंब की सफलता के सिधे इन सभी गुणों की स्तुताविधय रूप में भावस्थकता है। बिंब के गुणों का यह बिभाजन बहुत सूक्ष्म है। बिंब या अधिक या कम सभी गुणों से समुप्राणित रहता है अतः किसी बिंब की सफलता को किसी एकगुण के अस्तर्गत दृष्टता से नहीं रखा जा सकता। फिर भी इस अध्ययन में बिंब के कुछ मूल भूत तत्त्वों को देखने का प्रयत्न है। अतः यह कहना व्यर्थ है कि एक गुण के स्पष्टीकरण के लिए प्रयुक्त बिंब में दूसरा कोई गुण नहीं है। गुणों का यह वर्गीकरण उसकी सफलता में निहित मुख्य गुण के आधार पर हो। समष्टि में यह सत्य है कि एक बिंब की सफलता के लिए सभी तत्त्वों का उचित सहयोग आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी है।

(४) बिंब को उपयोगिता में कार्य

काव्य में बिंब की पर्याप्त उपयोगिता है। काव्य में यह कई कार्य करते हैं जो उसकी उपयोगिता को प्रकट करते हैं। इन कार्यों को निम्नलिखित रूपों में देखा जा सकता है

- (१) संबोधनात्मकता।
- (२) प्रसन्नकरण।
- (३) प्रसन्निकणुता।
- (४) प्राणवता।
- (५) कमबद्धता।
- (६) बाह्य वस्तु अन्त से भावनात्मक संबंध।
- (७) अमूर्त भावों एवं विचारों को मूर्तता प्रदान करना।
- (८) मर्मस्पर्शी भावों की अभिव्यक्ति करना।

(१) संबोधनात्मकता संबोधना प्रदान करना बिंब का प्रमुख कार्य है। बिंब का उपयोग ही भाव को संबोधनीय बनाने के लिए होता है^१। बिंब काव्य में ऐन्द्रिय काव्य वर्णनों के द्वारा संबोधना प्राप्त करता है। आलोचक म्लिप्त पैरी कविता को बिंब और बिंब की संबधना कहता है। उसके अनुसार कविता का कार्य वस्तु का ज्ञान कराना नहीं बल्कि उसका ऐन्द्रिय अनुभव कराना है। बिंब केवल शब्दों से नहीं बनता है,

1. Too much importance has always been attached to the sensory quality of images what gives an image efficacy is less its vividness as an image that its character as a mental event particularly connected with sensation. —Principles of Literary Criticism, I.A. Richards, page 114

1877

बरनू यह-यथा-संवेदना है^१ न प्राकृतिक कवि दिनकर ने बिब की उपयोगिता को स्पष्ट करते हुये लिखा या कि काव्य का प्रधान गुण जल्प या बर्नन का सौन्दर्य है। कविता में धर्मों की सद्गी संगीतपूर्ण होती है और उसके भीतर एक मोहक बिब होता है जो ध्यान के प्रवाह में मनुष्य के मन का सहसा भे जाता है।^२ यह मोहक बिब संवेदनात्मक वस्तु बनने के कारण ही प्राता है। पाठक वैयक्तिक बर्णनों से ऊपर उठकर काव्य की परिभा में डूब जाता है और काव्य के रस में धमगाहन करने लगता है। काव्य में संवेदनारमक के कारण इस स्थिति का बन्म होता है। काव्य में इस कारण इन्द्रियगम्य चित्रों की विशेष उपयोगिता है। उदाहरण के लिए साकेत का एक उदाहरण प्रत्यक्ष है

सबन रानी की घोर प्रचानक बैसा,
 बैबव्य तुपाराबुल यथा बिपु लेखा।^३

पर्याप्त सबने रानी की घोर दृष्टिपाठ क्रिया जो बैबव्य के तुपार से प्राप्त बिपुलेखा के सदस्य दिखाई दे रही थी। यह बिब रानी के स्वरूप को स्पष्ट करने में पूर्ण समर्थ है। बिबबा रानी का श्वेत बसना से प्राप्त रूप ही नहीं उसकी उबास मन स्थिति हीन-रसा सबका चित्रण करने के कारण बिब में संवेदना पूर्ण कर देने की पूर्ण शक्ति पा गई है। संवेदना देने की सामर्थ्य के कारण यह बिब पूर्ण सफल हुआ है।

संवेदनशीलता के लिए मूरबास के बिब भी बड़े सफल कहे जा सकते हैं। उन का उदाहरण के लिये प्रस्तुत यह बिब पर्याप्त संवेदनशील है।
 प्रति मलोन बुपमानु कुमारी।

प्रथो मुब रहत उरय नहि बिबवति ज्यों यह हारे बकित बुमारी
 पूरे बिबर बरन कुन्नुलाने ज्यों तमिनी हिमकर की मारी।^४
 यहाँ प्रथम बिब—ज्यों मय हारे बकित बुमारी—प्रथम साम्य के आधार पर प्रस्तुत हुआ है और द्वितीय—ज्यों तमिनी हिमकर की मारी—रूप साम्य के आधार पर है। प्रथम में जल्दी मन-स्थिति पकित बसत्या का चित्रण है और द्वितीय में जल्द

2. Poetry presents the clearest images the most memorable objects seen, but objects always, the things we can see, touch hear a taste and smell. —Robert P Tristram Coffin. Or the function of poetry is to convey the 'sense of things rather than the knowledge of things—and the image were not made of word at all, but were naked sense stimulus. —The Study of Poetry Bliss Perry p 94.5

१ अन्वय-संवेदन : रस-संवेदन दिनकर १ १
 २ उदाहरण : मैलि-संवेदन स्पष्ट १० २२०
 ४ अन्वय-संवेदन : रस-संवेदन दिनकर १ १

मिल रूप का। दोनों ही बिम्ब मूर की राधा को दृश्य बना देते हैं। यहाँ हम बिम्बों की संवेदनशीलता है जो बिम्ब द्वारा प्रदत्त है।

(२) प्रसंस्कारण—बिम्बों का कार्य काव्य का प्रसंस्करण भी होता है। घाँवरिक बिम्बों की प्रसिद्धिबन्धना के साथ साथ बिम्ब काव्य की रूप-संज्ञा में भी सहायता करते हैं। प्रसंस्कार भी एकदम बाहरी नहीं होते बल्कि बिम्ब के साथ उद्भूत होते हैं और कवि के भावों से अनुप्राणित होते हैं। प्राथमिक कवि रीति ने प्रसंस्कार के स्वरूप को बताते हैं। प्रसंस्कार केवल भाषी की संवाक्य के लिए नहीं वे भाष की प्रसिद्धि के विशेष द्वार हैं। भाष की पुष्टि के साथ ही पूर्णता के लिए प्राथमिक प्राधान्य है वे भाषी के भाषार-व्यवहार की रीति तथा मीति हैं। प्रथम स्वरूप प्रथम स्थिति में ही प्रसंस्कार के बिम्ब का प्रधान गुण नहीं है फिर भी बिम्ब रूप संज्ञा में वृद्धि करते हैं यह निर्विवाद है। प्रसिद्धि प्रसंस्कार बिम्बालोक या बिम्बालोक होते हैं। बिम्ब कहते हैं 'बिम्ब रचना की सामग्री प्रसंस्कारों की सामग्री होती है किन्तु बिम्ब प्रसंस्कार साथे बिना ही रहे जा सकते हैं।' प्रसंस्कार बिम्बों का प्राथमिक धर्म नहीं है। बिम्ब सर्वत्र प्रसंस्कारात्मक नहीं होते हैं।

प्रत्येक बिम्ब काव्य में हम रूप में प्रस्तुत किये जाते हैं कि रूप प्रस्तुत करने के साथ साथ वह काव्य का प्रसंस्करण भी करते हैं। रूपक प्रसंस्कार इस दृष्टि से उत्तम है। उनमें सर्वत्र सफल बिम्बों का प्रसंस्करण होता है। काव्य प्रसंस्कारों में भी बिम्ब प्रसंस्कार ही होते हैं। वस्तुतः प्राचीन काव्य में बिम्ब को प्रसंस्कार रूप में देखने की सामान्य धारणा थी। बिम्ब को काव्य का मूल तत्व मानने की मान्यता धार की है। प्राचीन बिम्ब प्रसंस्कार प्रसंस्कारात्मक ही थे। प्राथमिक काव्य से भी प्रसंस्कारात्मक बिम्बों के उदाहरण मिल जा सकते हैं। यहाँ बिम्ब काव्य के घाँवरिक भावों को पूरा उपलब्धता के साथ प्रसिद्धि करते हैं साथ ही काव्य की बाह्य आकारगत सुन्दरता में भी वृद्धि करते हैं। प्रसार का बिम्ब यहाँ दृश्य है।

१. अन्वय : सुविधाजनक रूप, १, ११

२. अन्वय : राधाश्रीमिह रिशकर १, ७

3. Critics of the sixteenth seventeenth and eighteenth century were apt to take of imagery as mere ornament, mere decoration, like cherries tastefully arranged on a cake. The idea that the imagery is at the core of the poem that a poem may itself be an image composed from a multiplicity of images, did not begin to have any wide official currency till the Romantic Movement. —Poetic Image, G.D Lewis page 18.

घाह । वह मुझ परिचय के व्योम
 बीच जब विरले हों धन त्याग
 धरम रवि मंडल उनको मेघ
 दिखाई देता हो छवि नाम ।
 या, कि जब इन्द्र भील सपु गृह
 छोड़कर बयक रहो हो कर्त
 एक सपु ज्वाला मुझी धकेत
 'मापवी रजनी में सायात ।'

ससंभारवाद की दृष्टि में यहाँ रूपक और संदिग्ध धर्मकार कहे जा सकते हैं। प्रीत बिम्बकारियों के लिए यह बिम्ब का एक अच्छा उदाहरण है। यह बिम्ब भावों को स्पष्ट धारणा प्रदान करता है। उसकी मूल्य वय की मूखता देता है उनके प्रेम के स्पन्दनों से अपरिचित रूप का बोध कराता है। माप ही काव्य के बाह्यकार में भी शून्य की वृद्धि करता है। समग्र बिम्ब भाव का उपकारक तो है ही कला की उत्कृष्टता का भी परिचायक है।

प्राचीन कवियों के बिम्ब धर्मकारों के रूप में प्रस्तुत हुए हैं, निरंकुश कवि स्वतंत्र बिम्ब विधायक कर सकते हैं। बिम्बका प्राचीन आधार रूप है धर्मकार जो परम्परा में प्रसिद्ध है। जैसे आर्या कबीर पलायन धर्म। इनके बिम्ब परम्परा से मुक्त होने पर भी कला की उत्कृष्टता में सहायक हुए हैं। क्योंकि बिम्ब स्वतंत्र ही कुछ न कुछ रूपकारक होते हैं।¹ धर्मकारों के काव्य में प्रायः श्रेष्ठ भाव श्रेष्ठ बिम्बों में रूपक के रूप में पाये हैं। तथा

सुहृद्मद बोधन कम भरल, रहुँ धरी की रीति ।
 धरी तो धाई ज्यों धरी धरो जन्म या भीति ।

यहाँ रहुँ के बिम्ब में धर्मकारों की मूल्य धर्मना हुई है। भाव को इतनी मधुरता के साथ प्रस्तुत करने के साथ साथ बिम्ब काव्य का धर्मकार भी करता है। इनके सहज ही रूपक या उदाहरण की शक्ति में रखा जा सकता है।

धार्मिक कवि बिम्बों को विशेष महत्त्व देते हैं। वे स्वतंत्र रूप में इनकी उद्भावना करने के लिए हैं। फिर भी उनका बिम्ब धर्मकार में पर्याप्त महत्त्व होता है। यहाँ भावों का यह बिम्ब दृश्य है।

रज विद्ये तुमने जहर में कारती को साबर
 धात्र पाये पर तरत भंगीत ने निर्मित धर

¹ धर्मकार : जर्मन धर्मकार • ४६ • ४०

² Every poetic image therefore, is to some degree metaphorical
 —Poetic Image, Lewis page 18.

भारतीय के बीचों की जितनीजितनी चाह में
बाँसुरी रसी हुई ज्यों मागधत के फुल पर ।^१

यह बिब मादकत तीव्रता को पवित्रता के बातावरण का व भौतिकद्वय में
प्रतीकितद्वय को बड़ी स्पष्टता से प्रतिपादन करता है। साथ साथ काव्य का प्रसंकरण
भी करता है। रूप के रूप में भी वह उठना चाहता है बिबना प्रसंकार रूप में।
समष्टि में प्रसंकरण बिब का प्राथमिक कार्य नहीं माना जा सकता, फिर भी प्रसंकर
रूप इसका एक प्रमुख कार्य है। इसको भी प्रसंकीकार नहीं किया जा सकता।

(३) प्रमविष्णुता—बिब काव्य को प्रमविष्णुता प्रदान करते हैं। काव्यगत
रस और महान बिचारों को सहज रूप में प्रस्तुत करना कि वह पाठक को प्रार्थ हो
जाये बिम्ब का ही कार्य है। कभी कभी काव्यगत भाव और बिचारों में इतनी सामर्थ्य
नहीं होती कि वह जिस रूप में कवि के मन में प्राये हैं उसी मूल रूप में प्रस्तुत कर
दिये जायें ता पाठक उनको ठीक उसी तरह ग्रहण कर से जिस तरह कवि ने उन्हें
प्रस्तुत किया है। उनकी सभनता पृथक् विनियता सोकोत्तरता भावि इसमें बाधक
होती है परन्तु बिम्बों के माध्यम से उसको इस रूप में प्रस्तुत किया जाता है कि वह
सहज ही प्रार्थ बन जाता है। अधिकार्य रहस्यवादियों के ध्वजार इसीलिए प्रार्थ बन
सके हैं कि वह बिम्बात्मक हैं। अथवा उनकी रहस्यानुभूति पाठक की बुद्धि से अवर
की नीच है। विनियता भावों को प्रकटा पृथक् सभन बिचारों को भी बिम्ब के माध्यम
से अधिक सरलता से स्पष्ट किया जा सकता है। स्पष्टतः काव्य को प्रमविष्णु प्रकटा
सहज प्रार्थ बनाना भी बिम्ब का एक प्रमुख कार्य है। उदाहरणार्थ कबीर ने मानव
जीवन की लज्जता को जगत की अनिश्चिता को बड़ी गहराई से अनुभव किया जा
परन्तु यदि उनकी अनुभूत भावना इस बिम्ब में न उठती होती तो उनकी लज्जतागुरता
प्रार्थ कभी न बन पाती वह सब उद्गार मात्र होकर रह जाती।

पानी केरा बुबबुवा अस मानुस की जात ।

देखत ही छिप जायया ज्यों तारा प्रमात ॥

पानी के बुबबुबु के और प्रमात के सारे का—बोनों ही बिम्ब भाव का एक-
दम प्रार्थ बना देते हैं। कथित न होने पर भी जीवन की लज्जतागुरता की भावना हमें
ही जाती है और बिम्ब के प्रमात में कथित होने पर भी यह बिचार संभवतः प्रार्थ न
हो पात। स्पष्टतः बिम्ब ने भाव को प्रमविष्णु बनाने में प्रपूर्व सहयोग दिया है।
इसीलिए, वरतन में भी भावों को प्रमविष्णु बनाने के लिए बिब का माध्यम अपेक्षित
समर्थ जाता है।

केवल दृढ़ या प्रतीकित भावों को ही बिम्ब स्पष्ट करे नहीं साधारण
भावनाओं में भी वह अधिक संवेपनीयता भा देता है। जैसे उदास सांझ का वर्णन करने
में कना बाल का यह रूपक उदासी को और स्पष्ट कर देता है।

बाग के बुझ देव्य ^{प्रियर} पर
 यह बना बीबन वाला ।
 रे कब से जाग रही वह
 घाँसु की नीरव मासा ।
 पीसी पड़, निर्बल, कोमल
 हृद्य बेह सला कुम्हलाई,
 बिबसना लाज में लिपटी
 साँसों में शुभ्य समार्द ।^१

रचना वाला की पीसी निर्बल बूल बेह, घाम्, पूरा मुख, उदासी को घौर घना
 कर देते हैं भाव को तीव्रता के साथ स्पष्ट करते हैं इसलिये बिम्ब के कारण ही—
 भाव अधिक सहज घौर स्पष्ट हो जाता है । पाठक प्रासानी से उदासी का अनुभव
 कर सेता है । प्राबुनिक कवियों के बिम्ब भी उनके संपर्क प्रिय संवातिमुसीन व्यक्ति
 त्व को स्पष्ट करते हैं । यथा

यह व्यक्ति घौर समाज का
 उत्पल की पड़ियाँ बनी हैं सु कला
 बंदी हुई है बेह
 मन को बाँधने बढ़ते पतन के हाथ हैं
 है केन बिय का संभ्रता हो जा रहा
 प्रब डूबता प्रतिम प्रहस की छाँह में
 मालोक हूत लज्ज मिट्टी से बना
 जिसका कि पृथ्वी नाम है ।^२

इस प्रकार के घनेक बिम्ब देने जा सकते हैं जो भावों को अधिक सहज बना
 कर प्रमथिष्णुता में बुद्धि करत हैं वस्तुतः यह काव्य में बिम्ब का मुख्य काय है उसका
 उपयोग भी इसी रूप में है ।

(४) प्राणबला—बिम्ब काव्य की प्राणबला भी प्रदान करत है । वह सिर्फ
 बाह्य बनाकार को ही सवारते-मुबारते नहीं बरन् उनकी आत्मा का भी सर्वन करत
 है । कवि अपने बिम्बों में निक रूप रंगों को ही नहीं रखा बरन् अपने काव्य का
 प्राय उनकी जीवनी शक्ति को उसम प्रस्तुत करता है । वस्तु के बाह्य बर्षन क घन
 रंग वह उन मूल धनुमिति को प्रस्तुत करता है जो काव्य की आधार गिता है । इसी
 से बिम्ब बार को जिन्सा देने वाली वस्तु नहीं है । इसी रूप में वह सपन्न हो सके
 है । धम्यया पात्र मज्जा के लिए लाय मये बिम्ब उपहासास्पद ही बनते हैं । बिम्ब घनन
 मूल रूप में धनुमिति का ही व्यस्त रूप है और इसी से वह काव्य की सुन्दरता ही केवल

^१ शुभन मन्त्राङ्गन रंन १ ३४
^२ निरिबानुमन कथुर : यदी कविता क प्रतिमन्न लरनी कति बर्मी इतु बट्ट १ ११०

नहीं बढ़ाता बरन् उसके अन्दर गति प्राप्त और जीवन का संसार भी करता है।^१ उसके अन्दर बंजित वस्तु का स्वरूप ही निहित नहीं रहता बरन् कवि के बौद्धिक विचार एवं भाव भी निहित रहते हैं। मूर्त में इसी कारण बिम्ब को रूप का रूप कहा है जिसमें वस्तु बचन के साथ साथ कवि के भावों का प्रतिबिम्ब भी पड़ता जाता है और उसमें कवि के व्यक्तित्व आदि के नये नये रूप प्रतिभासित होते हैं। इस रूप में बिम्ब केवल प्रस्तुत वस्तु को ही विम्बित नहीं करते बरन् काव्य की आत्मा को भी रूपा बना देते हैं।^२ बिम्ब से पृथक कवि के भाव का कोई रूप रूपता में ही नहीं आ सकता। काव्य की आत्मा उसकी आन्तरिक शक्ति बिम्ब द्वारा ही प्रकट होती है। धर्मोष्माकांड में तुलसीदास ने कैकेयी के लिए एक बिम्ब दिया है जो समस्त बर्जन को जीवन बना देता है।

रूप मनोरप सुमग वसु सुख सुधिहंम समाबु ।

भीसनी बिनि छाड़त बहुति बचन भयंकह बाबु ॥^३

इसमें भीसनी और कैकेयी में भय साम्य के साथ साथ परिस्थितिवत् साम्य भी है। कैकेयी की प्रकृति भीसनी की है। यह राजा के सुख रपी पक्षियों पर बचन रपी बाज छोड़ती है। यह सुख को समाप्त करने में समर्थ है कि यह भी वहाँ अनित है। भीसनी जिस प्रकार पूर्ण तैयारियाँ करके मीका देखकर कार्य करती है उसी प्रकार कैकेयी ने भी किया है और जिस प्रकार भीसनी उष्य होती है उसी प्रकार कैकेयी भी अपना मनोरप पूरा कर लेती है। पूर्ण परिस्थिति का साम्य आध्यामी परिस्थिति का बोध और भावों की अपूर्ण स्थिति के कारण यह बिम्ब यहाँ यथावत् काव्य का प्राण बनाकर धारा है।

इसी प्रकार इड़ा का रूप बंजित करने में प्रसाद भी ने अपूर्ण बिम्ब दिया है।

बिहारी धलकों ज्यों तर्क जाल ।

यह बिहारी मुकुट सा जगन्मलतम अमिर्कंड सदुष्य वा स्पष्ट माल

को पद्य पलायन बचक से दृग देते धनुराय विराज जाल ।^४

यहाँ इड़ा के बाह्य रूप बर्जन के साथ साथ उसकी आंतरिक विद्ययता भी स्पष्ट होती जाती है। बिम्ब उसका रूपाकार ही नहीं प्रस्तुत करता बरन् उसकी शक्ति

१ 'motion spirit & life —George Chapman.

The images in poems are like a series of mirrors set at different angles, so that, as the theme moves on, it is reflected in number of different aspects. But they are magic mirrors, they do not merely reflect the theme, they give it life and form. It is in their power to make a spirit visible. —The Poetic Image, C.D Lewis, page 80

उपभारित मानस : अष्टावक्र/४ ५ ३२०

काव्यमयी : अष्टावक्र प्रस्ताव ६० २६०

बिम्ब

योग्यता बिचिष्टता धारि सभी प्रयुक्त रूपों को अभिव्यक्त कर देता है। ऐसे स्थलों पर स्पष्ट ही कहा जा सकता है कि बिम्ब ही काव्य का प्राण तत्व है। अनुसूति एक भावों के माप माप ही बहु कवि के ध्येय से उद्भूत हुआ है। यहाँ न भावों को बिम्ब से बिना किया जा सकता है न बिम्ब का भावों में। ऐसी प्रायवृत्ता प्रायुक्त कवियों में भी पर्याप्त मिलती है। उदाहरण के लिए गीतकार नीरज का एक बिम्ब नीत्रिए—

प्राज गपन में सावन बनकर
 फिर फिर आई याद सुन्हारी ।
 जरा पुरा या बाब कि दूर
 हरा कर गई फिर पुरवाई
 सपका ही या इब कि सहसा
 बादल ने घाबाज सगाई ।
 तनिक कुप या किया कि घाबर
 निदुर पपोहा पिया बहु उठा
 कुछ मूली यो मेज कि घाकर
 रूतों की बंसुरी बजाई ।

यहाँ पूरा बिम्ब कवि के मानस के भावों के साथ इसी रूप में उत्पन्न हुआ था किम रूप में प्रस्तुत हुआ है। प्राकृतिक उपकरणों के मानवीकरण और पीढ़ा के मानवीकरण में भावों का स्थिति किया गया है। का अस्योन्यासित है। यहाँ बिम्ब मात्र रूप होने से स्वयं ही काव्य का प्राण है। बिम्ब की प्रायवृत्ता के कारण समय वर्णन पीबल बन गया है। स्पष्ट है कि बिम्ब द्वारा काव्य के भावों एवं विचार पीबल रूप में प्रायवान बनकर प्रकृत होते हैं। काव्य में प्रायवृत्ता का संचार बिम्बों द्वारा ही सम्भव है।

(३) क्रमबद्धता भाव को क्रमबद्धता देना भी बिम्ब का एक प्रमुख कार्य है। बिम्ब का निर्माण हमारी स्मृतियों और बल्यमा से होता है जो हीनों ही अपने अपने क्षेत्रों में कार्य समूह है। जब हम बाल्यनिक स्मृतियों का मजकूर करते हैं, तब हम अपनी स्मृतियों की ही मजकूर करते हैं। इन स्मृतियों में अनेक अनुभव अनेक मतेदनाएँ होती हैं। प्रतिमा अथवा बिम्ब निर्मित करत समय इन अनुभवों एवं संविनाओं को एक बिचिष्ट रूप में रचना होता है। बिम्ब का स्थान बल्युत इन मतेदनाओं और उनकी अभिव्यक्ति के बीच में होता है।^१ बिम्ब द्वारा क्रमबद्धता लाकर ही भावनाओं की अभिव्यक्ति होती है।

१ इंदिरा दे अंतर १ २८

The image stands between the first reception of the sense impression and its expression in words. —Remembering—Prof.

वस्तु हमारी मानसिक प्रक्रिया में ही भावों को कमबख्ता प्रदान करना सबसे बड़ा कार्य है। हमारी अनुभूति और इसके प्रकटीकरण के बीच में संबंधनाओं में कमबख्ता लायी जाती है। कमबख्ता रूप में ही हम अपनी अनुभूतियों को शब्दों में प्रकट करते हैं। नहीं तो काव्य का प्रत्येक शब्द निरर्थक रहेगा। किसी किसी अनुभूतियों से हम कुछ भी ग्रहण नहीं कर सकते इस प्रकार शब्द निरर्थक और अनुभूतियां धर्मगत सबेबी। इस कारण अनुभूतियों में कमबख्ता माना आवश्यक है बिम्ब भावों को कमबख्ता करने में सहस्रक होता है। बिम्ब का जन्म ही अनुभूतियों स्मृतियों आदि को कमबख्ता रूप में प्रस्तुत करने के लिए हुआ है।^१

कमबख्ता को ही मध्य कण्ठ हुए मिला है कहा जा कि काव्य मानवीय भावनाओं के संभारण और रहस्यपूर्ण रूप को विजात्मक रूप में प्रस्तुत करने का नाम है। कवि बिम्बों में अपने विमू खचित अचेतन स्मृतियों से एक कमबख्ता सुनिश्चित नृष्टि करता है।^२ बिम्बों का कार्य वस्तु को स्वीकारने अस्वीकारने परिवर्तित करने के साथ साथ कमबख्ता रूप में रखने का भी है।^३ स्पष्ट है कि भावों को कमबख्ता रूप में प्रस्तुत करना बिम्ब का एक मूलभूत कार्य है।

भावों की कमबख्ता धरना अनुकूलता काव्य को प्रेषणीय बनाने में उपकार करती है। जैसे गुरबाण के इस बिम्ब में भाव बिम्ब द्वारा ही कम प्राप्त करते हैं

घर में भाव्यों बहुत गुप्त
काम कोष को पहिरि बोलना कंठ विषय की माल।
नहा कोशु के दूरु बाजत निम्हा धम्म रघाल।
आम भोयी नग मयी पञ्जाबज चलत कुत्तकत चाल।
तुजा बाव करत घट भीतर, नाना बिधि है ताल
नाना को कदि च्छयो बाण्यो, लोभ तिलक रियी ताल।

१ If when we remembered or brought, past situations were always to act upon us, en masse and the events which had happened were to repeat themselves in strict chronological order ... To surmount these difficulties, the method of Images has been evolved

—The place of Imagery in Mental Process, T.H. Pear page 23

२ Poetry is the deliveration of the deeper and more secret workings of human emotions —Thoughts on Poetry and its varieties in Nineteenth Century Critical Essays' p. 452,

३ See, Lower The Road to Canada page 452.

४ Accepting, rejecting, moulding them into keeping with each other with a boldly conceived design Ibid., page 307

कोटिक कला काठि विकरार्ई, बस यस सुधि नहि काल ।
सुरवास की सब धरिबा, दुर करहु नंद लाल ।^१

यदि यहाँ सुरवास मृत्यु का इतना सांगोपांग रूपक न देते तो सम्भवतः उनकी धरिबा के उपकरण बिम्ब-यसित होकर प्रभावहीन हो जाते। इस रूपक के सूक्ष्म व्योरे में लोम मोहू लून्वा माया—उबको धाकार मिल गया है। बिम्बिष बस्तुएं बिम्ब के एक ठार से अनुस्यूव होकर और अधिक प्रभावोत्पादक हो गई हैं। स्पष्ट है कि बिम्ब द्वारा उत्पन्न कमबद्धता सफसता का एक बड़ा कारण है। तुमरी ने भी कसहू उत्तम शास्त्र फल को स्पष्ट करने के लिए कमबद्धता से पूर्व एक बिम्ब दिया है।

बिषत बीनु हरिवा रितु बैरो मु इ नई कुमति बँकयी केरी ।

पाइ कस्य बल धंजुर बाया बर बीज फल दुःख परिनाया ।

इस बिम्ब के कारण प्रभावितता भी धाई है और कमबद्धता भी। बिम्ब को सफस बनाती है। वर्षाभ्रतु में जिस प्रकार बीज का धंजुर फुट जाता है उसी प्रकार अनुसूज बाठापरक पाकर कसहू का बीज पम्पवित हो गया है। बिम्बका दुःख कपी फल—परिनाम प्राप्त होना। यहाँ धारों को एक सूत्र में प्रवित करने का कार्य बिम्ब ही करता है।

(१) बाह्य बस्तु जगत् से जाबनात्मक संबंध बिम्ब कवि के प्रायः जगत् से बाह्य बस्तु जगत् का सम्बन्ध भी कथ्यत है। वह बस्तु का केवल धाकार मात्र प्रस्तुत नहीं करते बल्कि उससे कवि के राजात्मक सम्बन्धों का भी परिचय देते हैं। कवि स्वभावतः जाबनात्मक एवं अधिक संवेदनशील प्राणी है। बस्तु जगत् से उसका संबंध साधारण मनुष्य की अपेक्षा अधिक प्रगाढ़ और सहज हो जाता है। प्रकृति प्रेमी कवि केवल काव्य में ही प्रकृति प्रेम का बर्षन नहीं करते जीवन और जगत् में भी वह जगत् गुस्मों वृत्तों को देखकर मुग्ध होते हैं। काव्य में उनका यही राजात्मक संबंध एक स्वयंशासन्य धामन्य ही सृष्टि करता है।^१ प्रकृति प्रेमी पंथ ने अपने वाक्यावस्था के संबंध में कहा कि जिस समय वह पौड़ बावन धारि रचनाएं लिखते थे, उस समय लक्ष्मण वह प्रकृति को प्रेम करते थे, बंटों प्रकृति को प्रेम करते थे बंटों प्रकृति की पोर में ही बिदा देते थे।^२ बस्तु जगत् के राजात्मक संबंध का परिचय बिम्ब कवी होती है और उसकी बचियों बस्यों धारि का प्रायः करती है। मुस्ति ने इस संबंध को

१ गूगलभा पर संख्या ८२ १ २४

२ Poetry begins where matter of fact or science closes to be merely such, and to exhibit a further truth that is to say the connexion it has with the world of emotion, and its power to produce imaginative pleasure. —An Answer to the question what is poetry —J.H.L. Hunt, p. 302.

३ वाचस्पति कवि प्रीति, सुमिवात्मक संख्या ३० ३, ४

वस्तुतः हमारी मानसिक प्रक्रिया में ही भावों को क्रमबद्धता प्रदान करना सबसे बड़ा कार्य है। हमारी अनुभूति धीरे-धीरे इसके प्रकटीकरण के बीच में संवेदनाओं में क्रमबद्धता लायी जाती है। क्रमबद्ध रूप में ही हम अपनी अनुभूतियों को शब्दों में प्रकट करते हैं। नहीं तो काव्य का प्रत्येक शब्द निरर्थक रहेगा। विकसित विकसित अनुभूतियों से हम कुछ भी पहचान नहीं कर सकते। इस प्रकार शब्द निरर्थक और अनुभूतियाँ अमंगल लगेंगी। इस कारण अनुभूतियों में क्रमबद्धता लाना आवश्यक है। बिम्ब भावों को क्रमबद्ध करने में सहायक होता है। बिम्ब का अर्थ ही अनुभूतियों स्मृतियों आदि को क्रमबद्ध रूप में प्रस्तुत करने के लिए हुआ है।

क्रमबद्धता को ही शब्द करते हुए मिला ने कहा था कि काव्य मानवीय भावनाओं के गभीरतम धीरे-धीरे रहस्यपूर्ण रूप को चित्रात्मक रूप में प्रस्तुत करने का नाम है। कवि बिम्बों में अपने बिम्ब-सहित अचेतन स्मृतियों से एक क्रमबद्ध सुनिश्चित मूर्ति करता है।^१ बिम्बों का काम वस्तु को स्वीकारने अस्वीकारने परिवर्तित करने के साथ-साथ क्रमबद्ध रूप में रखने का भी है।^२ स्पष्ट है कि भावों को क्रमबद्ध रूप में प्रस्तुत करना बिम्ब का एक मूलभूत कार्य है।

भावों की क्रमबद्धता अपना सु-संसाधन काव्य को प्रेषणीय बनाने में अपनाकर करती है। जैसे सुरदास के इस बिम्ब में माव बिम्ब द्वारा ही क्रम प्राप्त करते हैं

घर में भाव्यों बहुत गुणाम
कान कोप को पहिरि बोलना कंठ विषय की माल ।
महा मोह के लुपुट बाजत निम्बा शब्द रसाल ।
अम भोयी मन भयो पलाबज बसत कुसंभत बाल ।
लुप्या तार करत घर भीतर नाला बिबि है ताल
माया को कठि कंद्यो बांध्यो, लोम तिलक विषी भाल ।

१ If, when we remembered or brought, past situations were always to act upon us, 'en masse and the events which had happened were to repeat themselves in strict chronological order ... To surmount these difficulties, the method of images has been evolved.

—The place of Imagery in Mental Process, T. H. Pear page 23

२ Poetry is the deliveration of the deeper and more secret workings of human emotions. —Thoughts on Poetry and its varieties in Nineteenth Century Critical Essays p 43⁷

३ See, Lower The Road to Yanadu, page 432

४ Accepting rejecting moulding them into keeping with each other with a luckly conceived design Ibid., page 307

बिम्ब

कोटिक कला बाछि बिबरवाई जत वस सुधि नहि जात ।
सूरदास की सबं अविद्या, दूर करतु नंद लात ।^१

यदि यहाँ सूरदास नृत्य का इतना सांयोगिक रूपक न देते तो सम्भवतः उनकी पवित्रा के उपकरण बिम्ब कल्पित होकर प्रभावहीन हो जात इस रूपक के सूक्ष्म व्योरे में सीम मोह वृष्णा माया—सबको धाकार मिला गया है । बिम्बिष बनगुएँ बिम्ब के एक तार से धनुस्फूट होकर धीरे धीरे प्रभावोत्पादक हो गई हैं । स्पष्ट है कि बिम्ब द्वारा उत्पन्न कमबद्धता सफलता का एक बड़ा कारण है । तुलसी ने भी कमहू उत्पन्न वाक्य फल को स्पष्ट करने के लिए कमबद्धता से पूर्व एक बिम्ब दिया है

बिप्ल बीजु करिया रिनु बेरी मुइ मई कुमति कैकयी केरी ।
पाइ कपट बल धंङुर जामा बर बोड फल कुज परलामा ।

इस बिम्ब के कारण प्रसन्नचित्ता भी भाई है धीरे कमबद्धता भी जो बिम्ब को सफल बनाती है । वर्षाअनु में जिस प्रकार बीज का धंङुर फूट जाता है उसी प्रकार धनुस्फूट बातावरण पाकर कमहू का बीज पस्तकित हो गया है जिसका फल रूपी फल—परिणाम प्राप्त होगा । यहाँ भावों को एक सूत्र में प्रवित करने का कार्य बिम्ब ही करता है ।

(६) बाह्य वस्तु जगत् से भावनात्मक संबंध बिम्ब कवि के भाव जगत् से बाह्य वस्तु जगत् का मन्वन्व भी करात है । वह वस्तु का केवल धाकार मात्र प्रस्तुत नहीं करते बल्कि उसके कवि के रागात्मक सम्बन्धों का भी परिचय देते हैं । कवि स्वभावतः भावनात्मक एवं अधिका संवेदनशील प्राणी है । वस्तु जगत् से उसका संबंध साधारण मनुष्य की प्रपेक्षा अधिका प्रयाद धीरे सहज हो जाता है । प्रकृति प्रेमी कवि केवल काव्य में ही प्रकृति प्रेम का वर्णन नहीं करते बल्कि धीरे धीरे जगत् में भी वह सदा सुखों सुखों को देखकर मुग्ध होते हैं काव्य में उनका यही रागात्मक संबंध एक कल्पनात्मक धारण की सृष्टि करता है ।^२ प्रकृति प्रेमी पंत ने अपने वाक्यावस्था के संबंध में कहा कि जिस समय वह मोह, बादल धारि रचगाएँ लिखते थे उस समय सम्भवतः वह प्रकृति को प्रेम करते थे बंटों प्रकृति को प्रेम करते थे बंटों प्रकृति की नीर म ही बिता देते थे ।^३ वस्तु जगत् के रागात्मक संबंध का परिचय बिम्ब ही हीती है जो उसकी वचिनों, वचनों धारि का ज्ञान कराती है । सुई ने इस संबंध को

^१ शूरदास पर संका ८१ पृ १४

^२ Poetry begins where matter of fact or science classes to be merely such, and to exhibit a further truth that is to say the connexion it has with the world of emotion, and its power to produce imaginative pleasure. —An Answer to the question what is poetry —J.H.L. Hunt, p. 302.

^३ वास्तविक कवि सुखी, सुखीभावजन्य पंथ ६०, ७, ८

स्पष्टता से गते हैं। बिम्ब में कवि की रागात्मकता प्रस्तुत घोर अप्रस्तुत दोनों के प्रति त्रिकोनात्मक कहा है।¹ जिसका एक कोण कवि दूसरा प्रस्तुत घोर तीसरा अप्रस्तुत है। जब कोई कवि 'पद्ममुखी स्त्री का वर्णन करता है तब एक घोर उस शीघ्रमूर्ति से उसका संबंध प्रकट होता है घोर दूसरी घोर पंख से। साथ ही साथ वह काव्य के संबन्ध से पाठक के साथ प्रस्तुत घोर अप्रस्तुत का संबंध करता चलता है। स्पष्ट है कि बिम्ब कई वर्णों में भावनात्मक संबंध कल्पता है घोर कवि के भावनात्मक संबंधों कवि स्वभाव धारि—को प्रकाशित करके काव्य को समझने में अपूर्व योगदान देता है।

जहां कवि बिम्ब देता है वहां बिम्ब में बसित वस्तु से उसका रागात्मक संबंध प्रकट होता है। उदाहरण के लिये जायसी का एक बिम्ब प्रस्तुत है

सरबर हिया बहत नित जाई इकि इकि होइ होइ बिहराई।

बिहरत हिया करहु पिउ देका बीठि बंगरा मिरणहु एका।

कवि जहां जायसी के बिबोग से रागात्मकता स्थापित किये हैं वहां सरोबर की फटती मिट्टी बबबरे के बाद उसके मसूब होने धारि से भी कवि का रागात्मक संबंध है। इस दृश्य ने जीवन में भी कवि को आकर्षित किया हुआ उसके प्रचेतन मन पर कोई प्रभाव डाला होना जो बिब रूप में उभर कर प्राया है। वहां बिब के द्वारा सरोबर के प्रति उसके रागात्मक भावों की व्यञ्जना हुई है।

निराला की कुही की कली एक प्रसिद्ध रचना है उसकी छायी महानता उसमें निहित बिब के कारण है। क्या तावक-नायिका का इतना स्पष्ट प्रणय व्यापार कुही की कली घोर मसयानिस व माध्यम के बिना चित्रित हो सकता था? घोर क्या निराला कली मसयानिस के साथ रागात्मक संबंध स्थापित किये बिना उनको इस रूप में प्रस्तुत करसकते थे। वायब नहीं। उनके वर्णन में अप्रस्तुत रूप प्रस्तुत के अस्तित्व में बुल मिसकर प्राया है घोर दोनों ही समान महत्व व अधिकारी हैं

बिबल बन-बत्सरी पर

सोती वी सुहाप मरी

सोह-सबन्-मम-ममस कोमल तनु तरबी

कुही की कली

दुग बंद किये शिबिल, पत्रांक में।

बासंतौ निघा बी

बिरहु बिपुर प्रिया सब छोड़

किसी दूर देश में था पवन

जिसे कहते हैं मसयानिस।

1 ... It also establishes through every metaphor an affinity between external objects. Metaphor—... is a three cornered relationship. —Poetic Image G.D Lewis, page 55

×
 निरय उरा नायक मे
 निपट निद्राराई की
 कि सोंकों की छाड़ियों से
 सुन्दर सुन्दर बेहू सारी सलसोर डाली
 मसल दिये गोरे बपोस गोल,
 पीक पकी युवती
 बकित बिलबन निज चारों घोर फेर
 हेर प्यारे को सेब पाग
 मधुमयी हुंसी जिली
 खेस रंग प्यारे मंग ।

यह बिम्ब जहाँ एक घोर प्रलय-स्वापार के प्रति कवि की रागात्मकता का चोटक है वहीं दूसरी ओर जुही की कली घोर मनमानिस के साथ भी उनके विशेष आकर्षण को प्रकट करता है। नायक-नायिका ब कमी प्रीन पवन यहाँ प्रत्याभ्यासित हैं। बोनी ही कवि के रागात्मक सर्वधों के परिचायक हैं। प्रायः प्रत्येक बिम्ब बाह्य बन्धु जगत् से कवि के भावनात्मक संबंधों का परिचय देता है। कवि बिम्ब रूप में केवल उन्हीं बन्धुओं को प्रस्तुत करता है जो उनके भाव का घासबन होने में समर्थ होता है और इस तरह उसके रागात्मक संबंध की सूचक हानी है। जहाँ प्रस्तुत रूप से बिम्ब न दिया जाकर प्रस्तुत रूप में दिया जाता है वहाँ बहुत ही कवि की रागात्मकता को प्रकट करता है। जैसे निराशा के—बहु घाता को टूक कसेज के करता— में उनकी भिन्नारी के प्रति रागात्मकता का स्पष्ट परिचय मिलता है यहाँ बाह्य बन्धु जगत् के साथ संबंध बिम्ब द्वारा ही प्रकाशित हुआ है।

(७) समूह जागों ब बिचारों को सुतता प्रदान करना काव्य हमें सामान्यचरातक से उठाकर धार्मिककाल की ओर ले जाता है। वह हमें वैशिष्ट्य से मुक्त करके सामान्य बना देता है। यह व्यक्तिगत्य मोक्ष रागात्मकता की स्थिति है पर काव्य की धर्मव्यक्ति इसके विपरीत होती है वह सामान्य को विशिष्ट बन कर प्रस्तुत करती है। यहाँ सामान्य रहता है भाव और विशिष्टता साक्षात् बिम्ब। इस रूप में भाव प्रीन बिम्ब प्रयोग्य पित्त है। बिम्ब ही भाव की धर्मपत्रा को स्थापित करता है। प्राचीनक कभी समूह

भावों के अभिव्यक्ति मूर्त रूप को भी बिम्ब कहता है। बेसी का कवन भाव के साथ बिम्ब के प्रवेश संबंध को पूर्णता से प्रतिपादित करता है।

कविता में सबैव बहो कवि गूढ घोर सवन भावों का चित्रण करता है। बहो अभिचार्य रूप से उसे बिम्ब का आशय सेना पकता है। मात्र शब्दों के द्वारा भाव की प्रेषणीयता नहीं की जा सकती बिम्ब ग्रहण उसके सिधे अभिचार्य है। सुख-दुःख को बहास्य सब प्रमूर्त भाव हैं जो काव्य में बिम्ब द्वारा उपायित होत हैं। वहाँ प्रमूर्त भावों घोर स्वत को उपायित करने का जायसी का एक प्रयत्न दृष्टव्य है

कहा हुंससि तू मोसों किये घोब ली नेनु
तोहि मुक भमकै बीजुरी मोहि मुक बरिसै मेहु ।

तू धम्य स्त्री से प्रीति करके मुझसे क्यों हँसी करता है, तेरे मुस पर तो प्रसन्नता की बिजली चमकती है घोर में पीड़ा से रक्त करती तू धर्मात् मेरे मुस पर बर्षा हो रही है। प्रसन्नता व हास्य की व्यंजना करने में बिजली का बिम्ब बड़ा समर्थ बन पड़ा है, इसी प्रकार खोम धमर्य कुल से स्वत करने की व्यंजना के सिधे मेह क बरसने का बिम्ब बड़ा सार्थक है, दोनों ही बिम्ब प्रमूर्त भावों को मूर्तता प्रदान करने वाले हैं। इनके प्रभाव में यह भाव कभी अभिव्यक्ति न हो सकते थे।

प्रसाद की सज्जा का वर्णन इस दृष्टि से विधेय रूप से उत्प्रेक्षणीय है। सज्जा एक प्रमूर्त भाव है जिस प्रसाद में बिम्बों द्वारा प्रकट किया है। सज्जा जैसे प्ररूप घोर प्रस्पष्ट भाव को जैसे ही निम्नलिख परिधान धिये गये हैं

कामल किसलय के प्रंचल में
मन्ही कमिका क्यों छिपती-ती ।
बोधुली क घूमिस पर में,
धीपक के स्वर में धिपती-ती ।
मंजुल स्वप्नों की विस्मृति में
मन का उन्माद लिखरता क्यों ।
सुरभित स्तूरों की छाया में
दुल्ले का विभव विपरता क्यों ।

१ To speak of images and ideas as different in kind is a convenience of language in fact when we think of an image or an idea we are postulating an entity in order to describe a process. — an image is a perceptual entity which is most clearly to be understood in analytical thinking. If an idea is introduced into poetic activity it takes on something of the character of an image and an image in technical activity will become an idea. — Poetic Process, G Whalley page 130

बैठी ही माया में लिपटी,
 भयनों पर प्रगुली बरे हुए ।
 गारुड के सरस कुसुहल का,
 धाँधों में पानी भरे हुये ।
 गौरव निखीर में ललिका सी
 तुम कौन धरा रही हो बड़ती ।
 कोमल बाहि फेलाए ली,
 धाँधलपन का बाहु पड़तो ।'

यहाँ प्रत्यष्ट मारी मूर्ति द्वारा लज्जा जैसे नुन मास का अभिव्यक्त किया गया है। वस्तुतः यह छाप बचन ही जो लज्जा को रूप देता है बिम्ब द्वारा धरुप को रूप बना देने के कार्य का सुन्दर उदाहरण है। इस छाप मूर्ति के धमाक में संभवतः लज्जा बाब धमभिव्यक्त ही रह पाता। यह प्रत्यष्ट-ती मारी प्रतिमा बहाँ धपनी रगों-रेखाओं द्वारा लज्जा की प्रकृति का उन्मीलन करती है। बहाँ ध्वय प्रत्यष्ट बनकर लज्जा की छायात्मकता को भी प्रदर्शित करती है। इस रूप में लज्जा मास को धमिव्यक्ति का समस्त अर्थ बिम्ब का है। इसी प्रकार सौम्य लज्जा धाबि को भी कविधों ने मूर्तित किया है जो बिम्ब द्वारा धमूलत भाव की मूलता का स्पष्ट प्रभाव प्रस्तुत करती है। वस्तुतः धमूलत भाव की मूर्त धमिव्यक्ति का नाम ही बिम्ब है।

(घ) धर्मस्पर्धी भावों की धमिव्यक्ति करना—बिम्ब केवल कवि के धमूर्त भावों धमबा बिचारों को ही मूर्त नहीं करता बरन् वह कवि के धाबधामय धाबात्मक भावों को भी धमिव्यक्त करता है। बिम्ब कवि के धरम सीमा तक पहुँचे हुए भाव को मूर्तित करता है। वह कवि के तीव्रतम धुर्ष बिषाद प्रेय धुषा इर्ष्या धादि की धमिव्यक्ति है।^१ कवि के प्रत्येक भाव को वह तीव्रतम रूप में प्रस्तुत करता है धीर उसके तीव्रता को धुर्ष सुखर बनाता है। जब कवि बिम्ब बठा है तब उसके भाव सीमात तक पहुँचे हुए होते हैं। इस कारण बिम्ब का माध्यम धपनामा भी धाबधमक ही पाता है। निरुक्ता के इस बिम्ब में

१ कामधनी : प्रयाग ५ १७

२. Poet may prevail much in drawing the minds of his hearers to his own will and affection he may wind them from their former opinions. ...may move them to be of his side to mourne or to marvel, to love or to hate, to be pleased or angry to desire or to be satisfied to envy, to abhorre. to be subject to his power to speech with soever it tendeth. Henry Peacham quoted by Rosemound Turve in Elizabethan & Metaphysical Imagery pp 181-82.

कोई नहीं छायादार
 पेड़ वह जिसके तले बीठी हुई स्त्रीकार,
 स्वाम तन भर क्या यौवन
 नत नयन प्रिय कम रत मन,
 पुर हथौड़ा हाथ
 बरती बार बार प्रहार
 सामने तब-मासिका घटलिका प्रकार ।
 + +
 देखने देखा मुझे तो एक बार
 जरा मजन की घोर देखा छिन्नतार
 देखकर कोई नहीं देखा मुझ उस दृष्टि से
 जो मार का रोई नहीं
 सजा सहज स्थितार
 सुनी मैंने नहीं जो भी सुनी सकार ।
 एक क्षण के बाद वह कांपी सुबह
 झुक माथे से गिरे सीकर
 लीन होते कर्म में फिर क्यों कहा—
 'मैं तोड़ती पत्थर' ।^१

छोगित बग की इस स्त्री के चित्र में कवि का उबलता हुआ विद्रोह छसक पड़ा है। स्त्री के बचन के बीच में सामन तब मासिका प्रकार' सं बम बैपम्य को प्रतिस्वक्ति मिसी है। उसकी छिन्नतार मार का रोई नहीं-सी दृष्टि से छोगित बर्ग की करणा मुजर हो उठी है। सशेष में इस बिम्ब में कवि का धार्मिक घोर बगवत बैपम्य को लेकर उठता हुआ प्रबल विद्रोह बाभी प्राप्त कर मेठा है। तीघ्रतम विरोध को प्रस्तुत करने के लिए ही ऐसे मुबुड़ घोर स्पष्ट बिम्ब का आशय मिया गया है।

विद्रोह की अनुभूति को ही नहीं अपने मुझ दुःख के बरम क्षणों को बाभी देने के लिए भी कवि बिम्ब का प्रयोग करते हैं। उदाहरणार्थ एकाकीपन की तीघ्र अनुभूति घोर बिरह व्यथा की मार्मिक बेबना की स्पष्ट करने के लिए कवि बिम्बों का आशय मेठा है। यह बिम्ब स्वयं में बिरह एवं पीड़ा के नहीं है बरन् मुझ घोर संयोग के हैं परन्तु विरोधात्मक स्थिति उत्पन्न करने के कारण यह विधेय भाव की व्यंजना करते हैं।

तब माथ किछी की घाली है
 पबुकर पुन पुन पुन सुन क्षण भर
 कुछ घसता कर कुछ सरमा कर

बिम्ब

जब कमल कली धीरे धीरे निज पूंछ पर झिमकाती है
तब याद किसी की घायली है।^१

स्पष्टतः कवि की ठीक बुन्वात्मक धनुमुक्ति को व्यक्त करने में मनुस्वर व कमल
कली के मानवीकरण (बिम्ब) ने बड़ा सहयोग दिया है। दृष्ट आदि के साप-साप
सौन्दर्य प्रेम आदि की प्रतिबिम्बिता भी बिम्बों द्वारा समझ बन पाती है। उदात्त सौन्दर्य
को टरस बना देने वाला यह बिम्ब भी प्रगल्भीय है

सुख कितनी सुन्दर लगती हो जब ठम हो जाती हो उदात्त।
ज्यों किसी गुलाबी बुनियाँ में सूने लहर के घास पास
मरभरी खीरनी जपती हो।^२

स्पष्टतः तीव्रतम भाव धर्मात् भावार्थम भावेय को चित्रित कर भाव व्यंजना
करने में भी बिम्ब का बड़ा महत्व है यह बिम्ब का एक ऐसा कार्य है जो काव्य में
उमे विषय उपयोगिता प्रदान करता है।

ममष्टि में काव्य में बिम्ब के कार्य धीरे उसकी उपयोगिता कई रूपों में
हमारे सामने आती है उसकी सबवतारमकता प्रसन्नरस प्रसन्नविष्णुता प्राप्तबला
क्रमबद्धता वस्तु जयप् में रागात्मक सम्बन्ध की व्यंजना धर्मूर्त एव सर्वम्पर्धी भावों
का व्यक्तीकरण आदि प्रत्येक कार्य काव्य में उसको विविष्ट स्थान प्रदान करते हैं।
यद्यपि उसकी उपयोगिता काव्य में बहुमुक्ती है धीरे इन स्तुत विभाजनों में उसका
उचित मूल्यांकन नहीं किया जा सकता फिर भी यह अध्ययन उसकी उपयोगिता के
मुख्य रूपों को प्रतिबिम्बित करता है।

(१) बिम्ब निर्माण की प्रक्रिया

बिम्ब निर्माण की प्रक्रिया समुत् काव्य निर्माण की प्रक्रिया है। काव्य सर्जन
भाव को बिम्ब रूप में प्रस्तुत करने का ही प्रयास है। बिम्ब प्रयत्न उसका बहुरार
रूप कल्पना ही काव्य निर्माण का प्रमुख कारण है। काव्य में कल्पना प्रयत्न चित्रों का
सबन करना ही प्रमाण कार्य है।

बिम्ब निर्माण की प्रक्रिया यथार्थ में मन की प्रक्रिया है। जब जतन रूप में
हम निश्चिन्त रहते हैं अचेतन में हम बिम्बों का संकलन करते रहते हैं। ऐसे क्षणों में
हम धनुमुक्ति धीरे भाव पर मनन (बुद्धि) करते हैं। इन मनन के क्षणों के परिणाम
ही काव्य में बिम्ब रूप से प्रकट होते हैं। यह मनन पुसंत अचेतन व्यापार नहीं है
चेतन का कार्य भी है। प्रयत्न इसे चेतन-अचेतन मन (कांछत-मनकांछत मांड) का
व्यापार कहा जा सकता है। इस रूप में यह प्रयास के कल्पना विषयक मत से बिम्ब
हा जाता है। प्रयास काव्य धीरे उसके संदर्भ में प्रस्तुत काव्यगत कल्पना को अचेतन
मन का व्यापार मानता है। उसके धनुस्तर काव्य समित वासनाधर्मों की प्रतिबिम्बिता है

१ वातर चलना : कीरव ५ १०१

२ दृष्ट्य सत्त्व : कर्मेदीर करटी, ५ ११६

जो अधिकांश में काममूलक होती है। उसके अनुसार यही समित वासनाएं एवं इच्छाएं जो उपचेतन व अचेतन में सुप्तावस्था में पड़ी रहती हैं अनुभूति के जाग्रत हो जाने पर अचेतन से उपचेतन और फिर उपचेतन से अचेतन की ओर प्रसर होती हैं। उपचेतन मन की अवस्था में उनका परीक्षण और वाप परिहरण होता है और वहीं इच्छाएं व कामनाएं अब शीघ्र-विनिर्मुक्त होकर अचेतन मन की ओर प्रसर होती हैं वहीं वह काम्यारमक अभिष्यन्ति का रूप धारण करती हैं। परन्तु काम्य-निर्माण प्रक्रिया को केवल अचेतन तक सीमित करना उचित नहीं है उसमें कुछ चेतन प्रयत्न भी बराबर होते रहते हैं।

यद्यपि काम्य का स्वरूप आकार और अभिष्यन्ति का निर्माण अचेतन मन में होता है परन्तु उसमें सतम् चिबम् सुन्दरम् का सामंभस्य करते वासा प्रयत्न चेतन द्वारा ही होता है। सत्वम् चिबम् सुन्दरम् से पृथक काम्य की सत्ता रह ही नहीं सकती और अचेतन की अस्पष्टता असंगठन असंतुमन आदि काम्य में प्रस्तुत सृष्टि की सुन्दरता संगठन संतुमन के निर्माता नहीं हो सकते। सुन्दरता और संतुमन का निर्माण चेतन प्रयत्न से ही होता है। काम्य में जो सौन्दर्य संबन्ध और संतुमन रूपता द्वारा आता है वह कभी भी अचेतन के प्रयत्न से नहीं आ सकता वह निश्चय ही एक चेतन प्रयत्न है। रूपता एक मानसिक प्रक्रिया है जिसका विस्तार मन के सभी स्तरों में है यह केवल शारीरिक प्रयत्न से मिला है। इसी कारण इसे शारीरिक प्रयत्न (पिंडिकरम मीमुपुषेक्षन) न मानकर मानसिक संयोजन (मेष्टम मीमुपुषेक्षन) कहा जा सकता है। विन्ध्यों का प्रस्तुतीकरण अचेतन मन का कार्य है पर उसका संगठन और चयन चेतन मस्तिष्क का ही कार्य है। वस्तुतः अनेक स्मृतियाँ जो अचेतन में सुप्तावस्था में पड़ी रहती हैं अनुभूति द्वारा जाग्रत होकर काम्य में प्रकट होती हैं। रबीन्द्रनाथ ठाकुर ने अपने एक मीठ में काम्य निर्माण की प्रक्रिया की व्याख्या इस प्रकार की है

बीजैर धंक्रु एवे तुमेष्ठ आगादे ।
 मुहुते प्ररफुट बर्ने दिवेष्ठ राबाये ।
 फूलेरे करेष्ठ क्त रते सुमधुर ।
 बीजे बरिक्त यत्र धामि निहास्तुर ।
 धालस्य प्रध्वारपरै श्रोतिलै मरिया ।
 भेषेष्ठिनु सब कर्म रहित पडिया ।
 प्रभाते आगिया उठि मेतिनु नयन ।
 बेकुन मरिया धाठे धामार कानन ।

अर्थात् संज्ञेय में सोच रहा था कि समय भू ही गप्ट हो गया। बाण्डव में वह समय प्रभु ने स्वयं ग्रहण कर लिया। वह घण्टर्दामी है, इसलिए छिपे-छिपे बीज

बिम्ब

को संभूर बना देता है। संभूर में मुहु लक्ष्मीर मुकुम में रंग भर देता है पूष को फल धीर फल में मधुर रस सा देता है। मैन प्रजात में धार्मिक सामी तो देला मेरा सात कामन भर गया है।

बा० हरद्वारीसाल धर्मा ने टैगोर के इस गीत को कवि के काव्य निर्माण के प्रवेतन मन का यहाँ धपन धनबीन्हे सर्णों द्वारा धमिभ्यक्त किया है। संभूर में मुहुस धीर मुहुस में रंगों क भर देने का कार्य बिलता मुकुम धीर धनबाने ही मुहुस धीर कल्पना को रूप रग से पुरित बिम्बों के साथ म डाल देता है। इसी कारण कवि भी ब्रह्मा' कल्पना का धमिकारी हो जाता है। वह धपने बिम्बों द्वारा एक सर्वया नूतन मृष्टि प्रस्तुत करता है। बिम्बों के प्रस्तुतीकरण का यह ध्यापार मधुपि प्रवेतन मन करता है पर उनका सम्यक नियोजन कवि के कतन मन के प्रयत्नों से होता है।

मुकुम बी ने क-बिधान (बिम्ब बिधान) की बर्चा करते हुए उसको तीन भागों में बिभाजित किया है

- (१) प्रत्यक्ष रूप बिधान ।
- (२) स्मृत रूप बिधान ।
- (३) कल्पित रूप बिधान ।

मुकुम बी द्वारा प्रस्तुत बिम्बों का यह वर्गीकरण बस्तुतः बिम्ब बिधान का बर्णीकरण न होकर बिम्ब निर्माण की प्रक्रिया के विभिन्न सोपान हैं। बिम्बों के बिधान की दृष्टि से यह बिधेय उस्तकनीय नहीं है क्योंकि प्रथम दो—प्रस्तुत रूप बिधान धीर स्मृत रूप-बिधान—यथार्थतः काव्य रूप से सम्बन्ध ही नहीं रखते। स्वयं मुकुम बी ने कहा है अथ पिनाए इन तीन प्रकार के रूप बिधानों में से धन्तिन (कल्पित) ही काव्य समीक्षकों धीर साहित्य मीमांसकों के बिचार क्षेत्र के भीतर लिए गये हैं धीर बिधे बात हैं। बात यह है कि काव्य राष्ट्र ध्यापार है। वह राष्ट्र सकेतों द्वारा ही धन्त में बस्तुओं धीर ध्यापारों का मूर्त-बिधान करने का प्रयत्न करता है। धत जहाँ तक काव्य की प्रक्रिया का सम्बन्ध है वहाँ रूप धीर ध्यापार कल्पित ही होते हैं। कवि बिल ध्यापारों धीर बस्तुओं का बयान करने बैठता है वे उस समय उसके सामने नहीं होते कल्पना म हो होते हैं।^१ इनमे प्रथम दोनों रूप बिधान बिम्ब निर्माण की प्रक्रिया को स्पष्ट करने में पूर्ण सहायक हैं। बस्तुतः मुकुम बी का सतय रूप-बिधान के इस वर्गीकरण के धन्तर्वत मुखजत रूप-बिधानों पर बिचार करना नहीं था उनके समान रसानुभूति की समस्या प्रमुख है जम्होंने यहाँ यही बिधान का प्रयत्न किया है कि रसानुभूति प्रत्यक्ष स्मृति धीर कल्पना सब में हो सकती है। प्रासंगिक रूप से ही

१ काव्य धीर कता : बा. हरद्वारीसाल धर्मा द्वारा कृत १९२१

२ एष मी-मंसा : काव्य धीर मुकुम १९२१

बहु बिम्ब के विषय में कुछ कहते पते हैं। परन्तु शुक्ल भी के इस वर्गीकरण से बहु धारण्य प्रतीत होता है कि बिम्ब की समस्या उनके सम्मुख प्रधान नहीं रही पर उसके विभाजन में बिम्बों की निर्माण प्रक्रिया धारण्य उनके मन में थी। जिसे बहु बीच बीच में बाकी दल बने गये हैं। बिम्ब के विभाजन के इस धारण्य पर हम बिम्ब निर्माण प्रक्रिया की पूर्णरूपेण मनोवैज्ञानिक व्याख्या कर सकते हैं। प्रस्तुत धारण्य में हम शुक्ल की द्वारा दिये गये विभाजन के धारण्य पर बिम्ब-निर्माण प्रक्रिया का विवेचन करते हैं।

(१) प्रत्यक्ष बिम्ब प्रत्यक्षबिम्ब का अर्थ है हमारा ज्ञानास्पादक दृश्य मान जगत्। जीवन में जो कुछ भी हम देखते सुनते धारण्य अनुभव करते हैं सभी इसके लक्ष्य में आ जाता है। इस प्रकार प्रत्यक्ष बिम्ब के अन्तर्गत हमारे संपर्क में आने वाला सम्पूर्ण जगत् आ जाता है। कवि के व्यक्तित्व का उदय यही से होता है। प्रत्यक्ष जीवन में जो व्यक्ति जितना ही अधिक भावुक धारण्य अनुभूतिप्रवण होता वह काव्य रचना में उतना ही अधिक सक्षम होगा। शुक्ल भी कहते हैं 'भावुकता की प्रतिष्ठा करने वाला मूल धारण्य या स्यादान्य प्रत्यक्ष रूप ही है। इन प्रत्यक्ष रूपों की मासिक अनुभूति जिनमें जितनी ही अधिक होती है वे उतना ही रचानुभूति के उपयुक्त हैं।' प्रत्यक्ष रूप धारण्य बिम्ब ही समस्त कल्पना और काव्य के धारण्य हैं।

प्रत्यक्ष बिम्बों का क्षेत्र काव्य की दृष्टि से प्रेरणा (इन्सपिरेसन) अनुभूति (पीनिलिंग) और भावना (इमोशन) का क्षेत्र है। कवि की प्रेरणा सबैव प्रत्यक्ष जीवन से उद्भूत होती है। कवि में उसको स्मृति से प्राप्त कर सकता है न कल्पना से ही उसका सत्रण कर सकता है। प्रेरणा सबैव जीवन से प्राप्त होती है और यही काव्य का बहु मूल तत्व है जिसके धारण्य पर धारण्य व्यापार क्रियाशील रहते हैं। धारण्यक स्टीफन स्पेंडरने अपने मूल 'ब मैकिंग प्राइवोयम' में प्रेरणा की महत्ता को प्रतिपादन करते हुए कहा कि प्रेरणा ही वस्तुतः काव्य का मूल उद्गम और उसका अन्तिम मध्य है। यही काव्य का प्रथम और अन्तिम तत्त्व है।^१ बिम्ब निर्माण में भी प्रेरणा का धारण्य धारण्य महत्त्व है और यह प्रेरणा निरन्तररूप रूप से प्रत्यक्ष बिम्ब से ही उद्भूत होती है।

प्रत्यक्ष रूप विभाजन से अनुभूति का अर्थ भी होता है जिसका बिम्ब निर्माण में ही नहीं काव्य निर्माण में भी महत्त्वपूर्ण कार्य है। बिम्ब के अन्तर्गत अनुभूति की धारण्य पहचान ही हो चुकी है। यहाँ सक्षिप्त में उसके महत्त्व और प्रत्यक्ष रूप से उसके

^१ एच. ए. स्पेंडर, आन्वर्से टुयु, पृ. २३

^२ Inspiration is the beginning of a poem and it is also its final goal. It is the first idea which drops into the poet's mind and it is the final idea which at least achieves in words. — Stephen Spender — The Creative Process ed. B. Ghiselin. P 118

विम्ब

सम्बन्धों पर बिचार प्रस्तुत किया जायेगा। कवि प्रत्यक्ष जीवन से ही अनुभव प्राप्त करता है इसीलिए प्रत्यक्ष का महत्त्व काव्य में विशेष है। प्रत्यक्ष से अनुभव नाम ही काव्य में आकार ग्रहण करत है। बहरसबर्ब न इसी कारण कविता की व्याख्या करते हुए अनुभूति शोध भाव पर विद्यय बस दिया था। उसने कहा कि कविता तल्लिखाली अनुभूतियों का स्वतः प्रकाशन है।¹ स्पष्टतः काव्य में अनुभूतियाँ का महत्त्वपूर्ण स्थान है। यह अनुभूतियों निदिशत रूप में प्रत्यक्ष बिबा से ही प्राप्त होती है। इस कारण ही काव्य रचना में प्रत्यक्ष जीवन और जगत का सहानुभूतिकुर्म आवश्यक भावश्यक हो जाता है।

प्रत्यक्ष रूपों का भाव को जाग्रत करने क कारण भी काव्य में विशेष स्थान है। भाव अनुभूति के पश्चात् ही प्रकल्प है। एक प्रकार से उसमें उद्भूत एक प्रतिक विरदूत मनाबदा है। भाव भी प्रत्यक्ष जीवन से प्राप्त हान है। लुर्मि न भाव पर विशेष बस दिया था और उन्हे बिब की निर्माय प्रक्रिया का एक आवश्यक मोदान माना था।² मंत्रेय में अनुभूति भाव और प्रेरणा—तीनों ही तत्व बिब के निय परम आवश्यक और स्पष्ट ही जीवन के प्रत्यक्ष रूपों में सम्बद्ध है। इनके प्रतिरिक्त रूप प्रस्तुत करने (उपमान) के कारण भी प्रत्यक्ष रूप बिपाल का काव्य में विशेष महत्त्व है। बिब जयन का समय क्षेत्र प्रत्यक्ष का ही क्षेत्र है। कवि जिन बिबों का प्रस्तुत करता है वह प्रत्यक्ष जीवन से ही ग्रहीत होत है। प्रत्यक्ष जितात रूपों कल्पित होने पर वह पाठका हाप ग्राह्य नहीं हो सकत। कवि उन वस्तुओं को जिम्ब रूप में प्रस्तुत करता है जिनका साक्षात्कार वह कभी कर चुका है और पाठक भी उन्हीं वस्तुओं को पहन करता है जिनका कभी उसका जीवन में संबंध रह चुका है जिम्ब का त्रिकोणमक संबंध जिसको लुर्मि बिब का प्रधान कथ कहता है—प्रत्यक्ष में ही मबधित है।

यहाँ यह प्रदन उठ मजता है कि वहाँ कवि ऐसी वस्तु का बयन करता है जिसका प्रत्यक्ष अनुभव महा हो सकता जैसे प्रलय मृत्यु स्वर्ग प्रादि तब यहाँ प्रत्यक्ष रूपों का क्या महत्त्व रह जाता है? जैसे प्रमाद की कामायनी में प्रलय का वर्णन कामायनी के स्वर्ग क उपमान प्रादि। यहाँ हम यह कहना चाहें कि त्यक्ष का सर्व वेबन देबना या सुनना ही नहीं है बरतू वह मब नी है जिम्बो हम पढ़त हैं या जल मृतियों क रूप में प्राप्त करते हैं पर्यात् जिनम हम मानत साक्षात्कार कर तत है। इसी कारण प्रसार जी पुराणों बरतों प्रादि से पढ़कर व प्राचीन

¹ Poetry is the spontaneous overflow of powerful feelings, it takes its original from emotion recollected in tranquillity — Words worth

² The identification of the poet with objects which appeal to his senses is the initial step in image making — Poetic Image C.D Lewin, page 67

संस्कारों की प्राप्त भाव्यताओं के आधार पर प्रत्यक्ष का इतना सजीव वर्णन है पाये और जासनी बनधुतियों से सामग्री ग्रहण कर स्वयं को स्थायित्व कर सके। कवि की कल्पना शक्ति बड़ी प्रबल होती है। प्रत्यक्ष का तनिक सा आधार पाकर ही वह अपूर्व सुतन उपमाबनाए कर सेता है पर प्रत्यक्ष का आधार उसमें रहता धबधब है। जिनों के विषय भी यद्यपि कवि तबे तबे लोकर भाते है पर वह कल्पित नहीं होते हम उन का धारम साक्षात्कार कर चुके होते हैं या सहज ही कर सकते हैं।

इस प्रकार स्पष्ट है कि विन्म का समस्त क्षेत्र प्रत्यक्ष जीवन से अनुप्राणित है विन्म की प्रक्रिया में प्रत्यक्ष रूपों का बड़ा योग है यह विन्म की निर्माण प्रक्रिया के प्रथम सोपान है।

(२) स्मृत विन्म विन्म वर्णन का मुख्य चरित्र स्मृत रूप विधान है। स्मृति विन्म निर्माण का एक धाबधक तत्व है।^१ यह सभी वस्तुएँ और व्यापार जो कवि प्रत्यक्ष देखता सुनता या अनुभव करता है सब उसकी स्मृति में जाकर स्थित हो जाते हैं और जब कवि काव्य वर्णन में प्रवृत्त होता है तब समानता सादृश्यता तुलना धबधा सामान्य वर्णन के लिए अपनी स्मृति से ही वस्तुओं और व्यापारों का ग्रहण करता है क्योंकि प्रत्यक्ष जैसी कोई सत्तातब उसके सामने नहीं रहती वस्तुतः काव्य में कवि अपनी स्मृतियों का ही प्रकाशन करता है। स्मृति की समृद्धि कवि प्रतिभा का एक धाबधक घण्ट है। कवि में धर्म सामान्य व्यक्तियों से अधिक संबिदनशीलता के कारण स्मृति का भण्डार पर्याप्त गमूढ रहता है और कुछ स्मृतियां तो कवि के मानस को सदा ही उद्दिग्ध किया करती हैं।^२ प्रेमचन्द के उपमास रजभूमि का प्रमुख पात्र धबधा भिसारी सुखदास वस्तुतः प्रेमचन्द की स्मृति से उत्पन्न है उन्होंने जीवन में ऐसे व्यक्तियों को देखा था और सबसे प्रभावित भी हुए थे। वहीं कालान्तर में मनीष रूप कारण कर उनके उपमास का पात्र बना। कवि जब काव्य वर्णन में रत होता है तब वह स्मृति से उन्हीं पूरे परिचित वस्तुओं और व्यापारों को प्रस्तुत करता है। महाहरम के लिए एक विन्म देखिये

१ Memory is the central factor in the process of image-making without memory there can be no poetic creation. —Poetic Process—George Whalley page 76

२ If the art of concentrating in a particular way is the discipline necessary for poetry to reveal itself, memory exercised in a particular way in the natural gift of poetic genius. The poet above all else is the person who never forgets certain sense-impressions which he has experienced and which he can re-live again and again as though will all their original freshness. Stephen Spender —The Creative Process. page 114

बिम्ब

रहित भग घंटाबन्धि सरत शान मयु नीर ।
कुञ्ज कुञ्ज आगत जसी, कुञ्जर कुञ्ज समीर ॥^१

यहाँ कवि ने पवन की उपमा हाथी से की है। यहाँ स्पष्ट हो सकता है कि कवि ने इस प्रकार भूम भूम कर बसत हाथी को देखा होगा और उसक क्रियाव्यापारों से प्रभावित भी हुआ होगा अन्यथा वह हाथी का ही कोई और रूप प्रस्तुत करता। यहाँ कवि बन्धु से प्रथिम उसके क्रिया कलाप से प्रभावित है। उसकी मत्त मति उसकी स्मृति में बिद्यमान थी पवन को देखकर वह उसी दृश्य को पुन गाकार कर लेता है। स्पष्ट है कि कवि स्मृतियों द्वारा ही बिम्ब निर्माण करता है। इसी कारण रिस्के ने कहा कि प्रत्येक बन्धु पहले स्मृति द्वारा मारण की जाती है। तब काव्य में प्रकट की जाती है। कवि की चेतना का प्रत्येक प्रभुमव कवि के कर्म में प्रकट होता है। जब कवि का इतिवत् समाप्त हो जाता है अर्थात् वह सिद्धता बन्द कर देता है तब उसका कारण होता है कि उसकी स्मृति में बिम्ब का स्थान समाप्त हो गया है और इस कारण कवि की कल्पना भी निष्क्रिय हो जाती है।^१ जब कवि क पाग बिम्बों का मन्डार होता है वा किसी सादरप के लिए एक के बाद दूसरा बिम्ब बिचपण की मति बन्धी जाती उसके मन्दिष्क से गुजरने लगता है। इनका कथन कल्पना द्वारा बाद में किया जाता है स्मृति का कार्य केवल कर्मों को प्रस्तुत करने का है उनका संयोजन और कल्पना द्वारा होता है। परन्तु निर्माण प्रक्रिया में स्मृति व महत्व को निर्दिष्ट कर स्वीकार किया जा सकता है। बन्धु स्मृति का महत्व समस्त काव्य व्यापार में है। बिम्ब में इनका और स्पष्ट रूप प्रकट होता है।^१

^१ बिजयी एनाकर, संका ८८

Everything in gestation and then bringing forth. To let each impression and each germ of feelings come to completion quite in itself, in the dark, in the inexpressible the unconscious, beyond the reach of one's own understanding with deep humility and patience the birth hour of a new clarity that alone is living and artists life—in understanding as in work, Rilke quoted by G Whalley Poetic Process, page 78.

When a poet breaks down as a poet and cease to write it is because the images cease to constellate and to well up from memory the imagination has failed at its primitive and secret source. —Poetic Process, G Whalley p 83

There is no kind of mental activity in which memory does not intervene. We are most familiar with it in the case of images... fugitive elusive copies of sensations. —Principles of Literary Criticism, I.A. Richard, p 106

संस्कारों की प्राप्त मास्यताओं के आघार पर प्रत्यक्ष का इतना सजीव वर्णन दे पाये और जायसी जनयुक्तियों से सामग्री ग्रहण कर स्वर्ग को कल्पित कर सके। कवि की कल्पना शक्ति बड़ी प्रबल होती है। प्रत्यक्ष का तनिक सा आघार पाकर ही वह अपूर्ण मूलन उद्भावनाएं कर लेता है पर प्रत्यक्ष का आघार उसमें रहता प्रबल है। बिम्बों के विषय भी यद्यपि कवि नये नये ऋजकर साठे हैं पर वह कल्पित नहीं होते हम उन का धारम साक्षात्कार कर चुके होते हैं या सहज ही कर सकते हैं।

इस प्रकार स्पष्ट है कि बिम्ब का समस्त लोभ प्रत्यक्ष जीवन से अनुप्राणित है बिम्ब की प्रक्रिया में प्रत्यक्ष रूपों का बड़ा भौम है यह बिम्ब की निर्माण प्रक्रिया के प्रथम सोपान है।

(२) स्मृत बिम्ब बिम्ब मर्जन का ब्रह्मदा चरण स्मृत रूप विधान है। स्मृति बिम्ब निर्माण का एक आवश्यक तत्व है।^१ वह सभी वस्तुएँ और व्यापार जो कवि प्रत्यक्ष देखता सुनता या अनुभव करता है सब उनकी स्मृति में जाकर स्थिर हो जाते हैं और जब कवि काव्य सृजन में प्रवृत्त होता है तब समानता सादृश्यता तुलना भन्ना सामान्य वर्णन के लिए अपनी स्मृति से ही वस्तुओं और व्यापारों का ग्रहण करता है क्योंकि प्रत्यक्ष जैसी कोई सत्तातब उसके सामने नहीं रहती वस्तुतः काव्य में कवि अपनी स्मृतियों का ही प्रकाशन करता है। स्मृति की समृद्धि कवि प्रतिभा का एक आवश्यक अंग है। कवि में अन्य सामान्य व्यक्तियों से अधिक संबलनशीलता के कारण स्मृति का भण्डार पर्याप्त समृद्ध रहता है और कुछ स्मृतियों ता कवि के मानस को सदा ही उद्दिष्ट किया करती है।^२ प्रेमचन्द के उपन्यास रंगभूमि का प्रमुख पात्र अम्बा मिखारी सूरदास वस्तुतः प्रेमचन्द की स्मृति से उत्पन्न है उन्होंने जीवन में ऐसे व्यक्ति को देखा था और उससे प्रभावित भी हुए थे। वही कालान्तर में नवीन रूप धारण कर उनके उपन्यास का पात्र बना। कवि जब काव्य सृजन में रत होता है तब वह स्मृति से उन्ही पूर परिचित वस्तुओं और व्यापारों को प्रस्तुत करता है। उदाहरण के लिए एक बिम्ब देखिये

१ Memory is the central factor in the process of image-making without memory there can be no poetic creation —Poetic Process—George Whalley page 76

२ If the art of concentrating in a particular way is the discipline necessary for poetry to reveal itself, memory exercised in a particular way in the natural gift of poetic genius. The poet above all else, is the person who never forgets certain sense—impressions which he has experienced and which he can re live again and again as though will all their original freshness. Stephen Spender —The Creative Process. page 114

रहित नृ ब धंदावसि, सतत बानु मधु मीर ।
कुत्र कुत्र प्राक्त बर्न, कुत्र कुत्र समीर ॥^१

यहाँ कवि ने पवन की उपमा हाथी से दी है। यहाँ स्पष्ट हो सकता है कि कवि ने इस प्रकार मूल मूल कर बसते हाथी की देखा होगा और उसके क्रियाव्यापारों से प्रभावित भी हुआ होगा अन्यथा वह हाथी का ही कोई और रूप प्रस्तुत करता। यहाँ कवि वस्तु से अधिक उसके क्रिया कसाप से प्रभावित है। उसकी मस यदि उसकी स्मृति में विद्यमान थी पवन की देखकर वह उसी दृश्य को पुनः साकार कर देता है। स्पष्ट है कि कवि स्मृतिपूर्ण द्वारा ही बिम्ब निर्माण करता है। इसी कारण रिल्के ने कहा कि प्रत्येक वस्तु पहले स्मृति द्वारा मारण की जाती है तब काव्य में प्रस्तुत की जाती है। कवि की चेतना का प्रत्येक अनुभव कवि के कर्म में प्रकट होता है। जब कवि का हृदय समाप्त हो जाता है अर्थात् वह निजला बन्ध कर देता है तब उसका कारण होता है कि उसकी स्मृति में बिम्ब का स्वात समाप्त हो गया है और इस कारण कवि की कल्पना भी निष्क्रिय हो जाती है।^२ जब कवि के पास बिम्बों का भण्डार होता है तो सिन्धी सादृश्य के लिए एक के बाद दूसरा बिम्ब बिचपट की भाँति बस्ती बस्ती उसके मस्तिष्क से निकलने लगता है। इनका भवन कल्पना द्वारा बार में किया जाता है स्मृति का कार्य केवल कर्षण को प्रस्तुत करने का है उनका संगठन और संकलन कल्पना द्वारा होता है। परन्तु निर्माण प्रक्रिया में स्मृति का महत्व को निर्विवाद स्वीकार किया जा सकता है। वस्तुतः स्मृति का महत्व समस्त काव्य व्यापार में है। बिम्ब में इसका और स्पष्ट रूप प्रकट होता है।^३

^१ विहारी उताकर, संस्कृत ८८

^२ Everything in gestation and then bringing forth. To let each impression and each germ of feelings come to completion quite in itself, in the dark, in the inexpressible the unconscious, beyond the reach of one's own understanding... with deep humility and patience the birth hour of a new clarity that alone is living and artists life—in understanding as in work, Rilke quoted by G. Whalley Poetic Process, page 78.

^३ When a poet breaks down as a poet and cease to write it is because the images cease to constellate and to well up from memory the imagination has failed at its primitive and secret source. —Poetic Process, G. Whalley p 83

^४ There is no kind of mental activity in which memory does not intervene. We are most familiar with it in the case of images fugitive elusive copies of sensations. —Principles of Literary Criticism, I.A. Richard, p 106

(३) कल्पित बिम्ब—काव्य में प्रयुक्त समस्त बिम्ब कल्पना के द्वारा ही निर्मित होने हैं। घट काल्पनिक बिम्बों का क्षेत्र पूज्यतः काव्यगत बिम्बों का क्षेत्र है। यह बिम्ब निर्माण का अन्तिम सोपान है। पर यह पिछली दोनों धबकाओं से अति अत्यन्त रूप से सम्पन्न है। और पिछली धबकाओं की ही एक प्राणायामी धबका है। प्रत्येक काव्यगत बिम्ब को प्रत्यक्ष एवं स्मृति का आशय धबका मना पड़ता है। कबल कल्पना में उद्भूत बिम्ब कभी सफल नहीं हो सकता। शुक्ल जी ने कल्पना के विषय में कहा था 'काव्य के प्रयोजन की कल्पना बही होती है जो हृदय की प्रेरणा से प्रवृत्त होती है और हृदय पर प्रभाव डालती है। हृदय के मर्मस्पर्श का स्पर्श तभी होता है जब अथवा जीवन का कोई सुन्दर रूप अस्मिन् बसा या तप्य मन में उपस्थित होता है।' यही बात काव्यात्मक बिम्ब के विषय में बही जा सकती है। कल्पित बिम्ब का क्षेत्र अथवा मगठन यामकल्प आदि का क्षेत्र है। कवि अपनी स्मृति से कल्पना में बिम्बों का निर्माण करता है। उन्हें भावना एवं परिस्थिति के अनुकूल बनाकर प्रस्तुत करता है तभी वह एक सफल बिम्ब कहा जा सकता है। जैसे हम

पुनी नीसिमा पर बिहीन तारे यो बीप रहे हैं
 धमक रहे हों नील और पर दूरे ज्यों चाँदी के
 या प्रसन्न निस्सीम अन्वि में जैसे करन २ पर
 नील बारि को फोड़ ज्योति के द्वीप निकल घामे हों ।

यहाँ कवि ने भावानुकूल बिम्बों की योजना की है। नीले बरत पर चाँदी के पुनी की कल्पना अतिशय है पर केवल अमरकार प्रदर्शन के लिए नहीं है। प्रकाश का आभास दिखाने में चाँदी धबका महत्त्व है। इसीलिए कवि को दूसरे बिम्ब में कबल द्वीप न रखकर अन्वि के द्वीप पद रखना पड़ा है। यहाँ कवि की स्मृति से अथवा और मगठन करके कल्पना ने उन्हें सुन्दर रूप में प्रस्तुत किया है। काव्यनिक निर्माण ही काव्य निर्माण की पूर्णता है।

मार्ग में बिम्ब निर्माण की इस प्रक्रिया में सारा व्यापार अन्तिम रूप विधान (काव्यनिक) में पूर्ण होता है। परन्तु इसमें पहले दो सोपानों का भी अथवा बिलिप्त महत्त्व है। एक के भी न होने से बिम्ब प्रक्रिया अप्रयुक्त रह जाती है। एसी स्थिति में कवि कभी बिम्ब निर्मित नहीं कर सकता। बिम्ब की प्रक्रिया प्रत्यक्ष स्मृति कल्पना के तीन रूपों में ही पूरा होती है। घट बिम्ब के निर्माण में इनका विशेष महत्त्व है। अस्तु यह प्रक्रिया मन प्रक्रिया है। इसलिये इसमें प्रत्यक्ष स्मृति आवि का स्वाभाविक निर्माण है। कल्पना भी अन्तिम मन का ही व्यापार है। बिम्ब के ये तीनों सोपान

१. एत आन्विता—मार्गक शुक्ल १ २११

२. अन्वि—दिवक, १० १

लेख

उसके मनोवैज्ञानिक विकास धरबा कवि के बिब प्रस्तुत करने के प्रांतिरक व्यापार का बिलेपन करते हैं। पर बीसा पहले ही कहा बा चुका है काव्य का निर्माण काल्पनिक बिबों से ही होता है। बिम्ब स्मृति से ब्यों के त्यों प्रहीत नहीं किये जाते बरन् उन्हें कुछ परिवर्तन कुछ परिवर्द्धन के साथ काव्य मे प्रस्तुत किया जाता है। प्रत्यक्ष और स्मृति का कार्य प्रत्येक व्यक्ति में होता है। पर कल्पना की क्षमता धरबा बिबों के काल्पनिक निर्माण की शक्ति प्रत्येक में नहीं होती। काव्य का बिम्ब बिधान पूर्णतः काल्पनिक बिम्ब कवि बन जाता है और दूसरा नहीं। काव्य का बिम्ब बिधान की दो सीढियाँ हैं। बिधान है। प्रत्यक्ष और स्मृति इस बिम्ब बिधान की दो सीढियाँ हैं।

५ बिम्ब की स्थिति—बिम्ब के बिषय में इतना जान लेने पर यह प्रथम स्वतः ही उठता है कि काव्य के प्रथम बिम्ब की क्या स्थिति है? बिम्ब काव्य के किसी प्रथम में रहना है या समग्र कविता बिम्ब है? धर उतका स्थान काव्य के किसी प्रथम में है तो वह प्रथम कौन से है? बस्तुतः बिम्ब का महत्त्व उसकी समग्रता में ही है और पूरी कविता स्वयं में एक बिम्ब होती है पर काव्य में प्रथम में भी उसकी परिमर्यक्ति होती है। काव्य में कोई वाक्य या उमका कोई एक पर भी बिम्ब है सकता है। कभी कभी केवल एक शब्द बिम्ब को जीबन बनाने की शक्ति रखता है और कभी कभी उसी शब्द धरबाएँ पूरा पर मिलाकर एक बिम्ब प्रस्तुत किया जाता है।

नाया के माध्यम से देखने पर बिम्ब को दो भागों में रखा जा सकता है। (१) जहाँ सभी वाक्य धरबा एक पूरा वाक्य एक ही बिम्ब देता हो। (२) जहाँ केवल एक वाक्यीय धरबा केवल एक शब्द मात्र बिम्ब प्रस्तुत करने में समर्थ हो।

(१) वाक्य धरबा वाक्यों के बिम्ब—काव्य में अधिकतर बिम्ब में प्रयुक्त प्रत्येक वाक्य प्रत्येक शब्द बिम्ब को प्रस्तुत करने में समर्थ है। अधिकतर बिम्ब में प्रयुक्त बिम्ब-बिधान करता है। ऐसे स्वर्णों पर वाक्य धरबा वाक्यों में प्रस्तुत प्रत्येक पर किया जाति बिब निर्माण में महायता देती है। उदाहरण क सिए कामायनी का एक प्रसिद्ध अणक उद्य त है

सिधु सेज पर परा बड़ धर
तनिक संकुचित बंठी-सी
प्रलय-निद्रा हलचल स्मृति में
मान किए-सी ऐंठी-सी ।^१

यहां 'सेज' और 'बड़ धर' 'संकुचित' 'बंठी-सी' 'प्रलय-निद्रा' 'हलचल' 'स्मृति में' 'मान किए-सी' 'ऐंठी-सी' 'प्रियाएँ'—सभी बिब को प्रस्तुत करने में सहायक हुई हैं। सत्राएँ 'सादरय' स्थापित करने में बिधेपय ब प्रियाएँ 'साधर्म्य' स्थापित करने में बिधेपय रूप से सफल हुई हैं। यहाँ स्पष्टतः देखा जा सकता है कि किसी एक क्रिया धरबा बिधेपय पर ही बिम्ब आधारित नहीं है बरन् उसका प्रत्येक वाक्यांश बिम्ब की प्रतीति बनाने में योग

१ कामायनी—प्रभात, ५, २५

बेता है। यहाँ सेज और बबू के रूप की भी उतनी ही महत्ता है जितनी पेंठने और मास करने की मुद्रा की। किसी एक के भी अभाव में बिम्ब विस्तृत हो सकता है।

बायसी का भी एक सांख्यिक दृष्टिकोण है

नीर गंभीर कहाँ हो पिया तुम्हें बिम्ब फाट सरोवर दिया।

बिम्ब के कारण नागमती का हृदय उसी प्रकार विदीर्ण हो गया है जिस प्रकार सरोवर के पानी के सूख जाने पर उसके तल की मिट्टी विदीर्ण हो जाती है। यह पूरा रूपक नागमती के बिम्ब की व्यंजना के लिए प्रस्तुत किया गया है। नागमती के दुखित और लजित हृदय को प्रेषणीय बनाने के लिए सरोवर की मिट्टी के फटने का रूप चित्र दिया गया है। यहाँ 'नीर और 'सरोवर' संज्ञाएँ साधर्म्य के आभास पर बिम्ब को प्रस्तुत करती हैं। 'गंभीर विशेषण नीर और रत्नसेन के साम्य को अधिक गहरा ब स्पष्ट बना देता है। 'फाट' क्रिया से उसके हृदय की विदीर्ण अवस्था की व्यंजना होती है। 'फाट' से हृदय के विदीर्ण होने की सारी घटनाएँ तक सम्मिलित हो गई हैं। यह पूर्णतः सत्वर शब्द है जो साधर्म्य के आभास पर प्रस्तुत किया गया है। इस रूपक में भी प्रत्येक संज्ञा क्रिया और विशेषण मात्र को मूर्तित करने में सहायता देते हैं। इस प्रकार अन्य बिम्ब भी देखे जा सकते हैं। बिहारी की उत्प्रेक्षा में भी वही बात है।

सौहत छोड़ पीत पट स्याम ससोने गात

मनो नीलमलि सैल पर आप्त पर्यो प्रभात।

यहाँ पर्यो क्रिया कोई बिम्ब नहीं प्रस्तुत करती। बिम्ब की दृष्टि से वह निष्प्रयोजन है परन्तु फिर भी प्रस्तुत और अप्रस्तुत—दोनों में बिम्ब बनता है क्योंकि यहाँ प्रस्तुत संज्ञा और विशेषण बड़े व्यंजक हैं। प्रस्तुत में आये दोनों विशेषण पीत स्याम और ससोने—प्रस्तुत वस्तुओं पट और गात को रंगों से पूर्ण कर देते हैं, वह इसी (य की सामर्थ्य (कसरफुलतस) के कारण विशेष सफल हुए हैं। अप्रस्तुत योजना भी बिम्ब प्रभाव है। 'नीलमलि सैल'—में विशेषण और संज्ञा दोनों हैं। संज्ञा गुण (प्रभाव) साम्य पर आधारित है। विशेषण नील उसको रंगरूप से पूरा कर देता है। प्रभात घुसरी संज्ञा है जिसमें रंग की उज्ज्वलता को प्रस्तुत करने और पीतपट का बोध कराने की पूरी शक्ति है। यहाँ बिम्ब का मुख्याधार संज्ञा और विशेषण है। क्रिया का इस बिम्ब में कोई योगदान नहीं है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि सौंदर्य रूपक में काव्य का केवल एक ही बिम्ब नहीं होता है बरन् प्रत्येक संज्ञा बिम्ब होता है। इस प्रकार सांख्यिक रूपक में बिम्ब की स्थिति एक ही प्रसिद्ध क्रियाओं विशेषणों संज्ञाओं में मानी जा सकती है। केवल एक शब्द के बिम्ब से सौंदर्य रूपक नहीं बन सकता।

बाक्यों में सौंप क्यक न होने पर भी बिब बनता है। क्यक के न होने पर भी कई स्वर्णों पर कोई बाक्य समया एक पूरा बाक्य बिब दते हैं और वहाँ प्रत्येक संज्ञा क्रिया याचि इस धोर क्रियाशील रहती है। यथा

बहा हंसति तु सो सो किय चीर ली मेहु।
तोहि मुख बपटी बीहुरी मोहि मुख बरिसै मेहु।

यहाँ बिबसी धोर येह दोनों का बप प्रस्तुत किया गया है। बिम्ब केवल बाक्यांग में न होकर 'बमकै बीहुरी 'बरिसै मेहु' चार बाक्यांगों में है। बमक धोर बरिसै दोनों क्रियाएँ हैं जो व्यंजित भाव को मूर्त करती हैं। बिबसी धोर मेहु 'क्रमदा' इसी धोर इतन को व्यक्त करता है।

बाक्यों धोर बाक्य से निर्मित बिब मुहावरों धोर लोकोत्थियों क द्वारा भी प्रस्तुत होता है। मुहावरे धोर लोकोत्थिया बहिर्वासात् बिवात्मक होती हैं। उनका अर्थ किसी घटना या कथा से ज्ञाना है वहाँ बिचारमत्ता सर्वत्र बिब के मूल में होती है धोर इसलिये बहु बहुधा स्पष्टमक होते हैं। यथा

भै निसि बनि बस नसि परगसी।
राज हैति पुहुमि फिर बसी।

यहाँ 'पुहुमि फिर बसी' मुहावरे के रूप में प्रयुक्त किया गया बिब है। यह बिब बड़ा व्यंजक है, अपने पीछे बिचारों की एक गू लला छोड़ जाता है। राजा ने रानी को रात में अश्रमा के समान प्रकाशित होते देखा और अनुभव किया कि यह भूमि फिर पल्लवित हो गई है। यह राजा की बनीभूति परिमिति रानी का मीमर्ष्य, सबको डी मुक्त करता है। यह बिब भी बाक्य समया बाक्यों से प्रस्तुत बिब की धेनी में ही जाता है।

(२) बाक्यांगों में बिम्ब—बाक्यों समया बाक्य के परिचित्त ऐसा भी होता है कि बिब ग्रहण करान में केवल एक शब्द का ही महत्व हो। यकैना वही बाक्यांग बिब प्रस्तुत करने की पूर्ण सामर्थ्य रखता है। ऐसी स्थिति में बिब की सफलता एक ही अर्थ समया एक ही बाक्यांग पर निर्भर करती है, वही उस प्रस्तुत बिब का आधार स्तम्भ होता है। एक शब्द से बिब ग्रहण पबिकतर प्रस्तुत बिब बिधान में होता है। अग्रस्तुत योजना में क्यक का कुछ न कुछ अर्थ अवश्य रहता है और हम यह कह चुके हैं कि शब्द में केवल एक शब्द या बाक्यांग बिब नहीं बना सकता एक से अधिक बाक्यांग ही अग्रस्तुत योजना (क्यक) में बिब बनति है। परन्तु प्रस्तुत योजना में वहाँ एक ही बाक्यांग बिब होता है वहाँ जसका स्वतन्त्र रूप से महत्व होता है धोर बिब की सफलता का धेय भी इस एक बाक्यांग को जाता है।

बाक्य की मुख्यत तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है (१) क्रिया,
(२) बिधेयन धोर (३) संज्ञा।

के लिए आधारभूत है। उदाहरणार्थ

सतपुत्र सुधा के नाऊ बारी सुनि पाए जस बाब मबारी।

यहाँ मबारी (बिस्ती) संज्ञा स्पष्टतः बिम्बारमक है जो उसकी व्यंजनात्मकता का परिणाम है। यहाँ हम बिस्ती से केवल चार पैर वाले जानवर का अर्थ नहीं लेते बल्कि सम्बन्ध के कारण उसके चुपके से झमड़ा मारने की-कीरे-कीरे धाकमन करने आदि का रूप सेबकों पर आरोपित करते हैं। यहाँ संज्ञा द्वारा बिम्ब पूर्ण सफल हुआ है। एक अन्य उदाहरण भी प्रष्टम्ब है

मातसु प्रेम मय्यक बैकुंठी नहीं तो कहा छार एक सुठी।

यहाँ छार (छार—राज) संज्ञा निस्सारता धुइता व्यर्थता आदि भाव-भावों को सूचित करने का प्रयत्न करती है। यहाँ भी बहु इन भावों की बिम्बारमक अभिव्यक्ति करती है। अभिकोषण यहाँ परिकर अलंकार का साधन संज्ञा होती है यहाँ संज्ञा में बिम्ब प्रस्तुत करने की सामर्थ्य रहती है। इस प्रकार स्पष्ट है कि वाक्यांशों में भी ऐन्द्रियता आदि के आधार पर प्रायः सुन्दर बिम्बों का निर्माण होता है।

समष्टि में कहा जा सकता है कि बिंब की स्थिति काव्य में वाक्य अथवा वाक्यांग किसी भी रूप में रह सकती है। वाक्यांशों में प्रायः बिंबाए एवं बिंबेपन—भावगत आधर्म्य अथवा नादृश्यता को प्रदर्शित करते हैं और संज्ञा रूप साम्य को। वाक्यों में भी इनकी स्थिति प्रायः यही रहती है। परन्तु बिंब निर्माण दोनों ही अस्वाभावों में हो सकता है। बिंब निर्माण के लिए वर्णन में ऐन्द्रियता एवं भावोपकारकता का पुनः होना आवश्यक है इन गुणों का किसी भी माध्यम में समावेश हो जाने पर बिंब निर्माण संभव हो जाता है। अतः बिंब की स्थिति को प्रत्येक वाक्य अथवा वाक्यांग में समझा जा सकता है।

अतः म इस अध्याय में स्पष्ट है कि बिंब का क्षेत्र बड़ा व्यापक है। काव्य में उसका विविध स्वरूप है। बिंब का सुन्दर प्रयोग काव्य की उज्वलता है। बड़ी कवि कर्म का अष्ट रूप है और कवि प्रतिभा का उत्तम परिचायक है। बिंब का रूप है भावपूरित एवं नवैतनाशों से युक्त ऐन्द्रियगम्य वर्णन जो भाव का भावम-प्रत्यक्ष करान में समर्थ है। इसमें बिंब के आधारभूत तत्व हैं अन्तु भूति भाव आदेश और ऐन्द्रियता। बिंब में इन तत्वों का होना एकात्मक आवश्यक है इनके अभाव में बिंब निर्माण नहीं ही सकता। इसके अतिरिक्त बिंब में उत्तेजकता तीव्रता, नवीनता परिचितता उबरता धीरव्य आदि गुणों का होना भी आवश्यक है, यह बिंब की सक्रमता के लक्षण है। काव्य में बिंब के विनाय महत्त्व का कारण उसकी उपयोगिता है। बिंब काव्य में नई काव्य करता है जिनमें अनेकनात्मकता अलंकरण प्रभक्तिगुता प्राणवला नमकडता बाह्य वस्तु अणु से माननात्मक संबंध समुत्त भावों एवं बिंबारों को मूर्तता प्रदान करना -मर्मगर्ती भावों की अभिव्यक्ति

बिम्ब

देना चाहिए प्रमुख हैं। बिम्ब निर्माण की प्रक्रिया को भी बिम्ब के अभ्ययन के अन्तर्गत समझना आवश्यक है। बिम्ब की निर्माण प्रक्रिया एक मन प्रक्रिया है जिसमें कल्पना का महत्वपूर्ण स्थान है। प्रत्यक्ष स्मृति और कल्पना इस प्रक्रिया के साधन हैं। इनको पार कर ही बिम्ब की महत्वपूर्ण संज्ञित प्राप्ति है। भाषा की दृष्टि से बिम्ब काव्य में दो रूपों में रहता है। एक काव्य में दूसरा वाक्यांशों में। बिम्ब के लिए भाषा की कोई निश्चित सीमाएँ नहीं हैं ऐंग्रिय और माबसम्पल बर्षन वहीं भी और किसी भी स्थिति में बिम्ब रचना कर सकते हैं।

अध्याय २ विम्व और कल्पना

कल्पना

कल्पना काव्य की सबसे बड़ी विभायिका शक्ति है। यही वह शक्ति है जिसके कारण कवि के मास या विचार इतिहास भ्रम या उपदेश बनने से बच जाते हैं और हम रस कर्मों में अभिभ्यक्ति न पाकर काव्य के सरस रूप में अभिभ्यक्त होते हैं। काव्य में कवि की अनुसृष्टिप्रवणता चिन्तन-शक्ति ही सब कुछ नहीं है कवि की कल्पना हीमता और सूक्ष्म अन्तर्दृष्टि भी काव्य रचना में आवश्यक है। सत्य और सौन्दर्य की सृष्टि कवि कल्पना के द्वारा ही करता है। प्रत्येक कवि और प्रत्येक कलाकार के लिए कल्पना शक्ति उसकी मूल आवश्यकता है।

'कल्पना' शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत के 'कल्प' शब्द से हुई है जिसका अर्थ है रचना करना अथवा सृष्टि करना। परन्तु हिन्दी में यह शब्द अथवा शब्द 'इमेजिनेशन' के समानान्तर भाव को अभिभ्यक्त करने के लिए प्रयुक्त हुआ है और उसी शब्द के आधार पर कल्पना का अर्थ विस्तार हुआ है। अर्थ ही के 'इमेजिनेशन' शब्द की व्युत्पत्ति सैण्टि भाषा के 'इमेजिनिशियो' शब्द से हुई है जिसका अर्थ है 'कर्मों की सृष्टि करना'। स्पष्ट है कि सृष्टि करना अथवा रचना करना कल्पना का मुख्य अर्थ है और रचना की सृष्टि करना अथवा पुनः निर्माण करना एक ही वस्तु है। 'इमेजिनिशन' शब्द के मूल में भी 'इमेज' शब्द है उसका अर्थ है मूर्ति अथवा रूप। इस तरह कल्पना एक ऐसी मानसिक प्रक्रिया मानी जा सकती है जिसमें कवि मूर्ति अथवा कर्मों की सृष्टि करता है।

व्यापक रूप में कल्पना केवल कलाकार की नहीं मानव मास की स्वाभाविक प्रकृति है। व्यवहार में कल्पना का प्रयोग प्रत्येक व्यक्ति की उस अन्तर्दृष्टि के लिए होता है जिसके द्वारा वह भविष्य का मानस प्रत्यक्ष कर सता है और बुरा वा पुनः निर्माण कर सकता है। हम यहाँ कोई व्यापारी या गीतकार हों वैज्ञानिक या अनुसंधाता हों अथवा कोई मूर्तिकार या चित्रकार हों—दैनिक जीवन में भी पल पल पर

बिम्ब और कल्पना

अपनी स्वतः उद्भूत कल्पना शक्ति से कार्य किया करते हैं। इसके द्वारा ही हम भविष्य के स्वप्न का निर्माण करते हैं और स्मृति के संस्कारों में भूमि धारण करते हैं। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में यह कल्पना हमारी सहायता करती है। परन्तु मानव मात्र में स्वतः उद्भूत यह कल्पना कलाकार की कल्पना से अलग अलग है। साधारण जगत् में कल्पना का व्यावहारिक उपयोग होता है सर्वत्र ही प्रेरणा जनसाधारण की कल्पना में नहीं होती परन्तु कवि की कल्पना सर्वत्र ही उत्कृष्ट प्रेरणा से भरपूर सौन्दर्य का एक अमिथ नमक रूप धारण में समर्थ होती है। इसमें प्रथम को व्यावहारिक कल्पना और द्वितीय को सौन्दर्यपरक या कलात्मक कल्पना (ऐसथेटिक इमीजिनेशन) कहा जा सकता है।

कला के संदर्भ में कल्पना का अर्थ है सौन्दर्यपूर्ण मूलन सृष्टि निर्माण में समर्थ मन शक्ति। यहाँ अर्थ की प्रेरणा के साथ साथ सृष्टि के मन में सौन्दर्य सर्वत्र की कामना भी रहती है। वह अपनी संकल्पनात्मक कृति से ऐसी सृष्टि का निर्माण करता है जो सत्यम् धर्मम् और सुन्दरम् से परिपूर्ण होती है। व्यावहारिक कल्पना से सुन्दर के उत्पन्न का अभाव रहता है जो कि सौन्दर्यपरक कल्पना का प्रमुख लक्ष्य है। इसी के द्वारा कलाकार अन्तर्गत में अन्तर्गत में अन्तर्गत में अन्तर्गत करता है। व्यावहारिक कल्पना बोज-बोज करके मूलन सृष्टि तो कर सकती है पर उसमें सुन्दर के लक्ष्य का समावेश करना उसकी सीमा से बाहर है। इसी से प्रकृत धर्मियता अर्थ की सुन्दरता के सम्बन्ध में जानने के लिए अर्थ निर्माता कलाकारों धारकीटेक्ट (पारफोमेलाइस्ट्स) के पास जाया करते हैं।

मनोविज्ञान में कल्पना शब्द से साधारण अर्थ मानस की कल्पना और कवि की कल्पना दोनों का आशय लिया जाता है। उनके अनुसार अनुमान (संयोजन) दिवा स्वप्न (डे-ड्रीम्स) स्वप्न (ड्रीम्स) विभ्रम (हेलुसिनेशन) और भ्रम (इल्युजन) व स्मृति (मेमोरी) सभी कल्पना के क्षेत्र में आते हैं। मनोविज्ञान में कल्पना के दो रूप स्वीकृत हैं निरवस्थित और अवस्थित। बिना किसी इच्छा अथवा प्रयास से उत्पन्न वे अभावनाएँ जो स्वयं ही हमारे मानस पटल पर आती रहती हैं निरवस्थित कल्पना कहलाती हैं। पर ऐसी निष्प्रयास और निष्प्रयोजन कल्पना को त्रिधै स्वप्न दिवा स्वप्न धारि कहते हैं। कल्प में कोई महत्त्व नहीं दिया जा सकता। दिवा स्वप्नों में एवं स्वप्नों में पाय जाने वाले अस्तुमन, बायबीयानुमत्ता और अस्तुमन का कलात्मक कल्पना में कोई स्थान नहीं है। यद्यपि सौन्दर्य निर्माण की धारणा स्वप्नों धारि में भी रह सकती है, पर अस्तुमन कला के अभाव के कारण ऐसी कल्पना सौन्दर्य पूर्ण होकर भी कलात्मक कल्पना के क्षेत्र में नहीं आती। अनुमान भ्रम, विभ्रम धारि को भी सर्वत्र और सौन्दर्य दोनों के सम्बन्ध में अभाव होने के कारण कलात्मक कल्पना की श्रेणी में नहीं रखा जा सकता। 'साहित्य में अर्थ के स्तर पर कुछ वस्तुओं में अस्तु

सम्बन्ध सूत्रों को जोड़ निकालने वाली मानस-क्रिया का नाम कल्पना है।^१ प्रकृता 'पूर्व धनुसूत्रियों की पुनर्योजना से धनुर्व की धनुसूत्रि उत्पन्न करने की क्रिया या शक्ति'^२ कल्पना है। स्पष्ट है कि साहित्य में कल्पना का कार्य 'नवनिर्माण' है। यह पूर्वानुसूत्रियों या स्मृतियों का पुनर्निर्माण करती है और प्रत्यक्ष रूपों में अप्रत्यक्ष संबंध सूत्रों द्वारा पुनर्निर्मित को नवीन रूप में प्रस्तुत करती है। प्रस्तुत धम्म्याय में हम कल्पना' शब्द से कलात्मक कल्पना के इसी रूप का आशय लेगे।

कल्पना के संबंध में संस्कृत काव्यशास्त्री मीन है। उन्होंने प्रतिभा को काव्य निर्माण का मूल कारण माना है। उन्होंने कहा है कि पूर्वजन्मों के फल से प्राप्त प्रतिभा कवित्व का बीज है इसके अभाव में काव्य सृष्टि असम्भव है। यदि हो नौ जाय तो हास्यास्पद ही बन पावेगी।^३ यह प्रतिभा काव्य की उत्पत्ति का प्रधान हेतु है। काव्य प्रकाशकार मम्मट ने काव्य हेतुओं की चर्चा करते हुए काव्य रचना की शक्ति लोक शास्त्र के अक्षरों की चतुराई एवं धम्म्यास को काव्य का हेतु बताया।^४ वहीं काव्य रचने की शक्ति से तात्पर्य प्रतिभा का ही है। वस्तुतः संस्कृत समीक्षकों द्वारा विवेचित यह प्रतिभा कल्पना की ही समानधर्मी है, उसी रूप एक रूप है। प्रत्येक प्राणवान् नभोग्मेवशासिनी प्रकृता धनुर्व वस्तु के निर्माण में समर्थ प्रजा ही प्रतिभा है।^५ जो कल्पना का ही दूसरा नाम है। राजशेखर द्वारा किये गए कल्पना के दो विभाग 'कारवित्री' और 'भाववित्री' संगठनात्मक और भावात्मक कल्पना के ही दो रूप हैं। संस्कृत विद्वानों द्वारा विवेचित 'प्रतिभा' कल्पना का एक पर्याय प्रतीत होती है।

कल्पना के स्वरूप का विचार करते हुए विद्वानों ने उक्त काव्य की मूल उद्गम शक्ति कहा है। पाश्चात्य समीक्षकों का ध्यान सर्वप्रथम कल्पना की ओर गया था सभी विद्वानों ने इस पर अपना मत प्रकट किया। यहाँ हम उनकी मान्यताओं को देखते हुए कल्पना के स्वरूप को समझने का प्रयत्न करेंगे।

महान् शार्दूलिक प्लेटो ने कला को जीवन का अनुकरण^६ माना था। उसने कल्पना को 'असत्य' के रूप में स्वीकार किया था। उसकी कल्पना विषयक यह मान्यता कला से सम्बन्धित न होकर रहस्य और ईश्वर से सम्बन्धित थी जिसके

- १ कल्पना की शाब्दिक अर्थ—शिव १०३
- २ हिंदी साहित्य कोष—हरद्वाराशरण शर्मा १०२५
- ३ कवित्व बीजम् कवित्व बीजम् । मम्मटसंग्रह संस्कार विरोधा करितम् । मम्मटिना कल्पन निरूपण निधम् न काव्यकल्पन स्वात् । —१३ काव्यार्थकार स्व सृष्टि और—शक्ति' काव्य बीज कला संस्कार विरोधा न विना कल्पन प्रमेत् प्रथमं वा उपलब्धीनं स्वात्—शक्ति १३ काव्यकला—मम्मट
- ४ शक्तिर्युगला लोकशास्त्र काव्यचरित्रजाल । काव्य शिवाभावात् इति हेतुस्तुम्भवे ॥ १३ काव्यकला—मम्मट
- ५ महाभारतमें शक्तिना प्रतिभा मत् । धनुर्व वस्तु निर्माणका प्रजा—लोक
- ६ Art is the imitation of life — Plato

विश्व और कल्पना—

कारण कल्पना का उसमें भ्रम का सामानांतर समझ लिया था। परन्तु धरतलू ने इस मान्यता को नहीं स्वीकार किया। उसने माना कि कला जीवन का एक अनुकरण मात्र नहीं है बल्कि उससे 'बहु अधिक' है। धरतलू की यही कुछ अधिक की धारणा कागान्तर में कल्पना के रूप में पर्यवसित हुई। उसने कल्पना को सामञ्जस्य मान वाली शक्ति के रूप में प्रतिष्ठापित किया। इसमें प्रतीत होता है कि कल्पना के स्वल्प और उसके तत्वों को धरतलू ठीक-ठीक नहीं समझ पाया परन्तु कल्पना का अनुभव उसने प्रबल्य किया था।

रोमान्टिक कवियों और उस काल के समीक्षकों ने कल्पना पर पर्याप्त विचार किया। रोमान्टिक काल से पूर्व लोक श्रापि ने कल्पना का कोई महत्वपूर्ण स्थान नहीं दिया था परन्तु रोमान्टिक कवि ब्लेक ने बोधित किया कि केवल एक ही शक्ति काव्य का निर्माण कर सकती है वह है कल्पना।^१ उसने कहा कल्पना का सार प्रकृतता का संसार है। वह ऐसा पवित्र स्थान है जहाँ इस पवित्र धरीर का प्रत्य हो जाने पर हम सब जायेंगे। कल्पना का यह बिंदु धरीर प्रकृत और आन्तरिक है।^२ ब्लेक ने काव्य में कल्पना की प्राथमिकता को समझी पर उसका तात्त्विक विवेचन उसके कल्पनों में प्रकट न हो सका। उसने कल्पना को प्राध्यात्मिकता का धारण बढ़ा कर देया है। उसके मतानुसार कल्पना ईश्वर की एक स्थापना है। ब्लेक की यह रहस्यवादी व्याख्या कल्पना के किसी स्पष्ट रूप को सामने नहीं रखती। उस प्रकृत रहस्य की वजह इसका स्वल्प भी बुझना और धरतलू है। यद्यपि सभी रोमान्टिक कवियों ने कल्पना की व्याख्या धरीरिय बंग से की है परन्तु प्राध्यात्मिकता का इतना अधिक धारण और किसी ने नहीं किया है।

कागारिज ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'बायोप्राफिया मिटोरिया' में कल्पना की सर्वप्रथम प्रबल व्याख्या की उसने कल्पना को प्राथमिक और प्रतिनिधि (प्राइमरी एण्ड मेकेणरी) दो भागों में विभाजित किया है। कागारिज ने प्राथमिक कल्पना की

He assumed that in perception the mind is wholly passive & more recorder of impressions from without & lazy look on an external world — Romantic Imagination, C.M Bowra Page 2.
One power alone makes a poet Imagination The Divine Vision, Ibid page 14

This world of imagination is the world of Eternity it is the divine bosom into which we shall go after death of vegetated body This world of Imagination is infinite and Eternal, Ibid page 5

पर्चा करते हुए उसकी अनन्तता का संकेत दिया है।^१ उसकी प्राथमिक कल्पना शुद्ध मानसिक प्रक्रिया है जिसका सम्बन्ध भ्रमण सत्य से अधिक है और उसकी पुनः सृष्टि विधावर्ती कल्पना (संकेतचरी इमैजिनेशन) इन्द्रियजगत् से सम्बन्धित है। यह कल्पना रहस्यवादी कल्पना दृष्टि से भिन्न उसका तार्किक रूप भी प्रस्तुत करती है।

शेक्सपीयर ने भी कल्पना की व्याख्या की। उसने कहा—

कवि की दृष्टि एक तुल्य आरोग्य पुत्र प्रवाह में
स्वर्ग से पृथ्वी
और पृथ्वी से स्वर्ग की परिक्रमा करती है।
और हस्त प्रक्रिया में उसकी लेखनी—
बायबीय शुभ्यता को
स्थानीय आवास एवं नाम देती है।^२

उसकी दृष्टि में कल्पना केवल एक बायबीय अपवा ऐन्द्रियमयि रंजीत सृष्टि ही नहीं थी बल्कि यह यथार्थ जीवन और जगत् से अनिर्धार्य रूप से सम्बन्धित भी। वस्तुतः यह एक ऐसी प्रसङ्गदृष्टि है जो अतीन्द्रिय और अस्पष्ट के साथ-साथ ऐन्द्रिय और स्पष्ट को भी अपने विज्ञान आवरण में छिपा लेती है। यथार्थ को प्राप्त करने का सर्वोत्तम साधन कल्पना ही है। शेक्सपीयर की यह मान्यता कल्पना के तार्किक रूप और उसके मूर्तिकरण के पुत्र को प्रकट करती है।

श्रीट्स ने भी कल्पना को यथार्थ जगत् से सम्बन्धित माना। उसने कल्पना की तुलना आदम क स्वप्न से की है।^३ जिसमें आदम ने जागने पर अपनी कल्पना को अपने सामने सब बनकर लड़ा हुआ पाया था। उसने कल्पना को प्रकाशन और सर्वज्ञ बीनों कर सकने में समर्थ शक्ति माना और वस्तुतः सर्वज्ञ के द्वारा प्रकाशन

१ The primary Imagination I hold to be a living power and prime agent of all human perception and as a repetition in the finite mind of the eternal act of creation in the infinite I am. — *Biographia Literaria* — Coleridge page 159

२ The poet's eye in a fine frenzy rolling
Doth glance from heaven to earth
Earth to heaven
And as imagination bodies forth
The forms of things unknown, the poet's pen
Turns them to shape and gives to airy nothing
A local habitation and a name.

३ Imagination may be compared to Adam's dream — he evoked and found it truth. — *Writers on Writings*, page 131

विश्व और कल्पना

करने की शक्ति माना जो यथार्थ से अनिर्धार्य रूप से सम्बद्ध थी।^१ कीदृश की यह मान्यता कल्पना के नवनिर्माण और यथार्थ को साकार कर इन के गुण पर बम दती है और इस प्रकार कल्पना के सर्वासीम रूप को प्रस्तुत करती है।

कवि वह सबसे ने कल्पना का विशिष्ट घन्टदृष्टि क रूप में नेत्रा जो घनत्व पकित, विचारों और भावों से समन्वित थी।^२ यह दृष्टि भी कल्पना के तत्वों और उसके गुणों को सम्यक रूप से स्पष्ट करती है। वही घ वि ने भी काव्य को कल्पना की अभिव्यक्ति मानकर विशेष महत्व दिया। उसे काव्य की प्रथम प्राबल्यकता के रूप में स्वीकृत किया जो कवि के मानस की विशिष्ट घन्टदृष्टि की परिचायक घनत्व की रहस्यमयताक और इसके साप-साय यथार्थ जगत् से भी सम्बन्धित थी। रोमांटिक युग के पश्चात् रिक्रम हेनसिट प्रादि ने भी कल्पना के तत्वों और उन्होंने उसके व्यावहारिक स्वरूप पर बल दिया। पर कालरिज प्रादि विद्वान् कवियों की मान्यतायें सब भी समादत्त थी और मात्र भी उन स्थापनाओं का महत्व प्रकट है। समष्टि में पारश्चात्य समीक्षकों एवं कवियों ने कल्पना के तात्त्विक रूप को समझा है। प्रारम्भ में प्रबन्ध बहु रहस्यवाद के प्राबल्य से प्राबल्यन्त रही पर कालांतर में उनका स्वरूप स्पष्ट हो गया और बहु ऐसी घन्टदृष्टि विशेष मानी गई जो यथार्थ और रहस्य से एक साथ सम्बन्धित थी। प्रत्यक्षीकरण प्रबला साकार रूप निर्माण उसका अनिर्धार्य गुण था।

हिन्दी कवियों और कला समीक्षकों ने भी कल्पना पर पर्याप्त विचार किया है। उन्होंने उसे पारश्चात्य समीक्षा से सर्वांगपूर्ण रूप में ग्रहण किया। कवि पठ के 'कल्पना क मय को सबसे बड़ा मय और ईश्वरीय प्रतिमा का संघ माना।'^३ यह मान्यता कल्पना के यथार्थ जगत् से सम्बन्धित रूप और घटीगिर्य सत्ता को व्यक्त करने के रूप—दोनों के सामन्वय को प्रस्तुत करती है।

हिन्दी प्रासोबकों में प्राचाय सुक्य ने कल्पना की बिगद् व्याख्या प्रस्तुत की। उन्होंने कल्पना को भावोत्क में समय और यथार्थ से सम्बद्ध दृष्टि माना। उन्होंने कहा किनी नाबोत्र क द्वारा परिचालित घन्टदृष्टि जब उम भाव क वीयक स्वरूप

...he saw the imagination as the power which both creates and reveals, through creating, heats accepted the works of the imagination not merely as existing in their own right but as having a relation to ultimate reality through the light which they shed on it. — Romantic Imagination, C.M. Bowra, page 15.

Imagination — is but another name for absolute power
And clearest insight, amplitude of mind
And reason in her most exalted mood.
Ibid page 19

१. पञ्चमिक कवि माला — मुद्रितमन्त्र पत्र, पृ. ३६

बढ़कर या कांट छांटकर सामने रखने लपटी है तब हम उसे पष्पी कवि कल्पना कह सकते हैं। यों ही फिर पष्पी करने बिना किसी माब में मग्न हुए कुछ मनोबे रूप पड़ा करना या कुछ को कुछ कहने लगना या तो बाबलापन है या दिमागी कसरत पष्पे कवि की कल्पना नहीं। भाबाद्र क प्रीर कल्पना में इतना बगिष्ठ सम्बन्ध है कि एक काव्य समीक्षक ने दोनों का एक ही कहता ठीक समझ कर कह दिया है। कल्पना प्रामम्ब है। 'इमैबिनेदान इज उबाय।' स्पष्टत मुक्त भी बायसीय कल्पना को काव्य का धनगुण मानते हैं। माब के लिए धनुषयुक्त कल्पना भी स्पर्श है। वह कुछ प्रीर हो सकती है कल्पना नहीं। मुक्त भी कल्पना की रहस्यबाधिता के पक्ष में नहीं वे क्योंकि प्रतीतिव्य सत्ता की धमिधमिधमिध मान लेने पर यथार्थ जगत् का उससे कोई सम्बन्ध नहीं रह जाता जब कि कल्पना यथाय को प्राप्त करने का सबसे सहज साधन है। मुक्त भी कल्पना को यथार्थ ने सम्बन्ध प्रीर भावाभिधमिधमिध में धमिधमिध रूप में सहायक मानत ब।

छायावादी कविवित्री महादेवी वर्मा ने भी कल्पना पर विवेचन प्रस्तुत किया। उन्होंने कहा 'जसाकार यदि सत्य धर्मों में कसाकार हो तो वह कल्पना को सीत्वर्यमय धाकार देना। उससे वास्तविकता का रंग भरेया प्रीर फिर उससे बीबन संवीत की गुरीसी सय की मृष्टि करेगा।' यद्यपि बहा कविवित्री की दृष्टि कल्पना के सांख्यिक स्वरूप को प्रवृत्त करती है पर उन्होंने कल्पना में सुन्दरम् के सत्य पर विशेष बल दिया है ऐसा प्रतीत होता है। अन्य विद्वानों ने भी योड़े मत मतान्तरों के साथ कल्पना के इसी स्वरूप को स्वीकार किया है।

कल्पना विषयक इन सभी पादचार्य प्रीर भारतीय मान्यताओं को ध्यानकर समष्टि रूप में कहा जा सकता है कि कल्पना एक ऐसी सूक्ष्म धन्तर्दृष्टि है जो सत्य—धात्वरिक सत्य प्रीर बाधा मलय—का प्रकाशन करती है प्रीर काव्य के भावीक में सहायक होकर नूतन मृष्टि निर्माण करती है।

कल्पना को धनक विद्वान् समीक्षकों ने धनेक भावों में विभाजित किया है। यहाँ हम कल्पना के इन विभाजनों को स्पष्ट करने का प्रयत्न करते।

कामरिज ने धपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'बायशाकीया सिटरेटिया' में कल्पना की विधु वर्धा के साथ-साथ उसके दो प्रमुख विभाजन किये (१) प्राथमिक कल्पना (प्राइमरी इमैबिनेशन) (२) प्रतिनिधि कल्पना (सेकेण्डरी इमैबिनेशन)। इन दोनों में से को स्पष्ट करने हुए उनसे लिखा कि प्राथमिक कल्पना ही बस्तुतः बीबनीसिध है। वही मानव विचारों की प्रमुख प्रतिनिधि है। वह पाबिध मस्तिष्क में धपाबिध के सर्जन का पुनस्सर्पण है। इसके विपरीत प्रतिनिधि कल्पना प्राथमिक कल्पना की प्रतिध्वनि है यद्यपि यह कार्यसौमता में प्राथमिक के समान ही है परन्तु

१ प्रमरगत की धुयिका बाबाई शुभ १ १० १०

२ धपना—महादेवी वर्मा १ ५

मुख्य और कार्य प्रभावी में-उससे निम्न है।^१ सामाजिक भाई ए रिचर्ड्स ने कार्टरिज की प्राथमिक कल्पना की स्थापना पर विचार करत हुए लिखा कि यह कल्पना सामान्य विचार है जो संवेदना उत्पन्न करत है।^१ कवि बड़ सबसे नी कार्टरिज की प्राथमिक कल्पना को कल्पना नहीं स्वीकार करत। उनसे कहा कि कल्पना वा उन विचारों से कोई सम्बन्ध नहीं है जो केवल पर्याय के ज्यों के ज्यों प्रतिबन्ध हों बल्कि यह एक सक्रिय उन्नत मूर्ति है जहाँ बस्तु जगत् में सम्बन्ध मानव मन की प्रक्रिया को ही स्पष्ट किया जाता है।^२ कार्टरिज के द्वारा प्रतिपादित प्राथमिक कल्पना विचार प्रकृत है और प्रतिनिधि कल्पना ही मुझ काव्यात्मक कल्पना का स्वरूप है। क्योंकि संयोजन मजरा और मौखिक का संकलन उसका ही सफल है। प्राथमिक कल्पना केवल मात्र विचार प्रकृत है जो घटीन्द्रिय और ऐन्द्रिय के बीच सम्बन्ध प्रतिपादित करती है प्रतिनिधि कल्पना ही मजरा और मौखिक की विशेषताया से समाहित होने के कारण काव्यात्मक कल्पना का रूप प्रस्तुत करती है।

कल्पना का एक अन्य भेद भी है विनकल्पना (कैंगी)।^३ या कि काव्यात्मक कल्पना का एक प्रमुख भेद है प्रपचा एक प्रधान भेद है जो जनक कारणों में कल्पना

१ The primary imagination I hold to be a living power and prime agent of all human perception and as a repetition in the finite mind of the eternal act of creation in the infinite I am. The secondary imagination I consider as the echo of the former co-existing with the conscious will yet still as identically with the primary in the kind of its agency and differing only in degree and in the mode of its operations. Biographia Lit. Coleridge, page 159

It is normal perception that produces the usual world of senses. —Coleridge on Imagination L.A. Richards, page 58.

२ Imagination .. has no reference to images that are merely a faithful copy existing in the mind of absent external objects but a world of higher import, denoting operations of the mind upon those objects and process as of creation, or of composition governed by certain fixed laws — Preface of the Poetical Works. — W Wordsworth, page 726

३ 'विनकल्पना' शब्द अंग्रेजी के कौन्सी के शब्दों के रूप में दिया गया है। डा० जेम्स में इसका लिए 'असिद्ध कल्पना' शब्द का प्रयोग किया है परन्तु मरे विचार से अस्मिन् कल्पना हेतुवैदिक शैलिकेन्द्र का शब्दा शब्द है, कौन्सी का नहीं। अतः अस्मिन्वर्णित के अन्तर्गत इस शब्द को य लेकर विनकल्पना शब्द का ही प्रयोग किया गया है। 'विनकल्पना' में विन अस्मिन् कल्पना की पूरी भाषा है जो कौन्सी को शैल-शैल प्रस्तुत कर सकती है। अन्त शब्द अस्मिन्वर्णित शब्दों की भाषा 'पूर्वतः अन्त करने की कला के अन्तर्गत के अन्त नहीं अन्तर्गत होने हैं।—लेखिका

कल्पना संकलन करती है वह जीवन और जगत् के रूपों या दृश्यों को सारा का सारा रूपों का रूपों ग्रहण नहीं करती बल्कि उनका संकलन करके सारग्रहण करती है और वस्तुओं एवं दृश्यों में आवश्यक जोड़-तोड़ करके और काट-छांट के पश्चात् व्यवहार करती है। यह उसकी समाहार की शक्ति है। इसी प्रकार वह संग्रहण भी करती है यर्थात् एक वस्तु का कोई एक उपादान और दूसरी वस्तु का कोई अन्य उपादान घबना व्यापार संघटित करके प्रस्तुत करती है। और बाह्य जगत की विभिन्न वस्तुओं को एक मूल में सङ्गृहीत करके मानसिक जगत की वस्तु बना लेती है। उसका एक प्रत्येक कार्य संस्मरण है। कल्पना हमारी स्मृति में पड़े हुए पुराने अनुभवों विम्बों घबना मूर्तियों को ही पुनः प्रस्तुत करती है। स्मृति में पड़े वे अनुभव मूर्तियाँ या छवियाँ यादों ही कल्पना द्वारा नये परिवेश के साथ काव्य जगत में प्रस्तुत होते हैं। कल्पना का अन्तिम कार्य संगठन है। कल्पना के संगठन का रूप भी संकलन घबना ऐक्य विधान के अन्तर्गत समाहित किया जा सकता है। यह वह कार्य है जो कल्पनागत शौचिन्त्य की रक्षा करता है। कवि कल्पना शौचिन्त्य के आधार पर ही संगठन करती है।

प्रसिद्ध आलोचक प्राड० ए० रिचर्ड्स ने अपनी पुस्तक 'क्रिटिसिस्स ऑफ लिटरेरी क्रिटिसिज्म' में कल्पना की विभिन्न रचनाएँ प्रस्तुत की। उनमें कालरिज से कुछ प्रयोगों में निम्न कल्पना के कार्य बताएँ तो कुछ प्रयोगों में उससे अभिन्न भी हैं। उनमें कहा^१

(१) मूर्तियाँ मुख्यतः दृश्य विम्बों का निर्माण उसका प्रधान कार्य है।

(२) अलंकार भाषा का प्रयोग भी कल्पना का ही परिणाम है। रूपक उपमा यादों कल्पना के ही निर्माण हैं। इनके द्वारा कल्पना रूप-वैविध्य तो सारी ही है साथ ही प्रस्तुत और अप्रस्तुत के बीच सादृश्य के कारण काव्य में एकरसता भी नहीं घबने देती।

(३) साहित्य में कल्पना का एक सीमित रूप भी है जो पाठक घबना प्रेरक में विद्यमान रहता है। यह पाठक को काव्य का समास्वादन करने की क्षमता देती है।

(४) साहित्य में अव्यासकार यादों की योजना के रूप में कल्पना का एक अत्यन्त स्पष्ट रूप भी प्रकट होता है।

(५) इनके पश्चात् साहित्य में आलोचक की शैक्षिक कल्पना (साइन्सिफिक इमेजिनेशन) भी होती है। यह काव्य के तथ्यों पर आधारित रहती है। काव्य में निरूपित योजना इसी कल्पना का परिणाम है।

(६) कल्पना का अन्तिम और सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य है मौलिक तथ्य भाषना (ओरिजिनल फार्मू मेसन)। इसके कारण ही साहित्य में नये नये विषयों की अनेक मार्मिक प्रयोगों की योजना एवं अत्यन्त जीवन्त पात्रों की रचना होती है। कल्पना

१ See Principles of Literary Criticism J.A. Richards page 139-42.

का यह पक्ष ऐश्वर्य-विभाग से सम्बन्धित है। कालरिच ने इसके लिए ही कहा है कि यह ऐन्द्रजामिक संश्लेषमात्मक शक्ति जिसे कल्पना नाम से परिचित किया गया है, अपने को विरोधी स्थितियों और बिपन्न युक्तों के संतुलन एवं समन्वय में प्रकट करती है।

कल्पना के इन कार्यों से स्पष्ट है कि कल्पना काव्य-निर्माण के प्रत्येक क्षेत्र में कवि की सहायता करती है। काव्य के प्रत्येक क्षेत्र में हम कल्पना का प्रकाशन तीन रूपों में स्वीकार कर सकते हैं—(१) कथा में (२) चरित्र में और (३) प्रतिबन्धिता में। कथा और चरित्र में कल्पना किस प्रकार तभीत उदभावनार्थ और प्रतिबन्ध संयतन करती है, इसका विवेचन हमारा ध्येय नहीं है। यहाँ हम उसका केवल प्रतिबन्धिता में व्यक्त होने वाला रूप ही लेंगे। प्रतिबन्धिता में कल्पना मुख्यतः तीन रूपों में प्रकट होती है।

- (१) बिम्ब
- (२) प्रतीक
- (३) उपमा

बिम्ब की जर्था हम पिछले अध्याय में विस्तृत रूप से कर चुके हैं। यहाँ यहाँ उसकी जर्था अनावश्यक होगी। यहाँ हम अन्य दोनों कलात्मक प्रतिबन्धिताओं के रूपों को लेकर बिम्ब से उसके भेद एवं समेद की स्पष्ट करने और वेकने का प्रयत्न करने कि कल्पना के यह सभी रूप कहाँ तक एक दूसरे की सीमा रेखा को स्पर्श करते हैं।

प्रतीक और बिम्ब

कवि की कल्पना के निर्माण का एक स्वरूप प्रतीक है। प्रतीक का क्षेत्र बड़ा व्यापक है। गणित तर्कशास्त्र मनोविज्ञान धार्मिक कर्मकार्यों ज्योतिष आदि सभी क्षेत्रों में इसका प्रयोग होता है। परन्तु सभी में इसका स्वरूप भिन्न है। ऐतिहासिक प्रतीक तत्काल और भावधरा से सम्बन्धित होते हैं जबकि अन्य क्षेत्रों में प्रयुक्त प्रतीक कदा परम्परागत और सांकेतिक चर्च यात्र को ध्वनित करते हैं। बीजलिपि के प्रतीक कदा होते हैं धर्म एवं धार्मिक कर्मकार्यों के सम्बन्धित व सांकेतिकता एवं सांकेतिक ऐतिहासिक सम्बन्धों पर ध्वनित करते हैं। धर्म के क्षेत्र में प्रतीकों का इतना व्यापक और विविध महत्त्व माना गया है कि इन्हीं के आधार पर तात्विक भेद होने के कारण

बार्मिक सम्प्रदायों (creeds) को भी प्रतीक (symbol) कहा गया है।^१ ज्योतिष्य धादि क्षेत्रों के प्रतीक भी साहित्यिक प्रतीकों से भिन्न सत्ता रखते हैं। कभी कभी साहित्य के अन्तर्गत भी धर्म सम्प्रदायों धादि क्षेत्रों के प्रतीकों का प्रयोग होता है। जैसे सिद्ध और नाथ साहित्य में अथवा ठाण्डिकों धादि की परमयी अभिव्यक्ति में परन्तु इनको साहित्यिक प्रतीकों से भिन्न समझना चाहिये। सिद्धों एवं नाथों द्वारा प्रयुक्त पदस-कमल गंगा-यमुना योगिनी धादि प्रतीक साहित्यिक प्रतीक न होकर बार्मिक प्रतीक हैं जिनके अर्थ और अर्थ में किसी प्रकार का सादृश्य खोजने का प्रयत्न आज व्यर्थ ही है। सम्भवतः कभी उनमें किसी प्रकार का सामंजस्य किसी में अनुभव किया हो। वह एक प्रकार के चिन्ह (emblem or sign) के रूप में प्रयुक्त किये गए हैं। प्रतीक और उसके निहित अर्थों में साम्य का बीसा कोई आधार नहीं है। रूप बर्ण प्रभाव किसी भी प्रकार की नादृश्यता का उनमें अभाव है। कबीर के काव्य में प्रयुक्त मुख्यतः उलटबासियों में धार्मिक अर्थों के प्रतीक साहित्यिक प्रतीक के कुछ रूप की सत्ता अभिव्यक्त नहीं करते बितना कि बार्मिक कर्मकाण्डों की कुछ प्रतीकात्मक पद्धति को। उनके काहे ही नमिनी नू बुम्हमानी धादि पदों में नमिनी धादि साहित्यिक प्रतीक के सुन्दर रूप को प्रस्तुत करत हैं। पर आकासे मुख धौंवा कुम्पा पाठामे पनिहारि धादि पद हृद्योग साधना के प्रतीक हैं साहित्य के अन्तर्गत प्रवाल महत्त्व के अधिकारी भाव अगत् से उनका कोई सम्बन्ध नहीं है। न कवि के हृदय का तादात्म्य उनका साथ होता है न पाठक के हृदय की सहानुभूति ही उनके साथ है। इस प्रकार स्पष्ट है कि बर्ण ज्योतिष्य पणित धादि के प्रतीक साहित्यिक प्रतीक से भिन्न अर्थ एवं भिन्न सत्ता रखते हैं।

साहित्य के अन्तर्गत प्रतीक शब्द का बड़ा व्यापक व्यवहार होता है। जिससे साधारणतः उसके सही अर्थ समझने में अति हो जाती है। जिस प्रकार साधारण रूप से प्रयुक्त 'स्वयंता' अर्थ अर्थरहित 'स्वयंता' से भिन्न है वही प्रकार साधारणतः प्रयुक्त प्रतीक शब्द भी अभिव्यक्ति के एक विशिष्ट स्वरूप प्रतीक से भिन्न है। साधारणतः हम पाठकों को कहा की पटनामा को—समी को प्रतीक कह देत हैं।

^१ It appears as a term in logic, in mathematics in semantics and semiotics and epistemology it has also had a long history in the world of Theology (symbol is a synonym for creed) of liturgy of fine arts and of Poetry. The shared element in all these current uses is probably that of something standing for representing some else. Algebraic and logical symbols are conventional agreed upon signs, but religious symbols are based on something intrinsic, relation between sign and the thing 'signified' metonymic or metaphoric. The cross the Lamb the Good shepherd"
— Theory of Literature—Wellek & Warren p 193

हर विश्व, हर उपमान भी प्रतीक की योनी में एक लिया जाता है जबकि भूतत वह व्यक्तिगत के धार्मिक स्वरूप प्रतीक से विश्व होता है वस्तुतः कथा पाप, बटना उपमान बिना धार्मिक प्रतीकात्मक हो सकते हैं, प्रतीक नहीं। वह किसी धर्म धारण की व्यक्तिगत कर सकते हैं कोई धर्म संकेत वे सकते हैं पर धर्मिभ्यंजना में प्रकट होने वाले प्रतीक के रूप से उनका प्रयोग विश्व ही रहेगा। प्रतीकात्मकता धीर प्रतीक की विश्वता को ध्यान में रखने की आवश्यकता है। प्रतीकात्मकता या सांकेतिकता (संकेतिकता) विश्व प्रतीक का ही धर्म नहीं है बरन् काव्य का प्रत्येक पात्र प्रत्येक बटना यहाँ तक कि संपूर्ण काव्य प्रतीकात्मक हो सकता है पर वह प्रतीक नहीं है। प्रतीक का पर्याय रूप धार्मिकता में धापा के माध्यम से प्रस्तुत होने वाले सांकेतिक धर्म है जो कवि के मातृमय से संबंधित रहता है। यहाँ हय 'प्रतीक' धर्म का प्रयोग प्रतीकात्मक के व्यापक धर्म में न करके भाषा के एक सांकेतिक स्वरूप के धर्म में ही करते।

'प्रतीक' धर्म की व्युत्पत्ति संस्कृत के प्रतिबंध शब्द के धारणा पर हुई है। जिसका धर्म है प्रतिस्थान धर्म का एक वस्तु के लिए किसी धर्म वस्तु की स्थापना। संस्कृत साहित्य में प्रतीक के लिए 'उपमलप' शब्द धारा है। जिसके अनुसार जब कोई नाम या वस्तु इस रूप में व्यवहृत ही कि वह वस्तु इस गुण में धारण समान धर्म वस्तुओं के गुणों का ज्ञान भी कर दे तो उस शब्द को उपमलप कहा जा सकता है। परन्तु भाषानुिक समीक्षा में प्रतीक शब्द जिस भाव को व्यक्त करता है वह उपमलप से दूरित नहीं है। हमारी समीक्षा में वह धर्म धर्म की धर्म सिम्बल के पर्याय रूप में धारा है। सिम्बल धर्म की व्युत्पत्ति धीक क्रिया (symbolize) से हुई है जिसका धर्म है (throwing so-together chance encounter conflict, union in tension.) परन्तु इस धारणा का भाव विश्व (Symbol) धर्म में न रह सकता। जबकि इसी धर्म से उत्पन्न एक धर्म शब्द (symbol) धर्म भी विश्व (sign or token) धर्म के रूप में प्रयुक्त होता है पर सिम्बल धर्म स्वतन्त्र धर्मों में प्रकट हुआ। उक्त विकास स्वतः हुआ है। इस प्रकार स्पष्ट है कि सिम्बल धर्म या उसके पर्याय प्रतीक का विकास स्वतन्त्र रूप से हुआ है। सिम्बल में धीक क्रिया का भाव प्रकृत हा गया है प्रतीक में भी उपमलप का धर्म समान्य हो ही गया है।

प्रतीक के स्वरूप की समझने के लिए हमें सर्वप्रथम भारतीय धीर पारवात्य विद्वानों द्वारा की गई भाष्यताओं का अध्ययन करना अपेक्षित होगा। कल्पना धीर उसके धर्म क्षेत्रों की प्रति प्रतीक पर भी सर्वप्रथम पारवात्य साहित्यकारों ने विचार किया धीर इनके स्वरूप एवं नीमाओं की स्पष्ट व्याख्या प्रस्तुत की। भारतीय साहित्य में प्रतीक की विवेचना पाषुनिक युग से प्रारम्भ हुई जो मुख्यतः पारवात्य विद्वानों से प्रभावित रही। यहाँ पहुँचे हय पारवात्य विद्वानों, तदन्तर भारतीय विद्वानों के प्रतीक विषयक धर्मों का उल्लेख करते।

विश्वकोल के १२ वें अंक में प्रतीक का सवाल बेते हुए कहा गया है कि प्रमूर्त का मूर्त द्वारा प्रस्तुतीकरण प्रतीक है। उसका कथन है कि प्रतीक सत्य का प्रयोग उस दृश्य वस्तु के लिये होता है जो भक्तिष्क के सम्मुख किसी अप्रस्तुत वस्तु की सादृश्यता को अपने संबंध सूत्रों द्वारा प्रस्तुत करती है। यहाँ प्रतीक की अप्रस्तुत के प्रस्तुतीकरण की प्रवृत्ति और उसने संबंध सूत्रों व मूसभूत सादृश्यता को प्रमुख स्थान दिया गया है।

रहस्यवादी कवि कालरिज ने प्रतीक की व्याख्या कुछ भिन्न रूप में की। उसके सम्मुख प्रतीक का रूप एक पारदर्शी सत्ता का रूप या जिसमें छे वह 'सोच' अनन्त' विधेय सामान्य—सबका आभास प्राप्त कर सकता था। उसका कथन है कि प्रतीक का प्रमुख लक्षण है कि वह व्यष्टि में किसी विधेय सत्ता का अथवा विधेय में किसी सामान्य सत्ता का अथवा सामान्य में किसी विश्वव्यापी सत्ता का आभास देता है और सबसे ऊपर नन्दर म अनन्तर की मूलक उत्पन्न करता है।

कालरिज की यह परिभाषा प्रतीक के तात्त्विक विवेचन से अधिक उसके रहस्यवादी स्वरूप को प्रकट करती है। यद्यपि प्रमूर्त को मूर्त रूप में प्रस्तुत करने के प्रतीक के गुण को कालरिज भी स्वीकार करता है परन्तु उसका प्रतीक को केवल सत्य या अनन्त का आभास देने वाला अनन्तर की मूलक देने वाला कहना पूर्णतः उपयुक्त नहीं है यद्यपि रहस्यवादी कवियों जायसी कबीर, प्रसाद महादेवी आदि में ऐसी अतीन्द्रिय सत्ता का आभास देने वाली प्रतीक योजना मिल जाती है, फिर भी प्रतीक का रूप केवल यही है ऐसा नहीं माना जा सकता। सभी प्रतीकों का संबंध किसी अनन्तर सत्ता से ही है यह युक्तिमुक्त नहीं है। काव्य में प्रयुक्त अधिकांश प्रतीक सांख्यिक होते हैं और वह अतीन्द्रिय सत्ता के साथ साथ ऐन्द्रिय सत्ता और भौतिक अनुभवों एक भौतिक वस्तुओं को भी अभिव्यक्त करते हैं।

बैरेटर ने प्रतीक के विषय में बताया कि प्रतीक अपने संबंध सामंजस्य यदि अथवा संयोग से किसी अन्य वस्तु की ओर संकेत करता है परन्तु उसका उद्देश्य

1 The term (Symbol) given to visible object representing to the mind the resemblance of something which is not shown but realized by association with it. —Encyclopaedia Britannica, Vol. 21 p. 700

2 A symbol is characterised by a translucence of the special in the individual, or of the general in the special, or of the universal in the general, above all by the translucence of the eternal through and in the temporal. —The States Man's Manual, Complete Works, Vol. I —S T Coleridge pp 407-8.

समानता प्रपञ्च सादृश्यता नहीं है वह मुख्यतः किन्नी घटाय वस्तु का दृश्य संकेत है ।^१

वेबेस्टर की यह परिभाषा प्रतीक के सप्रथ रूप को प्रकट करती है। घटाय वस्तु के दृश्य संकेत को धार्तरिक प्रकम्पा के बाह्य व्यक्त रूप समझना संभव है। धार्तरिक प्रकम्पा में हम अनुभूति विचार और भाव धारि का स संकेत है। प्रतीक उन्ही का प्रतिमिचित करने है। प्रतीक के मूल में सादृश्य प्रपञ्च प्रकम्पा है परन्तु उक्त उद्देश्य सादृश्य नहीं है। वैसे भी धार्तरिक प्रतीक सादृश्य या साधर्म्य पर निर्मित न होकर प्रभाव साम्य की भूमिका पर स्थापित होते हैं। उदाहरण के लिए अत्यन्त प्रचलित प्रतीक गुल व फूल को देखा जा सकता है। यह सामान्यतः गुल-गुल स्वन प्रसन्नता के प्रतीक है। यहाँ इन भावा और वस्तुओं में जो प्रतीक रूप में प्रस्तुत हुई है अन्य किसी प्रकार का सादृश्य न होकर प्रभाव का साम्य ही है। कम और धर्म का साम्य भी प्रतीकों में होता है जैसे सुन्दरी नायिका के लिए चन्द्र कमल धारि के प्रतीक। परन्तु धार्तरिक प्रतीक रूप या धर्म के साम्य पर निर्मित न होकर प्रभाव साम्य के आधार पर ही निर्णय होत है। स्पष्ट है कि वेबेस्टर का मत कि प्रतीक का उद्देश्य समानता या सादृश्यता प्रस्तुत करना नहीं बल्कि भाव का सांकेतिक रूप प्रस्तुत करना है पूर्वतः उपयुक्त है। प्रतीक का उद्देश्य साधर्म्यता या समानता नहीं बल्कि भाव-सम्बन्धता है।

W H Auden ने प्रतीक और उसके धर्म सम्बन्ध को स्पष्ट करते हुए प्रतीक की व्याख्या इन प्रकार की है—“प्रतीक का धर्म उसकी अपनी अनुभूति के आधार पर स्पष्ट होता है उसका धर्म निश्चित नहीं होता है कोई भी दो व्यक्ति एक ही प्रतीक के दो विन्म-विन्म परिणाम निजात संभव है।”

१ Symbol is that which stands for or suggests something by reason of relationship, association, convention or accident but not intentional resemblance especially a visible sign for something invisible, as an idea, a quality or a totality such as a state or a church. Webster quoted by William Tindall. *The Literary Symbol* page 6

२ A symbol is felt to be such before any possible meaning is consciously recognized i.e. an object or even which felt to be more important than reason can immediately explain. A symbol correspondence is never one to one but always multiple and different persons perceive different meanings. — W. H. Auden quoted by W. Tindall—*The Literary Symbol*, p. 21

प्रतीकात्मक धर्मों में पूर्ण भिन्नता संभव नहीं है। अनेक परस्पर सम्बन्ध रखने वाली भावनाएँ अन्तस्मय संश्लेषित हो सकती हैं। वह धर्मों में उतना निश्चयात्मक नहीं है जितना विन्धु भादि। प्रतीक के अर्थ इसी कारण पारस्परिक सम्बन्धित कई रूपों के हो सकते हैं। उदाहरण के लिए दुस्र पीड़ा निराशा व्यथा आदि के प्रतीक कभी इनमें से एक कभी दो और कभी सब भावनाओं को व्यक्त करते हैं। बीटस में उत्कृष्ट कला के विषय में कहा जा कि सच्ची कला सांकेतिक और प्रतीकात्मक होती है। उसका प्रत्येक भाकार प्रत्येक भाव प्रत्येक ध्वनि प्रत्येक वर्ण किसी अर्थपूर्ण तत्व का संकेत होता है। पर उसके प्रतीकों की निश्चयात्मकता गणित की निश्चयात्मकता और स्थिरता नहीं होती।^१

Poetic Process के लेखक बायसी प्रतीक को प्रतीकात्मकता के व्यापक धर्म में प्रस्तुत करते हैं, जहाँ उसके भाकार में प्रत्येक प्रतीकात्मक एवं सांकेतिक वस्तु का समाहार हो जाता है।^२ इस व्यापक रूप में प्रतीक की व्याख्या करते हुए वे कहते हैं कि प्रतीक सुविधा के लिए काव्य में उस प्रधान वस्तु के लिए प्रयुक्त होता है जो काव्य में प्रमुख और विशेष अर्थवान होती है। और इस रूप में प्रतीकात्मक विशेषण काव्य की पूर्ण परिपक्वता को प्रकट करता है।^३ वहाँ प्रतीक का धर्म प्रतीकात्मकता से लिया गया है जिसका अर्थ बड़ा व्यापक है। इसमें प्रतीक के साथ साथ उपमा, रूपक बिना समी को समाहित कर लिया गया है। इस कारण यह परिभाषा प्रतीक के अर्थों स्वल्प को प्रकट न करके काव्य की प्रतीकात्मकता के स्वल्प और महत्व को स्पष्ट करती है।

धारणाएँ हाउसर में भी प्रतीकात्मकता के विषय में लिखा है। वह कहते हैं प्रतीकात्मक भाषा वह है जिसमें बहिरांक अन्तर्लोक का हमारी धारणा और मन का प्रतीक होता है। प्रतीकात्मक भाषा अथवा प्रतीक का वह स्वल्प भी एहसासवादी अर्थवा

१. True art is expressive and symbolic and makes every form every sound, every colour every gesture, a signature of some analysable essence. The permanence which symbols ensure however is not the permanence or certainty of Mathematics. Yeats, quoted by George Whalley — Poetic Process, p 164

२. Poetic Process—George Whalley p 166.

३. .. the term symbol may conveniently be reserved for those poetic events which we recognize to be specially valuable, those poetic entities which bring value most sharply into focus. The adjective symbolic then refer to the fullest development in Poetic — Poetic Process George Whalley, p 166

४. Symbolic language is the language in which the world outside is a symbol of the world inside, a symbol for our soul and mind

Arnold Houser Symbols and Values p, 231

बाधवादी है। साहित्यिक प्रतीक के तात्त्विक विश्लेषण का इसमें अभाव ही है।

पाश्चात्य विद्वानों द्वारा प्रस्तुत प्रतीक के इन समूहों में कार्टरिज आराल्ड हाउसदर आदि की परिभाषाएं मुख्यतः रहस्यवादी हैं और रहस्यवादी रचनाओं में प्रयुक्त प्रतीक के रूप को ही केवल स्पष्ट कर पाती हैं। उनमें सम्पूर्णता का अभाव है। अन्य सभी परिभाषाएं उसके प्रतिस्थापन या अमूर्त के मूल संकेत के स्वल्प को स्पष्ट करती हैं और यह सज़न अपने आप में पूर्ण है। इन सबके आधार पर कहा जा सकता है कि प्रतीक किसी अदृश्य या अमूर्त सत्ता का मूर्तीकरण है जो अपने सम्बन्ध या परम्परा द्वारा आकार ग्रहण करता है। प्रतीक प्रत्येक मानवीय अनुभूतियों को व्यक्त करने का एक मूल माध्यम है जो धीरे धीरे व्यापक प्रयोगों में आनुति के द्वारा निश्चित धर्म ग्रहण करता है। हिन्दी विद्वानों ने प्रतीक की अर्था को पाश्चात्य समीक्षकों से ही ग्रहण किया और उसके समस्त रूप को अपनाया है। हिन्दी साहित्य कोष में प्रतीक की परिभाषा इस प्रकार की गई है।

प्रतीक शब्द का प्रयोग सद्यः दृश्य (अथवा गोचर) वस्तु के सिधे किया जाता है जो किसी अदृश्य (अगोचर या अमस्तुत) विषय का प्रतिबिम्बित उसके साथ अपने साहचर्यके कारण करती है अथवा कहा जा सकता है कि किसी अन्य स्तर की समानुक्त वस्तु द्वारा किसी अन्य स्तर के विषय का प्रतिनिधित्व करने वाली वस्तु प्रतीक है। अमूर्त अदृश्य अथवा अमस्तुत विषय का प्रतिबिम्बित मूलतः दृश्य अथवा प्रस्तुत विषय द्वारा किया जाता है।^१

हिन्दी के अन्य समीक्षकों ने प्रतीक के विषय में बहुत अधिक नहीं लिखा है। जिन्होंने प्रतीक की अर्था की भी है उन्होंने प्रायः प्रतीक के इतनी कामों और इतनी स्वल्प का विष्टेपण मात्र किया है। प्रतीक की कोई नवीन व्याख्या इनमें नहीं प्राप्त होती। सामान्य रूप से यही अद्यतन प्रतीक के लिए सहाय्य है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि प्रतीक किसी अदृश्य या अमूर्त सत्ता के दृश्य और व्यक्त रूप है यही धर्म उपमान और विन्ध का भी है। अस्तुत प्रतीक उपमा या रूपक के अतिरिक्त संस्करण है अथवा उन्हें रूपकविशेषोंके भी कहा जा सकता है जिसमें उपमेय के स्थान पर उपमान प्रयुक्त किया जाता है।^२ प्रतीक के लिए यह आवश्यक है कि उनके उपमेय और उपमान में पूर्णपर सम्बन्ध हो वह केवल एक अथवा मात्र मही वस्तु अथवा उपमेय महत्व है वह जीवन की अर्धभूमि से ही रूप प्राप्त करता है। इसी कारण सभी विद्वानों ने प्रतीक और मान के संबन्ध मूल पर विशेष धन दिया है। सम्बन्ध मूल का अर्थ है कि प्रतीक उस परिस्थिति उस आधुनिक में पहले रह चुका हा जिसका वह उसे प्रतिबिम्बित करता है। परिस्थिति विशेष या अर्थ विशेष के अभाव में अथवा कोई धर्म ही नहीं रह जाता। अर्थ की अवेक्षा और

^१ हिन्दी साहित्य कोश, १, ४०१

^२ आधुनिक हिन्दी कविता में अर्थपर विचार—डा० अमरीश न० विद्या, १, १३१

परिस्थिति की परिचितता ही प्रतीक को रूप प्रदान करती है। 'प्रतीक जीवन के प्रवाह में स्नात होकर ही धर्म प्राप्त करते हैं। यथार्थ जीवन के साहचर्य से ही उनमें धर्म बढ़ते या बढ़ते हैं। मनुष्य के व्यक्तिगत अनुभव से असम्पृक्त रह कर न तो उनमें धर्म घाता है न व्यक्तित्व।' प्रतीक का विकास सामान्य से विशेष का विकास है। प्रारम्भ में वह बस्तुएं मानवीय अनुभूतियों भावनाओं एवं परिस्थितियों के साध सामान्य रूप से व्यक्त होती हैं। क्रमांतर में वही उस परिस्थिति भाव या अनुभूति विशेष की चोतक बन जाती है। इसी तथ्य को स्पष्ट करते हुए डा. ह्यूगो जॉन सर्मा ने अपनी पुस्तक 'काव्य और कला' में लिखा

सब तो यह है कि प्रतीक की सर्वना सम्भव नहीं इसका आविष्कार होता है अर्थात् जो पदार्थ है उसी को धोक निकाला जाता है। यह बुध मानस में कल्पना और पसता है। कोई भी पदार्थ प्रतीकार्थकता तभी ग्रहण करता है जब बुधमान धनजाने ही उसे स्वीकार कर ले और प्रतीक का सारा धर्म या अभिप्राय समझना न पड़े। जब कोई पदार्थ प्रतीक बन जाता है तब वह साधारण हाते हुए भी असाधारण धर्म-शक्ति का विस्तार करने लगता है।^१

प्रतीक का काव्य में क्या उपयोग है अथवा काव्य में वह क्या कार्य करता है इसकी चर्चा करते हुए हिन्दी साहित्य कोश में कहा गया है कि प्रतीक कई काम कर सकते हैं—

- (१) किसी विषय की व्याख्या करना
- (२) उसको स्वीकृत करना
- (३) वातावरण का रूप प्रस्तुत करना
- (४) गुप्त या अज्ञित अनुभूतियों को जाहृत करना
- (५) अलंकरण या प्रशयन का साधन होना।^२

काव्य में प्रतीक किसी न किसी रूप में यह सभी कार्य करते हैं परन्तु उनका प्रमुख कार्य है बस्तु के या भाव के आध्यात्मिक अथवा मानसिक धर्मों का प्रतिनिधित्व करना। इस कारण प्रतीक का सबसे बड़ा गुण उसकी प्रतिनिधित्व करने की शक्ति अथवा व्यञ्जनारमकता है। अनुभूति भाव या बस्तु की सम्यक व्यञ्जना ही प्रतीक का प्रथम और अंतिम उद्देश्य है उसका एक मात्र कार्य है।

प्रतीक की व्यञ्जनारमक शक्त के विषय में डा. संवरद्विस ने लिखा कि प्रतीक विज्ञान में व्यञ्जना का मुम जितना ही अधिक होया उतनी ही सफ़लता प्रतीकार्थक अभिव्यक्ति के द्वारा मिलती। अन्वेषित प्रतीक पर ही आश्रित रहती है जिस प्रस्तुत में जितना ही अधिक प्रतीकार्थक होगा उत पर की गई अन्वेषित भी उतनी ही सुन्दर

१ कल्पना और कला—२ बरतक सिद्ध १ १०

२ कल्पना और कला—२० हरद्वार ज्ञान शाला, १०-७२

३ हिन्दी साहित्य कोश—० ४७१-७२

विश्व और कल्पना

घोर मार्मिक होगी। इसलिए कल्पना व भाव जगत को प्रायोजित करने के लिए प्रतीकों में व्यञ्जकता परमावश्यक मानी गई है।^१ प्रतीकों में व्यञ्जकता का कारण घटित को बनीभूत करने की प्रयुक्त समता है जिसके कारण काव्य में बहु विधेय महत्व का अभिकानी बनता है। व्यञ्जकता धर्यात् अपने शब्दों के उच्चारण से घटिक धर्य सामर्थ्य प्रतीक को उत्कृष्टता प्रदान करती है। काव्य में भाव या वस्तु की व्यञ्जना ही प्रतीक का मुख्य कार्य है।

प्रतीकों को मुख्य रूप से तीन भागों में विभक्त किया जा सकता है—

(१) वैयक्तिक प्रतीक (प्राइवेट सिम्बल्स)—जो मुख्यतः व्यक्तिवार्ता कवियों में पाया जाता है। धार्मिक नये कवियों में इस प्रकार की प्रतीक योजना अधिकतर प्राप्य होती है।

(२) कठिण प्रतीक (ट्रिडिशनल सिम्बल्स)—जो परम्परा से काव्य में बने आ रहे हैं। प्राचीन कवियों ने नये प्रतीकों की खोज कम की है उनमें इसी प्रकार की प्रतीक योजना अधिक प्राप्य होती है।

(३) प्राकृतिक प्रतीक (नेचुरल सिम्बल्स)—जो आचार्य जनमानस के हाथ प्रयुक्त होते हैं घोर महत्त्व ही भावों का सामन्वय बन जाते हैं क्योंकि उनमें शब्द की एक ही परम्परा संयुक्त रहती है।

प्रयोगों के आधार पर भी प्रतीकों का वर्गीकरण किया जा सकता है। प्रयोग के आधार पर उनके दो प्रमुख विभाग किये जा सकते हैं (१) कड़ घोर (२) स्वच्छन्द।

(१) कड़—(घ) परम्परागत प्रतीक—कड़ प्रतीकों का प्रथम रूप परम्परागत है। परम्परागत प्रतीक वैयक्तिक साहित्य में बहुत प्रयुक्त होत हैं। हिन्दी के प्राचीन घोर मध्यकालीन कवियों की प्रतीक योजना इसी श्रेणी की है। कबीर न हंस यदि को आत्मा के प्रतीक रूप में प्रयुक्त किया है जो परम्परागत है धार्मिक कवियों में भी ऐसी प्रतीक योजना प्राप्य हो जाती है। पंथ की कुछ पत्थियाँ यहाँ उदाहरण रूप में प्रस्तुत की जा सकती हैं—

देखू जग के दर की बानी
किसने दे बया बया चुने पूल

1 The greater the suggestive quality of the symbol used, the more answering emotion it looks in those to whom it is addressed, the more truth it will convey. A good symbolism therefore, will be more than mere diagram or mere Allegory. It will use to the utmost the resources of beauty and passion. It will not to the clever brain but to the desirous heart the intuitive sense of man—Mysticism. E. Underhill. p. 13

सय के छवि उपवन के प्रकृत ?

इसमें कवि किससम कुसुम शून ।^१

यहाँ प्रयुक्त कवि किससम कुसुम शून आदि प्रसन्नता धानन्व पीड़ा, श्यावादि के चिर परिचित प्रतीक हैं। पंथ के यह प्रतीक परम्परागत प्रतीकों की श्रृंखला की श्रृंखला हैं।

(घा) साम्प्रदायिक प्रतीक—साम्प्रदायिक प्रतीक भी बढ़ होते हैं। साम्प्रदायिक प्रतीकों में स्वभाव ही के कारण इनके स्वरूप को एक निश्चितता प्राप्त होती है। निश्चयानुसार होने के कारण उनमें व्यञ्जनात्मकता का प्रभाव रहता है जिससे वह काव्य में विशेष प्रभावोत्पादक नहीं बन पाते। साम्प्रदायिक कवियों ने ही प्रतीक योजना बहुधा प्रयुक्त होती है। हिन्दी में माधो सिद्धों आदि का साहित्य इस प्रकार के प्रतीकों से भर पड़ा है। कबीर आदि में भी ऐसी प्रतीक योजना उपलब्ध है। बामसी ने सिद्ध और माधो के साम्प्रदायिक बिम्बों का पर्याप्त प्रयोग किया है।

गढ़ तस बाँक बँस तोरि कस्य परसि बेसु तँ मोहि की छाया ।

पाइव नाहि कृति हठि कीगै ब्रह्म पावा तेह आगुही कीगै ।

नी पीरी तेहि नइ मासिपारा घी तेहि चिरहि पाँच कोटपारा ।

बसब कुधार मुपुत एक नाकी अगम बड़ाव बाद सुठि बाँकी ।

बहा गढ़ नव पीरी पाँच कोटबास बसबाँ डारु कमरा शरीर नव इन्द्रिय च प्राण और ब्रह्म रंज क प्रतीक हैं जो साम्प्रदायिक हैं। कवि की भावनात्मकता का विषय इनसे कम होता है यह प्रचलित कवि पर पड़े साम्प्रदायिक प्रभाव को स्पष्ट करते हैं।

(२) स्वच्छन्द—(घ) प्राकृतिक प्रतीक—काव्य में सर्वाधिक संख्या प्राकृतिक प्रतीकों की ही होती है। इन प्रतीकों का प्रयोग प्रायः सामाजिक पद्धति पर होता है जिसमें कल्पना साम्यान्तर सम्बन्ध योजना के द्वारा अर्थों का उत्कर्ष उपस्थित करती है। प्राकृतिक प्रतीकों का प्रयोग प्रत्येक अच्छे कवि के काव्य में प्रचुर रूप से मिलता है। प्राचीन और आधुनिक सभी कवियों ने इसका प्रयोग बहुतायत से किया है। प्रसाद की पंक्तियों में प्राकृतिक प्रतीकों का प्रयोग द्रष्टव्य है।

शशा शकोर मर्जन वा बिजली भी नीरव मासा

पाकर इस शून्य हृदय की सबने घा डैरा बाला ।^२

यहाँ शंभा शकोर मर्जन नीरवमासा व बिजली सभी प्रकृति के उपकरण हैं जो पीड़ा श्यावा अन्तर्द्वन्द्व आदि के प्रतीकात्मक अर्थ में प्रयुक्त हुए हैं।

(घा) साम्प्रदायिक या रहस्यवादी—साम्प्रदायिक एवं रहस्यवादी प्रतीक

१. कविता-संग्रह पृ. १०

२. शब्द—प्रसाद पृ. १५

श्रीर कल्पना

सांस्कृतिक प्रतीकों के काफी निकट हैं परन्तु दोनों में पर्याप्त विभक्ता भी है।
 सांस्कृतिक प्रतीक रूप होते हैं उनमें कवि की अपनी धनुमुक्ति प्रपञ्च कवि के अपने
 चिन्तन का कोई यागदान नहीं रहता जबकि रहस्यवादी प्रपञ्च धार्मिक प्रतीक
 कवि के अपने चिन्तन श्रीर कल्पना से उत्पन्न मनोमूर्तियों के द्वारा धार्मिक प्रतीक
 श्रीर धार्मिक प्रतीक प्रतीक का प्रतिनिधित्व करत हैं। यद्यपि दोनों ही धार्मिक श्रीर
 धार्मिक का संकेत देने का प्रयत्न है परन्तु दोनों की निमाण-प्रक्रिया श्रीर रूप में
 पर्याप्त अन्तर है। महादेवी जी की कविता की रचनाओं में रहस्यवादी प्रतीकों की
 धार्मिक उल्लेखनीय है

इस यथा बहु सर्व्व निमग्न ।
 उसमें हृद की मेरी छाया
 मुझे में ऐसी ममता माया
 प्रथु हास में बिह्व समाया
 जेह रहे से धार्मिकी—
 प्रिय । जिसने परदे में गुप्त हूँ ।

यहाँ सर्व्व धार्मिकी ही हूँ-नुम धार्मिक धार्मिक प्रतीक हैं जो जीवन के
 प्रथम उनके धार्मिक श्रीर प्रत्यक्ष व परीक्षा प्रतीक को व्यक्त करते हैं।

(१) धार्मिक प्रतीक—धार्मिक प्रतीकों का प्रयोग धार्मिक प्रतीक प्रतीक प्रतीक
 प्रतीक प्रतीक में ही हुआ है। प्राचीन श्रीर धार्मिक प्रतीकों में भी यद्यपि अपनी
 धार्मिक धनुमुक्ति का योग रहता था पर उनकी धार्मिक प्रतीक प्रतीक प्रतीक प्रतीक
 नहीं बनती हैं। कई कविता श्रीर मये गुप्त की कविता में ऐसे प्रतीकों का विधान प्रायः
 मिल जाता है। परिचितता के अभाव के कारण ऐसे प्रतीक धार्मिक प्रतीक श्रीर
 धार्मिक रहते हैं।

प्रतीक के साथ महादेवी श्रीर कल्पना के परधान चिन्तन में एक सन्तुष्ट धार्मिक
 उनकी समाप्तता—धार्मिक प्रतीक भी धार्मिक है। बिना श्रीर
 प्रतीक दोनों ही कल्पना से हो रूप हैं। इस कारण उनमें धार्मिक समाप्तता हैं परन्तु
 फिर भी दोनों एक नहीं हैं दोनों की अपनी मिल्न मिल्न मीमांसा हैं।

प्रतीक मूल में चिन्तन ही होता है। काव्य में निरन्तर प्रयुक्त होने होने बहु प्रतीक
 का स्वरूप धार्मिक करते हैं उन्हें रूप का सन्निवृत्त संस्करण इसी कारण कहा जा सकता
 है। बहु धार्मिक के कारण ही निरिच्छत धार्मिक प्राप्त करत हैं। पिछरी धार्मिक निरिच्छत
 के अन्तर्गत धार्मिक श्रीर धार्मिक न चिन्तन के द्वारा प्रतीक की उत्पत्ति के इस धार्मिक का
 इस प्रकार प्रस्तुत किया है। चिन्तन करने पहले एक रूप के रूप में प्रयुक्त होता है,
 पर निरन्तर उन्हीं निरिच्छत धार्मिक में रूप व प्रतिक्रिया बनकर उत्पन्न होते हैं तब बहु

प्रतीक बन जाते हैं।^१ इसका बड़ा स्पष्ट उदाहरण आयसी के पद्यावध से ही उद्धृत किया जा सकता है। पद्यावध में सामान्यतः भ्रमर कमल प्राणि चम्ब रत्नसेन और पद्यावती के प्रतीक बनकर प्रयुक्त हुए हैं पर उनका मूल बिम्ब है। पद्यावध में प्रथम बार जहाँ कवि रत्नसेन के लिए भ्रमर चम्ब का उल्लेख करता है वहाँ उसका रूप बिंब का ही है। यही भ्रमर के कमल या मानती से प्रेम करने के बम को रत्नसेन पर आरोपित किया गया है। कवि कहता है

बस मानसि कह संबर बियोगी तस घोहि जाग होइ यह जोयी ।

सिधस बीप जाइ घोहि पाबा सिद्ध होइ चितवर से प्राबा ।

प्रबवा पद्यावती का रूप वर्धन गुन कर उषा की धवस्था में कवि भ्रमर और कमल का बिम्बवत् प्रयोग करता है

हीरामन जो कमल बज्जाना सुनि राजा होइ संबर मुलाता ।

घाये घाउ परतंग उजियारे कहूहि सो बीप परतंग कै मारे ।

यही कमल भ्रमर व मानती जो कथा के प्रारम्भ में उपमान के रूप में प्रयुक्त हुए हैं कथा के अनन्त हीरे हीरे प्रतीक का रूप धारण कर लेते हैं। यह उपमाएँ कवि के मानस में उस निश्चित धर्म की छोटक बन जाती हैं जो वह उनके द्वारा व्यक्त करता है। अतः भाव व्यञ्जना के लिए केवल उपमान का रूप ही पर्याप्त प्यता है। उपमेय की आशयकता न कवि को रहती है, न पाठक को। कथा के मध्य भाग से कवि उनका प्रतीकात्मक प्रयोग करने लगता है

संबर जो पाबा कंबल कहू बहु चिता बहु केलि ।

घाइ परा कोइ हसित तंहू चूर गयज सब केलि ।

यहाँ प्रयुक्त भ्रमर और कमल दोनों ही प्रतीक हैं। इससे स्पष्ट प्रतीत होता है कि किनी भाव या विचार धववा वस्तु का धमिष्यवत् करने के लिए कवि के मानस में एक उपमान या एक बिम्ब निश्चित हो जाता है। प्रारम्भ में कवि उसका सर्वांग रूप में धर्मान् उपमान और उपमेय—राजा का उल्लेख करके—वचन करता है पर धर्म निश्चित हो जाने के कारण कासास्तर में वह उची उपमान को बिना उपमेय का उल्लेख बिने प्रयोग करता है और हम इसी प्रयोग को प्रतीक कहते हैं। काव्य में धमिष्यवत् का विकास बिंब से प्रतीक की ओर होता है। प्रारम्भ में प्रत्येक कवि की रचनाएँ बिंबों से युक्त होती हैं पर धीरे धीरे कर वही उपमान बराबर एक निश्चित धर्म में प्रयुक्त होने के कारण प्रतीक बन जाते हैं।

१ Primarily we think, in the recurrence and persistence of symbol. An 'image' may be invoked once as a metaphor but if it persists recurrently, both as presentation and representation, it becomes a symbol.

प्रतीकवादी कवि यौट्स न बीली के प्रतीक विधान क सम्बन्ध में इसी प्रकार की मान्यता की अभिव्यक्ति की है। उसने कहा कि उसकी कविता के प्रत्यक्ष चित्रों में प्रतीक जैसी कोई निश्चयारमकता नहीं है परन्तु कुछ प्रबन्ध ही प्रतीक के कुछ रूप को प्रकट करते हैं। यह वह हैं जो समय के बीतने के साथ साथ अधिकारिक प्रतीकारत्मक चर्चों में प्रयुक्त होने लगे हैं। ऐसे उदाहरणों में उसके मुफामों और पुम्बों के चित्रों को लिया जा सकता है।^१ आलोचक T H Wicketed ने भी ब्लैक (Blake) के पहले गीतों (Songs of Innocence आदि) के लिये कहा कि उसमें यथार्थ प्रतीकारमकता बहुत कम है पर एक निश्चित चर्चों में निरन्तर प्रतीकारत्मक रूपों का प्रयोग प्रबन्ध है।^२ इसी प्रकार प्रसाद के घामू आदि प्रारम्भ की रचनाओं में भी ऐसे बिम्ब प्रयुक्त हुए हैं जो कामान्तर में प्रतीकारत्मक चर्चों में बँसे बसत आदि। बसंत प्रारम्भ में यौवन का उपमान बन कर धारा है पर परवर्ती रचनाओं में (कामा यनी) में वह यौवन का प्रतीक बन कर धारा है।^३ अन्य कवियों में भी इसी प्रकार उपमानों का आकृति के आधार पर प्रतीकारत्मक प्रयोग हुआ है। वस्तुतः काव्यात्मक अभिव्यक्ति में प्रतीक और बिम्ब कभी भी एकदम बृचक सत्ता धारण किये नहीं रहते। उनका रूप प्रायः मिमा बुला रहता है। जिसका चर्च यह होता है कि उनके प्रतिस्तर का सही रूप सामने न आकर कवि की अनुभूतियों या भावनाओं का प्रतीकारत्मक चर्च सामने धारा है।^४

उदाहरण के लिए आधुनिक कवि गोपालदास नीरव का प्रयोग देखिये—

जो बुलाव के फूल छू लये जबसे धरत धरावन मेरे।

ऐसी धँस बसी है मन में, सारा जग मनुबन लबता है।^५

यहाँ पुलाव के फूल, गन्ध मनुबन कमरा धरत, मादकता व सौम्य लोक के प्रतीक हैं। ये प्रतीक भाव को तीव्रता के साथ प्रबन्ध प्रस्तुत करते हैं, पर भाव की

१ One finds in his poetry beside innumerable images that have not the definiteness (Fixity) of symbols many images that are certainly symbols, and as the years went he began to use these with more and more deliberately symbolic purpose such images as caves and towers. —Yeats quoted by Welleck & Warren — Theory of Literature, p 194

२ There is comparatively little actual symbolism but there is constant and abundant use of symbolic metaphor —Ibid. 194

३ कालचक्र—प्रस्ता १० ३३

४ A poem generally comprises many images symbols and metaphors fused into oneness by imaginations resulting in a symbolic representation of experiences. —Realism & Imagination—Joseph Chhari, p. 111

५ गीत भी बघीत थी—नीरव १ १७

समग्र अभिव्यक्ति करने में यह समर्थ नहीं है। इसके लिए कवि ने प्रतीकों से साध साध उपवन गुसाब घादि का पूरा रूपक भी प्रस्तुत किया है। गन्ध स्पष्ट घादि की संवेदनाओं में इसे धीरे धीरे अधिक जीवन प्रदान किया है। प्रेम की अनुभूति धीरे जागृतता की समग्र अनुभूति प्रतीक और बिम्ब दोनों के द्वारा पूर्ण होती है। स्पष्ट है कि काव्य में प्रतीक और बिम्ब अनेक रूपों में सम्बन्धित हैं। दोनों की सामंजस्यमयी अभिव्यक्ति ही काव्य को उत्कृष्टता प्रदान करती है।

यद्यपि प्रतीक मूल रूप में बिम्ब है और काव्यात्मक अभिव्यक्ति में भी उनका स्वल्प विभिन्न-या रहता है परन्तु दोनों एक नहीं हैं। दोनों में अनेक समानताएँ होने के साथ साथ अनेक विभिन्नताएँ भी हैं। बिम्ब प्रतीकारणक अर्थों में प्रमुक्त अवयव हो सकते हैं पर वे प्रतीक नहीं हैं। उनमें कुछ मौलिक अन्तर है। अब हम उनके अन्तर को समझने का प्रयास करेंगे।

प्रतीक और बिम्ब का सर्वप्रथम अन्तर यह है कि प्रतीक अधिकतर जातीय चेतना के आधार पर निर्भर रहते हैं जबकि बिम्ब के निर्माण में व्यक्ति को अपनी चेतना विधाधीन रहती है। वे जातीय चेतना से उतने सम्बन्धित नहीं हैं जितना व्यक्तिगत चेतना से। यद्यपि बिम्ब के उपकरणों का भी जातीय चेतना से परिचित होना आवश्यक है परन्तु वह जातीय चेतना से जीवन प्राप्त नहीं करता। प्रतीक इसके विपरीत जातीय चेतना द्वारा ही जीवन प्राप्त है। फूल-खुस प्रातः-आयं घादि प्रतीकों में जीवन के प्रवाह में रगत होकर ही अर्थ प्राप्त किया है। बिम्बों के रूप में यही उपकरण कवि की चेतना एवं वैयक्तिक कल्पना द्वारा अभिव्यक्त रूप में प्रस्तुत होकर भी गहन और उत्कृष्ट बन सकते हैं। प्रतीक भी परा कथा केवल वैयक्तिक कल्पना के आधार पर निर्मित होते हैं जैसे मये कवियों में परन्तु उनकी सफ़लता सदिग्ध ही ही रहती है। जन साधारण के माथ में उनका कोई निश्चित अर्थ नहीं होता इस कारण काव्य में यह विशिष्टता का आभास तो अवश्य करा देता है, भाव की अनुभूति उनका द्वारा यथावित रूप में नहीं हो पाती। इसी कारण सामान्यतया काव्य में बही प्रतीक प्रयोग किया जाता है जो परम्परा से हमारे जीवन में बसे आ रहे हों। साधारण जन चेतना में जिसका एक निर्मित हो चुका हो। कवि को बेचन उन्हें ढूँढ़ने की आवश्यकता होती है। इसी कारण डॉ० हरिद्वारी साता अर्थों में कहा है—प्रतीक की सर्वना समझ नहीं इनका आधिकार होता है अर्थात् जो पराच है उसी को खोज निकाला जाता है। यह युग मानस में अगमता और पसता है।^१ इस प्रकार स्पष्ट है कि प्रतीक यद्यपि बिम्ब के बहुत निकट है परन्तु दोनों के अर्थों में बहुत अन्तर है। एक समाज की चेतना पर निर्भर करता है दूसरा कवि (व्यक्ति) की चेतना पर।

^१ Images are used symbolically but they are not symbols. —Realism & Imagination — Joseph Chitri p. 111

प्रतीक और बिम्ब में ब्रह्मण एक बड़ा स्पष्ट अंतर है। प्रतीक सदैव एक भाव या वस्तु का प्रतिनिधित्व करता है जबकि बिम्ब एक वस्तु का अभिव्यक्त न करके पूरे बिम्ब पूरे दृश्य की मूर्ति करता है। धार्मिक सिद्धि के लुईस ने कहा है कि एक उत्कृष्ट बिम्ब प्रतीक का ठीक उल्टा होता है। प्रतीक साक्षर होता है और केवल एक वस्तु का प्रतिनिधित्व करता है जैसे एक प्रकृ एक मनुष्य को प्रदर्शित करता है। काव्य में बिम्ब कभी-कभी ही प्रतीकार्थक भव्य होते हैं। वे अपने संदर्भ के कारण भाव व्यक्तता में सम्पन्न होते हैं जिसमें प्रत्येक पाठक की भावनाएँ उसके अपने अनुभवों के आधार पर व्यक्त होती हैं। प्रतीक में समग्रता का बह गुण नहीं होता जो बिम्ब का एक विशेष गुण है। प्रतीक की साक्षरता उसमें तीव्रता ही व्यक्तता ला देती है पर वह समग्रता व्यक्त भाव या विचार की पूर्णता बिम्ब के अभाव में नहीं आ सकती। इसी कारण उत्कृष्ट रचनाओं में प्रतीक और बिम्ब दोनों साथ-साथ प्रयुक्त होते हैं। प्रतीक तीव्रता प्रयत्न आकाशमक गहराई लाता है और बिम्ब समग्रता। प्रतीक केवल एक भाव या विचार को प्रस्तुत कर सकता है जबकि बिम्ब भाव और विचार को उस की समग्रता में अभिव्यक्त करत है।

इस स्वतंत्रता अन्तर्गत के प्रतिरिक्त बिम्ब और प्रतीक में बड़े अंतर अन्तर भी है। प्रतीक का उद्देश्य है भाव या विचार का प्रतिनिधित्व करना यद्यपि उनका अर्थ है कि बिम्ब का उद्देश्य है भाव या विचार को मूर्त रूप देकर प्रेक्षणीय बनाना। प्रतीक में पक्षि ऐन्द्रियता और रसनीयता होती है पर उसका उद्देश्य भाव या विचार का प्रतिनिधित्व करना है। प्रतीक का उपयोग भावों या धर्मों को मूर्तता देने के उद्देश्य से नहीं किया जाता परन्तु स्मृत व साक्षात्क वस्तु को मानसिक एवं धार्मिक रिक्तियों के आधार पर समग्र भावों या विचारों का अर्थ वाहक मानकर प्रस्तुत किया जाता है। प्रतीक स्मृत विचारों को मूर्तता प्रदान करता है। इस रूप में ही प्रतीक और प्रतिमा एक दूसरे के विपरीत होते हैं। प्रतिमा मूर्त की स्मृत रूप देती है और प्रतीक उच्च स्मृत को मूर्त बनाया जाता है। प्रतीक में भाव व मानसिक और धार्मिक धर्मों का अर्थ दिया जाता है जबकि बिम्ब में भाव को दृश्य बनाने का प्रयत्न किया जाता है। प्रतीक काव्य में पहचान और तीव्रता लाने के लिये सकि- निरुता लाता है स्मृत को मूर्तता देता है और बिम्ब काव्य को प्रेक्षणीय व साक्षात्क नीम बनाने के लिए मूर्त और धर्म धर्मों को स्मृत और रूप मूर्त बनाता है। प्रतीक

१ An intense image is the opposite of a symbol. A symbol is denotative, it stands for one thing only as the figure 1 represents one unit. Images in poetry are seldom purely symbolic, for they are affected by the emotional vibrations of their context so that each reader's response to them is apt to be modified by his personal experience. — Poetic Image — C. Day Lewis, p 40-41

ब बिम्ब का यह उद्देश्यगत अन्तर दोनों के उपयोग और कार्य क्षेत्रों में भी अन्तर सा होता है जिनका उल्लेख उपयुक्त परिस्थितियों में किया जा सका है।

समष्टि में बिम्ब और प्रतीक दोनों ही कल्पना के दो रूप हैं और काव्य की उत्कृष्टता के परिचायक हैं परन्तु उनमें अनेक समानताएँ एवं बिभ्रिमताएँ हैं। मूल रूप की समानता होने लिये भी उनमें अनेक रूपगत और उद्देश्यगत अन्तर हैं, उनके उद्गम स्थानों में भी भिन्नता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि प्रतीक और बिम्ब कल्पना के दो भिन्न स्वरूप हैं जिनकी सीमारेखाएँ एक दूसरे को स्पर्श करती हैं पर उनका क्षेत्र अलग अलग ही है।

उपमान और बिम्ब

अब तक हमने प्रतीक और उसके संदर्भ में बिम्ब को समझने का प्रयत्न किया। अब हम कल्पना के एक अन्य प्रमुख रूप उपमान के साथ बिम्ब का सम्बन्ध देखने का प्रयत्न करेंगे।

काव्य में उपमान का स्थान विशिष्ट है। समस्त अर्थात्कारों का क्षेत्र उपमान का ही क्षेत्र है। सभी सादृश्य मूलक अलंकार जिनमें वैषम्य व अतिशय को भी लिया जा सकता है उपमान या उपमा के अन्तर्गत ही आते हैं। अण्ण्य बौद्धि कहते हैं कि काव्य कवी रंगशास्त्र में उपमा कवी मटी चित्र भूमिका के भेद से अनेक रंग रूपों में आकर नापती हुई काव्य मर्मज्ञों का मनोरञ्जन करती है। उपमानों का क्षेत्र बड़ा व्यापक है साथ ही काव्य में वह विशिष्ट महत्त्व का अधिकारी भी है। पण्डित राज शेखर ने कहा कि उपमान अलंकारों की मुख्य भूमि है काव्य सम्पत्ति का सर्वस्व है और मेरा कहना ही यह है कि उपमान कवि बंध की माता क सम्मान है।^१ मनी अलंकार को मुख्यतः अर्थों के साम्य वैषम्य या अतिशय के आधार पर निर्मित होते हैं उपमानों के अन्तर्भूत भा आते हैं। पण्डित रामबहिन मिश्र ने उपमानों का व्यापकत्व का कारण बताते हुये कहा उपमा ही समता मूलक अलंकारों की विशेषता है और बहुत व्यापक है। कारण यह है कि सांसारिक कोई भी पदार्थ जब दृष्टिगत या अलग होता है तब हम उसकी तुलना करने सबसे हैं यह कितने समान है ऐसा कोई पदार्थ है या नहीं? अर्थात् यह उपमा उस वस्तु के आकार प्रकार की या रूप रस की या पुन अर्थों की जाती है। जहाँ समता नहीं होती वहाँ विरोध दिखाई देता है। किन्तु समान रूप रंग गुण अर्थवामी वस्तुओं की अतिशयता के कारण विरोध उतना व्यापक नहीं है फिर भी ज्ञान प्रह्ला का वह भी एक साधन है।^२ वस्तुतः वैषम्य और अतिशय का अर्थ

१. अनेकशैलीय संप्रदाय चित्र भूमिका विश्व

रचयिता काव्य रंगे मूल्यहीन विद्या अन्तः।

—अलंकार शिखर

२. अलंकार शिखर अलंकार काव्य संग्रहण।

उपमा कवि अलंकार अलंकारिण अतिशय। —अलंकार शिखर

३. काव्य में अलंकार शिखर—रामबहिन मिश्र १ १००

मानव के सहज कीदृश्य व उसका रूप रस-गुण धर्म को प्रकाशित करने की प्रवृत्ति से होता है उपमाओं की योजना भी इसी के द्वारा होती है। धन उपमाओं का क्षेत्र केवल समता मूलक धर्मधारों तक ही नहीं विपरीत धीर प्रतिनाम मूलक धर्मधारों तक भी है।

पाश्चात्य साहित्य में प्रयुक्त मेटाफर (रूपक) शब्द बहुत कुछ अर्थों में उपमान का ही समानार्थी है। यह केवल एक अलंकार मात्र नहीं है, बल्कि व्यापक रूप में समस्त धर्मधारों का मूल है। उपमा की जैसी व्यापकता पाश्चात्य साहित्यकारों ने रूपक में स्वीकृत की है। आलोचक हरबर्ट रीड ने इसे समानता का सहज प्रकाशन माना था। 'आलोचक जे० एम० मरे ने भी शब्द को अत्यन्त प्रमुख स्थान दिया है। उन्होंने अपनी पुस्तक में लिखा है कि काव्य रचना में जहाँ भी कवि सन्निवृत्ता चाहता है वहाँ उसे अतिशय रूप में रूपक का आशय लेना पड़ता है। समानता या तुलना रूपक के द्वारा ही प्राप्त होती है।' कवि काव्य रचना करने में अपने भावा और अनुभूतियों की अतिशय अलंकारों में प्रस्तुत करना चाहता है वहाँ यदि वह अपने धर्मधारों और अनुभवों का रूप के द्वारा प्रस्तुत करता है तो उसकी मिश्रित अनुभूतियाँ भी सहज प्राप्त हो जाती हैं इसीलिए काव्य रचना में कवि को अतिशय रूप से रूपक का आशय करना पड़ता है। रूपक के विषय में लिखता हुआ लेखक बेसी ध्यान देता है कि रूपक में कवि की भावनाएँ अतिशय स्वतन्त्रता रखते हुये भी एक तार में अनुस्यूत हो जाती हैं रूपक मर्मों को अत्यन्त रूप में प्रस्तुत करने का प्रयुक्त

- Herbert read, in English prose style, admirably described metaphors as 'the swift illumination of an equivalence. —quoted by George Whalley—Poetic Process p 145.
- Try to be precise, and you are bound to be metaphorical you simply can not help establishing affinities between all the provinces of the animate and inanimate world for the volatile essence you are trying to fix is quality and in the effort you will inevitably find yourself ransacking heaven and earth for a similitude. —The Problem of Style — J.M. Murry
- The poet's task, in composing a poem, is to discover and fashion in words an equivalent for the complex state of feeling and awareness which accompanies paradigmatic experience. He must give a precise body to those feelings he is not concerned to describe either the feelings or the physical objects with which those feelings may have been historically associated. — Poetic Process. G Whalley, p. 139

उपमान के क्षेत्र में नहीं रखा जा सकता। इस प्रकार स्पष्ट है कि उपमान सर्वत्र बिम्ब नहीं होता और न ही बिम्ब सर्वत्र उपमान होता है। उनका क्षेत्र भिन्न है। यद्यपि उनमें निकट्य पर्याप्त है।

(घा) बिम्ब और उपमान में एक घतर और भी है और वह यह कि उपमान भावहीन भी हो सकता है परन्तु बिम्ब सर्वत्र भाव का उपकारक बन कर ही काव्य में प्रयुक्त होता है। बिम्ब का उद्गम भाव है और उसका सत्य भी भाव की अभिव्यञ्जना है। पर उपमान के साथ भाव प्रावश्यक नहीं है, उपमान का सत्य सादृश्य प्रकृति समानता उपस्थित करना है भाव या विचार को प्रकट करना नहीं। यद्यपि उनके द्वारा भाव एवं विचारों की सम्यक अभिव्यक्ति होती है पर उनकी प्रकृति में समानता का अधिक महत्त्व है। भाव को उद्गीष्ट न करने पर भी उपमान की उल्लासनी रहती है। उपमान कभी कभी तो मात्र चमत्कार की सृष्टि के लिए माये जाते हैं भाव का उनके कोई विशेष सम्बन्ध नहीं रहता। जैसे

प्रिय संक जनु मांस न तापा दुई छड नलिनि मनि जस तापा
जब किरि जनी बैसि नै पाळै घठरी इन्द्र केरि जस काळे
जबहि जनी मनु भा पडिताऊ धबहुं बिसिदि लागि मोहि भाऊ ।
मोहि क पवन छपि घठरी बई मई प्रसोप नहीं परमट नई ।

पपवा

बैनी कारी पुहुपुपु से निकसा जमुना घाड़ ।
पुवा नंद अमंद सी सेवुर सीस बड़ाइ ।

यहाँ चमत्कार की दृष्टि प्रबल रही है। ज्ञाने या भृवत्क से पद्मावती की कमर की क्षीणता समुचित रूप में सामने नहीं आती बल्कि यह उपमान वस्तु को उपहास का उपकरण और बना देते हैं। द्वितीय उदाहरण में काव्यनिक साम्य है जो विशेषतः बुद्धि बस के आचार पर निर्मित हुआ है जिससे भाव का कोई विशेष उपकार नहीं होता है। स्वतिरेक प्रतीप रूप आदि के रूप में प्रस्तुत उपमानों में अधिकतर रूप आदि में बिम्ब नहीं बन पाते। स्वतिरेक और प्रतीप में तो उपमान होठ हुए भी बिम्ब का एकांत प्रभाव रहता है। इसी प्रकार प्रतिनवोक्ति पूर्ण उपमान भी भाव के उपकारक कम चमत्कार के अन्वेषण अधिक होठ हैं। प्रस्तुत के निम्नलिखित प्रतिनवोक्ति पूर्ण वर्णन में भी भाव का उपकार कम हुआ है:

पुहुपु सुर्वय करिहि सब घाता मकु हिरगाइ सेइ हम बासा ।
अपर बसन पर नासिक सीमा दरिब देख गुमा मग लोभा ।
पंजन कुहुं बिसि कैसे कराही कुहुं बत रस को पाव को नाही ।
बैकि अमिय रस अबरहि अयऊ नासिका कीर ।
पवन बात पहुचारी अत रस छांड न तीर ।

यहाँ उसके नेत्रों नाक घाघर के लिए क्रमशः केंद्रन तोटा और दाहिम उपमान दिया गया है। जो प्रतिपत्ता के कारण अधिक मात्र ब्यंजक नहीं बन पाया है। यहाँ उपमान मात्र ब्यंजना में सहायक नहीं है। इसके विपरीत बिंब सदा मात्र का उपकार ही करते हैं बिंब रूप में घरीर ही काव्य की आत्मा बन जाता है। मात्र की सत्ता उसमें प्राथमिक है मात्र और बिंब का प्रतिफल पृथक पृथक नहीं रखा जा सकता। स्पष्ट है कि मात्र के आधार पर उपमान और बिंब पृथक पृथक घना प्रतीत होते हैं।

(४) उपमान और बिंब का एक बड़ा स्पष्ट अन्तर भी है वह यह कि उपमान का सम्बन्ध भाषा से अधिक है और बिंब का मात्र से। उपमान भाषा का अन्तर्गत ही किसी न किसी रूप में उपकार करता है परन्तु बिंब का भाषा सीम्बल से कोई नैकरूप नहीं है। उपमान यदि भाषोपकार न भी हुआ तो काव्य की धसकृति का साधन तो घबदय हो जाता है। बहुत से रूपकों उपमानों प्राप्ति के अन्तगत भाषे उपमान कभी कभी केवल भाषा की धसकृति के लिए लाए गये जान पड़ते हैं जैसे केवल भाषा में। जायसी में भी ऐसी उपमान योजना है पर उसकी मात्रा बहुत कम है। केवल का एक उदाहरण इत्येव है

किमी बहु राजपुत्री, बरही बरी है किमी
उपरि बरपो है बहि, सोभा धमिरत हो।
किमी इति रतिपाम बस साध कंसोवास।
बात तपोवन सिध वंद सुभिरत ही।
किमी मुनि प्राप्युत किमी बहुरोप रत
किमी तिष्ठिपुत सिद्ध परन बिरत ही।
किमी कोऊ ठग हो ठगोरी लीगुँ किमी तुम।
हरि हर भी ही शिवा बाहुत किरत हो।

यहाँ राम के लिए कवि ने शापघस्त मुनि बहुरोप मुक्त व्यक्ति और राम उपमान भी प्रस्तुत किये हैं। ऐसा समता है कि कवि की हार्दिक अनुभूति यहाँ नहीं है वह सर्विध धर्मकार को पूर्ण करने के लिए इतर स्वर के उपकरण चुन रहा है और इत अवल में जो भी उसके हाथ भाया है जाहे वह मात्र का अपनारक ही क्यों न हो कवि ने प्रयोग कर दिया है। अन्तकार और धसकरक भी प्रकृति प्रचान होने के कारण ये उपमान मात्र का उपकार नहीं करते और सफल बिंबों की व्योमी में भी नहीं जा सकते। अन्तकार के कारण कवि की बिम्बगतक अनुभूति तो बिम्बगतित ही हो गई है। उपमान बरिध भाषा से किसी न किसी प्रकार का धसकरण या सीम्बलबर्जन करते हैं जो अधिकतर बाह्य होता है। पर बिंब का प्राथमिक गुण धसकरण नहीं है बरन् मूर्तता प्रतिपाद्य है। यद्यपि बिंब भी धसकरण करते न सहायक होते हैं परन्तु धसकरण में सहयोग न देने पर भी वे अष्ट बन सकते हैं। प्रस्तुत वर्णन के बिंबों में वह व्यक्त स्पष्टता ही मिल पड़ता है। इसके अतिरिक्त बहुरोप का भाषाव्योमी

आदि के रूप में बिम्ब को प्रस्तुत किया जाता है वहाँ भी वह धरतकार की श्रेणी में नहीं आ सकते। यथा

मै तिसि दति अस ससि परयती
राजै बेसि पुहुमि फिर बसती।

राशि में राजा ने रानी के समृद्ध सौन्दर्य को देखा तो उस महान आश्चर्य हुआ क्योंकि उसके द्वारा उजाड़ी गई भूमि (धरती सौन्दर्य भूमि) पुनः पौष्टी ही बस गई थी। मुहाबरे के रूप में प्रयुक्त यह बिम्ब भाषा में किसी धरतकार की योजना नहीं करता पर भावोद्बोधन की अपूर्व क्षमता और ऐश्वर्य साक्षरता के कारण अष्ट बिम्बों की कोटि में इसकी मणना हो सकती है।

स्पष्ट है कि बिम्ब और उपमान काफी निकट होते हुए भी एक नहीं हैं। उनमें कुछ बड़े मौलिक अंतर हैं जो उनके अस्तित्व को पृथक् पृथक् कर देते हैं।

उपमानों का मूलधार साम्य है वहीं उपमान निर्माण का प्रमुख कारण है। साम्य का आधार बिम्ब में भी रहता है परन्तु बिम्ब का निर्माण साम्य के आधार पर ही नहीं होता उसके निर्माण में कवि की कल्पना का भूतिकर्षण व्यापार प्रधान है। काव्य में इस साम्य के आधार पर उपमान के कई रूप हो जाते हैं। अधिकांश बिम्बों में साम्य का कोई न कोई रूप धरत रहता है। अब हम उपमान का रूप और उससे बिम्ब की निकटता या दूरता का ज्ञान करने के लिए उपमान के रूपों के आधार पर बिम्ब और उपमान के सबबों का विचार करेंगे।

उपमानों का प्रयोग काव्य में मुख्यतः चार प्रकारों से किया जाता है

- | | | |
|-----|-----------------------|-------------------------|
| (१) | मूर्त प्रस्तुत के लिए | अमूर्त उपमान का प्रयोग। |
| (२) | अमूर्त | मूर्त |
| (३) | मूर्त | मूर्त |
| (४) | अमूर्त | अमूर्त |

डा० सावित्री सिन्हा ने अपने छोटे ग्रन्थ में उपमान योजना की एक प्रणाली और बताया है वह है अमूर्त/मूर्त रूप उपमान योजना। जहाँ एक ही प्रस्तुत के लिए चाहे वह मूर्त हो या अमूर्त मूर्त तथा अमूर्त दोनों ही प्रकार के उपमान नियोजित किये जाते हैं। इस प्रकार की योजना करते समय कवि को इन बातों के लिए सतत जागरूक रहना पड़ता है कि उसका विधान कहीं दुरुपलब्ध न हो जाय। 'सम्भवतः' ऐसे प्रयोग मात्स्येयमा आदि में मिल सकते हैं। उपमानों के प्रयोगों की इन प्रणालियों के आधार पर अब हम यह देखेंगे कि उपमानों के इन प्रयोगों से बिम्ब का क्या सम्बन्ध है।

(घ) मूर्त अस्तुत के लिए अमूर्त उपमानों का प्रयोग— मूर्त वस्तु के लिए प्रस्तुत अमूर्त उपमान प्रभाव और धर्म साम्य पर निर्मित होते हैं और काव्य के भाव को तीव्र करना उनको धरती रहता है, उसको दृग् बनाना नहीं। ऐसे प्रयोग छायावादी कवियों में बहुतायत से मिलते हैं। मध्य कालीन कवियों में इस

प्रकार की उपमान योजना का प्रभाव सा है। फिर भी कुछ उदाहरण मिल सकते हैं जैसे रामचरितमानस में

सोस समय सारंभ नूप पयक नीकयी येह
पबनु निहुरता निकट किय बनु बरि बैह लनेह ।^१

यहाँ बछरब और नीकयी के लिए क्रमशः स्नेह और निन्दुरता समुक्त उपमान आए गए हैं का हृदयगत भावनाओं के स्पष्टीकरण से मात्र का तीव्र कर देते हैं उनके बरिषों की बिद्येयता भी इन उपमानों में प्रकट हो जाती है। इसी प्रकार कावची में भी परमावत में एक समुक्त उपमान दिया है

पियर पास बुक सरि निपाते
मुज पाली अपनी होइ राते ।

बुक के समान पीने पत्तों को मझकर वृत्त पवहीन हो गये हैं, उनकी जगह बुक के साथ पल्लव निकल आये। यहाँ पीने पत्तों और नव किसमों के लिए समुक्त उपमान बुक वृत्त दिये गये हैं। परन्तु इस प्रकार के उदाहरण बहुत ही कम हैं। मूल के समुक्त उपमान छामाबादी काव्य की बिद्येयता है पंथ की बरब, निपता की बिद्येयता आदि कविताओं के उपमान इस प्रकार की उपमान योजना की प्रभावी का प्रकटा रूप प्रस्तुत करते हैं। जायसी ने और एक स्थल पर राती के बिमान के लिए समुक्त उपमान की योजना की है

रैतकलन बाइ बैबानु पुरुवा मन सो धरिबक मगन सो ऊ बा ॥

परन्तु इस प्रकार की प्रस्तुत योजना में बिम्ब का स्पष्ट रूप सामने नहीं आता एक धस्पष्ट ही मानसिक समुद्रुति ही प्रबन्ध होती है जिसके आधार पर हम रूप का कुछ धामास कर लेते हैं परन्तु वह धामास धरिबकतर बुचना और बहुत धस्पष्ट होता है। रूप का होना बिब के लिए आवश्यक है। रूप का धर्म यहाँ नव बव धरिब भी है। धर्मात् उपमान में एन्द्रियता आवश्यक है। समुक्त या दृश्येन्द्रिय धर्म ही नहीं ऐन्द्रियधर्म भी नहीं होती। परत समुक्त उपमान योजना में स्पष्ट और सफ़्त बिम्ब नहीं निर्मित होत। एत स्थलों पर साथ में प्रमुक्त किमायो बिद्येयता के साथ चाहे रूप का कुछ धामास हमें हो साथ पर वह उतना स्पष्ट नहीं होता किता मूर्त उपमानों का हो सकता है। किमाओं और बिद्येयता से समुक्त उपमानों में प्रबन्ध कुछ भासता या जाती है जैसे इन वर्णनों में

१—धरिबक के उर में पठ कर

उठवाकींसाओं से तरवर ।^२

२—कमी लोन धी लम्बी होकर,

कमी लुपि सी फिर हो बीन ।^३

१ रामचरितमानस अयोध्याकांड सुकसी ५० ११५

२ ११५६ पंथ ५ २८

३ पल्लव पंथ ५ ११

३—धीरे धीरे संजय से उठ

बड़ प्रपयस से झीझ बरछोर ।

जम के डर में उमड़ मोहू से

कैस लागता से निशि मोर ।^१

इन्हें सब प्रमूर्त उपमानों के साथ क्रियाएँ उठ उठकर लम्बी होकर पीम होकर उठकर बड़कर उमड़कर फसकर धारि कमस उन्हाकासाओं लोम तृप्ति उंसय प्रपयस मोहू भालसा उपमानो को कुछ रूप प्रदान करती हैं परन्तु फिर भी उपमान की प्रमूर्तता के कारण बिम्ब पूर्णतः स्पष्ट नहीं हो पाता। यहाँ हम अपनी इत्थना से क्रिया के आधार पर काल्पनिक मूर्तता माने का प्रयास करते हैं। धीरे इस प्रकार बिम्ब की प्रपूर्त अनुभूति कर पाते हैं। अतः यह स्पष्ट कहा जा सकता है कि प्रमूर्त उपमान ऐंद्रियता के अभाव में बिम्ब यत् पूर्णता को प्राप्त नहीं कर पाते।

(धा) प्रमूर्त के लिये पूर्ण उपमान योजना—प्रमूर्त भावों धीरे विचारों की पूर्ण उपमान योजना मात्र को दृश्य बनाने के लिये की जाती है। प्रकृत्य रूपामित होने पर सहज प्रेयनीय हो जाता है इंगीलिय मन्त कवियों से लेकर प्रायः के प्रयति धारी प्रतीकवादी कवियों तक न इस प्रकार की योजना की है। मध्ययुगीन कवियों में ऐसे उपमानों का बाहुल्य है। जायसी मूर धारि में ऐसे उपमान बराबर मिल जाते हैं। जैसे

बिरहू हस्ति तन तालेँ छाड़ करेँ तन बूर ।

बैय छाड़ पिय बाजहु पाजहु होइ सहर ।

मनवा मूर का

मेरो मन मनत कहा मुख पाई

जैसे उड़ि जहाज को पंछी पुनि जहाज पै पाई ।

ब—धन में नाथ्यी बहुत गुपाल

काम शेष को पहिरि खोलना बंठ विषय की माल ।

यहाँ बिरहू मन काम शेष जैसे प्रमूर्त विषयों के लिये कमस हाटी पंछी धीरे बरतों का रूप दिया गया है जो मुखर बिम्बारमक बजन की धनी में घाटा है। धारुनिक कवियों में भी इस प्रकार की उपमान योजना पर्याप्त हुई है। जैसे

(१) जल छटा स्नेह—बीपक सा नबनीत हृदय पा मेरा ।

धन शेष धूम रैला से बिभित कर रहा धंधेरा ।^२

(२) ऐ हिम के संज्ञावात जभी तुममें जीवन की संघाएँ ।

मल यई मुनहनी फसलों सी लवियों की पकी सम्पतायें ।^३

१ धारुनिक कवि—सुन्दरनारायण शंकर

२ धाँपू—अपराधर प्रमत्त

३ मूर का धन—सिद्धिचन्द्रमाल मालु, १, १२

यहाँ स्नेह को बीपक हृदय को मन्वीर और विरह दग्ग को भूम रेखा से चिह्नित किया गया है। त्रितीय उदरम म धदियों की परिपक्व सम्पत्ताओं के लिये पकी पुमहसी पदसों का उपमान बिम्बा गया है। मूर्त उपमान योजना में सदैव सुन्दर बिम्बों का निर्माण हाता है। बिम्ब की रूप की धावदयकता को यह उपमान पुरा करते हैं। भाव के इन मूर्तीकरण में एन्द्रियता धावदय धा जाती है। अधिकतर धमूर्त भावों को सहज और प्रेषणीय बनाने क लिये मूर्त बनाकर प्रस्तुत किया जाता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि धमूर्त भावों को धावदा धमूर्त बिम्बों के लिये की गई मूर्त उपमानों की योजना सदैव बिम्बात्मक हाती है। ऐसी बिम्ब योजना कवि की अंष्टता का प्रतिपादित करती है।

(६) मूर्त के लिये मूर्त उपमान—इस प्रकार की उपमान योजना धावि कांछत बिम्बात्मक हाती है। मूर्त उपमान में रूप रस संघ धावि सनी हाता है इसलिये बिम्ब का निर्माण नी सहज ही हो जाता है। नहीं कही तो ऐसे स्वसों पर प्रस्तुत और धप्रस्तुत दोनों ही बिम्ब प्रस्तुत कर सकते हैं। इस प्रकार की उपमान योजना प्राचीन साहित्य से लेकर मनीन साहित्य तक में बराबर हाती धाई है। मध्य युगीन व धाधुनिक सनी कवियों ने इसका बहुमता से प्रमोव किया है—

(१) मई भोजन पद्मावलि धारी, धाव धौरें सब करी अंधारी।

धंवर धाव सुधुधे अंठु पाठा, धग धैधा तेइ धैम धुधाता।

(२) प्रधरी धाव उर्धधी धौरनी में हुम की धावा से।

लधा सध के धुक से धैसे धावि धाहर निधनी हो,
धाकि धौरनी स्वयं स्वयं प्रतिधा में धान धनी हो।*

(३) रात के कज्जल लिलिर में किलनिधाली

धाव की कंधध किरन सी कीन धुम हो।†

यहाँ पद्मावली उर्धधी और प्रेमली के लिये कल्पना धाई, धावि व धांदनी एव धाव की कंधध किरन धावि मूर्त उपमान प्रस्तुत किया गया है। यहाँ प्रस्तुत और धप्रस्तुत दोनों ही मूर्त हैं और दोनों स्वसों पर ही बिम्ब योजना करने में उपमान पूर्ण समय हुए हैं। उपमान रूप को धाविक प्रधावोत्पादक रूप म प्रस्तुत करने के लिये मूर्तता का धाधय ही लेते हैं। इसमें उनका रूप स्वतः रूप रस संघ से युक्त हो जाता है। धौर ने सहज ही बिम्ब का रूप धारण कर लेते हैं। समष्टि में सनी मूर्त उपमान धावि बहु केवध धनकार के लिये नहीं है बरन् भाव धावना के लिये है तो सदैव बिम्ब प्रस्तुत क्यते हैं। समय ऐन्द्रियता एव धावोद्दीपन की सामर्थ्य होने से बिम्ब स्वतः ही निर्मित हो जाता है।

* धरती : दिग्धट. ३ ३

† धावलीत : धौरव ३ ३२

(४) धर्मूर्त के लिए धर्मूर्त योजना—धर्मूर्त के लिए धर्मूर्त योजना काव्य में अपेक्षाकृत कम होती है। मध्ययुगीन सारी कविता—ज्ञान व भक्तिपरक या शृंगार परक—ये इसका अभाव सा है। धार्मिक कविता में भी इसके उदाहरण कम ही मिलते हैं। प्रसाद ने कुछ ऐसे सफल प्रयोग प्रकल्प किये हैं जैसे कामायनी के चिन्ता सर्व में —

विकस रही वो मर्मबदना कदना बिन्दन कङ्काली-सी
वहाँ धकेली प्रकृति पुन रही हसती सी पङ्काली सी ।^१

यहाँ मर्मबदना की तुलना करण विकस कङ्काली से भी मर्द है। दोनों धर्मूर्त हैं। इस प्रकार की उपमान योजना में भी बिम्ब निर्मित नहीं हो सकता क्योंकि मूर्तता रूप रस गंध धादि की अनुभूति का इसमें अभाव है और मूर्तता के अभाव में बिम्ब की स्थिति असम्भव है। यह पहल ही बताया जा चुका है। इस प्रकार के उपमान अर्थ अप्रस्तुत होने पर भी बिम्ब की दृष्टि से महत्वहीन होते हैं, यहाँ भी किन्हीं क्रियाओं विवेचना के द्वारा धर्मूर्त को मूर्तित करने का प्रयास कर सकते हैं, परन्तु समग्रता के अभाव के कारण बिम्ब बिभूतमित ही रहता है।

(५) मूर्तमूर्त रूप उपमान—यहाँ एक ही वस्तु के लिए कई प्रकार के मूल अथवा धर्मूर्त उपमानों की योजना की जाती है। इस प्रकार की उपमान योजना मानोपमा या उल्लेखों धादि में बड़ा कवि एक ही रूप के लिए विभिन्न प्रकार के चित्र साटा है—पायी जाती है। ऐसे स्थानों पर कुछ उपमान धर्मूर्त होते हैं और कुछ मूर्त। उदाहरण के लिये —

बहु दृष्ट हैव के मन्विर की पूजा सी
बहु दीप सिद्धा सी घात भाव में लीन ।
बहु क्रूर कास लाडल की रिमुति देखा सी
बहु दूरे तप की कुन्दी लता सी बीन
बलित भारत की बही विषया है ।^२

यहाँ बलिभ भारत की विषया मूर्त प्रस्तुत के लिए मन्विर की पूजा काल की स्मृति देता—वो धर्मूर्त और दीप सिद्धा व सता—वो मूर्त उपमान किये गये हैं। यहाँ एक तो रूप की समग्रता सामने नहीं आती दूसरे धर्मूर्त उपमानों के बीच-बीच में आने से बिम्ब बिभूतमित हो जाता है। कवि की बिभस्पना से उत्पन्न इन रूप विभों में मूर्त उपमान का बिम्ब विधान करत ही है। धर्मूर्त उपमान का भी मानस साधारण पाठक कर सकते हैं। अधिनीगत ऐसे वर्णों में बिम्ब बिभूतमित-सा हो जाता है। कवि कभी-कभी एसी उपमान योजना के रूप में भी अप्रस्तुत को रसता है जो समग्रता और भावोद्दीपन में सहायता नहीं करती अतः वहाँ बिम्ब सम्पूर्ण नहीं

१ कविता प्रसार १ ४

२ ५२-त निरुक्त,

होता। प्रमूर्त और मूर्त बिम्बों के बीच-बीच में घा जाने से बिम्ब की समग्रता में व्यापकता पहुँचता है।

समष्टि में कहा जा सकता है कि बिम्ब रूप में उपमान के प्रयुक्त होने के लिए उसमें मूर्तता होना आवश्यक है। इसी कारण मूर्त उपमानों में सबसे उत्कृष्ट बिम्ब योजना लिखित रखी है और प्रमूर्त उपमानों में प्रत्यक्षता के प्रभाव के कारण एक घस्पष्टता एक भ्रम-मा बना रहता है। हम उसका पूरा मानस साक्षात्कार करने में असमर्थ ही रहते हैं। अंत में कहा जा सकता है कि मूर्तता बिम्ब की विशेषता है अतः वहाँ उपमान मूर्त रूप में प्रस्तुत होता है वहाँ उत्कृष्ट बिम्बों की योजना होती है।

प्रसंगिकता का आधार साम्य है। किसी भी प्रसंगिकता के लिए गुण धर्म प्रभाव प्रायः किसी न किसी प्रकार का साम्य आवश्यक होता है। शुकस जी ने प्रसंगिकता का विवेचन करते हुए लिखा है— प्रसंगिकता प्रसंगिकता का विधान सादर्य का आधार पर होता है— सादर्य की योजना दो दृष्टियों से की जाती है। स्वल्प बोध के लिए और मात्र सीध करके क लिए। कवि लोग सदा वस्तुएं मात्र सीध करके क लिए ही प्रसंगिकता लाया करते हैं पर बाह्य कारणों से अगोचर तथ्यों के स्पष्टीकरण के लिए वहाँ सादर्य लाया जाता है वहाँ कवि का मध्य स्वल्प बोध भी रहता है। कवि सादर्य की योजना प्रस्तुत क रूप गुण या प्रभाव को दिखाकर प्रस्तुत को प्रसंगिक भाव प्रेरित और प्राकृतिक बनाम के लिए किया करता है। सादर्य में धर्म प्रभाव प्रायः की समानता का भी समाहार हो जाता है।

साम्य को दो स्वरूप बिम्बों में विभक्त किया जा सकता है—

(अ) रूप साम्य अर्थात् बाह्य साम्य।

(आ) गुण धर्म व प्रभाव साम्य अर्थात् आंतरिक साम्य।

(अ) रूप साम्य— रूप साम्य का क्षेत्र बड़ा व्यापक है। प्राचीन कविता से

सैकर प्राकृतिक गुण की कविता के प्रायः से अधिक उपमान सम्भवतः रूप साम्य के आधार पर ही निर्मित हुए हैं। रूप साम्य का अंतर्गत ही धर्म-साम्य आता है। अधिकांश में कवियों ने प्रस्तुत के द्वारा वस्तु के रूप और रूप को स्पष्ट किया है। प्रयुक्ति के लिये जायसी ने समग्र पद्यावली में केवल दो ही उपमान बिम्ब हैं जिनकी बार बार प्राप्ति हुई है यह है—

१—रानी सुकल मुना सब गयल × × × ।

यहमे यही चौर के कर, धानु यमन अनु नयतगह मरा ।

२—नैन सीप धामुहि तत भने जामठु मोतिह गिराहि सब डरे ।

यह दोनों ही बिम्ब रूप साम्य पर आधारित हैं। प्रथम में रूप (बह) साम्य प्रभाव है और द्वितीय में रूप और आकार का साम्य के लिये लाया गया है।

नक्षत्रों भरा गगन नेत्रों के आकार को प्रकट नहीं करता बरन् रंभों को प्रकट करता है। पद्यावली के नेत्र नीस बर्ण के ये बिसमें नक्षत्रों की भांति सज्जेद-सज्जेद प्रसङ्ग प्रभु बिन्दु भरे हुए थे। द्वितीय साम्य मोठी भरी सीपी का बिया गया है जिसमें बर्ण प्रप्रधान है आकार प्रधान है। पद्यावली के नेत्र छीपियों के आकार के ये और उधमें भरे जम बिन्दु मोठी की भांति प्रतीत होते थे। इस प्रकार यह दोनों उपमान पद्यावली क नित्रा का रूप प्रस्तुत करते हैं। रूप साम्य क साथ-साथ इसमें सुन्दर बिम्ब निर्माण भी - रूप और रंग क उस्सेख के कारण—स्वतः ही हो गया है। बायसी के अधिकांश उपमान रूप साम्य पर ही आधारित हैं। एक स्थल और दृष्टम्ब है—

इसन स्याम पातह रंग पासे, बिहुंसत कबंस भंबर प्रस ताके ;

जमतकार मुख भीतर होई, जस बरिख प्री श्याम मकोई ।

जमई बोलि बिहुंसि जो बारी बीसु जमक बस निंसि धबिपारी ।

इसमें सभी उपमान बर्ण साम्य पर आधारित हैं। शक्ति के उपमान में बोटों का रूप कुछ घा जाता है परन्तु उसके साथ कवि ने श्याम मकोई का प्रयोग किया है जिससे प्रतीत होता है कि रंग साम्य ही उसे धमीष्ट रहा होगा। अन्य उपमान कबंस और भ्रमर' व रात के धर्मिरे म जमकती बिजली भी बर्ण साम्य को ही प्रकट करते हैं। इस प्रकार की रूप या रंग पर आधारित उपमान योजना यद्यपि भाव का विधाय उपकार नहीं करती परन्तु यह स्वरूप-बोध के द्वारा वस्तु को और अधिक धारक बना देती है। रूप व रंग के उस्सेख से इसमें सुन्दर बिम्ब निर्माण होता है। स्वरूप की स्पष्टता और सौन्दर्य सर्जन इसका प्रमुख गुण है। भाव का उत्कर्ष इसमें कम ही होता है। परन्तु भाव की उपेक्षा करके ऐसे उपमान सफल नहीं हो सकते। प्रीधित्य का विचार सर्वैव धारक है। भाव की निरन्तर उपेक्षा कर केवल रूप रंग के आधार पर प्रस्तुत पर कोई धारोपण करना हास्यास्पद ही होता है। जैसे सूर ने राधा का गति के आधार पर बजमामिनी कहा है वहाँ तक गति की सम्यक मादकता का आभास मिलता है यह उपमान उचित है। पर कवि ने और धामे बढ़कर उसके समस्त धर्मों पर मज के धर्मों का धारोप किया है जो कभी भी प्रसंसनीय नहीं कहा जा सकता। भाव का उपकार करने से यह उपमान काव्य का उपकार भी करते हैं इसी प्रकार नद्यम ने मूर्ध को सान्निध्य के आधार पर धीमित कमित कपाल' कह दिया है। ऐसे रूप साम्य काव्य की उत्पत्तता म व्यापकता डामते हैं। बिम्ब की दृष्टि से भी यह वर्णन भाव का उपकार म करने के कारण सफल नहीं कहे जा सकते।

रूप साम्य और बिम्ब का सम्बन्ध बड़ा निकट का है। रूप देने में कवि सर्वैव भाव को मूर्तित करता है और इसमें बिम्ब की धृष्टि सदा होती है। परन्तु वहाँ रूप साम्य पर धामे उपमान परम्पराप्रसृत होते हैं वहाँ बसोबता और तात्रयी के धमाव क कारण उपमाओं की उच्यना प्रदान करने की शक्ति धमाव हो जाती है। यद्यः ऐसे

स्वप्नों पर भी सफ़ल बिम्ब निर्माण नहीं होता। जैसे इन पदों में—

हंस पामिनी कोकिल बैनी घाबि

रूप या ध्वनि की कोई मार्मिक अनुभूति नहीं होती। वह इतने प्राचीन हो चुके हैं कि यह जिन्दी नवीन कल्पना के धमाके में हमारे मानस को धान्धोबिन्द करके में घसमर्ब रहते हैं और काव्य में विशिष्ट महत्त्व के अधिकारी नहीं बन पाते।

उपमान को समग्र रूप में प्रस्तुत करना जो बिम्ब ग्रहण के लिए आवश्यक है। प्राचीन उपमानों को यदि नये रूप विभाग में समग्रता के साथ प्रस्तुत किया जाय तो वे भी बिम्ब निर्माण में सफ़ल होते हैं। उदाहरण के लिए—

नैव सतुर ब रूप बितेरे

संतल पत्र पर मयुकर घरे।

यहाँ नेत्रों के सिरे बहु प्रचलित उपमान कमल व भ्रमर माए गए हैं। पयावती के नेत्र कमल पत्तों के सदृश्य हैं जिन पर भ्रमर कपी सारे बैठे हुए हैं। यहाँ घाकार और बण दोनों का साम्य है और प्राचीन उपमानों का एक नए परिवेष के साथ प्रस्तुत किया है जो बिम्ब विधान करने में पूर्ण सफ़ल हुए हैं। बिम्ब विधान में जब साम्य के आधार पर त्रिभिन्न उपमानों में भाव की उपेक्षा नहीं होनी चाहिए। ऐसा होने पर बिम्ब सफ़ल नहीं बड़े जा सकते। जायसी ने एक दो स्वप्नों पर ऐसे वर्णन किये हैं। एक तो टोता का वर्णन करत हुए उन्हें मारी कह कर उम पर मारी के घंघ प्राचीनों का आरोपण करके शृंगार को बीर रम के साथ समेटने का प्रयत्न किया गया है और दूसरे स्वप्न पर बादल की पत्नी के शृंगार पर बीर का आरोपण हुआ है उसके घंघ प्रत्योषों को सुख के उपकरणों से मिलाया गया है। ऐसे स्वप्नों पर संघर्ष और भाव की उपेक्षा हुई है। इस कारण यह बिम्ब सफ़ल नहीं बड़े जा सकते। रूप साम्य यद्यपि बिम्ब विधान का एक बड़ा भागन है फिर भी बनीबता औचित्य और उपमान को समग्रता के साथ प्रस्तुत करना बिम्ब ग्रहण के लिए आवश्यक है। इसके धमाके में उपमानों में रूप प्रकटा रूप का साम्य होते हुए भी बिम्ब ग्रहण में हो सकेगा।

(घा) वृष घर्भ और प्रभाव साम्य (धार्तरिक साम्य)—रूप साम्य के धार्तरिक प्रभाव सुष और घर्भ साम्य के आधार पर भी उपमानों का त्रिपोबन होता है। घर्भ और प्रभाव के साम्य पर आधारित उपमानों का काव्य में विशेष महत्त्व है क्योंकि इनमें यदि औचित्य का ध्यान रखा जाय तो सर्वत्र भाव का उत्कर्ष होता है घनवर्ष नहीं। इनमें भाव ध्वजता की अपूर्व सामर्थ्य रहती है। प्रभाव साम्य यदि प्रकृत होता है तब बिम्ब की अनुभूति धम्यन्त होती है पर जब प्रभाव साम्य भाव की रक्षा करते हुए ऐतिहासिक कर्षों हाथ प्रस्तुत किया जाता है तब वहाँ खेड बिम्बों का निर्माण होता है। उपमान भाव की रक्षा करते हुए वस्तु या भाव की ऐतिहासिक बधाता है। इसी प्रकार जब साम्य काव्य में विशेष महत्त्व रखता है। भावों का

मसत्रों भरा गगन मेघों के आकार को प्रकट नहीं करता बल्कि रंगों को प्रकट करता है। पद्यावली के मेघ नील वर्ण के थे जिसमें मसत्रों की भाँति सफेद-सफेद घसंक्ष्य घस्य बिन्दु भरे हुए थे। द्वितीय साम्य मोठी भरी सीपी का दिया गया है जिसमें वर्ण प्रप्रधान है आकार प्रधान है। पद्यावली के मेघ सीपियों के आकार के थे और उसमें भरे जल बिन्दु मोठी की भाँति प्रतीत होते थे। इस प्रकार यह दोनों उपमान पद्यावली के मेघों का रूप प्रस्तुत करते हैं। रूप साम्य के साथ-साथ इसमें सुन्दर बिम्ब विधान भी — रूप और रंग के सम्बन्ध के कारण — स्वतः ही हो गया है। जायसी के अधिकतर उपमान रूप साम्य पर ही आधारित हैं। एक स्पष्ट और द्रष्टव्य है—

इसमें स्वाम पातलु रंग पासे विह्वलत करन मबर घस ताके ।
 कमलकार मुक भीतर होई अस बारिख धौ स्वाम मकोई ।
 कमरुँ बौकि विह्वसि जो नारी बीनु कमक अस निसि प्रसियाये ।

इसमें सभी उपमान वर्ण साम्य पर आधारित हैं। दाहिम के उपमान में दाँतों का रूप कुछ धा जाता है परन्तु उसके साथ कवि ने स्वाम मकोई का प्रयोग किया है जिससे प्रतीत होता है कि रंग साम्य ही उसे धमकीष्ट रहा होगा। अन्य उपमान 'कंबल और प्रमर' के रंग के धंधरे में कमरुँ की बिजली भी वर्ण साम्य की ही प्रकट करते हैं। इस प्रकार की रूप या रंग पर आधारित उपमान योजना यद्यपि भाव का विलेप उपकार नहीं करती परन्तु यह स्वरूप-बोध के द्वारा वस्तु की और अधिक आकर्षक बना देती है। रूप व रंग के सम्बन्ध से इसमें सुन्दर बिम्ब निर्माण होता है। स्वरूप की स्पष्टता और सीम्पर्य सर्वत्र इसका प्रमुख गुण है। भाव का उत्कर्ष इसमें कम ही होता है। परन्तु भाव की उपेक्षा करके ऐसे उपमान सफल नहीं हो सकते। प्रीतिवत्त का विचार सर्वत्र प्राबल्यक है। भाव की निरालोप उपेक्षा कर केवल रूप रंग के आधार पर प्रस्तुत पर कोई आरोपण करना हास्यास्पद ही होता है। जैसे मूर ने राधा की मति के आधार पर नजगामिनी कहा है वहाँ तक मति की सम्यक माहकता का आभास मिलता है, यह उपमान उचित है। पर कवि ने और धामे बढ़कर उमक समस्त धामा पर गज के धर्मों का आरोप किया है जो कमी भी प्रसंशनीय नहीं कहा जा सकता। भाव का उपकार करने से यह उपमान काव्य का उपकार भी करते हैं इसी प्रकार वेदव ने मूर्खों को ज्ञानिना के आधार पर 'धोवित कमिठ कपाम' कह दिया है। ऐसे रूप साम्य काव्य की उत्कृष्टता में व्यापार आसते हैं। बिम्ब की दृष्टि से भी यह बर्लम भाव का उपकार व कर्म के कारण सफल नहीं कहे जा सकते।

रूप साम्य और बिम्ब का सम्बन्ध बड़ा निकट का है। रूप देने में कवि सर्वत्र भाव को मूर्तित करता है और इसमें बिम्ब की सृष्टि सरा होती है। परन्तु जहाँ रूप साम्य पर धामे उपमान परम्परापरस्त होते हैं वहाँ नवीनता और ताजगी के प्रभाव के कारण उपमानों की उत्तमना प्रदाय करने की शक्ति समाप्त हो जाती है। यहाँ ऐसे

स्वतंत्रों पर भी सफल बिम्ब निर्माण नहीं होता। जैसे इन पदों में—

हूँत यामिनी कोकिल बैरी धारि

रूप या ध्वनि की कोई मासिक अनुमति नहीं होती। यह इतने प्राचीन हो चुके हैं कि जब किसी नवीन कल्पना के प्रभाव में हमारे मानस का आविर्भाव करने में असमर्थ रहते हैं धीर कल्प में विच्छिन्न महत्त्व का अधिकारी नहीं बन पाते।

उपमान को समग्र रूप में प्रस्तुत करना भी बिम्ब ग्रहण के लिए आवश्यक है। प्राचीन उदाहरणों को यदि नये रूप विधान में समग्रता के साथ प्रस्तुत किया जाय तो वे भी बिम्ब निर्माण में सफल होते हैं। उदाहरण के लिए—

मैत्र जतुर भी रूप बितेरे

कंबल पत्र पर मधुकर धरे।

यहाँ नेत्रों के सिरे बहु प्रशंसित उपमान कमल का भ्रमर साए गए हैं। पधावली के नेत्र कमल पत्रों के सदस्य हैं जिन पर भ्रमर कपी ठारे बैठे हुए हैं। यहाँ आकार धीर रूप दोनों का साम्य है धीर प्राचीन उपमानों को एक नए परिवेष के साथ प्रस्तुत किया है जो बिम्ब विधान करने में पूर्ण सफल हुए हैं। बिम्ब विधान में रूप साम्य के आधार पर निर्मित उपमानों में भाव की उपमा नहीं होती चाहिए। ऐसा होने पर बिम्ब सफल नहीं कहे जा सकते। जायसी ने एक दो स्वर्णों पर देवे वर्णन किये हैं। एक दो सोनों का वर्णन करते हुए उन्हें मारी कह कर उस पर मारी के घंग प्रत्यागों का आरोपण करके शृंगार को धीर रूप के साथ समेटने का प्रयत्न किया गया है धीर दूसरे स्वर्ण पर बाइल की पत्नी के शृंगार पर धीर का आरोपण हुआ है उसके घंग प्रत्यागों को मुख के उपकरणों से मिलाया गया है। ऐसे स्वर्णों पर संघर्ष धीर भाव की उपमा हुई है। इस कारण यह बिम्ब सफल नहीं कहे जा सकते। रूप साम्य यद्यपि बिम्ब विधान का एक बड़ा नाचन है फिर भी नवीनता धीरिय धीर उपमान को समग्रता के साथ प्रस्तुत करना बिम्ब ग्रहण के लिए आवश्यक है। इसके प्रभाव में उपमानों में रूप समवा रंग का साम्य होते हुए भी बिम्ब ग्रहण न हो सकेगा।

(धा) गुण धर्म धीर प्रभाव साम्य (धार्तरिक साम्य)—रूप साम्य के धार्तरिक प्रभाव गुण धर्म साम्य के आधार पर भी उपमानों का मिलावट होता है। धर्म धीर प्रभाव के साम्य पर आधारित उपमानों का साम्य में विषय महत्त्व है क्योंकि इनमें यदि धीरिय का स्थान रखा जाय तो सर्वत्र भाव का उत्कर्ष होता है अपर्यय नहीं। इनमें भाव व्यक्तता भी अपूर्व सामर्थ्य रखती है। प्रभाव साम्य यदि प्रकृत होता है तब बिम्ब की अनुमति सम्पन्न होती है पर जब प्रभाव साम्य भाव की रखा करते हुए ऐश्वर्ययम्य रूपों द्वारा प्रस्तुत किया जाता है तब वहाँ खोले बिम्बों का निर्माण होता है। उपमान भाव की रखा करते हुए वस्तु या भाव की ऐश्वर्ययम्य बनाता है। इसी प्रकार धर्म साम्य साम्य में विषय महत्त्व रखता है। भावों का

उदरार्पण करने में यह बिम्बेय रूप से सहायक होता है जैसे इन स्मरणों पर—

१—शब बनि बिबल बिरह भा राती जरे बिरह बेरु वीपक बाती

२—सरबर हिया घटत नित बाई टिकि दुकि होइ होइ बिहराई ।

बिहरत हिया करतु पित डैका बीठि बंभररा मेलतु ऐका ।

यहाँ नायमती के बिरह रूप हृदय को निरन्तर वाहक ध्वनि में जलते रहने और भस्म व क्षिप्त हो जाने के कारण वीपक की तथा प्रखरित रहने वाली वातिका व वीप्य में सूर्यताप से फटे सरोवर के तल से चिथित किया गया है। नायमती के हृदय और वातिका व सरोवर में रूप का साम्य नहीं है बरन् धर्म का साम्य है। वातिका जिस प्रकार निरन्तर तिमथिस कर जलती रहती है उसी प्रकार नायमती का हृदय भी बिरह की बाह में जल रहा है, इसमें नायमती की अपार पीड़ा व्यञ्जित हुई है। और जिस प्रकार सरोवर तीव्र वीप्य में तड़क तड़क कर फट जाता है व जिस प्रकार बंभरे के पत्रात् सरोवर की मिट्टी चिकनी हो जाती है उसी प्रकार रत्नसेन की दृष्टि—बबगर के बाट नायमती का हृदय स्नेह शिख—मृगण हो वायवा। धर्म साम्य के आधार पर प्रयुक्त यह उपमान बिम्ब रूप में भी सफल है ऐशियाता इनमें पर्याप्त है जिसके कारण पाठक सहज ही नायमती के बिरह रूप हृदय से मानस साक्षात्कार कर सकता है।

प्रभाव साम्य की चर्चा ऊपर हो चुकी है। अब धातरिक साम्य के तीसरे स्व रूप गुण साम्य का विवेचन किया जायगा। गुण साम्य भी प्रभाव और धर्म साम्य की भांति काम्य में विशेष महत्व रखता है। गुण साम्य में भाव की मूर्तता का प्रश्न बिब प्रहल के लिए उठता है। बिब गुण साम्य में वस्तु की मूर्तित एव इन्द्रियगम्य बना दिया जाता है तो वही प्रथम बिम्ब दृष्टि होती है धर्मका वर्णन बिम्ब हीन रहता है। निर्माकित वर्णन में वस्तु में गुण साम्य तो है ही वर्णन की प्रणाली भी बिबारायक है

कबल करी तू पबुमिनि वी निसि मपट बिहान ।

पबहुं न संपुट कोलहि जो रे उट्ट जप भान ।

यहाँ कमल बनी के उपमान में पचावती की प्रवस्था (जप) का साम्य तो कुछ मिला जाता है परन्तु रूप साम्य नहीं है। कबि की दृष्टि यहाँ कमल बनी के सूर्य के उदय होने पर संपुट खुल जाने के रूप पर रही है। पचावती का भी राजा रत्नसेन की सूर्य के उठ जाने पर संपुट बपी नेत्र के पलक लोसने के लिये कहा गया है। इस प्रकार यहाँ गुण साम्य प्रभाव है जिसमें इत्यता होने के कारण उपमान बिम्ब प्रस्तुत करने में भी सफल हो सका है। कमल बनी का प्रसन्नता दृष्टिगम्य ध्यापार है जो पद्मावती के नेत्रों के खुलने को बिब रूप प्रदान कर देता है।

गम्यदृष्टि में प्रभाव धर्म और गुण सभी प्रकार के धातरिक साम्यों में भ्रष्ट बिबों का निर्माण होता है। उदाहरण ऐशिय गम्य होता ही केवल—बिम्ब निर्वाक के लिए आधारयक है। वस्तुतः धर्म गुण और प्रभाव निर्मित उपमान ही धातरिक व्यक्त

बिम्ब निर्माण करते हैं, केवल रूप रूप पर आधारित नहीं। क्योंकि मात्र को तीव्र करने और उसको उत्कर्ष देने का सयस्त ब्यं इन्हीं बिम्बों को है। रूप रूप से मुक्त उपमान यद्यपि रूप और आकार की अधिक आकषक अनुभूति कराने में सहायक होते हैं पर उनमें इतनी बहुराशि नहीं होती जिसकी बर्ण गुण व प्रभाव साम्य पर निर्मित उपमानों और बिम्बों में हो सकती है।

(३) काव्यनिक साम्य— उपमानों का एक प्रमुख आधार काव्यनिक साम्य भी हो सकता है। महा कवि प्रसन्नव्य वस्तुओं और प्रसन्नव्य व्यापारों को जोड़ जोड़ कर एक स्वतः पर सादर रख देता है। पाठक कल्पना से उनके लीन्य की अनुभूति कर पाता है। यहाँ कवि समग्र प्रसन्न की सीमा का प्रतिफल करके सर्वथा महीन रूप में उपमान की योजना करता है जो पाठक की कल्पना के लिए एक विचित्र वस्तु होती है। मध्ययुगीन कवियों ने कुछ उपमाएँ इस प्रकार के बिये हैं। आर्यसी ने बेनी और छिर के प्रामुख्यों प्रादि के लिए इस प्रकार का काव्यनिक साम्य दिया है।

बेनी कारी पुहुप लं मिक्ता जमुना धाड

पूजा नंद धनंठ लोँ सेंदुर लीस चढ़ाड।

धर्मात् उसकी बेनी उमरम गूँये पुण्य कामे बेधा भीर सङ्गुर मदी मांग की सम्मिलित धामा ऐसी भी मानो बेनी रूपी कासी भाग कमल के फूल लेकर बाहर निकला हो भीर उठी समय कासिरी प्रा गई ह्य जिसके छिर पर सेंदुर चढ़ा कर धान्य से कृष्ण ने पूजा की हो।

यहाँ धर्मात् प्रमुता कृष्ण की पूजा प्रादि के प्रसन्नव्य वस्तु और किन्ना व्यापारों को एक स्वतः पर एकत्र कर महीन पर विचित्र कल्पना की गई है जो सहज साह्य नहीं है।

इसी प्रकार का सूरदास का एक पद द्रष्टव्य है—

उपमा एक प्रभूत भई तब, अब बननी पट पीत उठाए।

नीस जलद पर उडुगत निरजत लज पुनाम अनु तड़ित छिपाये ।'

प्रामुख्य मुक्ता नाम इत्यादि से शोभित कृष्ण का प्रियम बर्ण शरीर पैसा प्रतीत होता वा मानो बादलों में तारे उभित हो गये हों और अपना अपनी बचलता को छोड़कर स्थिर हो गई हो। यहाँ बादल में तारे निकलने और अपना के स्थिर हो जाने के व्यापार कल्पना के लिए प्रसन्नव्य नहीं तो विचित्र प्रसन्न है। इनमें शीतल्य का अमलकार पूर्व बोध होता है पाठक की कल्पना में वस्तु का बिंब घाने में व्यापार करता है। ऐसे साम्य में कभी भी बिंब निर्माण नहीं हो सकता। बिंब में अमलकार का अभाव होता है। यहाँ कवि की दृष्टि पाठक की सहज कल्पना को बाधित करने की धोर रखती है और यहाँ पाठक बुद्धि बल से अनुमान कर लीन्य की प्रतीति करता है। अनुमान धरत एक हीचित्र प्रक्रिया है जो बिम्ब ग्रहण में सहायक नहीं हो

सकती। इस प्रकार स्पष्ट है कास्पनिक साम्य कभी भी बिम्ब निर्माण नहीं कर सकता।

समष्टि में कहा जा सकता है कि रूप धर्म गुण और प्रभाव प्रादि के बाह्य और आंतरिक सभी प्रकार के साम्यो में बिंब निर्मित हो सकता है। केवल कास्पनिक साम्य के आधार पर नियोजित उपमान कभी बिंब नहीं कहे जा सकते। बिंब के लिए केवल मूर्तता ऐगिग्रयता एवं भावव्यंजकता आवश्यक होती है और अधिकांशतः उपमानों में यह तत्त्व मिल जाते हैं इस कारण किसी भी काव्य में प्रयुक्त होने वाले भाव से अधिक उपमान बिम्बात्मक होते हैं।

अलंकार और बिम्ब

उपमानों व इस विवेचन के पश्चात् कुछ प्रमुख अलंकारों में बिंब की स्थिति का निरीक्षण करना भी उपयोगी होगा। अलंकारों में यहाँ हम केवल कुछ प्रमुख अर्थात् अलंकारों को ही लेंगे अर्थालंकारों की चर्चा नहीं करेंगे क्योंकि अर्थालंकार मुख्यतः भाषा से ही सम्बन्धित रहते हैं भाषा से नहीं जैसे बहोक्ति यमक अनुप्रास प्रादि। अतः बिम्ब से इनका कोई नैकट्य प्रतीत नहीं होता। यहाँ हम भाव व्यंजना में सहायक होने वाले कुछ प्रमुख अर्थात् अलंकारों का ही विवेचन करेंगे।

(१) उपमा—सादृश्य का विधान करने वाला सर्वप्रमुख अलंकार उपमा है। उपमा में उपमान उपमेय धर्म और वाचक शब्द चार धर्म रहते हैं। परन्तु इनमें से एक या दो के अभाव में भी उपमा की सत्ता रह सकती है। तब इसे लुप्तोपमा कहा जाता है। उपमा सबसे सरल और भाषा की सबसे सहज अभिव्यक्ति है जिसका सबसे अधिक व्यवहार होता है। जायसी में भी अनेक उपमाएँ हैं जो बिम्ब रूप में प्रयुक्त हुई हैं। जैसे

कंकनू पंथि जैसे सर सारजा सर सड़ तबहि बरा बह राजा।

घोर

राजं लुनि बिघोर तस माला जैन द्विये बिबम पठिनाना। प्रादि प्रादि

यहाँ कंकनू पंथी की उपमा में संदर्भ परिस्थिति और भाव का उचित योग है। कंकनू पंथी की भाँति राजा भी जीवन भर बिरह की घग्नि सह कर स्वयं पसाई बई घग्नि में बस्न होना चाहता है। यहाँ कंकनू पंथी के बसने का पूरा बिंब आ जाता है। यह उपमा बहुत अधिक भाव व्यंजक है अथवा शीघ्र इसके साथ बहुता है जिसके कारण पाठक की कल्पना राजा की अवस्था का मानस माशालकार करने में पूर्ण सफल हो जाती है। द्वितीय उपमा सादृश्य कथाओं से सी गई है। बहा पछताना मण्ड राजा बिबम की अवस्था का उल्लेख पर वारताउ करता है। राजा बिबम और उसके जीवन से परिचित पाठक सहज ही इस उपमा में बिंब ग्रहण कर सकता है।

मामाम्य रूप से उपमाओं में सम्यता के अभाव के कारण सुन्दर बिम्ब कम निर्मित हो पाते हैं। परन्तु जहाँ उपमा नहीं व्यंजक और बहुत अधिक अर्थ-सम्पत्ति

से सम्पन्न होती है वहाँ बिम्ब निर्माण का भेद स्वल्प उपस्थित होता है। प्रभूत उपमाएँ भी बिम्ब निर्मित करने में प्रसमर्य रहती हैं। यदि वहाँ उनके साथ कोई विषयवत्ता या कोई क्रिया हो जो बिम्ब निर्माण में सम्यक् हो तब तो वह बिम्बकारक हो सकती है प्रत्यया अधिकांश प्रभूत उपमाएँ बिम्बहीन होती हैं जस पंथ की 'छाया' की मातापमाएँ।

(२) रूपक—जहाँ रूप का आरोप होता है वहाँ रूपक धर्मकार होता है। साहित्य धर्मन कार न इसमें तीन भेद किये हैं—परम्परित सांग धीर निरंग। सांग रूपक बिम्ब की दृष्टि से सर्वव्युत्पन्न है। समस्त पंथा का रूपक होने के कारण समग्रता का समावेश इसमें सहज ही हो जाता है जो बिम्ब के लिए एक आवश्यकता है। सांग रूपक के दो भेद धीर भी हो सकते हैं—एक जहाँ समस्त आरोप पद से बोधित हो, दूसरा वहाँ जहाँ सब आरोपमात्रों में से कोई धर्म वस्तु से सम्यक् हो सबका समग्र धर्मों के द्वारा न हो। प्रथम समस्त वस्तु विषयक द्वितीय एकदम विवर्ति कहलाता है।^१ तीनों ही बिम्ब के लिए उपयुक्त होते हैं। जायसी के सांग रूपकों में पर्याप्त बिम्ब मिल जाते हैं।

१—हाड़ मये भुरि कौगरी नसे भई तब ताति ।

रौब रौब तन बुनि उठ कहैनु बिषा केहि माति ।

२—सुहृम्वर जीवन जस भरण रहै बटी की रीति

धरी जो धाई क्यौ मरी डरी जनम ना बीति ।

किसी वाद्य बंध धीर रहै की परिचा के ये सांग रूपक भाव की पूषता के साथ प्रस्तुत करते हैं साथ ही ऐतिमता के कारण बिम्ब भी प्रस्तुत करते हैं।

इन समस्त वस्तु विषयक रूपकों के प्रतिरिक्त एक बेश विवर्तिय रूपक भी जायसी ने प्रयुक्त किये हैं। ये रूपक बिम्ब की दृष्टि से सम्यक् हैं।

राजपाट दर परगह सब तुम्हें तौं अजिपार ।

बैठ भोग रस मानहु के न बलहु धँबिपार ।

इसमें राजा की तुलना मूर्ख के साथ की गई है जो प्रसम्य है। कबल मूर्ख से होने वाले धर्मकार धीर प्रकाश का अस्मैल है। परन्तु इसमें अपूर्णता नहीं धाई है। पाठक रत्नसन के मूर्ख रूप का सहज ही सम्यक् जाता है। यहाँ प्रस्तुत बिम्ब तथा उरमान (धर्ममूर्ख) पूषता दृष्ट्यात्मक है जिससे बिम्ब निर्मित हो जाता है। परन्तु जब धर्ममूर्ख धर्म्य धर्मोत् इतिमगम्य नहीं होता तबका बौद्धिक प्रक्रिया द्वारा दाह्य होता है तब बिम्ब का ग्रहण नहीं होता है। जैसे केवल धारि में बुद्धि बल से भाये मये रूपक।

१. रूपक कवित्तो विषये निरवधमये ।

कविनिर्दिष्ट सांग निरवधिति न रिता ॥२॥ —साहित्य धर्म १ *

२. धर्ममन्तररत्न सांगरे प्रथम मलम् ।

नन कल विरचितेकेसा विवर्ति तर् ॥ —सहित्यधर्म १* २१

सकती। इस प्रकार स्पष्ट है काव्यमय साम्य जमी भी बिम्ब निर्माण नहीं कर सकता।

समष्टि में कहा जा सकता है कि क्य धर्म गुण और प्रभाव धारि के बाह्य और आंतरिक सभी प्रकार के साम्यो में बिम्ब निर्मित हो सकता है। केवल काव्यमय साम्य के आधार पर नियोजित उपमान जमी बिम्ब नहीं कहे जा सकते। बिम्ब के लिए केवल मूर्सता ऐन्द्रियता एव भावपूर्णता आवश्यक होती है और अधिकतर उपमानों में यह तत्व मिल जाते हैं। इस कारण किसी भी काव्य में प्रयुक्त होने वाले धारि से अधिक उपमान बिम्बात्मक होते हैं।

प्रलकार और बिम्ब

उपमानों के इस विवेचन के पश्चात् कुछ प्रमुख धर्माकारों में बिम्ब की स्थिति का निरीक्षण करना भी उपयोगी होगा। धर्माकारों में वहा हम केवल कुछ प्रमुख धर्माकारों को ही लेते हैं। धर्माकारों की चर्चा नहीं करेंगे क्योंकि धर्माकार मुख्यतः भाषा से ही सम्बन्धित रहते हैं भाषा से नहीं जैसे अकेले धर्मक धर्माकार धारि। धर्माकार से इनका कोई सम्बन्ध प्रतीत नहीं होता। वहा हम भाषा धर्माकारों में वहा एक होने वाले कुछ प्रमुख धर्माकारों का ही विवेचन करेंगे।

(१) उपमा—साहित्य का विधान करने वाला सर्वप्रमुख धर्माकार उपमा है। उपमा में उपमान उपमेय धर्म और धर्माकार शब्द चार धर्म रहते हैं। परन्तु इनमें से एक या दो के अभाव में भी उपमा की सत्ता रह सकती है। तब इसे सुत्तोपमा कहा जाता है। उपमा सबसे सरल और भाषा की सबसे सहज धर्माकार है जिसका सबसे अधिक व्यवहार होता है। जायसी में भी अनेक उपमाएँ हैं जो बिम्ब रूप में प्रयुक्त हुई हैं। जैसे

कंकनू पंदि अंत सर साजा सर चढ़ तबहि बरा बह राजा।

धोर

राजै मुनि वियोग तत भाजा अंत हिंदे विक्रम पठिनाता। धारि धारि

यहाँ कंकनू पंदि की उपमा में सर्वधर्म परिस्थिति और भाषा का उचित योग है। कंकनू पंदि की भाँति राजा भी जीवन भर बिरह की प्रणि सह कर स्वयं बनाई गई प्रणि में भस्म होना चाहता है। वहाँ कंकनू पंदि के जलन का पूरा बिम्ब धारि जाता है। यह उपमा बहुत अधिक भाषा धर्माकार है धर्म का अंत इसके साथ बहुत है जिसके कारण पाठक की कल्पना राजा की धर्माकार का मातृ साक्षात्कार करने में पूर्ण सफल हो जाती है। द्वितीय उपमा साँत कंधारों से भी गई है। यहाँ पठनाता धर्माकार राजा विक्रम की धर्माकार का रत्नमेत पर धारि धर्माकार करता है। राजा विक्रम और उसके जीवन से परिचित पाठक सहज ही इस उपमा से बिम्ब सहज कर सकता है।

सामान्य रूप से उपमानों में धर्माकारों के अभाव के कारण सुन्दर बिम्ब रूप निर्मित हो पाठ है। परन्तु वहा उपमा नहीं धर्माकार और बहुत अधिक धर्म-सम्पत्ति

से सम्पन्न होती है वहाँ बिम्ब निर्माण का घोट स्वरूप उपस्थित होता है। प्रभूत उपमाएँ भी बिम्ब निर्मित करने में प्रथमचरण रहती हैं। यदि वहाँ उनका साव कोर्ष विशेषण या कोर्ष क्रिया हो तो बिम्ब निर्माण में समर्थ हो तब तो वह बिम्बात्मक हो सकती है अन्यथा अधिकोप प्रभूत उपमाएँ बिम्बहीन होती हैं जैसे पंथ की 'छाया' की मानोपमाएँ।

(२) रूपक—वहाँ रूप का आरोप होता है वहाँ रूपक प्रसंगकार होता है। साहित्य दर्पण कार ने इसके तीन भेद किये हैं—'परम्परित सांग धीर निरम।' सांग रूपक बिम्ब की दृष्टि से सर्वप्रथम है। समस्त अर्थों का रूपक होने के कारण समग्रता का समावेश इसमें सहज ही हो जाता है जो बिम्ब के लिए एक आवश्यकता है। सांग रूपक के दो भेद धीर भी हो सकते हैं—एक जहाँ समस्त आरोप सांग से बोधित हों दूसरा वहाँ जहाँ सब आरोप्यमाथों में से कोई अर्थ बस से लभ्य हो सबका कथन अर्थों के द्वारा न हो। प्रथम समस्त बन्धु विषयक द्वितीय प्रकार का विवर्ति कहपाता है।^१ दोनों ही बिम्ब के लिए उपयुक्त होत हैं। जायसी के सांग रूपकों में पर्याप्त बिम्ब निम्न आत हैं

१—हाड़ मये भुरि कीगरी लषी मई सब ताति ।
रौब रौब तन बुनि उठे कहेसु बिबा केहि भाति ।

२—नहुम्मर बीकन बल भरत एहट बरी की रीति
धरी जो धाई लयी मरी डरी बतम पा बीति ।

किसी वाच यंत्र धीर रहूट की बरिया के ये सांग रूपक मात्र की पूर्ण के साव प्रस्तुत करते हैं साव ही ऐन्द्रियता के कारण बिम्ब भी प्रस्तुत बन्त हैं। इन समस्त बन्धु विषयक रूपकों के प्रतिरिक्त एक २७ विवर्ति रूपक की जायसी ने प्रयुक्त किये हैं। ये रूपक बिम्ब की दृष्टि से सज्ज हैं।

राजपाट बर बरगहू सब तुम्ह सी उजियार ।
बीठ मोम रस मार्गहु के न बनतु लीकियार ।

इसमें राजा की तुम्हता मूर्ध के साव की मई है जो प्रकृत है। बरगहू उजियार वाले प्रसंगकार धीर प्रकाश का उल्लेख है। परन्तु प्रकृत प्रकाश की मई है जो उल्लेख के मूल रूप को सहज ही समझ जाता है। मरा प्रकृत प्रकाश का उल्लेख (धप्रस्तुत) पूर्णतः द्वयात्मक है बिम्ब बिम्ब निर्मित प्रकाश है। प्रकृत प्रकाश का उल्लेख प्रकाश धरति इन्द्रियगम्य नहीं हुआ प्रकृत प्रकाश की मई है जो प्रकृत प्रकाश का उल्लेख प्रकाश धरति इन्द्रियगम्य नहीं होता है। जैसे प्रकृत प्रकाश की मई है जो प्रकृत प्रकाश का उल्लेख प्रकाश धरति इन्द्रियगम्य नहीं होता है।

१. रूपक में परम्परित सांग निरम।

२. परम्परित सांग निरम।

३. आरोप्यमाथों के अर्थों में से कोई अर्थ बस से लभ्य हो सबका कथन अर्थों के द्वारा न हो।

—
—
—

जायसी में भी अंतरंग भीमाग आदि के कई रूप ऐसे ही हैं। यह भाव व्यक्तता में सहायक नहीं होते साथ ही कवि के हृदय से सहज रूप से निसृत नहीं हुए हैं वरन् कवि ने ठान पीठ कर अप्रस्तुत को प्रस्तुत के ऊपर घटाया है। इन्हीं दोषों के कारण ऐसे वर्णनों में सांग रूपक होते हुए भी बिम्ब विधान नहीं हो सकता।

(१) उत्प्रेक्षा—उत्प्रेक्षा में कवि प्रस्तुत विषय के लिए अप्रस्तुत विषय की कल्पना करता है। यहाँ विषय से अधिक वस विषयन् अर्थात् उपमान पर होता है। और उसे वाक्य अथवा प्रतीयमान दोनों रीतियों से प्रस्तुत किया जा सकता है। उत्प्रेक्षा के कई रूप होते हैं जैसे फलोत्प्रेक्षा वस्तुत्प्रेक्षा हेतुत्प्रेक्षा आदि। उत्प्रेक्षा में प्रायः सुन्दर बिम्ब प्रस्तुत होते हैं। सभी कवियों ने उत्प्रेक्षा के रूप में सुन्दर बिम्ब प्रस्तुत किये हैं। जायसी में उत्प्रेक्षाओं का बहुसता से प्रयोग हुआ है और उनमें प्रायः बिम्ब निर्माण हुआ है। यथा

मलय गिरि के पीठि संबारी बेनी माय चढ़ा अनु कारी ।
सहरै बैत नीठि अनु चढ़ा और घोड़ाका कंचुकि मढ़ा ।

यहाँ रानी पद्मावती की बेनी के लिए जायसी ने नायिन का बिम्ब दिया है जब उसकी बेनी चुनरी की घाट में हो जाती है तब कवि उत्प्रेक्षा करता है मानो नायिन कंचुकी से मढ़ गई है। यह रूप सादृश्य बेनी के लिए एकदम दुःस्वात्मक बिम्ब प्रस्तुत कर देता है। हेतुत्प्रेक्षा आदि में सदैव सुन्दर बिम्ब—विधान होता है। परन्तु कभी कभी अदृश्य हेतुओं के अदृश्य रूपों के कारण बिम्ब का प्रभाव रहता है। कहीं कहीं जहाँ प्रस्तुत वचन के लिए वास्तविक कारण या हेतु दिया जाता है और वर्णन अल्प रहता है तब बिम्ब निर्माण नहीं हो सकता जैसे इस वर्णन में

तु जानहि अल चुबै पहाक सो रोबै मन सबरि संबाठ ।
सोतहि सोत घंस गढ़ रोबा का होइहि बी होइहि डोबा ।
संबरि पहार जो टारे घामु प तोहि सुस न आपन नाघु ।

परन्तु जहाँ अल्प वृत्त होते हैं वहाँ हेतुत्प्रेक्षा में सुन्दर बिम्ब निर्मित होस है। जैसे

महुमर बिदिअ जो न जसै काहु जसै मुइ टोइ ।
जोइन रतन हीरान है मनु परती मई होइ ।

बृद्ध व्यक्ति झुक कर चलन है जायसी उत्प्रेक्षा करते हैं समकाल वह अपने जीवन की रत्न को गोदते पसने हैं जो उनके हाथ से फिर गया है चापय वह चुन में ही हो। यहाँ वर्णन की दुःस्वात्मकता के कारण बिम्ब निर्माण हो जाना है। हेतुत्प्रेक्षा में यदि प्रस्तुत विषय जिसके हेतु की कवि कल्पना करता है स्वयं में बिम्ब के रूपों से युक्त होता है तब अदृश्य ही बिम्ब निर्माण हो जाता है।

४—प्रतिघबोहित—प्रतिघबोहित में कवि प्रस्तुत को बड़ा चढ़ा कर व्यक्त करता है, उसका प्रभाव रूप आदि अभिकारिक करम के लिये जो प्रायः सम्भाव्य की सीमा को भी पार कर जाता है। प्रतिघबोहित सदा म कवियों का प्रिय प्रसकार रहा है प्रायसी में भी बहुतायत में इसका प्रयोग किया है। एक बणन उक्त प्रतीय होगा

सोहैं छारि हस्ति पैहराए मेघ घटा जस गरजत प्राय ।
 नेबगह् चाहि घबिक वै कारे, नयऊ घसूँ देखि छेपियारे
 जगु मासी निति घाई खीटी सरग शाइ हिरग तिगह् पीठा
 सबा साइ हस्ति गजबला परबन सरिस खातत जग हुरा ।
 कसिह परब माई नद घाबहि भाणहि हस्ति मय बाह पाबहि ।
 ऊपर शाइ गनन तव बसा घी भरती सरगहि बसमत ।
 मा भु इषाण बसत गगनी, बाही पो धरहि उठै तहै पानी ।

यही उहाँ तक कवि उत्प्रेक्षा आदि क द्वारा सादृश्य विधान करता है वहाँ तक बिम्ब निर्मित होता है परन्तु वहाँ कवि कल्पन को प्रतिघब में प्रकट करता है वहाँ बिम्ब विमूर्तनित हो जाता है भूमि क बँसने, आकाश के पिरन आधियों क पेर रखत ही पानी निकल जाने से कोई चित्र सामन नहीं आता। अतम्भव वस्तुओं की व्यापार के कारण बिम्ब में व्यवधान पड़ता है। इसी प्रकार अलघिष्य कल्पन में कवि क लेखों बरनियों आदि क विषय में भी प्रतिघबोहितपूण कल्पन कह है, जो अतम्भव हृदय के कारण मात्र कमत्कार का ही स्थान कर सक है। इन समस्त स्थितियों पर कमत्कार की प्रधानता से कहीं भी बिम्ब विधान नहीं हुआ है।

पन्थ प्रसकारों मुख्यतः प्रातिमान दृष्टांत निवसना आदि में भी सुन्दर विषय योजना मिल जाती है। वस्तुतः कमत्कार के सूजनकर्ता प्रसकारों क प्रतिरिक्त पन्थ सभी प्रकार क प्रसकारों में बिम्ब निर्मित हो जाता है। बिम्ब मुख्यतः दृष्टता और इन्द्रियता के आधार पर निर्मित होता है, जो अनेक प्रसकारों में प्रायः प्रायः होती है। इस प्रकार स्पष्ट है कि बिम्ब और प्रसकारों में पर्याप्त निकट्य है यद्यपि सभी प्रसकार बिम्ब नहीं होते और न ही बिम्बों का साथ अनेक प्रसकारों का अर्थ है किन्तु भी दोनों में पर्याप्त निकट्य है।

समष्टि में कल्पना क साथ और उच्च पन्थ करों प्रतीक उपमान प्रसकार आदि से बिम्ब का निकट का सम्बन्ध है। कल्पना के स्वरूप उपयोग में और उच्च काम काव्य में विविष्ट महत्त्व रखते हैं। कल्पना क काव्य में कर्त्तव्य रूप है। अनेक ही—प्रतीक बिम्ब प्रमाण आदि। प्रतीक काव्य में विविष्ट महत्त्व रखते हैं। प्रतीक कल्पना का ही एक रूप है परन्तु बिम्ब से बहु भिन्न है उनमें अनेक अन्तर्भाव हैं परन्तु अनेक का उच्च प्रयोग और उच्च पन्थ मिल मिल है जिसके कारण बहु काव्य में स्वतन्त्र प्रतिष्ठा रखते हैं। उपमान प्रसकार प्रसकार भी कवि की कल्पना के एक रूप है। इन

का मूल शास्त्र है। अतः बिम्ब विद्या इनमें प्रायः सम्मिलित होता है परन्तु दोनों में पर्याप्त अन्तर है। दोनों का क्षेत्र और दोनों के उद्देश्य भिन्न हैं। बिम्ब का उद्देश्य ऐश्वर्यवन्धता और वृद्धता है। अतः प्रकार अथवा उपमान का केवल सावधानता। इस प्रकार स्पष्ट है कि कल्पना और उसके अनेक रूपों में अनेक साम्य एवं वैभिन्न्य है। बिम्ब कल्पना के इन सभी रूपों में प्रमुख स्थान रखता है। स्वयं कल्पना का ही अर्थ है मूर्ति निर्माण। प्रतीक मूल रूप में बिम्ब है और उपमाओं या सादृश्य विद्या का अन्तर्गत रूप भी बिम्बपूर्ण ही होता है।

अध्याय ४

विम्ब, भाव और भाषा

विम्ब भाव को अभिव्यक्त करता है और भाषा में अभिव्यक्त होता है। इस रूप में भाव और भाषा विम्ब के दो किनारे हैं। भाव और भाषा के बीच की कवि की कल्पना की सबलया विम्ब है। भाव से अभिभूत होकर कवि उसकी समुर्तता को स्थापित करके भाषा में प्रस्तुत करता है। समुर्त भावों का मूर्तचित्रण को भाषा में प्रकृत होता है, विम्ब का ही क्षेत्र है। भाव एवं भाषा दोनों का योग ही विम्ब का निर्माण होता है। इन कारण विम्ब के अध्ययन में विम्बगत भाव और भाषा का परीक्षण करना आवश्यक है। विम्ब मात्र शब्द या काव्य का बाह्य रूप ही नहीं है। भाव से भी उसका मह्य सम्बन्ध है। इसलिये जब विम्ब के सदस्य में भाव भाषा धारि का अध्ययन करने का प्रबल क्रिया लायेगा।

भाव

(१) भाव की अभिव्यक्ति

काव्यगत कल्पना एवं विम्ब विद्या में स्मृति भाव एवं विचारों का प्रमुख महत्व है इनमें भाव एवं विचार सर्वप्रधान हैं वस्तुतः काव्य में ही भाव सबसे विचार की स्थिति काव्य की प्रथम अभिव्यक्ति है। भावों के धारा में कवि कर्म की कल्पना ही प्रथम है। काव्य का सभ्य ही भावों का उपयुक्त विषयों को सामने रखकर सृष्टि के माता रूपों के साथ मानव हृदय का सामंजस्य स्थापित कराना है। भाव की समुर्तता से ही कवि कर्म का प्रारम्भ होता है और उसी भाव की समुर्तता पाठक या श्रोता में जाग्रत कर देना कवि का अन्तिम लक्ष्य है। इस रूप में भाव ही काव्य का प्रथम और अन्तिम है। काव्य सदा भाव का पापक रखा है। भावहीन बर्तन किसी रूप में काव्य के अधिकांश नहीं हो सकते चाहे उनमें बाह्य मीलन और समन्वय की कृति ही मात्रा क्यों न विद्यमान हो। भाव की स्थिति की समुर्तता के कारण ही प्राचीन साधारणों ने भावों, विचारकाव्य धारि को अकाव्य कह दिया था।

१ एम पीएस—भाष्यन सुरेश पृ १६१

२ emotion is the beginning and the end of the poetry in sense unknown to prose.

बिम्ब में भी भाव अनिर्वाय है। केवल ऐंद्रियता के आधार पर ही किसी वर्णम को बिम्ब नहीं कहा जा सकता उसमें भाव की सत्ता अत्यन्त आवश्यक है। इसी कारण बार्ताओं समाचार पत्रों के वर्णनों को जिनमें ऐंद्रियपम्पता के साथ साथ व्योरेवार बटना भ्रम भी रहता है बिम्ब की श्रेणी में नहीं रखा जा सकता। बिम्ब का भाव स्वयंका हाता आवश्यक है इसी रूप में काव्य में उसकी उपमोचिता है। बिम्ब में भाव की सत्ता को एकमत से स्वीकार किया जा सकता है। बिम्ब के अन्तर्गत तीन श्रेणियाँ—अनुभूति भाव एवं आशय—में भाव भी एक है। जिनका उल्लेख द्वितीय अध्याय में हो चुका है। इनमें भाव की आवश्यकता अनिवार्य है। बिम्बका के अश्रेणी कवि और नेता एकरापाठक ने बिम्ब को बौद्धिक एवं भावात्मक बनाने की धोर बल दिया था। बौद्धिकता एवं भावात्मकता दोनों ही बिम्ब में आवश्यक हैं।^१ बौद्धिक बिम्ब भी किन्हीं अश्रेणी में भावात्मकता का प्रतिपादन करते हैं और भाव किसी न किसी रूप में बुद्धि का समाधान प्रस्तुत करते हैं। अस्तुत दोनों ही अर्थ भावात्मक एवं बौद्धिक एक ही अस्तु को दो भिन्न दृष्टियों से बिये मय नाम हैं। सुविधा के लिये यहाँ भाव अर्थ में ही हम दोनों को समाहित कर लेते हैं। यह भाव रस के अन्तर्गत प्राप्त करने भाव से भिन्न इस रूप में लिया गया है जिस रूप में वह सामान्यतः काव्य वर्णों में प्रयुक्त होता है।

बिम्ब में भाव की अनिवार्यता के साथ उसकी बिम्ब में निहित स्थिति और स्वल्प को देवना भी आवश्यक है। प्रत्येक बिम्ब में भाव अनिवार्य रूप से विद्यमान रहता है पर वह बिम्ब द्वारा शब्दों में प्रकट न होकर उससे व्यञ्जित होता है। भाव की अनिवार्यता एवं स्थिति को समझने के लिए कविदार मैथिलीचरण गुप्त का एक बिम्ब देखिये

बोनी धोर प्रम पलता है।

सकि पतग भी बसता है

और बीपक भी बसता है।^२

यहाँ दुःखारम्भ—विषय का प्रसंग में कवि ने सबदनात्मक प्रतिमा का निर्माण किया है। उमिमा की विरहान्ति में अक्षता का बीपक के बिम्ब से व्यञ्जित किया है बीपक के प्रकृतित रहने के अर्थ का उल्लेख है जिससे विरह की अबसत पीड़ा की व्यञ्जना हुई है। पतंग के भी बलकर मर जान के अर्थ का अर्थ है जिससे पीड़ा का आभास ही होता है साथ ही तुष्यानुराग की व्यञ्जना भी हो पायी है। उमिमा दुःखिनी है इस कारण बीपक और पतंग के किमी और अर्थ-आलोचन सगन आदि—पर उसकी उल्लिख नहीं जाती बरन् उनके (बीपक के) प्रकृतित रहने और पतंग के उल्लेख अर्थ में पूर्वतः अर्थ हो जाने का अर्थ ही उसे प्राकृत करवा है। इस बिम्ब में पाठक पर अर्थ

१ Make it New—by Ezra Pound p. 236

२ सनेत, अक्षर अर्थ।

उमिमा की व्यथा का प्रतीक प्रभाव पड़ता है। दीपक का जलना और पतंग का जलना—दोनों ही उमिमा और सख्तमन के विरह के वा व्यक्त रूप हैं। तुल्यामुराम और प्रमम विरह—वीड़ा की अनुभूति की व्यथना यहाँ कवि का प्रिय रहा है। भाव की इस समृद्धि के कारण यह विश्व व्यक्त व्यक्त एवं सफल है। प्रसाद पंथ प्रायिक के संवेदनसमक प्रथवा नावसिक्त विषयों में भाव व्यक्तता की ऐसी ही सामर्थ्य विद्यमान है।

संवेदनसमक प्रथवा उन्नत विषयों में तो भाव की सफल अभिव्यक्ति होती ही है क्योंकि उनमें व्यंजना की भाषा अधिक रहती है अस्वरूपसमक विषयों में भी भाव की सदा प्रथम ही विद्यमान रहती है। अस्वरूप प्रथम विषय भी पाठक की भाषात्मक अनुभूति को ही प्रसर करता है और जसमें सौन्दर्य का सुजन भी करता है। अस्वरूपसमक विषय अस्वरूप प्रथम होते हुए भी केवल अस्वरूप पर प्रभावित नहीं रहते क्योंकि वह केवल अस्वरूप के ही लिये नहीं होते उनके माध्यम से भाव व्यंजना ही कवि को प्रतीक रहती है। उदाहरण के लिए जामसी का एक अस्वरूप प्रथम विषय सीधिये

हाइ मये मुरि कीवरी नत नई सब तसि ।

रौब रौब तन जुनि छठी कहेसु विधा ऐहि भांति ।

यहाँ यद्यपि काव्य की उन्नतता पड़ति का प्रभाव होता है, परन्तु केवल अस्वरूप ही इन विषय का प्राण मही है। यहाँ कवि विरह जस्य इच्छता का रूप देना एवं निरन्तर प्रिय के नाम को रट कर मनस्य भगन की व्यंजना करता जाहता है इस के लिये वह वाच शब्द का रूपक देता है। स्पष्टतः प्रतिशयोक्ति का अर्थ अस्वरूप सेने पर भी कवि ने सादोपकारक विषय निर्मित किया है। विरह की इच्छता एवं अस्वरूपता की व्यंजना यहाँ कवि को प्रतीक है जिसकी विषय द्वारा सफल अभिव्यक्ति हुई है। किसी भी रूप में क्यों न ही विषय सर्वत्र भाव की उत्कृष्ट अभिव्यंजना में योगदान देता है। यही विषय का सत्य है^१ इसीलिये भाव की उत्कृष्ट और उत्कृष्ट अभिव्यक्ति का वह एक प्रथम साधन कहा जा सकता है।

(२) नाम की प्रकृतता

भाव को विवेचन करते हुए आचार्य युक्त ने उसे चित्त की चेतन दशा विवेचन^२ कहा है। चित्त की यह विविध चेतन दशा ही काव्याभिव्यक्ति में प्रथम है परन्तु यह विविध चेतन दशा अर्थात् भाव अपने मूल रूप में अस्वरूप है। काव्य भाव की इस अस्वरूपता को ही स्थापित करने का प्रयत्न है। भाव की प्रकृतता काव्य में संवेदनीय रूप में प्रस्तुत नहीं हो सकती तभी वह पाठक में रस सृष्टि करने में समर्थ हो सकती

१ that the method, of poetry is to convey emotion to reader
—Poetic Image by Lewis p 20.

२ विवेचन—भाव में युक्त

इसीलिये काव्य में भाव की समूर्तता को शब्दों के द्वारा मूर्तित किया जाता है। शब्दों के द्वारा मूर्तित किये गये भाव बिब ही हैं। इसी रूप में भाव सुविचनीय बनकर उस मूर्ति करने में समर्थ हो सकता है। भाव की सत्ता काव्य में धावस्मयक मान लेने पर उसकी अभिव्यक्ति क रूप का प्रथम सृजन ही उठता है। भाव को व्यक्तता के कारण अभिव्यक्ति का कोई मूल साधन प्रबन्ध ही बाह्यिसे बिब ही इस धावस्मयता ही पूर्ति करता है। भावगत धरूपता के कारण बिब ही भाव की अभिव्यक्ति का प्रथम साधन प्रतीत होता है भाव की समूर्तता का बहु द्रव्य बनाने द्वारा मूर्त बनाकर प्रस्तुत करता है। 'वस्तु' भाव की सत्ता काव्य में कहीं प्रत्यक्ष से प्रकट नहीं हो सकती उसे कहा नहीं जा सकता परन्तु व्यंगित किया जा सकता है और उसकी यह व्यंगता बिब के रूप में ही हो सकती है। उदाहरण के लिये रति भाव को लीजिये। भाव रूप में यह हृदय की एक बिद्युत् अनुभूति प्रथम बिद्युत् प्रवस्था है जो काव्य में कबल शब्दों के माध्यम से प्रस्तुत नहीं की जा सकती है। कवि उसको विभाव अनुभाव धारिक के बचनों द्वारा व्यंगित करते हैं। रति भाव की व्यंगता बिहारी इस प्रकार करते हैं

कहत नरत शीघ्रत भिगत मिसल धिसल लजियात ।

मरे जीन में करत हैं नीतन ही सों बात ।'

यहाँ कहीं भी रतिभाव है' ऐसा जन्मैस नहीं है हृदय अनुभावों धर्वात् उनके क्रिया-व्यवहारों के वर्णन के द्वारा रतिभाव की प्रतीति होती है कहना सीधला नजाना मिसला धारि व्यागार है जो उनकी पारस्परिक रति को प्रकट करत हैं। यह सभी धरूप धरूपने धाव में एक बिब हैं, बिबसे भाव वृत्त बनकर हमारे सम्मुख धावा है और हम रति भाव की अनुभूति कर सकते हैं। अनुभवगम्यता की क्षमता के कारण यह धरूप बिब विष्णु की श्रेणी में धाव है। स्पष्ट है कि बिब का धरूपम्य लेकर ही भाव धरूपनी समुचित अभिव्यक्ति प्राप्त करता है।

भाव कहीं भी काव्य रूप में प्रकट नहीं होता। स्वभाव बाध्यत्व दोष तो काव्य धाव में एक बड़ा दोष माना गया है मुक्तजी ने भावों का बिबेचन करते हुए स्पष्ट सिद्धा है कि जब तक कवि भावों को अनुभावों के रूप में बगित नहीं करता उनकी अनुभूति ही ही नहीं सकती। दोष है कटन से शीघ्र भाव की अनुभूति हो यह कमी सम्भव नहीं है उसके लिये अनुभावों धर्वात् बिबों का माध्यम ही उचित है।' इस प्रकार भाव को व्यक्तता बिब की धावस्मयता को प्रकट करती है।

भाव की मूर्त धरूप नहीं होते उनके कारण धर्वात् उद्गम स्वत धरूप ही पूर्ण होते हैं। कारण भाव की व्यंगित करण द्रव्य के बिना नहीं हो सकती उसके लिये किसी शीघ्र हीन प्राणी वा बिब और उसकी विषयवाची का रूप मानने माना

भावस्यक होमा । इसी प्रकार हृषे की उत्पत्ति घानन्द की धनुमबगम्य अवस्था के प्रभाव में नहीं हो सकती । सारोष यह है कि भाव का अन्त मूल में मूर्त एवं गोचरकर्मों में ही होता है । इस कारण भाव की अभिव्यक्ति के लिये मूर्त एवं गोचर माध्यम अथे शिष्ट है जिसके द्वारा भाव का प्रह्व किया जा सके । शुक्ल की ने रस मीमांसा में लिखा है—'काव्य के लिये अनेक स्थलों पर हमें भावों के मूल और आदिम कर्मों तक जाना होमा जो मूर्त और गोचर होंगे । जब तक भावों से सीधा सगाव न रखने वाले मूर्त अवका गोचर रूप न मिलेंगे तब तक काव्य का वास्तव रूप बड़ा नहीं हो सकता । भावों क प्रमूर्त कियों के आचार भी मूल में मूर्त और गोचर मिलेने जैसे यद्योतिष्या में कुछ दूर चलकर उच आगन्ध के उपयोग की प्रवृत्ति छिपी हुई पाई जायेगी जो अपनी सारीक काम में पड़ने से हुमा करता है ।' स्पष्ट है कि भाव का अन्त मूलतः मूर्त अवका गोचर कर्मों से हुमा है इस कारण काव्य में भावों की अभिव्यक्ति के लिए मूर्त एवं गोचर वर्णनों की आवश्यकता प्रतीत होती है, परन्तु भाव की इस मूल मूर्त गोचरता का क्षेत्र काव्य से बाहर का है । काव्य में स्थित भाव को तो प्रमूर्त और गोचर ही कहा जा सकता है । और उसकी कथन से नहीं बरत् केवल वर्णन द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता है । इस रूप में बिम्ब की ही भाव की प्रमूर्तता को मूर्तित करने का मय है ।

(१) भाव की अखंडता

भाव एक अखंड सत्ता है, अखंड भाव की प्रामुखी नहीं हो सकती और न अखंड रूप में उसकी अभिव्यक्ति हो संभव है, साहित्यशास्त्रियों न भाव को अखंड माना जा । भाव के विस्तार की कोई निश्चित परिधि भी उन्होंने निर्धारित नहीं की की उन्होंने भावों के विभिन्न खंड अवका विभाग बनाए उनमें केवल उपयोगिता और अव्ययन की सरलता की दृष्टि ही रही । बाबू स्वामसुन्दरदास की माध्यता को जान लेना यहा उपादेय होगा । उन्होंने लिखा है भावों के विस्तार की कोई सीमा न होने के कारण उनके सम्बन्ध में कोई नियम निर्धारण भी नहीं किया गया । यद्यपि हमारे भावों की कोई परिधि नहीं है यद्यपि वर्माचार्यों और दासगिर्कों ने संसार के शिव की दृष्टि से और भारतना के विकास का लक्ष्य करते प्रायः सभी समयों में अपने अपने मठ व्याप्त किये हैं और वे मठ संसार में माय भी हुए हैं ।^१ भाव की अखंडता और उच्च अन्त विस्तार से काव्य के अन्तर्गत यह तात्पर्य सिद्धा जा सकता है कि भाव की पूर्ण अभिव्यक्ति अखंड रूप में नहीं हो सकती उसके लिये सम्पूर्णता प्रथम नमप्रता की आवश्यकता है । भाव की अखंडता की रक्षा ता काव्य में दावों की अखंडता (पूषकता) के कारण नहीं हो सकती पर समप्रता की रक्षा अवश्य हो सकती है । अखंड की अभिव्यक्ति सम्पूर्णता चाहती है यह आवश्यकता कि क द्वारा पूरी हो जाती

^१ रघुनीनांता : अन्तर्गत पृ० १३०

^२ अ विद्यापयन : स्वामसुन्दरदास १० ६६

है। भाव की समग्र रूप में अभिव्यक्ति बिम्ब द्वारा ही हो सकती है। खंड रूप से भाव के वर्णन में रसात्मकता नहीं पायी इसीलिये साहित्यकारों ने ऐसे खण्डों में जहाँ भाव का खंडित उल्लेख हो अर्थात् जहाँ केवल स्बाईभाव रहता वा रसाभास की अभिव्यक्ति कही है, जिसे स्पष्ट ही काव्य की उत्कृष्टता नहीं कहा जा सकता। भाव को समग्रता के साथ प्रस्तुत करना ही काव्य की उत्कृष्टता का द्योतक है। रूपक अथवा बिम्ब इस समग्रता की गफ्तता के साथ प्रस्तुत कर सकता है।^१ इसीलिये भावों के उत्कृष्ट और रसनीय बचन में वह सहज प्राण्य होता है। भाव की समग्रता को वह रूपों का रूपों प्रस्तुत करने में समर्थ है। उदाहरण के लिए कोई भी रूपक या बिम्बालम्ब बर्णन बिम्ब जा सकता है। भाव का जिस समग्रता एक समग्रता के साथ वह प्रस्तुत करने में समर्थ हो सकता है उतना अभिव्यक्ति का सम्य माध्यम नहीं हो सकता। पाउण्ड मुईस स्पत्रियन आदि एनी न बिम्ब की बर्णना करते हुए उसकी समग्रता (हौसनस) पर बल दिया है। मुईस ने बिम्ब के साथ जिस सदर्भ परिकल्पित एक वातावरण की आवश्यकता समझी है वह कुछ और नहीं बरन भाव का ही सम्पूर्णता के साथ प्रस्तुत करने की बिम्ब की सामर्थ्य का स्पष्टीकरण है। मुईस का कथन है कि बिम्ब का एक आवश्यक गुण गुण्य है। बिम्ब किसी वस्तु भाव को ही प्रस्तुत नहीं करता बल्कि वस्तु को अनुभूति के सदर्भ में प्रस्तुत करता है।^२ इसके साथ के साथ उसके सम्बन्ध का ज्ञान होता है और समग्रता की निष्पत्ता भी भा जाती है। प्रतीक आदि में वह समग्रता की भिन्न नहीं रहती। प्रतीक यद्यपि उत्तमक अधिक हो सकता है पर भाव की समग्रता को वह सुर्या त नहीं रख सकता। प्रतीको में जो समग्रता का गुण होता भी है वह ही उनकी मूलभूत बिम्बालम्बता के कारण ही होता है। प्रसाद के आँसू के एक उदाहरण से यह तथ्य मनीर्भाति स्पष्ट हो सकता है। यहाँ प्रतीक और बिम्ब दोनों ही प्रकार की अभिव्यक्ति की प्रणालियाँ हैं

भ्रमा शकौर गर्जन वा धिजसी बी नीरव गामा

वाकर इस गुम्य हृदय को, सबन वा डेरा डासा ।

यहाँ कवि पीड़ा और श्वा के अकस्मात् और एक छत्र मात्साय के भाव को व्यक्त कर रहा है। प्रथम दो पंक्तियों में प्रस्तुत शब्द—भ्रमा शकार, गर्जन बिजसी और नीरवमासा प्रतीकात्मक अर्थ रखते हैं। यह गुण पीड़ा श्वा अन्तर्दृष्ट आदि न प्रतीक रूप में प्रयुक्त हुये हैं। अतिव्यक्त वा पंक्तियों से कवि के मानस के बिम्ब का आभास

Metaphor is complex because it renders the complexity of reality ... —Poetic Process by George Whalley p 113

Every image recreates not merely an object but an object in the context of an experience and thus an object as part of a relationship—Relationship being in the very nature of metaphor

—Poetic Image by G Day Lewis, p. 20

मिलता है। पीड़ा और दुःख का यहाँ मानवीकरण है। दूध हृदय में डेरा बना शब्द ऐसे व्यक्ति को रूप में प्रस्तुत करते हैं जिसमें दूध स्वतः को बंदकर अनिश्चित काम तक साबिकार पड़ाव बना लिया हो इससे पीड़ा और व्यथा के बन्नाम् और अनिश्चित काम तक के साबिकार कर लेने की व्यंजना हुई है। बड़ी कवि का मूल भाव था। यहाँ यद्यपि शंका लक्ष्मीर घादि समस्त प्रतीक हैं उल्लेखक भी हैं, पर कवि के भाव की समस्त व्यंजना करने में वह समर्थ नहीं हैं। अन्ततः समय तक क सिये पीड़ा और व्यथा के अन्ततः का जाने की जो व्यंजना बिंदु करता है, प्रतीक उनमें तनिक भी सहायक नहीं है वह तो पीड़ा और व्यथा के माना रूपों को मिला भर देता है। इस प्रकार कवि अपना समस्त भाव प्रतीक द्वारा नहीं बरत् बिंदु तय स्पष्ट कर सका है। यहाँ शंका लक्ष्मीर बदन को प्रतीक रूप में न दिया जाकर उपमा के द्वारा भी उल्लिखित किया जाता तब भी भाव की समस्त व्यंजना हो जाती पर प्रतीक होने पर भी बिंदु के अन्ततः में भाव व्यंजना असम्भव ही थी। इन परिस्थितियों का समस्त सौन्दर्य पीड़ा व्यथा घादि के प्रतीकारत्मक उल्लेख में नहीं बरत् पीड़ा की अन्ततः और अन्ततः के व्यंजक बिंदु में है। यहाँ भाव की समस्तता का बिंदु ही सत्यता न साथ प्रस्तुत कर सता है।

इस समस्तता अर्थात् निमित्त अनुभूति को व्यक्त करने की क्षमता के कारण अन्ततः अनिश्चित का सर्वप्रथम माध्यम रूपक अथवा बिंदु को बनाया गया था। प्राचीन काल में जब व्यक्ति के भाव अन्तः और अनुभूतियाँ निमित्त थी बिंदु या रूपक ही अनिश्चित या अन्ततः स्वीकृत हुआ था। रूपक इस प्रकार अनिश्चित का प्राचीनतम माध्यम प्रतीक हाता है।¹ डा० ह्यूज ब्लेयर न अपनी पुस्तक *Lectures on Rhetorics* में लिखा है कि अन्ततः प्राचीन काल में मनुष्य की भाषा अन्ततः सत्ते अन्ततः उपकरणों से पूरा होती थी और 'म रूप में अन्ततः ही अन्ततः रही होती।' बिंदु की समस्त को अनिश्चित देने को अन्तः में ही अन्तः अन्ततः और अनिश्चित का प्रथम साधन बनाया है।

(४) भाव का ऐपणोयता

भाव हृदय को एक निमित्त एवं अन्तः अन्ततः है, उपको अनिश्चित द्वारा अन्तः और अन्ततः में प्रपणीय बनाया ही कवि काम है। भाव की अन्ततः और

1 Primitive experience and expressions are not simple but complicated. And Metaphor—like many other features of the poetic mentality—is primal and primitive.—Poetic Process by G. Whalley p. 143.

2 Hence the early language of men being entirely made up of words descriptive of sensible objects it bears, of necessity, extremely metaphorical.—Dr. Hugh Blair quoted by Owen Lattimore in *Poetic Diction* p. 72.

गूढ़ता साधारण शक्तों द्वारा प्रकट नहीं हो सकती और न ही उस रूप में वह शोभा या गठनों द्वारा प्राण ही हो सकती है। कवि भाव की प्रेयणीयता के लिये बिम्बों एवं रूपकों का माध्यम ग्रहण करता है। अपने सहाय भावों को भी वह सत्य रूप में प्रकट नहीं कर सकता बल्कि बिम्ब के माध्यम से प्रकट करता है। सभी वह अनुभूति के योग्य हो पाते हैं। उदाहरण के लिए आसगी का एक बिम्ब लीजिये—

उमल गुर जस बैपिष चाँद छपे तेहि रूप ।

ऐसे सधे जाहि छपि पनुभाबति के रूप ।

यहाँ कवि पद्यावती के रूप की यच्छता को व्यञ्जित करना चाहता है। पद्यावती के लिये आपसी के रूप में एक अपूर्वता लोकोत्तरता का भाव है। वह अपूर्व सुन्दरी है और उसके समस्त संसार के अन्य सौन्दर्य उसी प्रकार पीके पड़ जाते हैं जिस प्रकार उदित होते सूर्य के समस्त चाँद का सौन्दर्य। इस भाव को कवि अपूर्व सुन्दरी है कहकर नेत्रमं चक्षुषों में प्रकट नहीं कर सकता या क्योंकि ऐसा करने पर वह काव्य नहीं बल्कि प्रकाश हो जाता। इस कारण उसके सौन्दर्य की व्यञ्जना के लिए कवि रूपमा के द्वारा सुन्दर से सुन्दर रूपों को सम्मूलन रखता है और उसके सौन्दर्य को प्रेयणीय धारणा सहज प्राण बनाने का प्रयत्न करता है। यहाँ उदित होते सूर्य के समस्त चाँद के छिप जाने के बिम्ब द्वारा पाठक पद्यावती के सौन्दर्य की प्रतीति कर सकता है और अन्य चतुर्थों के अन्य सौन्दर्य की अनुभूति भी कर सकता है। सहज भाव की यह अभिव्यक्ति बिम्ब के माध्यम से ही सहज प्राण बनी है।

उदाहरण की कविता से एक अन्य उदाहरण भी द्रष्टव्य है। रूप्य के प्रवास के बाद गोपियों के प्रेम की गहवाई की अभिव्यक्ति व्यञ्जित करने के लिये कवि ने बिम्ब का प्रयोग किया है

र्यों र्यों बसे जात कूरि-कूरि प्रिय प्राण मूरि,

र्यों र्यों बसे जात मन मुकुर हमारे में ।

प्रजाति क्या गया रूप्य हमन गुर होत जात हैं र्यों-र्यों रूप्य में पड़ने का प्रतियोग्य की भाँति अंतर में बैठत हुए प्रतीत होते हैं। बिम्बान के दोष से इहीत इस बिम्ब में अपूर्व भाव व्यञ्जकता है। निश्चय होत पर व्यक्त का प्रतिबिम्ब रूप्य की ऊपरी सतह पर पड़ता हुआ प्रतीत होता है पर जैसे-जैसे दूरी बढ़ती जाती है प्रतिबिम्ब क्षण के अंतर में गूँसा हुआ प्रतीत होता है। रूप्य भी गुर होकर गोपियों के हृदय में और अन्दर तक बैठ गया है। यही कवि की व्यञ्जना है जो कबल शब्दा में प्रकट होकर अनुभव दम्य नहीं हो सकती थी बल्कि भावव्यञ्जना बिम्ब द्वारा प्रस्तुत शक्ति सहज प्राण हो गई है।

भाषा के अनिश्चित शब्दों में बिम्बों का भी प्रयोग स्थान रहता है। बिम्बान बुद्धि के शोचन में संश्लेषित होने के कारण अधिक गूँध और जटिल होते हैं और उन

साधारण भी उन्हें सहज ही नहीं समझ पाता। इसी कारण दार्शनिकों और धर्मशास्त्रियों की भाषा सर्वत्र रूपकारक होती है। ज्ञान सदेव विश्वों के द्वारा प्रेषणीय बनता है। साहित्य के संतपत भी बहुत गूढ़ और जटिल विचारों का समावेश होता है, नहीं कवि बिना द्वारा उसे प्रेषणीय बनाता है। जीवन की क्षणमग्नता निस्वारता प्रथमया व्यक्तता प्रायि ऐसे गूढ़ विचार हैं जिनमें रूप में पाठक जिन्हें ग्रहण नहीं कर सकता। क्षणिकता निस्वारता प्रायि का वास्तविक बिना की सहायता के बिना वह कभी नहीं समझ सकता। उसकी युक्ति इतनी उन्नत नहीं होती कि वह विचार को समुक्त रूप में समझ सके। वह जटिल विचार को सभी ग्रहण कर पाता है जब जीवन और जगत् से संबंधित उसका कोई प्रपना अनुभव उपभाग के रूप में उसके सम्मुख प्रस्तुत किया जाय। जायसी ने इन्हीं भावों की अभिव्यक्ति के लिये सोच जीवन का एक अत्यन्त परिचित बिना प्रस्तुत किया है—

मुहम्मद जीवन बल मरण रहूँ धरी की रीति ।

धरी से घाई क्यों मरी धरी जनम गा बीति ।

यहाँ जीवन की समूर्त निस्वारता एवं क्षणिकता खूट की क्षण-क्षण मरने और शाही होने वाली धरिया के रूप में मूर्तित हो गई है। उसका अलक्षण मरना और शाही होना जीवन का प्रारम्भ होता और समाप्त होता है। जीवन का अस्तित्व अपना ही अस्थायी व क्षणिक है जिस प्रकार खूट की धरिया में मरे पानी का। इस प्रकार खूट की धरिया का बिना जीवन के क्षणिक अस्तित्व और अस्थायता को प्रेषणीय बना देती है। सामान्य से साधारण स्तर का पाठक भी भ्रम जीवन की अस्थायता की समुक्ति कर सकता है। कबीर ने इस भाव प्रथमया विचार की अभिव्यक्ति के लिये एक अन्व बिना प्रस्तुत किया है—

पानी कैरा बुलबुला प्रस मापुस की जात ।

देखत ही छवि जायमा बस तारा परमात ।'

यहाँ पानी का बुलबुला और प्रमात का तारा निस्वारता के गूढ़ भाव को सहज ही प्रेषणीय बना देते हैं। बुलबुले और प्रमात ने तारे का क्षणिक अस्तित्व उसका परिचित है इसके माध्यम से गूढ़ भाव भी साह्य हो सकते हैं। क्योंकि यह विचार को मूर्तित कर देते हैं। इन विश्वों के अभाव में इस प्रकार के जटिल भाव कभी साह्य नहीं बन सकते थे।

योगियों सिद्धों और भाषों प्रायि के योगपरक विचार भी समूर्त विचार हैं। उनको प्रेषणीय बनाने के लिए कवियों ने रूपकों द्वारा व्यक्त किया है। जटिलता के कारण ये सिद्धांत एवं विचार बुद्धि प्राण्य नहीं हो सकते थे। इस कारण रूपकों का आश्रय लिया गया। कबीर तथा अन्य सिद्ध और नाथ सम्प्रदाय के संत कवियों में ऐसी रूपक बहुधा मिल जाते हैं। जायसी व भी दोम के सिद्धांतों को रूपक के रूप में

प्रस्तुत किया है—

गढ़ तस बाँकू बीस तोरि काया परिक बेनु सै घोहि की छाया ।
 पादुख नाहि कृति हूठि कीन्है खेड़ पावा तई छापुहि बोन्है ।
 श्री वीरी तेहि बड़ मझिमारा धी तेहि फिरहि पाँच कोइयारा ।
 बतब बुमार गुप्त एक नाकी धमम बड़ाव बाट सुठि बाँकी ।
 भेरी कोइ जाइ घोहि घाटी बी सै भेव बड़ हाइ पाँठी ।

यह याम के सावनों और घरीर की धक्काघो को यह के रूपक द्वारा प्रस्तुत किया है। यद्यपि ऐसे बगन पाव और रसनीयता के प्रभाव में बिम्बधारक रूप में यद्यत् और उत्कृष्ट नहीं कह जा सकत परन्तु प्रकृति का स्थायित्व करने के बिम्ब के गुण का प्रकटा प्रकाशन करते हैं। समष्टि में प्रेयनीयता के त्रिय बिम्ब की उपयोगिता को एकमत में स्वीकार किया जा सकता है।

(५) भावात्मक तन्मयता

अब तब हमने भाव की प्रकृता प्रकृता धारि के साथ बिम्ब के सम्बन्ध और उसकी प्रावस्थता का देखा। अब हम भाव की उस स्थिति को देखेंगे जहाँ बिम्ब का जन्म हुआ है। यह स्थिति भावात्मक तन्मयता की है। भाव की तन्मयता की स्थिति एक ऐसी रक्षा है जहाँ बिम्ब की उद्भावना प्रकृत होती है। कवि जहाँ भाव विभोर होता है वहाँ अपनी अनुभूति का सर्वत्र बिम्ब के माध्यम से प्रकट करता है। बिम्ब अपनी समग्रता और स्वच्छता के द्वारा भावों के विस्तार को भी प्रत्यक्ष सफल रूप में प्रतिपादित करने की क्षमता रखता है। प्राचार्य शुक्ल ने कवि की श्रेष्ठता को बर्णन करते हुए कहा था कि रघात्मक स्वर्णों की पहचान जिस कवि को त्रिविणी प्रदिक होमी वह उतना ही श्रेष्ठ कहा जायगा। बिम्ब भी ऐसे स्वर्णों पर अपनी श्रेष्ठता का प्रमाण देते हैं। रघात्मक स्वर्णों पर जहाँ कवि तन्मय होकर भाव वर्णन रूप वर्णन या वस्तु वर्णन करता है वहाँ प्रकृत ही श्रेष्ठ बिम्बों का निर्माण हुआ है।

तन्मयता ही इस स्थिति की मौलिकाध्य से इतनी स्पष्टता से नहीं देगा या मरुता त्रिविणी स्पष्टता से महाकाव्य में। नीति में एक ही भाव एक ही रूप की प्राकृति बार-बार होती है पर महाकाव्य में घटनाओं के मर्म में अनेक भाव घाते रहते हैं। इन अनेक रूपों पर प्रकृत घनेक घटनाओं में जहाँ का वर्णन वह तन्मय होकर करता है वहीं वह श्रेष्ठ बिम्बों का सर्वत्र करने में भी समर्थ होता है। प्रत्येक स्वयं और प्रत्येक घटना पर कवि उत्कृष्ट बिम्ब विधान नहीं कर सकता। कुछ भाव और कुछ स्वयं ही सामान्यतः ऐसे होते हैं जहाँ कवि तन्मयता का अनुभव करता है और उसकी प्रतिभा उत्कृष्ट बिम्ब-योजना में समर्थ होती है। तुमनी और वेगव का काव्य यद्यपि वर्णनक चरित्र धारि की दृष्टि में समान है पर उत्तरा घन्तर भी स्पष्ट देगा

का सङ्का है। जिस स्थिति पर तुलसी की दृष्टि अस्त शक्तिनी जन्मात्मक उद्भासनाओं और सुन्दर काव्यनिक बिम्बों का बिभस करने में समर्थ हो सकी है वही वेद्य का कवि हृदय भाव बिभोर न हो सचन के कारण केवल धर्मकारों का पोषण या जन्मात्मक का सर्वन करने के लिए प्रतिभा का कुछ समय ईय से व्यय करता है पर बिम्बों का सर्वन करने में प्रसमय है। यह कवि की मन-स्थिति का प्रस्तर है जिससे उसका वाक्य को इतना मित्र रूप प्रदान किया है। उन्मत्तमिक बनपमन कबट प्रयोग धारि धनेक स्थलों पर वही तुलसी सुन्दर उपमानों और रूपकों की योजना करता है वही तन्मयता न होने के कारण श्याम ध्वजिक्तर चम्पामकारों और अन्य जन्मात्मक प्रदान उल्लिखों में ही बहान की इति का देत है। योदावरी नदी का वर्णन—

विद्यमय यह योदावरी प्रमत्तन को कत देते।

केवल जीवन हार के कुछ प्रसाय हर लेते।^१

जन्मात्मक विरोध के प्रदान में वा पोषक होने के कारण तन्मयता की मूलता का परिचायक है। कवि योदावरी का कुछ नाचिनी और पुष्प स्थली कहता है पर त्रम भक्ति भाव के प्रति तन्मयता न होने के कारण कोई बिम्ब प्रस्तुत नहीं कर सकता। इसी भावों की प्रमिभ्यक्ति तुलसी ने मंडाकिनी को देखकर की है। मंडाकिनी की बुलनाचिनी और पुष्प स्थली है, कवि उसका सिधे कहता है—

रघुवर कहेइ लखन भल पाइ करहु कतहु प्रब ठाहर ठाहू।

लखन शीत पय उतर करारत, बहु रिशि किरहु धनुष बिमि तारा।

नदी पनब हरत सम सम तारा लखन कनुषकलि साबज मला।

बिभ्रभूट अनु प्रबल प्रहेरी बुझइ न बाउ भार मुडमेरी।^२

यहां दोनों उद्धरणों में मधुमि भाव एक ही है पर प्रमिभ्यक्ति में प्रस्तर है। तुलसी बिम्ब के माध्यम से भाव प्रकट करत है जिससे उनकी भक्ति भाव की तन्मयता का स्पष्टीकरण होता है इसके विपरीत केवल कोई रूप प्रस्तुत नहीं कर पाठे बल्कि उन्मत्तों के विरोध में उनमें रहते हैं। यह एक धीरे ठी भक्ति भाव में उनकी तन्मयता का प्रभाव सूचित करता है और दूसरी धीरे उनकी जन्मात्मक प्रमत्तता का निर्वण भी करता है। इसी प्रमत्तता का एक प्रमय रूप मुक्त की के साकेत में मिलता है। कविनी धीरे उल्लिख के निचले बिभ्र मुक्त की के मके हैं कतने न केवल दे सके हैं न तुलसी। बिभ्रवा रानी के लिए (कंदर्पी के लिए) मुक्त की गुपारगुता बिभ्रमेणा का बिभ्र देते हैं जो उसके निचले स्वभाव की स्पष्टि करत है। पर तुलसी ने कंदर्पी के सिधे रूप प्रचार का एक की बिभ्र नहीं दिया है उन्हें तो वह केवल नामिन धीरे लखन

१ रामचंद्रिका : बरार १० अ०

२ उन्मत्तमत्तु मुन्मो कवेभ्यकार

३ लखन वैचिनीगतु मुक्त

४ उन्मत्तमत्तु धरोभावादि

५ उन्मत्तमत्तु कवेभ्यकार

के सदस्य ही प्रतीत हुई है। कारण है कि तुलसी की सहायुभूति उसकी धीर तनिक भी नहीं है जबकि मुष्णभी उमिता की पीडा धीर बिच्छू व कैंकेयी की परचात्ताप धीर प्रात्मम्सानि के प्रति पूर्ण तन्मय हैं। भावात्मक तन्मयता के कारण बरिचों के रूपों एवं वस्तु या भाव वर्णनों में सहज ही अन्तर आ जाता है।

पद्यावत में भी जहाँ कवि तन्मय है वहाँ वह सुन्दर प्रतिमाओं का चर्चन कर सका है अथवा वस्तु का अस्सेस भर कर दिया है। बायसी की तन्मयता शृंगार के दोनों पक्षों—संयोग एवं वियोग—पर प्रकट होती है। वहाँ अनेक उत्कृष्ट बिम्ब बायसी की कल्पना दृष्टि की उत्कृष्टता का प्रतिपादन करते हैं परन्तु अग्य स्थलों पर कवि तन्मय नहीं है अतः बिम्बों में भी स्पृणता आ गई है। रत्नसेन भी अपने देश से बिना हुआ है धीर तुलसी के नाम भी यद्यपि परिम्पितपथ वैपम्य हैं पर मूलतः भावात्मक स्थिति की तन्मयता में अन्तर हीन के कारण रत्नसेन के वियोग में बरुआ का बीसा ब्रसार नहीं जैसा तुलसी के बोझों के मुड़ मुड़ कर बखान क बर्णन में। बायसी का मोह प्रकृति के प्रात्मबन रूप की धीर भी अपेक्षाकृत कम है। प्रकृति का सहज प्रकृन्मित रूप देखकर भी कवि अधिक भाव बिभोर नहीं होता। इतीन्दिये समुद्र नहीं बाय बगीच—सबका पद्यावत में उल्लिखित होते हुए भी प्रकृति के प्रात्मबन रूप क बिच बहुत कम पाये हैं। इस प्रसंग में बास्मीकि धीर कानिदास का स्मरण सहज ही हो जाता है जो प्रकृति के प्रति पूर्ण भावात्मक तन्मयता की अनुभूति करते हैं धीर इसी कारण रामाबन मयदूत रघुबंस धीर कुमार संभव धारि में अनेक सुन्दर बिच दे सके हैं। कामायनी में अतः में रहस्य चर्च में हिमालय का वर्णन है। पर बिम्ब की दृष्टि से वह उतना समृद्ध नहीं है त्रितमा धडा का रूप वर्णन या मेकदूत में कानिदास का हिमालय वर्णन। प्रसार का हिमालय वर्णन यद्यपि सुन्दर है अतः—

नीचे जलपर बौड़ रहे थे

सुन्दर सुन येनु माता पहले

कु बर करत लक्ष्मण इठलाते

बनजाते आपला के गहने ।

हरियाली जिनकी जमरी के

मनगत चित्रफदी से लमते ।

प्रतिदृष्टियों की बाग में मे

स्विरनव जो अः

पर वह अनेक रूपता इसमें नहीं है जो

रथनों पर मुख्यतः धडा बुडि धीर वन के रग
बिभोर के रहस्य धारि के वर्णन में उल्लिखित रहता ।

१. रामचरितमानस : अयोध्याकांड

२. काम.कनी : अयोध्याकांड अ. १२८

बेसने का घबकावा ही उसे कम मिला है। यहाँ हिमालय की प्राकृतिक सुपमा के प्रति कवि पूर्ण तन्मय नहीं है पर्वत के ऊपर बिरे वादलों नीचे बहती नदियों और कन्दराओं धारि को वह बड़ी बल्यी में देख पाया है। कवि पंत ने इन्हीं प्राकृतिक उपकरणों को पूर्ण तन्मयता के साथ देखा है इसी से बारभ नौका बिहार, पर्वत प्रदेश में पावस धारि में सुन्दर बिम्बात्मक बर्णन कर सका है। स्पष्ट है कि नावात्मक तन्मयता के साथ बिम्ब का कितना निकट सम्बन्ध है। बिम्ब की समृद्धि और पराष्टता कवि की भावात्मक तन्मयता की झोतक है।

(६) प्रकृतिस्य भाव—

काव्य रचना में प्रत्येक कवि प्रत्येक भाव में तन्मय नहीं हो पाता। कोई कवि किसी भाव में बिभोर होता है और कोई कवि किसी भाव में। अबभूति ने कृष्णा को सर्वोपरि कहा तो कुछ ने शृंगार को रसराज माना साथ ही वात्सल्य को प्रमुक्तता देने वालों की भी कमी न रही। काव्य में यह अन्तर बड़ी स्पष्टता से देखा जा सकता है। कोई बिम्बा कवि ही सभी भावों में पारंगत या भावबिभोर हो सकता है। (तुलसी के लिये ऐसा कहा जा सकता है पर उनमें भी मल्लि का रंग सबसे गहरा है।) अधिकतर कवि एक दो या इससे कुछ अधिक भावों में ही भावबिभोर होते हैं। मुरदास में रति और वात्सल्य भावों की प्रधानता है। इन्हीं स्वभावों पर उनकी कल्पना दृष्टि उत्कृष्ट निर्माण कर सकी है। मल्लि की भावना उनमें प्रयेदाकृत कम है। परन्तु शृंगार और वात्सल्य के स्वभावों पर उन्होंने सुन्दर बिंब प्रस्तुत किये हैं। यथा

हरि अपने अगत कछु गावत
 तनक तनक चरननि सो नावत मनहि मनहि रितावत ।
 माघन तनक घापने कर क, तनक बदन में तावत ।
 कबहुँ चितौ प्रतिबिम्ब ज्ञान में लोनी लिये जवावत ।
 मेरे शिबे लाल मनमोहन के घसे री चित जोरि ।
 पबहि इह मारम से मिछरी, छवि निरकात नून लोरि ।
 मोर मुकुट लबननि मनि कु इल उर बलमात पिछरी ।
 बसान चकक उमरन अपनाई बैसत परी ठमोरि ।^१

प्रथम उद्धरण में कृष्ण की बाज बीलापों को बिम्बामों द्वारा मूर्तित किया गया है और त्रितीय में रंग-रूप क उत्प्रेक द्वारा कृष्ण के स्वरूप को दृश्य बनाया गया है। मुरदास में रति और वात्सल्य भाव प्रधान है उनके सबसे अधिक और उत्कृष्ट बिंब इन्हीं भावों में मिल जाते हैं। तुलसी ने सभी भावों की प्रधानता की है। उन्होंने संयोग वियोग करण-बोध—सभी स्वभावों पर उत्कृष्ट बिंब योजना की है जो उनके सभी भावों पर समानाधिकार प्रकवा व्यापक उगात्मकता का परिचय देती हैं। परन्तु

^१ ललित मुरदास, संस्करण १९२, पृ० १०

^२ मुरदास, बरान १६८, पृ० १२२ सं० १०५५

के सदस्य ही प्रतीत हुए हैं। कारण है कि तुमसी की सहानुभूति उसकी धीरे तक भी नहीं है जबकि युष्ठी उमिमा की पीड़ा धीरे बिरह व कैकेयी की परवात्ताप धीरे आत्मत्यागि क प्रति पूर्ण तन्मय हैं। भावात्मक तन्मयता के कारण चरित्रों के रूपों एवं वस्तु या भाव धरनों में सहज ही अन्तर पा जाता है।

पद्यावत में भी जहाँ कवि तन्मय है वहाँ वह सुन्दर प्रतिमाओं का सर्जन कर सका है। धन्यया बन्धु का उल्लेख भर कर दिया है। जायसी की तन्मयता शृंगार के दोनों पक्षों—संयोग एवं वियोग—पर प्रकट होती है। वहाँ अनेक उत्कृष्ट बिम्ब जायसी की कल्पना दृष्टि की उत्कृष्टता का प्रतिपादन करते हैं परन्तु धन्य स्वयं पर कवि तन्मय नहीं है। घट बिम्बों में भी स्थूलता पा गई है। रत्नमेन भी अपने देस से बिदा हुआ है और तुमसी के राम भी यद्यपि परिस्थितिगत वैयम्य है पर मूसल भावात्मक स्थिति की तन्मयता में अन्तर होने के कारण रत्नसेन के वियोग में कल्या का वैसा प्रसार नहीं जैसा तुमसी के बीड़ों के मुड़ मुड़ कर बहने क बालों में।^१ जायसी का मोह प्रकृति के भावम्बन रूप की धीरे भी अघोषाकृत कम है। प्रकृति का सहज प्रफुल्लित रूप देखकर भी कवि अधिक भाव विमोर नहीं होता। इतीतिये समुद्र नदी बाग बगीचे—सबका पद्यावत में उल्लेख होते हुए भी प्रकृति के भावम्बन रूप के बिना बहुत कम पाये हैं। इस प्रसंग में वात्मीकि धीरे कानिदास का स्मरण सहज ही हो जाता है जो प्रकृति के प्रति पुन भावात्मक तन्मयता की अनुभूति करते हैं धीरे इही कारण रामानुज मेचरूठ रजुबंस धीरे कुमार संभव धारि में अनेक सुन्दर बिन्ध वे सके हैं। कामायनी में अन्त में रहस्य सब में हिमालय का वर्णन है। पर बिम्ब की दृष्टि से वह उतना समृद्ध नहीं है जितना अद्या का रूप वर्णन या मेचरूठ में कानिदास का हिमालय वर्णन। प्रद्यार का हिमालय वर्णन यद्यपि सुन्दर है जैसे—

बीजे अलवर बीड़ रहे थे

सुन्दर नुर बेतु भाता पहने

जु उजर कलाभ सवृद्य इठलाते

अमकाले अयला के पहने ।

हरियाली जिनकी जहरी थे

नमनल बिजपटी ते लमते ।

प्रतिच्छितियों की बाहु रैक ते

निबर नर भी प्रतिपस भयते ।^२

पर वह अनेक रूपता इसमें नहीं है जो कानिदास के मेचरूठ में है। कवि इन स्वयं पर मुख्यत अद्या बुद्धि धीरे मन के रहस्यों एवं समस्याओं की सुस्थियों बिलोक के रहस्य धारि के वर्णन में उत्तम रहता है। प्रकृति को भाव विमोर होकर

१ रत्नचरितनामय अयोध्याकांड

२ कामायनी : अयोध्याकांड प्रकृत ५ २२८

देसने का प्रयत्न ही उसे कम मिला है। यहाँ हिमात्म्य की प्राकृतिक सुपमा के प्रति कवि पूर्ण तन्मय नहीं है परंतु के ऊपर बिरे बादलों नीचे बहती नदियों और कन्दराओं आदि को बहु बड़ी जल्दी से देख पाया है। कवि पंत ने इन्हीं प्राकृतिक उपकरणों को पूर्ण तन्मयता के साथ देखा है, इसी से बादल नीचा बिहार परंतु प्रवेश में पावस धानि में सुन्दर बिम्वात्मक वर्णन कर सके हैं। स्पष्ट है कि भावात्मक तन्मयता के साथ बिम्ब का कितना निकट सम्बन्ध है। बिम्ब की समृद्धि और उद्वेगिता कवि की भावात्मक तन्मयता की घोषक है।

(६) प्रकृतिस्य भाव—

काव्य रचना में प्रत्येक कवि प्रत्येक भाव में तन्मय नहीं हो पाता। कोई कवि किसी भाव में विमोह होता है और कोई कवि किसी भाव में। भवभूति ने कस्सा को सर्वोपरि कहा तो-कुछ ने शृंगार को रसराज माना साथ ही वास्तव्य की प्रमुखता देने वालों की भी कमी न रही। काव्य में यह अन्तर बड़ी स्पष्टता से देखा जा सकता है। कोई विरला कवि ही सभी भावों में पारंगत या भावविमोह हो सकता है। (तुलसी के लिये ऐसा कहा जा सकता है पर उनमें भी भक्ति का रंग सबसे बड़ा है।) प्रबिकारा कवि एक दो या इससे कुछ अधिक भावों में ही भावविमोह होते हैं। सुरदास में रति और वात्सल्य भावों की प्रधानता है। इन्हीं स्वभावों पर उनकी कल्पना दृष्टि उत्कृष्ट निर्माण कर सकी है। भक्ति की भावना उनमें प्रयोज्यता कम है। परन्तु शृंगार और वात्सल्य के स्वभावों पर उन्होंने सुन्दर बिंब प्रस्तुत किये हैं। यथा

हरि धपने धायन कतु गावत
 तनक तनक चरननि तो नावत, मनहि मनहि रितावत ।
 भावन तनक धायन कर सं, तनक बदन में नावत ।
 कबहुँ बिती प्रतिबिम्ब संम में लोमी सिधे एबावत ।
 मेरे हिमें लार्य मनमोहन, से गये री बित खोरि ।
 धबहि इह धारत से निकसे छवि निरवत नुन तोरि ।
 मोर मुहुट जवननि अनि कु डल डर बननाल पिछीरी ।
 रसन बचक उधरन धरनाई देसत परी ठगीरि ।^१

प्रथम उद्धरण में हृष्य की बात सीताओं को क्रियाओं द्वारा मूर्तित किया गया है और द्वितीय में रंग-रूप के उल्लेख द्वारा हृष्य के स्वरूप को टप्प बनाया गया है। सुरदास में रति और वात्सल्य भाव प्रधान हैं उनके सबसे अधिक और उत्कृष्ट बिंब इन्हीं भावों में मिल जाते हैं। तुलसी ने सभी भावों की प्रधानता की है। उन्होंने संयोग विधायक करना-बोध—मधी स्वभावों पर उत्कृष्ट बिंब बोधना की है जो उनके सभी भावों पर समानाधिकार धरना व्यापक रासात्मकता का परिचय देती है। परन्तु

^१ लीलावत मृत्यु, मध्य २१६, ५ १००
 २. सुरदास, रसन स्व. ६ ११३ मं० १०२५

में वह बीमस्त वस्तुओं की सामने आता है। रक्त से मीगी हूबेसियां या हृदय निकाल लेने वाले हाथ धीरे रक्त से सभी उगमियां कोई मुम्बर बिम्ब प्रस्तुत नहीं करती बरम् भाव व्यंजना में उद्भावक बनने के विपरीत उसका अणकार करने के कारण काव्य की उत्कृष्टता में भी बिम्ब आती है।

जहाँ भाव धीरे बिम्ब में ध्वन्योन्माधित संबंध नहीं होगा धीरे दोनों अपनी पृथक पृथक सजा बनाये रहते हैं वह स्वयं भी काव्य की दृष्टि से अष्ट नहीं कहे जा सकते। प्रस्तुत धीरे अप्रस्तुत का सामंजस्य बिम्ब के लिए प्रावश्यक है। सानेय में मूर्धोदय वर्णन में युक्त भी उस धीरेचित्य को विस्मृत कर गये हैं—

सधि नील नम्मसर से उतरा।

मह हंस अहा ! तरता तरता ।

अब तारक मौलिक सेव नहीं

निकला जिनको भरता भरता ।

अपने हिम बिन्दु बचे तब भी

बसता उनको घरता भरता ।

मह भाव न करक भुतल के

कर बाल रहा उरता उरता ।'

यहाँ कवि प्रस्तुत को पूरा करने के लिए अप्रस्तुत हंस को न जाने किस तरीक रूप में कल्पित कर लेता है। 'उरता' 'कर' धारि शब्द बिम्ब के निर्माण में आधात आसते हैं। अनीचित्य के कारण यहाँ प्रस्तुत धीरे अप्रस्तुत एवन्दम धिन् प्रतीत होते हैं जिससे बिम्ब की अक्षफलता सिद्ध होती है।

बिम्ब योजना की अष्टता नहीं प्रकट होती है जहाँ भाव धीरे बिम्ब प्रस्तुत धीरे अप्रस्तुत इस तरह जुड़े मिले होते हैं कि उनके पृथक अस्तित्व की कल्पना ही नहीं हो सकती। आमसी के बिम्ब महा इष्टव्य हैं

(१) तरवर हिया घटत नित जाई इकि इकि होइ होइ बिहराई

बिरहल हिया करहु मिड टेका बीठि बबंगरा मेकहु ऐना ।

(२) तारा मडर पभरि हज बोभा पहिरै सनि अत नलत अमोला ।

यहाँ प्रथम में बिरह की पीड़ा धीरे मम हृदय को रूप देने के लिए कवि श्रीधरकाशीम शरीबर के पठत हुए उस को सामने लाया है। भावी मुख के रूप को 'बबंगरा'—अपाह की प्रथम वर्णा से प्रकट किया है। द्वितीय में सज्जित रूप सौन्दर्य को तारों से घिरे जाद का रूप देकर इष्टव्य बनाया गया है। इन वर्णनों में भाव धीरे बिम्ब एक साथ मिल कर प्रस्तुत हुए हैं। बिम्ब (उपमान) का प्रत्येक पदा प्रस्तुत पर भी व्यो का रसों बटित हो जाता है। भावमती के बिरह बाह से बंभित हृदय के लिए 'इकि इकि' होता शरीबर अत्यन्त सार्थक उपमान है। प्रिय भावमन पर उसका मुख

संभरे क समान है। इस प्रकार की बिम्ब योजना त्रिममें भाव और बिम्ब की मत्ता पूरक नहीं रहती और भाव की प्रतिस्पर्धिका कोई अन्य रूप कल्पना में नहीं आता। काव्य की उत्कृष्टता की परिचायक है। मुद्रा में काव्य में बिम्ब एवं भाव का अन्वयार्थित प्रकृत्य अण-अंगी सर्वत्र अपेक्षित है। इसके अन्तर्गत में बिम्ब की मकलता प्रसन्न है।

इस विवेचन से प्रकृत है कि बिम्ब न भाव की मत्ता अनिवार्य है। भाव का पोषक मात्र बिम्ब ही बिम्ब कहला सकता है। भाव के प्रकृतिकार्य का माध्यम भी बिम्ब ही है। प्रकृतता अन्वयार्थिता भाषा के कारण बिम्ब और भाव एक दूसरे के पूरक रूप में प्रपक्षित हैं।

रस सिद्धान्त

बिम्ब के अन्तर्गत भाव का अनिवार्यता आनन्दकता और स्वरूप का देखने के पश्चात् भाव पर सर्वाधिक बल देने का और स्पर्श भाव को काव्य का मूल तत्त्व मानने का रस सिद्धान्त को भी बिम्ब के माध्यम से देखना प्रपक्षित होगा।

रस सिद्धान्त भारतीय काव्यशास्त्र का सर्वप्रथम अधिक प्राचीन और संभवतः सर्वाधिक मान्य सिद्धान्त है। काव्यान्तर्गत रस का माध्यम में समस्त का सर्वप्रथम प्रवास भरत ने अपने नाट्यशास्त्र में किया। इस काव्य के अन्तर्गत उमने रस तत्त्व की प्रकृतारणा की। परन्तु यह रसात्मकता की स्थिति केवल इस काव्य में ही सीमित नहीं रही बल्कि अन्य काव्य में भी रस का काव्य के अन्तर्गत सर्वाधिक आनन्दक तत्त्व की मान्यता की गई। मात्र भी यह मान्यता अनुपम है। स्पष्ट है कि सिद्धान्त रूप में रस की सर्वा सर्वप्रथम भूत न अपने नाट्यशास्त्र में ही इस काव्य के विवेचन में परन्तु रस का प्रथम वास्तविक के भावों की अन्वयार्थिता परिणित—मा निषा—के रूप में अन्य काव्य में पहल ही हा चुका था। रस दृष्टि से रस के प्रथम विवेचन भरत की प्रथम प्रयाता वास्तविक प्रतीत हुए हैं। परन्तु अहं स्वामात्रिक भरत यह उठ सकता है कि प्रकृत द्वारा इस काव्य में स्वीकृति रस अन्य काव्य के अन्तर्गत मान्यता क्यों और कने वा मत्ता? अन्य काव्य में रस की अन्वयार्थिता कित प्रकृत संभव हो सकी? डा० आनन्द प्रकाश दीक्षित न अपने भाव प्रकृत्य में इस पर प्रकाश डालते हुए लिखा कि इस काव्य की अन्तर्गत क प्रकृत्य में दो तत्त्व दिए जा सकते हैं। (१) रस की अन्वयार्थिता प्रकृत्य के अन्वयार्थिता में है। (२) विवेचन और प्रकृत्य होने के कारण इस काव्य का प्रभाव अधिक अन्वयार्थिता और अन्वयार्थिता— है। एनी वारा में महुदय की अन्वयार्थिता अन्वयार्थिता को अन्वयार्थिता बना देती है। रस प्रकार काव्य में विवेचन के कारण इस काव्य को अन्वयार्थिता की अन्वयार्थिता नव पुत्र ने धारा देव प्रकृति तथा प्रकृत्यता के कारण इस का अन्वयार्थिता अन्वयार्थिता प्रभाव स्वीकार किया है तथा अन्वयार्थिता अन्वयार्थिता अन्वयार्थिता का

प्रभाव प्रमाणित नहीं होता और यह कहा जा सकता है कि नाट्य के अतिरिक्त काव्यों में भी बिम्बकता उपस्थित हो जाने पर हम उन्हें रसमय मान सकते हैं।^१

इस प्रकार यह बात निबिंबाव स्वीकार की जा सकती है कि शब्द काव्य की बिम्बात्मकता ही रसानुभूति में सहायक है और इसी के कारण रस को शब्द काव्य का भी प्रमुख लक्ष्य माना गया है। शब्द काव्य में हम वस्तु का अपनी स्फूर्त इन्द्रियों से प्रत्यक्ष अनुभूत करते हैं। अर्थात् भाव का नाम मात्र आदि से देखते सुनते और छू सकते हैं। परन्तु शब्द काव्य में यह प्रत्यक्षीकरण स्फूर्त इन्द्रियों से न होकर सूक्ष्म इन्द्रियों से होता है जिनकी स्थिति पाठक या श्रोता के मन में रहती है। कविता में वस्तु का साक्षात्कार को शब्द काव्य के अन्तर्गत रसात्मकता की अनुभूति कराने में सहायक होता है बिम्ब ही है।^२ यद्यपि रसानुभूति में बिम्ब शब्द का कहीं उल्लेख नहीं है परन्तु बिम्बकता प्रत्यक्षीकरण आदि की भावस्वरूपा को साहित्याचार्यों ने अनुभव शब्दस्य क्रिया है। अन्तिम गुण में रसानुभूति को स्पष्ट करते हुए लिखा कि यदि सहृदय काव्य का अन्वेषण किया जाए तो उसके कुछ प्राक्तन सम्कार हैं तो परिमित भावार्थ के उन्नीक्षण के द्वारा काव्य के बिम्ब का साक्षात्कार किया जा सकता है। ऐसी स्थिति में सहृदय पुराण पर सम्बन्ध का समस्त का प्रमुख स्थान पर अनुभव के सम्बन्ध में प्रमुख बात कही गई है या प्रमुख इसका अर्थ है अथवा प्रमुख शब्द उपस्थित किया गया है आदि प्रसंगों की कल्पना करके रसात्वादन कर सकता है।^३ यन्नीरतापूर्वक बेबा जाब तो अन्तिम गुण का द्वारा अन्वेष्य काव्य का मातृ साक्षात्कार करने से ही सम्बन्ध रहता है। प्रमूर्त का यह मानस साक्षात्कार बिम्ब का ही व्यापार है। बिम्ब रूप में प्राये भावों को ही हम कल्पना से अनुभूत एवं प्रत्यक्ष कर सकते हैं। कवि के बिम्बकत भाववा बिम्बात्मक वर्णन में ही सहृदय श्रोता या पाठक रसानुभूति कर सकता है। स्पष्ट है कि रस की अभिव्यक्ति का प्रथम व सहृदय साधन बिम्ब है। बिम्बहीन वर्णन प्रत्यक्षता और अनुभव कल्पना की समता के अभाव के कारण ही नीरस कहे जाते हैं।

रस की अभिव्यक्ति का प्रथम साधन बिम्ब है, इसका एक बड़ा पुष्ट कारण और भी है। और वह है रस की अल्पता और अगोचरता। काव्य में भाव या रस की सत्ता आवश्यक है परन्तु रस को अर्थों में कहना शक्य है। स्वच्छन्दबाधत्व शेष नहीं है। अतः यदि रस या भाव को स्पष्ट रूप से वाचक शब्दों से कहना शक्य है तब भाव की अभिव्यक्ति का साधन क्या रहे जाता है? स्पष्ट ही तब भाव की अभिव्यक्ति का एकमात्र साधन बिम्ब अथवा बिम्ब ही रहे जाता है। रस बिम्ब में विलीन होने पर ही

१ रस-सिद्धान्त : स्वल्प-विलोकन—वा अन्तः प्र वीक्षित १ ११
२ use of the term image is for a purely mental idea which is taken to being observed by the eye of mind.
—Encyclopaedia Britannica, v 14 p. 328.
३ अभिव्यक्तिगुण वा वीक्षित इति उक्तं रस सिद्धान्त स्वल्प विलोकन, पृ ११

बर्षन रसात्मक हो सकता है धम्यवा नहीं। इस पर मुकुलजी ने विस्तारमय में बड़े विस्तार से बिचार किया है। 'क्रोध ध्या रहा है' कहने मात्र से क्रोध की अभिव्यक्ति नहीं हो सकती उसके लिए बड़बड़ाना याँत पीघना याँतें साल होना यादि धनुषाओं को साना होना जो बिंब के ही रूप है। इसके द्वारा धम्ब (बाधक के भभाव में भी क्रोध भाव को हृदयस्थ किया जा सकता है। अर्थात् क्रोध भाव जब धम्ब रूप में न घाकर धम्ब बिंबों के रूप में भाये तभी वह अनुभवमय्य हो सकता है। इस प्रकार भी भाव एवं रस के लिए अभिव्यक्ति का साधन बिम्ब ही प्रतीत होता है।

रसामुत्पत्ति में बिंब की इस प्रतिपाद्यता को सभी आगस्क भासोचकों ने स्वीकार किया है। स्पष्ट स्वीकारोक्ति तो नहीं है पर उनका अनुभव ऐसा था यह प्रकट हो जाता है। सस्कृत भाषा के कवियों ने बिंबों धम्यवा बिंबों के प्रयोग बहुसता से किये और कादंबास वास्वीकि बाग यादि ने सुन्दर और ओष्ठ चित्र प्रस्तुत किये परन्तु प्रयोग में घाले पर भी भासोचना के क्षेत्र में बिम्ब धम्यवा बिंबमय अन्त की बिबेचना का भभाव ही रहा। कुछ ही व्यक्तियों ने इसे उल्लिखित किया। अभिनवगुप्त के भाषार्य महुठीठ ने धम्य काव्य में प्रत्यक्षता के गुण को बड़ा धावत्यक माना और बड़े स्पष्ट धर्मों में उसे उपस्थित किया। उन्होंने कहा कि कुशल कवि धम्ये बर्षन के माध्यम से सहृदय के सम्मुख मानो चित्र ही उपस्थित करता है। अतएव नाट्य की भी बिबमयता होने पर काव्य में रसोद्योप कनी सम्भव नहीं हो सकता।^१ इस प्रकार उन्होंने रस क संदर्भ में बिंबों एवं बिम्बों की महत्ता को स्वीकार किया है।

धामुनिक भासोचकों ने भी बिंब धर्म को भाषा का प्रमुख धर्म स्वीकार किया है। भाषाय धुक्त की माध्यताएं इस विषय में बड़ी स्पष्ट हैं। उन्होंने कहा : 'काव्य में धर्म प्रहृष भाव से काम नहीं चलता बिम्ब प्रहृष अपेक्षित होता है। यह बिंब प्रहृष निरिच्छ मोक्षर और मूर्त विषय का ही हो सकता है।' मुकुलजी विम्बात्मक बर्षन के बड़े समर्थक हैं। यही नहीं बिभारत्मक बर्षन के रूप में वह कवि धर्म की स्पष्ट इति भी मान लते हैं। यदि कवि ने ऐसी वस्तुधर्मों या ध्यापारों का धम्ये धम्ब बिंब धाटा धामने रस दिधा त्रिनसे श्रोता या पाठक के भाव जागृत होते हैं तो वह एक प्रकार से धमना काम कर चुका' मुकुलजी की माग्गता है। एक धम्य स्वस पर उन्होंने फिर कहा है कि 'जो वस्तु मनुष्यों का भासम्भन या विषय होती है उसका धम्ब बिंब यदि किसी कवि न लीच दिया तो वह एक प्रकार से धमना काम कर चुका।'^२ यही नहीं

१ विस्तारमयि—भाषार्य सुबन

प्रभाजन मन्मथ-ये काव्ये नात्वार सम्भवः। उक्त त इत्य वा धाम्ब्य प्रकाश संक्षिप्त, रस सिद्धन्त—रसकर विरनेनय १ १११

२ रस सीर्यना—भाषार्य सुबन १० १३७

४ धा, १० १२२

५ धी, १० १२२

सुकसत्री ने उन्नीसवीं शताब्दी की कठु आलोचना भी की है जिन्होंने अपनी प्रतिमा प्रथम सर्जन शक्ति को बिम्ब प्रथम के लिये उपयोग न करके मात्र धर्म ब्रह्म के लिये उपयोग किया है और जिस कल्पना का उपयोग मुख्यतः पदावली का रूप संकलित करने प्राकृतिक व्यापारों को प्रत्यक्ष करने और इस प्रकार से किसी दृश्य चित्र के ब्योरे पुरे करने में हीना चाहिये वा उसका प्रयोग उपमा उल्लेख दृष्टान्त आदि की उपमावना करने में ही किया है। सुकसत्री ने तो उस हीरेक से ही प्रस्तुत प्रस्तुत और कल्पित रूप विधानों की चर्चा की है। क्योंकि रसात्मक बोध के लिये कपो प्रथम बिम्बों की एकांत आवश्यकता होती है। इनमें प्रथम दो का क्षेत्र तो काव्य में बाहर का है पर कल्पित रूप विधान बिम्ब का ही एक रूप है प्रत्यक्ष जीवन में यह रसात्मक बोध प्रत्यक्ष इतिहास गम्य चित्रों तथा एवं दृश्यों के द्वारा होता है काव्य में बही रसात्मक बोध अम्य चित्रों प्रथम दृश्यों के द्वारा होता है जो कवि की कल्पना से पाठक के सम्मुख आते हैं। इसी से सुकसत्री ने इसे कल्पित रूप विधान का नाम दिया है। कल्पित रूप विधान का तात्पर्य बिम्ब ही है और यह पुनः काव्य का क्षेत्र है।

स्पष्ट है कि रसानुभूति करने में बिम्ब का एक महत्वपूर्ण स्थान है। उस के पूर्ण परिपाक वा कोई स्वयं बिम्ब में रहित हो ही नहीं सकता। भारतीय और कालिदास से लेकर प्रागुनिक कविता तक के काव्य में किसी भी पूर्ण रसात्मक स्वयं—जहाँ मात्र अनुभाव एवं संपादित भाषा के योग से यह निष्पत्ति हुई हो को सीजिये बिम्ब बहा किसी न किसी न रूप में प्रथम विद्यमान रहेगा। रूपाकार वर्ण गम्य स्पर्श मुद्रा (स्थिति) क्रिया संवेदना आदि क रूप में बिम्ब वहाँ प्रथम प्रस्तुत होगा। उदाहरण के लिए साकेत का एक पूर्ण रसात्मक स्वयं सीजिये जहाँ उस की पूर्ण सामग्री विद्यमान है।

मे निज शक्ति में खड़ी थी सबी एक रात
रिमझिम बूँदें पड़ती थी बड़ा छाई थी।
पमक रहा था केसकी का पल चारो ओर
सिन्धी भ्रमकार यही मेरे मन भाई थी।
करने लगी धनुकरन में स्वप्नपुरों से
बचता भी बगद्री चलानो घहराई थी।
चौक देखा मैंने चुप कोमे में पड़े थे प्रिय
नाई। मुझ लज्जा पसी जाती मैं कुनाई थी।^१

यहाँ प्रिय लज्जाम आश्रय जमिना आत्मन्यन रिमझिम बूँदें केसकी का पल सिन्धी भ्रमकार, बचता का बचता आदि उहीपन स्वप्नपुरों से धनुकरन चौकना

१ रम शीर्षक—गुलज १ १२१

२ बहा १० १०-१०

३ साकेत—मैकलेश्वर शिल्प, लज्जा चर्च १ २६६

सञ्जाना, धादि अनुभाव है। सञ्जाना रूप और पुनरुक्त सञ्चारी के रूप में प्राय है। विमोचन पत्र में स्मृति के रूप में उल्लिखित होना से यहाँ विप्रसन्न की व्यञ्जना होती है। उस की दृष्टि से यहाँ शृंगार के सभी उपकरण हैं जो रस भाव को पूर्ण रसात्मकता की स्थिति तक पहुँचा देते हैं। अत्र बिम्ब की दृष्टि से भी इस रसात्मक स्थिति का परीक्षण होता बाह्ये त्रिसते रसात्मकता में बिम्ब की स्थिति पर प्रकाश पड़ सके। यहाँ भाव बन और भाष्य का उत्सव भर है, उनका पूरा चित्र नहीं है। उनके धारक, बन धादुपग वस्त्र रूप सौम्य धादि का वर्णन नहीं है। परन्तु बिम्ब की दृष्टि से इसके उद्दीपन बड़े महत्वपूर्ण हैं। यह प्रकृति वक्ष्य पूर्वत बिम्बारमक है। रिमन्तिम शब्द शब्दात्मक है जो बूँदों के गिरने को अनुभूत करा देता है। केतनी के रस की समक सुदृष्ट भाष्य परक बिम्ब है। स्तनकार भी स्वरों को मूर्तित करने वाला शब्द है। शमक धादि दृष्टि परक बिम्ब है। स्पष्टतः यहाँ उद्दीपन के उपकरण गमक स्तनकार रिमन्तिम बूँदें शमक वस्त्र शब्द भाव को मूर्तित करते हैं। प्रतिम दो पंक्तियों में धनु भाव योजना भी किन्ना बिम्ब के रूप में है। गति धीरे मुद्रा का उद्देश्य उन्मेष है जो विनात्मक है। इस प्रकार यहाँ रस की दृष्टि से यह वर्षम उन्मेष कहा जा सकता है यहाँ बिम्ब की दृष्टि से भी यह स्पष्ट है। अस्तुतः रस और बिम्ब दोनों व्यञ्जनात्मक हैं। अणु की बिम्बात्मक ही रस की अनुभूति कराने में सहायक हुई है।

इसी संदर्भ में जायसी का भी एक पूर्ण रस परिपाक का स्पष्ट दृष्टम्य होमा—

रितु पावस हरिने बिज पावा सावन भावों मधिक मुहावा ।
 कोकिल बैन पाति बय छुडी बनि निसरी बौद्ध और बहुरी ।
 शमक बीज बरति जल सोना बाहुँर मोर सबर सुठि सोना ।
 रस रानी पिय संय निधि जागी गरजे मयन जोरु वर सागी ।

यहाँ पदावली और उत्तम संयोग शृंगार के धासम्बन्ध और धाधय है प्रकृति का समस्त बातावरण—पावस रितु कोकिल बैन बय पंक्ति मोर का स्वर, बिजरी की शमक, धीतस बूँदें उद्दीपन के रूप में प्रस्तुत किया गया है। साथ ही बिम्ब की दृष्टि से भी यह स्पष्ट स्पष्ट है इसमें दुष्य हरिण सब देखिऊ संसारा बरति जल सोना—स्पर्ध धीतस बूँद और बीजारा—धम्यबाहुँर मोर सबर सुठि सस्ता धादि सभी प्रकार के सवनात्मक बिम्ब हैं। इन्द्रिय स्पष्ट के कारण यह उद्दीपन रूप से बातावरण का वर्णन बढ़ा जीवन हो गया है। धूमि की हरिमासी से समस्त संसार का हरा हरा रिकना बिजरी की शमक के प्रकाश के प्रतिबिम्ब से जल का सोना बैसा दिखाई देना—कवि की उत्कृष्ट कल्पना का परिचायक है। यहाँ प्रस्तुत अनुभाव योजना भी विनात्मकता में बुद्धि करती है। जोकता गमे जयना धादि व्यापार बिम्ब में ही हयारे उन्मेष घाते हैं। धम्य कवियों में रसात्मक स्थितियों को उन्मेष बिम्ब योजना को सर्वत्र देना जा सकता है।

रसात्मक वर्धन में बिम्ब की उपयोमिता और स्थिति के परभाव उस सामग्री विभाजानुसार व्यभिचारीभाव—में भी बिम्ब की स्थिति को परब सेना उपयोमी होता । इससे रस एवं बिम्ब क सम्बन्ध की निश्चिता पर और अधिक प्रकाश पड़ेगा ।

(१) विभाव

काव्य में रस का संयोजन करने वाले तत्त्व विभाव है । शास्त्र में वाचिक, धार्मिक तथा सात्त्विक धर्मिय के सहाये बिभ कृतियों का विशेष रूप से विभावत धर्मात् ज्ञापन कराने वाले हस्तु, कारण धर्मात् निमित्त को विभाव कहते हैं । विभावत का धर्म है विशिष्ट ज्ञान ।^१ रस को विशेष रूप से ज्ञापित कराने के कारण ही इन्हीं विभाव कहा जाता है । विभाव—आत्मन्वन और उद्दीपन दोनों ही विभात्मकता के बहुत निश्चिष्ट हैं । शुद्ध भी में विभावो की विभात्मकता के विषय में कहा है

रस के संयोजक को विभाव धारि है । वे ही कल्पना के प्रधान क्षेत्र हैं । विभाव वस्तु विभिनम होती है । अतः कहा वस्तु ओटा या पाठकों के भावों का आत्मन्वन होती है वहाँ धर्मात् उसका पूर्ण विभिन ही काव्य कहलाने में समर्थ हो सकता है ।^२ विभाव का मुख्य प्रयोजन विशिष्ट ज्ञान कराना है । वह सामान्य वस्तु को विशेष बनाकर पाठक या ओटा के भावो का आत्मन्वन बनाता है जिससे रस परिपाक में सहायता मिलती है । सामान्य का यह विशिष्टत्व बिम्ब द्वारा ही प्रतिपादित होता है । बिभ रूप में प्रस्तुत वस्तु सामान्य से अधिक विशेष हो जाती है । स्वयं शुद्धभी कहते हैं बिभ सदा विशेष का ही जाता है सामान्य का नहीं ।^३ इस रूप में विभाव बिभ के बहुत उनीय प्रतीत होते हैं । विभाव का पुर्म और सांगोपाय वर्धन जिस पर शुद्ध भी में काफी बल दिया है धर्मात् ही काव्य का अधिकारी हो सकता है । कालिदास वास्वीकि तुलसी धारि के प्रकृति वर्धन इसी रूप में हुए हैं । वहाँ वस्तु की विभात्मकता ही सर्वोपरि है वही वस्तु वर्धन को समग्र और व्योरेधार बनाती है । विभाव की विभात्मकता ही सांगोपाय रूप में धर्मात् रसात्मक बन सकती है धर्मात् सवेवनीयता के धर्मात् में ऐसे स्वयं कभी उनीय नहीं बन सकते । चाहे विभाव प्रकृति हो या प्रकृतितर जीवन विभात्मक रूप में धर्मात् पर ही काव्य कहला सकता है । समग्रता का पुर्म बिम्ब की ही विशेषता है ।

विभाव को दो भागों में विभाजित किया गया है प्रथम आत्मन्वन द्वितीय उद्दीपन ।

आत्मन्वन विभाव वहाँ धर्मात् ही काव्य रचना का अधिकारी होगा धर्मात् ही बिम्ब रूप में प्रस्तुत होगा । उद्दीपन विभाव भी अधिकार्यक होते हैं

१ वदोकी विमलकन्ते धार्मात्भिन्नात्म्यः ।

२ धर्मात् धरमात् वेदात् विमल इति संविदः । —मल्लनाटक ३०४

३ रस मौनेसा—धर्मात् इत्यत ५० ११३

४ बिभ मवि—धर्मात् १५५,

परन्तु काव्य में रस की दृष्टि से उनकी आवश्यकता प्रधान न रहकर यौग्य है। काव्य में भासम्बन्ध ही प्रधान है। केवल भासम्बन्ध का बर्णन काव्य का अधिकारी हो सकता है पर केवल उद्दीपन का बर्णन काव्य का अधिकार नहीं पा सकता। उद्दीपन के सिवा भासम्बन्ध की स्थापित प्रतिभाय है। अर्थात् कवि केवल भासम्बन्ध का बर्णन करता है वही बिम्ब आवश्यक विद्यमान रहता है। कोई रूपक कोई उपमा कोई विशेषण वही एसा आवश्यक रहता है जो वस्तु को चित्रित प्रत्यक्ष कर देता है। कामायनी से प्रसार का अर्थ का बर्णन बसिए

नील परिधान बीच मुकुमार

पुस रहा मुकुल घनकुला घंघ

गिला हो श्यों बिबली का फूल,

मेघ बन बीच गुलाबी रस ।

भाह ! बहु मुद्र परिचय के व्योम—

बीच बर विरते हों घनदयाम

घरघर रवि मंडल उनकी मेघ

बिबाई देता हो उबिचाम ।^१

कहने की आवश्यकता नहीं कि यहाँ भासम्बन्ध का रूप बर्णन पूर्णतः बिम्ब का अर्थी है। बिम्बात्मक पद्धति से प्रस्तुत होने पर ही अर्थ का रूप रूपक बन सकता है। ऊपर प्रस्तुत दोनों ही बिम्ब दृष्टि परफ हैं। जो आकार से अधिक बर्णन को स्पष्ट करते हैं। रूप इनमें इतना प्रधान नहीं है जितना रस का उल्लेख प्रधान हो गया है। ये बिम्ब अर्थ के सौन्दर्य को मूर्तित कर देते हैं। नील रस के बर्णन से अर्थका उच्चर अर्थ का तात्पर्य हमारे सम्मुख चित्रित हो जाता है।

प्रकृति का भासम्बन्ध रूप में बर्णन भी सर्वत्र बिम्ब रूप में जाता है। वही प्रस्तुत और अप्रस्तुत दोनों ही रूपों में बिम्ब रह सकता है। अप्रस्तुत रूप में भासम्बन्ध का बिम्बात्मक बर्णन जायसी की इन पंक्तियों में देना जा सकता है

तास तलापरि भरति न जाही, सुसई बार बार लैनु नही ।

फूले कुमुद केत उजियारे जानहु जए पागल नह तारे ।

उतरहि मेघ बड़हि से पागो अमरहि मछ बीनु क बली ।

यहाँ पूर्णों से अर्थ तासाव पर तारों अर्थ आकाश का रूप आर्योचित है। मेघ और बमक के कारण मछली का बिम्बनी से आर्य भी सहज ही हो जाता है। तास का अर्थ बर्णन जस आकाश की नीमिमा की पृष्ठभूमि प्रस्तुत करता है। प्रकृति का प्रस्तुत रूप में बर्णन हिन्दी साहित्य में बहुत कम हुआ है। आवाकारी भाष्य में भी इसका अभाव है। प्राचीन संस्कृत साहित्य में यह पद्धति बहुप्रयुक्त है। शास्त्रीय और

वासिवास का प्रकृति वर्णन प्रायः इसी रूप में हुआ है। वास्वीक प्रकृति का वर्णन इस प्रकार करते हैं

मुक्तासकास सात्मसं पतङ्गं सुमिर्मसम पत्रपुटेयु मय्यम् ।
 पट्टा विदम्बकच्छन्ना विहगा सुरेश्वरवत् तुपिता पिबन्ति ।

यहाँ पानी की धूँ की मिरमा गिर कर पत्तों की नौकों पर लगे खाना बिड़ियों का पत्तों को बिनाइना धीर पत्तों की नौक पर लगे हुए पानी को पीना सब व्यापार एक मूत्र में निबड है। धीर एक पूरा बिम्ब हमारे समझ का बने है। वासिवास का प्रकृति वर्णन भी इष्टम्य है। नदी तट के बाठाबरन को यह इस रूप में चिन्तित करते हैं

भागीरथीनिर्धरधीकरायां षोडा सुहःकम्पितवेदबाध
 पट्टासुरम्बिष्य मुक्ते किरातीरासेष्यते बिम्बभिक्षाम्बिबुं ।^१

यहाँ कवि हिमालय के पवन के साथ नदी की सहरो के छिटपने, बलकनी के फैसने वेवबाध के कम्पित होने गोर क पुछ को छिटपने किराती की मृगबर्षी धीर बाधु सेवन—सबको एक मूत्र में प्रस्तुत करता है जिससे बाठाबरन का पूरा रूप मेरों के सम्मुख पा जाता है। ऐसे श्योरवार धीर समझ वर्णन वस्तु को पूर्णतः प्रत्यक्ष बना देने की सामर्थ्य रखत है। यहाँ दोनों उदरनों में प्रकृति का वर्णन बिना किसी धारोपण के अर्थात् अप्रस्तुत रूप में न होने पर भी सुबेबनीयता एवं समग्रता के कारण बिम्ब की खोली में ही आता है। स्पष्ट है कि प्रकृति का आत्मजन वर्णन वा प्रकृतीतर जीवन का आत्मजन वर्णन बिम्ब रूप में न होने से कभी काव्य का अधिकारी नहीं हो सकता। आत्मजन के वर्णन के लिये बिम्ब गितान्त आवश्यक है।

उद्दीपन बिम्ब का भी उस में महत्वपूर्ण स्थान है यद्यपि वह काव्य में प्रधान नहीं है परन्तु उस परिपाक में उसका महत्वपूर्ण योगदान असंदिग्ध है। उद्दीपन का धर्म है निमित्त रूप सामग्री जिससे आद्यत मात्र अधिकारिण उद्दीपित होता है।^२ इस रूप में अर्थात् मानोत्कव के निमित्त रूप में आनेवाले उद्दीपन धर्मव्य होते हैं। हमारे साहित्य में मुख्यतः प्रकृति ने ही उद्दीपनो का कार्य किया है। उद्दीपन के अत्यंत मुख्यतः वेध काल व आत्मजन की बेप्टाए ही आती हैं। इनका चार भेद हैं। (१) आत्मजन के पुत्र (२) उसकी बेप्टाए (३) उसका अर्धकरण (४) तटस्थ।^३ इनमें प्रथम तीन में आत्मजन का रूप जीवन हाव-भाव धारि आते हैं जो मूलतः आत्मजन से अनुपक हैं। आत्मजन के वर्णन में ही जनका वर्णन हो जाता है वस्तुतः अतिम रूप

१. उक्त का इ.रा. अ.उ. उ.स. मीमांसा में १-१०५
 २. की ५ १५५
 ३. वस्तुतः निरूपणो का बिम्ब सु तत्त्वा आत्मजनवत् । विदित्यानि न कर्तव्यमि इति बोधम् ।
 —एसांगत्त. का बाधित इ.रा. अ.उ. उ.स. मीमांसा स्वयं मिलेकम् ५ १०
 ४. उ.स. मीमांसा : १. उ.स. मीमांसा ३. बाधित ५ १५

उत्पत्त्य, जिसके अन्तर्गत परिस्मृति प्रकृति प्रादि प्राणी हैं, ही उद्दीपन का यथार्थ रूप है। उद्दीपन वर्धन अभिकर्मात्त में विचारमक होता है। उसके अन्तर्गत रूप रस यम प्रादि क बनेक सुन्दर उद्दीपन चित्र उपस्थित रहते हैं जो भावोत्कर्ष करन बात तो हास ही हैं चित्र वर्धन स भी मुक्त रहते हैं। उदाहरण क मिय जायसी की यह पंक्तिमा द्रष्टव्य है

मन बुबहि बस माहुट नीय, तेहि बस प्रम साग सर जोर ।
 दूटहि बु ब बरहि बस सोला बिरहु पवन होइ मारे सोला ।
 केहि क गिगार को पहरि पडोरा, मिउ नहि हार रही होइ डोरा ।
 तुम्ह बिनु कंता बनि हूई तन तिमबर भा डोल ।
 तेहि पर बिरहु उड़ाई के, बई उड़ावा जोल ।

यहा उद्दीपन रूप में प्रयुक्त प्रकृति का प्रत्येक व्यापार विषय रूप में प्रस्तुत हुआ है। जायसी ने प्रकृति का प्रयोग अधिकतर विप्रसन्न के उद्दीपन रूप में किया है जो सर्वैव विवात्मक है। यहा मर्षों का माहुट की भाँति टपकना बूँदों का विरना—सोमों के सयुध लगना पवन को बिरहु पवन का रूप बना सभी विचारमक है। जायसी में ही 'बई' असाह्य सयन बन यात्रा' प्रादि उद्दीपन रूप में प्रस्तुत विषय घोडना के द्रष्ट उदाहरण हैं। बिहारी मनामन्त्र प्रादि में भी प्रकृति उद्दीपन रूप में आई है। जहाँ यह भाव संबन्धमा म महायक है व यमत्कार का उर्ध्वम नहीं करती बहा अभिकर्मात्त लमका रूप विषय प्रधान ही है।

(२) मनुभाव

रस के अन्तर्गत विभाव के परचाठ दूसरा प्रमुख तत्व मनुभाव है। मनुभाव अन्तर्गत अभिनय रूप ऐसी विशेष प्राणिक तथा सात्विक चेष्टाओं का सशत मिलना है जो 'धामय के हृदयस्य भावों के व्यक्त बाह्य रूप होती हैं। और महदन को उम भाव विषय का भावम करती हैं।" स्पष्टतः मनुभाव अमूर्त भावों के मूर्त व्यक्त स्वरूप है। विषय भी अमूर्त भावों के व्यक्त मूर्त स्वरूप है इस रूप में मनुभाव सर्वैव विवात्मक होते हैं। भाव विषय के बाह्य करण का तात्पर्य है साक्षात्कार कराना घमवा मनुभाव पोषक कराना। साक्षात्कार कराना एवं मनुभाव यम्य कराना— यह दानी ही व्यापार विषय संवाचित करता है। मनुभाव के अन्तर्गत मान माने क्रिया एवं मृग विषय सर्वैव विवात्मक होते हैं। मनुभाव के उदाहरणों क इस तथ्य का अधिक स्पष्टता म देखा जा सकता है

१ मनुभावम मैन कर्तव्यमक कृत् विमय गि। मनुभावः। मनुभावमक मी

२ मनुभाव विमयमक मनुभावमक

- (१) बहुरि बदन बिद्यु संभम बांकी पिय तनु धितैतुं भौह करि बांकी ।
संजन मंगु तिरीछे नैनन बिब पति कहु छिन्हें सिय संगन ।^१
- (२) कहत नटत रीसत बिगत भिस्त सिमत सजियात
भरै भौन में करत हूँ गैन हौं मो बात ।^२
- (३) बेचि दूर ही तै दौरि पोरि लपि भंड स्याइ
घासन है छांसनि समेट सकुचाने ती,
कहै रतनाकर गुनत पौं मोबिब सागे
बो ली कसु भुमे से भ्रमे से घकुलाने ती ।
कहा कहै ऊची सो कहै हूँ तो कहाँ सी कहे
कंसे कहै कहै पुनि कौन सी घठान तैं ।
ती लौं अचिकाई ते उमयि कंठ भाइ मिच
भीर हूँ बहल साबि बात अजियात तैं ।^३

गुमरी की पंक्तियों में सीता के किया कलापों का वर्णन है जो क्रियाओं (बर्बस) से प्रकट होता है। यह पूरा वर्णन बिब का खेप्ट उबाहरण है। मुख पर संभल डंकना बांकी भनी से ठाकना घौर संकेत से 'पति है, ऐसा बताना—सभी क्रियाएं बिभ रूप में हमारे समक्ष आ जाती हैं। इनसे सीता के सौन्दर्य की समशीलता और अलोककर्मता में तो बुझि हुई ही है, साथ साथ उसकी हृदयस्थ भावनाओं की खेप्ट व्यंजना हुई है। यह सब भाषा के बिभ धर्म के कारण ही है। दूसरा उबाहरण बिहारी का है। जो अनुभाव योजना की बिबात्मकता का स्पष्ट प्रमाण है। कहत नटत रीसत बिगत घावि प्रत्येक संख्य अपने घाप में एक बिभ है, सभी संख्य संस्वर हैं जो नामक नादिका के प्रेमपूर्ण क्रिया—कलापों को नैनों के सम्मुख प्रत्यक्ष कर देते हैं। तीसरा उबाहरण अनुभाव योजना की उरहृष्टता के लिये प्रसिद्ध कवि रतनाकर का है। यहा पूर पव म हृष्य की घाकुसता व्यंजित है। इस घाकुसता को कवि ने भुमे से भ्रम से सकुचाने कंठ मिचने घावि के अनुभाव बिबां द्वारा स्पष्ट किया है। पूरा पत्र एक गल्पारमक बिभ (बायनामिक इमेज) का संकलन संकन करता है। अंत में स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि रसात्मक अनुभाव योजना सबैव भाषा में बिब क माध्यम से प्रकट होती है।

(३) व्याभिचारी भाव

व्याभिचारी भाव संघारी भावों का ही एक नाम है। 'बाक' अथ तथा अस्वादि विविध प्रकार के रसानुक्रम संचरण करने वाले भावों को व्याभिचारी एवं संघारी भाव

१ रामचरितमानस अयोध्याकांड

२ बिहारी रत्नाकर, पृ० १४

३ कदम उलक : पानावर

कहते हैं।^१ ये स्थाई भाव के सहकारी होते हैं। अतिपरता इनका एक विशेष लक्षण है। रसानुभूति के समय म प्रेक्षक के अस्मिन्—सम्मुख हा बात है। अर्थात् रसानुभूति के समय प्रेक्षक का हृन्ते प्रत्यक्ष होता है।^२ इस कथन से स्पष्ट है कि भाव के उत्कर्ष विधायक यह तरब भी प्रत्यक्ष अथवा दृश्य रूप में पाठक के संमुख आते हैं। संभारी भाव अधिकांशतः विषय के रूप में ही पाठकों को प्रत्यक्ष भेते हैं। बिम्ब अपूर्ण भावों के वर्णन की एक पद्धति है। उहाँ भाव संवेदनीय बन कर प्रत्यक्ष रूप में हमारे सम्मुख आता है वही बिम्ब की सृष्टि हो जाती है। इस रूप में संभारी भावों का प्रकटीकरण भी बिम्ब द्वारा सहज ही हो जाता है। उदाहरण के लिये कुछ वर्णन लीजिये जिनमें संभारी भावों का उत्कृष्ट प्रकाशन हुआ है

दुलह की रघुभाव बने दुलही सिय मुखर मखिर माहीं ।

भावत भीत सब मिति मुखरि बह बुबा धरि बिभ्र पड़ाहीं ।

राम की रूप निहारति जानकी कछन के लग की परछाहीं ।

पाते सब मुनि भूमि गई कर टेक रहीं पल टारत माहीं ।^३

हा० दीक्षित ने इनमें 'पल टारत नहीं' और 'सृष्टि भूम गई पर्वों में' कथन अज्ञात और मोह संभारी भावों का प्रकटीकरण कहा है। ध्यान देने की बात है कि यह दोनों ही पद्य सीता की अकल्पना को मूर्तित करने में सहायक हुए हैं। जला ही पर्वों में जलकी मुद्रा का चित्रण है। इस प्रकार धार्य स्थलों पर भी बिम्बप्रत्यक्ष भाषा में संभारी भावों के प्रकटीकरण को दिया जा सकता है। स्पष्टतः संभारी भाव अधिकतर अधिष्ठाति के लिये बिम्ब भाषा का माध्यम चुनत हैं। और जहाँ संभारी भाव हाव भाव एवं अनुभावों में सुम मिल जाते हैं वहाँ भी बिम्ब की सृष्टि अवश्य होती है। जैसे हर्ष संभारी के रोमांच और पुष्पक की अनुभाव के रूप में देखा जाय तो ।

निष्कर्ष

अनुभव बिम्ब अपूर्ण भावों के वर्णन की एक प्रणाली है परन्तु बहुत से अर्थकारों की भांति ऊपर से की जाने वाली मीमांसकरी या नवकारी नहीं बल्कि वह कृप के साथ स्वयं उत्पन्न होने वाला रूप रंग और रस की भांति भाव के साथ स्वयं उत्पन्न होने वाला उत्पन्न है। बिम्ब का जन्म भाव से ही होता है इस कारण उस विद्यमान कथ्य इतना निकट है। पुष्पक जी ने स्वयं बिम्ब को इस सामर्थ्य में अनुभव किया था। उहाँ से उन्होंने स्पष्ट सिद्धा है : विधाव और अनुभाव दोनों में रूप विधाव हाता है, अर्थात् उसी प्रकार कल्पना द्वारा उत्पन्न प्रकृत बाँधित होता है जिस प्रकार मंत्र द्वारा बिम्ब का।^४ भाव भूमत अपूर्ण और अत्रयत्न वस्तु है उसकी परिपक्वता १० अं

१. अल्पमे व.गोपलचन्द्रसम् विविधविभूतयुक्त रसेषु अन्वयित्वात् अतिपरतात् १० अं

२. रस सिद्धयन्तु १ अक्षर विरलेस्य हा० दीक्षित १० अं

३. शीतलती प्रथमो. १० १२२

४. रस नीलगा १ अक्षर १ ३२३

धनुर्मूर्त और धनुषपर होता है। उसको आस्वावनीय वर्षात् सवित्रीय और धनुम्व गम्य बनाने के लिए बिम्ब का माध्यम सहज और सर्वप्रथम है। भाव या रस की व्यक्तता बिम्ब द्वारा मूर्त होकर पाठक या श्रोता के समीप आस्वावनीय या प्रत्यक्ष बनती है। धनुमान बिम्ब आदि का वर्णन वस्तुतः परस्पर का ही वर्णन है। भाव स्थाई, धनु भाव संचारी—सभी के लिए बिम्ब निदान्त प्रावश्यक है। हमारे साहित्य की वर्णन प्रणाली या शैली को रस की पापन व प्रयोजता है का एक बड़ा भाग बिम्ब का ही श्रुती है। बिम्ब सत्काम्य की एक बहुत बड़ी विशेषता है। बिम्ब की व्यापकता बहुत अधिक है। बौद्धिकता प्रधान साहित्य में रस भंगे ही शीघ्र हो जाय पर बिम्ब बना रहता है। बाल्मीकि कालिदास मूर तुलसी जयसी विहारी देव और धामुनिक खेचर कवियों की कविता बिम्ब के समर्थन में एक स्वीकारोक्ति ही है वह रस सिद्धांत की भी पोषक है और बिम्ब बिम्बान की प्रणाली की भी। समष्टि में यद्यपि रस सिद्धान्त के विवेचन में चित्रात्मक या बिम्ब मूल बयन का कहीं स्पष्ट और सशक्त उल्लेख नहीं है तथापि रस सिद्धान्त के मूल में ही बिम्ब की सभावनाएँ निहित हैं वह निबिबाद स्वीकार किया जा सकता है।

यह पहले ही स्पष्ट किया जा चुका है कि बिम्ब भाव को माया में प्रस्तुत करने की एक विधा है। इस विवेचन में हमने भाव और रस के सर्वत्र में बिम्ब का अध्ययन किया अब माया के सन्दर्भ में बिम्ब का अध्ययन किया जायगा। बिम्ब अन्ततः माया का ही एक रूप है।

माया

मानव मन की अभिव्यक्ति को ककारमक रूप में साहित्य के अन्तर्गत प्रस्तुत करने का यह माया को ही है। अथ ककारों में अभिव्यक्ति के साधन स्वर, वर्ण रस आदि रहते हैं। परन्तु साहित्यिक अभिव्यक्ति में माया का ही प्रयोग होता है। मानव मन की दो मूल प्रवृत्तियाँ हैं एक धनुकरण या सहजानुभूति दूसरी अभिव्यक्ति।^१ पहली मानव मन में भावी एक विचारों की अनुभूति कराती है दूसरी उनको अभिव्यक्त करती है। इसी अभिव्यक्ति की प्रावश्यकता की पूर्ति के लिए समाज में माया की स्थापना हुई। काव्य भी व्यक्त की भाविक अभिव्यक्ति का नाम है।^२ काव्य माया में निहित होता है और माया स्वयं व्यक्तियों की व्यक्तित्व धनुभूति की देन है स्वयं माया ही उन धनुभूतियों के स्वरूप को बदलती रहती है। माया के बिना व्यक्त की धनुभूतियाँ नहीं हो सकती और न धनुभूतियों के बिना माया ही बन सकती है।^३ माया में व्यक्त होकर ही धनुभूति को धनुभूति की संज्ञा मिलती है और भाव एक विचारों को भाव और विचार कहा जाता है। अथवा अत्यन्त धनुभूतियों भावी

^१ काव्य में अत्यन्त काव्य समर्थन विम्व, पृ. १

^२ शास्त्रों तकनीक काव्यर विवेचन

^३ आचार्य शुभा. का साहित्य सिद्धांत पृ. १३६

एवं बिम्बार्थों का तो एक बड़ा कोप ही हमारे भास में है। पर उसे हम इन संज्ञार्थों से विमूर्णित नहीं कर सकते। अस्मिन् व्यक्ति पाते पर ही अनुभूति 'अनुभूति भाव भाव' और बिम्बार बिम्बार है।' इन रूप में अनुभूति भावार्थ भाषा से प्रवृत्त हैं। भाषा का भाषाकारों की भाँति बेबस ऊँची सजावट या सतही सौन्दर्य जैसी बहुत नहीं है वह उस प्राकृतिक मौल्य का व्यक्त बाह्य रूप है जो उसको अनुप्राणित करता है। मूलतः भाषाओं एक ही है।' इसी कारण काव्य की परिभाषा में 'सहितै वाच्य का व्यवहार किया गया है।

बिम्ब भी भाषा का एक रूप है वह अनुभूतिवाँ का व्यक्त स्वरूप है परन्तु इस रूप में वह भाव से प्रवृत्त नहीं है, बल्कि उसकी धरूपता को नपावित कर प्रेषणीय बनाने का एक साधन है। बिम्ब के इस व्यक्त रूप के प्रभाव में भाव और अनुभूति की सत्ता नहीं रह सकती। दोनों ही बिम्बगत भाव व बिम्बगत भाषा—एक दूसरे के प्रत्योन्नामित हैं। कवि को भावार्थक अस्मिन् व्यक्ति का बिम्ब के प्रतिरिक्त धन्य कोई भाव्यम लौकिका ही धर्म है। इन प्रसंग में सहज ही अस्मिन्प्रवृत्ता के सम्यक क्रोध की भाव्यता का स्मरण हो जाता है जिसमें व्यंजक उक्ति और व्यंजक भाव में कोई अन्तर नहीं माना जा। अस्मिन्प्रवृत्ता का एक ही अस्मिन्भाव्य रूप माना गया था नहीं भाव था और वही भाषा। बिम्ब अस्मिन्प्रवृत्ता का ऐसा ही रूप है। उसमें बिम्बगत भाव और बिम्बगत भाषा की सत्ता प्रवृत्त है। भाषा में प्रकट होने वाला बिम्ब भाव का रूप स्वरूप है। इस रूप में बिम्ब के अन्तर्गत भाव और भाषा दो प्रवृत्त सत्ताएँ नहीं हैं बल्कि एक ही वचन के दो बरातस हैं।

भाषा में वैयक्तिकता का प्राधान्य रहता है। प्रत्येक व्यक्ति और प्रत्येक वय या वार्ता की भाषा भिन्न होती है। काव्य के अन्तर्गत यह वैयक्तिकता हीनी (स्टाइल) कहलाती है। भाषा के निर्माण ज्ञान प्रसाद और चिन्तन में मनुष्य के मस्तिष्क की सभी प्रक्रिया काम करती है। क्योंकि बिम्बिन् व्यक्तिवाँ की इन्द्रियों की गति भिन्न भिन्न होती है अतः उनके मस्तिष्क पर बलु का जो प्रत्यक्षीकरण होता है वह भी भिन्न होता है। इन प्रकार प्राकृतिक एवं मानसिक गठन की भिन्नता के कारण बाह्य वस्तुओं की अनुभूति भी जो बिम्ब रूपना स्मृति, भावना धारि के रूप में अस्मिन्प्रवृत्त होती है भिन्न ही रहती है। भाषा की वैयक्तिक भिन्नता के रूप में देखा जाय तो हम बिम्ब विद्या की कवि की विधि ही देखा सकते हैं। परन्तु हीनी की भाषा से भिन्न कोई प्रवृत्त माना नहीं है। विधिपटा से संयुक्त होने पर भाषा ही हीनी बन जाती है। बिम्ब भी वचन की हीनी है। कवि या कलाकार के लिए बिम्ब उतना आवश्यक नहीं जितनी भाषा क्योंकि कवि की अस्मिन्प्रवृत्ति चित्रवाच्य में भी ही

१. महाशवी वच्य में अस्मिन्प्रवृत्ता विद्या : टी० अज्ञात मुद्र, १००

२. भिरा वच्य वच्य अस्मिन् अस्मिन् अस्मिन् अस्मिन् अस्मिन् अस्मिन्

३. अस्मिन्प्रवृत्त मुद्र : डा. रावन्तल मुद्र १००

सकती है यमक और अनुप्रास की तीरस तुकबंदियों में भी हो सकती है और जटिल और सूक्ष्म वर्णन या रहस्य की पद्यबद्ध अभिव्यक्तिवा म भी। परन्तु इसे अष्ट नाभ्य की संज्ञा नहीं दी जा सकती। बिम्ब रूप में प्रकट होना पर ही मात्र और भाषा का सफल स्वरूप सामने आता है। शैली की दृष्टि से बिम्ब व्यक्ति के व्यक्तित्व का प्रकाशक माना जा सकता है; भिन्न भिन्न शक्तियाँ जिस प्रकार भिन्न शक्तियों का निर्माण करती हैं उसी प्रकार शक्ति की विभिन्नता भिन्न भिन्न बिम्बों का ग्रहण कराती है। बिम्ब विधान स्पष्टतः शैली का एक रूप है। हिन्दी के सभी अष्ट कवियों में बिम्ब की शैली अनेक विविधताओं में पाई जाती है।

बिम्ब भाषा का एक विशिष्ट प्रयोग है और काव्य में भाषा मात्र की समाता-भिकारिणी है। बिम्ब भाषा और मात्र होने का सम्यक रूप से प्रस्तुत करने का कारण काव्य में विशेष महत्त्व का स्थान रखता है। बिम्ब भाषा का एक प्रकार है वह तो स्पष्ट है ही परन्तु बिबालमक भाषा को क्या काव्य की साधारण भाषा (प्रतिबालमक प्रतीकारमक या मात्र अलंकार प्रधान) से पृथक् किया जा सकता है? बिम्ब भाषा के प्रयोग में क्या सहयोग देता है? या बिम्ब आने पर भाषा का रूप कहा तक परिचित हो जाता है?—ये कुछ मूल सूत्र प्रस्तुत हैं जो बिम्ब और भाषा के संबंध में विवेचन करने पर सहज ही हमारे सामने आ जाते हैं। आगे इन्हीं प्रश्नों के समाधान का कुछ प्रयास किया जायगा। बिबालमक भाषा और काव्यगत भाषा की समानता भिन्नता और उक्त अर्थ स्पष्ट—अलंकारात्मक व प्रतीकारमक का अध्ययन पहले ही प्रतीक और 'उपमान' के अन्तर्गत किया जा चुका है। महा कर्मणः बिम्ब स भाषा क रूप भाषा की विशिष्टता और भाषा में योगदान को देखा जायगा।

(१) रूपकारमकता

बिम्ब के द्वारा भाषा के स्वरूप में सबसे बड़ा परिवर्तन यही होता है वह साधारण प्रतिधा प्रधान भाषा न रहकर रूपक प्रधान भाषा हो जाती है। उसमें सादृश्य या सादृश्य भावि पुन व्यक्त या अभ्यस्त रूप से प्रकट होते रहते हैं। लुईस ने इसी कारण बिम्ब की परिभाषा में रूपक पर बल दिया है।^१ वह कहता है कि हर साहित्यिक बिम्ब कुछ न कुछ अर्थों में अवश्य रूपकारमक होता है।^२ रूपकारमक होने का सबसे बड़ा कारण बिम्ब में मात्र को कम से कम अर्थ में प्रकट करने का प्रयास है। जहाँ संक्षिप्त होना का प्रयत्न किया जाता है वहाँ रूपक का आशय अवश्य ही देना पड़ता है।^३ बिम्ब में संक्षिप्तता के कारण—शब्दों को कम से कम अर्थों में

१ चोटीक इमेज : सी ड बक्सि १ २२

२ Every poetic image, therefore is to some degree metaphorical
—Poetic Image, p. 18

३ Try to be precise and you are bound to be metaphorical.
Middleton Murry—quoted in Poetic Image p. 23

प्रकट करने के कारण स्वकात्मकता स्वतः ही घा जाती है। माया के स्वकात्मक होने का प्रत्यक्ष कारण है आरोपण। आरोपण द्वारा ही समूर्त बन्धु को विन्ध स्थापित करता है। इसी से माया की स्वकात्मकता विन्ध का आवश्यक लक्षण प्रतीत होती है। मानवीकरण को विन्ध का एक घटक स्वल्प माना जाता है, जो लीजिए बहु अर्थपर ही रूपक पर प्रभावित रहता है। प्रसाद निरामा पंत की कितनी सुन्दर और विन्ध पूर्ण कविताएँ इसी का समर्पण करती प्रतीत होती हैं। जूही की कभी मौला बिहार, छाया एक छारा बीती बिभासरी सम्पा प्रादि अनेक छायावादी मानवीकरण प्रयत्न कविताएँ स्वकात्मकता का ही बोध करती हैं। मुस में उनके कहीं सादृश्य या साधर्म्य अथवा आरोपण कृति रहती है जो स्वक का भावार्थ है। प्राधुनिक प्रयत्नवादी कवि प्रथम य की कविता यहाँ द्रष्टव्य हैं

(१) सुप सुप भर

सुप कनक

यह सुने नम में गई बिहार

धीमाया

धीन रहा है

उत्ते धनेता एक कुरर ।^१

(२) पति सेवा रत सास

प्रकृता सेवा पराया भाव

सत्ता कर छोड़ हो गई ।^२

यहाँ मूर्ध और सास का मानवीकरण किया गया है। मूर्ध कनक धीने काला एक कुरर है और सास पति सेवा रत लग्नासीला रमणी क रूप में हमारे सामने आती है। कवि दोनों ही कविताओं में मानवी क रूप ही प्रथम कृतिगात्र होते हैं। प्राधुनिक दृश्य सब स मये हैं। मानवीकरण में अग्रस्तुत ही प्रथम हो जाता है। यहाँ मानवीकरण पूर्वक रूपक पर प्रभावित है यहाँ मानवीय स्वभावों को प्राधुनिक दूरवों पर आरोपित किया गया है। विन्ध की दृष्टि में इनमें पूष दृष्टान्तर भवेत्ना है और रूपक भी है। यहाँ विन्ध की स्वकात्मकता का पूर्ण प्रत्यक्षीकरण हो जाता है।

विन्ध के निदान्त पत्र में परिचित इन प्राधुनिक कवियों को छोड़कर प्राचीन कवियों के कवियों का परीक्षण किया जाय तो उनमें भी स्वकात्मकता है। वरन् स्वकात्मकता कहीं कव्य की प्रकाश काल के रूप में स्थित है और अनेक रूपक विन्ध निर्माण में सहयोग देते हैं। रूपक अलंकार न भी हो तो भी अत्यन्त कृति प्रयत्न है। उदाहरण के लिए आभसी का एक स्वकात्मक विन्ध लीजिए

^१ श्री श्री कल्या प्रभाकर अनेक ५ ६२

^२ श्री श्री सास : पदी ५ ६०

काजर पुतरी बंस सरीरा, पवन उड़ाए परा मंस नीरा ।

उड़हि शकोरि लहरि बसमीची तबहि रूप रग नएही सीची ।

यहाँ उपमा धर्मकार में कवि बिम्ब प्रस्तुत करता है जो रूपक धर्मकार सीमा रेखाओं के भीतर न भा पाने के उपरान्त जी मूल में साबुध्य और साधर्म्य प्रभावता के कारण रूपकात्मक कहा जायगा । यह कर्ण मर्द हूँ पद्यावली की निष्पन्नता 'काजर पुतरी' से मूर्छित हो जाती है । रूप रोग नाही भीची शब्द उसके प्रेम व्यक्तता के व्यंग्यक हैं । रूप साबुध्य इस बिम्ब का मूल आधार है जो बिम्बगत रूपकत्वता को प्रमाणित करता है ।

उपर्युक्त सभी उद्धरणों में रूपकात्मकता बड़ी स्पष्ट है । धारोपित रूप पुनः से ही समझ सकता है, क्योंकि काव्य में प्रस्तुत और अप्रस्तुत दोनों की स्पष्ट धर्म रूपक पृथक सत्ता है । परन्तु यहाँ प्रस्तुत एवं अप्रस्तुत का अंतर इतना स्पष्ट नहीं हो यहाँ भी मूल में रूपक की भावना या धारोपन की प्रकृति रहती है । उदाहरण लिए प्रथा की कुछ पंक्तियाँ सीधिये

पवन पी रहा बा शब्दों को

निर्बन्धता की उकड़ी संत ।

इकरती भी हीन प्रति ध्वनि ।

बनी हिन शिक्षार्थी के पाठ ।^१

मृत्यु उबुध्य सीतल निराश ही

धासिमन पाती भी बुद्धि

परम ध्योम से भीतिक कन सी

धनी कुहातों की भी बुद्धि ।

इस वर्णन में प्रस्तुत अप्रस्तुत का कोई स्पष्ट भेद दृष्टिगोचर नहीं होता पर रूपकारमकता का धारण यहाँ भी मिया गया है। निर्बन्धता के वर्णन में शब्दों को पीन सखि उकड़ना धासिमन पाना व्यापार पवन निर्बन्धता के दृष्टि के छाव जोड़े हैं जो कि इनका धर्म नहीं है मानवीय धर्म है । मानवीय धर्मों को यहाँ उल्लेखों पर धारोपित कर बिम्ब मया है बिम्बसे बिम्ब की सृष्टि हुई है व बिम्बात्म भावा की रूपकारमकता भी प्रतिपादित हुई है । बिम्ब यद्यपि रूपकारमकता के अभाव में भी हो सकते हैं पर रूपकारमकता एक सीमा तक बिम्ब के निर्माण में बड़ा सहयोग देती है ।

रूपकारमकता के इस विवेचन में एक बात उल्लेखनीय है कि रूपक और रूपकारमकता एक ही वस्तु नहीं है । रूपक मात्र एक धर्मकार है और रूपकारमकता धर्म धारोपन करने की प्रकृति । धारण होते हुए भी दोनों में अन्त भेद है जिसे ऊपर स्पष्ट

१ कालिका : प्रसाद १० १६

२ कालिका : प्रसाद, १० १

क्रिया का चुका है। बिम्ब के अस्तित्व रूपक का अर्थ व्यापक रूप में लिया जाता है। रूपक अर्थकार के संकुचित अर्थ में नहीं। यहाँ रूपक का लगभग वही अर्थ है जो अर्थजो में मेटाफर का या व्यापक रूप में व्यवहृत 'रूपक शब्द' का। इस अन्तर को विद्यमान अर्थार्थों में विस्तार से प्रकट किया जा चुका है अतः यहाँ यह अर्थ प्रभाव रूपक होनी।

(२) अमत्कारहीनता

बिम्बगत भाषा का एक प्रमुख लक्षण या गुण है अमत्कार का अभाव। भाषा की अमत्कारिकता और बिम्ब में विरोध^१। एक की उपस्थिति पर दूसरे का अस्तित्व संदिग्ध है। अर्थात् कवि बुद्धिबल से पाठक को अमत्कार करने का प्रयत्न करता है वही बिम्बों का सर्वत्र अभाव रहना है। बिम्ब भाव ने साथ स्वतः ही हृदय से निगूँठ होने वाली भाव की सहज अभिव्यक्ति है। परन्तु वहाँ कवि बुद्धि से काव्य को बाह्य रूप रंग बेकर सुन्दर बनाने का प्रयत्न करता है वहाँ बिम्ब का अस्तित्व सर्वथा अमत्कार है अर्थात् अमत्कार के लिए अतिशयोक्ति प्रधान उल्लेखों का अभाव वहाँ भाव का उपकारक रूपन कम होता है, बुद्धि को अमत्कार करने का प्रयत्न अधिक होता है अतः बिम्ब का अभाव रहता है। अर्थात् अमत्कार

आई दे आसँ बसत आई हू की रसत ।

ताहसत कँ की मेहू बसत सपनी सबै बिग आत ।^२

३ भूषण मार समारहि कपी यह तन सुकुमार

सूये पाव न भर परत सोया ही क भार ।^३

यहाँ प्रथम दोहे में बिम्ब की दशा का कोई बिम्ब सामने नहीं आता नहीं बिम्ब अभाव की समुचित अर्थजना हो पाती है। कवि ने ताप के कारण सदियों का गीमे बसत पहनकर आना प्रकट किया है जो केवल अमत्कार का उदाहरण करता है काव्य को अस्वाभाव ही बनाता है कवि की अदृष्ट अर्थजना का कोई प्रमाण प्रस्तुत नहीं करता। कवि की यह उक्ति भाव से अमत्कार न भर पाने के कारण सतही सी लगती है। कवि के हृदय से अभाव कोई सम्बन्ध नहीं दिखाई देता। कवि न अभावना से काम लिया है। यहाँ अतिशयोक्ति अर्थात् अमत्कार के कारण बिम्ब का अभाव है। दूसरे दोहे में अभाव से सुकुमारता का कुछ अभाव तो ही आता है परन्तु यह अभाव ही रहता है। अभाव अभाव यह सुकुमारता अभावित हो सकती थी परन्तु कवि का अभाव इस अर्थ अभाव ही रहा है। वह अभाव को अभाव के अभाव की तरह अमत्कार नायिका के ठीक से पाव भी न भर पाने की अमत्कारिक अर्थजना ही कर सका है। जिससे बिम्बगत अर्थजना अर्थ का अभाव प्रकट होता है। अतः कवि के अर्थ अभाव न होने वाली अमत्कारिकता के अभाव का ही परिणाम है।

^१ बिम्ब अभाव अर्थ २०२

^२ वही अर्थ २०२

प्रतिशयोक्ति के प्रतिरिक्त अन्य सञ्चालकारों में जहाँ कवि युक्ति से दो-दो तीन तीन धर्म देने का प्रयत्न करता है वहाँ सर्वत्र ही बिम्ब की हानि होती है। यमक अनुप्रास श्लेष आदि साहाय्यकार हैं। कवि के हृदयगत भावों से इनका विक्षेप सम्बन्ध नहीं होता। ऐसे स्वर्णों पर कवि अपने शब्द कोप के ज्ञान या भाषाधिकार को प्रकट करने के लिये व्यग्र रहता है। इस व्यग्रता में अक्सर वह मात्र की हत्या कर देता है। जहाँ यमक आदि के अमत्कार भाव व्यञ्जना में सहायता करते हैं वहाँ भी श्रेष्ठ विधियों का निर्माण नहीं हो पाता। उदाहरण के लिए केचन को सीजिये

बिधि के समान हैं बिमानी कुत राजहृत् ।
 विविध विबुध पुत मेव सो प्रचलत है ।
 वीपति वीपति अति सप्तो वीप वीपियतु ।
 वृषरो विलीप सो तुवसिवा को बल है ।
 सप्तार उवागर को बहु बाहिनी को पति ।
 जगदान-प्रिय किन्हीं मूरज प्रमल है ।
 सब विधि समरथ रात्री राखा वसरथ ।
 मामीरथ पय गामी जमा सैसी बल है ।^१

वस्तुतः कवि यहाँ अनुप्रास यमक श्लेष आदि का अमत्कार दिखाने में ही व्यस्त है। इस कारण उपमा उत्प्रेक्षा आदि के होते हुए भी वह रूप रंग से परिपूर्ण कोई शिब नहीं दे पाया है। केचन की अमत्कार प्रियता का यह उदाहरण स्पष्ट कर देता है कि अमत्कार में बिम्ब का औन्वय्य नष्ट हो जाता है। रीतिकासीन कवियों में ऐसे उदाहरण पर्याप्त देखे जा सकते हैं। अमत्कार का काव्य में एक रूप धीर है वह है वस्तुधों के नाम परिगणन की शैली में। इस शैली के मूल में संभवतः कवि की ज्ञान या बुद्धि (मानस) के प्रकाशन की इच्छा रहती है। पाठकों को यह दिखाना चाहता है कि उसका ज्ञान कितना विस्तृत है पर प्रसंग न होने से ऐसा नहीं कर पाता। विस्तारपूर्वक ज्ञान बगल से तो प्रसंग में अंतर या आवृत्ति इस कारण वह तत्त्वियमक ज्ञान की एक सूची मात्र दे देता है। अर्थात् वस्तुधों का व्योरेवार वर्णन न करके उनका नाम परिमचन कर देता है। इससे ही संभवतः पाठकों को उसके ज्ञान का कुछ प्रामाण्य हो सके। ऐसी रचना में कवि मात्र धीर विमोह होकर रचना में प्रवृत्त नहीं होता वह अपने ज्ञान का प्रकाशन कर पाठकों पर अपना प्रभाव डालना चाहता है। ऐसी रचनाधों में भी मात्र पक्ष सूत्र्य होने से बिम्ब का अभाव रहता है। जैसे जामरी के नौज वर्णन आदि में है।

यहाँ कवि का हृदय संविधनाधों से शून्य है। जोज जामरी में जावरी की रचि विस्तृत नहीं थी क्योंकि उनमें स्वाव प्रतिमाधों का अभाव है पर यहाँ अपने ज्ञान

प्रदर्शन के लिए कवि ने बड़े विस्तार से वर्णन किया है। यहाँ पशु-पक्षियों के प्रति कोई विचार कवि ने हृदय में नहीं धारा है वह केवल अपने ज्ञान का प्रसार प्रदर्शित करने के लिए उनके नाम गिना रहा है। ऐसे स्वर्णों पर रागात्मक घुन्पता के कारण बिम्ब का वर्णन नहीं हो पाता। चमत्कार प्रदर्शन मुख्य लक्ष्य होने के कारण ऐसे वर्णन श्रेष्ठ काव्य की शर्तों में नहीं आते। चमत्कार का एक धीर रूप मुद्रालंकार में भी दिखाई देता है। यहाँ तो कवि स्पष्ट रूप से नामों की पसना करता चमत्कार है पर वहाँ वह प्रस्तुत वर्णन के व्यास से वस्तुओं के नामों धीर उनके नामों को प्रस्तुत करता है। इसका उदाहरण भी पद्यावत से नीचे

पनिघा का सुरंग का जूना देखि तन मेह बयब देखि हुना ।
 हों तुम्ह मेह विमार भा पातू, पेड़ी हुति मुनि रासि बसातू ।
 मुनि तुम्हार संसार बड़ौनद, जोग कीन्ह तन कीन्ह पड़ौना ।
 कर अंश किगरी लै बैरापो मेवती भयद बिरह की धरगो ।
 केरि केरि तन कीन्ह मु जौना घोटि रकत रय हिरई घोना ।
 सुकि सुबारी भा मन मारा, सिर सरीत जनु करबत सारा ।
 हुक जून नै पिरह जो इहा सो वै आनि दगधि इमि सहा ।

यहाँ प्रस्तुत वर्णन रत्नरत्न धीर पद्यावती की प्रेमपूर्ण वार्ता का है परन्तु कवि 'तुम्ह मेह विमार भा पातू' पर में 'पान' शब्द के धा जाने पर पान विषयक अपने ज्ञान का प्रदर्शित करने का शीघ्र न छोड़ सका है। यहाँ मुद्रा धर्मकार के रूप में उसने अपने ज्ञान का प्रदर्शन कर पाठक को चमत्कृत करने का प्रयत्न किया है। ऐसे स्थल केवल चमत्कार के योग्य होने के कारण बिम्ब नहीं बन पाए हैं।

वस्तुतः बिम्ब वर्णन की एक प्रणाली है। जहाँ कवि धर्मकार आदि चमत्कार के किसी माध्यम का धारण करता है, वहाँ भावोद्बोधन की क्षमता न होने के कारण बिम्बरात्मक वर्णन नहीं हो पाते हैं। बिम्ब का कोई भी उदाहरण इसको स्पष्ट कर सकता है। बिम्ब धर्मिण्यक्ति की चमत्कार बिहोन पद्धति है, उसका संबंध बुद्धि से कम, हृदय से अधिक है। भाषा की बाह्य संज्ञा से कम उसके धर्म से अधिक है। चमत्कार न बिम्ब का पूर्व विरोध है। उदाहरण के लिए जानकी का ही एक बिम्ब उदाहरण दिया जाता है

नागमती कंह प्रपन्न जनाब, मी सो तपनि बरका रिनु प्राबा ।
 पही जो मई नायिकि जति तथा पिउ पाई तन मंह भी सबा ।
 तब बुक जनु केंचुम या छूटी यनि निसरी बेरु बोर बहूटी ।

यहाँ नागमती की तुलना नायिक से ही गई है। प्रिय के प्रागमन पर उसका रुच्य उसी प्रकार बिनाग हो जाता है जैसे चाँप के ऊपर स केंचुम उतर जाती है। धीर वह धीर बहूटी की भाँति नवीन हो जाती है मानो नया जन्म पाया है। यहाँ नागमती

के लिए नायिन का बिम्ब देने से एक घोर तो उसके रूपक योजना के अनुसार बिप गए धर्म की व्यंजना हो जाती है, दूसरे केंबुल उतर जाने का पूरा बिज भी दृश्य बन जाता है। कुछ हट जाने घोर मुख के धा जाने जैसे धर्मोर्त भाव भी इस बिम्ब में मूर्तित होकर धाए हैं। कवि का यह बिम्ब उसके हृय से तिसृठ हुमा है चमत्कार के प्रति कवि का तनिक मोह भी प्रबसित हुमा है। यद्यपि यमक धर्मकार है पर कवि साध्य धर्मकार नहीं बन बिब है। धयनी व्यंजकता एवं चमत्कारहीनता के कारण इस बिब की यगता जायसी के उत्कृष्ट बिम्बों में की जा सकती है।

समष्टि में कहा जा सकता है कि बिम्ब का भाया को चमत्कारिक न होने देने के रूप में काव्य में एक बड़ा योगदान है। क्योंकि चमत्कार काव्य के बिम्ब स्तर का लक्षण है बिम्ब भाया को चमत्कार की प्रवृत्ति से हटाकर सहज धीर अनुभवगम्य बनाती है।

(१) व्यंजकता (Suggestiveness)

बिम्ब से काव्य भाया की व्यंजकता की शक्ति में वृद्धि होती है। यद्यपि बिम्ब धीर व्यंजना एक नहीं है परन्तु उनका सख बड़ी निकट का है। व्यंजना सदैव बिम्बात्मक नहीं होती परन्तु बिम्ब सदैव व्यंजनात्मक होते हैं। व्यंजना के लिए यद्यपि वस्तु का दृश्य बनकर प्रस्तुत होना आवश्यक नहीं है उसके लिए दृश्यता से धार्मिक सांकेतिकता आवश्यक है तथापि व्यंजना के लिए बिम्ब के माध्यम का बराबर प्रयोग होता है। वहाँ मुहावरे या लाकीकित के रूप में व्यंजना होती है वहाँ धार्मिकतर वर्णन बिम्ब प्रधान होता है। उदाहरण के लिए जायसी का एक बिम्ब प्रस्तुत है

में निजि बनि अस सति परपती रागी देखि पुहुमि फिर बती।

वहाँ मुहावरे के रूप में प्रयुक्त बिब धर्मपूर्ण व्यंजकता से समन्वित है। 'पुहुमि का बसना' निरंन पधावत के पुन सौन्दर्य युक्त हो जाने को प्रकट करता है। साव ही राजा की भोगपूर्ण धारणर्न मिमित मनस्थिति या दृष्टि का प्रकाशन है। इस प्रकार यह बिब एक साव ही सौन्दर्य परिस्थिति धीर चरित्र की व्यंजना करता है धीर बिब की व्यंजना का स्पष्ट उदाहरण प्रस्तुत करता है। यह उल्लेखनीय है कि यहाँ व्यंजना का धर्म चम्ब धर्म से नहीं बन व्यंजकता (सजेस्टिवनेस) से लिया गया है। व्यंजना दृष्ट धर्म के रूप में बिम्ब से पर्याप्त दूर है पर व्यंजकता बिब का ही एक मुख है। यद्यपि व्यंजना (सब्य धर्मित) का समस्त क्षेत्र बिब में नहीं धा सकता पर बिब भी व्यंजकता का धर्म से ही—व्यंजना करने में सहायक होते हैं यह निबिबाव स्वीकार किया जा सकता है। बिब व्यंजना के समस्त क्षेत्र का नहीं धूते पर व्यंजना बिब का एक धर्मिबाय मुख है इस कारण व्यंजना बिब के समस्त क्षेत्र को धूती है। बिम्ब दृश्यता पर धाधारित रहता है धीर व्यंजना सांकेतिकता पर, दोनों के क्षेत्र में पर्याप्त धर्मित है। बिबहीन व्यंजना हो सकती है जैसे :

रोज करों गृहकाज दिन बीतत याही मोम ।
 हठि लहौ फल पय एक निर्दिष्टिहारे सोम ।^१

धर्मान दिन तो काम काज में ही निकल जाता है (घबकाया ही नहीं मिलता) कठिनाई न मर्या को बोझा घबकाया पा जाती है। (घठ सध्या को घा सकते हो) नाविका इन प्रकार उपपत्ति को सध्या को घाने के लिये मुकैठ पती है। यहाँ 'मय्य संनिधिर्बैगल्मोप्यन्नावाक्यमनवा स्यजना है परन्तु विम्बात्मक बर्णन नहीं है। विबों क अनक उदाहरण इन प्रकार की साकेतिकता से बुर मिल सकते हैं। जहाँ प्रकृति का धार्मिक रूप में विभात्मक बनन होता है वहाँ भी इन प्रकार की साकेतिकता घबका स्यजना का धनाय रज्जा है।

किसी को सोने के मुक साज
 मिस पय यदि खूब भी कुछ धाज
 बुका सेता बुक कस ही ध्याज
 काल को नहीं किसी की साज ।
 बिपुस मभि रत्नों का छवि जात
 इन्द्रधनु को सी छटा बिजात
 बिभव की बिद्यत खाल,
 बमक छिप जाती है तत्काल ।
 मोक्षिया जड़ी मोक्ष की शार
 क्षिता जाता रूपबाय बजार ।^२

(२) उबरनि बसी है हमारि धंजियान देखो,
 मुबस मुवेत जहाँ भावते बतत हौं

प्रथम उदाहरण में संसार की प्रसारता उत्पान और पतन के अनेक बिम्बों द्वारा व्योक्त है। बाबरक घास्य मही कोई नहीं है परन्तु जीवन और मयत के व्यागारों की परिवरता संसार की सणभंगुरता का संश्लेष देती है। जहाँ स्यजना की दृष्टि से यह उदाहरण श्रेष्ठ है वहाँ बिब दृष्टि से भी यह बर्णन उत्कृष्ट है। रत्नों एवं रत्नों का इसमें सुन्दर समावेश है साज के मुक साजों के समाप्त होने अनिरत्नों के इन्द्रधनुसी सौन्दर्य के बिखर जाने बैभव की बिद्युत पशाम की क्षनिक बमक होने और मोस मरी शार के प्रथालक भर जाने के बिब संसार की दरवरता को व्यञ्जित करते हैं। नादियों मरी मोस की शार का बिब जीवन के समुद्र सौन्दर्य और काल के प्रकाश निष्टुर धाकमय के त्रिमित मुबस प्रतीक हैं। पूष व्यापार द्रव्य है और सौन्दर्य समुद्रि और जीवन की सन्निवता का पूर्ण मुकैठ भी देता है। यह पूष बनन व्यञ्जक भी है और बिब पूष भी।

१. हठि बरतत शान्तरात् इ रत्नरविजि विज १ २

२. उत्पन्न । शीत

३. बनतक प्रकृतनी

द्वितीय उद्धरण चर्चार्थक से है। यहाँ बिम्बोपी हृदय की सूक्ष्मता ध्वन्य है, बिम्बोपी का हृदय इतना सूना भ्रमवा उड़ा हुआ है मानो उजड़न ही बाकर बर बर हो। उजड़न के बसने में असंमति है जिसे हम लक्षणा द्वारा पूर्ण करते हैं। यहाँ उजड़न यद्यपि प्रकृत भाव है पर उसके बसने से विचारमकता भा गई है। प्रसाप के सुम्भ अंशोर गर्जन के बस जाने का सा भाव यहाँ भी धाया है। उजड़ने के बसने के द्विब में उदासी और सूने पन की घनन्तता की प्रतिबिम्बित है। यहाँ बिम्ब के साव साव ध्वनता की उत्कृष्टता भी दृष्ट्य है। धातुनिक कवियों में भी उत्कृष्ट बिम्ब योजना और ध्वनता साव साव मिलती है। धातुनिक कवि बिम्ब के महत्त्व से परिचित हैं और बिम्ब के सिद्धान्त पक्ष को भी उन्होंने ब्रह्म समझ है। इस कारण वह मध्यकालीन और प्राचीन कवियों से अधिक ध्वन्यक और बिम्ब को दृष्टि से पूर्ण वर्णन कर सके हैं। उदाहरण के लिए निम्नांकित पंक्तियाँ दृष्ट्य है

प्यार अगर बामता न पब में ऊंगली इस बीमार उजर की।

हर पीड़ा बेव्या बन जाती हर धाँसु धाबारा होता।^१

यहाँ प्रेम की जीवन में प्रधानता को कवि व्यञ्जित करता चाहता है प्रेम के प्रभाव में जीवन का अस्तित्व संक्षिप्त है और पीड़ित हृदय के लिये तो कहीं धाम्य है उसके प्रभाव में जीवन की हर भावना हर विचार बारा व्यर्थ हो जाती है। कवि इस विचार को बिम्ब रूप में प्रस्तुत करता है। प्रथम पंक्ति बिम्ब का स्पष्ट उदाहरण है। प्यार का ऊंगली बामता और बीमार उजर दोनों पद धमूर्त को सूचित कर देते हैं। यहाँ उजर और प्रेम का मानवीकरण किया गया है। धरूप की यह अकारमकता पीरज की उत्कृष्ट रूपता दृष्टि की परिचायक है। धातुनिक युग के धम्य कवियों ने भी बिम्ब के धपूर्व ध्वन्यक और सफल प्रयोग किये हैं।

ध्वनता यहाँ किमार्थो—धनुमार्थो या हाम भाषो के रूप में होती है यहाँ बिम्ब धरूप ही विद्यमान रहता है। उदाहरण के लिए रत्नाकर का एक उद्धरण दृष्ट्य है

दीन बला हैकि हज बामिन की ऊंगली की,
गरि पी सुमान ज्ञान गौरव कुठामे से।
कहै रत्नाकार न साए मुज बिन नैन
नौर जरि स्याए मए सज्जुधि जिहामे से।
सूखे से दमे से सज्जुके से सके से बके,
सूने से जमे से जमरे से जजुबामे से।
होले से हते से हुन हुले से हिये में हाम
हारे से हरे से रहे हैएठ हिरामे से।^२

^१ गीत मा अमीर की बीरज १ १२

^२ अजय रायक : उदाहरण १ २२

यहाँ गोपिणी के प्रेम की धन्यता एवं महारस को देखकर उद्वेग की धारण्य विवक्षित धारणा का वर्णन किया गया है। भूले भ्रमित कम्पित उद्वेगिन विह्वल उद्वेग्य धारि के रूप चित्रों द्वारा यह धारण्य की अनुभूति व्यंजित हुई है। कवि उद्वेग की धारण्य यद्वता को धारण्य में न देकर रूप चित्रण द्वारा देता है। ये सब अनुभाव की धारण्य में आते हैं। यहाँ प्रस्तुत समस्त अनुभाव बिम्बारमक हैं साथ ही व्यंजना की क्षमता से भी पूर्ण हैं।

इस प्रकार स्पष्ट है कि यद्यपि व्यंजना और बिम्ब एक ही नहीं है परन्तु यह एक दूसरे के बहुत निकट हैं। व्यंजना सर्वत्र विद्यमानक हो यह कितना ही धारण्यक नहीं है, परन्तु बिम्ब सर्वत्र व्यंजना करता है। व्यंजना बिम्ब का एक धारण्यक अंग है। बिम्ब धारण्य के माध्यम से किसी धारण्य भाव या वस्तु का प्रकृत देता है। इस तरह स्पष्ट है कि बिम्ब भाव की व्यंजकता की क्षमता में वृद्धि करते हैं और धारण्य का उत्कृष्ट बनाते हैं।

(५) सरसता

बिम्ब धारण्य की सरसता में वृद्धि करता है। भाव के लिए बिम्ब का यह एक बड़ा धारण्य है। भाव बही धारण्य एक भाविक हो सकती है जो जन भाव में परिचित हो उनमें धारण्य तक रमी हुई हो। बिम्ब की भाव ऐसी ही होती है कवि अपने धारण्य अर्थ में तथा धारण्य भावों के लिए एक रूप की योजना करता है जो उसके पाठकों का परिचित होगा है उनके जीवन से ही उद्वेग किया हुआ होगा है। बिम्ब का परिचित होना एक बड़ी धारण्यकता है, यह पहल ही—द्वितीय धारण्य में बताया जा चुका है। बिम्ब की परिचितता पाठकों के लिए धारण्य को रमणीय बना देती है। पाठक बिम्ब रूप में उन्हीं वस्तुओं को देखता मुनता है बिम्ब में उनका पहल का धारण्यक संबंध होता है या महारस ही हो जाता है। ऐसे बिम्ब भाव को सरस बना देने हैं। धारण्यकता के कारण भाव सरस हो जाती है। उदाहरण के लिए एक बिम्ब प्रस्तुत है

किरी धारण्य रितु बाजन बाजे धी विगार सब धारण्य साजे।

धारण्य करी पशुबाजती रानी होय मालति अणु बिगसानी।

तारा धारण्य पहिर मल बोला, पहिर सति मल मलत धारण्य।

यहाँ धारण्य और धारण्य का बिम्ब या धारण्य के सर्वाधिक प्रिय बिम्बों में एक है पशुबाजती के धारण्य रूप को धारण्य करने के लिए धारण्य है। धारण्य और धारण्य का हमारे धारण्य से ही सम्बन्ध हमारे साथ धारण्यक संबंध है मानवता के धारण्य के समय से ही यह हमारी धारण्य और धारण्य के प्रतीक रहे हैं। धारण्य में ही धारण्य और धारण्य को प्रकृत करने के कारण यह धारण्य ही धारण्य भावों को धारण्य कर देने हैं और धारण्य के धारण्य में धारण्य देते हैं। परिचितता के कारण यह धारण्य का धारण्य भी बना देते हैं।

बिम्ब हीन वर्धन नीरस होता है। नाम परिगणन भ्रमत्कार-प्रवर्धन आदि की रीतियाँ बिम्ब के अभाव के कारण कभी काव्य में रस का संचार नहीं कर पाती वस्तु का दृश्य वर्धन ही पाठक की रागात्मक वृत्ति को जाग्रत करता है और काव्य को सरस बनाता है। प्रस्तुत एवं अप्रस्तुत रूप चित्रों से कवि काव्य की रसता को रसमयता में परिवर्तित कर देता है। महाकाव्यों के परीक्षण से रस वर्धन के बीच बिम्बों से उद्भूत सरसता का अन्वेष स्पष्टीकरण होता है। बायसी में रससेम बिवाई संज्ञक श्रेष्ठ यात्रा खंड आदि में पर्याप्त नीरसता है बिम्बों का भी नितांत अभाव है पर वहीं एक दो रूपचित्रों के बाद श्रेष्ठयात्रा खंड में कुछ बिम्ब बने समर्थ हैं और काव्य में सरसता का बिभ्रान करते हैं। इनसे पाठक पिछली नीरसता का प्रशासन सहज ही कर लेता है। जैसे रासस के रूप बिभ्रान में

लंका कर रत्नचंद्र प्रति करा प्राण जला मेघ धींधियारा ।

परती पाँच सरग घिर बानेहुं सहसर बाहु ।

आदि सुरज मच्छतनु मंह प्रस बीजा अस रजु ।

यहाँ मेघ एवं बाहु से उसका अर्थकार सा बर्ष और मयामकता चित्रित हुई है। यह वर्धन नीरसता को दूर कर रस का संचार करते हैं।

इसके अतिरिक्त ज्ञान भर्ष और वर्धन आदि की उक्तिमा से काव्य में जो नीरसता आ जाती है उसे भी कवि बिम्बमय वर्धन द्वारा सरस बनाता है। उदाहरण के लिए दार्शनिक तत्त्वों से परिपूर्ण कामायनी का रहस्य धर्म वेसा वा सकता है। वहाँ प्रसाद ने इच्छा ज्ञान और किष्मा की मीमांसा प्रस्तुत की है जो पूर्णतः दार्शनिकता से प्रोत्पन्न है परन्तु कवि की वर्धन की बिम्बात्मक शैली के कारण दार्शनिक तत्त्वों का बिभ्रान भी सरस हो गया है। बिम्बों की रसनीयता के कारण ही पाठक रहस्य और वर्धन की अद्विज पुस्तिकाओं को समझ सकता है साथ ही रसता के अभाव में रस का अनुभव भी कर लेता है। इच्छा आदि का बिम्बात्मक एवं सरस वर्धन दृष्टव्य है

बहु देखो रागात्मक है जो अन्व के कडुक ता सुन्दर,

छायामय कमनीय कसेवर भावमयी प्रतिभा का मन्दिर ।

अन्व स्पष्ट रस रूप गंध की पारिवर्तनी सुबहु पुस्तिका ।

आरो और नृत्य करती ह्यो जपवती रंजीत क्लिप्तिया ।

इस कुसुमाकर के कानन के अक्षय पराज पदक छाया में

इच्छाशी सोती जपती ये अपनी भाव जरी माया में ।

बहु संगीतात्मक म्बनि इनकी कोमल अंगड़ाई ही लेती

मादकता की लहर उठा कर अपना अम्बर तर कर देती ।^१

यहाँ इच्छा लोक की कामगारों को यद्यपि वर्धन के अर्थ में प्रस्तुत किया गया है, परन्तु उनका बिम्ब रूप में मादकीकरण होने के कारण सरसता अचरित बिध

१ कामायनी : अन्व ५ ११९-१३

मान रखी है। पाठक वस्तु की स्वता को वर्णन की सरसता के कारण बिस्मृत सा कर देता है। इसी प्रकार सज्जा का वर्णन मनोबलान्तिक भी करता है और प्रसाद भी ने किया है पर दोनों में बड़ा अन्तर है। यह अन्तर शैलीगत बिम्बारमक का ही है बिम्ब की मधुरता के कारण वर्णन रहस्य प्रथवा बौद्धिक विचारों का तिरत रस भी पाठक प्रसन्नता से पी जाता है। यहा सज्जा की मूर्तिबत्ता के कारण पाठक सरसता अनुभव करता है और उसमें मृगम हो जाता है अन्वया स्वय भाव के बिबेचन में सरसता नहीं होती। शुक्ल जो के चिन्तामणि में भाव बलन और प्रसाद के सज्जा वर्णन से यह अंतर एकदम स्पष्ट हो जाता है। स्पष्ट है कि काव्य में सरसता का उदम करने में भी बिम्ब का बड़ा योग है। बिब प्रस्तुत और अप्रस्तुतों की मधुरता से काव्य की बिचारगत स्वाता को कम करके उसको रसनीम बनाने में सहायक होता है। और इस प्रकार काव्य के शृंगार में सहायक होता है।

उपसंहार

इस समस्त बिबेचन में स्पष्ट है कि भाव भाषा और बिम्ब वस्तुतः पृथक पृथक सत्ताएँ नहीं हैं। बरन् एक दूसरे के अयोग्याभित हैं। एक के अभाव में दूसरे की स्थिति की कल्पना ही नहीं की जा सकती। बिब के लिए भाव और भाषा का संतुलन परम आनन्दक है संतुलन के न होने पर बिम्ब कभी सफल नहीं हो सकता। भावहीन बिम्ब की कल्पना असम्भव है और भाषा के माध्यम के अभाव में भी बिम्ब की स्थिति संदिग्ध है। वस्तुतः बिब कवि की कल्पना का एक रूप है जो कवि की भावामकता से जन्म लेता है और भाषा में प्रकट होता है। बिम्ब भाव और भाषा के मध्य निर्मित होता है उसका संबंध दोनों से समान महत्व का है। इस रूप में तीनों की एकता पल है काव्य में भाव भाषा और बिम्ब एक ही सत्ता के तीन पृथक-पृथक दृष्टिकोण से देखे गये रूप हैं।

अध्याय ५

जायसो की विन्ध्य योजना

प्रत्येक कवि की अभिव्यक्ति उसके अपने व्यक्तित्व का प्रकाशन है और मुख्यतः उसकी उपमाएँ, रूपक अथवा प्रस्तुत योजना आदि जो उसके अन्तर्गत को सीमा प्रकाशित न करके उसकी रुचियों इच्छाओं आदि का संकेत देती हैं। ये उपमाएँ उसके आचार—विचार, संस्कार, सिद्धान्त आदि को ही नहीं देती बल्कि उसका मानोविश्लेषण (साइकोएनेसेसिस) भी प्रस्तुत करती हैं। जिन परिस्थितियों में कवि जन्मा जिन संस्कारों में वह पला व जिस समाज में वह बढ़ा हुआ उस सबका प्रकटीकरण उसके विन्धों द्वारा हो जाता है और इससे इतर हम उसका मनोवैज्ञानिक अध्ययन भी विन्धों द्वारा कर सकते हैं उसकी रुचियों इच्छाओं संवेदनाओं उसके आकर्षण के केन्द्रस्पर्श उसके हृदय पर गहरे पड़े प्रभावों उसके हृदय में उत्पन्न मनोमूर्तियों भावों आदि सबको केवल उसके विन्धों द्वारा ही जाना जा सकता है क्योंकि कवि की कहानी या कवि के कथ्य में कहीं इनका स्थान नहीं होता। कवि एक विशिष्ट मनःस्थिति में विशिष्ट परिस्थिति में विशिष्ट स्वप्न पर एक साम्य उपमा या रूपक प्रस्तुत करता है बहुत दृष्टि से देखा जाए तो यह कवि के तात्कालिक चिन्तन का प्रभाव नहीं होता बल्कि यह उसके अन्तर्गत पर अभी पतों के पीछे से उसके किसी विशिष्ट सत्य का उद्घाटन होता है वह सत्य जो उसने जीवन में देखा सुना है या अनुभूत किया है। इस प्रकार एक उपमा या रूपक मात्र उपमा या रूपक ही नहीं है बल्कि कवि के व्यक्तित्व के प्रकाशक भी है। यही उसके भावों विचारों संस्कारों सिद्धान्तों के परिचायक हैं। उसकी रुचि इच्छाओं और संवेदनाओं के तो एक मात्र उद्घाटन-कर्ता है। क्योंकि कवि सभी वस्तुओं के विन्ध्य उपमा साम्य आदि को देता है जिनसे वह जीवन में प्रभावित हुआ है। जिन्होंने उसे सामान्य से अधिक आकर्षित किया है या जिन्होंने उसके हृदय पर कोई गहरी छाप डाली है। उन्हें कवि सबसे तो स्मरण नहीं करता क्योंकि वह अपनी कला कथानक आदि के अन्तर्गत ही जकड़ा होता है फिर भी उसके अन्तर्गत में बैठे ये प्रभाव ये सम्मरण कवि के अन्तर्गत ही अमरस्तुत के रूप में काव्य में प्रकट हो जाते हैं।

साहित्य सर्जना में विन्ध्य विधान का स्वरूप बहुत कुछ कवि या लेखक के अपने व्यक्तित्व पर निर्भर करता है। रचना की शैली से ही व्यक्ति के विषय में अनुमान नहीं

क्रिया या सकृता उसके बिम्ब विधान से भी क्रिया या सकृता है। बाल्मीकि कामिदास और प्रदक्वोप का बिम्ब विधान उत्कृष्ट होते हुए भी विशिष्ट प्रकार का है। कबीर, सूर और तुलसीदास की रचनाओं में भी यही बात मिलती है। प्रसाद पन्त निरासा और महादेवी का बिम्ब विधान उनके व्यक्तित्व के अनुसार अपने ढंग का है।^१

जायसी का बिम्ब विधान भी जायसी के काव्य की भाँति विशिष्ट प्रकार का है। जायसी को पूर्णतः समझने के लिए उसके बिम्ब बड़े उपयोगी हैं, बरन् कहा जा सकता है बिम्बों का अध्ययन जायसी के काव्य का समझने के लिए नितांत आवश्यक है। उसके सिद्धांत उसके भाव एवं विचार उनकी भास्वाएं, उसके संस्कार उसकी रचियाँ—सब उसके बिम्बों से मुखरित हुई हैं। वस्तुतः बिम्ब दर्शन है जिनमें उसके हृदय का बुद्धि का उसके सम्पूर्ण व्यक्तित्व का पूरा पूरा प्रतिबिम्ब पड़ा है।

बन्नु यहि बरपन मोरा क्रिया बहू बहू बरत देखाई पिया'

रचन के यह अत्यन्त प्रयोग वस्तुतः जायसी की शैली के परिभाषक हैं। यह कवि के मन में रचन की भाँति जगत को काव्य में प्रतिबिम्ब करने की प्रवृत्त दृष्टा के चोकर है। वस्तुतः जायसी की वर्तन शैली का एक प्रमुख घंग है—बिम्ब। जायसी के भातोषकों ने भी इस बात को स्वीकार किया है। शुक्ल जी ने जायसी के कई बिम्बों—जिनमें रम बर्ब बंध रूप प्रादि का सुन्दर प्रयोग है—की श्रुत प्रवृत्ता की है। डा. बाबुरेवगरण अग्रवाल ने तो अपनी संजीवनी टीका की 'भूमिका' में जायसी की प्रतिभा की बर्णना करते हुए जायसी के बिम्ब पूर्व बर्णनों का स्पष्ट उल्लेख किया है। डा. अग्रवाल लिखते हैं—

"जायसी अत्यन्त उद्वेगशील कवि थे। उत्कृष्ट के महाकवि बाण की भाँति वे शब्दों में चित्र मिलाने के बनी हैं—चित्र भी ऐसे जिनके पीछे शब्दों का अक्षरशः मोल बहुत है। अस्कार, रम भाव प्रादि की काव्य समृद्धि का तो वहाँ कोई पल ही नहीं मिलता। किन्तु कवि की सहज प्रतिभा बाहरी बर्णनों में ही परिसमाप्त नहीं हो जाती। वह अस्कार-विधान के माध्यम से रम तक पहुँचने में सफल होती है। जायसी की चित्र प्राङ्गिनी शक्ति का उल्लेख करते हुए अनायास अक्षरों की कवि वाठानिप का स्मरण हो जाता है। वह भी अस्पष्टा कवित चित्र की पूरी रेखाओं को मानस में प्रथित करते हुए उनका उतना ही अर्थ अक्षर परिबृहीत करता था जो उसकी दृष्टि में चित्र के लिए श्रुततम आवश्यक होता। फलतः बीच की कई कड़ियाँ छूट जाती हैं जिन्हें पाठक को अज्ञानी शीर से स्फुर कराना पड़ता है। ऐसे सँकड़ों बहाहरणों से जायसी की कविता भरी हुई है।^२ अग्य भातोषकों ने यद्यपि उनकी चित्रारमक बर्णन की प्रमुख विशेषता का उल्लेख नहीं किया है पर उनके उपमा शीर रूपकों की समीक्षा के वे प्रयत्नक प्रबन्ध हैं।

१ हिन्दी साहित्य कोष १ २१८

२ नूतन और संजीवनी टीका। डा. अग्रवाल पृ० ८

जायसी में स्वयं ऐसी उक्तियाँ कही-कहीं मिल जाती हैं जो उनको मूर्तिमय (चित्रमय) या बिम्बमय वर्णन का समर्भक बताती हैं। हीरामन तोते के द्वारा राजा रत्नसेन ने पद्मावती का रूप वर्णन धरत्यस्त संक्षिप्त और चित्रमय भाषा में सुना। उसने कहा

“तुइ सुरंग मूरति बह कही चित मंह लायि चित्र होइ रही।

(२१ २)

यहाँ सुरंग मूर्ति (सुस्वर मूर्ति वा मु-+रंग मूर्ति) सम्ब स्पष्टतः हीरामन के चित्रात्मक रूप-वर्णन के लिए ही प्रयुक्त हुए हैं। रूप-वर्णन जब समस्त ऐन्द्रिय विशेषताओं से संयुक्त होकर चित्र रूप में राजा के सम्मुख प्रस्तुत हुआ तभी उसने सुरंग मूर्ति को राजा के भ्रूओं के सम्मुख ला दिया। ‘मूर्ति’ जन्म बिम्बपूर्ण वर्णन के लिए प्रयुक्त हुआ है। यदि वर्णन बिम्बात्मक प्रभावी के द्वारा न होकर भाववाचक (ऐबस्ट्रैक्ट) नीरस पद्यति से हुआ होता तब जायसी उसके लिए मूर्ति शब्द का प्रयोग सम्भवतः न करते। तोते द्वारा पद्मावती का यह संक्षिप्त रूप वर्णन वस्तुतः ही भी बिम्बात्मक। इन उक्तियों से कवि बिम्बपूर्ण वर्णन का समर्भक प्रतीत होता है। जायसी ने वहाँ भी रूप वर्णन किया है वहाँ भक्त में बूरे पात्र के द्वारा उसका उल्लेख मूर्तिमत वर्णन के रूप में ही करवाया है। राजब वैतन के द्वारा पद्मावती-रूप-वर्णन के पश्चात् कवि फिर कहता है

राबी जी बनि बरन सुनाइ सुगत साइ मुरछा गति धाई।

बनु मूरति बह परपट भाई बरस बैसाइ तबहि छवि भाई ॥

(४०१ १२४)

‘बनु मूरति बह परपट भाई’ शब्द स्पष्ट करते हैं कि वर्णन में ऐसी चित्रात्मकता थी कि साइ ने मागो अपनी धाँचों से पद्मावती के रूप को देख लिया वह मूर्ति राजा के समक्ष प्रपट हो गई पर जैसे ही चित्रात्मक वर्णन समाप्त हुआ मूर्ति तिर्योहित हो गई। स्पष्टतः कवि चित्रात्मक शैली का पोषक और प्रबोधता दोनों ही है। यद्यपि उसके काव्य में चित्रात्मक वर्णन की महत्ता का कही स्पष्ट उल्लेख नहीं है कारण भी है कि कला की बटना प्रभावता में इस प्रकार की कोई उक्ति कहना सम्भव ही नहीं वा परन्तु उसके वर्णन और धरत्यस्त रूप से कही गई यह सभी उक्तियाँ उसके समर्थन को प्रतिपादित करती हैं।

जायसी के भाव विचार, उनकी रचि संवेदनाएँ धारि सब उनके बिम्बों के अध्ययन से स्पष्ट हो जाती हैं। प्रस्तुत अध्याय में रूप उनकी रचियों और संवेदनाओं धारि का बिम्ब द्वारा अध्ययन करेंगे। जायसी के बिम्बों के विषय जायसी की रचि के परिचायक हैं। उनके रूप रंग बंध धारि के चित्र उनकी संवेदनाओं को स्पष्ट करते हैं।

जायसी में बिम्बों की संख्या बहुत अधिक है क्योंकि जायसी की धर्मव्यक्ति प्रभावी का प्रमुख माध्यम बिम्ब ही है। जायसी में कुल २१३ बिम्ब हैं। बिनमें

६३४ प्रकृति से ३०१ मानव जीवन से व्यस्तुत रूप में दृष्टि किये गए हैं इनके प्रतिरिक्त १७ प्रस्तुत बर्तन १२ मानवीकरण और ११ मुद्राबारे और भोकोक्षितियाँ हैं। इस प्रकार जायसी के काव्य का भाषे से अधिक नाम बिम्बों से बिरा हुआ है।

जायसी के बिम्बों का वर्गीकरण

जायसी के बिम्बों को निम्नलिखित आधाये पर वर्गीकृत किया जा सकता है

(१) उपासवस्तु के आधार पर

जायसी के बिम्बों का विवेचन सर्वप्रथम उनके बिम्बा में दृष्टि बिषयों के आधार पर किया जा सकता है। यर्थात् जायसी जीवन और मरुत् के किस-किस क्षेत्र से बिम्बों बिम्ब प्रस्तुत करता है किस ओर उनकी रश्मि अधिक है और उसमें भी वह वस्तु को कितने पहलुओं से देख पाया है। किये आधार किस व्यापार ने उन्हें सर्वाधिक आकृष्ट किया है और यह बिम्ब किस रूप में उनके जीवन और व्यक्तित्व के प्रकाशक हैं। उपासवस्तुओं को हम मुख्यतः दो भागों में विभाजित कर सकते हैं—

(१) प्रकृति और (२) जीवन।

(१) प्रकृति—जायसी में प्रकृति से दृष्टि बिम्बा की संख्या सर्वाधिक है यह ६३४ है। जायसी के इतने बिम्ब किसी और शाय से दृष्टि नहीं है। यह बिम्ब कवि के जीवन में प्रकृति के स्थान उसके महत्व और उसके प्रति प्रेम के चोटक हैं। जायसी शम्बावसी की भूमिका में सुस्त जी ने जायसी के प्रकृति प्रेम की ओर धारण करते हुए लिखा है "प्राकृतिक दृष्टों के साथ जायसी के हृदय का बँधा मेंम महीं जान पड़ता। मनुष्यों के धारीक मुख-मुखा से उनके धाराम और तकलीफ से उनका जहाँ तक सम्बन्ध होता है वही तक उनकी ओर उनका ध्यान जाता है।" परन्तु सुस्त जी का यह कथन मुक्तिमुक्त नहीं है। मानव के दुःख दर्द के प्रतिरिक्त भी प्रकृति के सुद रूप और केवल प्रकृति के रूप के ही जायसी प्रेमी है। अतएव ऐसा न हावा तो सम्भवतः प्रकृति से दृष्टि बिम्बों की संख्या जायसी में इतनी अधिक नहीं होती। प्रकृति के प्रस्तुत बर्तन में उन बर्तनों की शौरसता का कारण जायसी के हृदय में प्रकृति प्रेम का प्रभाव नहीं है बरन् उनकी बाह्य परिस्थितियाँ ही उसका एकमात्र कारण है। संस्कृत साहित्य का उनको कोई ज्ञान नहीं था और उसके पूर्वकापीन काव्य से भी वे नितांत अज्ञान थे वास्वीकि और कालिदास के सुन्दर बिम्बों से उनका कोई परिचय नहीं था। उन्हें मुख्यतः उस समय की लोक-कथाओं में प्रकृतित प्रेम कथाएँ ही परम्परा के रूप में प्राप्त हुई थीं बा फिर सूफी भाषों और सिद्धों के विचार और तिहास बिम्बों प्रकृति की स्तनीयता भी धारक चुक हो गई थी। जायसी पर जाने समयाने इन सबका ही प्रभाव पड़ा फलतः वह प्रस्तुत रूप से प्रकृति का स्तनीय बर्तन कम कर लके कुछ उनकी अपने प्राकृतिक भाव का परिचय देने का शौक भी सम्भवतः था जिसके कारण अन्तुमि नाम परिणयनात्मक दोषी को

अपनाया पर यह भी उन्हीं लोक-गाथाओं से बिरासत के रूप में ही पायी थी। इसी कारण वह फल-फूल धारि की सम्बन्धी खीड़ी सूची तो वे सके हैं पर उनका सजीव वर्णन कम ही वे सके हैं। संस्कृत साहित्य के ज्ञाता महाकवि तुमही भी जब प्रकृति का वर्णन यूँ करते हैं, वहाँ शृण्ण्यमूक का वर्णन अपेक्षित था पर कवि उसे नहीं दे पाया है।)

“घाये खले बहुरि शृण्ण्यै शृण्ण्यमूक पर्वत गिराई।

रामगमन पर भी मानवों के नाच का वर्णन है प्रकृति का वर्णन नहीं है जब कि वहाँ प्रकृति वर्णन के लिए पर्याप्त दोष था। तब संस्कृत की विन्धात्मक प्रकृति वर्णन की परम्परा से अनभिज्ञ आयसी पर इस प्रकार का धाधोप उचित नहीं है। आयसी में प्रकृति का सजीव वर्णन बहुत कम है उससे यह कदापि प्रमाणित नहीं किया जा सकता कि प्राकृतिक दृश्यों के साथ आयसी के हृदय का मेल नहीं था। प्रकृति के प्रति उनके प्रेम का वास्तविक परिचय उनके प्रकृति से वृहीत विन्ध लेते हैं। यह विन्ध वस्तुतः उनके बचन प्रस्त महाकाव्यकार के हृदय में लिपे हुए प्रकृति के प्रति अपार प्रेम के परिचायक है। इसके अलावा प्रकृति वर्णन का नितान्त प्रमाण भी आयसी में नहीं है। ताल तालाबों उपबनों धरोहरों धारि के उन्हीं मुम्बर वर्णन प्रस्तुत किये हैं। आयसी के यह प्राकृतिक विन्ध अनेक क्षेत्रों से वृहीत हैं। सुविधा के लिए हम इनको ७ भागों में विभाजित कर सकते हैं।

- (१) जलीय
- (२) अकाशीय
- (३) जलस्वामीय
- (४) पर्वतीय
- (५) क्षमिक
- (६) समय धीर मौसम
- (७) बीज जन्तु—पशु पक्षी व जन्तु

(अ) जलीय विन्ध—आयसी में जलीय विन्धों की संख्या ५२ है। इनमें आयसी की सर्वाधिक आदृष्ट समुद्र ने किया है। समुद्र की गहराई अथाह जल राशि सम्पन्नता उनके मस्तिष्क में बराबर धाती रही है समुद्र की अमानक धीर अपार गहराई, उसके मौत के मुख के सदृश्य भँवर भी उनको बराबर आकर्षित करते रहे हैं।

आयसी ने समुद्र की उपमाएं पूरे पद्यांत में २४ की हैं, कुछ अक्षरांत में भी हैं। इनमें समुद्र का यह विन्ध आध्यात्मिक धर्मों की पूर्ति को कभी-कभी करता है जैसे

क्या उषधि चित्तवी पिय पाहु, देखो रतन सीं हिरई माहुं

(४०९ १)

यहाँ समुद्र जीवन धीर जगत् की अपारता है धीर रतन धारता या परमात्मा

का प्रतीक है इसी प्रकार

मैंन कोड़िया हिया समुद्र गुप्त तो तेहि मह मोति ।

मन भरबिया नहार परे हाव न घाय मोति ॥

(११३, = १)

इसमें भी हृदय की अनन्त विचार एवं भावराशि के लिए समुद्र प्रयुक्त हुआ है। यही बिम्ब पद्यावली में दो बार आया है।

प्रेम की अनन्तता एवं यन्त्रीरता के कारण आसानी से उसके लिए समुद्र का बिम्ब ही लिया है उन्होंने हृदय को प्रेम का अर्थात् समुद्र माना है जिसमें डूब कर मनुष्य का विस्तार असम्भव है वह एक-एक उस अर्थात् जल राशि में डूबता-उठता रहता है।

भरा तो येम समुद्र अणारा लहरहि लहर होइ बियाभारा
सिरह भंवर होइ मंवरि बेइ, सिय सिय जीव हिलोरहि सेई
सिनहि निलास वृकि बिऊ जोई सिनहि उठे लियरी बौराई
सिनहि पीत मुल सिय होइ सेता सिनहि बेत थिय होइ अवेता ।

(११६, १६)

डूबने की अणारा अणारा से भी समुद्र का ही रूप लिया है।

तरंगयित यौवन भी कवि को समुद्र की भांति प्रतीत हुआ है। यौवन समुद्र की हिलोरें रोक-रोक कर दूती का हृदय डूब जाता है। प्रेम पीर जागृत होने पर पद्यावली स्वयं उस यौवन समुद्र में डूबने लगती है और जब अर्थात् समुद्र से पार लगाने बात की प्रतीक्षा करती है बिस्कुस यही अर्थात् बिस्कुस बिदग्धा नागमती की है। यही बिम्ब कवि ने फिर लिया है

जलजल भरै धपूर तब यवन भरति मिसि एक,
सनि यौवन धौनाह में ई डूइत पिउ टिक ।

(१४६ = १)

अर्थात् अणाराशि के अतिरिक्त समुद्र की बड़ी-बड़ी अणाराशि बिनाशकारी तरंगों भी आसानी को घाट्ट करती हैं। बिनाशकारी अणाराशि को समुद्र कहना बड़ा ही मुक्तियुक्त है, विस्तार अणाराशि बिनाशकारी अणाराशि की अणाराशि उनमें है

कटक अणाराशि अणाराशि ताहा अणाराशि कोइ न संभोर ताहि ।

उदमि समुद्र बेई तरंगे ईने मन ईक सुत आइ न सेते ।

(१२२ १२)

जैनों के लिए समुद्र की उपाय अणाराशि आई है। कवि ने समुद्रों अणाराशि का अणाराशि भी अणाराशि के रूप में लिया है। मैंन समुद्र हैं तारे मंवर जियमें फन कर प्रेमी हृदय डूबता ही जाता है

सुमर समुद्र घट नैन बुझ मानिक भरे तरंग
 भास्त तीर जाहि फिरि कास भँवर तेनु संप ।

(१०३ ८९)

इस प्रकार समुद्र के उपमान में समुद्र की उदारता प्रसन्नता प्रवाहता, बन्धीरता शर्मायितता के धर्मों और उसकी अपार तरंगों और नवानक मंझों के स्वस्व को लिया है और इनका प्रयोग क्रमशः जगत् हृदय प्रेम और स्नेह जीवन विनाशकारी सेना और मेत्र शारों के लिये किया है ।

शरीर का रूपक जायसी के सर्वश्रेष्ठ रूपकों में से है । यहाँ कवि केवल मुर्खों के साम्य तक ही सीमित नहीं रहा है मूल प्रकृति (नेचर) तक भी कवि की दृष्टि पहुँची है । प्रीष्म में शरीर के गानी के सूख जाने पर उसकी मिट्टी बटक-बटक कर पटने का बिम्ब जायसी का परमम व्यञ्जनात्मक बिम्ब है । कवि नायगरी की श्वा को मूर्तिप करने के लिए कहता है

सरबर हिया प्रदत नित जाई टुकि-टुकि होइ होइ बैहुराई ।

बिहरत हिया करहु पिउ देका बीठि बैबगरा मैउहु देका ।

(११४ १७)

'बीठि बैबगरा' 'बिहरत हिया' सनित्र शब्द हैं इतने सुन्दर रूपकारक बिम्ब संभवतः हिन्दी साहित्य में भी मिले चुने होंगे । यही बिम्ब परमावध मे शो बार और धाया है पर वहाँ केवल मन्त्र हृदय का ही रूप धाया है उसका सुधारक पक्ष नहीं धाया है ।

ह्र्वं और प्रसन्नता भी शरीर के ही रूप में धार्य हैं क्योंकि बिरह की तीक्ष्णता से वह सहज ही सूख जाते हैं और सरबर सूखने पर इस मीन कंबल स्पी प्रसन्नता उन्नास समाप्त हो जाते हैं बिरह की कठिन रूप रत्न करने मपती है । शरीर में कवि ने उसके प्रीष्मकालीन रूप सूख-सूख कर मिट्टी के बटके तक और उसके टाप से सूख जाने के धर्म को लिया है और इन्हें बिरहिली रानी के मज्ज हृदय और बुद्ध से सहज ही समाप्त हो जाने वाले ह्र्वं व प्रसन्नता के लिए प्रस्तुत किया है । शरीर के यद्यपि सभी रूप इसमें नहीं धार्य हैं पर जो धार्य हैं वह समीचीन और बड़े धर्मस्पर्धी हैं । शरीर से धाम्यात्मिक व्यञ्जना भी हुई है

जत सरबर नैह पंकज बेजा हिय क जाँकि बरस सब बेजा ।

(ध ७ ३८)

जायसी की गरी की उपमाएँ विशेष सुन्दर नहीं बन पाई हैं कारण कि उसने बहुता योंग सरस्वती धारि का उल्लेख अधिकतर रंग-बर्न का साहस्य विकारों के लिए किया है गुण प्रभाव धारि का साम्य जतने विस्तृत नहीं है वही कुछ साम्य धाया है वही यह बिम्ब भी सुन्दर बन गये हैं । बेजी के लिए कवि यमुना की जहूँ को देता है ।

“सहरै बेई जानु कालिंदी
किरि किरि भँबर भये चित फँदी ।

(५७० ९)

बाढ़ में बढ़ती नदी को आयसी ने कई बार दिया है उसकी उन्नत सहरे उसको बहुधा घाकूट करती है

जोवन भर भारी बस भंगा
सहरै बेई समाई न धँगा ।

(१७० ७)

यही बिंब दो बार फिर प्रयुक्त हुआ है और दोनों बार उगुक्त मीबन की तरसठा तरसाबितठा और उन्नतता के लिए धारा है। नदी की केवल तरंगामितता और उन्नत सहरे के स्वरूप पर ही कवि की दृष्टि गई है उमने उसको मायिका की देवी और उन्नत मीबन का स्वरूप प्रस्तुत करने के लिए लिया है।

इसके प्रतिरिक्त आयसी ने पंच जल सीत धारि के बिंब भी लिए हैं जो बिधेय सुन्दर नहीं बन पड़े हैं। समष्टि में जलीय बिंबों में आयसी न कबस समुद्र सरोवर और नदी को ही मुख्य रूप से लिया है। समुद्र और सरोवर के कई धर्मों और कई तर्कों को ग्रहण किया है नदी के बिम्बों में बिबिधता का समाज सा है।

(धा) घाक़ासी बिम्ब—आयसी के प्रकृति में गृहीत बिंबों में घाक़ासीय बिंबों का संख्या २०३ सबसे अधिक है। घाक़ास के सभी उपकरण मूर्त चन्द्र नमन बिजली बादल वर्षा पवन—सभी आयसी को प्रिय रहे हैं।

सूय का बिंब आयसी का प्रिय बिंब है। “नम उमना तेज, उमका प्रकास उसकी भयंता तो धाई ही है साब ही मूर्त्योदय मूर्त्यस्त और धम्य व्यापार जैसे पाले का सूय की गर्मी से मलकर बहु भागा और मूर्त्य के उदय होने से पीठ का कम हो जाना धारि भी प्रयुक्त हुए हैं। यहाँ सूय के पीठ के कम कर देन के धर्म को कवि पलाउरीन की हवा से राजा के कपटों के कम हो जाने के लिए प्रस्तुत करता है

“बिन्ती कोहू टालि गिय पाया ऐ जय सूर सीरू मोहे लाग़ा ।

पीमुन भरा काँव यहू बीरू, यपां जाव रह तहाँ न सीरू ॥”

(५६३ ३४)

सूय का बिम्ब अधिकतर प्रतापी राजा (रत्नमेन व पलाउरीन) के लिये धारा है उनका प्रताप तेज ऐश्वर्य हमसे प्रगट हुआ है। अवेधित राजा का श्रेय भी सूय की तीव्र रूप है जियर फँदी है उमर ही जलाठी है

गुनि के रिति राजा मुततानू बीते बिबू भेठ कर भानू

महती करा रोत तत भरा जेति किति दयो सो बिबि यरा

(५६४ ४३)

आयसी में मूर्त्योदय और मूर्त्यस्त के बने सुन्दर बिम्ब है यह बिबिधतर मूर्त्योदय का मायदण्ड उत्थान-पतन का प्रतीक या जीवन की घना-निरागा का स्वप्न प्रकट

करने के लिये प्राये हैं। सूर्योदय के बिम्ब अधिकतर पद्मानवती के लिए प्राये हैं, वह उसके सौम्यर्य ऐश्वर्य और तेज के प्रकाशक हैं। रात के समय उसे सूर्य किरण कहा गया है। जिसके संसार में प्राये ही बिम्ब का उजाला फैल गया। उसका सौम्यर्य सखियों के बीच चाँद के बीच सूर्य जैसा था।

उपगत सूर जब बेखिन्न चाँद छर्न घौहि रूप
जैसे सबी जाहि छपि पनुमावति कल्प ।

(११८६)

पलातूरीन राजा का प्रताप भी सूर्य किरणों की भाँति चारों ओर छा गया और अन्वैरी रात समाप्त हो गई

चारों लङ्क माल प्राप्त तथा ।

बेहि क बिष्टि रैन मति छपा ॥

(११११)

यह बिम्ब जायसी ने ऐसे ही स्वप्नों पर बार-बार दिया है। सूर्योदय के बिम्बों में प्रताप के प्रसार और तेज के फैलने पर कवि की दृष्टि गई है। इन्हें कवि ने सुन्दरी नाबिका के रूप और प्रतापी राजा का ऐश्वर्य वर्णन करने के लिए दिया है।

सूर्यास्त के बिम्ब सूर्योदय के बिम्ब से अधिक हैं। सूर्यास्त अधिकतर नैराश्रय पतन दुःख प्रादि को चिन्तित करने के लिये प्राया है। राजा के बन्दी हो जाने पर सूर्य के अस्त हो जाने का उल्लेख है। राजा के मरने पर फिर यही बिम्ब प्राया है।

प्राबु सूर दिन धनुबा प्राब रैन सखि बूढ़ि

प्राबु बाधि जिऊ धीजियऊ प्राबु प्राब हम बूढ़ि ।”

(१४६८)

राजा के बन्दी होने पर रानी रूपी सखि से ही सिर्फ प्रकाश देने की प्रसन्नता इसी बिम्ब से प्रकट हुई है

नैन ममल रवि बिनु धधिबारे सति मुक प्रातू दूढ अनु ताटे,

जब धौबियार नहुन दिन परा कज लय सति निसि मख लख मरा ।

(१८८२)

सूर्य के बाद हो जाने वाले अन्वैरे से चित्तीड़ का विषाद भी चिन्तित हुआ है जोयी होइ निसरा बी रत्ना सून मपर जाणुं बु ब बाधा ।

(११११, १)

राज त्याग के समय रत्नसेन की माँ कहती हैं

राजपसद दर पर। नह सब तुम्ह सौ धजियार ।

बैठ भोय रस मानहु के न अलहु धौबियार ।

(१२६८-९)

इस तरह यही बिम्ब कई बार प्राबुत हुआ है। सूर्यास्त में कवि की दृष्टि प्रकाश के अभाव और अन्वकार के साम्राज्य पर गई है जो उल्लेख ही कवि की

प्यसा कुल, पीडा धारि भावभावों को व्यक्त करने के माध्यम बन गए हैं। इन्होंने प्यसी में पीडाग्रस्त नगर धोकापुर रानी धीर पुत्र बियोम से व्यथित मां के लिए स्तुत किया है इस प्रकार सूर्य के बिंबों में बिबिबदा के दर्शन होते हैं जिससे कवि के पीकण की व्यापकता का ज्ञान होता है उसका ठेक प्रकाश धर्मकार को मष्ट करने का गुण धीर उसके समाज में धर्मकार के साम्राज्य हो जाने के स्वल्प-संबन्धि सूर्य के भी सम्भावित रूप बायसी को साहस्य करते हैं। कवि ने सबको समुचित रूप से कुल किया है।

बन्ध भी बायसी के बिंबों का प्रिय विषय है। उसकी सिधिलता सौन्दर्यता रतुर प्रकाश बायसी को प्रिय है। इसीलिए पद्मावती की नायिका पद्मावती के लिए बन्ध सम्बन्धना हो गया है। इसमें कहीं-कहीं बड़े सुन्दर बिब बने हैं। पद्मावती के सम्बन्ध सौन्दर्य का रूप कवि ने धर्म के द्वारा दिया है

तू सधि रूप आगत उबियारी सुहे न मातु बिधि होइ प्रीबियारी
(१८६२)

बोध बन्ध में बाद धारों के स्तान का बिब भी बड़ा सौन्दर्यपूर्ण है परी तीर सब छीक सारी सरबर मह पठी सब करी। सरबर महि समाय सँसारा, बाद न्हाइ पीठ सेइ तारा। बनि सो नीर सति ठरई ऊई प्रब कय चित्ति कं बल यौकुई।

(१९, १-७)

बाद की निष्कलकता सौन्दर्य बोध के धार्मिक निकट है। बायसी उसे भी नहीं मूल है। पद्मावती के कर्तकरहित सौन्दर्य के लिये उन्होंने निष्कलक बन्धमा का बिब दिया है। गुण प्रकाश बर्हापीर के लिए भी यह उपमा धार है बाद प्रकाश धीर ठेक का प्रतीक है पर उसमें कर्मक भी है। अपने बोधों को बलते हुए बायसी ने अपनी परमा कर्मक बन्धमा से ही है। बायसी ने धर्म के साथ धर्म-मन्त्र को भी बिम्ब रूप में प्रस्तुत किया है। बाद धर्म प्रकाश का प्रतीक है ही परन्तु पूर्वमा का बन्धमा सौन्दर्य धीर प्रकाश की कुछ धार्मिक अनुभूति कराता है। इसलिये रानी को वह पूर्वमा का बन्धमा बताते हैं।

पद्मावति धीं पुनित कला,

बीरह बाद उए सिधता।

(१३०२)

यही उपमा पद्मावती के लिए दो बार धार है। बायसी बन्धमा के मनी धर्मों सभी पहनुधों से परिचित हैं। प्रहणग्रस्त बन्ध भी उन्होंने कई जगह दिया है, रानी के मतिन सौन्दर्य धीर निरंग रूप की अनुभूति कराने में वह बहुत सफल रहा है

बाद बस पनि बँड तराही, सहस करा होई सुरज परासी।

तेहि क बार बहन सब पही, धीं निरंग मुख बीति न रही॥

(१३८, ४१)

बाँह के यही बिब बाड़ में बड़ हो गए हैं और इनका प्रतीकत्व व्यवहार भी हुआ है

कीसहु बिबहु न बाड़ें मा ससि यहम गरास ।

मरवत बहूँ बिबि रोबहि, घोंबियार परति घाकास ।

(२४६ = ६)

बग्न के विन्व कवि की दृष्टि की व्यापकता को प्रकट करते हैं। चन्द्र के उज्ज्वल रूप और सौन्दर्य के धर्म को ग्रहण-प्रसूत कर्मकरहित कसक युक्त ठारगर्भों के मध्य और चन्द्र-मण्डल के मध्य पुनिमा के बग्न घाबि कई रूपों में किया है। यह अधिकतर रागी के समुद्र उज्ज्वल सौन्दर्य मसिनता एवं साक्षियों की पृष्ठभूमि के मध्य उसके बीज्य सौन्दर्य का रूप प्रकट करने के लिये बिये गए हैं।

बायसी में मझनों का टूटना उपमान बखसर घामा है जो कहीं-कहीं घागागी बिनाघ का सूचक बन गया है। रत्नसेत की मुरमु पर यह उपमान घामा है। मझन का टूटना भीषन में भी भ्रमरगच्छकारी माना जाता है। काव्य में भी उसका वही प्रभाव घामा है। सौन्दर्य की दृष्टि से पद्मावती के घामुपणों और बमकवार बरनों के लिए यह बिब बड़ा सुन्दर बन गया है

पद्मावति सो शरोंछे घाई, निहकलंक जस ससि बेबराई

पहिरें ससि नपरतन्ह की मारा बरती सगें जयक उबियारा ।

(४२१ = १)

सौन्दर्य व प्रकाश की भिन्न भिन्न प्रतीति करने के लिये उन्होंने बुझा के कारण प्रभु शरद के संदर्भ में सोहित तीक्ष्ण दमक के सिद्धे कचपपी घाबि मझनों का प्रयोग किया है।

बादलों का प्रयोग भी बायसी ने पर्याप्त मात्रा में किया है। यहाँ उनकी दृष्टि मेंनों के घाकार उसके रंग या उसकी चर्चन पर रही है। घाकार और चर्च के कारण हाथियों के लिए मेघ का बिब घामा है

हस्ती तिघली बाने बारा बहु सजीब लब ठाड़ बहारा ।

कबनी सेत पीत रतनारे कबनी हुरे बूम भी कारे ।

बरनहि बरन पपन बल मेघा घी तिनू गवन पीठ बुनु डेपा ।

(४२, १ = १)

समुद्र यात्रा के बीच परमशी राजस के लिए भी काले मेघ की उपमा घाई है मेघों की चर्चन की तुलना हाथी जोड़ों की लड़ाई के समय की भयानक घाबाजों से की गई है। राजा का कोपित स्वर में बोलना भी मेघ चर्चन ही है

सुनि घस तिजा जठा बरि राजा-बामहुँ बेब तरपि घन पाबा ।

(४८६ = १)

बादलों में कवि को उसके रंगों और घाकार ने धार्जित किया है। बादलों का भयानक चर्चन भी कवि को घाकृष्ट करता है। कवि ने उनका हाथियों पीड़ों

उपस्य के धाकार, एवं एवं मर्मन को ओधी राबा के ओध का उपमान बताया है।
मेघ धाप्पारिमक धर्षों को भी देता है। परमात्मा के कर्ता रूप और जीवन की छाया
त्यक्तता की धर्मिभ्यक्ति मेघ और उसकी परछाईं से हुई है।

वे सब लिख करता किछु नहीं, जैसे बले मेघ पराछाईं।

(धरत १)

मेघ धस्तिपरता का प्रतीक भी बना है

बहु संसार झूठ फिर नहीं, उठेकं मेघ अस बाद बिजाहीं।

(धरत २१)

बाबल के साथ-साथ बायसी ने बिजली का उल्लेख भी किया है। पद्मावती
के सिद्धे प्रयुक्त यह प्रतीकात्मक बिंब है

धाबा राधो जेतनि औरध्दार के पास,

धस्तं न जाने हिरई बिजुरी बसै प्रकास।

(४१० ८-९)

बायसी ने धस्तरावट में माया मोह को मेघ और कोष को बिजली कहा है।

बहुं सीवता और धजिदता ब बिनाधकारिकता का धर्म साधुर्य है।

अस किछु माया मोह, तैसे मेघा पवन अस

बिजुरी जैसे कोह, सुहम्मर तहाँ समाइयह।

(धरत १०)

राजी को मुस्कान बिजली की भांति है जब में विरोद्धि हो जाने वाली।
विस्वी से काने बातों में बहु मुस्कान भायी की कानी राठ में धमकड़ी बिजली सी
प्रतीत होती है यह उपमान बहु प्रयुक्त उपमान है। कवि उसके धामूपणों की भी
धमक के कारण बिजली कहता है वह भी साबिक ही दृष्टि मार्ग में धाते हैं क्योंकि
अस धर में ही बहु उसके धांभन की धौट में हो धाते हैं।

होइ धंधियार बीसु सन भोके बबहि और नहि हांनु

केस काल होइ क्त में देके सगरि बिध कांनु

(४७० ८९)

बिजली में कवि ने उसकी बंधनता पवित्रता धादि धर्मों एवं उसके धपूरं
प्रकाश को राजी के कर्मिष्ठ कर देने वाले धौन्दर्भ और उसकी धन्तर्भक्ति की उल्लेख
बसता को दूषित करने के सिद्धे प्रयुक्त किया है। बिजली के विम्ब कवि की सूक्ष्म
निरीक्षण में धधर्म दृष्टि के परिभाषक हैं। बाबल बिजली धादि के साथ धोनों पटा
दू रों धादि को देकर धर्षा का पूरा विम्ब भी प्रस्तुत किया गया है। धमासल दृष्टि
का बिंब मुझ धोनों के सिद्धे सम्भवतः पद्मावत में ही १ बार दिया गया है। प्रत्य-
काठी होने के कारण युद्धस्थल के यह विम्ब प्रभाव साम्य भी प्रस्तुत करते हैं।

बध्नि करन उठै बर भायी मुह बर बाहूँ तरय के लारी
 बसके बीनु होइ उगियारा बेहि छिर बरै होइ हृद पारा
 सेन सेन अस बुहु दिसि पावे करन को बीच बीनु बस लाने
 बरिसे सेन धातु होइ कोंबौ बस बरिसै ताबन धौर भावों
 दूठहि कुठ परहि तरबारी गोला घोला बस मारी ।'

(२१८-१५)

जायसी में अनन्तता व असीमता की अनुभूति के लिए आकाश का बिंब भी कई जगह कह दिया है। दृष्टि में जायसी के आकाशी बिम्ब विविधता से परिपूर्ण है। आकाश से इहीत यह बिंब विभिन्न क्षेत्रों के है जो जायसी की उदारता और व्यापक सम्पन्न के चोकर हैं। आकाश के सभी समाहित उपकरण सूर्य चन्द्र बिजली बादल वर्षा महा आ गये हैं। मात्रा में भी यह बिंब जायसी में सबसे अधिक है।

(६) वनस्पतीय—जायसी में वन प्राणों के भी काफ़ी बिंब दिये हैं। जो जायसी के सूक्ष्म प्रकृति निरीक्षण के चोकर हैं फूस पत्तियों बूतों जताधो धावि के विभिन्न व्यापारों और विभिन्न अवस्थाओं के बिंब दिये हैं। वनस्पती के इहीत बिंबों की संख्या १०१ है।

जायसी में फूलों के बिंब में विशेष प्रकारों का उल्लेख नहीं किया है या तो वह थोड़े फूस कह कर रह जाता है या फिर कमब और कुमुदिनी उनके प्रिय पुष्प हैं। जायसी फूलों की प्रकृतता कोमलता से अधिक उसकी गंध के प्रसंसक हैं, फूल के लुप्त जाने पर भी उसमें बनी रहने वाली गंध असार मानव जीवन की अमिट कीर्ति की चोकर बन गई है। राती के लिये भी जो बार छीर के इन्द्र होने पर भी सीरव संयुक्त होने का उल्लेख है। फूल की गंध पानिब में अपानिब की उता की चोकर है। फूल के सीखर्य उसकी स्वच्छता और ताबनी पर केबस एक बार जायसी की दृष्टि गई है जब मलिन पचावठी में वह प्रकृतता और सुरंयता का अभाव देखते हैं तब उन्हें मसमा हुआ फूल सहसा स्मरण हो जाता है

कुमुद फूल बस मरविद्या निरंग बीनु सब धग
 अंघावति में बरिनी, नू वि कैस धी मंग ।

(१२७-८-१)

धन्य फूलों में टेमू का फूल भी बड़ा अ्यक्त है, उससे धोपियों के लान के प्रतीक मेरु रंग के बरनों का मान तो होता ही साथ ही मात्रा का आभास भी हो जाता है। जयता है जैसे हाक का बन ही धावों के संमुख आ गया हो

बला कटक जोगिहूँ की कर पव धा सब मेनु
 कोस बीस चारु दिसि जानहु फूला वैसु ।

(११४-८)

फूलों के साथ कांटों को भी जायसी नहीं भूले हैं कुपचापी नूर और उद्म

पत्नी के लिए बायसी ने कटि का ही प्रयोग किया है। कवि के साथ दृष्टिवा भी
 से हैं जैसे फूल के साथ कोटा

कविता संग हरिह मति धंयो, कौटह कुटिल पुत्रुप के सगी

(४४९, ७)

कमल का पुष्प बायसी का सर्वप्रिय पुष्प है। मुख हाथ पांव नेत्र आदि
 के लिए कमल की उपमाएँ परम्परागत हैं। जायसी में भी अधिक मात्रा में हैं। पर
 इन में तबीयता के कारण सौम्य की छुट्टि हुई है। जैसे

कंबल करी तू कुमुदिनी न भिसि भयल्ल विहान ।

अबहि न संपुट सोलहि को रै उठा जग गान ॥

(२५०, ८-९)

यद्यपि रानी को कमल कली और नेत्रों को संपुट कहना परंपरागत ही है पर
 मूर्ख स्त्री राजा के संबंध से इसमें सौन्दर्य की मात्रा कही अधिक बढ़ गई है। कमल
 पत्र की उपमा भी बायसी ने दी है जो जल में रख कर भी जल से मिलिष्ठ रहता है
 वह बिब सदा सं महान और अनासक्त आत्मा का प्रतीक रहा है पर बायसी ने इसे
 मरु पत्तों में मुख सरोवर में भी वृषित पद्यावती के लिए दिया है

"जैसे कंबल सुकन कं सरता नीर कंठ सहि मेरे पियासा"

(२२६ ४)

कमल की प्रफुल्लता और स्निग्ध मुन्दरता कवि का विशेष प्रिय है। उसके
 मूर्ख के प्रकाश से प्रस्तुति होने सूर्य के प्रभाव में सुख जाने आदि के जम भी कवि
 को प्राकट्य करते रहे हैं।

कंबल के साथ कुमुदिनी का बिब बायसी के काव्य में बढ़ बन गया है। कमल
 के साथ कुमुदिनी का उल्लेख पृष्ठभूमि के कारण कमल के सौन्दर्य के आधिक्य का
 स्पष्ट कटा है। पद्यावती और उसकी सखियों के लिए बायसी ने बराबर यह विभ्रम
 दिया है। पत्तों का बिब बायसी ने नहीं है।

पत्तों का भी जायसी उल्लेख न किया है। परन्तु इनका उल्लेख किंसा विशेष
 पत्र के रूप में होकर सामान्य पत्र रूप में है। जबर पीसे पत्तों न जायसी के हृदय में
 भ्रम का संचार किया है, वे कुछ मैरास्य और मरुत भी निवटता को सूचित करते हैं,
 टूटा हुआ पत्ता तो निमन्हेह अपार बेचना और दुक का सूचक है

पासा बीन बिछोव का पात परा बैकरार

तोरिबर तज को शूरि के लारै कैहि के डार ।

(३९९ ८-९)

इसके विपरीत जगते हुये नाम पत्तों मुख के प्रतीक हैं

विपर पात कुपन सरे निपाते मुख पाली जपते होइ राते

(१८३७)

पत्तों के कंधे उनकी अक्षयता को व्यक्त करते हैं। कवि ने मानस में मनुष्य

की घबस्वा घमसा हसा से उनका सामंजस्य बैठता हुआ प्रतीत होता है। पत्नों के ये बिम्ब आपसी की प्रभुमुक्ति प्रवचता को प्रकट करते हैं।

बीज के प्रकुरित होने का बिम्ब भी बड़ा उपयुक्त बना है। राजा घलावरीन के हृदय में प्रेम का धीध पद्यावती की सुदृष्टि के बरखने के प्रभाव में प्रकुरित नहीं हो पाता

तयै बीज अस बरती सुद बिरहू बी धाय
कब सुबिष्ट कं बिरसं तन तिनबर होइ आय”

(५११ = ६)

इसी प्रकार भूमि की उपमा भी कवि को सूक्ष्म निरीक्षण की परिचायक है
अस सुहू रहि असाइ पसुहाई परहि बू ब धीर सौं बसाई
योहि भांति पसुहै सुख बारी उठै करि नख कोप सवारी।

(५२३ ४ ५)

पुष्पों के बिम्ब भी आपसी ने दिये हैं। बुरा में उसके पस्तबिध होने और फिर भड़ जाने में उन्हें उत्थान—पतन या साम हानि का स्वरूप दिखाई दिया है। सना के नाबों सैनिकों (पुराने पत्रों) का पतन हो जाने पर उसमें नये सैनिक (नये पस्तब) फिर आ जाते हैं मानो सैना बूझ है

नाक जाइ आबहि बुइ नाका करहि भरहि उपने भी साका

(५२२, ५)

इसी भांति यौवन है जो पस्तबिध होकर फिर पीले पत्ते की तरह इस आयुष्य परतय बूझ का आयुषी में अक्षय उत्पन्न किया है। परतय बूझ की सुन्दरता उसकी पत्तियां हैं उससे भड़ जाने पर वह गड़ा जड़ा मूल्यता है उसी भांति बिध भांति अन घपना द्रव्य से रहित स्थिति

साठे रहै सुधीनता मिसठै आगरि भूक
बिनु गब पुरप परंग ज्यों ठाई है सुख।

(५२० = ६)

आपसी ने बसों का बिम्ब भी दिया है पानी पाकर बेश का पस्तबिध होना आपसी को बिधोप प्राकृत करता है। इसलिए पानी में स्नान करती सखियों के लिये उन्होंने बेश का बिम्ब दिया है

परी तीर तब छीपक सारी सरबर बंधू पैठी सब बारी
पाए भीर जानु सब बैली हुसति करहि काम क बैली।
नबल वसंत सवारहि करी होइ प्रकट आहुहि रसधरी।

(६०, १२)

नागमती भी बिरह में भूखी मठा हो गई है जो प्रिय की सुदृष्टि बल से पस्तबिध होना चाहती है और जब रत्नसेन लौट कर आता है तो बेश पस्तबिध हो जाती है

कंठ लाह के नार मलाई खरी मो बैल सींच पनुहारई
 करे सहस्र साया होइ बालि बाब खनीर
 सबै पाँचि मिलि प्राई खौहारै, लीट उभै नै भीर ।

(४२७ ७-८)

धरम बेल ने जायसी को विषय प्रार्कषित किया है उसका सबा बड़ना प्रेमा रहना धरम खना जायसी को प्रेम की धरमता धन्यता और सबा समृद्ध होने का संकेत करता है

कैहसि कस न तुम्ह होइ बुद्धेनी धरसी प्रेम प्रीति के बैली
 प्रीति बेल कह धम्मर बोई बिन बिन बाइ खीन न होई ।
 प्रीति धकेलि बैलि खदि छावा, हुसरि बैलि न पसरे पावा ।

(२४४ १-७)

जायसी ने फुलबारी का रूपक भी बहुत दिया है जो सुस्मता रंग बिरवी सज बज और उत्कृष्टता का रूप प्रस्तुत करता है। सपिया भी रंग बिरये रूपों और उत्कृष्टता के कारण फूलबारियाँ हैं नायिका और जायस भी। जीवन भी सिमा हुआ होने के कारण फूलबारी के ही रूप में प्राया है।

समष्टि के बनत्वकी के यह बिय कवि के सुयम निरीक्षण के परिचायक है, बसपसी में उन्हें फूलों बूतों बैलों प्रादि क पल्लवित होम और मर जाने के व्यापारों ने विषय प्रार्कषित किया है उत्कृष्टता तावपी कीमसता और सुन्दरता स भी धार्किक यह कवि को विभिन्न रम्यम को जीवन के प्रति उसके दृष्टिकोष का प्रकट करते हैं।

(ई) पर्वतीय—पहाड़ों चोटियों कंदराओं चानियों पत्तारों प्रादि की धोर जायसी का ध्यान धार्किक नहीं मया है। संभवतः पर्वतीय प्रदेशों की उनकी जानकारी कम थी। पर्वतीय विन्धों में उन्होंने केवल पहाड़ों का हा वर्णन किया है। पर्वतों के धाकार और उसकी ऊँचाई ने जायसी का प्रभावित किया है। इस ऊँचाई न भी धामन्य या सुख की भावना न होकर एक नय की भावना है। इसलिये भयंकर लहरों को पुकारत भीमकाय हावियों को पर्वत कहा गया है। पहाड़ों के धाकार की विद्या मता भी उनकी धार्कषित करती है

हस्ती छिपली बापे बारा जनु लबीब सब ठाड़ पहार

(४४ ०)

सुमेध पर्वत के उत्प्रेत ने कवि की मय की भावना रंभब और मय्याता के रूप में बरन गई है राहा के ऊँचे ऊँचे महलों पदों की उपमा पर्वत से न भी जाकर सुमेध पर्वत से ही की गई है

हिय न सपाइ बिनि नहि पतुँच, बालतु ठाड़ सुमेध
 कहँ मय कहीं ऊँचाई ताकर कहँ मग बरनी पैव ।

(४० ८-९)

पद्यावली में सुगन्ध का आरोप करने के लिए समय गिरि को भी लाया गया है। आयसी में पर्वतीय क्षेत्रों के बिम्बों का प्रभाव ही कहा जायेगा क्योंकि पर्वत के बिम्बों की संख्या बहुत कम है।

(ब) खनिज—आयसी में खनिज वस्तुओं के प्रति पर्याप्त मोह है। सोना (पदारण) रत्न माछी मणिक घादि का उच्च प्रस्तुत प्रयोग किया है 'रत्न' और 'पदारण' का राजा उत्तरेत और पद्यावली के अर्थ में कह हो गये हैं। कंचन के साथ साथ बिरोध अथवा वैपम्य दिखाने के लिये कौड़ी कांच की पीठ (एक छोटा कांच का मोती) का प्रयोग भी किया है। मूष्य के आचार पर कवि ने बिरोहिनी रानी की रूप हीनता मलिनता आदि को कौड़ी से प्रकट किया है।

संग से वयक रत्न सब औठी कंचन क्या कांच में पीठी।

(३८३ ३)

मोती की निर्मलता के लिये लाया गया है और स्वच्छ न श्वेत होने के कारण वह धातु के उपमान भी बने हैं। पर आयसी के पात्र फरसी के प्रभाववश प्रस्तर रक्त के धातु रोते हैं अतः बिच्छु वर्णन में राजा रानी के रत्न के समय उसका बिम्ब आया है। समुद्र के माणिक उगलने का बिम्ब भी आया है।

अबलहि समुद्र बस मानक भरे रोइ हिर धातु तस डरे

(३८८, २)

हीरा शीतों की श्वेतता और उम्बलता का रूप प्रस्तुत करता है और माणिक की चमक और सासिमा अचर का। रत्न को प्रकाश की शक्तता के कारण उजा के टेज या वैभव और सुख का प्रतीक बताया गया है।

रोबं प्रता न बाहुर बारा रत्न चसा जग भा धंधियाटा।

(११३ ४)

संक्षेप में आयसी के खनिज वस्तुओं के बिम्ब अधिकतर मुख्यतः वस्तुओं के हैं या फिर उनकी तुलना में निहृष्ट वस्तुओं के। वस्तुओं के गुण पर आधारित यह बिम्ब मात्रा में भी पर्याप्त है।

(क) समय और मौसम—समय और मौसम में वर्षा ऋतु और बसन्त के कवि को बहुत आहूट किया है। आयसी को सौन्दर्य के प्रति मोह है इसलिए बसन्त में वह हँसते फूलों महकती हुई गन्ध का विशेष उल्लेख करता है।

मैंबिर नैंबिर फुलबारी बोबा अंबन बासु

मिथि दिन र्ही बरंत भा छडु रिनु बाछु मासु

(४४ ८-९)

फागुन में वह होली (उत्सव) का स्वरूप देता है। फागुन का महत्त्व ही होली के लिए है। बिरहाम्नि के लिये अधिकतर होली का प्रयोग हुआ है।

होइ कामु नलि बाँबरि बोरी मोहि जिय रबाइ शीन्ह जस होठी घादि।

(२०४ ४)

गुठ में नी होसी का रूपक है

दूरहि कंज कर्मज निजारे माठ पजौठ जगु रन जारे ।
 जेलि काम सेकुर यिरि धार्य जोधरि जेलि धायि रन पारै ।
 धरती घोर घाह सेरे हुका जठे बेहि तन बहिर भयूका ।

साधन और धरती का रूपक भी जायसी को प्रिय है। यहाँ हरिपाली मूमि कीर बहूटी पस्सबिठ बूझों से कर्म की सहज स्नेह है। भाषाएँ प्रफुल्लता गुप्त और भावना का रूप है

पसटा के दूरकारथ राजा, जस घसाइ धार्य बर साका
 जेलि तो छत्र नई बग छाही हरित मेघ झोनए बग मझा ।
 सेता पूरि धाप धम घोरा रहस जाउ बरिसे बहु घोरा ।
 सर्ग बरति धब होइ मेराबा, मरि धरि पोकर तात सबाका ।
 सहक बठा सज भूमिका कामा ठाकहि ठांज बूज घस घामा ।
 बाहु मोर कोकिला बोले हुते घालोष जीभ धब जाले ।

(४२२ २-७)

समष्टि में समय और मौसम समझ ही विन्ध जायसी के सुन्दर विद्य कहे जा सकते हैं। साधन और धरत को धरत कवि की विषय बचि है। इसकी समग्रता जायसी की कवि प्रतिभा की सुन्दर परिचायक है।

(ए) जीव जन्तु—जायसी ने पशु पक्षियों एवं उनके विभिन्न व्यापारों को धरतस्तुत रूप से प्राक प्रमुक्त किया है। जायसी में जीव जन्तुओं के बिबों की संख्या १३५ है। सुविधा के लिये जीव जन्तुओं के विन्धों को हम तीन भागों में विभाजित कर सकते हैं—पशु पक्षी और जन्तु।

पशु—जायसी में पशुओं में सुस्मृत हाथी सेर घुग धरम बेल धारि को लिपा है। इनमें पशुओं के चबनाच उनके क्रिया कलापों पर जायसी का ध्यान विशेष नहीं बना है। बहुत से उपमान सिर्फ परम्परा प्राप्त के हेतु रखे गये जान पड़ते हैं जैसे कमर के लिये की घेर कमर, जाल के लिये हाथी की मरमस्त जाल मैरों के लिये मूय के नेत्र और चितवन धारि। मसपि इनमें उपमों के कारण कहीं-कहीं चौखर्य पा गया है। परन्तु धार्मिकों उपमान सिर्फ परम्परा के निबन्ध के लिये ही है। फिर भी कुछ बिब रूप धरम तिरौलाभ के परिचायक हैं जिनमें पशुओं की प्रकृति की मूलक विमती है जैसे घर के विन्ध में

राई लोने गुनाबा लाग बूहु बस सीम
 बाए कोहाइ मंजिल कहं जगहु सिहू धीषाण ।

(२५३ ०६)

कीर पीठ बादल बल में बस्तुत सिहू ही है पर जैसे घर पड़के में गिर कर बीर होते हुए भी बिबस हो जाता उसी प्रकार बीरता बादल की बिबस है। इनका लीम व जीव जीवम में पड़े सिहू पैदा है। लड़ाई में भी बहु घेर के सदस्य हाथियों के

समूह पर टूट पड़ते हैं। हाथी धीरे धीरे के बर का एक बिम्ब नामगरी के बिन्दु बर्ष में है। बिम्ब हस्ती उद्योगो जाना चाहता है। उससे बचने के लिए वह सिंह स्त्री प्रिय को पुकारती है। धीरे के बिम्बों में उसकी बीरता श्लेष धीरे उसके बल पर कवि की दृष्टि गई है। गढ़े में पड़े हुए सिंह का परिस्तिथि से बिम्ब धीरे बारस के लिये उपमान कवि के निरीक्षण का चोखक है। बिन्दु स्त्री हाथी मुक्त की बाड़ी का भी मूढ करता है। यौवन क लिये भी हाथी का प्रयोग हुआ है। हाथी की मयमस्त प्रकृति यौवन पर आरोपित है। उसके लिये ज्ञान का प्रस्तुत धारम्भक है। हाथी की मयमस्त प्रकृति के कारण गौरा के मुखादुर बलवान साधियों को भी हाथी कहा गया है।

धाम्य पशुधर्मों में बिम्बी का बिम्ब कई बार धामा है। बिम्बी की धामयास मयटा मारने की प्रकृति प्रकाश मृत्यु की प्रतीक है। धारम्भ में बायसी में लोते के लंघन से मारने जाने को बिम्बी कहा है। पर बाद में मृत्यु के रूप में बिम्बी उच्च उच्च हो गया है। जैसे

बल बाँटे बैधि पंखर माँहा जैसे बाँध मेंजारी पाँहा

(१८ १)

समष्टि में बायसी के पशुधर्मों के बिम्ब परम्परागत होने पर भी उनकी प्रकृति स्वभाव धादि को स्पष्ट करते हैं। धीरे, हाथी धादि क बिम्बिन्ध धर्मों के धाधार पर निर्मित बिम्ब उनकी निरीक्षण सति धीरे कवि के परिचायक हैं। हाथी धीरे धीरे धादि के इन्हीं धर्मों ने कवि को धाकपित किया है। इन बिम्बों से प्रतीत होता है कि बायसी में पशुधर्मों के प्रति उतना प्रेम नहीं है जितना पक्षियों धीरे बन्धुधा के प्रति।

पक्षी—बायसी ने पक्षियों के बिम्बों में धाधने सुद्ध निरीक्षण का धाधना परि धय दिया है। यद्यपि यहाँ भी बहुत से बिम्ब परंपरागत हैं। पर धधिकोय स्वतन्त्र बिम्ब कवि के बिम्बाल धाम्ययन का परिधय है। पक्षियों के इष्टीत बिम्बों की उख्या ७१ है। ध्यान देने की बात है कि बायसी ने बल पक्षियों के बिम्ब बल पक्षियों ने धधिक ध धर्मस्पर्धी बिम्ब हैं।

जलपक्षी कौड़िला का बिम्ब बायसी को बहुत प्रिय है। इसमें मछली पकड़ते कौड़िलसे का लय कवि क बिसेय रूप से धकित किया है। ने धों से बुरा बुरा टपडते धातु का लय मछली उठते हुए कौड़िलसे के धाट धिधित हो जाता है। मछली क भी धोनों धिरी से धरी प्रकार बुर बुर धानी धिरता है। जैसे नेधों के धातों से—

धर्म सीत पर धरती धिया सो प्रेम समुद्र।

नैन कौड़िया होइ रहै न नै उर्कह तो बुर

(१४१ ८-९)

कौड़िला क बिम्बों में बायसी का ध्यान स्वल्प धाम्य की धीरे है। धारस की धपमा में वह धारस की बिन्दु धाधया की धीरे ध्यान बता है। उसका प्रेम धीरे धाकी बिम्बता पर उसकी दृष्टि गई है। यहाँ का धाम्य न होकर धर्म धाम्य है। बिन्दु में धायमती की धपमा धारस को बोधी के बिन्दु धारस से धी गई है। पधाधती की धी

बिन्दु में एकाकी लक्ष्यता साक्ष्य ही कहा गया है।

बायसी ने यगुले का एक बिम्ब प्रत्यक्षिक कुम्भितपुत्र दिया है। उसके छतपुर्न स्पन्दहार का कवि ने चित्रित किया है। उसका रूपचाप बनकर प्रथानक मछरी को पकड़ सता राक्षस के छत फसि राजा का बाबे से सिकार करने के पूरे बिम्ब को प्रस्तुत कर बैठा है।

सँछ देल जैसे बग धारा टोड़ टोड़ मुड़ पाळ उठावा

धाई तियर में कीन्ह जोहाव पु छत क्षेम मुत्तस बेबहाव।

(१६१ ५६)

बायसी ने इस का बिम्ब उसकी धामम्बपुत्र श्रीड़ा के लिए दिया है। बर्म साम्य के धाधार पर प्रेम कीड़ा में मन्म राजा रानी को उसने सरोवर में श्रीड़ा करते हत के बिम्ब से प्रस्तुत किया है, इससे जन्मास धीर धामम्ब की स्पष्ट अभिव्यक्ति हुई है।

धम्य पतियों में कपूतर, मसूर, बंजन तोता कोयल आदि के बिम्ब रूप को प्रस्तुत करने के लिए दिए गए हैं। बाठक धीर बकोर के बिम्बों में कुछ मूहम गिरी मस्य का धामास मिलता है। यह शानों प्रेम क प्रतीक बन कर पाए हैं। यहाँ जन्मा स्वाति पूँ की भासा करने का बर्म बिम्ब रूप में प्रस्तुत हुआ है। बाठक स्वातल की पूँ दो धीर बकोर बग्न का धनम्य प्रेमी है राजा की भाति। धरा राजा के लिए कई बार इन बिम्बों का प्रयोग हुआ है। कंकनू पक्षी से राजा की उपमा धनम्य मर्मस्पर्शी है। कंकनू का बिन्दु में बन कर भर जाता मुय बिम्ब का धाधार है। कंकनू की छच्छ राजा की बिन्दु बिम्ब धीर गिरास ब एकाकी है। उसी छच्छ स्वर्ण भरने का प्रयत्न भी करता है।

“कंकनू पक्षि जैसे सर साबा सर बड़ तबहिं बरा बहु राजा।

(२०५ १)

इसी प्रकार अधिनित बाणों में बिन्दु गड़ के लिए साही की उपमा भी बड़ी स्पन्दक है। साही के छपीर पर लीसे जहरीले बाण मारे होते हैं। यह भी गड़ को बेचने बात बाणों की भाति धनमिनव होती है। यह बिम्ब स्वल्प को स्पष्ट करने में अतिरिच्य है।

“बाणतु बेबि साहि लै राजा गड़ या मरुत कुलाए वाला”

(२१४, ५)

बहड़ की उपमा इसी स्वल्प पर उतनी स्पन्दक नहीं हो सकी है अितनी साही की। क्योंकि साही गड़ के धाकार के अधिक निष्ठ है। बिन्दु बाज कपूतर का यह बिम्ब भी बड़ा स्पन्दक है।

मरिचि पेजा होइ विप छाइ येमि बर दूदि

मारि पराए हाव है मुम्ह बिम पाव बा दूदि।

(११३ ०६)

समष्टि में पक्षियों के बिम्ब कवि की दृष्टि की व्यापकता और निरीक्षण की बारीकी को प्रकट करता है। उसने मुख्यतः कौटिल्या के बिम्ब रूप के लिए, धारस को उसके विरह व्याधा सहन करने के बर्भ के लिए यमुने को छसपुत्र व्यावहार करने के बर्भसाम्य के लिए हंस को कीड़ा के रूप के लिए कुल साम्य के प्राधार पर चातक और कंकनू को विरह व्याधा सहने और जल कर मर जाने के बर्भ साम्य के लिए, ब गहड साही क्यूतर, बंजन मयूर प्रादि को साम्य के लिए प्रस्तुत किया है। समष्टि में यह सभी बिम्ब अक्षपक्षियों और उनके विभिन्न रूपों व व्यापारों के प्रति कवि की विशेष रुचि का परिचय देते हैं।

बन्धु—बावसी में बन्धु बिम्बों की संख्या भी पचास है। यह ८८ है। सर्प का बिम्ब सम्भवतः इसमें सबसे अधिक प्राया है। सर्प केरों या बेनी के लिए परम्परागत उपमाएँ हैं पर बावसी में उनका अत्यन्त उचीक बचन किया है जिसे वह सौख्य बोध में सहायक हुए हैं। उनके रूप साम्य से अधिक उसमें सहर इत्यादि के बर्भ साम्य से उचीकता उपस्थित कर भी है। यही केस बच कुनरी के पीछे होते हैं तब कंचुकी मड़े साप से प्रतीत होते हैं :

मलयगिरि की पीठ संभारी बेनी नाच बढ़ा बन्धु काटी

सहर देत पीठ जनु बढ़ा और छोड़ा कंचुकि मड़ा।

(११२ २-३)

कंचुकी कुल रूप का यह बिम्ब सूक्ष्म अन्तर्दृष्टि का परिचायक है। सध साम्य के कारण सर्प (नाग) नागमती का चोतक भी बन गया है। यहाँ जम साम्य का ही प्राधार बनाया गया है। नागिन क्री नागमती प्रिय विरह में सर्प की भाँति पबन पर भी रही थी पर प्रियतम के जाने पर उसका हृदय प्रसन्न हो उठा। कुल कंचुकी की तरह प्रलय हो गया

प्राप्ति जो मु इ नायिनि जग तथा पिऊ पावै तन मई मैं सबा

सब कु स बन्धु कंचुल ना मूठी बनि मिहरी बेऊ और बगूठी।

(४२१ १)

मछली की उपमाएँ कवि ने उसके पानी से प्रेम करने और उसके बिना न रहने के धम के कारण ही है जो बड़ी व्यंजक है। अधिकतर विरह विरग्य व्यक्ति के लिए पानी से बिहीन मीन का बिम्ब प्राया है। मूर्ध कपी प्रताडहीन के प्राक्रमण करने पर राजा का मूल सरोवर सुष्क हो गया और राजा भी मछली की भाँति विकल होने लगा

“तहाँ जाइ यह बंजन प्रमाहीं जहाँ प्रताडहीन

मुनि की बढ़ा बागु होइ रतन होइ जल मीन।

(४२६, ४६)

मुल बिहीन मटकने हुए व्यक्ति के लिए कवि प्रभी मछली की उपमा देता है जिसे जल में रहते हुए भी जल बिनाई नहीं देता इसी प्रकार संसार में प्रत्येक स्वत

पर व्याप्त ईश्वर को भी मुक विहीन प्रेमे में भटकता व्यक्ति खोज नहीं पाता ।
इसलिए बेजा मछली है मुद कछुदा का माय बनान कराता है ।

आयसी ने मगर जैसे पानी के जालघर का रूप भी लिया । जो उसके
जागा जाकर नहीं ठट पर भट जान क रूप साम्य के आधार पर है । धमुन बनी
मपर पधावती को (बुबा कर) जाकर सब शान्त पडा या मानी म्नाता जाकर डीला
होकर सेट गया हा

लौम र्हा धव होम होइ पेट परारब वेमि
की उजियार करे जय हांया पाद ज्योति ।

(८६ ८-२)

आयसी ने भ्रमर का उपमान भी बहुत दिया है । क्या धनक और प्रेमी के
लिए वह बहुत बार प्राया है । केनो में केबन रग मन्म के आधार पर है और प्रेमी
पजा के लिए यह कृप को प्रम करने की भ्रमर की चरित्रगत विशेषता के
आधार पर

भपर जान रं कबध पगेतो जहं यह बिबा वेम की धीती

(१८९ ४)

इसो ने भ्रमर भी धनक में राजा क लिए कड हा पया है ।

पतंग भी पधावत में बहु प्रयुक्त बिम्ब है । पतंग का प्रम, दीपक पर मर
जिन्हे की प्रवृत्ति आयसी के प्रेमी हृदय की प्रतीक बन गई है । रत्नसेन क लिए
पतंग बार-बार प्राया है

गुम्ह नित भयऊ पतंग की करी सिधम होव घाइ जई करी

(१९० ४)

पतंगों के एक के बाद एक बनिदान ने भी आयसी को विषय घाट्ट किया
है । एक के बाद मरते हुए मैनिक जन्हे दीपक पर मरते पतंगों की भांति लपते हैं ।
इसी कारण वह हिन्दुओं को पतंग्या कहते हैं जो दीपक बनी युवाग्नि देखन ही
घाट्टन के लिए बीड़ पड़ते हैं ।

आयसी ने बीर बहूटी धारि के बिम्ब भी दिख है जो प्रधानतः क्षय या
प्रकुम्भता का स्पष्ट करने के लिए प्राये है ।

आयसी का बहु प्रयुक्त बिम्ब मीप भी है । मीप का प्रयोग का रूपों में हुआ
है । एक तो जहां उसका आकार बहि की दृष्टि में रखा है अत मैन बर्षत में

मैन मीप आतुहि तस भरे

आतु मोति विरहि सब करे ।

(१४ ४)

परी बिब कर बार प्राया है । तथा दुमरा रूप है जहां बहि की दृष्टि उसके
पुण—स्वाधि बुद की भाग करना और जागा निमित्त करता—पर रही है । जम
रूप के प्रसिका की प्रतीया के लिए वह अन्तर मीप का उपमान लाया है

जब लगि पीऊ मिली लोहि साधु पेम क पीर
बैसे सीप सेबाति कइ तबै समु ब मंस नीर ।

(१७१ ८-६)

यह विन्म भी बार-बार दोहराया गया है। वस्तुओं से गृहीत यह सभी विन्म मुक्त बर्म और रूप साम्य पर आधारित है। बर्म साम्य में हम मछली पक्षि भ्रमर, सर्प घाँस को से सकते हैं और रूप साम्य में सीप सर्प गगर घाँस को रक सकते हैं।

समष्टि में प्रकृति से गृहीत यह सभी विन्म बायसी के अभ्ययन की विद्यालय, घनदृष्टि की महुराई और निरीक्षण की सूक्ष्मता को व्यक्त करत है। प्रकृति क यह विभिन्न क्षेत्र और विभिन्न उपकरण उनके हृदय की व्यापकता और उदात्ता के परिचायक हैं। इनमें जिन बर्मों का साम्य दिया गया है वे परम्परागत भी हैं और कवि के आत्म दृष्ट नहीं भी।

(२) जीवन—बायसी ने प्रकृति क प्रतिरिक्त मानव जीवन के क्षेत्र से भी बहुत से विन्म प्रस्तुत किए हैं। यह विन्म कवि के अपने जीवन की स्थिति और स्वल्प के परिचायक हैं। किंतु स्थिति में कवि आत्मा बहु कहां पता उसके ऊपर क्या-क्या और कैसे-कैसे संस्कार पड़े उसके जीवन पथ पर क्या-क्या वस्तुएं आई जिन्होंने उसे प्रार्थित किया। इन सब का परिचय जीवन के क्षेत्र से उठाई गई कवि की उपमाओं और बिंब देते हैं।

बायसी के जीवन के क्षेत्र से गृहीत बिंबों को हम ७ भागों में विभाजित कर सकते हैं। (१) लोक जीवन (२) मानव जीवन (३) विद्या (४) खेल कूद, (५) राजसी, (६) खान-पान (७) धरत-धरत घाँस।

(घ) लोकजीवन—लोक जीवन से गृहीत बिंब बायसी में बहुत अधिक हैं जो बायसी के साम्य हृदय की सूचना देते हैं। उनकी कविता में लोक जीवन के उपकरण धर्पाए आधारक व्यवहार में आने वाली वस्तुओं के बहुत से बिंब हैं जो एक तमर बाँटी के लिए बहुत धंधों से प्रपरिचित हैं। यदि प्रपरिचित नहीं भी हैं तो उसके हृदय का साम्निध्य उनके उतना नहीं है जितना बायसी के हृदय का है। ग्रामीण जीवन की वस्तुओं में बायसी ने छोटी-छोटी चार का बिंब बिबा है। यह रूप साम्य के आधार पर है। छप्पर के किनारों से टपकने वाली यह धौलाती चार धम बहते हुए नेत्रों के लिए कवि का प्रिय उपमान है।

बरसा मया सखीरि सखीरी मोर बुइ नैन चुपहि जत छाटी

(१४९ ४)

बायसी में यही बिंब दो बार आया है। दोनों बार यह नेत्रों का उपमान बन कर ही आया है। रूँट का रूपक भी बायसी को प्रिय है। यह रूप साम्य के आधार पर निर्मित है। खन-खन पानी से भर कर आने वाली रूँट के डोल अण-अण खाली होते जाते हैं जैसे पाँसों सज अज धाँसुओं से भरती और खाली होती है।

भए नैन रहंड की घरी घरी ते डारी छूडी घरी

(१४० ७)

घोर भी

नैन डोल भरि डारे हिये न घामि बुझाई
घरी घरी बिद्ध बहुरै घरी घरी जिद्ध जाई ।

(१८१ ८६)

ब्रह्म-ब्रह्म मरने घोर खाली होने ब्रह्म यह रहंड न डोल जायसी को संसार
की साराखा जीवन ब्रह्म क निरन्तर बसते रहने के प्रतीक भी ब्रह्म पड़ते हैं

सुहृद्मद जीवन ब्रह्म मरने रहंड घरी की रीत
घरी को धाई क्यों घरी डरी ब्रह्म वा बीत ।

(४२ ८१)

कुधां घोर रस्ती घादि क बिब नी जायसी ने दिए हैं कृपा घोर रस्ती का
समोग मुलकर है उनका घसग घसग होना बियोग का ब्यंजक है रस्ती से हृद्यता की
प्रशुद्धि भी कराई गई है

सँवर गई नहिं बिनु तोड़ी, कुधां घरी घरि काइहु मोहीं

(१८१ ७)

इसी प्रकार श्रेष्ठ की मेड़ का बिब भी प्रभाव साम्य पर साधारित है । मेड़
होने से बाहर का पानी कत में नहीं धागा पर मेड़ टूट जाने पर श्रेष्ठ में पानी भर
जाता है और श्रेष्ठ गप्ट हो जाता है । राजा भी अपने श्रेष्ठ की मेड़ है । अरपर मेड़ कपी
तिरपल का राजा धाकाउहीन की सेना के बाह्र क पानी से टूट जाता है तो उसका श्रेष्ठ
तो ममात्त होना ही घास-घाम क श्रेष्ठ भी गप्ट हो जायेंगे

बितडर हिंभुह कर स्वागु सनुब सुस्क इडि कीमह वयाधु
घावा सनुब जाइ नहीं बाधा में होइ मेड़ भार तिर काबा
पुरबाइ घाह सुम्हार बड़ाई नहिंती लन गो छाडि पराई
बो सति मेड़ रहै सुक साका टूटे कार जाइ नहीं राखा ।

(१०१ ४-७)

मदमें घोर उपयुक्तता की दृष्टि से इस रूपक का बिचाय महत्त्व है । जायसी
ने घास-घाम केबाछ घादि ब्रह्मनी वेड़ पीधों का भी उल्लेख किया है । जायसी ने
ब्रह्म घुनी सूक की रस्ती घादि की उपमाएँ भी ब्रह्म घोर रूप साम्य के लिए की
हैं, जो उसके शारीरिक हृदय को स्पष्टता प्रदान करती हैं । जायसी क शरीर के बिब
भी ब्रह्म साम्य पर साधारित है । शरीर के पीपल न टूट-टूट हो जाने का बिब
निदधय ही घास की पोखर का घावा देना बिब है । बर्गरे पर उसका उल्लेख भी
इसका समर्पक है

शरवर हिया परत निज जाई टुकि टुकि होइ होइ केहराई
बिहरत हिया करहु बिब देका बीहि बर्गरा मेरबहु एका

(११८ १-७)

यह बिम्ब जामसी को प्रिय है। पद्मावत में यह दो बार घोर घाया है। इसके प्रतिरिक्त बीषण के इतने अधिक बिम्ब जो उसे उच्चियाने का बड़ा साधन प्रतीत कराते हैं जामसी के लोक-हृदय के चोतक है। माझ में भुगत बने का बिम्ब भी जो नागमती के बिरह विदग्ध और एकाग्रिष्ठ हृदय का प्रतीक है जो धम के घाघार पर प्रयुक्त हुआ है लोक बीषण का उपकरण है। नागरिक बीषण से उसका उतना संबंध नहीं है।

लोक बीषण के श्रिया-कलापों रीति-रिवाजों का परिचय जामसी क बिम्बों में कम घाया है। केवल एक बार जादू टोने का उल्लेख है

तु काँवर परा जस लोना भुसा भोग परा अतु बोना

(१६६ ३)

टोना पड़े व्यक्ति की भ्रमिष्ठ प्रवस्था राजा पर आरोपित है जो पद्मावती के रूप क जादू में फँस गया है। यह बिम्ब गाव की रीतिपों और बहा प्रभिमिष्ठ क्रिया कलापों का स्पष्ट करता है।

जामसी में लोक कथापों का बड़ा प्राधान्य है। अनेक अन्तर्कथाएँ पद्मावत में घाई हैं जो स्पष्टतः लोक कथापों के रूप में हैं क्योंकि उनका मौलिक स्वरूप किन्हीं ग्रंथों में समाप्त हो चुका है। भाव भी यह लोक कथाएँ भारत के भागों में प्रचलित हैं। परन्तु सभी लोककथाएँ बिम्ब रूप में नहीं घाई हैं। जामसी में अधिकतर उनका उल्लेख सर किया है। बिम्ब या तुलना प्रस्तुत नहीं की है। परन्तु कुछ लोक कथाएँ बिम्ब भी प्रस्तुत करती हैं। रामकथा का स्थान इनमें सबसे पहले आता है। जामसी में राम और सीता की प्रवस्था के मासिक चित्र रत्नसेन और पद्मावती पर जटित किये हैं जिनसे प्रभाव में घाघाटीत बुझ हुई है। यह सभी बिम्ब परिस्थिति साम्य को प्रकट करते हैं। फिल्लाकुल वीठी पद्मावती का रूप इस तरह बना।

पद्मावतिहि सोय अस बोता जस प्रतीय तर बीरी बीता

(४१४ १)

राजा और उरकी माँ की भेंट के समय उसे कौतुह्य और राम की भेंट बताना। समुद्र खण्ड में समुद्र का राजा से यह कहना

तुई एक बाडर मैं भेता जैस राम बतरब कर बैदा

प्रोहि मेहरी कर परा बिछोवा एहि समु र यह फिर फिर रोवा

(४१५ ४५)

बिम्ब की मृष्टि करतें हैं प्रतिस्थिति साम्य यहाँ प्रभावगामी हो गया है। अंत में राम सीता सम्य पद्मावती और रत्नसेन के लिए बड़ हो गए हैं। कवि ने लंका और राजन से स्वेपारमक प्रथम भी निकामे है। राम राजन के युद्ध और मूर्च्छितावस्था में राजा के लिए शक्ति बाण से युद्धरथन में मूर्च्छित लक्ष्मण से बिम्ब भी घाए हैं। इस प्रकार राम कथा का कवि न बिम्ब मृष्टि क लिए बार-बार प्रयोग किया है। हनुमान की बिरह का प्रतीक माना है जो लंका की जैठी दाहक अग्नि मरीच में प्रज्व

लिख कर देता है। दुःख के लिए शंगद और हनुमान का भी उल्लेख है। कवि ने इन विषयों में राम कथा को मनमाना रूप दिया है। उसने वह राम कथा दी है जो लोक गाथाओं के द्वारा एक बहुमूल्य मुसलमान कवि के पास पहुँची थी।

राम-कथा के प्रतिरिक्त भवन कुमार की कथा भी जाम्बवी के विषयों का साधन है। यहाँ भी परिस्थिति साम्य ही प्रभाव बना है। रत्नसेन के वियोग में चित्ता कुम मां भवन की श्रमणी माथा व अन्ये पिता की शक्ति है। मल्ल-दमयन्ती की कथा के प्रसंग में तोत हंस की उपमा भी दी गई है किन्तु मल्ल-दमयन्ती का संयोग करण्य का। अन्न-धनिरुद्ध साम्य से पद्मावती और रत्नसेन के अपार प्रेम का स्वल्प स्पष्ट किया है। इसके प्रतिरिक्त गोपीशक्त भर्तृहरि विक्रम भोज भाषि की कथाएँ भी आई हैं। इन भारतीय लोक कथाओं के प्रतिरिक्त मुगल कथाओं में गोघाबा भाषित उमर शिकंदर भाषि कथाओं भी आई हैं। शौराणिक कथाओं में अणस्य शक्ति के समुद्र सौख्य लेने का रूपक कई स्थलों पर आया है। पद्मावती के दुःख समुद्र के मूख जाने पर राजा समस्य के रूप में आया है।

हुत ली अपार विरह दुःख शोका, बहू अपरित उषवि बस सोबा
(१२४ ७)

जाम्बवी के हृदय में लोक हृदय से प्राप्त एक विस्वाह और है वह है राजा का इन्द्र के रूप में देहना। धरत भी धरत के धामों में इस विस्वाह की बर्तु लोकी का शकती है। लोक-कथाओं से मुने स्वयं जो जायसी के यहाँ कविनाम या कथास है बही के राजा इन्द्र और उसके दरबार की अप्सरायें सब कवि के मस्तिष्क में गहरी बनी बँधी हैं। ध्यान देने की बात है इस जाम्बवी का प्रयोग केवल राजा राजधानी रानी, शक्तियों राजा व सम्बन्धित व्यक्तियों के लिए हुए हैं। जायसी का हर राजा इन्द्र का स्वल्प है और राजधानी स्वर्ग

का राजा हौं बरती वासु सिहल शीप आहि कबिलासु
गंवरप सेन तहाँ बहू राजा, अछरम्ह मोहू इछ जिय साजा।
(६२ १४)

राजमना इन्द्र समा है, राजा लपरी क बृज कल्पतरु है हापी भाषि देरबत हापी है। रानी और उसकी शक्तियों के लिये तो अप्सरा धरत १२ बार आया है। पद्म प्रतिभा शकी और शक्तियों अन्तराए ही तो है।

बानी राज बंदि कबिलासु, अछरिम्ह भरा जानु कबिलासु। धरि
(४६ १)

यहाँ तक कि मुद्र शक्तियों से सजित कमर भी कवि ने इन्द्र का अन्तर्गत प्रतीत होती है। यहाँ विभिन्न राज शक्तियों कुमार बहूती है। जायसी के वम पदम पर लिखत यह विन्म कही-कही शंकों में और कही समय रूप में आया है। समष्टि में वम परिस्थिति और रूप का माध्य देने के लिए कवि ने लोक जीवन के उपकरणों आवायों कथाओं भाषि को सुन्दर रूप में प्रस्तुत किया है।

(घा) मानव जीवन—प्रत्येक कवि मानव समाज का एक दर्श होने के नाते प्रकृति के साथ-साथ मानव जीवन को भी अपने काव्य में प्रतिबिम्बित करता है। प्रकृति प्रेम कितना भी अधिक क्यों न हो पर मानव मानव जगत को बिस्मृत त्याग नहीं सकता। जायसी के काव्य में मानव जीवन में प्रयुक्त वस्तुओं मानव की भाव स्थायों अभिव्यक्तियों और मृत्यु आदि के बहुत से चित्र हमें प्राप्त होते हैं। मानव जीवन से इहीत चित्रों की संख्या ११ है।

मानव जीवन के उपकरणों में कवि ने दीपक का बिम्ब सबसे अधिक दिया है जो स्वयं और मुख साम्य पर आधारित है। प्रकाश दायक होने के कारण वह धामन्य तेज बीजक ज्योति और मुख का चोटक बन गया है। ज्योति स्वरूप मुहम्मद साहब के लिये दीपक का बिम्ब ही माना है।

कीर्तिसि पुख्य एक निरमरा नाउ मुहम्मद पूर्णिक करा
प्रथम जोति बिबि लेहिक छाबी कीर्तिसि प्रीति सिस्त्र उचराबी ।
दीपक सेसि जगत कहूँ बीन्हा ना निरमल जब मारग बोन्हा
जौ न होत घस पुख्य जजियारा सुजि न परत वंघ अजियारा

(११ १४)

संसार में मटकते हुए मनुष्य को सही मार्ग दिखाने वाला प्रेम भी दीपक ही है।

तेसा हिया पैम कर दिया उठी जोति मा निरमर हिया
मारग दुर्ग अजियारा प्रसूता ता नजोर सब जाना बुझा ।

(१५ २३)

दान भी अन्धेरे संसार में प्रभु के पास तक ले जाने का मार्ग ज्योतिष्ठ करने के गुण के कारण प्रकाशवान दीपक का ही रूप है।

दिया करे प्रागे जजियारा जहां न दिया तहां अजियारा
दिया मंदिस निसि कीन्हा अजोरा दिया नाहि पर धुलहि बीरा

(१४३ २६)

दान का यह प्रकाश छिप जाने पर संसार अन्ध रूप सहाय्य ही जाता है।

दीपक को प्रकाश और तेज का स्वरूप मानने से ज्योति के कारण नसबों यन्त्रि मानिस्यों को भी दीपक कहा गया है, जो अन्धेरी रात में भी उजासा करते रहते हैं यही रूप साम्य प्रदान है। देष्टों के घने अन्धेरे में प्रकाश करने वाला सिखूर भी दिया है। यही बर्ण साम्य पर भी कवि की दृष्टि गई है।

बरनी बांघ सीस उपरतही, सेन्बर अजहि अड़ा तेहि नाहीं
बिनु सेंडुर घस जानहुँ दिया जगपरि पन रैनि महुँ किया ।

(१० १२)

दीपक के साथ-साथ कवि ने निरन्तर बसने वाली दीपक की बत्ती को भी

देता है अपने निरन्तर प्रसन्न रहने के धर्म के कारण वह कवि के सामस में निरहाम्नि निरन्तर दम्ब होने वाली प्रेमिका का प्रतीक बन गई है।

गर्द बिच्छु क्यों बीपक वाली भीतर गार्द ऊपर होई रहती ।

(१०८, ६)

बिच्छु विदग्धा नामिका के लिए यही विम्व कई बार बोहराया गया है ।

वर्षक धीर उसके प्रतिबिम्बित करने के धर्म ने भी बायसी को बहुत भाङ्गुट किया है वर्षक में एक होने पर भी मिम्ब-मिम्ब रूपों के मिम्ब-मिम्ब प्रतिबिम्ब पड़ते हैं । इसी कारण सिहल ग्रीप भी वर्षक है जहाँ प्रत्येक व्यक्ति अपना प्रतिबिम्ब देख सकता है।

बरनक बरपन भासि बितेका जी बेहि रूप धो तेसई देका

(११ २)

वपन धीर प्रतिबिम्ब का यह विम्व कई स्थलों पर आया है । वर्षक कई होने पर एक वस्तु के अनेक प्रतिबिम्ब पड़ते हैं जैसे घेता की हर बस हर तलवार एक राजा का प्रतिनिधित्व करती है अपना प्रतिबिम्बित करती है । परन्तु वर्षक में पड़ता प्रतिबिम्ब भी बीच में स्थित ईश्वर की तरह प्रमाप्य है—

अबु भाहि बरपन मोरा हिया तेहि मंह बरस ईकारं पिया ।

नैन निपर पनुबत कुठि हुरी अब तेहि जाय सरौं कुठि भुरी ॥

(४०१, २१)

वर्षक स्वरुता नामक प्रादि का रूप प्रस्तुत करने में भी समर्थ हुआ है । वस्तुतः वर्षक के यह विम्व जिनमें उसके धर्म धीर रूप प्रभाव बने हैं बायसी के मूल्य निरीसक के परिचायक हैं ।

बायसी ने बून प्रादि की उपमाएं भी दी हैं । बून जीवन में निहृष्टता शून्यता धीर व्यक्तता को विम्बित करती है । बायसी ने प्रमूर्ख प्रेम से रहित शरीर को बून कहा है

मानुस प्रेम मयऊ अंकुठी, नहि तो कहा छपर एक मुठी ।

(१११ २)

रत्नधेन भी अपनी शून्यता को बून कह कर व्यञ्जित करता है । निर्जीव शरीर भी व्यर्थ होने के कारण मिट्टी या बून है ।

बायसी ने चित्र धीर मूर्तियों के विम्व भी, जिसमें रूप धीर प्रभाव का साम्य है विम्व है । चित्र के तात्कालिक प्रभाव का बायसी को बड़ा अनुभव है वह उसे विम्व रूप में भी प्रस्तुत करते हैं ।

पूव रूप कर बैतेहू बीठा बिल सपाइ होइ चित्र पाईठा

(११८ १)

रूप वर्धन के पश्चात् भी तात्कालिक प्रभाव के कारण उसे चित्र कहा गया

है। जायसी मूर्ति या चित्र की सुन्दरता और निर्जीवता का भी ध्यान रखते हैं इसलिये मूर्च्छित पद्मावती के लिए 'चित्रमूर्ति' कहा गया है।

जानहुं चित्र मूर्ति गहि सार्ई पाठा परी बही तसि आई ।

(११७ १)

चित्रों के रंगों की मोहकता का रूप ठामाब में तैरते रंग बिरंगे पक्षियों से प्रकट है :

कनक पति परहि धति लोने जानहु चित्र संबारे सौने

(११ ७)

कावच की गुड़िया का चित्र रूप साम्ब के आघार पर सुन्दरता व निर्जीवता की दृष्टि से प्रस्तुत किया गया है वह भी मूर्च्छित और अनन्य अनुरागमयी पद्मावती का उपमान है।

कागर पुतरी जैसे सरैरा पवन उड़ाइ परा भस नीरा
उड़हि मकोरि लहुरि बस भीसो तबहि रूप रंग नार्हीं छीबी

(११८ २३)

स्वप्न में शक्तिता और प्रसारता का मुग्न है उसका रूपक सर्वत्र शक्तिता और प्रसारता की प्रतीति कराता है। जीवन व ससार अन्वयगुण्यता के कारण स्वप्न सदस्य ही है।

पहु ससार सपन कर लखा विस्तुरि मयऊ जानहु नहि बेखा

(११२ १)

शक्ति गुण के लिये स्वप्न का उपमान धन्वज भी धारा है।

जायसी ने काठ के छोटे जिसको धन्वर से बैठ कर स्थिति मचाता है या बसाता है का भी बड़ा शार्कक उपमान दिया है। प्रेमी स्थिति का सरीर काठ का बोड़ा है जिसे प्रेम जिस तरह चाहे बसाय या मचाये

येम क मुतुब बहिव श्री बँबा नाच कोउ जानहु सब बँबा

जानहु काठ मचावै कीई जो शिकु नाच न परगट होई ।

(५२ २६)

स्वप्न के लिए भी मही चित्र धारा है। क्योंकि वह भी बुद्ध के इसारों पर उठी तरह बसता है जैसे काठ का बोड़ा। धर्म की समानता के आघार पर निर्मित यह बिम्ब भाव-ध्वंशना की दृष्टि से बड़ा शार्कक है।

जन्म का बिम्ब उठाके टूटा के मुग्न के लिए धारा है। जन्म दृष्टता का प्रतीक है। गारा बाइस बिज्ञान राज्य के स्तम्भ हैं।

तुम्ह पोरा बाइस जन्म बोरु, नास भायत तुम्ह घोब न कोऊ

(१०१ १)

। जायसी के मंड मोमाठी बार रहूँट के दोस मारि क रूपक भी बहु शक्ति है। इसकी चर्चा पीछे हो चुकी है परन्तु वहाँ धनावश्यक है।

यन्त्र विद्यों में घर का बिज और कसम व स्वाही का रूप भी व्यंजक है। मेजुर (रस्सी) और घाये घाबि का बिज केबल कीबलता को व्यंजित करता है। हिडोले का बिज हृदय के उद्वेगन को उपस्थित करता है। सराय का विन्म नी घसरावट में घाया है। समष्टि में जीवन के उपकरणों क विन्म उनक विभिन्न गुणों रूपों घादि पर आधारित है कबि की विविष्ट दृष्टि व परस को प्रबलित करत है।

जीवन की प्रवस्थाओं में बायली ने बर के अनुसार केबल एक टप दिया है। बासक के स्तर का को विद्येय मर्मस्पर्शी नहीं बन सका है। प्रवस्थाओं में प्रचेत (बायली) व्यष्टि का बिज दिया है। प्रचेत प्रबला पायस का घम मीन और दीवाना पन उतको इष्ट रहा है

कठिन विद्योम शोग बुल बाहु, शरभ बस होइ और निबाहु
बस बाऊर न हुआए हुआ औरहि भाति नाइ का लूजा

(१४४, १४)

यह विन्म कई बार प्रकृत हुआ है। इन विद्यों में मेहमात (पाहुन) की उपमा बड़ी सार्थक है। मेहमात का क्षमिक परिचय उसमें ही घपार मुख और चने जाने के बार बुल और निराशा का बुल जीवन की सजिकता बुल और बाद क बुल की घोठक है

बप तोर बप घपर सोना, यह जीवन पाहुन बप होना

(११४ ९)

मोपी का रूपक भी पद्मावत में कई बार घाया है। मोपी की दरिद्र और विविध प्रवस्था उतका छप प्रबलित बप प्रबलन रहे हैं। घाबिली कसाम में दुस्हे का विन्म भी मुहम्मर साहुब के लिए घाया है—

भारि उमत सब बीठे और कै एकै पाति ।

सबई नास महुम्मर बुन्ह बानहुं बराति ॥

(पा ४१)

व्यपसाय में केबल चिकारी और ठठियार का उल्लेख है। इस दोनों विद्यों में बर्म की समानता घूम में रही है। मोहे कपी बन्य से प्रेमी हृदयों का संहार करन वाले केब चिकारी है। घपना समस्त शृंगार बिम को सौं देन वाली पद्मावती की उपमा ठठियार—बाती रखने वाली में बी गई है। का अघ्यधिक व्यबक है। उतका शृंगार उतके पास होकर भी उतका नहीं है मानो बहु प्रिय की बाती है जिसकी उसे रक्षा करती है।

बस कितु बीबी परं कई घापन सीजी सनार

तब सियार सब लीन्हेति, मोहि लीन्हेति ठठियार ।

(१२१ ८-२)

घादर और बंघों के विन्म बाबली ने नहीं के बराबर दिये हैं। मासक घादर की गुलता यह से की गई है को सैदातिक घादिक जाने के कारण लीन्हेति लीन्हेति

हो सकी है। शरीर और आत्मा का अन्वेषाभित सम्बन्ध रत्नसम और पद्मावती के द्वारा स्पष्ट हुआ है, राजा का बिम्ब पद्मावती में भी व्याप्त है क्योंकि कामा का दुःख बीज (आत्मा) को भी रोमी बना देता है

अब तुम्हें क्या बीज कहूँ बोयी
क्या क रोम बीज व रोमी।

(२२१ ७)

मृत्यु एक बीमारियों में आयसी का ध्यान बीमारियों पर भिन्नुक्त नहीं क्या है। केवल एक जगह फोले का उल्लेख भर है। मृत्यु को संभला देने वाली और भास शक्ति का रूप में स्वीकार किया है। प्रियतम को दूर न आकर बिम्ब की शक्ति धर्म में डाल देने वाला लोठा अपने भासशक्ति और निर्बन्धी होने के मुख के कारण नागमती के लिए काल का ही रूप है और जीवन को समाप्त करने की चेष्टा न क्या बिम्ब भी काल के सवृष्य है

असकि बीजु घन गरजि तरासा बिम्ब काल होइ बीजु तरासा

(२२१ ५)

समष्टि में मानव जीवन से दृष्टीय उपमान अर्थात् कवि की व्यापक दृष्टि के सूचक (उपकरणों को छोड़कर) नहीं है पर कवि की रचि का सूक्ष्म निरीक्षण इनमें स्पष्ट है।

(इ) विचार्ये—आयसी ने बहुत से बिम्ब विचार्यों बिम्बक अन्तर्गत इम सिद्ध और कलाओं को भेदे है, से भी ग्रहण किये हैं। आयसी ने सिद्ध संबंधी बिम्ब कला की अपेक्षा अधिक किये हैं। संभवतः कलाकारों की अपेक्षा सिद्धियों से उनका परिचय अधिक था।

सिद्ध में सबसे अधिक बिम्ब रसायनशास्त्र के क्रियाकलापों से मिले हैं। जिन में धर्म व प्रभाव साम्य प्रमुख हैं। जन्म ब्रह्म नं अपावति को क्या (बाँधी) और पद्मावती को स्वर्ण मानकर, रसायन द्वाएन की बाँधी साफ करने की बिम्ब जिसे सलीगी कहते हैं का रूपक दिया है

अपावति जो रूप बल माँहा पद्मावति क जोति मन छाँहा
में बाँहे अति क्या सलीगी नैटि न काम तिन्नी बस होनी

(२० १२)

सीसा मिलने से सोना बिलर जाता है कमकित हो जाता है और मुहाये से वह धुँड हा जाता है प्रीति के कथन में जोक का सीसा भी प्रेम को बिम्ब कथित कर देता है

परत प्रीति कंजन माँही सीसा बिजुरि न जिन स्याम वै सीसा
कड़ी सोनार दात ब्रेड बाळ, वेइ तोहाय करि एक ठाँड।

(२६ १७)

सोने और मुहामे की यह उपमा बहुत प्रयोग की गई है। मुहामे से स्वर्ण सुंदरतम हो जाता है। पचासवीं भी कुछ और पुर्ण होने के लिये रखसेन कपी मुहामे की कामना करती है। यह प्रभाव का सादृश्य है। सुंदर स्वर्ण के माप बोट रत्न (नम) ही बढ़ जाता है इससे रखसेन को कई बार बोट मम कहा गया है। जो उसकी पावता की ओर संकेत करता है। यह बयक स्वर्णकार से लिया गया है।

मरजिया (समुद्र से मोती दूबने वाला मोलाबोर) से भी जायसी ने बहुत-सी तुलनाएँ की हैं जो बड़ी समझ है। मरजिया साहस दृढ़ता और कर्मठता की प्रतिमूर्ति है धिम्ब भी बड़ा रंघ या स्वयंभार को मरजिया बनकर पा सकता है और रामा भी इसी भाँति सिद्ध हो पा सकता है।

बस मरजिया समुद्र बंस हाव धाव सब सीप

हूँ डि मेहि तो सरण बुझारी बई सो तिधन बीप

(२१५ = ६)

धन्यव भी इसी बिम्ब को दिया गया है।

जायसी ने कुम्हार के बाक का भी बिम्ब दिया है। बहुत कम और प्रभाव पर बिम्ब निर्मित है। यह उसके व्यापक ज्ञान को सूचित करता है।

किरै जाल बोहित धस माई

बाण कुम्हार बरि बाक पिराई।

(३६७ ४)

जायसी ने मनुष्य की तुलना गुध व प्रभाव साम्य के कारण कुम्हार के बनाए बिट्टी के बर्तन से की है जो कण्व बाक पर चककर निर्मित हुआ है।

परा ही डंड बाण सब डंडा का निबित पाडो कर मांडा

गुम्हूँ ऐहि बाक बढ़ हो काँई धायक किरै न बिर होई बाबे

परी को भरै परै तुम धाऊँ का निबित सोबहि रे बडक

पहरहि पहर पकर जित होइ हिघा निसोपा जाग न सोई।

(४२, ४-७)

जायसी ने छटाब बनाम की क्रिया का भी एक रूपक दिया है—

बिरहूँ बसम कीगूँ तन माठी हाड़ु बर्राई बीम्हूँ बस काठी

भीर नैन सो पोती क्रिया तस मर बुधा बरै बनू बीया।

(१२४ ६५)

एक मध्य स्वतंत्र बर बिरहूँ वीरिठ पदुमावती के लिए बैठ रूप में लोहे का भी उल्लेख है जो उसकी पीर को जानकर संशय कपी प्रीति देता है।

छलापों के बिम्बों में जायसी ने बिम्ब कसा के बिम्ब ही मुख्यतः दिये हैं। बिम्ब का नामा प्रकार के रसों से बनाम और पानी से क्षय में ही मिल जाने का बिम्ब कवि ने इस प्रकार दिया है।

बितरिह जो चित्र कीन्ह धनि रोब रोब रंग समेति
सहस साल बुझ आहि भरि मुचछि परी पा मेदि ।

(२४७ = १)

रग का पानी में सहज ही बिम्ब ज्ञान का दृष्टि कवि को प्राकृत्य करता है ।
प्रपने को भूलकर परमात्मा (रानी) में लीन हो जाने वाला एतद्वेग रग सदस्य है—
रंघि पाणि मिमा बस होई आहुहि जोइ रहा तोइ सोई

(२४३ = ५)

यही बिम्ब अत्यन्त भी घाया है ।

संकीर्ण के बाध यत्र सारंगी का बिम्ब भी बिच्छु बिच्छु पीड़ित नागमठी के
लिए प्रयुक्त हुआ है ।

हाइ भये सब कीपरी गले भई सब ताति
रोवे रोवे तन पुनि उठे कहीसु बिबा केहि भाति ।

(२६१ = १)

भौतिक ज्ञान की परिचायक उपमाएँ भी कवि ने की हैं । पद्मावती के
बलस्वयं के लिये बायसी ने स्वयं सीरिया और कम-कुस्तुतुमिया की उपमा की है ।
इन दोनों की सीमाएँ एक दूसरे को छूती भी हैं यह बायसी के भौतिक ज्ञान की
परिचायक हैं । प्रयाग और भरहल (भराबसी) की पहाड़ियाँ और बहा गया यमुना
के मिलन की उपमा भी भौतिक ज्ञान की परिचायक हैं । बायसी में ज्योतिष
सम्बन्धी भी कुछ उपमान मिल जाते हैं । समष्टि में बिबाओं सिद्ध और कसा से
बुझीत यह बिम्ब उसकी दृष्टि की बिदासता के सूचक तो है पर उसके बिच्छिष्ट ज्ञान
के नहीं । उसकी बलि रमायण शास्त्र में अधिक है संकीर्ण बिम्बदशा प्राप्ति से भी उसका
बोझ परिचय है ।

(ई) जेलकूद—बायसी ने जेलों के अधिक बिम्ब नहीं लिए हैं सम्भवतः जेलों
में उनकी बलि कम थी । उन्होंने मुख्यतः सतरंज और जोगान (जो जेलों की तरह
का कोई जल या धोई पर बैठ कर खेला जाता था) के ही बिम्ब लिए हैं । सतरंज से
बायसी को काफी मोह है । सुद गुरद्वार के प्रसंगों में भी वह कुछ सतरंज और कुछ
जेलों के बल पर सतरंज का कनक देने से बूके नहीं है परन्तु बलाद् भाये जाने के
कारण यह भाव—स्वयं की दृष्टि से स्वयं सिद्ध हुए हैं । धर्म साम्य के प्राचार पर
राजा प्रमादहीन की उपमा सतरंज के प्याद (पैदल) से देना बड़ा व्यंग्यक सिद्ध हुआ
है । प्यादा बसता सीधा है पर मापता बाये बाये है प्रेम का सोमी राजा भी जेल तो
सामने रहा था पर कनकियों से बचन में पद्मावती का प्रतिबिम्ब पाने की बच्चा कर
रहा था —

देम क मुहय पवाई पाई,
धर्म सीहं ताके कोहनाई

(२६७ = २)

यहाँ बर्ष का मास्य बिम्ब को बड़ा सारगर्भित बना देता है । बीगत के बिम्ब भी जायसी ने पर्याप्त किए हैं परन्तु इनका भी जहाँ बीग और भूगार दोनों प्रयोग किया गया है वहाँ यह प्रपन्ना सौन्दर्य तो बैठा है । जहाँ बचन युद्ध में इसका बिम्ब है

बहु बीगत सुदक कम खेसा होइ सँवार एन मुरी प्रखेसा
 तब पावो बाबल प्रस भौंन भीत सँवार मोइ स बाळ
 प्राङ्ग करग बीमान गहि करी सीम एन गोइ
 खैलोँ तीहिँ साहिँ सी हाल अपत मँह होइ ।

(६२६ ८-९)

वहाँ इस मास के बिम्ब का सौन्दर्य निश्चय है । जायसी ने पद्य डोरी के लक्ष्य का भी ब्यक्त किया है । प्रभावहीन के मन रूपी पतंग की डोरी पद्मावती के हाथ में थी । इसी कारण वह पतंग के समय अत्यन्त कला सा बा । जायसी ने इसका तुलना उम पतंग से की है जिसकी डोरी बिम्बों धन्य हाथों में होती है और पतंग उमके मनेत पर ही नाचती है । संक्षेप में केवलक्यों के इन बिम्बों से प्रतीत होता है कि कवि को यह खेला में केवल पतंग और बीगत का भोर है । काव्य में उमका धम सादर्य पाकर कवि ने उम्ह बिम्ब रूप में सफलता से प्रस्तुत किया है ।

(ई) जायसी—जायसी ने राजकीय बस्तुओं बियाकसापो आदि के बिम्ब बहुत कम दिए हैं । इसका कारण राजसी जीवन में उनके परिवर्ष का प्रभाव प्रतीत होता है । जो बिम्ब दिए भी हैं वह कम हैं जो हृत्साधारण व्यक्ति की दृष्टि में आ जाते हैं । अंत निहामन पर बैठा राजा सेना आदि । सिहासन पर धारित छत्र धारण किए राजा का बिम्ब रूप साम्य के कारण वाँ स्वर्णों पर धारण है । एक बसस्वस बर्षन में दूसरे दिनक बचन में

सेहिँ सिसाट पर तिसक कईठा बुइज पाइ गजठु बुच बोइ
 कनक पाट गजु डैठेऊ रागा सबै तिवार प्रस ली सागा

(१०१ २६)

जहाँ वा बर्षन दा स्वर्णों पर नायिका के प्रंग प्रत्यर्थी एवं मात्र सज्जा पर धारणित है । बसपि बीर और गृंगार का विरोध नहीं है परन्तु ये रूपक मात्र के उमकारक नहीं बहू बर लक्ष्य हैं । प्रपाङ्ग मास के बचन में इस बिम्ब की प्रथम सफलता मिली है । बिम्ब बिम्बवा जायसी के ऊपर काम कामे बाबल मतते और बचना देने के कारण प्राङ्गपयकारी हो प्रतीत होते हैं ।

बड़ा प्रबाङ्ग पयम यम सागा साबा बिरहू बुइ बल बागा
 पूम स्वाम घोर धन धार्ये सेत बुजा बय पति देछाए
 सरन बीङ्ग अपकहिँ बहू घोरा हू बल बरसाहिँ धन घोर

(१४४ ११)

धर्म साम्य के आचार पर सेना का बिम्ब धारा है । सेना के प्रयाग का अष्ट बिम्ब बायसी ने अपनी अनुकरण प्रवृत्ति के लिए बिभा है

हैं सब कबिन्ह केर पछिगगा किछु कहि जता तबस बेइ बना

(२३ १)

सेना के प्रयाग के समय तबस (तन्कारण) बचता है उसकी आवाज पर पीछे वाले सिपाहियों को भी घाने बढ़ कर सबके साथ पीर मिलाकर चलना होता है । बायसी के अनुसार वही वृत्ति उनकी है पिछलगगा होने के कारण उन्हें भी कुछ काव्य रचना करनी पड़ रही है । बायसी का यह रूपक उनके सेना विषयक विशिष्ट ज्ञान का परिचायक है ।

(५) ज्ञानपात—ज्ञानपात का बिम्ब भी पशुमात्र में धारा है । जाने पीने के उपकरण अर्थात् बर्तनों आदि में उन्होंने ज्ञान कपूरे सुराही और सिद्ध को बिभा है । ज्ञान ब्रह्मत्व के लिए बहु प्रयुक्त उपमान है । विद्यालता की भावना से यह उपमान धारा है । ज्ञानमती रत्नसेन के विद्याल हृदय के लिए कहती है

रसिह बिबस इम्हे मन मोरे लागी कंत पार जिऊ तोरे

(२५२ ७)

रूप को प्रकट करने के लिए कपूरे उपमान बल के लिए प्रयुक्त हुआ है । नेत्रों के लिए भी यह मरे कटोरे का रूप बिभा गया है

नैन कबोर पेस मर मरई सुबिस्ति जोबो तोई डरई

जोभी बिस्ति बिस्ति सो लीम्हा नैन रूप नैनम् जोड बीम्हा

(१६५ १५)

नेत्र मोठी मरे कपूरे है

नैन कंबोर मरे जनु मोस्ती

(५१७ ५)

सुराही घीबा के लिए परम्परागत उपमान है जो घीबा के रूप को प्रकट करता है । नेत्र से टपकते आंसुओं के लिए भी पानी कासती सुराही का बिम्ब धारा है । सिद्ध की उपमा दूती के लिए धार है जो मिला की तरह हर जगह अपने बुझकर के लिए बहुत अधिक दूत की गई है । यह उपमान दूती की दुरावस्था के रूप को प्रकट करता है

केरत नैन बेरि तो छूटी मैं कुटनी कुटनि तासि छूटी ।

(५६६ ६)

जाब सामथी म पानी भी, तेस नबक प्रादि के बिम्ब धारा है । पानी की तरलता हीन इस जाने का मुग बायसी को भाङ्कट करता है । इसी गुण के कारण यह प्रेमपूरित हृदय को पानी कहता है

बेहि जिय पेस पानि भा तोइ बेहि रंज मिली तेहिरन होइ

यह सत बहुत जो ब्रूसि न करिए करण देखि पाणि होइ डरिए ।

(२४३ २३)

धाम पानी का विरोध भी जायसी को प्रिय है। मुल्तान के सेवक धाम की तरह बाहुक के पर ब्रूस (रिखत) सेते ही वह पानी हो गए। जहाँ जैसे बाहा डाल दिया गया। भी की उपमा पिबनमे के ब्रम की दृष्टि से की गई है। धूस सहर सेवकों का हृदय भी की तरह पिबस गया जो दुइता भी वह वह पर।

नमक का प्रयोग जम पर नमक छिड़कना धर्मात् अप्रियता के धर्म में ही किया गया है, जो मुहाबरे के रूप में है।

कवि नाममती की बिट्हाग्नि में बिकस रखा का बिषय और एकनिष्ठता का संकेत पाठ में भूमते बने से कटा है। जो निरन्तर रग्य होने पर भी उसे छोड़ना नहीं चाहता उसी में रहता उसे प्रिय है। निरन्तर रग्य होने का यह गुण नाममती पर आरोपित है।

सायक नार नई जस माव फिर फिर भूगसि लगहि न बाव

(१३४ ३)

बिट् की बिकनता की तुलना कड़ाही में यमं लेल (तड़पल लेल) से भी की है। जो रूप को प्रकट करती है। धाम की उपमा धर्मिष्ठतर उत्तमता व क्रोध के लिए की है, कही कहीं प्रकाश या ज्वालि के कारण भी उसे प्रस्तुत किया गया है—जैसे केशों के बीच सेनुर पूरित मांस की धाम कहना। धाम का सबसे सुन्दर बिम्ब बु ए सेह की धाम काई जो परमावति के हृदय की बिट्हाग्नि और दुःख रूपी पुएं के लिए प्रयुक्त हुआ है। रूप का इतना मुक्तिपुत्र साम्य धारणत उत्पन्न है। बु धा होने पर धाम प्रकट नहीं होती इसी प्रकार दुःख के बु ए से बिट्हाग्नि भी प्रकट की

रबं बिरह बाधन द्विप काय, जोति न शार बिरह कुल साया

(२३१ ४)

बिरह चिनारी रूप है जो प्रम्वलित होकर महान प्रेमाग्नि में परिणित हो जाता है—सतः बामसी कहते हैं

मुक बिरह चिनयी रं मेला, जो तुलगाइ लेइ तो सेला

(१०५)

जाने पकान की प्रक्रिया में जायसी ने सीक कबाब बनाने की क्रिया का बचक रूप साम्य के लिए रखा है बिरह की सलाक पर मांस भुन रहा है जिसमें रक्त के धाँसू टूट कर गिरते हैं

बिरह सरागग्नि बु की मांसु । गिर फिर परहि रक्त के धाँसु

(१३४ ७)

इन बिम्बों से साधनान की धीर कवि की साधारण बनि का ज्ञान होता है। जायसी मुमसमान व इतलए मुसलमानी धारो के बिम्ब ही वह के मके हैं।

(ए) अस्त्र सस्त्र—अस्त्र शस्त्रों में जायसी ने अधिकतर तसवार बनुप और बाण का ही प्रयोग किया है। जायसी का अस्त्र अस्त्र से भी कम परिचय या एसा प्रतीत होता है।

तसवार की तुलना क्षीणता और मुकीसेपन के आधार पर नासिका से की गई है जो बप प्रस्तुत करने के लिए परम्परागत है। बहिर पुरिठ तसवार को भांग बताया गया जो रंग साम्य के आधार पर है। परन्तु यह बिम्ब परम्परागत और भाव व्यंजना में विशेष सहायक नहीं हुए हैं। कवि की बाणी को तसवार कहना भावमि व्यक्ति में अत्यन्त तीव्रता साता है

कवि क भीम सरस हिरबालो एक बिसि आग दोसर बिसि पानी

(४१ ४)

अर्थात् कवि की बाणी तसवार है जिसमें बुद्ध और शान्ति दोनों की शक्ति है। तसवार में ठेक करने पर एक ओर चिन्तारी निकसती है दूसरी ओर पानी (भाव) बड़वा जाता है।

बनुप की उपमा अधिकतर रूप के आधार पर मीहो से की गई है और नेत्रों के लिए अधिकतर बाण—क्याअ—बाण का प्रयोग हुआ है। तीक्ष्णता व तीव्रता के लिए भी कही कही बाण का उल्लेख हुआ है।

माबसती ब्याकरण सरसुती निगम पाठ पुरान

भेद बेद से बाल कह तस आनु लागहि बाण ।

(१ ५ ८९)

बनुप के एक ही बिम्ब बड़े व्यंजक बन पड़े हैं। मुण के आधार पर निरन्तर दृष्टता से आक्रमण सहने वाले दुर्ब की उपमा कवि ने बिन बिन टोक (बनुप की शक्ति परीक्षा का मापदण्ड) के सहने पर बुद्ध से बुद्धतर होते बनुप से की है

आरि पहर बिन बीता बड़ न दूढ तस बाँक

मरब होत वै आरि बिन बिन टोकहि टोक ।

(१२४ ८९)

संक्षेप में अस्त्र-शस्त्र विषयक बिम्ब जायसी के विदेष ज्ञान और सूक्ष्म परीक्षण का परिचय नहीं देते। सम्भवतः इसका कारण उनका इन क्षेत्रों से दूर होना है। यह बिम्ब उसके व्यक्तिगत अनुभव को व्यक्त नहीं करते जिन जीवन से इहीत परम्परा ही उनमें झंझटी है।

अतः में जायसी ने सबसे अधिक बिम्ब प्रकृति से ग्रहण किए हैं उसमें भी आकाशी बिम्बों की ओर उनकी विदेष रुचि है। ग्रन्थ प्राकृतिक उपादानों बिनका संबंध जल पर्वत या वनस्पति से है ने भी उसको आकर्षित किया है परन्तु संख्या और मानिकता की दृष्टि से प्रकृति के आकाशी क्षेत्र से इहीत बिम्ब ही अष्ट नहें या सकते हैं। प्रकृतिपर मानव जीवन में उन्हें साम्य जीवन विदेष प्रिय है। साम्य जीवन

के घनेक उपकरण घनक क्रिया व्यापार आदि को उनके काम्य मे नय प्रदान हुआ है। प्रायः जीवन से इतर मानव जीवन से उनका विद्येय परिष्कृत नहीं था।

(२) संवेदनाओं के आधार पर

कवि के विन्म विधान का अध्ययन कवि की संवेदनाओं (सन्तुष्ट) को भी प्रकट करता है। कवि की तीव्र संवेदना सबसे अधिक विन्मा की सृष्टि करती है। प्रायः किसी विशेष संवेदना-विषयक विन्मों को पाकर हम कवि की संवेदना विषयक बायस्कथा का ज्ञान कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त कवि की संवेदना में क्या-क्या बातें प्रयुक्त हैं वह उसका ज्ञान और कवि का ज्ञान कराता है। विन्म द्वारा संवेदनाओं का अध्ययन कवि के मानस के साक्षात्कार का ही एक साधन है।

किसी कवि की संवेदनाओं का अध्ययन पूरी तरह एक व्यक्तिपरक अध्ययन है जिसमें अध्ययनकर्ता का स्वयं प्रयुक्त रहता है। इसी कारण दो व्यक्तियों के निष्कर्ष भी इस पर एक नहीं हो सकते। व्यक्ति की शारीरिक और मानसिक परिस्थितियों की भिन्नता के कारण संवेदना से उत्पन्न संवेदना में भी अन्तर या बाधा है जो उसके निष्कर्षों को बराबर प्रभावित करता है। कोई संवेदना किसी व्यक्ति की अधिक उत्तेजित करती है किसी को कम। इसके कारण उनके निष्कर्ष महज ही भिन्न हो जाते हैं। Fogle ने अपनी पुस्तक *The Imagery of Keats and Shelley* में स्पष्ट उचित इस धोर किया है। संवेदनाओं में भी एक संवेदना ही एक विन्म में हो यह आवश्यक नहीं है। अधिकतर विन्म विभिन्न संवेदनाओं को स्पष्ट करत हैं। मुद्रिका के लिए ऐसी विभिन्न संवेदना वाले विन्मों (जैसे ध्वनि-स्पर्श परक दृष्टि-स्पर्श परक) को जानों धोर एक लिया है। विन्मों को संवेदनाओं के आधार पर पांच भागों में विभाजित किया जा सकता है

- (१) दृष्टिपरक (Visual)
- (२) स्पर्शपरक (Tactual)
- (३) प्राणपरक (Olfactory)
- (४) श्रवण परक (Auditory)
- (५) स्वादपरक (Gustatory)

(१) दृष्टिपरक

वाक्यात्मक विन्मों में सबसे अधिक संख्या दृष्टिपरक विन्मों की ही होती है।

1. A study of sense imagery is of necessity objective and introspective in method the student is certain to have physical and psychic peculiarities imaginal idiosyncrasis which color his findings; it is highly improbable that any two persons could obtain identical results from examining the same passage of verse.

जीवन में भी सम्भवतः नेत्रों का व्यापार ही प्रबल रहता है। इसी कारण स्पर्श परक स्वास्व सम्बन्धी प्रादि किसी भी अनुभव को केवल 'देखा' शब्द से भी व्यक्त किया जाता है। वस्तुतः किसी भी बिम्ब में चाहे वह स्पर्श से सम्बन्ध रखता हो या ध्वनि सुगन्ध प्रादि से—दृश्यता का कुछ कुछ अंशों में मिला ही रहता है।

बायसी में भी दृष्टिपरक बिम्बों की संख्या सब से अधिक है। उसके काव्य का एक बहुत बड़ा भाग दृश्य वर्णनों से परिपूरित है। प्रथम सभी संवेदनात्मक बिम्ब उसके सामने गगन्य से हैं। बायसी के यह दृष्टिपरक बिम्ब किसी साधारण व्यक्ति की संवेदना से कहीं अधिक सूक्ष्म समग्र और पतिमान संवेदना के व्यञ्जक हैं।

बायसी के बिम्बों में समग्रता का गुण बहुत है। बणिष्ठ वस्तु के प्रत्येक अंग का वर्णन उसने किया है जो उसके सूक्ष्म निरीक्षण और शीघ्र प्रभावित होने की शक्ति का परिचायक है। बायसी का मोह समग्रता के प्रति इतना प्रबल है कि धनक वर्णनों में वह अप्रस्तुत की पूर्णता के लिए उसके अंगों का प्रयोग करते जाते हैं। प्रस्तुत बनन अधिकतर उनमें पीछे छूट जाता है। इस तरह के वर्णन को हम प्रतीकात्मक कह सकते हैं।

कंठ लाइ की मारि मलाई खरी सो बैलि सीब पनुहाई
करे सहस साका होइ बारिब बाब बंसीर
सबै वंसि मिलि प्राइ जोहारै मोठ जनी नै भीर ।

(४२८ ७-६)

पर वस्तुतः यह प्रतीक नहीं है। यह कवि की बिम्बमत पूर्णता विषयक कवि के चोठक है।

प्रस्तुत वर्णनों में भी समग्रता बहुत प्राई है। राजनगरी की बनी अंबराईयों के वर्णन में उसका विस्तार, उसकी हरियाली की अधिकता जो राजि का मानास देती है, वहाँ का शीतल समीर, ठंडा बातावरन सभी कवि को प्रभावित करता है। मानसरोवर के वर्णन में भी अपार बलराशि उस पर पुष्पित वास कमल उँच्ये हुए स्वर्ण बर्णों बल पसी सीढ़ियों का बना बाट उस पर उठरती हुए सोप सभी का बचन है :

मानसरोवरक बेजभि कहा मरा समु द अस प्रति प्रबपाहा ।
पानि मोति अस निरमर ताचू अमृत बानि कपूर सुबासू
लकं बीप के सिमा प्रमाई बाबा सरवर पाट बनाई
लंड लंड सीढ़ी मई गदरी उत्तरहि सोप कई बहु केरी
फूला बंभस रहा होइ रता सहस सहस पनुरिन्ह कर छाता
जपलहि सोप धौ मोति उत्तराहीं जुपहि हंस धौ केलि करहौ
कनक पंस वरहि प्रति सोने जामनु बिब संबारे सोने

(११ १-७)

यह वर्जन सर्वत्र बस्तु प्रदान रहे हैं व्यक्ति प्रदान नहीं। कवि ने उनका रूप देखा ही दिया है जैसे वे हैं उनमें अपनी धीरे से धारोपित भावना कहीं नहीं है जैसी प्रायः छायावादी प्रकृति वर्जन में मिल जाती है। 'जहां बायती स्मृता बासा या सुन्दरी है गंगा भी सुन्दरी है पवन नाथक धीरे जूही की कमी नादिका है। बायती में प्रकृति का ऐसा मानवीकरण नहीं के बराबर है। उनके वर्जन अधिक पूर्ण हैं जो विषय को उसके यथाय रूप में नेत्रों के सम्मुख प्रत्यक्ष कर देते हैं

तात तलावर बरनि न जाही, सुमन बार बार तेगु माही
 पूसे कुमुद केत उजियारे, जानहु हुए पवन मह तारे।
 जतरहि मेघ बरई ली पानी जयलहि मंछ बीजु के बानी
 वरहि पंलि सा संघहि संग, सेत पीत राने बहु रंग
 बरई बरुवा कलि कराही, निति बिचुरि बी दिनाहि मिलाही
 बुरलहि सारत नरे तुलासा विघन हमार मुमइ एक पासा।

(१३ १९)

इसी प्रकार राजमहल धारि भी उनको राजमहल ही प्रतीत होता है। नायक नायिका का प्रत्य कोई बस्तु नहीं जो उनके दृश्य रूपों की बस्तु प्रदानता का छोटक है। कवि की दृष्टि मूक धीरे समग्र है परन्तु वह अपनी ही भावनाओं के धार से कोमल नहीं है बल्कि स्वतन्त्र है। बस्तु का व्यक्ति में पृथक् भी कुछ महत्त्व है उसका अपना सौन्दर्य भी है इसी को बायती के दृश्य रूपन प्रमाणित करते हैं। उनके राज मन्दिर, समुद्र ताल झूट धारि के यवन बस्तु वर्जन के लिए हैं। धारोपण द्वारा अपनी ही भावनाओं को रूप देने के लिए नहीं।

नायती के दृष्टिपरक विन्धों की एक बहुत बड़ी विशेषता है उनकी पृष्ठभूमि। वह केवल बस्तु का बिन्दु ही नहीं देते बल्कि उसके साथ उसकी पृष्ठभूमि के लिए प्रत्य बस्तुओं का भी उल्लेख करते हैं जिससे विरोध या अविद्यता के कारण बस्तु का सौन्दर्य नितर कर जाता है। यह उनका कलाकार हृदय का परिचायक है जो पृष्ठभूमि के महत्त्व से उसकी उपमाविता से मनी मानि परिचित है। हिन्दी की परम्परा के अनुसार उन्हीं नायिका पद्मावती को केवल रूप में ही देखा है पर परम्परा के विरुद्ध उन्हीं उमरु उल्लेख सर्वत्र लयियों के साथ किया है। जो कंचन के साथ कुमुद की पृष्ठभूमि को देती है। जहां सरोवर का एक पूरा बिन्दु नेत्रों के सम्मुख आ जाता है जहां सौन्दर्य पूर्व कुमुद है धीरे उनका बीच केवल एक सौन्दर्यपूर्ति कमल है। यहाँ बस्तु के अनुसार सौन्दर्य के अविषय की व्यञ्जना भी हुई है। कुमुद की पृष्ठभूमि में कमल का सौन्दर्य धीरे अधिक भावपूर्णक धीरे उत्तेजक प्रतीत होता है। इसी प्रकार पदावती को जहाँ कला कहा गया है जहाँ सौन्दर्य धीरे तेज की अविद्यता स्पष्ट करने के लिए पृष्ठभूमि के रूप में सर्वत्र लयियों का मजबूत रूप में उपलब्ध है।

१) वीर की बायती कीका विन्ध, प्रकाश की पीती विन्धना कवि विन्धना को कला जगती की कली धारि।

यहाँ यह ध्यान देने की बात है कि कवि किसी दृश्य में किसी एक वस्तु को ही नहीं उठाता बल्कि पूरा का पूरा दृश्य उसके मानस पटल पर प्रकृत रहता है। यहाँ कवि के मानस में स्पष्टतः घटक्य वस्तुओं के बीच जगमगाते केवल एक चाद के लिए घाकास का रूप है। अनेक स्वप्नों पर यह पुरा दृश्य जी चन्द्र का समस्त सौन्दर्य पूरी पृष्ठभूमि के साथ छाया है।

बारी तीर सब छिपक सारी सरबर मूँ पीठी सब बारी
सरबर नहीं समाय संघारा चाँद नहाइ पीठ सेइ तारा
बनि सो नीर छसि तराई उई घब बुटि संवत पी कुई ।

(१२ १-७)

इसी पृष्ठभूमि के कारण रनिवास के बीच बैठी पद्यावती उन्हें सधि मध्यम के मध्य सधि की भाँति प्रतीत होती है। इन उपमाओं में सौन्दर्य की अभिव्यक्ति में स्वयं धीर सौन्दर्य की अभिकृता का आभास अच्छी तरह हो जाता है। बायसी की यह पृष्ठभूमि प्रियता उनके बिम्बों में सर्वत्र देखी जा सकती है।

बायसी के दृश्य बिम्बों में रंगों घबना वणों का प्रयोग भी बहुत हुआ है। वणों के उल्लेख से सौन्दर्य धीर सजीवता की सृष्टि तो हुई ही है साथ ही यह रंग विचित्र भावों के परिचायक भी बन गए हैं। निराशा कुस भयना, पीड़ा प्रेम अस्मास आनन्द उद्वेग चिंता शोक मय सभी रंगों द्वारा व्यक्त हुए हैं। प्रेम धीर अस्मास के कारण जाल बेहरे नी पद्मावत में है।

राज्ञी पिय के नेह कई सरय भयऊँरतनार,
जो रे उबा सो अंधुबा रऊ न कोइ संघार

(१५० ५६)

धीर बेचना एवं पीड़ा के पीले रंग भी

अंघ बनल अत कंबल तरीरा हिया भा पियर वेम की पीरा
केसरि बरन हिया मालीरा जानहु मनहि भयऊ किछु प्येरा

(१९६ ४-७)

परिनिवृत्तिगत वैषम्य प्रकट करने के लिए विरोधी वस्तुओं का भी कवि ने एक साथ प्रयोग किया है। अनुप्रास के जाल रंग से रचित पद्मावती राजा के बंधी हो जाने का समाचार सुन हृत्प्रभ कुशी धीर बेचना से पूरित हो स्वेत बर्ण हो जाती है।

जबहि कुस्र कहीं लामेऊ राहुँ तबोह कंबल मन भयऊ दगाहुँ
जल बिन मीस रैनि होइ चाई बिमस्त कंबल भयऊ कु मलाई ।
रत्ना बरन गएउ होइ तैता, भाँबति नंबर रदि नई दबैता

(२४७ २-७)

वर्णों में विरोध का संश्लेष करके मान को ठीक करा गया है अंधेरा घबना काला रंग कुस पीड़ा निराशा भरण धारि का प्रतीक है धीर उबासा जीवन धीर आनन्द का प्रतीक

राजपाट शर परगह सब तुम्ह लों उजियार
ईठ भोव रस मानहु की न बनहु धंधियार ।

(१२६ ८-९)

राजा के प्रत्याग के परचातु नगर बुझ घोर वेदना की प्रतिमूर्ति बन जाता है । जायसी ने उसके लिए सदा काले रंग (धंधरे) का प्रयोग किया है
रोवे मला न बहुरै बारा रतन बसा जय भा धंधियारा

(११३ १)

धपवा

बोबी होइ निसरा जो राजा सून मगर जानहु घु प बाजा

(१६३ १)

बलों के उल्लेख में कवि की दृष्टि उनके प्रतीकात्मक धर्मों पर बहुत रही है । ज्योति का उजाला जो स्वर्ण-वर्ण का चोतन है जीवन के ध्यानत्व सुख तेज धारि का प्रतीक है और काला रंग जीवन के धंधकार पस का । इन्हीं कारण जायसी ने सुख ध्यानत्व धारि की उपमा उचते हुए सूर्य से की है

बैचि मानसर बप मुझाबा, द्विय तुमास पुरइत होइ जाबा,
ना धंधियार रैन मति झूमी भा भिनसार किरन रवि झूमी

(१२८ २३)

धपवा

बहु सूरज तुम सति सरख धानि मिलाबाहु लोइ ।
तस बुझ में तुझ बचने रैन मति दिन होई ॥

(११० ८-९)

धीर जीवन की निरागा बुझ धीर वीड़ा की उपमा सूर्यास्त से
कैतहु बिरह न झाड़े भा सति पहन परास ।

नमत बहू बिस रोबाहु, धंधियारि भरति धकास ।

(२४९, ८-९)

धर्मों में कवि को काला सङ्केत, स्वर्णवर्ण धमकार वर्ण अधिक आकृष्ट करते हैं । माल घोर पीले रंग का प्रयोग भी जायसी ने किया है यह 'सुन्दर' प्रतीकात्मक धर्मों को ध्यानित करते हैं । प्रस्तुत वर्णन में यह बन्धु बस्तु की सुन्दरता को व्यक्त करते हैं ।

जायसी हस्त बिम्बों में पति परिवर्तन धारि को भी बड़ी स्पष्टता से प्रति बिम्बित करते हैं । परिवर्तन को हम सूर्यास्त सूर्योदय धारि के बिम्बों में बड़ी स्पष्टता से देख सकते हैं । पति के प्रति उनकी आपबकता भी उनके वर्णनों में बिद्यमान है । इन पति को ही हम अनुभाव दोषना कह सकते हैं । पद्मावती की बिरह धमका के रूप में काविक पति को देना या सकता है

बिरह काल हीह हीय परैठा बीरु काड़ि से हाव बईय,
 बिन एक मूठ बाँय बिन जोला गहू बीम मुख बाइ न जोला
 बिनहि बैस के बालन्हि मारा कापि कापि नार मरे बेकरारा

(२४१ ५-७)

इसी प्रकार प्रेम-समुद्र में धबगाहन करते समय राजा की प्रवस्था बर्धित है जो सन-क्षण में बूझता उतरता हिसोरे मेठा है और निरबाध लेकर कभी प्रवेत हो जाता है कभी बुन्त से पीठ बर्ध और प्रवेतनता से प्रवेत हो जाता है। पद्मावती के मिलन के समय प्रचानक सखियों के लसे लेकर प्रदृश्य हो जाने पर राजा की उत्सुकतापूर्ण निराशा का एक प्रजापति का गति-विन बायसी ने रिया है। जो बड़ा भाव व्यंजक है।

सुरख तपत सेज सो पाई पाँठि छोर सयि सखी जपाई
 जनु बाबिक मुख हुत पौस्वाति राजा बकबौहूद तोहि मति
 जोपी बरा जनु घाछरगिह हापा जोब हाव हुति मया बैहावा

(२१९ ४१)

पद्मावत बिबनों से उत्पन्न गति के प्रतिरिक्त भी बायसी के अपमान स्वयं गतिपूर्वक है। केस रूपी सर्प की सहारे उठता बिरना बीटना बलजाना बैनी की गति की सृष्टि करत है।

कंबल जुडिन केस मय कारे लौठन्हि बरे भुमंग बिसारे।
 बैदे जातु बलयागिरी बासा, सीस बड़ लोडहि बनु पासा

(११, २६)

समष्टि में बायसी के दृष्टिपरक बिब उनकी बिबिष्ट संवेदना के चोतक है जो साधारण से कहीं अधिक है। सूक्ष्म परिवेक्षण समग्र जगत् पृष्ठभूमि का बर्धन उनकी दृष्टि की व्यापकता सूक्ष्मता ब्यारठा और 'बिबक प्राप्ति' का परिचायक है। उनका बनों का प्रयोग और गति का उल्लेख भी उनकी संवेदना की बिबिष्टता का चोतक है। सूबोदव और सुवास्त के बिबनों का रंज और प्रभाव के धारण पर बैसा एकत्र प्रयोग बायसी ने किया संभवतः किसी और हिन्दी कवि ने नहीं किया है।

(२) स्पर्श परक—

बायसी में स्पर्श परक प्रतिमाएं अधिक नहीं हैं। सूक्ष्मता बिक्रमापन कड़ा पन कुरबपन प्रादि का उसने बिधेय उल्लेख नहीं किया है। स्पर्श से ठीके स्पर्श बीतनता ने उसे सबसे अधिक प्रभावित किया है। बीतनता के साथ कवि के मन में एक मुखर धातिबामक स्पर्श की भावना है जो मुख और प्रामन्द की चोतक है। तीव्र प्रीत्य के परभाव इस मुखर स्पर्श का बायसी ने बहुत प्रयोग किया है। नाममती बिबिष्टता में प्रिय के बचन के हाथ बीतन होने की भासा करती है

बरत बजायनि होइ विज छाही, धाइ बुझाउ धमारहू माहा
तेहि बरतन होइ सीतल नाली धाइ धाय सो कब कुलबारी

(११४ ४२)

इसी प्रकार बिहू पद्य पद्मावती की मुग्ध का घाना प्यास भरत को मेघ की छाह जैसा सीतल समता है। राजा भी सिंहमयङ्ग में मुख के प्रतीक सीतल पवन का अनुभव करता है।

पुछा राजा बहु मुख मुखा जाली धाइ कही दिन उबा ।
पवन बास सीतल से धावा कया इहत खरन अनु लावा ।।
कहू न भसी बुझान सरीष परा भयनि मंहु मलै समीष ।

(११६, १३)

मानसरोवर भी पद्मावती के स्पर्श से ऐसी सीतलता और शान्ति की अनुभूति करता है।

परन्तु 'सीत' धर्मात् ठण्ड के प्रति कवि के मन में एक भय है। सीत कवि को मुख नहीं देती। कवि सीत के हाथ अपने मन को ब्याल करता है—

ए भय सुर सीत मोहै लावा

(१११, १)

जै भय के सूर्य मुझे सीत लपटी है तुम जाने ठाव से मेरी रक्षा करो—इससे लपटा है सम्भवतः आधुनिक निर्बल रहे हों क्योंकि सीत धर्मर का बिसरक पास उससे बचने के लिए अनेक बन्ध हों मुखसामक समती है। निर्बल का कण्ठ हर ही लपटा है। आधुनिक का सीत के प्रति इस भय का बचन उनक व्यक्तिगत उनकी परिस्थिति का सुन्दर परिचायक है।

प्रकृति बचन में भी कवि ने प्राकृतिक बस्तुओं के सीतल स्पर्श का उल्लेख किया है। प्रबराई के बर्षन में बूझों की बनी छाह, सुखर समीर का बचन है

एन धरंराऊ लाय बहु पासा, उठ पूहुनि हुत साग अकासा,
तरबर सबै मलयागिरि लाइ भी भय छाहि रैन होइ धाइ
मलै समीर सोहाई छाहा ब्रेठ बाइ लागै तेहि माहा
पौटी छाहि रैन होइ धाई हरिपर सबै अकास रिबाबै
पबिठ जो पर्वुबै लहि के बासु, कुन बितरे सुप्र होइ बितरासु
बिन्हू बहु पाइ छाहि अत्रुप, बहरि न धाइ सबै महु पूपा ।

(२० २-७)

विषम हीर के दिन बूझों के बोधे रतसेन के मापमती का संवेग पाया या बहु भी पने ऊँचे ऊँचे और छातलता प्रदान करने वाले थे। अतः बर्षन में कवि ने बर्षा के प्रलय में सीतल बूझों और सुखर वायु का उल्लेख किया है।

रिठु पावस गरिबै पिउ पाव, सावन भारी अविठ कोडावा

सीतल बूट ऊँच बीबारा हरियर सब बैद्यधि संतारा
मरी समीर बास मुख बासी बेहति फूलि सेव मुख डाली

(११७ १९)

शीतलता से कवि का वात्सल्य शीत से मिलन उस मुखदायक स्पर्श से है जो शीष्म की बलती रूप में छाँह पारि के द्वारा प्राप्त होता है। शीत के प्रति कवि भयभीत है पर शीतलता को वह मुखदायक समझता है। शीतल स्पर्श की भाँति जायसी ने बाहक स्पर्श का भी पर्याप्त उल्लेख किया है। दुःख की तीव्र बसत बाहक है

'रोबहि रीव नाव जनु बाये, लीतहि सोत मरे बिच कहि ।

बसप कराहु अरी सब बीऊ बैयि न जाऊ मरी गिरि पीऊ'

(१४७ ३४)

पद्मावती के इस बिरहाम्नि में दग्ध होने के समान ही रत्नसेन भी बिरहाम्नि की बाहकता अनुभव करता है।

केइ यह बसत बसत जजारा ने तो चारि संभवा सी छारा

प्रब लेहि बिन जय भा संभकूपा, बहु सुत छाँह अरो हौं पूपा ।

(१११ २६)

बिरह में नागमती मुखर स्पर्श में भी बाहकता का अनुभव करती है

कातिक सरब चारि उजियारी जय सीतल हौं बिरहा जारी ।

बीरह कर चारि परनासु, अनहु अरै सब बरती धकासू ॥

(१४८ १२)

पद्मावती के प्रायमन पर भी नागमती बाहक सूर्य की गर्मी का अनुभव करती है। जो उसके हृदय की ईर्ष्या की व्यञ्जना करता है।

प्राबा बद्मामति क बेचानू नागमती अरि जठा सो भानू

अनहुँ छाँह मँह पूप बैबाई, लँस झारि नार्य जो भाई

तहि नहि जाइ लीत के झारा हुसर पंविन शीगू बतारा ।

(४२९ ४९)

जायसी ने 'कोमल' स्पर्श का भी उल्लेख किया है। पद्मावती मुखर होने के साथ साथ कोमल भी है। स्वर्ण बच के साथ साथ मुकुमारता भी उसमें है

यह जो पशुमिनि चितकर प्राणी, कुम्हल कया बुबावत बानी

कुम्हल कमक न मँप न बासा यह सुयंज जनु कंचल बिगाता

कुम्हल कमक कठोर सो संया, बहु कोबल रँम प्रहृष सुयंजा

(४६८ ११)

उसके केश भी काले लहुरदार धीर कोमल हैं।

समष्टि में जायसी में स्पर्श बिंबों का प्रयोजन शीघ्र की दृष्टि से विधिप्यता का

दोतरु नहीं है परन्तु सूक्ष्मता अत्यंत प्रबल है।

(३) घ्राण परक—

जायसी में घ्राण परक बिम्ब भी काफी मात्रा में पाये हैं। जायसी मधुर और भीनी भीनी सुपन्धियों के प्रति बिधाय रूप से प्राकृत्य हैं। पूरे पद्मावत में एक भी स्वतन्त्र ऐसा नहीं है जहाँ दुर्गन्धि जैसे मरे आलवर की बदबू, नाथ घरने की बदबू बमड़े घबवा किन्हीं घन्ध आसों घादि की बदबू का उल्लेख हो। कबस एक स्वस पर योगी रत्नसेन के घटीर से घान वाली कुरकटा (मसम) की बिधेय यन्त्र का उल्लेख है। जिसे कुछ घंटों में दुर्गन्ध कहा जा सकता है

सकुच करे मुँरे नन गारी यह न बोह रे ओम भिकारी
भीहटि होहि गोनि तोरि बेरी घाई बातहु रकुटा केरी।

(३०४ ३४)

घन्ध सभी स्वसों पर जायसी कबस सुमधियों इनो घादि का वर्णन करत है। पुष्प संघ में जायसी का कमल संघ बिधेय रूप से आकषित कर सकी है कुछ ती पश्चिमी नायिका होने के कारण और कुछ रचि के कारण जायसी ने उसे बहुत प्रयुक्त किया है। पद्मावती के घटीर न मर्दन पद्य की गन घाती है जिससे अमर उसके वारों और घये कुमठ हैं

“नई छौनत पदुमावति डारी बजा बोरे सब करी संवारी।
बाप बेया लेह संघ मुवासा संबर घाइ सुबुधे बहु पासा।

(३२ १३)

सभी पश्चिमी नायिकों में जायसी ने कमल-संघ का वर्णन किया है। यहाँ तक कि सिंहलमंड की पतिहारिया भी कमल गंध से युक्त है। पद्मावती तो किन् घन्धयन्त्र स्वयंभी और स्वयंघर्षी होने के साथ-साथ पद्मसंघ से म्बत युक्त होगी

यह जो पद्मिनि बिततर घानी कुन्दन कया बुषामह बानी
कुन्दन कमक न संघ न बासा बहु सुगन्ध गनु कंबल बिवासा।

(४६८ १२)

घानान्ध पुष्प संघ भी जायसी को प्रिय है। सुक्तियो और घन्ध नायिकों से पुष्प संघ का उल्लेख हुआ है। बसन्त पुष्पित कुनों की गंध भी घोर भी उसका ध्यान गया है। बसन्त की यह गंध जायसी को प्रिय है। घानान्ध पुरित नर नायिकों में बसन्त की गंध का वर्णन है। बिजय और घानान्ध से प्रयुक्तित रत्नसेन भी सिंहल द्वीप से बसन्त के कुनों की गंध की प्रशुद्धि करछा है।

घोब बटिन बिसि निघेर कंबन मेध बिघाब।
बास बसल रिनु घाई रोस बास बाप पाब ॥

(११२ ८-९)

मलय नमीर की गंध का भी उल्लेख हुआ है। यह घानान्धबत्या की छोटक है। घाननरोबर पद्मावती के घायमन पर मत्तबागंध का अनुभव करता है।

मनीं समीर बास तन घाई, भा सीतल नै तपन हुआई
न जामे कीन पौन से घाबा पुनि बसा भै पाप यंवाबा ।

(१५ १४)

मनुष्य निर्मित सुमन्वियों—इनो घाबि में जायसी ने मेर चौथा परिमल
घाबि का वर्णन किया है जो सुन्दर और युवती मारियो में सर्वत्र कल्पित की गई है ।
राजधानी में सर्वत्र ही अन्दर मेर कस्तूरी की सुमन फेरी है—

भटुक बब बीठे सब रागा हर निसान निर सिगह के बागा
क्यबंत मनि बिपे लिलाठा माबे छस्त बठि सब पाटा,
मातहु बंजन सरोबर कुनीं साभा का क्य बैखि मन सुसे
पाल कपूर मेर कस्तूरी सुपंन बास भर रही अपुरी ।

(४७ १६)

जायसी न एक विशिष्ट यम भी बी है जो उनके घामीय हृदय की परिचायक
है । जायसी लोक जीवन के कवि है मह बंन इसको मनी प्रकार प्रभावित कर बेटी
है । यह बंन है, 'घापाइ मास म भरती पर बू बों के पङ्कन से उत्पन्न सीपी यम' ।
'सीपी सुयम' महा जीवन के घातक की प्रतीक है ।

बस भु हू रहि घसक पसुहाई, परहि बू ब सो सीन बसाई
घोखि भाति पलहै सुख बारी उठे करिल नब कोप संबारी

(४२१ ४५)

जायसी का सुयमियों के लिए मोह है दुर्मन्वियों के विषय में कवि एकदम
पीन है । सुयमियां ही उसे धाकपित कर सकी है । सुयम को वह जीवन का अमर
तत्व मानता है जो भौतिक अस्तित्व समाप्त हो जाने पर भी बना रहता है । सुयमि
अपनी भौतिकता से परे अमरता के कारण ही उसे प्रिय है । कवि दान को इसलिए
सुमनित कपूर कहता है जो इन्ध के समाप्त होने भी रोप रहा ।

दानि घाहि सब दरब कबूब, दान लाग होइ बाँचे मुख

(१८७ ४)

पद्मावती की अन्ततारुणा या विरह में मरण की सी अवस्था में भी वह
उसकी अमरता को सुपंन के द्वारा व्यक्त करता है । 'कूम मुए नै मुए न बासु' ऐसे
पद पद्मावत में बहुत प्राप है । जो जायसी क सुमन्वियों के प्रति विशेष धाकपंन को
प्रकट करते हैं ।

(४) ध्वनण परक—

जायसी में ध्वनि का क्षेत्र काफी व्यापक है । धीमी धीमी ध्वनिया जो अक्षर
संगीतमय हैं उसमें सुनी जा सकती हैं ।

हुए घंठि कटि बंजन ताया बसे तो उठे छतीसो रागा

(२११ ७)

करपनी की झंकार को संगीतमय है घाये भी घाई है । बापसी को संगीत का भी सामान्य ज्ञान वा ऐसा प्रतीत होता है उसने बिन मृदंग घादि का उल्लेख किया है । इसके प्रतिरिक्त लोक जीवन में प्रचलित वाद्यबंध में—तठ, षम तूर्य वागसुर मंत्री, बफ घादि की मोहक झंकार और पम्मीर घोष का भी उल्लेख किया गया है ।

बाग उपर्य नाकसुर तुरा महुषारि बाज बंसि भल पुरा
हुक बाज बफ बाज पम्मीरा घौतेहि मोहन भांस मंत्रीरा
तैत बितंत तिरबर बन ठारा पांच सब होइइ झनकारा

(१२७ १-७)

सारंगी घादि की एकरत ध्वनि का भी वर्णन है । परन्तु यह सब उसके संगीत विषयक विविष्ट ज्ञान का परिचय नहीं देता है । कवि को संगीत का सामान्य ज्ञान ही था । संगीत की रंग रागिनियों जैसे विषेय बखिबर नहीं सगती थी ।

कवि ने बखिबों के स्वरों को भी बिना है इनमें कोयस बाठक पपीहा बहु प्रयुक्त है । परन्तु धनुरघात्यक न होने के कारण यह कर्ण प्रिय नहीं हो पाये हैं । कहीं कहीं ती कानों को चुमते से ज्ञान पड़त है बंस मोर का 'भुयो-भुयो' बोलना ।

पटुधों में सिंह की गर्जन ने कवि को प्राकृष्ट किया है । सिंह का मरजना बीरब की हुंकार है जो बिपसी के हृदय में भय उत्पन्न करती है ।

पठेऊ कोय सब छूटेऊ राजा बड़ा सुरंग लिय भस नाजा

(१२५ ५)

धन्वा और मोरा के सिधे भी सिंह के मरजने का उल्लेख किया गया है ।

बापसी को तीध और मोरदार ध्वनियों से अधिक मोह है । रानी के शब्द का भी सामान्य ध्वन के रूप में उल्लेख नहीं है बरन् बहु बार से स्वर करक रोती है—'कंठ लायि सी होमुर राई घादि । तीध ध्वनियों के प्रति धारण्य जामसी के पुठ स्वलों में मूब मुना जा सकता है । पुठ की भयानकता का चित्रित करन के लिए धन-गमन बहु प्रयुक्त ध्वनि है । हाथी मेंबों की तरह गर्जन करके एक दूसरे से मिड़ जाते हैं, दुर्गे से बहराने का स्वर इतना भीषण है कि मेष के मरजने का ध्यासा होता है । बोले के छूटने से भी भीषण गर्जन होती है

घाष्ट घाठु के मोला छूटहि, गिरि पहार बरब लख छूटहि
एक बार लख छूटहि बीला परबे गयन घाति सब जोला

(१२४ १-५)

कोबिठ राजा भी मेघ की धाति प्रबानकता से मरजता है

सुनि घाक निजा उठा बरि राजा, जागहु बैब तरपि धम पाजा

(५८१ १)

भीषम ध्वनियों के लिए बापसी का मोह इतना अधिक है कि पुठ स्वत पर धरबे इनका उल्लेख किया है यह जग की सृष्टि करने में भी समर्थ है । बापसी के

समुद्र के समानक पलियों के पंख कोसने में भी मेघ की गर्जन का बसुंन किया है। आयसी का मोह मेघ गर्जन के लिए इतना बड़ा है कि बिबाह के बाधे भी उन्हें मेघ गर्जन प्रतीत हुए हैं।

बीजब रत्नों में तपाकों के गम्भीर बोप का भी बसुंन है। युद्ध स्वर्णों पर तातावरण और उत्तेजना भर हैने में यह बड़े सफल हुए हैं।

बबहिं भाह बुरे बहु ठठा हैकत बेसे गगन पन घटा।

बमकहिं करग सो बीज समापा यलबाबहिं सुम्भरहिं निताना

(१११ २६)

समधि में आयसी तीव्र ध्वनियों के प्रति अधिक आकृष्ट हैं यद्यपि बीमी और बीतमयी स्वर सहृदियों भी उनके काष्प में हैं। पर अधिकतर वह गर्जन-उर्जन का ही मोह करता है।

१) स्वाद परक

स्वाधों के प्रति आयसी की दृष्टि अधिक नहीं गई है। बहुत कम वस्तुओं पर बहुत कम स्वाधों को उचने लिया है। अप्रिय स्वाध का उल्लेख कहीं नहीं आया। प्रिय स्वाधों में उचने उन्ही स्वाधों को लिया है जो सामान्यतः सबको प्रिय है। या प्रतीत होता है कि स्वादिष्ट आने-पीने के प्रति आयसी की विशेष दृष्टि नहीं थी उन्हें स्वादिष्ट आने-पीने के अवसर कम मिले थे। वह हर सामान्य प्राणी की ही आन-पीने के बीकीम थे। उनके स्वाध के उल्लेख उनके किसी विशेष स्वाध को नहीं बताते। स्वाध की दृष्टि से वह एकदम सामान्य थे।

आयसी में बहु प्रयुक्त स्वाध धमूत का है जो प्रतीक मधुर और अपूर्व मीठेपन घोटक है परन्तु वह स्वाध कस्तित है। आयसी ने सम्भवतः १३ स्वधों पर धमूत उल्लेख किया है। बचनों की कर्म प्रियता के लिए वह धमूत ही लाया है।

रसना कहीं सो कहै रस बाता, अर्बत बचन मुनत मन राता

(१०८ १)

पद्मावती के अन्ध भी धमूत सदस्य ही हैं। मानसरोवरक का पानी धमूत की त स्वादिष्ट है और बलकुम्भ का पानी भी

गढ़ पर मोर और बुद्ध नदी पानी भरह जैसे बुरपरी।

धौब कु ब एक बोती बुर, पानी अगत कीच कपुब।

(४३ १२)

फल-फूल भी धमूत की भाति हैं।

आयसी ने मीठे स्वाध का भी पृथक से उल्लेख किया है। आयसी मधु की भी बार लाया है। सम्भवतः मधु की किसिण मिठास उसे पसंद रही हो। मधु स वा अष्ट रूप है। कवि प्रेम को जो जीवन का अष्ट स्वरूप है मधु ही है क्योंकि दोनों ही प्रसन्न्य हैं।

बुल भीतर जो वेम मधु राधा संजन मरन छहूँ लो जाका
(१८ ३)

हृदय में यह प्रेम कपी मधु छिपा रहता है
द्विप मंदार नम धोहि जो पुंकी जोनी जीम तारा की कुंजी
रतन पदारथ बोसह बोसा, सुरत वेध मधु भरह प्रमोसा
(२३ ४१)

जायसी ने बिरह में गुड़ के कड़वेपन घीर भी के कड़ेपन का उल्लेख भी किया है। बिरोभी स्वासो का प्रयोग भी किया गया है। मारम्भ में कर्कशु भीर भन्त में मधुर भाव के लिए कड़वे घीर मीठे स्वाद का उल्लेख पाया है
तोह बिनती तिक करीं बसीठी बहिसे कडई भत होई मीठी
(२६९ १)

जायसी के स्वादपरक बिम्ब जायसी की सामान्य स्वाद गवेषना में छोटाक है। केवल मधु के प्रति उनकी विशेष रुचि प्रकट होती है। परन्तु बल स्वासों का कही उल्लेख भी नहीं है। सामग्र दृष्टि से यह विशिष्ट नहीं केवल सामान्य कहे जा सकते हैं।

सर्पाष्ट में कहा जा सकता है कि जायसी का कवि हृदय अत्यन्त संवेदनशील था। हृदय स्वयं स्वर धारि सभी जसे धपने एक विनिष्ट रूप में प्राकल्पित करते थे। पशुपावत में हृदय बिम्ब सबसे अधिक है। जो अत्यन्त स्वाभाविक है। क्योंकि हृदयता का व्यापार हमारे जीवन में सबप्रधान रहता है। अन्य बिम्बों की संख्या भी पशुपावत में पर्याप्त है।

(३) भावों के आधार पर वर्गीकरण

भावों के आधार पर कवि के बिम्बों का वर्गीकरण कवि के भावस का स्पष्टीकरण करता है। कवि नर्तना उसी रस धपना भाव से सम्बन्धित बिम्ब अधिक घीर भाविक देगा जिसमें उसके हृदय पर एकाधिकार किया हुआ है। वही कवि का प्रकृतिय भाव है जिसमें कवि के भावस का साक्षात्कार किया जा सकता है। इस पर विसृत विवेचन ४ अध्याय में किया जा चुका है। कवि पूर्व रसात्मकता की स्थिति में ही बिम्बों का श्रेष्ठ निर्माण करता है और यह पूर्व रसात्मकता की स्थिति से धपने प्रकृतिक भाव में ही मिल सकती है। उस भाव में जो उसके हृदय के सबसे अधिक निष्पट है। जिसमें कवि को सबसे अधिक आत्म विनोद करने की क्षमता है। इस रूप में कवि के बिम्बों की भाविकता व्यंजकता एवं प्रकृतिकता का परीक्षण करके कवि के प्रकृतिक भाव धपना उसके मूल भाव का ज्ञान किया जा सकता है। बिम्ब का अध्यात्म कवि के विशिष्ट रस एवं विशिष्ट भाव की समझने में महत्वक होता है। यहाँ भाव का तात्पर्य मुख्यतः रस के स्पाई भावों में है। जिसके द्वारा हम कवि की रस मयता तक पहुँच सकते हैं।

जायसी में शृंगार रस प्रधान है यह जायसी के सभी मर्मज्ञ आलोचकों ने स्वीकार किया है। जायसी के बिम्ब भी शृंगार को ही जायसी का प्रधान रस प्रमाणित करते हैं जिसमें इनका हृदय सबसे अधिक रमज करता है। जायसी ने शृंगार के दोनों पलों—संयोग-वियोग को लिया है। यहाँ सब न एक स्वर से उसे प्रेम-वीर का गावक और विप्रसम्म शृंगार का प्रधान कवि स्वीकार किया है।

उसके बिम्बों का अध्ययन उसके विप्रसम्म शृंगार की दक्षता को ही प्रमाणित करता है। यद्यपि संस्था की दृष्टि से संयोग शृंगार में बिम्ब अधिक हैं परन्तु मार्मिकता और व्यङ्ग्यता की दृष्टि से विप्रसम्म शृंगार के बिम्ब कहीं अधिक हृदयग्राही बन सके हैं। जो स्पष्ट रूप से जायसी को प्रेम-वीर का गावक प्रमाणित करते हैं। निष्कर्ष रूप में यहाँ कबल माता के आभार पर संयोग शृंगार को जायसी का प्रमुख श्रेय नहीं कहा जा सकता बस्तुतः विप्रसम्म शृंगार ही उनका प्रमुख श्रेय है। शृंगार के परचाद् रहस्य की भावना एवं आध्यात्मिकता का प्राधान्य होने के कारण उनमें राम या निर्बैराव भावों की प्रधानता है। कबला का भी जायसी में पर्याप्त स्वास है। इसके अतिरिक्त क्रोध उत्साह भय आश्चर्य की भी पर्याप्त अभिव्यक्ति परमावत में है। हास्य बुभुक्ष्ण का जायसी में नितान्त अभाव है। वास्तव्य भाव का भी अभाव ही है। रत्नचम की माँ की विकस अभिव्यक्ति में तनह कम शोक ही अधिक अङ्कता मिलता है। अतः वास्तव्य भाव का अभाव ही कहा जा सकता है। जायसी के बिम्बों का भावों के आभार पर ७ भावों में बाँटा जा सकता है

(१) शृंगार (रति)—(अ) संयोग, (ब) वियोग

(२) उत्साह व क्रोध

(३) भय

(४) आश्चर्य

(५) शोक

(६) राम या निर्बैराव

(१) शृंगार रति

(अ) संयोग—जायसी में संयोग शृंगार का पर्याप्त वर्णन है। उनके सर्वाधिक बिम्ब संयोग और उत्सुकता रूपों से ही सम्बन्धित हैं। जायसी ने अधिकतर बिम्ब रूप वर्णन में किये हैं। नक्षत्रिण वर्णन सांगोपांग रूप में परमावत में केवल दो बार है पर झुटपुट रूप में कितनी ही जगह परमावती के सौन्दर्य की चर्चा हुई है। रूप वर्णन में जायसी ने पर्याप्त विचारमय वर्णन किये हैं पर अधिकतर उपमान परम्परागत होने के कारण अथवा सौन्दर्य को चुके हैं और अथवा वह मर्मस्पर्शी नहीं कहे जा सकते हैं ऐसे उपमानों की संस्था जायसी में बहुत है। यहाँ जायसी ने वर्णन और शैली दोनों ही दृष्टियों से प्राचीन परम्परा का निर्बाह किया है। यद्यपि इन दोनों ही नक्षत्रिण वर्णनों के परचाद् जायसी ने उन्हें पूर्णतः बिम्बात्मक कहा है

बुढ़ सुरंग सुरति बह कही, चित मह लाय बिम्ब होइ रही

(११२)

पर सब तो यह है कि रूप बचन के यही दोनों स्वयं बिम्ब की दृष्टि से सबसे कम सफल हैं। मूटपुट रूप में वहाँ बिंब बचन हुआ है वहाँ यह कही अधिक व्यंजक मर्मोत्पत्ती और सुन्दर है। भव-सल बर्नन में सम्भवतः जायसी केबस परम्परा का निर्वाह कर रहे थे वही म भी और बर्नन में भी। उनके हृदय की राधात्मकता का परिचय यद्यपि रूप में उनके अन्य रूप बर्नन ही देते हैं।

रूप बर्नन में जायसी की दृष्टि अधिकतर प्राचीन रही है। वही संजम मेम है सन केस है, मुल कमल है आदि आदि। भग प्रत्यय के यह पृथक-पृथक बर्नन नवीनता के प्रभाव में अधिक हृदयप्राही नहीं जान पड़ते। पर वहाँ प्रति रूप और रूप का मान्य अधिक बन पड़ा है वहाँ यह बचन भी सुन्दर हो गये हैं यथा

‘होइ अधिमार बीसु बन लीके अबहि खोर यहि प्रापु,

केस काल होइ कत में बिले संबरि संबरि जिय जापु

(४७० ८-९)

इसी प्रकार स्नान करते समय दास का पूरा बिम्ब दिया गया है। मूटपुट रूप के बर्नन में भक्त श्लेषों का सौन्दर्य प्रजनन प्रसन्न नहीं परसा गया है भरतु समय रूप को प्रस्तुत किया गया है। जैसे सौन्दर्य और तेज की अधिकता की अनुभूति कपने के लिए प्रयुक्त यह बिम्ब

ऊपत सुर बस बेसिऊ, चांद छाँपे लेहि रूप ।

बैते सब चाहि छपि पशुमावति क रूप ।

(११ ८-९)

इसी प्रकार रानी के सौन्दर्य और राजा की धारण्य विधित भावना को प्रकट करने वाला यह बिम्ब बड़ा व्यंजक सिद्ध हुआ है

भै निजि बनि जस तति परगती, रामें बेजि पुहुमि फिर बली

(१२१ १)

जायसी ने रूप बर्नन के बिंब देते दिये हैं जो प्रकाश से मुक्त, या जीवन में भी भाग्य की सृष्टि करने वाले और सुन्दर हैं।

संभाव बर्नन में जायसी ने सर्वाधिक स्पष्ट बिंब प्रिय के पुनर्मिलन के प्रसन्न पर दिए हैं। विद्योम से हृदय नारी जब त्रिप धावसन का मुल पाती है तो जायसी का हृदय नाच उठता है जैसे बसती हुई पृथ्वी पर वर्षा की बूँदें देलकर मयूर

नापवती बह भयन बनावा वीसो तपन बरला रिनु धावा

(४२३ १)

ध्यान देने की बात है कि जायसी प्रथम मिलन पर भी इतने सुन्दर बिंब नहीं दे पाये हैं जिसने पुनर्मिलन पर। उन्होंने स्पष्ट कहा है ‘अधिक मोह को मिले बिछोड़ी’

पुनर्मिलन का एक भी धक्का बायसी ने नहीं छोड़ा है। राजा के पुनः चितौड़ कीट जाने के धक्का पर नाग' शब्द के अर्थ द्वारा बायसी ने नाबमठी के कुल मपी केंचुमी के उतर जाने की सुन्दर उपमा भी है

मही जो मुह मागिन बसि तथा जिह पाये तन महु भै तथा ।

सब दुख बत केंचुन गा झूरी होइ नितरी जनु बीर बहुरी ॥

(४२३ ५)

बसन्त ऋतु में पद्मावती के पूर्वराग के कारण धीर रत्नसम की धातुस प्रतीक्षा की पूर्ति के कारण मिलन बेसा में अपूर्व धानन्द की सृष्टि हुई है जैसे बसन्त में कुल के प्रतीक पतझड़ के बीट जाने पर सुख के लाल-लाल कोमल-कोमल पत्तन निकल आये हैं

पियर पात कुल अरे निपाते सस पाती अपने होइ रात

(१८३ ७)

बीजन में कुल की अपार व्याख्या के बाद मिलने वाली धानन्दरमक अनुभूति के बिचने रूप हो सकते हैं बायसी ने वह सभी लिए हैं। गहरी काली रात के बाद सुबह का प्रकाश सिए निकलने वाला दिन भी उसका उपमान है धीर धीम्न की उपन महुने के बाव पावस की छाँह पान वाली पृथ्वी भी

धव लगि सखी पवन हा ताता धातु लागि मोहे सैतल याता

महि हुलसी वास पावस छाहाँ तस हुलास अपना जिय माहा

(४२४ १०)

इसी प्रकार धीम्न की खाला से पटते शरीर में बर्षा में पुनः आ जाने वाली धवाह पल राधि पधिर्यी की बही बीड़ धीर कोसाहस ध्वनि ताप में बसती हुई बेल का पानी पाकर पत्तनित हो उठना सभी इस धानन्दानुभूति को अभिव्यक्त करने के साधन हुए हैं। राजा का पुनः सौन्दर धाना धापाड़ मास का धागमन-सा प्रतीत होता है जब पृथ्वी धानन्द से भर जाती है। सुख की बर्षा होने लगती है। राजा ने नाबमठी की गुलामक अनुभूति को बड़ा बाबगी ने धापाड़ मास के पूरे रूपक में व्यक्त किया है।

पलटा के पुस्का रब राजा अस धताड़ धार्थ बर ताबा

बेकि तो उत्र भई बन छाहाँ हसि मेघ घीनए बघ माहा,

मेन पुरि धाये धन घोरा रहत बाड बरिले बहु घोरा

बरती सरय धव होइ धैराबा भरपरि पोकर ताल तलपदा

बहुक उठा सब भुमिया नामा ठाबहिं ठाँव बूब धस जामा

बाहुर मोर कोकिला बोले हेत धलोव बीम तब बोले

(४२३ २-७)

हीरामन सीता भी पद्मावती को प्रिय है उनके धागमन से भी रानी को अपूर्व हर्ष की प्राप्ति होती है

कठ साग लीं हूँसुर रोइ प्रपिक मोहू जी भिते बिछोही
 प्राणि हुमी कुल जो रंगोइ, मनगू घाइ बुझा होइ नीरू
 लेहि क उतर पनुमावलि कहु बिछुरन कुल हिये भरि रहा
 मिला जो घाए हिये बुज नग बहु कुल नैन नीर होइ डरा
 बिछुरंता जो मेरिये लो जाने जेहु नेहु
 सुख सुहेला सम्पद कुल सरे बसु मैहु

(१७५ १६)

कुल के पदवाट सुख के व्यंजक इन बिम्बों में वीष्म के पदवाट जाने वाली बर्षा ऋतु के सामान्य की धनुमुक्ति देने वाले बिम्ब सर्वाधिक है। चाहे वह प्रापाङ्क मास के समग्र रूप में घाय हूँ या भूमि पल्लव धारि क पृथक धरों के रूप में। मिसल के प्रस्तुत बर्षनों को भी जायसी ने रंग संघ स्पर्ष की धनुमुक्ति देकर बिम्बात्मक बनाया है।

रिनु बाबल बनसै पिउ पाषा छाजन भावों प्रपिक सोहवा
 कोरिस बैन पांलि बाण छुटी अनि निसरी जेऊँ बीर बहूनी
 बनसै बिजु बरिसि बस सोना बाहुर मोर सबह सुठि लोना
 रंग राती पिय संघ निति जापी गरजै गमन चोक पर लापी
 सीतल बू व ऊंच बीबारा हरिअर सब देखिअ ससारा

(३३७ १२)

जायसी के सामीप्य हृदय की सुख की सबसे अधिक धनुमुक्ति बर्षा ऋतु ही होती है। जबि ने उध बार बार प्रस्तुत किया है। इन प्रकार स्पष्ट है कि जायसी ने समय गृहवार की सभी सुखात्मक धनुमुक्तियों को बिम्ब द्वारा व्यञ्जित किया है। पदमावत में शारीरिक संयोग की प्रकल्पों से अधिक राजा रानी के हृदय की प्रसन्नता और सुख के प्राकृतिक भावों को बिम्बों द्वारा धनुभूत कराया गया है। स्व-सौन्दर्य की अपरिमितता भी जायसी को आकर्षित करती है। जायसी इसको समग्र रूप में धरन्त मुन्दर बिम्बों द्वारा व्यञ्जित करते हैं। हृदय की प्रान्तरिक सुखात्मक धनुमुक्तियों में बियोग के पदवाट मिलन कुल के पदवाट मुल की धनुमुक्ति जायसी को सबसे अधिक आकर्षित करती है। इसकी धनुमुक्ति कराने के लिए जायसी ने प्रापाङ्क मास में पृथ्वी के पस्त बिह होने बया में सरोवर के पुनः भर जाने सूपी लता के पस्तबिह हो जाने प्रादि के धरन्त व्यंजक बिब रिये हैं।

बियोग—जायसी का बियोग बचन हिन्दी साहित्य की प्रथितीय बरतु है। जबि वा हृदय जितना बियोग बागुन करने में रमा है उतना न गृहवार में न समय रिमी रग या भाव में न धरने पिदान्तों की अभिव्यक्ति में ही। नायमत्री का बिबहु बर्षन जायसी के हृदय की सामान्यक धनुमुक्ति को प्रकट करने के लिए चक्रेता ही पर्याप्त है। बियोग के प्रति बिषय जबि होने के कारण जायसी ने बियोग क बिम्बों में

अपूर्व समगता बिसाई है यह अथक धीर घड़े संवर्धनत है । बिरह की सारी अग्नि व्यक्ति उसके बिंबों में ही हुई है । बिरह में जायसी की दृष्टि एकाकी अवस्था बगवता पीड़ा निराशा धीर उबल भावि की घोर अधिक मई है । एकाकीपन की अनुभूति धीर अत्यन्तता को बेने वाला सुन्दर बिम्ब सारस का है । जो लोर कपासों धीर साहित्यिक कविता में सब तक एवैव साव बोड़े से रहने वाला पक्षी माना जाता है और अकेला जीवित नहीं रह सकता । जायसी ने अकेले सारस की उपमा लेकर एकाकीपन धीर अत्यन्तता की व्यञ्जना करवाई है ।

सारस जोरी किमि हरी भारि गयऊ किम लखि ।

भुरि भुरि पञ्जरि बनि भई बिरह क लापौ अगि ।

(१४१ ५-६)

असहाय स्थित की अनुभूति समुद्र में डूबते व्यक्ति से व्यञ्जित की गई है बिरहके लिए तिनके का सहाय भी नहीं जो केवल पुकार कर प्रिय की प्रतीक्षा ही करता है

सरी बसाह पाइ हौं जोवन जबनि मतीर

तोहि बितवी चारउ बिसि की गहि ताबे तीर

(१७ ५-६)

जायसी के एकाकीपन की व्यञ्जना हुए पर पड़ी रस्ती से भीकी गई है जिसे कोई उठा कर पानी लींचने वाला नहीं है ।

बिरह की अलग धीर बगवता भी जायसी को बहुत आकृष्ट करती है । प्रीत्य की उपम से सरोवर का फटता हृदय मूना तट निर्जन आतावरण निर्भीक कोसाहल बड़े बिरहिली का आभास करते हैं । प्रिय बियोग में परमावृत्ती कइती है

धीर मन्मीर कहां हों पिपा तुम्ह बिनु फार सरोवर हिया

पयेऊ हिराइ बिरह के हाबा अलत सरोवर नीमू न सापा

अरत जो बंछि केनि के नीरा नीर मई कोऊ ब्राव न तीरा

कंसल सुबि पसुड़ी बिहरली कम कम होइ निनि छार उड़ानी

बिरह रैत कंचनु तन लावा चुन चुन के लोइ किभावा

कनक लो कमऊन होइ बिहराई, पिय वं छार समेटे धाई

बिरह पवन यह छार सरीष छारु भाणि निना बहु बीब ।

(१५२, १-७)

बिरह में निरन्तर बसते रहना जायसी को बीपक की निरन्तर बसती रहने वाली आतिका प्रतीत होता है । धर्म धाम्य के कारण यह बिम्ब बड़ा व्यञ्जक है । सास रंग अनुपम का प्रतीक भी है । इस धपार अलन में बिपत्ति की निरन्तरता की भावना जायसी ने जाड़ में भुगतने के बिम्ब से की है जो बगवत को छोड़ कर भी फिर से जाड़ में आ बिरता है मानी बगव होने में ही महामुक्त है । जायसी इस बिम्ब से जायसी की पीड़ा की व्यञ्जना करते हैं ।

बायसी की बिन्ब मोबना

लायऊ बरै बरै बस भाव फिर फिर भ्रु बसि तबहि न बाव
(३२४ २)

बाघ होने और बसने के लिए फलानुन मास में होली का बिन्ब भी दिया गया है

होइ फामु मलि बांभरि जोरी, बिरह बराइ बीहू बस होरी
(३३२ १)

बिरह की बाहू के साथ साथ तड़पन का बिन्ब देने के लिए बायसी ने बड़ाह में तड़पते तेल का रूपक दिया है

तलफ तेल करारहू ज़िमि, इमि तलफ तेहि नीर
बहू जो मती गिरि पेन का बू ब संमुब समीर ।
(३३४ ८-९)

बसुप जीन्ते तेल से पीड़ा और घमसू जलन की घण्टी घमिष्यंजना हुई है बिरह में सुख के समाप्त हो जाने का बिन्ब पस्तबिब बेल के मूलेपन से दिया गया है।

बायसी ने बिरह में बिरहीनी के बदन को भी बड़ा महत्व दिया है। घामन और माबों मास में तो प्रकृति का सहारा पाकर यह रूप्यना पूब भाई है बरिसै मया सकोरि सकोरो मोर बुइ नन बुबहि बस घोरी कभकि बीज घन गरजि तरासा बिरह बाल होइ बिक परासा
(३४६ २ ६)

बर में टपकता हुआ पानी ऐसा समझा है मानो नेत्र ही बू रहे हों। 'माहूट नीर के साथ नागमती के नेत्र भी बरसते ही रहते हैं।

नेन बुबहि जल माहूट नीक
इदहि बू ब परहि बस घोला बिरह पबन होइ मारे सोला
कहिंक सिपार को पहरि पटोरा विज गहि हार रही होइ डोरा ।
(३२१ ७-९)

बायसी ने घामुषों के निरन्तर बहते रहने के लिए 'रहू' की परिवर्तों से नेत्रों का साम्य देना है जो निरन्तर पानी उबेलती ही रहती हैं।

मये के सैन रहूँट की घरो भरी ते डारी छुटी भरी
(४१ ७)

बिरह में त्रिप की प्रतीका में रह नारी की उपमा घपक प्रतीका के बम के बारन सीप और बाउब में ही मई है जो समन जलों का त्याग करने स्वाति ननब की एक बू ब के लिए घपार पीड़ा रहने हैं घनीम प्रतीका बरते हैं। इममें घनभ्यता की घदमुन ब्यंजना है

“जब सवि पीड मिलै तोहि, साधु पैम सँ पीर
 जैसे सीप सेबाति कहँ तपी समु ब मंस नीर ।

(१७१, ८-९)

बिद्योप में निराशा की व्यंजना भी कवि ने की है । निराशा का प्रतीक रूप धर्मकार आमसी में अनेक बार आया है

केइ यह बसत बसंत / उजारा प(र) सो जाँद धरंवा सँ तारा
 पव तेहि बिनु जय भा धरंभूपा वह सुख छाँह बरौ हँ बूपा ।

(१९९ ५ ६)

इसके प्रतिरिक्त कंचन काया का काँच का मोती या कौड़ी बन जाना भी पुच्छता और निस्सारता का प्रतीक है ।

संग सँ नयऊ रतन सब छोटी, कंचन क्या काँच सँ पोती

(५८३ ३)

और

पहिक पदारथ पनुमिती रानी पियु बिनु भै कौड़ी बर बानी ।

(५८३ २)

पीला पत्र भा छाँदा रहित पत्र निराशा और बेवना का व्यंजक है । मायमती कहती है :

तन बस फियर पल भा मोरा बिरह न छई पवन होइ क्षोरा

(३२२ २)

पत्ते के टूटकर गिरने का समझ बिना भी आमसी ने किया है । टूटा हुआ पत्ता फिर बनी न बुझ सकने की प्रथाह निराशा से पीड़ित है वही बसा मायमती की है जिसको बिरह पवन ने अपने शिव रूपी डाल से पुष्पक कर दिया है ।

धाबा पील बिछोव का पल परा बैकरार

तरिवर तई जो बूरि सँ सार्य कैहि की डार ।'

(३९९ ८-९)

बिद्योप के सभी विन्ध आमसी की उरठल कल्पना का परिचय देते हैं । बिद्योप ने कवि को विद्येय रूप से घाटप्ट किया है बिद्योप में हृदय की पीड़ा निराशा श्रम की नगमीरता व अनन्यता एवं
 की वृत्ता आदि को सारत सुने सरोबर
 बासिका शत्रु में मुनते जाने रहें
 धर्मकार, पीले पत्ते आदि से व्यञ्जित

दिष्ट

१०।

। तथा

३

य

कवि की मूर्ति

विषयक

जायसी की बिम्ब योजना

बीरता की प्रतिमूर्ति गोप बाबल राम पल के प्रति शोधित भी हैं और मुद्र करने के लिए उत्साहित भी। यद्यपि कहीं कहीं शोध भाव का प्रथम स वर्णन भी हुआ है परन्तु प्रबिन्धों में बहु बीर उस प्रथम उल्हाह भाव के साथ ही प्राया है।

शोध भाव की प्रतिमूर्ति जायसी में बहुत कम हुई है। जायसी ने इसके लिए एक ही बिम्ब सूर्य के जल उठने का दिया है। एकदम गम हो जाने और अपनी बाहक किरणों से सबको मुनसान के कारण यह बिम्ब बढ़ा सकल हुआ है शोधित प्राह के लिए जायसी ने यही रूपक दिया है

सुनि कं रति राता सुस्तापु, जेते विठे जेठ कर मनु
सहसो कर रोष तस मय जेहि रिति बैखे सो रिति बर।

(४२४ ४५)

शोधित राजा की जयमा गरजते बाबल से भी की पर्य है जो मार्मिक है। शोधित व्यक्ति गरजता ही है कोमता नहीं है।

बीर भाव प्रथम उल्हाह की प्रतिमूर्ति मुद्र वर्णनों में हुई है। बीर योद्धा उल्हाह की मूर्ति है जो पतंग की भांति शक्ति की घोर प्रवृत्त बद्ध है। यहा बीर यादार्थों का साहस पतंग के समान वर्णित है

हिक्कुह केर पतंग कर मेबा, बीरं परं प्राय बहु देबा

(३०२ ३)

उनका उल्हाह मुद्रस्थल में मनी भांति देला जा सकता है वहां बहु पतंगघर और बसन्त की भांति समाप्त हो-होकर पुन उल्लस हो जात है।

साल बाइ पाबहि हुइ साबा,
फरहि हरहि अपने नी सापा

(३२२ ३)

बीर योद्धा बिना मूंड के मजमल हाथी है प्रथम विठ है जो अपने राम पर ममानक प्राथम्य करत है। यह बिम्ब उनके बन और बीरता को व्यञ्जित करता है। प्रपार मेला के लिए जायसी ने राजि का बिम्ब दिया है। एक तो मूल प्रादि क उद्गम से सूर्य स्वयं ही छिन जाता है और राजि सी प्रतीत होता है साथ ही बाले कामे हाथी भी प्रन्धे को बनाया देत हैं। जायसी भी सेना की समजता और अनारता मूर्तित करने के कारण उसे राजि बहते हैं।

प्राज बटक सुतवानी पपन छना मजि मीछ
बलत प्राब बय करी होत प्राब दिन सांछ

(१२७, ८-९)

मुद्र स्थल के वर्णनों में जायसी ने प्राधिकतर बर्णों का रूपक दिया है। प्रमा प्राज बर्णों प्रथम प्रादि के बिम्ब जायसी में मय का संभार करते हैं। प्रथमल ममानक बाबाबलव और मय का संभार करने के कारण यह रूपक अत्यंत कड़े या सखी है मय

बेसों घाबि के रूपक में बर्नसाम्य कुछ भी न होने के कारण व्यञ्जकता का प्रभाव है। सङ्घ का बमकना पोलीं का बरसना, नगाड़े का बजना घाबि से बिम्बनी बर्पा मेघ घाबि का बाताबरन सहृष ही उपस्थित हो जाता है।

बमकी बीसु होइ उजियारा बेरौह सिर परे होइ मुठ करार
सिज मेघ घस कुह बिचि पार्ब करय बों बीब बीसु घस बाबै
बरिसै लंक धांसु होइ कौरी बस बरिसै सावन घोर भाबौ
दूटाह कु त पराह तरवारी धी गोला घोसा बस भारी।

(५१८ १९)

कुठ बर्षनों में इसी प्रकार के रूपक कम से कम १७ बार प्राये हैं। प्रलय के रूपक भी जायसी ने बिये हैं जिनमें मय संचार करने की धीर भी अधिक क्षमता है।

तब सरखा परखा बरिबंदा, जानहु सैर केर मुष बंदा।
कीप सुरज मेसैसि तस बाबा जानहुं परी परबत सिर गाबा
ठाठर दूठ दूठ सिर तासु सिऊ सुमेर बनु दूठ भकासु
बमक उठा सब सरग बताक, फिरि ने बीठि मधौ बंसाए
भा परसौ सखुं घस जाना, काड़ा करय सरप नियरना
तस मारेसि सिऊं बोरे कपटा परती फाटि सिस फज फाटा

(५१७ १९)

कुठ बर्षन में होसी का बर्षन भी जायसी ने किया है। यहाँ बीरों ने रस की होसी खेती है। पर उस्ताह धीर श्रेष के साथ यह शृंगारमयी कल्पना भाव का विशेष उपकार नहीं कर पाई है। यहाँ धीर रस में शृंगार का बर्षन प्रप्रस्तुत रूप में माता है वहाँ उत्कृष्ट नहीं कहा जा सकता। केवल रणों का साम्य ही बिम्ब की श्रेष्ठता प्रमाणित नहीं कर सकता। भाव की व्यञ्जना धीर उपकार उसका प्रथम बर्ष है।

समष्टि में उस्ताह व श्रेष भावों की धीर कवि की दृष्टि अधिक नहीं गई है। कवि उनके सामान्य रूप में सामान्य धर्मों को ही देख पाया है। श्रेष में प्रव्यभिक्त हो घठने व भयभीत करने का धर्म उस्ताह की दृढ़ता व स्थिरता ही कवि को विशेष आकृष्ट कर सकी है। इनके लिए कवि ने सूर्य पतंग घाबि के रूपक दिए हैं। बर्षों के रूपकों में कुछ स्वल का पूरा विश्व स्पष्ट हो गया है जो कवि के कुछ विषयक सब की अनुसूति का चोठक है।

(३) मय भाव (भयानक रस)

जायसी में भयानक रस पद्यपि नहीं है परन्तु मय भाव की प्रविभ्यक्ति प्रबल है। समुद्र की उगत हिलोरों कवि में मय का संचार करती है। कुछ बर्षन में वह दाह की भयानक बिनाघकारी रोगा के लिए यही विश्व उपमान रूप से लाया था। प्रत्यक्ष समुद्र बर्षन में ही जायसी के भय की ही प्रविभ्यक्ति है।

जाम्बसी की बिम्ब योजना

पुनि किन्निकिना समु व में धाये, किलकिल बेक सबन डर पाय ।
गा बीरब बहु बेकि हिलोरा, बनु अकास दूई बहु धोरा
छठ लहस परबत की मारि, होइ फिर जोजन लख ताई
पारती नेत सरय भेहि बाका, सकस समु व जानहु भा ठाया
वी अकसाज सबहि छै बेकि समु व के बाकि
निघर होत बनु सीसे, रहा नेत अत कादि

(११५ १६)

समुद्र की उत्तम हिलोरे, परंत सवुध बड़े-बड़े बीब भाकाय को सूती सहूरे
जसमें मय की सर्बना करती है । मंवर में फंसी नाब जब कुम्हार के बाक की भाँति
बूमती है तब भी मय की अकसारना हो जाती है
राकस प्राणि तहाँ के छरे, बोहित मंवर सक मंह परे,
किरै लाग बोहित अत ताई, बनु कुम्हार परि बाक पिराई

(१६४ १-७)

समुद्र बंड का राकस भी मय की सृष्टि करता है चिछ क घरीर बाला
पंथियारे मेक बैसा राकस जब हसता है तो मानो स्वर्न टूट रहा है ऐसी अमानक
अनि होती है
पुनि बाजर राकस तब हुंता, जानहु इति सरग मुह बंता

(१६५, १)

उसका छम पूर्य कपट अकहार मछली को देखकर अपने की तरह बासाकी
स पत कर घाना भी मय की सृष्टि करते हैं
मंछ बेदि बंते बप धाबा टोइ होइ मुह पांभ उठाबा
प्राइ निघर में कोहु कोहाक, पूछा बेम कुसल बेबहाक

(१६६ १९)

मलाउहीन का कोप और उसका भाकमय भी मय की सृष्टि करन में समर्प
है । मूर्त के समान लच्छ मलाउहीन के समस गुल का सरोबर सुक हो जाता है घीर
राजा भीन की भाँति बिकल होने लगता है । यहाँ राजा की बिकलता को मछली के
हाथ पूर्ण किया गया है
तहाँ जाइ यह कबस जाम्बसी जहाँ मलाउहीन
कुनि के बड़ा भागु होइ रतन होइ बल भीन

(१६९ ८-९)

पाह के पात्रमक से समस्त राजा पत्ते की भाँति काँपते हैं
बाक्य गड़ पड़पति सब कापि धो डोले अत पात
बन कही बोनि सोइ भा बातसाँह कर एत ।

(१७० ८-९)

धम की सृष्टि में जायसी ने एक धीर तो निर्बल धीर सक्तिहीन वस्तु को प्रस्तुत किया है धीर दूसरी धीर उसके विरोध में निबयी धीर सक्तिवाली को। जायसी के धम भाव की अभिव्यक्ति करने वाले विम्ब उसके मानस का विवेचन भी करते हैं। उसके समुद्र के भयानक स्वप्न का वर्णन इसका प्रमाण है।

(४) आश्चर्य भाव (प्रसूत रस)

जायसी में प्रसूत रस की व्यंजना भी नहीं के बराबर है। आश्चर्य भाव प्रबन्ध एक दो स्पर्शों पर आ गया है। आश्चर्य की सबसे सुन्दर धीर निर्बल अभिव्यक्ति राधक-वैतन के कथन में है। पद्मानती के जिस अपार सौन्दर्य की बहु कल्पना भी न कर सकता था उसको एक दिन प्रत्यक्ष पाकर उसका हृदय आश्चर्य से भर उठा। जायसी उसकी अवस्था का वर्णन इस प्रकार करते हैं।

आबा राधो वैतनि बौराहार के पास

घसी न जाने हिरई बिहारी बस प्रकास

(४२० ८-९)

बिबसी धीर आकाश पद्मावती धीर महल के प्रतीक हैं। इसमें प्रपूर्व सौन्दर्य सैज धीर पृष्ठभूमि की जैसी सुन्दर अभिव्यंजना हुई है उसने आश्चर्य भाव को प्रभावशाली बना दिया है। अन्य स्पर्शों जैसे गढ़ वर्णन पद्मावती के विमान के वर्णन प्रादि में भी आश्चर्य की झलक मिलती है। बसते हुए पेड़ को देखकर पक्षियों के आश्चर्य का भी उल्लेख जायसी ने किया है।

राजा के आश्चर्य व चौकने की अभिव्यक्ति मिसल जग में है वहाँ जायसी ने राजा को आश्चर्य कहा है जो भाव की व्यंजना तीव्र रूप में करता है। प्रसीम प्रतीका के परचाह् चातक स्वाति की बूद पाठा है पर बहु बूँद भी उसके हाथ से छिन जाए एक उसकी लूँकीकाहूट धीर आश्चर्य राजा की माँति ही होवा जिसकी घनेक मलों से प्राप्त की हुई प्रेमिका को सखिनाँ छिया बैरी है

सुरज लपत सैज सी पाई माँति छेरि सति सखी छिपाई

बनु आधिक मुख हुत जो स्वाति राजहि बरबौहूट लेहि माँति

(२६२ १४)

यहाँ राजा की आश्चर्य जड़ता को चातक की अवस्था से चित्रित किया गया है। समष्टि में आश्चर्य भाव की अभिव्यक्ति जायसी में बहुत कम हुई है। पद्मावति के रूप को देखकर राधक-वैतन धीर राजा रत्नसम के आश्चर्य की अभिव्यक्ति प्रबन्ध विम्बारमक रूप में हुई है जिसमें प्रथम में प्रस्तुत वर्णन में विम्बात्मक अभिव्यक्ति हुई है धीर द्वितीय में चातक की अवस्था के द्वारा भाव को सृष्टित किया गया है।

(५) शोक भाव (करुण रस)

जायसी में करुणा अथवा शोक की भावना प्रधान है। वह प्रेम पीर का पायक प्रत्यक्षारी कवि है इसी कारण उसका जीवन में कष्टों को प्रधानता देना बहुत संभव

पत्नी की बिम्ब योजना

शरीर होता है। जायसी ने राजा के नगर को छोड़कर विदोगी बन कर जाने पर करछा की सुन्दर ब्यंजना की है। शोक की इस भावना में निराशा और दुःख की प्रभावता है। अन्तिम दृश्य में भी करछा एवं शोक की अभिव्यक्ति है। दोनों ही स्थलों पर निराशा और दुःख प्रभाव रहा है। जायसी ने अपने बहु प्रयुक्त बिम्ब-सूर्यास्त धारि जिससे उन्होंने सर्वत्र निराशा दुःख पीड़ा भय धारि की ब्यंजना की है यहाँ भी प्रयुक्त किए हैं। राजा के जाने पर सूने नगर में संवेरा छा जाता है। माता का हृदय दुःख की काशिका से भर जाता है

रोवै माता न बहुई बारा रतन बला बय मा धरियारा
(१३३ ?)

बीबन का सुप्रभात राजा तपी सूर्य के अस्त होने से संवेरे में बदल जाता है
राज पाठ हर परगह सय दुग्ह सो उरियारा
बैठ भोग रस मानहुँ कै न चलहुँ धरियारा

राजा के जाने से मानो दुःख का नाश हो रहा था यह सब बिम्ब निराशा ब्यथा और पीड़ा के प्रतीक हैं और जायसी न कई जगह उन्हें प्रयुक्त किया है। अन्तिम दृश्य में वहाँ रत्नसेन की मृत्यु और राजियों के विनाश एवं सती होने का वर्णन है वहाँ भी शोक की अन्धरी ब्यंजना हुई है वहाँ भी कवि ने अल्हरे, अमावस धारि के बिम्ब प्रतिक रिये हैं।

सूरज छया रैन होइ मई, पूर्वब सति सो अमावस भई ।
कोरे बेस मोति तर छूटे जामहु रन नखत सब टूटे
छेदुर परा को तीस जघारो धारि लागि जनु जग धरियारा
(१४८ = १)

राजा की मृत्यु पर सूर्य के आसोप हो जान का बिम्ब दिया गया है
माहु सूर दिन धंयुबा धानु रनि सति बूझि ।
धाहु नाहि जिउ बीजिउ धाहु धारि हम बूझि ॥
(१४९ = १)

राजा के बंधी होने पर पद्मावती क शोक और वैराग्य की अभिव्यक्ति के लिए भी यही बिम्ब धारि है
नेन यपन रवि बिनु धरियारे सति मुज धीमु इत जनु तारे
जग धरियार महुन दिन बरा बज सति सति नछतहु निशि भरा
(१८८ = १)

इसके अतिरिक्त पद्मावती की बिना धारि अग्य स्थलों पर भी करछा की अभिव्यक्ति है। पद्मावती का कपचित्र जायसी ने इस प्रकार दिया है जो करछा की चबत्तारवा करता है

बहुतर भेन घाए मरि घासू छाड़ब यह सिघल कबिसासू
 छाड़िऊ नैहर बसिऊं बिछोई ऐहि रे बिबस में होतहि रोई
 (१७८ २१)

यहाँ प्रस्तुत में कबचा की व्यंजना है।

स्पष्ट है कि बायसी में करण भाव की सम्यक अभिव्यंजना की है। कबचा कवि को प्रिय है। इसी कारण वह विद्योप विद्या यादि स्वर्णों पर बिरह की अभिव्यंजना न करके करणा व साक की अभिव्यक्ति करता है। प्रस्तुत रूप में भी इसकी अभिव्यक्ति हुई है। उपमानों में सामान्यतः घाघकार को बायसी में शोक और कबचा की अभिव्यंजना के लिए चुना है जो बड़ा सफल हुआ है।

(६) निर्वेद या शम भाव (शांत रस)

बायसी में धार्मिक पक्ष की प्रधानता के कारण शांत रस कबचा निर्वेद भाव की प्रधानता है। परन्तु कवि के रहस्यवादी और धार्मिक अभिक्रमों के कारण साहित्यिक रस का स्वरूप बहुत कुछ विभ्रंशित हो गया है। अनेक बिम्ब जो एक और शम भाव की अभिव्यंजना करते हैं दूसरी ओर बायसी के सिद्धान्तों का प्रतिपादन भी करते हैं। कहना न होना कि ऐसे स्वर्णों पर स्वभावतः रस का साहित्यिक स्वरूप जीव हो गया है और कवि की रहस्यवादिता धार्मिकता एवं सिद्धान्त विवेचन प्रमुख हो गया है। अक्षरगत साक्षरी क्रम के अधिकतर बिम्ब ऐसे ही हैं। रहस्यवाद की समस्त चकित्या न शम भाव को ही प्रधानता है। पर सिद्धान्त पक्ष प्रधान होने के कारण हम उन बिम्बों की जहाँ सिद्धान्तों के अध्ययन में करेंगे। यहाँ पर कुछ उन बिम्बों को लिया जायगा जिनसे बायसी के सिद्धान्तों का जरा पूरा सम्बन्ध है।

कवि के निर्वेद की अभिव्यक्ति शोक प्रसन्नता पर अधिकतर हुई है। राजा की मृत्यु के समय शोक प्रसन्नता पर कवि ने राजा को मिलायी कहा है जिससे पाठ कुछ गाँठ की पुँजी नहीं है रतन कीड़ी के सबूत हीन हो गया है। यहाँ कवि मिलायी के द्वारा राजा की हीनता व सांसारिकता (द्रव्य) की प्रसारता को प्रकट करता है।

हाब भ्यारि जत जला बुबारी राजा राज हीन जला मिलायी
 जब हुत जोब रतन सब कहा या बिन जिय कोड़ि न सहा
 (१४७ १-७)

यहाँ परिस्थिति गत वैयम्ब विचार-निर्वेद की अभिव्यक्ति हुई है। रतन और कीड़ी राजा और मिलायी के भिन्न भिन्न स्वरूपों को हमारे सामने प्रत्यक्ष करते हैं। जीवन की तुच्छता एवं निस्सारता इस बिम्ब से व्यंजित है।

इसी प्रकार राजा के बूढ़े त्वाग पर शम की अभिव्यक्ति राजा के द्वारा कराई गई है। संसार की प्रसारता एवं असत्यता को लक्षित कर राजा जीवन को ठनक देर सुखपूर्वक देखा गया स्वप्न कहता है जो पीछे दुःख के ही प्रबोध छोड़ जाता है

बायसी की बिम्ब योजना

यह संसार रूपत कर लेना बिपूर गए जानहु नहीं देना (१३२ २)

पना और गजपति के सवार में भी इसी प्रकार राम की प्रतिष्ठा है
वेम संघ को यहुवे पारा बहुरि न प्राइ मिलै देहि छारा

देहि बीबन के घास का बास सपना तिल घासु
मनुमर गिअतहि बें मरहि देहि पुरव कहु सासु । (१४६ ८६)

इसी प्रकार बायसी के राम माव के ब्यजक बिम्ब उसकी कदएा मारा एवं
घाँठ रस बिपयक रचि को प्रसिद्ध करत है ।

समष्टि में भावों में प्रयुक्त बिम्ब बायसी की माव बिपयक रचि और प्राकपंच
को प्रकट करते हैं । बायसी को प्रेम से सबसे अधिक भावित किया है । उसके संयोग
और बियोग—दोनों ही एक कवि को प्रिय हैं । पर उसको बियोग और बियोग के
परचाठ मिलने वाला संयोग सबसे अधिक भावित कर गया है । प्रायः भावों में
कदना और निबंद भी उसके हृदय के अधिक निबंद हैं । प्रायः उस्ताह प्रावि का उसके
हृदय से चोड़ा ही परिचय था । संयोग और बियोग एक करना व राम से ही कवि ने
बिम्ब योजना अधिक ब्यजक व मार्मिक की है । साथ ही इन भावों के बिम्ब भी काव्य
में अधिक हैं । भाव को स्पष्ट करने वाले बिम्बों में सर्वाधिक सत्या संयोग के बिम्बों
की है । परन्तु मार्मिकता की दृष्टि से बियोग के बिम्ब अधिक सफल हैं । संस्था में भी
बहु संयोग से कुछ ही कम हैं । इससे प्रतीत होता है कि बियोग को कवि के हृदय का
सबसे अधिक सामीप्य और नैकट्य प्राप्त था और इसके बाद संयोग व राम को । प्रायः
माव उसके सम्मुख यौन से हो गए हैं ।

(४) बिम्ब की प्रकृति व प्राधार पर

बिम्बों की प्रकृति के प्राधार पर भी कवि की रचि का बिभेयन किया जा
सकता है । बिम्बों का स्वभाव व प्राधार पर वर्गीकरण भी एक रावक विद्या है ।
इसमें बिम्बों की मूर्तता और समूर्तता का अध्ययन किया जा सकता है किसी कवि
की दृष्टि मूल बिम्बों पर अधिक जाती है और किसी की समूर्तता की ओर । यह
बिबन कवि की रचि और बीबन दृष्टि का भी स्पष्ट करता है ।

साधारणतः यह बात सभी का प्रायः है कि पारिकालीन और मध्यकालीन
साहित्य में मूर्तता की ओर कवियों की अधिक रचि रही है । स्वतंत्रता और प्रत्यक्षता
की ओर उनका प्रायः अधिक रचा है और ही ऐसा ही । इसके विस्तृत बिपरीत
प्राधुनिक कवि मुख्यतः छायावादियों की दृष्टि मूर्तता व समूर्तता की ओर रही है ।
जितने उनके वर्णनों का रूप रस संघ से हीन प्राकपीय बना दिया है जिनका प्रत्यक्ष
दर्शन करने में युक्तता का रूप प्रत्यक्ष सा प्राभास ही हम अनुभव कर सकते हैं । उनके
काव्यों में बिम्बों के अधिक प्रतीकों की योजना है । प्रायः प्राचीन कवियों की मूर्तता के

कई कारण हैं। सर्वप्रथम तो यह कि स्फूर्तता और प्रत्यक्षता का वह कटु अनुभव उन्हें सम्भवतः न था जो छायावाचियों को था जो उनमें मांससता एवं स्फूर्तता के प्रति विकर्षण पैदा करता। उन्होंने काव्य को जीवनत घनाने की बही प्राचीन परम्परा ग्रहण की थी जो संस्कृत साहित्य तथा लोक कथाओं में पलठी धा रही थी। उनमें परम्परा के प्रति कोई बिद्रोह भी न था जो बायसीयता के रूप में काव्य से मुबार होता। न ही उन पर ग्रन्थों के रोमांटिक साहित्य की समूहता जैसा कोई प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष प्रभाव ही पड़ा था। फलतः छायावाद के अतिरिक्त हिन्दी का अधिकांश साहित्य स्फूर्तता का ही प्रतिपादक रहा है। जिसके कारण उसमें मूर्तता भी अधिक है। ग्रन्थों की साहित्य में भी रोमांटिक के अतिरिक्त सभी कवि स्फूर्त की ओर अधिक धुम की ओर कम झुककर रहे हैं। उनमें भी मूर्तता अधिक मिली है। वस्तुतः भावव्यञ्जना की सफसता के लिए मूर्त वर्णन अधिक उपयुगी प्रतीत होते हैं।

बायसी अपने विम्बों में बायसीयता का पोषक न होकर प्रत्यक्षता एवं स्फूर्तता का पोषक है। मूर्त वर्णन की प्रयत्नीयता से सम्भवतः यह परिचित या इसी कारण बिना प्रकृत मूर्ति का उल्लेख वह अपने विम्बों में बहुत करता है। परन्तु स्फूर्तता का अर्थ स्थिर चित्र (स्टैटिक) नहीं है उसमें गति का आरोप भी हुआ है और प्रत्यक्षता में क्या रस संभव विषयक संबन्धनों को तुष्टि देने की शक्ति भी रही है। इस अध्ययन में हम बायसी के मूर्त अथवा अमूर्त विम्बों और उसकी विशेषताओं को देखेंगे।

(१) मूर्तता का मापदण्ड

बायसी का मापदण्ड वस्तु के मूर्त वर्णन की ओर है। उन्होंने मूर्त और अमूर्त सभी वस्तुओं को मूर्त उपमाओं द्वारा व्यञ्जित किया है। उनके वर्णन प्रत्यक्ष एवं मूर्त होने के कारण बायसीयता (एयरी नॉसिम) का अभाव का कारण अन्वय के अधिक निकट है। इनमें सम्बन्धी बायसीय रूप योजना नहीं है बरन जीवन का एक एक व्यापार, एक एक रूप पृथक पृथक धारा है। समष्टता का अभाव भी उसमें नहीं है वह अपने आप में एकत्रय पूर्ण है। ऐसे बिना अपनी सुक्ष्मता विविधता एवं गतिमयता के कारण जीवन के वास्तविक रूप को हमारे सामने लाते हैं। जैसे सरोवर का वर्णन और सेना के प्रमाण आदि का वर्णन

हय यय सेन बलह शय पुरी परतत दूहि जड़हि होइ धूरी

रेतु रहिन होइ रबिहि मरासा मातुल पंखि बैहि फिर बाता

(१४ २ १)

घाबं डोलत तरय पताक, कार्यं धरति न धंयबं भाव

दूबहि परतत सेव पहारा होइ होइ धूरि जड़ हि होइ छेरा

नागन छपान ओह तस छाईं मूरज छपा रनि होइ धाईं

(२०६ १ ७)

जायसी की बिम्ब योजना

बिलाहि रात भस परी प्रबाका ना रबि भारत बंर रप होका
रिन के प्रति भरत उठि भाये, निरि के निरर बरें सब लायें
(२१० १२)

यद्यपि यहां कवि प्रतिमान के मोहकम प्रतिघयोक्त कर गया है पर भूल
के साम्राज्य में इस प्रन्धरे धीर प्रस्पष्टता का होना असम्भव नहीं लगता। इसी प्रकार
मुठ बर्नन में
ययन रहिर बनु बरिसें बरती नीति बिलाई
निर पर दूदि बिलाहि तस पानी पंक बिलाई
(२१७ १२)

रक्त की भाण्डों साकाश की बूटि की नाति थीं जिनमें नीग कर भरती बही
जाती थी इसमें कटे हुए दण्ड—मुण्डों के दुकड़े कीबड की नाति साम साय बहु रहे
ये। मुठ से ऐसे दृश्य कुछ असम्भव नहीं है। रप क्षेत्रों में रक्तगजित धीर रड्ड मुण्डों
से दलदल बनी हुई भरती प्रकसर ही देखो जा सकती है। ऐसे दृश्य जीवन के वास्त
बिक रूप को सामने रखते हैं। मुठ की भयानक विभीषिका भी इनसे व्यंजित है।
इसी प्रकार रूप बर्नन भी यथायं के निकट है। पचाबडी के रूप को जायसी
इस प्रकार बर्णित करते हैं

उग्रत सूर बात देखनि बंर लयै तेहि मूय ।
भीसे सबे जाहि छपि पडुमाबति क रूप ।
(२१ ८६)

सौन्दर्य की ऐसी लावण्यमय कांति जिसके सम्मुख धर्म्य रूप धीके धीर मनिन
हो जाते हैं जैसे सूर्य के तेज के समस बाद मनिन हो जाने कोई भयपार्थ धीर प्रभा
स्तबिक नहीं है धीर मोकोत्तर भी नहीं कही जा सकती है। जीवन में भी ऐसे सौन्दर्य
का सासात्कार क्रिया जा सकता है। ऐसे स्थल जायसी के मूठ बिम्बों की यथावता
धीर जीवन की निकटता के परिचायक है। यद्यपि कवि का मोह प्रतिघयोक्ति के लिए
बहुत है जो उसे यथायं से दूर ले जाती है। परन्तु उसके प्रत्येक बर्नन वास्तविकता के
निकट है। बिम्ब के बहुत से संघ एवं अणु बर्णन यदि इस तथ्य को भलीभांति प्रभा
मित कर सकते हैं।

जायसी की मूर्त उपमाओं में रंग रूप वर्णों गंध गति धारि के तत्व भी बड़े
स्पष्ट हैं। रूप धीर रंग के प्रति तो बहु सदैव जायकर रहे हैं इसके बड़े मुन्दर प्रयोग
परमावत में मिल सकते हैं जैसे
केनी छोरि शारु को बँसा रंन होइ जग बीचक लेता
सिर दूत सोहरि परहि मुई बारा सगरं देस होइ प्रियवारा
(४७० १२)

धर्पाद् पचाबडी के केच धार्यन्त सबन व काले ये जब बहु मपने केना मझडी

भी तो समस्त देशों में धन्धेरा छा जाता था लोग भ्रांति बंध धीपक जसाने सराते थे । यहाँ केशों की सजगता के साथ साथ उनके कासेपन पर भी कवि का ध्यान गया है । जिससे प्रकट होता है कि बर्न या रंभ के प्रति भी कवि जागरूक है ।

बति के प्रति भी जायसी संवेष्ट रहे हैं । काविक अनुभावों आदि का बर्नन उन्होंने कई स्थलों पर किया है । गय स्पर्श आदि की ओर कवि कम गया है परन्तु इनका बर्नन भी पर्याप्त हुआ है । इनको कवि संवेदनामो के अभ्ययन में देखा जा चुका है । प्रकृत म कवि के मूर्त बिम्बों में रूप रम मति आदि की स्पष्टता के लिए एक उदाहरण पर्याप्त होगा

मल सरोवरक बैलमि काहा भरा समुद्र अस प्रति अबपाहा
पानि मोति अस निरमर तासू अहित बानि कपुर सुबानू
लक द्वीप के सिला बनाई बाँबा सरबर दात बनाई
खड खंड सीढ़ी भई गदरी उतरहि लोग बड़हि बहु केरी
फूला कबल रहा होइ रता सहस सहस पसरहि कर छाटा
अबलहि दीप मोति बतराही सुगहि हंस धो कैलि कराही
कनक पंखि वरहि प्रति लोने जानहु बिज संबारे सोने ।

(११ १७)

यहाँ कवि ने मानसरोवर के पानी की गंध उसका बर्ण सरोवर कं ठट पर बनी सीढ़ियाँ उससे उतरते—बड़ते मोव सरोवर में लिमने बाभा सड़क रम नाम कमल सरोवर में उरते स्वयंभगी पक्षी मोती उगलती हुई सीपियाँ ओर उन मोतियों को चुगत हंस—सबका एक समय बिज प्रस्तुत किया है । जो रूप गंध बर्न मति आदि विशेषताओं से संयुक्त होने के कारण जायसी के बिम्ब बिबात का एक उत्कृष्ट उदाहरण है ।

रूप रंभ गन्ध आदि क संयुक्त होने के साथ साथ यह जीवन की वास्तविकता से भी दूर नहीं है । वस्तुतः जायसी के काव्य में कला कल्पना प्रकृति और मानवता एक दूसरे से जुड़ी हुई है । अपनी कल्पना को वह प्रकृति के सहयोग से कला रूप में आलता है जो जीवन के भी निकट है किन्हीं आकाशी बहुराश्यों और अपार नीलिमाओं में वह विचरक नहीं करती वह स्पष्ट प्रत्यक्ष और वास्तविक है । इस रूप में उसके बिम्ब रक्ष्य और यथार्थ प्रेम और वास्तविक जगत भावना और रूप आकार के बीच सम्बन्ध गूँथ का काम करते हैं । कवि क बिम्ब उसे बरबर रक्ष्य और बर्णन की छाईयों में भी इन धरती का कवि बोधित करते हैं । जीवन और जगत एवं रक्ष्य और बर्णन के बीच यह अनुबंध है । एक बिम्ब से वह बात बखी तरह स्पष्ट की जा सकती है

महम्मद जीवन जस मरत रंहुट वरी की रीति ।
परी जो आई तो बरी डरी जनम गा बीति ॥

(४२, ८६)

जायसी की बिम्ब योजना

यहाँ रहस्य और वचन की समस्या का स्वरूप कवि जीवन के उपकरणों द्वारा स्पष्ट करता है। वह कहता है कि जीवन की रीति पानी की बरिया जैसी है जो एक क्षण पानी से भरती है और दूसर खज उससे खाली हो जाती है। पेरिया का इस प्रकार भरना और खाली हो जाना एक जीवन है। जीवन का लय लय माने जाने का एक सदा चलता रहता है। इसमें जीवन की क्षणिकता व्यंजित है। ऐसे बिम्ब कला के कल्पना प्रधान सार को वास्तविक जीवन से मिला देते हैं। जायसी में मूर्तता की प्रचालता के कारण सभी बिम्ब इस काटि में आ सकते हैं। मयराबट से भी धाम्प्यारमक को स्पष्ट करने वाले बिम्ब पर्याप्त हैं।

जायसी का मूर्त वर्णन का मोहू मयूत का मूर्त वर्णन करने में भी देखा जा सकता है। मानवीय माबनाएं मूल उल्सास धानन्द धबधब प्रेम बिरहू धादि सभी मूर्त बनाकर प्रस्तुत की गयी हैं। कुछ समृद्धि की बर्षा से बाहिरवृष बपी पतझड़ समाप्त हो जाता है। बनि संकेत से इसे इस प्रकार कहता है

कषत धरसि सौर बय भयऊ
हरिच भाग हैसंतर गयऊ ।

(१७ २)

मानो बाहिरवृष को देव निकाला दे दिया गया हो यहाँ मूल के साम्राज्य और हरिचता के धमाक के धमूत को मूर्तित कर दिया गया है। उपमान स्पष्ट न होने पर भी भाग धादि धियाएं कवि के मानस के बिम्ब का धामास दिनाती है। धमूर्त भावों और कृतियों का जायसी से सदैब मूत रूप में वर्णन किया है। जो उनकी कला की उत्कृष्टता का अच्छा परिचायक है। पचाबटी के प्रति धमुरकत रल सेन के लिए नाममती की उक्ति बड़ी व्यंजक है

कहा हूँसहि तू मीसो किये धीब लो नहु,
तोहि मुन बमरुं बीबुरी, मोहि मुक बरिसं मेहु ।

(४२० ५६)

यहाँ बिजसी धानन्द का प्रतीक है और मेब धमू इधन धयबा दुल का प्रतीक है। इन कल्पों (धामूर्त) से हर्ष और बिपाद बिभ्रित हो गये हैं। यहाँ एक बिबिद्य सौन्दर्य है। इस वर्णन में एक ही प्रयोग—बर्षा—से दो बिम्ब मेकर मिल २ भावों को कवि ने व्यक्त किया है। बर्षा का एक उपकरण बिजली धानन्द का धोतक बन गया है व इमरत उपकरण मेहु—रल का। हर्ष और बिपाद के धमूर्त भावों के लिए संबन्धन और प्रकाश जायसी का बहु प्रयुक्त मूर्त बिम्ब है। निराशा व दुःख को जायसी सदैब धायकार से मूर्तित करता है।

राती मुनप्र मुना सब गयऊ जनु निति परी धरत दिन भयऊ
गहने पही बाँध है कटा धमिु धयन जनु नय तनुधरत

(१७, १२)

राजा के गृह त्याग पर माता व पत्नी दोनों निराशा और दुःख के बने प्रभेरे से प्रसू हो जाती हैं

रोबै भता न बहुर बारा रतन बना जन मा अधियारा
(१११ १)

समस्त नगर भी बियाब के बने कासे बाबलों से फिर जाता है
खोगी होइ निसरा जो राजा, सून नगर जानहु पु ब बाजा
(११२ १)

राजा की मृत्यु पर भी इस निराशा और दुःख के धम्भकार का उल्लेख है। निराशा के धम्भकार की मूर्ति बायसी ने मुख और घाघा के प्रसात का भी वर्णन किया है। प्रसात यहाँ जीवन के मुख और धामन्व का व्यञ्जक है। मानसरोवर के मुख और उस्ताय को बायसी ने इस प्रकार मूर्तित किया है

बेलि मानसर कन सोहाबा हिय तुलस पुखम होइ छाषा
गा अधियार रैन मसि सूटी मा मिनसार किरन रवि पूटी
(११८ २१)

मोरा बाबल के धाम्भासन से रानी का दुःख समाप्त हुआ और उसे प्रभेरे में घाघा की किरण दिखाई दी

बहु निसि मह रवि बीन्धु दिखाई मा उबोत मसि गई बिलाई
बड़ सो तिघासन समकस वसी जनव बुहब बरि निरमसी
(११२ २१)

राजा के पुनर्मग पर भी निराशा के गहन भावण को हटा कर भाते मुख के प्रसात का उल्लेख है

जार्न उई होइ बस मोरा रन गई बिन कीन्हु बहोरा
(११८ २)

मुख और दुःख के प्रमूर्त भावों परतमड़ के पील पत्तों के बाह परलपित होती ताल कोपनी से भी मूर्तित किया गया है

‘विपर पात दुःख मरे निपाते बुछ पानी उपने होइ राते
(१८१ ७)

नामगयी में माग सव्य के स्नेय द्वारा दुःख की केंबुसी उतर कर निर्मल ही जाने का भी उल्लेख है। यहाँ केंबुसी का उतरना दुःख निवृत्ति का बोधक है :

घड़ी को भु इ जागिनी जसि लखा बिन्ध पाएँ तन मंह में लखा
तब दुस जगु केंबुल वा पूटी होइ गिसरी जगु बीर बहूटी
(४२१ ४२)

दुःख का बहु प्रयुक्त मूर्त स्वल्प मेघ का बरतना है। दुःख के बादल हृदय की धाम्भारित किये रहते हैं। धम्यु के रूप में बरत जाने के बाद प्रसन्नता का निमल धाकाय दृष्टिमय होता है

जायसी की विन्ध योद्धता

कंठ लागि सो हीसुर रीई अचिक मोह को निसे बिछोह
 भाय इसी बुल हिये को गन्मीर ननह घाइ बुबा होइ नीर
 तेहि क उत्तर पडुमाबति कहा बिफुरल बुल हिये मरि रहा ।
 मिसा को घाइ हिये बुल मरा बहु बुल नैन नीर होइ डरा
 (१७५ २-७)

पबबा
 बिफुरता बस भैदिये, सो जानं केहु नेहु
 मुक्क भुइसा जयबन्ध 'बुल मरे बेज मेहु ।
 (१७५ ८-९)

भुइसा मलत्र रपी मुज के प्रागमन मे दुख की बर्षा हा गई घोर निमल
 पाकाय दिखाई देने लगा ।

दुख के परबात प्राप्त होने वाले मुक की भ्रमूर्तता तत्प पृथ्वी को बर्षा के
 प्रागमन से मिलने वाले मुक में प्रत्यक्ष हो गई है । राजा के प्रागमन के परबात जायसी
 नागमती की तुलना पृथ्वी से करता है—
 नागमती कहुं प्रागम बनाबा मे ती तपनि बरला रितु घाबा
 (४०३ १)

प्रसन्नता के भ्रमूर्त भाव को भी भूमि के द्वारा मूर्तित में किया है । पावस की
 छांह पाकर जिस प्रकार धीप्य में जलती हुई पृथ्वी छांति क मुक पाती है उसी प्रकार
 नागमती को भी प्रिय प्रागमन पर मुक मिसता है
 घब लगि सपी पबन हा ताना भादु लागि मोहि नीतल गाता ।
 पहि हुलास बस पाबस छांहा तस हुसास अपना जिय मांहा ।
 (४२४ १-२)

पयाबती के बन्म के समय पयाबती को जननी के हृदय का मुल और उल्लास
 बीपक के शीने प्रकाश से मूर्तित किया है

जस सोपान पुरि होइ तामू दिन दिन हिये होई परवासु ।
 जस संजल शीने मंह दिया तस उजियार बैसाबे दिया ।
 (४० ८-९)

मुज घोर प्रसन्नता के शाय घोर भी घनेक सुलासक भाव हृदय में उठा करने
 है । जायसी ने उनको मुज-सरोवर के समीप श्रीवा करन हुए पतियों द्वारा मूर्तित किया
 है, जो सरोवर के मूलने पर बिदा हो जाते हैं :
 मुजर सरोवर को लहि नीरा बहु घाबर पंछी बहु तीरा
 नीर घटे पुनि बुछ न कोई केगसि सो लीज हाय रहु सोई
 (४२३ ४३)

तट पर बीड़ा करने वाले पत्नी को एक बार उड़ जाते हैं फिर सीट कर

मुष्क सरोवर पर नहीं घाते । उसी प्रकार बिरहिणी रानी के सुख के दीप हो जाने पर घानन्द, उस्साह, उमंग पुलक भीड़ा कौतूहल आदि उससे विमुख हो जाते हैं

नीर गंभीर कहाँ हो पिया तुम्ह बिनु काह सरोवर हिया ।

बयज हैराह बिरह के हाथा जलत सरोवर लीगु न साथा ।

जरत जो पंछि कैसि के नीरा नीर घटे कोड घाव न तीरा ।

(३८२ १३)

सुखात्मक भावों प्रकटा धनुभूतियों के लिए पक्षियों का मूर्त उपमान बहु प्रयुक्त है । अनेक स्थानों पर इसका प्रयोग है । कहीं बहु सरोवर पर भीड़ा करने वाले पक्षी हैं तो कहीं लता बृक्ष आदि पर कलरव करने वाले पक्षी । नागमती घोर रत्न सेन के मिसल पर कवि सुखात्मक भावों को पक्षी कहता है

कंठ लाइ के गारि मलाई जरी सो बैस सीब पलुहाई

करे तहस सजा होइ, रारिब दाज बंभीर

सबै पंछि मिलि घाइ जोहारै, लोट उरै नं भीर ।

(४२८ ७९)

जायसी ने बिरह के धर्मूर्त भाव को भी मूर्तता प्रदान की है । बिरह में जलकी दृष्टि उसकी नासवायकता निरन्तर बरब करने की भावना घोर मलिन या विषाद पूर्ण बनाने की घोर नई है । बिरह की क्रूरता प्रकटा नासवायकता को कवि क्रूर हाथी से मूर्तित करता है जो बीजन की मुख बाटिका को पदबलित कर देता है

बीजन धुनहु कि नबल बसतु तेहि बन परेज हस्ति मेसंतु ।

प्रब बीजन बारी को रासा कुजर बिरह बिपारी साखा ॥

(१७७ २१)

बिरह में एकनिष्ठ होकर निरन्तर बरब होने वाली भावना को बीपक की प्रत्यक्षित रहने वाली बटिका मूर्तित कर देती है

जरे बिरह क्यों बीपक जाती भीतर जरे उपर होइ रासी ।

(३०५ १)

बिरह के लिए कवि प्रह्वन का उपमान भी लाया है जो बरद घोर लक्ष्मणों (रानी घोर सखियों) को विषाद घोर बुज के गहन धम्पकार स भर देता है

कंसहु बिरह न छाड़ै भा ससि गहन बरास

नसत जहुँ बिसि रोबहि घंघियर भरति अकाल ।

(२४९ ८-९)

बीजन की धर्मूर्तता को भी जायसी बय बेटे हैं उसकी उम्मतता तरलता एवं तरपेयिता को समुद्र नदी आदि के द्वारा व्यक्त किया गया है ।

बीजन की तरपे (उम्मात्र) घोर तरलता (भावभ्य) के लिए बहु उचे नदी कहते हैं ।

कीन्हेसि पुल्प एक निरमरा नाऊ महम्मद पुमिउ करा ।
 प्रथम जोसि बिमि तेहि के साबी श्री तेहि प्रीति सिख छपराबी
 दीपक तैसि जनत कह बीम्हा मा निरमल जब मारग बीम्हा ।
 जो न होत अछ पुरप उजियारा भुसि न परत पंच अजियारा ।
 (११ १४)

आमसी की भाव्यता है कि प्रेम का आन्तरिक सुख विपत्तियों के बाह्य दुःख के परभाव ही मिस सकता है। वह मधु की भाँति है। जो कुछ और विपदाओं के छतों में छिपा रहता है। यह सभी अध्यात्मकारियों की मायता है जो प्रेम की दुर्लभता को व्यंजित करती है।

बुझ भीतर जा वेम मधु रासा बजन मरन सहै सो आसा ।

(१८ १)

प्रेम पुरिछ हृदय को आमसी पानी कहते है जो स्वयं को छोकर बिस रंग से मिलता है बीसा ही हो जाता है अर्थात् प्रियतम का स्वरूप हो जाता है।

बेहि जिय वेम पानि भा सोइ बेहि रंग मिस तेहि रंग होइ

(२४१ १)

प्रेमी व्यक्ति अन्धा और अहंता अर्थात् अन्ध अज्ञानों से परे होता है। वह काठ के बोड़े की भाँति नाचता है मानो कोई संकेत से उस नचा रहा हो।

वेम क लुबुब बयिर श्री अबा, नाथ कोइ जानतुं सब बंभा ।

जानतु काठ नचावै कोइ, जो बिऊ नाच न परगठ होई ।

(२५७ २ १)

प्रेम के लोभी साह के लिए उसकी मानसिक अवस्था का परिचय देने के लिये कवि ने अठरंज के प्यासे (एक मौहरा) का विन्ध दिया है जो चलता तो सीसा है पर मरता शर्बे-शर्बे है।

वेम क लुबुब पयासै पाअं, बसै छौंहु ताके कोहनऊ ।

(२९७ २)

साह भी उन्मत्तक सेल तो सामने की ओर रहा था पर कमक्षियों से पार्श्व में रहे दर्पणों को जिनमें पद्यावती का प्रतिबिम्ब पड़ने वाला था ताकता जा रहा था। उन्मत्तक मनोवृत्ति का अन्तर्गत मूर्च्छाकरण इस विन्ध में हुआ है।

प्रेम जीवन का आबस्मक तत्व है। प्रेम हीन जीवन की निस्तारता है कवि एक मुट्ठी राख की तुच्छता और अज्ञानता से मूर्च्छित करता है। वह कहता है

मातुस पैन अयउ बँकु टी, नहि तो कहा छर एक मुटी ।

(३६६, २)

अमूर्त बान वृत्ति को भी आमसी ने मूर्त रूप से प्रस्तुत किया है। बान जीवन का प्रधान तत्व है कपूर अर्थात् सुपंच है जो असाय है अमर है, अवस्था और समय से उसका कोई सम्बन्ध नहीं है। वह दीपक है जो जीवन के आधार पद को प्रकाशित करता है।

रिया करे प्रागे जमियारा वहाँ न रिया तहि धरियारा—
रिया मरित निति करे धरौरा, रिया नहि धर मुसहि बौरा ।
(१४३ ४१)

दान स्त्री शीपक के प्रभाव में संसार का माय प्रभकारमय हो जाता है। रामा के दान का प्रत्य हो-जाने पर आपसी उसके मार्ग के प्रत्यकारपूर्ण हो जाने का उत्पन्न करता है। इन वर्णनों में दान की प्रभुवता शीपक और सुगन्ध के द्वारा मूर्तित हो गई है।

अन्य प्रभु भावों में बिगड़ता व क्रोध क मिते पुत्र भाव को लक्ष्मी में विरे सिहू द्वारा रूप दिया गया है। शीप बादल क प्रसव में कवि उनक बीरबपुत्र क्रोध शीर बिगड़ता के लिए करता है

रात्रे लोन सुनावा, लप हु इ बस लोन ।
प्राइ कोहाइ मरित कहुं तिव आनु धौगान ।

(३३३, ८९)

नागमती के शीविवा बाहू जैसे प्रभुर्त भाव को भी कवि रूप देता है
प्राया पनुमाषति क बैबानु, नागमती बिक उछ लो भायू ।
आनहु छाहू मंहू रूप देजाई तंस शार जापी जो प्राई ।

(४२६ ४३)

रामा की चौकाहुट की प्ररूपता को शतक क मुक्त स बहुप्रतीभित स्वाति बूट के हू जाने का उत्पन्न करके प्रत्यक्ष कर दिया गया है। प्रेम क मतमुटाव को भी कवि ने मूर्तित किया है

परत प्रीति कंकन महुं सीसा बिपरि न मिल स्वाय वी बीसा ।
कहुं सोनार पास बेऊ जाऊं बेइ सोहाय करै एक ठाऊ ।

(८९, ६-७)

अनुकरण वृत्ति को भी सेना क प्रयाग स पूरे रूपक द्वारा मूर्तित किया गया है।

इन्द्रहीनता को भी कवि मूर्तित करता है। कवि उसकी तुलना पतंग वृक्ष के दूठ के मूर्त उपमान से देता है जो अपने सुन्दर पत्तों के प्रभाव में कुरूपता शीर निष्कृष्टता का एक हास्यास्पद उपकरण मात्र बनकर रह जाता है।

छोठ र्है बुबीनता, निछठे आपरि भुछ ।

बिनु गप पुषख पतंग ज्यों ठाड़ छाड़ वे सूष ।

(४२० ८-९)

अनूर्त मन को आपसी मूर्त उपमान द्वारा प्रस्तुत करता है जो कभी पर नहीं भक्तता धर्यात विरक्तता समन नहीं हो भक्तता। परन्तु जान स्त्री जिना पर बिचने से उसके समान हो जाने धर्यात वृत्तियों क वाचस्प के प्राप्त हो जाने की

सन्मावना रहती है

मनुमन्य बहु मन घमर है, कहु किमि पारा बाह ।

व्यान तिला सौ तो बसै बंसतहि बंसत विनाह ।

(४२५ ८-६)

कवि की बाणी प्रकटि कविता को भी आयसी ने मूर्त्ति रूप से प्रस्तुत किया है। उसे वह एक ठसवार के समान कहते हैं जिसमें मुख और छाँटि—बोनों को सामर्थ्य छिपी रहती है। ठसवार को जिसने से एक और चिनपारी निकसती है और दूसरी और उस पर पानी प्रकटि पार चकती है।

कवि क भीम करव हिरबानी एक बिसि घाय दोसर बिसि पानी ।

(४५० ५)

इस प्रकार स्पष्ट है कि आयसी की मूर्त्तता के प्रति विशेष रसि है उन्होंने मुख प्रसन्नता उन्हाउ, दुख निराशा विपाद विरह, बीबन प्रेम मोम ईर्ष्या विवशता क्रोध मनमुटाव बाग इम्पहीनता अनुकरण बृत्ति मन हृदय कविता जैसे प्रमूर्त्त भावों को मूर्त्तित किया है। प्रमूर्त्त भावों एवं वस्तुओं का यह मूर्त्तीकरण मूर्त्तता (कंक्र्रीटनेस) के प्रति आयसी के मोह और विशिष्ट भावस्थि का चोटक है। मूर्त्तता वस्तुतः वस्तु को व्यञ्जक और प्रेयणीय बनाने में सफल होती है, इसी कारण आयसी ने इसका आशय अधिक लिया है।

(२) प्रमूर्त्तता

आयसी में प्रमूर्त्त विम्ब योजना नहीं के बराबर हुई है। कवि कहीं प्रमूर्त्त उपमान सामा भी है, वहाँ वह उनके प्रति विशेष सचेष्ट नहीं है। कहना चाहिये कि प्रमूर्त्त उपमान योजना प्रनचाहे और प्रनजाने ही उसके काव्य में घा बई है उसकी रसि उस ओर नहीं है।

प्रमूर्त्त उपमान मृत्यु को कवि कई बार सामा है। मृत्यु एक भीषण दुःख की भावना है जो कर और पीड़क वस्तु या म्यन्त्रि के लिय भाई है। प्रिय का वियोग कराने वाले लोटे के लिए कवि यही उपमान देता है

तुभा काल होइ नै पा पीउ पिउ नहि नैत नैत कर बीउ ।

(३५१ १)

पीड़ादायक विरह को भी मृत्यु कहा गया है

बमकि बीउ पन करवि तराता विरह काल बीउ भरता

(३४६ ४)

यहाँ कवि ने प्रमूर्त्त की प्रमूर्त्त से अन्मा बी है। विरह भी प्रमूर्त्त है और मृत्यु भी।

संसार के प्रति अज्ञिकता और नदररता की प्रमूर्त्त भावना के लिए भी कवि ने प्रमूर्त्त उपमान दिया है। कवि उसे सपने के सदस्य कहता है जो प्रमूर्त्त है

यहु संसार सपन कर नैका बिचुरि नये जानहु नहि देना ।

(१३९, ३)

धमका

देहि जीवन के घास का बस सपना तिल घासु ।

महुम्मद कितहि की भरहि तेह पुरुष बहु सासु ।

(१४६ प-६)

जायसी ने परदाबती के नहर के लयिक मुख के सिधे यही धमूत उपमाव स्वन प्रस्तुत किया है

नेहर भाए का मुख देया, कहु हीइया सपने कर सैया ।

(१७८, ६)

यहां धमूत नहर के मुख के सिधे धमूत सपने का उपमान लिया गया है ।

धम्यत्र एक स्थान पर जायसी ने मन (धमूत) को भी उपमान बनाया है । पर वहां मन कुछ उपमान रूप में प्रयुक्त न होकर प्रतिपाद और धारण्य प्रकट करने के रूप में आया जान पड़ता है

ततकरन धाए सैबातु पठुबां, मन तो अधिक गयन सों कृषा ।

(१४२, १)

धमूत उपमानों की यह धस्य संख्या उनकी धीमीगठ धमूतता के प्रति कोई प्राकर्षक न रखने की चोतक है ।

समष्टि में जायसी के बिम्बों की मूल प्रकृति मूलतः है । मूर्तता, जो नति रूप, उस मूल से मुक्त है, कवि को विशेष प्रिय और उदा कवि ने धमूत भावों, विचारों मनोवृत्तियों तथा धमूत वस्तुओं को धनुमूत तथा रसनीय बनाने का माध्यम रही है । बिम्बों की यह प्रकृति उनकी मूर्तता के प्रति विशेष रसि की चोतक है । मूर्तता का यह प्राग्रह कवि के यथार्थ के प्रति प्रेम का प्रमाण है । जायसी जीवन के बहुत निकट का जीवन का प्रत्येक रूप प्रत्येक दृश्य उसे प्राकृतिक करता का इसीलिए वह काव्य में इतनी स्पष्टता से प्रकट हुआ है । वह प्राकृत्य की गहन मौलिया के धारण्य में छिपे सब को ही जानने का उत्सुक नहीं था बल्कि जीवन को जीवन की भूमि पर ही बसाने के सिधे प्रयत्नशील था । रहस्यवादी होते हुए भी उसकी धीमीपत मूलतः (कंजीगतस) उनकी सामंजस्य भावना को प्रकट करती है । जायसीपता धमका धमूतता का प्रभाव उसकी सामाजिकता जीवन की निकटता और जीवन के मोह का संकेत भी देता है ।

(२) अभिव्यक्ति के आधार पर

कवि के बिम्बों का अभिव्यक्ति के आधार पर वर्गीकरण प्रकृत काव्य में उसके बिम्बों के भाषायत रूप भेदों का अध्ययन, कवि के जापानिकार की समता और धीमीपत कवि को प्रकट करता है । बिम्ब की अभिव्यक्ति का यह वर्गीकरण प्रयोग गह के आधार पर है । प्रत्येक व्यक्ति की भिन्न-भिन्न कवि-धरसि बिम्बों का प्रयोग में पन्तर बात देती है उसके हृदय का बिडोह धमका परस्पर के प्रति मोह की बिम्बों के

भाषा पर प्रकट होता है। भावुनिक परम्परा का विरोध कवि बिम्बों के माध्यम से विरोध प्रकट करता है, वह नई-नई वस्तुओं का बिम्ब तो बेटा ही है, साथ-साथ प्रयोग में भी लचीलता प्रकट करता है। प्राचीन कवि रुद्रि और परम्पराओं के पोषक व समर्थक थे। उनमें प्राचीन उपमान धरना बिम्ब प्राचीन रूप से ही प्रयुक्त हुए हैं। इनकी अभिव्यक्ति उपमा रूपक—धर्षात धसकारों के बायरी को लाने में अभिन्न होती है। परन्तु भावुनिक कवि धरनाकारों के प्रति विशेष आकर्षण नहीं रखते अपनी बिम्बात्मक अभिव्यक्ति को बड़े नये भाषागत रूपों धर्षात मानवीकरण लक्षणा प्रतीक धारि धारि के रूप में प्रस्तुत करते हैं। बायसी के बिम्बों का यह अभ्ययन उसके परम्परा पोषक रूप को बेटे हुए उसकी स्वच्छन्द वृत्ति का परिचय-भी बेटा है।

अभिव्यक्ति धरना भाषागत प्रयोग के भाषा पर बिम्ब निम्नांकित रूपों में हमारे सम्मुख आते हैं

(१) अभिधा द्वारा अभिव्यक्ति

(२) लक्षणा

(३) धरनाकारों द्वारा अभिव्यक्ति (ध) धरनाकार में (धा) धरनाकार में।

(४) मानवीकरण द्वारा अभिव्यक्ति

(५) प्रतीकों द्वारा अभिव्यक्ति

(६) मुद्राबरेया लोकोक्तियों द्वारा अभिव्यक्ति।

(१) अभिधा द्वारा अभिव्यक्ति

बायसी में अभिव्यक्ति में पर्याप्त बिम्बात्मक वर्णन मिल जाते हैं। वस्तु वर्णन एवं प्रकृति वर्णन में अभिधा में बिम्ब देने की प्रवृत्ति खूब मुखर हुई है उनके राजमहल राजसभा ठाल ठालाह हाट धारि सब रूप रूप से पूरित हैं। इनको कवि ने सदैव बिम्ब रूप में हमारे सम्मुख रखा है। राजमन्दिर धारि सब नैनों को प्रत्यक्ष हो गये हैं। राजमहल का वर्णन कवि इस प्रकार करता है

साजा राजमन्दिर कदिलासू, लौने कर लज बरती प्रकालु ।

सात खंड धौरहर साजा, उही संबारि लक्ष धस राजा ।

हीरा बंट कपूर पिताबा, धी नज लाइ सरम लै धाबा ।

जाबत लक्ष उरैही उरैही, जालि भांति नग लाम उरैही ।

भा कटाव सब धनजन भाती चिन्न होत गा पतकि वाती ।

लाज लंभ धनि मानक बरै धानहु बिया दिन धाउत बरै ।

बैधि बौराहर कर उजियारा कपि में बांड सुर धौर तारा ।

(४८ १-७)

यहाँ राजमन्दिर में स्वयं वर्ण कपूर मन्थ मणि माणिक्य और हीरे के सत्त्व प्रकाश धारि का उल्लेख है जो वर्णन को प्रत्यक्ष कर देता है। धन्य स्वर्णों पर भी

राजमहल की बनी धबराइयाँ उनकी धीतवता धीर धंधेरा, सुगन्धित पवन, स्वर्णवर्षी धीवारों धीर छतें उनकी गणन तक की ऊँचाई, वहाँ के दरवार में बिसे भाष कमल प्रस्फुटित होते पुष्प महलों की धीवारों पर पत्थरों में उत्कीर्ण की गई पशु-पक्षी धीर मनुष्यों की मूर्तियाँ सब राजमहल के स्वरूप धीर बातावरण को सेवों के सम्मुख प्रत्यक्ष कर देती हैं

नाँवत वंधरि गए लंब साता। सोने पशुमि बिछावन राता ।
 घोमन साहू ठाड़ भा धाई, मंडिल छाहू धनि सीतल पाई ।
 बहू पास फुलबारी बारी मांस सिहासन मरी लंबारी ।
 अनु बसंत फूला सब सोने हूँछहि पूल त्रिपसहि कर सोने ।
 बहाँ सी ठाऊ दिस्टि मंह धाबा दरपन भा दरसन देखराबा ।

(२२९, १२)

कवि कहता है कि राजमहल की धीवारों पर उत्कीर्ण प्रतिमाएँ इतनी लचील हैं कि जीवन्तता का भ्रम कर देती हैं

बंधरि छात सातों पंड बांको लसों नकि काकि बं डंकी ।
 जानु जेहू कादि सब काही, बित्र मुरति अनु बिबने ठाही ।

(२२२ १-७)

बामसी को राजमहलों में स्वर्ण बर्ण विशेष प्रिय है। नङ्ग की धीवारों के रंग में जम्हें स्वर्ण बर्ण विशेष आकर्षित करता है वहाँ तक कि नङ्ग की सीढ़ियों के लिए भी बापसी वही रंग देता है

कनक तिला पङ्ग सीढ़ी लाई अवमगाहि नङ्ग ऊपर दाई ।

(४१ ७)

सिंहमण्ड के हाट मन्दिर, गुमारहाट मनी बित्र रूप में हमारे सम्मुख धाए हैं। यह सारा रूप पस्तुन रूप में हुआ है धीर धयिबा के हाथ ही है। ठाऊ ठमारों का बापसी का बर्णन बड़ा जीवन्त है। यथा

मानसरोवर बैबिघ काहा मरा अनु र घस धति धबगाहा ।
 पाणि मोति घस गिरमर तावू धबिन धानि कपूर कुषाहू ।
 मंऊ कीव के सिमा धनाई बाबा सरबर घाट बनार्द ।
 बंध बंध सीढ़ी मई गरेरी, उतरहि जोर बड़हि, अनु कैरी ।
 फूला कंबल रखा होइ राता सहुत सहुत पंङ्गरिहू कर छाता ।
 उबरयहि सीप मोति उतराहीं, धुपहि हूँत धी केलि कराहीं ।
 कनक बंधि पैरहि धति सोने बाबहु बित्र संबारे सीने ।

(१२, १७)

यहाँ साम्राज में कनक के पुष्पों सीपी के ऊपर धाने पतियों के तीर लोभों के ऊपर उतरने चढ़ने निर्मल वन में कपूर की सुगन्धि के उत्सेह से समस्त इत्त

प्रत्यक्ष हो गया है। वस्तु वर्णनों के समी स्वतंत्र बिम्बात्मक हैं। सेना के प्रयास पर छा जाने वाला ब्रूस पीर अन्धकार भी दरब को मूर्च्छित कर देता है।

घाब कटक मुलतानी बयन छपा मति मांस।

परत घाब जय कारी होत घाब बिन घांस।

(१७ १२)

राजि के इस भ्रम में पसु पक्षी तक भ्रमित हो जाते हैं। समस्त पक्षियों में ब्रूस भर जाती है सारा संसार एक अंगकूप के सम्बन्ध हो जाता है। यह सारा दरब बिम्बात्मक है। प्रकृति वर्णन में भी प्रस्तुत रूप बिम्बान पर्याप्त मिलता है। यद्यपि संख्या इनकी अधिक नहीं है परन्तु इनमें बिम्बात्मकता पर्याप्त है। साबन भावों बसंत माहि के बिज भमिमेपाव घब्यों द्वारा ही प्रस्तुत हुए हैं। रूप वर्णन भी कहीं-कहीं उपमानहीन पर बिम्बात्मक है। जैसे पद्यावती का यह रूप वर्णन

मे गिसि तसि पीरधर बड़ी मोरह करत जैसे बिजि गड़ी।

बिहस सरोसे घाइ सरेखी निरख ताहि बरपन मंह देखी।

होतहि बरस परस मा लोना भरती तरप मयऊ सब सोना।

(५६६ २४)

वृत्ति एवं क्रियाओं के उल्लेख द्वारा भी भमिमेपाव में बिम्ब योजना की गई है। जैसे बिरही राजा की अवस्था के वर्णन में

निहुरै येम पीर यह जागत करत कसीद्री संचन साभा।

बहन पियर जल डभकहि मेना परमद बुधी येम के बेना।

(२११ ३४)

पद्यावती एक नाममती की बिरहावस्था भी क्रियाओं एवं मुद्राओं द्वारा चित्रित की गई है।

सधि मानाहि तेबहार सब गाइ देवारी खेल।

हो का खेसै कत बिनु रही छार सिर मेल।

(१४८ ४६)

अथवा

बिरह न घावु संभारै मेल खोर सिर बल।

विड विड करत राति बिन पच्छा मइ मुक सुख।

(२२६ ८६)

मानवीय व्यापार भी बिंब द्वारा प्रकट हुए हैं। बजिक का आयमन क्रियाओं की सहायता से प्रत्यक्ष हो जाता है।

वेग वेग मुइ जापत घाबा वंसुन्हि देख सबहि डर जाबा।

(१६ २)

इसी प्रकार अघियारै मेय से कासे राजस का छसपूर्वक घाना 'डोई टोई मुइ

पाँच उठाया' पर से प्रकट हो जाता है

मछ बेकि जैसे बम घाबा होईं होईं मुई पाँच उठाया ।

घाह नियर ना कीमू बोहाफ, पूछा केम कुसल बेवहार ।

(३२१ - ६)

कहीं कहीं मुद्राओं का भी उल्लेख है जिनसे एक नियर बिम की रचना हुई है । कमर पर हाथ रखकर खड़े होने की बित्ति मुद्रा और छत्रपूर्वक कंबे पर हाथ रखने की मुद्रा को आयसी ने दिया है । पयाबती के बित्ति बम का बिम इस प्रकार घाया है

शिक्र घाई कुच बाजा शिक्र जानहु गा छेकि ।

मम तिबानि के रीम कुरि भंडार कर टेरि ।

(३३०, ०२)

समष्टि में घमिषा प्रयाती आयसी की बिम्बारमक घमिष्यलि का एक प्रबाम साधन रही है । महस मदिरों टाम-उलाबा हाटा घादि बस्तुओं साधन बसंत घादि शत्रुओं व दस्यों रूपबिभो क्रियाओं मुद्राओं-घादि के घनेक बिम्बारमक बर्धन पयाबत में निब बाटे हैं ।

(२) ब्यजना द्वारा घमिष्यलि

ब्यजना आयसी की घमिष्यलि का प्रधान माध्यम है और यह ब्यजनारमक उल्लिखी घनेक स्थलों पर बिम्बारमक रूप में ही है । ब्यजनारमक उल्लिखों में बिम्ब का प्रयोग सबसे अधिक हुआ है । मुज कुस हर्ष और विपाद की ब्यजना मूर्पोदय और मूर्पोस्त के बिम्बों द्वारा बड़ी सफजता से कराई गई है इन हम विछये घम्याओं में बस चुक है । घठ उन्हें फिर से महा बुहराना पनाबरमक ही होमा । इतना प्रबदय कहा जा सकता है कि मानवीय जाधनाओं एवं धनुभूतियों-मुख कुज्य मेम-पूजा उलाह विपाद प्रसन्नता ईर्ष्या घादि की ब्यजना उममें बड़ी सफजता के साथ हुई है । घम्य घनेक स्थलों पर भी ब्यजनारमक बिम योजना हुई है । घंभरा घरीब कुच और विपाद का ब्यजक है । राजा के मगर से प्रस्थान करने पर आयसी मगर के घघकार घूम हो जाने का उल्लेख करता है

बोबी होइ नितरा को राजा मूम मगर जानहु घुच बाजा ।

(३२५ १)

यहां बादलों से आयसी ने दो उपमाएं ग्रहण किये हैं बिजली और बर्षा और दोनों से क्रमशः घानद और बदल की ब्यजना की है । नई परती के प्रम में धमुरबत राजा की प्रसन्नता और बिबह से पीड़ित मानमती की घबस्था इस प्रकार बधित हुई है

बहा हंतहि तू भीतों किये घीक लो नेहु ।

लोहि मुक बमई कीबूरी बोहि मुक बरिले नेहु ।

(४२७ ०६)

विम्बली धारण व सौन्दर्य और प्रकाश की प्रतीक है इस कारण पद्मावती के रूप की व्यञ्जक बनी है। राजस चेतन की सहज धर्मियति में व्यञ्जना का श्रेष्ठ रूप लक्षित होता है

धारा राशौ चेतनि धीराहुर के पास ।

असे न जाने हिरवे बिसुरी पई प्रकास ।

(४५ ८१)

भ्रमर और हंस भी कामे और सफ़ल होने के कारण काम और श्वेत केशों का स्वस्म उपस्थित करते हैं जो यौवन और बुढ़ापे का चोतक हैं। इस रूप में भ्रमर और हंस यौवन और बुढ़ापे की व्यञ्जना करते हैं। कवि कहता है यौवन जस जैसे जैसे बनता जाता है भ्रमर से कामे केश मुप्त होते जाते हैं और हंस से श्वेत केश होने समत है

जौवन जस दिन दिन जस भटा नंबर ज्पाइ हंत परबटा ।

(४६३ ३)

सदभंगत धापेक्षिता के कारण कहीं कहीं उचितता बड़ी व्यञ्जक बन गई है।

पद्मा

जै निति बनि अस सति परपती राखी बेकि पुहुमि फिर बसी ।

(३३३ १)

'पुहुमि फिर बसी' उल्लेख बड़े व्यञ्जक है। मगलमति और सौन्दर्य की समग्र व्यञ्जना कराने में यह पूर्ण सफल हुए हैं। धन की तुच्छता और व्यर्थता की व्यञ्जना निम्नांकित पदों में हुई है

जौ वे जसत हीइ बिर माया संतत तिह न पावत राया ।

बड़ेनु न जी लैता धी पाड़ा बैखा भार भूमि के छाड़ा ।

(४११ ५६)

यहां लक्षणा है। सधना में जो धर्म होते हैं लक्ष्यार्थ और बाध्यार्थ। यहां धन की निरूप्यता सभ्यार्थ और उत्तका भूम कर छोड़ना बाध्यार्थ है, बाध्यार्थ का उपादान लक्षण में है। इसी कारण सभ्यार्थ बाध्यार्थ के द्वारा व्यञ्जित होता है और बाध्यार्थ का विह बन जाता है। इसी प्रकार लक्षणा में विह का धर्म उदाहरण है

कचन बरसि सोर जग भयऊ, बरिच माय बैसंतर पमऊ ।

(१७ ५)

यहां भी उपादान लक्षण है और पूर्ण विम्बारमक वर्णन है। बाध्यार्थ का भाव कर बैसांतर जाना विम्ब निर्माण करता है।

समष्टि में लक्षणा और व्यञ्जनाओं के माध्यम से जायसी के सुन्दर विम्ब प्रस्तुत हुए हैं। प्रेम वियोग सुख-दुःख यौवन बुढ़ता सौन्दर्य निरूप्यता धारि धनैक तरह व्यञ्जना और लक्षणा के विम्बारमक वर्णनों में प्रकट हुए हैं। जायसी में धर्मिणा की प्रवृत्ति इतनी नहीं है जितनी व्यञ्जना की। इसी कारण धर्मिणा के विम्बों की धपेखा

व्यवस्था रूप में धाये बिम्बों की संख्या कहीं अधिक है।

(३) धर्मकार रूप में

धर्मकार बिम्बों की अभिव्यक्ति के सहज और सर्वप्रधान माध्यम हैं। बिम्बों की सबसे अधिक अभिव्यक्ति धर्मकारों द्वारा रूप रच या धर्म शासनात्म्य उपस्थित करने में होती है। साम्य के आसार पर धर्मकार और बिम्ब एक दूसरे के बहुत निकट भा जाते हैं। यह हम तीसरे प्रध्यायो में देख चुके हैं यहाँ संक्षेप में जायसी के धर्मकार मत बिम्ब विधान की कर्त्ता ही उपयोगी होगी।

जायसी में बिम्बों की सबसे अधिक अभिव्यक्ति धर्मकारों के माध्यम से ही हुई है। बिम्बों की अभिव्यक्ति करम नाम धर्मकारों में धर्मानुकार प्रदान है। धर्मकार माया के स्वल्प हैं, माय से उनका कोई विशेष सम्बन्ध नहीं है इसी कारण माय को मूलित करने वाले बिम्ब से भी उनका कोई निकट सम्बन्ध नहीं है। फिर भी कहीं कहीं ऐसे स्वान मिल जाते हैं जहाँ धार्मिक भक्तकार भी है और बिम्ब भी। यहाँ हम पहले धर्मकारों की ही कर्त्ता करेंगे।

धर्मकार में धनुषास यमक और स्लेप प्रमुख हैं। इनमें धनुषास माय से नितास्त सम्बन्ध होने के कारण बिम्ब से दूरात दूर जा पड़ता है कि बिम्बों की कर्त्ता में इसका उल्लेख धनुषासक ही प्रतीत होता है। माय के प्रधातक बिम्ब केवल धार्मिक भक्तकार के इस रूप से कोई सम्बन्ध नहीं रखते। यमक और स्लेप कहीं-कहीं बिम्ब के भाव धाये हैं। यद्यपि उनका सम्बन्ध भी निकट का नहीं है पर यह कहीं-कहीं जायसी की धर्मन्त सभों द्वारा बिम्ब देने की प्रवृत्ति में सहायक हुए हैं। स्लेप का महत्व इस रूप में यमक से अधिक है। स्लेप का प्रयोग जायसी ने बहुत किया है। 'रतन' शब्द का स्लेप जायसी को प्रिय है

रोषी मता न बहुतै बारा रतन चला जग भा धर्मिपारा।

(१११ १)

काहु करत तुन्ह कोचन कीगहा, लब भा रतन जोलि तुम्ह कीगहा।

(१०५ ३)

यहाँ दोनों स्थलों पर 'रतन' रत्नकेन और रत्न के धर्मों को ध्वनित करता है। यहाँ रत्न से बिम्ब भी ग्रहण होता है।

इसी प्रकार माय शब्द का इत्येवात्मक धर्म लिखा गया है एक और बहु नागमती का शब्द है धूमपी धोर सरं वा

योहि तोहि धारन भई जे बारा रही नाग होइ पवन प्रबारा।

(११६ , ५)

यहाँ नाग उपमान से बभन दरम हो गया है। जायसी ने धपने पाशों के नाम पर सबैव रत्न दिया है। उनके पदम नाम रत्न-एक और तो उपमान रूप में बस्तु के

व्यक्त होते हैं दूसरी घोर पात्र हैं। बापसी की स्तेपारमक प्रमिस्यक्ति का यही मूस है। यहाँ एक घोर तो वस्तु का बिम्ब या आठा है दूसरी घोर पात्र के धर्म की प्रमिस्योजना भी हो जाती है।

'दिना' बाबु की भूतकामिक क्रिया का रूप 'दिया' लेकर भी कवि ने इसे विया है जो एक घोर बात का सूचक है दूसरी घोर दिये (दीपक) से उसका सादृश्य होने के कारण बिम्ब भी बन गया है

दिया बुझ नतु न रहा हुत निरमल बेहि रूप।

बहु आँखो उकि घाइ खं मारि किया प्रंपकूप।

(३२३ = ६)

संपुट शब्द के भी दो धर्म—नेत्र की पसक व कमल पस्तक लेकर बिम्ब विधान किया गया है

कर्मस करी तु पनुमिनी ये लिसि भयठ बिहान।

प्रचहि न संपुट खोलहि खं रे उठा खय भान।

(२५० = ६)

पर यह स्पष्ट है कि सव्यासंकार बिम्ब में निधेय सहायक नहीं हुए हैं वहाँ कवि उसका सादृश्य का आधा बनाता चाहता है वही बिम्ब निर्माण हुआ है। स्तेपात्मक बिम्ब (पाय पद्य रत्न) इसका प्रमाण है।

धर्मासंकारों में उपमा रूपक उत्प्रेक्षा और व्यकानिस्पोषित बापसी के प्रिय प्रलंकार हैं। इनमें प्रायः सुंदर बिम्बों की योजना हुई है। उपमा के रूप में ध्राए बिम्ब गहराई और सतिष्ठता के कारण बड़े व्यक्त बन पड़े हैं यथा

जस किछु बीजं बरे बहू धायन सीबै समार।

तख सिवार सब लीन्हैसि मोहि लीन्हैसि ठठियार।

(३२५ = ६)

जैसे कोई व्यक्ति अपनी बरोहर बापस में ले घोर बरोहर रखने वाला बिम्बुल कासी हो बाप सही प्रकार बिम्ब में साधु शृंगार से लिया मानो बरोहर हो घोर मुझे केवम जाती रखने वाली बना दिया। यहाँ रागी का मौन समर्पण व्यंजित है। इसी प्रकार बनहीन व्यक्ति की उपमा कवि पतंग के ठूठ से देता है जो तुच्छता की पूर्ण व्यंजना करती है

साँठे रहे मुचीनता निसंठं धायरि मुख।

बिनु बच पुस्तक पतंग ज्यों ठगू ठगू वे सुख।

(४२० = ६)

बिरह व्याप से बच रागी की उपमा दीपक की वात्तिक से भी है जो एक बिम्ब प्रस्तुत करती है। अनुपम का धर्म रक्त होने के कारण इनमें अपूर्व साम्य है जिससे व्यंजना बहुत धा गई है। दीपक का अल्पमिल प्रकाश प्रसन्नता का चोटक भी

बना है

अतः प्रीवान पुरि होइ तामु दिन दिन हिणु अचिक परनासु ।

अतः प्रबल शीने मंहु बिवा लत उत्रियार देवाबं हिया ।

(५ ८-९)

इसी प्रकार बिद्योगिनी रानी के लिए सीठा बिरह मजबूत बान को प्रस्तुत राजा के लिए कंकण पत्री द्यामवर्षी आयमती के बिण अचरी रात आदि की उपमाएँ की गई हैं जो बिम्ब विधान भी करती हैं । बायसी म ठगमाए बहुत अधिक नहीं हैं फिर भी बिम्बात्मक उपमाएँ पर्याप्त मात्रा में मिल पाता है ।

उपमा के परभाव रूपक का स्थान है रूपक बायसी का प्रिय प्रसंगकार है जो अधिकारतः बिम्बात्मक है । उसके कुछ रूपकों का परीक्षण यहाँ प्रयोजित होगा ।

वीरन की उम्मतना यथाह सीमर्य राशि के लिए बायसी ने समुद्र का रूपक दिया है जिसमें अक्षमाहन करने पर प्रेमी हृत्प हुबने उठरन लगता है । बिरहिणी नायिका स्वयं उस समुद्र म डूबने लगती है और किसी किनारे लगाने वाले की कामना करती है

परी अथाह बार हूँ जोवन उत्रिय गर्भार ।

तेहि बितबी आरिउ बिति, की यहि लाबे तीर ।

(१७० ८९)

समुद्र और नाव धारि के पुर रूपक को कवि ने जीवन सागर में युव की सहायता के महत्व का प्रदर्शन करने के लिए भी प्रयुक्त किया है

आर कनु ह पाप मोर भेला बौहित लीगु भरम बंहु बिता ।

उम्ह मोर बरिम पीड़ कर पहा, पाण्ड तीर घाट जो अहा ।

जो कह अइत होइ बड़ि हारा सुरत बैप सो पाबहि पास ।

(१९ ७-९)

यहाँ समुद्र के पूर्ण बिज में आब भी दरन बन गया है ।

बायसी ने एक बेरा बिचरित रूपक भी दिये हैं जहाँ आत्मन्य राश्यों में बिम्ब को प्रस्तुत करने की उनकी प्रकृति मूलतः ही उठी है राजा क स्वदेश प्रस्थान पर कवि कहता है

राजपाइ बर बरगु लब तुम्ह लो अत्रियार ।

बैठ जोय रस मानु कैं न अस्तु अत्रियार ।

(१९९, ८-९)

अर्थात् हे मुझे कवी राजा ! राजमात्र तुम्हारे प्रकाश में ही प्रकाशित है । यदा प्रवेश करके कत बायो । यहाँ अत्रिय पूर्ण रूपक है परन्तु कवि ने राजा के लिए

सूर्य सन्ध का उल्लेख नहीं किया है। पाठक स्वयं पिछले प्रसंगों और कवि द्वारा स्वीकृत उसके प्रतीकात्मक रूप के कारण सहज ही प्रश्न ग्रहण कर लेता है। यह वर्णन पूर्णतः विचारमग्न है।

बायसी का सांग्रह्यकों के लिए भी विशेष मोह है। ऐसे रूपक बड़ा धारण्य कारक हैं बहाँ बिम्ब के खेप्ट स्वरूप की प्रस्तुत करते हैं। यथा :

पलटा के पुरस्कार राजा, अस असाइ धार्य कर लाजा ।
 बेचि सो लख मई लख छंहा हस्ति मेघ धोनए लख पाहा ।
 सेमा पुरि धाए पन धोरा एहस पाऊ बरिले बहु धोरा ।
 बरती सरन अज ह्योइ मेराबा मरि अरि पोखर ताल तलाबा ।
 लहक सठा लख मुभिया नामा ठाबहि ठाब हूब अज बामा ।
 बाबुर मोर कोकिना दोसे हतै धरनेप जीम लख दोसे ।

(४२२ १७)

यहां राजा के धाममग्न पर निक्षेप बेला—धापाइ रासी—राजा—बरती—
 धाकाध धानम्ब उल्लाह—बर्षा हानी और बिछासबाहिनी सेना—मेघ बटा
 पुराना मनमुटाव—पोखर ताल—तालाब रानी का सौम्य—लहसहाती हुई भूमि सुन
 के नाना छोटे छोटे भाव—बाबुर मोर धादि से स्पष्टित हुए हैं। इस प्रकार यहाँ वस्तु
 का सांग्रह्यपूर्ण वर्णन होने के कारण पूर्ण दृश्यता धा गई है। ऐसे बिम्ब बायसी की
 समूह कल्पना को प्रकट करते हैं। इस प्रकार के वर्णन धादि के रूपक मुठ वर्णन से
 भी धाये हैं जो भावोत्कर्ष में उहायक हुए हैं इससे बिम्ब रूप से भी सफल कहे जा
 सकते हैं। परन्तु बहाँ बायसी ने सांग्रह्यकों में बलात् साम्य साने का प्रचलन किया है।
 बहाँ यह काव्य का अपवर्ण करते हैं। अतरंग बौगाल धादि के रूपक ऐसे ही हैं।
 दोनों पर मारी रूप का धारीयन नाम ब्यंजना में ब्याबात ही क्षमता है। इस कारण
 ऐसे वर्णन सफल नहीं कहे जा सकते।

बायसी ने उल्लेख धाए भी सुन्दर बिम्बों का निर्माण किया है। उनकी
 वस्तुल्लेखार्थों में बिम्ब का सुन्दर रूप प्रस्तुत हुआ है। यथा

मलवाबिरि के पीठ लंबारी बैनी नाम बड़ा अनु कारी ।

लहरी देत पीठ अनु बड़ा, और धोड़ाबा कंबुकि मड़ा ।

(११२ २३)

साधारण रूप से बैनी सपिनी के सदस्य रिश्तार्थ देती है पर जब यह स्त्रीनी
 चुनरी की घोट हो जाती है तो कवि उल्लेख धा करता है मानो यह सपिनी धाव कंबुनी
 से मण्डित हो गई हो।

मिस्ती की कानिमा के बीच बमकटी रूप पंक्ति के लिए भावों की उठ में
 बमकटी बिजसी का रूप सम्पुस लाया गया है जो स्निह वर्ण और बमक को मूर्त कर
 देता है। यह भी उल्लेख ही है

बसन बौरु बंड बगु हीरा श्री बिब बिष रंग स्याम बंभीरा ।
बगु माहीं निशि धाई बीली बमक उठी तस भीत बसोसी ।

(१०७ १२)

राजमण्डर के विभिन्न रंगों के बसन कारण किये मनुष्यों के लिए बसन्त ऋणियों के लिए ये रंग के आहार पर टेमू प्रादि की उत्पत्ताएँ भी रूप निर्मित करने में पूर्ण सफल हुई हैं ।

क्रिया उत्प्रेक्षाएँ भी बिम्ब प्रस्तुत करने में सफल हुई हैं । मत्रो क लिए कवि न मनुष्य धीर उमकं मंत्रों की उत्पत्ता की है

घस बं नैन बक बुड मानिह भरो तरंग ।
घाबत तीर जाहि फिरि काल मंबर नेगू संग ।

(१०४ ८६)

इतुप्य ला के घनमय भी मुन्बर बिम्बा का वर्णन हुआ है । कुछ रूप को देख कर कवि उत्प्रेक्षा करता है ।

महुम्बर बिरपि जो रं बने कहा बने मुड टोड ।
जोवन रतन हीरान है महु परती मंह होड ।

(१०६ ८-९)

धर्मान् कुछ जो मुन्कर बसत है ता गायद इममिण कि उनका जीवन रूपी रत्न जो गया है उसे ही बरती म हूडन है ।

मन्देह धीर तामुप धर्मकारों म भी बिम्ब प्रस्तुत हुआ है । धर्मान्तरस्याय विनोक्ति प्रादि भी बपन को प्रतिमय बनाने में सहायक हुए हैं । धर्मान्तरस्याय प्रयुक्त बिब पामिक धीर ध्वंजक है

मिलहि जो बिपुल गात्रता गहि गहि भेद म्हुत ।
तपनि मिरय सिरा रं सृष्टि तै पररा पतहृत ।

(१०४ ८६)

जो प्रियतम वियोग बन है बरी सुपाय जा नैन है प्रकुम्भित होकर भेद धीर धार्तिपन भी करते हैं जो मृगधिरा की तपन मदन करत है बही धारा मदन में पस्म विठ होते हैं ।

मपत्ति में धतकार रूप में कवि ने सभी प्रयुक्त धर्मकारों में बिम्बात्मक धर्मि ध्यक्ति को है । उदमा रूपक उमक बहू प्रयुक्त बिम्बात्मक धतकार है उत्प्रेक्षा धर्मान्तरस्याय विनोक्ति तदनुषा रूपरानित्योक्ति प्रादि भी प्राप्त भूत वर्णन प्रस्तुत करते हैं ।

(८) मानवीकरण द्वारा अभिष्यञ्जन—

जायसी में मानवीकरण की प्रवृत्ति बहुत कम है । बसुन सभी प्राचीन और धर्मशास्त्रीय कवियों में इसका प्रभाव-या है । पादशास्य जातिव्य मे परिचित जाने के

बाद ही हिन्दी साहित्य में मानवीकरण का प्रयोग धीरे-धीरे बिम्बन आरम्भ हुआ। आयसी ने प्राचीन परम्परा में अलंकारों का ऐसा प्रयोग नहीं पाया था जहाँ स्पष्ट और सप्रयास वह इसे कभी नहीं बतें। यहाँ तक कि उसके प्रति सचेष्ट भी नहीं है। धन आने ही सड़क रूप में उनके मुँह में कुछ ऐसी उक्तियाँ निकल गई हैं जिन्हें प्राकृतिक मानवीकरण की माय्यता की सीमारक्षा के अन्तर्गत रखा जा सकता है।

समुद्र बलन में आयसी ने समुद्र पर मानवीय भावनाओं का आरोपण किया है। खड़ा होना नेत्र निकालकर दूर दूर कर दखना मानवी किया है जो समुद्र पर आरोपित है।

उठे लहर परबत की नाई होइ फिरै बीजबन सब ताई ।

धरती भित सरय मेइ बाड़ा सकस समु ब जानहु मा ठाड़ा ।

(१५५ १५)

री बबसाग सबहि कै देखि समु ब कै बाड़ि ।

निघर होत अनु लीसे रहा बंग घस काड़ि ।

(१५५ ८-९)

बुझों का भी मानवीकरण किया गया है। अस्त में लाल पल्लवों से मण्डित पलाय उगहें ऐसे लगते हैं मानो कोई नबोड़ा प्रिय आयमन पर शृंगार करके सिन्दूर लमाकर बैठी हो।

आहु बसंत लबल रिनु साबद, पंथिमि होइ अगत सब साबा ।

लबल सिमार बालप्रीति कीन्हा लीस परासहि सेंबुर बीगहा ।

(१८३ ५५)

पद्मावती के पाँव के आभूषण बूड़ा पाबल अतबट विजुना आदि भी रूप्य से लम आने के लिए मानवीय ढंग में बिनती करते हैं।

चूरा पायल अतबट बिछिया पायल परै बियोय ।

हिए लाइ टुक हम कहँ समु बहु तुम्ह आगंहु घस मोग ।

(२६६ ८-९)

पद्मावती के आँगों के आभूषण भी कभी मानवीय ढंग से मंजना करते हैं कभी कम्यित होते हैं।

सुक सनीकर बुहु बिसि मते होहि निवार न अचतन हुते ।

कापल रहहि बोल जो देना अचमन अठु लागहि फिर देना ।

बी बी बसत लखिहु सो मुना बुठ बिसि करहि लीस बे मुना ।

(४७६ ४६)

दुख धीरे-धीरे कात का मानवीकरण भी किया गया है। दुख का नाच पीड़ा धीरे-धीरे व्यथा का दृश्य बना बैठा है।

दूरे मर्ने हत मोती दूरे मर्ने हत काँठ
लोकू लमेडि घोबरनि होइया बुद्ध कर नाथ ।

(१३३ = ६)

राजा की मृत्यु पर बायसी कास की कल्पना एक बुद्ध स्वामी के रूप में करता है जो प्राप्त के सेवक की बंध देकर अपने साथ से जाता है ।

कास भाइ देवराई लीठो बडि जिउ बला छात्रु नै मटी ।

(१५७ = २)

द्वारिदस घादि का भी मानवीकरण कवि ने किया है जो पूर्वत विम्वात्मक है ।

संक्षेप में कवि की कवि मानवीकरण की घोर विधेय नहीं है इसको स्पष्ट रूप से स्वीकारा जा सकता है । इन गति हीनता के मूल में कुछ मूल कारण हैं जिन पर पहले कहा जा चुका है । उन्होंने घामुपचो मनुइ दुल घादि का मानवीकरण किया भी है जो पूर्वत विम्वात्मक है । बायसी को बित्ते देने की मानवीकरण की प्रकृति से धर्षण नहीं भी बरगू बहु पण्डितिकि के प्राग्रह वीर परिषम क प्रभाव के कारण बैसा नहीं कर पाये हैं ।

(५) प्रतीक रूप में धर्मिभ्यक्त—

बायसी में कुछ प्रतीकार्थकता बहुत कम मिलती है । उनके धर्मिकाध प्रतीके ऐसे हैं जो उपमान से प्रतीक बने हैं धर्षण कवि के द्वारा सर्वप्रथम बहु रूप वस्तु या वृत्त के उपमान बन कर प्रयुक्त हुए थे पर कासान्तर में निरन्तर प्रयोग में घाटे घाटे बहु बढ़ हो जाते हैं । और कवि ने पाठक के हृदय में एक निरिपत धर्म के घातक बन जाते हैं कि उनके लक्ष्य में के उन्मत्त की धारणाकता नहीं रह जाती । ऐसे बढ़ वीर निरिपत धर्म से मुक्त हो जाने पर ही उपमान धर्मका बिम्ब प्रतीक बन जाते हैं । बायसी के समस्त प्रतीक इसी प्रकार के हैं ।

बायसी में चन्द्र—सूर्य धमर—कमल और धमर—मासती के प्रतीकों का बड़ा ध्यापक प्रयोग किया है । महा इन प्रमुख प्रतीकों की बिम्बात्मकता का परीक्षण पोषित होता ।

चन्द्र और सूर्य पद्मावती और रत्नमेल के लिए बहु प्रयुक्त उपमान हैं जिनका मूल बिम्बों में ही है । रत्नमेल और पद्मावती के विषय में बहुत पहले ही कवि उनके लिए कमल—सूर्य—चन्द्र उपमान से चुना था । राजा के देहा से निकलने के समय चन्द्र चार रूप का बिम्ब धारण है । पद्मावती का मौन्दक क लिए भी चन्द्र का उपमान धारण है । यही उपमान कवय प्रयुक्त हान गये वीर बिम्बाह लख तक के प्रतीक रूप बन गये । परन्तु उनकी बिम्बात्मकता भी निजमान रही है कारण कि उनका ध्यापार बिम्ब है । बिम्बाह बनने में कवि बहना है ।

चार बुद्ध बुद्ध निरमान बुद्धि मज्जेय धनुष ।

मुद्ध चौर मो मुता चार बुद्ध के रूप ।

(२५५, ५६)

यहाँ चाँद रानी पीर सूर्य राजा क प्रतीकात्मक धर्म में प्रयुक्त हुए हैं। प्राचीनी विवाह के विद्या कलाओं आदि में यही प्रतीक फिर पाये हैं।

चाँद के हाथ दीगू जंमारा चाँद आनि सुख बियं घासा।

सुख नीगू चाँद वेहिराई, हार लखत तरङ्ग सिद्धं पाई।

(२८६ २३)

चाँद सुख हुई पाँवरि लेहीं लखत मोति नेबछावर देहीं।

फिरहिं हुबो सत केर को देखेँ साती फिरि गठि सो एकी।

(२८६ १-७)

इसके बाद कला के अंत तक बार बार यही प्रतीक प्रयुक्त हुए हैं। इन प्रतीकों के संदर्भ से जायसी की कल्पना में आगे भी विकास किया है। पद्मावती की छलियों के लिए वह अंग के छाव रहने वाले लक्ष्मी का प्रतीक साया है।

पद्मावती संग सखी लयासी, गुनि के लखत पीर ससि जाली।

आमहिं मरम कबल कर कोई देखि विद्या विरहण की रोई।

(२४८ १२)

यह प्रतीक भी पद्मावत में बहुधा वृत्त हुए हैं। इसी संदर्भ में छलि रानी पद्मावती को पीड़ा देने वाली विपदाएँ कष्ट सब कवि ने राहु के प्रतीक से प्रस्तुत किये हैं। जो वस्तुतः व्यापक विन्ध का एक पुरक अंग है। एलसेन क बन्धी हो जान का समाचार जान कर पद्मावती पीड़ित होती है। कवि कहता है

जबहिं सुख अंह जायेज राहु तबहिं कबल मन मएउ अयाहू।

(२४७ ३)

पीर

सूर जईयिरि अकल मुलागा पहने पहा चाँद कुम्हलगा।

(२४२ ३)

यह सभी प्रतीक परम्परागत प्रतीक न होकर कवि के स्वनिर्मित प्रतीक हैं। पीर स्वयं कवि के अंतर्गत न एक व्यापक विन्ध के रूप में स्वीकृत हो चुके हैं। इस कारण यहाँ इनका प्रतीकात्मक धर्म प्रयुक्त हुआ है यहाँ वह सर्वत्र विन्ध विधान करते हैं। जायसी के प्रतीकों की विन्धात्मकता को च-सूर्य—मद्यम आदि के वह प्रतीक बड़ी स्पष्टता से प्रस्तुत करते हैं।

पद्मावत का एक अन्य बहु प्रयुक्त प्रतीक है कमल पीर अमर। यह भी कमल पद्मावती पीर एलसेन के प्रतीक रूप में प्रस्तुत हुए हैं। अंग पीर सूर्य के प्रतीक की भाँति इनका मूल भी विन्ध में ही है। कला के आरम्भ में कवि ने सर्वप्रथम यहाँ अंबर व कबल अम्ब का प्रयोग किया है यहाँ वह विन्ध रूप में ही है

हीरावन जो कमल बखाना मुनि राजा होइ अंबर मुलागा।

घाये आउ पंछि जमिपारे कहहिं सो दीप पतंग केँ मारे।

(१४ १२)

कासांतर में प्राकृत के कारण उत्पन्न भयं निरिषत हो गया और वह प्रतीक बन गया है। कथा के मध्य में कवि कहता है

मग्न सरोवर सति कंबल कुमुद तराई पास ।
सू रवि उषा जो मंजर होइ मग्न मिला सा पास ।

(१६० व. २)

प्राकाश मानसरोवर है अन्धमा कमल है उसके समीप टपटप होते वाले लक्ष्म कुमुद हैं। जैसे सूर्य के निकलने पर सौर बिद्विष्ट कमल की सुपन्ध सेकर घाटा है वैसे ही तुम्हारे धाम पर पवन उस पद्मावती की धम सेकर घाटा है। यहाँ प्रतीकों द्वारा त्रिब प्रहम कराया गया है। पूर्ण बुन्ध उल्लेख हो गया है।

नाममती के लिए कवि ने मातली का प्रतीक भी बहुधा दिया है। नाममती और रत्नसेन के लिए कमल मातली और भ्रमर के प्रतीक लाये गये हैं धर्म्य प्रतीकों की भाँति यह भी मूलतः विवालयक है। इस कारण प्रतीक रूप में ही यहाँ यह भाव है यहाँ विवालयकता स्वयं ही प्रा गई है। यथा

बसति एक ठेहि तिमल रये मोग बेरास कीन्हु अस बहे ।
या उदात्त त्रिज तुना लहेनु, संबरि जला नग चितवर देतू ।
कंबल उदातो बैबी भंवर, जिर न रूँ मातलि मन संबरा ।

(१७३ व. ३)

इस प्रकार स्पष्ट है कि बायली के प्रतीक बिम्ब का एक सुन्दर माध्यम रये है। पद्यों बायली के प्रतीकों में बिचिभता नहीं है परन्तु व्यापकता और एक उन्नत धर्म्य धर्म्य को व्यक्त करने की क्षमता उनमें है। उनके सूर्य अन्ध कमल मानली भ्रमर धारि सब प्रतीक हैं जो बिम्ब विधान में पूर्ण सहायक हुए हैं।

(१) मुहावरे और लोकोक्तिओं द्वारा

मुहावरे और लोकोक्तियाँ जनमानस की जन हैं। पहले पहले मुहावर और लोकोक्तियाँ किसी उपबेसात्मक कथा या घटना के रूप में प्रस्तुत होती हैं जो दूरय धर्म्य सचेतनात्मक होती हैं। धीरे धीरे उन कथाओं और अन्धनामी के मूल्य स्वरूप या मूल स्वरूप मुहावरे या लोकोक्तिओं ने रूप रूँ आठ है पर वह सदैव मूल कथा या कथा का स्मरण कराते हैं और इस प्रकार अर्थों को दूरय प्रमात है। मुहावरे धर्म्यधर्म्य बिम्बालयक होते हैं। उनके बीच कथा का एक सम्यक सम्बन्ध मूल कथा है, जो व्यक्त को तीव्र कर देता है।

मुहावरे के अर्थों में बायली पद है। अन्धना अनेक मुहावरे का प्रयास किया है, जो बिम्ब विधान में करते हैं। अर्थ प्रयत्न के लिए 'संबर मुपा' का मुहावरा बहु प्रयुक्त है जो बिम्ब योजना भी करता है

संबर सेइ न बित कर मुबा पुनि पडतालि घंत होइ मुबा ।
रूप तोर रूप रूप लोना वह जोवन पठुन रूप होना ।

(१२४ व. १)

असम्य वस्तु के लिए 'उमर के फूल' मुहावरण प्रयोग किया है। बृत्तर का फूल एक अत्यन्त दुर्लभ फूल है, अनेक प्रयत्नों के बाद प्राप्त होने वाली पद्यावली बृत्तर के फूल के सदृश्य है जिसे सोकर राजा अतीव पीड़ा का अनुभव करता है

तपि के पाव उमर कर कुसा पुनि तेहि खोइ तेहि पंच मृता ।

(५१२)

आश्चर्यपूर्ण बीरता के लिए हाथी के दाँत और कछुए की घीसा की सामा नया है। हाथी के दाँत बीरता का यथार्थ रूप है। कछुए की घीसा कायरता का प्रतीक है

पुस्त बोलि के हरे न पाइ, रसन क्यंन नीय नहि काइ ।

(५१८)

अधिकार में होन पर भी ब्रह्म पिटारी में बह सर्प की मति घातक होता है। आयसी ब्रह्म की इस बातकता को पिटारी में मुखा हुमा साय' मुहावर से प्रकट करते हैं। 'बाब पर नमक छिड़कना' मुहावर का भी आयसी ने प्रयोग किया है जो प्रसंग के कारण बिम्बारणक हो गया है

बड़ी सो सोने सोने धरो सो बने साव ।

मुक्त रूप में रानी द्विये सोल अत साव ।

(८४)

निष्कण्ट पर आम्बतर मुर्षों से विभूषित व्यक्ति के लिये कवि 'मवार का पतंग' लोकोक्ति का प्रयोग करता है जो बड़ा व्यर्थक है। मवार पर तितसी का कैटर पिलर रहता है जो कुम्भ और तुम्ब होता है परन्तु उसी से मुरम्ब तितसी का निर्माण होता है। उस कुम्भ आवरण के पीछे वह मुन्दरता छिपी रहती है। आम्बतर मुर्षों से मंडित सुग्ने के लिए कवि ने यही लोकोक्ति दी है

बैचें लाय हुम्ब नै छोही सोल रतन मानिक बहै होई ।

कुमा को पुछे पतय मंडारे, बलन रीष अठे मन मारे ।

(७९)

राजि की बिन की समता न कर सकना हुंस के प्रमाण में बजुने का हंस कहमाना प्राणि अम्य अनेक लोकोक्तिवा पद्यावली व मत्तमती व रूप के विरोध को स्पष्ट करने के लिए आई है। बर्ष का साम्य होने से यहाँ बिम्ब भी निर्मित हुआ है

सबर रूप पदुभावति केरा हुंसा कुमा रानी मुच हिरा ।

बेहि सरबर मंह हुंस न प्रावा बजुनी तेहि अस हुंस कहावा ।

अ पुछहु तिपल की मारी बिनहि न पुअ निधि अघियायी ।

पुहप कुपच सो तिगह के कया बहौ पाव का बरनी पाप ।

(८४)

इसके प्रतिरिक्त वेहू के साम धुन पिसना तबसे की बसा बर के घिर, धारि मुहावरे, निठहिं बो पाहन भक्त करै, घस कहि कै मुक्त बात' 'रोगहिं की कौ बाल बेबहिं जहाँ अपास' जो विव (गुप्ता) दुन्दै न समु ब जन सो मुग्ध कछ मोस' पृथ्वी का बयना धारि सोकोविठयो का कवि ने विन्मात्मक प्रयोग किया है।

घट में इस अध्ययन से स्पष्ट है कि जायसी ने सर्वाधिक विन्म उपमान या धसकारों के रूप में धामे हैं जो अध्ययन स्वाभाविक भी है। उपमानों से कविता का एक बड़ा भाग भरा रहता है और उपमान विन्म के सहज माध्यम हैं। इसके परभाव दूसरा स्थान लक्षणा धरना व्यक्तता का है। प्रतीकों और मानवीकरण का मूस विन्म में ही है। इस कारण वह सर्वत्र विन्म विज्ञान करते हैं। सोकोविठयो और मुहावरों के द्वारा धमिभ्यक्त विन्मों की संख्या भी पर्याप्त है। धमिभा में जायसी ने विन्म विज्ञान कम किया है और उपमान या धसकार में सबसे धमिक। यह जायसी के परम्परावादी स्वभाव की स्पष्ट करते हैं। वह जन्ही प्रशंसित परिपाटियों पर रूप और वस्तु का विज्ञान करता रहा जो प्राचीन साहित्य में इहीर भी परन्तु दूसरी धोर ब्यंजना का इतना धमिक प्रयोग उन्हें परम्परावाधियों से दूर में जाता है। यह दृष्टि उनकी स्वच्छ प्रकृति की छोटक है। ऐसा प्रतीत होता है कि वह मनीनता के धम्येपक के पर उन्हें पुरातन से भी मोहू था। उनकी धमिभ्यक्त स्वचन है। धामा के सभी सम्भव धाधनों का प्रयोग उन्होंने विन्म को धमिभ्यक्त करने के लिए किया है।

प्रस्तुत धम्याव में हमने जायसी के विन्मों का विन्म-विन्म धाधारों पर बर्षीकरण और विवेचन किया, जिनसे उसकी अनेक मान्यताएँ, धमियों दृष्टिकोणों धारि का ज्ञान हुआ।

उपाध वस्तुओं में सर्वाधिक संख्या प्रकृति के क्षेत्र से इहीर वस्तुओं की है। प्रकृति के प्रति जायसी के रूप में विधेय मोहू है। प्रकृति में भी धाकायी विन्मों ने उन्हें सर्वाधिक धादृष्ट किया है। धम्य क्षेत्रों—वनस्थल, परंत जस धारि से इहीर विन्मों की संख्या भी पर्याप्त है। प्रकृतिर जीवन में धाम्य जीवन में उन्हें विधेय धमि है। धाम्य जीवन के धम्येक उपकरण विन्मात्मक रूप में प्रस्तुत हुए हैं। जीवन के धम्य क्षेत्रों में उन्हें विधेय धमि नहीं थी वा उनसे उनका परिधय धमिक नहीं था।

मधेदनाओं में जायसी ने रूप संवेदना से कुछ विन्म सर्वाधिक है। इन दस विन्मों में रूप रूप पर्याप्त है। कहीं यह विन्म वेस्टल के धूरे सीले काठ रणों से मुक्त है तो कहीं केवल प्रकाश और धामा के विधेय कथते हैं। धम्य मधेदनाओं में स्पर्श धाम्य और धम्य में कुछ विधिष्ठता है जो जायसी की धमियों को प्रकट करती है। धामारणनः वह संवेदनाओं की दृष्टि से साध्या ही रहे हीने विधिष्ठ नहीं। बंधे उनमें कई धमिभ्यक्त विधिष्ठताएँ हैं पर वह धसधारण और बहुत धमिक नहीं हैं।

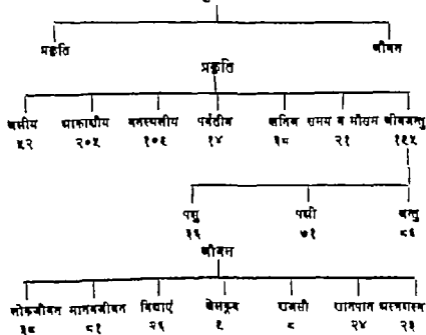
जायसी में रति जायसी का धम्यन ज्ञान है। प्रेम के दोनों पक्ष—धम्य और धमि विधेय जायसी के कवि की प्रमुख धाम्य धमियाँ हैं इनमें धी धम्यरणा और धामिकता

बिद्योग के बिम्बों में ही अधिक है जिससे उसका पीड़ित हृदय और प्रेम वीर के गायक कवि का रूप प्रयत्न होता है। प्रेम के प्रतिरिक्त कल्याण या शोक सम जरासाह क्रोध भावि ने उसे प्राकृतिक किया है। वासस्य और हास्य के लिए उसके हृदय में कोई स्थान नहीं है।

काव्यमय शैली में बिम्बों की मूर्तता पर कवि का विश्वास अधिक है। समूर्त बिम्ब उसके काव्य में बहुत कम है कुछ तो परम्परा के कारण कुछ अपनी विशिष्ट दृष्टि के कारण। उगले मूर्त और समूर्त दोनों ही प्रकार के भावों बिम्बों के प्रयत्न वस्तुओं को मूर्तता के माध्यम से ही प्रस्तुत किया है।

बिम्बों के रूपगत प्रयोगों में सबसे अधिक बर्णकारगत बिम्बों का प्रयोग हुआ है जो उसके परम्परावादी रूप को प्रकट करता है। परन्तु दूसरा स्थान व्यंग्य या लक्षणा के माध्यम से प्रकट होने वाले बिम्बों का है जो उसकी नवीनता के प्रति प्राप्य की दृष्टि का परिचायक है। मानवीकरण मुहाबरे प्रतीक भावि सभी सम्भावित शैलियों द्वारा उसने बिम्ब प्रहल करवाया है जो कवि के भावाधिकार को प्रकट करता है।

वर्गीकरण उपास्य वस्तु के आधार पर



बिम्बुत-सूची

प्रकृति

(अ) त्रयीय बिम्ब—१२

समुद्र २४ सरोवर ६ नदी १५ धन्य ४ ।

(आ) प्राकाशीय—२०५

सूर्य—४४ (सूर्योदय १२ सूर्यास्त १८ सूर्य ११ धन्य ८) चन्द्र ६७ दिवस ४ रात्रि ३, नक्षत्र ३१ बिजली २०, मेघ १६, आकाश ६ पवन १ वर्षा १२ आकाशगंगा १ प्रलय १ ।

(इ) बनस्पतीय—१०६

वृक्ष ७ मछा १४ कृतचारी १ पुष्प २७ फल ७ पत्ता २ कली १ बीज १ भूमि २ तिनका १ धन्य ३ ।

(ई) मौसम और समय—२१

बसन्त १२ माघन माघी ४ श्याव १ फास्मून १ धन्य ३ ।

(उ) पर्वतीय—१४

पर्वत १४ ।

(ऊ) शान्ति—३८

मोठी ६, माबिक ३, मुला ४ हीरा ३, नग २, पशार्थ ४ रत्न ६ कपन ३, पन्ना १ बुधुषी २, कीड़ी १ काब का पोत २ ।

(ए) बीब जन्तु—११३

(क) पशु—(३६)—सिंह ६ हाथी ७ मुग ६ रीछ १ बैल ३ चरम १ बीड़ा ३, बिलाव १ बिरसो १ ।

(ख) पक्षी—(७१)—मयूर ६ तोठा ६ हंस ३, कोयल ६ खंजन ६ नकुलर ३ नाटक ६ बकोर ४, मुर्मा २ बगुला ९ सारस ४ पक्षी ३ बाज २ बंधु १ धीन या पिछ १ कीकिल्ला २, गरद १ धन्य ३ ।

(ग) जन्तु—(८८)—पतंगा २० बौर बहूटी ६ घन २० अमर १७ बीन ६, मगर १ कसुपा १ भूमि ४ बीनी २ छीपी १० मक्की १ ।
बीचन

(घ) लोक जीवन—३८

अपकरण १३ किया कलाप १ कषाएँ २२ ।

(आ) मानव जीवन—८१

अपकरण ६१ जीवन को मजस्या ११ मनुष्य की खेगियां २ शरीर व पाग ४ मृत्यु व बीजारी ३ ।

(इ) बिलाएँ—२६

गिरफ व कषाएँ २ भौगोलिक ३ ख्योतिव ४ ।

(ई) वेसकृत—१

घटर्ज ५ शीपाम ३ पर्वग उकाना १ सदृष्ट १ ।

(उ) राजसी—८

मुष्ट १ सेना १ राजा का रूप ५ ।

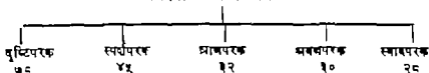
(ऊ) क्षानपाम—२५

उपकरण ७ वस्तु १६ प्रक्रिया १ ।

(ए) धम्म शास्त्र—२३

मनुष्य भाग १७ तमवार १ वष्य १ ।

संवेदना के आधार पर



अध्याय ६

जायसो की विम्ब योजना का परीक्षण

(१) सफल विब

विम्बों की सफलता काव्य के प्रथम्य यत्न का कारण होती है। वह मूल काव्य का एक सफल प्रमाण है। जायसो के विम्बों का परीक्षण करने पर उनकी असंदिग्ध सफलता सिद्ध हो जाती है। सफलता के लक्ष्य पर पहुँचाने वाले कुछ मोपान भी विम्ब के समीपकों एवं भाषाओं द्वारा स्पष्ट किए गए हैं। उन्हीं समीपकों पर परीक्षण के उपरान्त कवि की विम्बगत सफलता का आभास मिल सकता है। विम्ब की सफलता के लिये प्रसिद्ध आलोचक मुहम्मद न कुछ गुण बताये हैं त्रिनक होने पर विम्ब की सफलता में सन्देह का कोई स्थान नहीं रहता। ये गुण निम्नांकित हैं

- (१) भाव को उत्तेजित करने की शक्ति evocativeness
- (२) तीव्रता Intensity
- (३) नवीनता व ताज़गी Novelty and Freshness
- (४) परिचित वस्तु का प्रहृषण Familiarity
- (५) व्यञ्जकता Fertility and Suggestiveness
- (६) समीप्य Congruity
- (७) बनाव में योजन as a part of whole structure
- (८) भावों का प्रकाशन evidence of ideas and thoughts

विम्बों के इन गुणों का विम्बगत विवेचन विम्ब के संदर्भ में द्वितीय अध्याय में किया जा चुका है यहाँ समय रूप में लेकर जायसो के विम्बों में ही इन गुणों का प्रकट किया जायगा और उनकी सफलता के साधन के रूप में इनका विवेचन होगा। उनके प्रतिरिक्त जायसो की सफलता प्रदान करने वाले प्रथम्य गुणों का भी विवेचन किया जायेगा।

(१) भाव को उत्तेजित करने की शक्ति—विम्ब में सफलता का कारण उनकी आभासक उत्तेजना प्रदान करने की शक्ति माना गया है। पाठक के ध्येयार्थ में मूल आभासों को जागृत कर विम्ब उसे उस सीमा तक उत्तेजित करता है जहाँ पाठक भाव का पुनः आस्वादन कर सकता है अर्थात् भाव की सम्यक अनुभूति से

नाबसरसता की स्थिति को प्राप्त कर सकता है। सुइस ने यह गुण पूर्वतः व्यक्ति परक बताया था परन्तु एक बिम्ब स सप्त बना किसी न किसी मात्रा में सभी पाठक पा सकते हैं। जायसी के भी जो बिम्ब हमें उल्लेखित करते हैं वह न्यूनाधिक रूप में सभी को आकर्षित करते हैं। बिम्बों में नवीनता और तीव्रता की शक्ति उसको उल्लेखना के भुज से पूरित कर देती है। समस्त वेतना को भंगना कर देने की सामर्थ्य जायसी के बिम्बों में पर्यप्त है। यथा

हाइ समे सब कीगरी नछे भई सब तांति
रोम रोम त बुनि बडे कहति बिबा केहि भाति ।

(१६१ ८-९)

यहा बिम्ब रूप स धनिष्पक्त बिरह रूपमा का मात्र पाठक को उल्लेखित करता है। यद्यपि अस्तित्वावधि का हस्तका सा सहाय यही लिया गया है पर वह मात्र की स्थिति हास्यास्पद न करके उसका उपकार ही करता है। बिरह अनित्य कृपता और अनस्यता की व्यवस्था नशों के तांत बनने और एक ही स्वर के निरन्तर बजने में बड़ी सुन्दर हुई है। यहा मागमती प्रतिप्राया हिनू नायी से भी अधिक धमत्त्व व अनुपामयी साधिका के रूप में प्रकट होती है। बनिबान बिसका भम है। अपनी आरीरक सुन्दरता को बिसने बिरह की अग्नि में जला कर कीगरी और तांत बना लिया है, एकनिष्ठ तप बिसका जीवन है। ऐसे बिम्ब मात्र की सम्यक व्यवस्था के कारण उल्लेखना प्रबल करते हैं और बिम्बगत सफ़सता में बोग बैठे हैं। पद्यावती का रूप वर्णन भी उल्लेखना से पूर्ण होने के कारण सफल हुआ है

तेहि मंदिन मुरति न देखी बिनु तनु बिनु बिप जन बिलेखी ।
बाँद संपूरन जनु होइ तनी पारस रूप बरस ई छपी ।
बिगसा कबल सरम निति बनहु लोक गा बीनु,
यह राहू मा माबहि रापी मनहि पतीनु ।

(१७१ १९)

यहा पद्यावती की तुलना तबीमब वृत्त क बीच अत्रमा से की गई है। यह उपमा पद्यावती के सौख्यपूर्ण मुखमण्डल के तेज को प्रकट करती है। जायसी ने पद्यावती के मुख क चारों ओर भी भववान राम कृष्ण घाबि क बिम्बों के सदस्य तेज का वृत्त या मण्डल कल्पित किया है। पारस से युक्त अत्र का बिम्ब इसे स्पष्ट करता है। जिससे उसकी लोकोत्तरता के कारण उल्लेखना घाटी है। रूप की एक अनुपूर्वता का आभास मिलता है। बिजसी की चमक भी रूप के प्रकाश का प्रकट करती है। पद्यावती के लिए प्रयुक्त पुष्पिमा क बाद का बिम्ब भी उल्लेखना के कारण विशेष सफल हुआ है। बिरह बिहग्या अनुपामयी रागी का रूप दीपक में निरन्तर प्रज्वलित होती रहने वाली बातिका से लिया गया है

जब पनि देखत बिरहु मा राती,
 करि बिरहु ज्यों हीपक बातो ।

(३४६ २)

निरन्तर प्रकाममान रहने और निरन्तर दग्ध होती रहने के कारण बिम्ब बड़ा उत्तेजक बन पड़ा है। यह रानी का स्वरूप सामने रखता है। इसी प्रकार बिरहु के धारण समुद्र में डूबती हुई रानी का चित्र है जो समुद्र की धारणता घटाहटा पर ध्यान केन्द्रित करने के कारण बड़ा उत्तेजक प्रतीत होता है।

जल-जल मरे प्रबुर सब मगन परति निनि एक
 पनि ओवन चौगाह में रं मुकत पिय देख ।

(३४६ ८-९)

यही बिम्ब अपने इसी जल जल रूप के साथ पधाक्त में कई बार प्रयुक्त किया गया है।

समुद्र में बह कर घाटी हुई मूर्च्छिता रानी का चित्र भी प्रयुक्त व्यक्तता के कारण उत्तेजक है।

रंग जो राती प्रेम के जामहु बोर बहूटी ;
 धाड़ बहि रधि सभ व में रं रंग नाँव नदृष्टि ।

(३६० ८-९)

रानी क धनुराम एक एक निष्ठ प्रेम की व्यक्तता भास रंग की बोर बहूटी क धाड़ हुई है जो बिरहु समुद्र को पार करने के उपरान्त भी धनुरामकी बनी रहती है इसी स्वप्न पर प्रयुक्त दुःख चित्र भी उत्तेजक है।

कामर पुतली बँस लरोरा पवन उड़ाए परा मँछ मीरा,
 उड़हि मकोरि लहरि जलभीजी तबहु रूप रण माहीं छोरी ।

(३६८ २३)

कामर की पुतली के रूप में बघावती की निष्प्राणता की मूर्च्छितावस्था लक्ष्य हो उठी है। उनकी प्रेम पूषणा के लिये 'रूप रण माहीं छोरी' शब्द लिए गए हैं। यन्त्रणा काव्य की पुतली का रूप रंग ता पानी में बिहृत हो जाता है। कामर बिम्ब का जो उत्त चित्र करता है और इस कारण मरुत भी हुआ है। जायसी क अधिकांश बिम्ब मनीषता व्यक्तता और नन्द्यगत प्रवेदा क कारण उत्तेजक और मरुत है।

(२) भाव को तीव्र करने की शक्ति—भाव को तीव्र रूप में उपस्थित करने की शक्ति ही बिम्ब को मरुतता एवं मरुत का एक बड़ा कारण है। काव्य की भाषा उत्थित की भाषा (संवेदक भाषा योम) बहुभासी है यह (कोर्म) मरुत भाषा को बिम्ब की ही देन है। भाषाएण रूप से काव्य में भाव प्रकट नहीं हो सकता उसकी मरुत प्रतिबन्धित के लिए बिम्ब उपोत्पन्न है। रूप वजन भी अधिकांश द्वारा साम्यक प्रभाव नहीं

उत्पन्न कर सकते हैं। उसके लिए बिम्बात्मक भाषा की आवश्यकता होती है। उप
मानों एवं बिम्बों द्वारा ही भाव व्यक्त रूप की तीव्रता अभिव्यक्ति की जा सकती है।
जो बिम्ब भाव का साधारण से अधिक आकर्षक या प्रभावशाली बना कर प्रस्तुत
करने में असमर्थ है उन्हें सफल नहीं कहा जा सकता। पद्यावत के सम्मिलित सभी
बिम्ब भाव का उपकार करते हुए उसे अधिक उत्कृष्ट रूप में प्रस्तुत करते हैं।
यथा

बाँव बँस धनि उखपरि घही भा पिय रोस यह्न घस पही

(८१ १)

कुपित राजा की क्रूर भावना सुगहर सती होने की आशंका और राजा के
रोप से रानी प्रहृष्ट प्रसन्न बाँव की भाँति मलिन हो जाती है। रानी रूप गर्बिता
और प्रेमवर्तिता है। राजा एक तुच्छ सुगहे का कारण उस पर क्रोधित भी हो सकता
है इसकी कल्पना भी लायक उसने न की थी। इसी कारण राजा के अकल्पित रोप
से उसकी हृदयगत भावनाओं को भक्का लबता है और फिर मृत्यु की भाँसी आकांक्षा
से उसका हृदय पूरी तरह कुन्नी और मलिन हो जाता है जैसे बाँव को घनायास
ग्रहण भय गया हो। बिम्ब परिस्थिति और चरित्र को भी स्पष्ट करने के कारण
बड़ा सफल हुआ है। भाव की समग्र और तीव्र अनुभूति सहज ही की जा सकती है।
इसी प्रकार राजा के प्रत्याग के समय नगर में आन्दोलन छा जाने का रूपक दिया गया
है। जो निराशा पुनः बेचना और आगामी दण्ड का भ्रंश भङ्गी सफलता से
करता है। रूप वर्णन में तुलना का प्राधान्य रहने के कारण रूप की उज्ज्वलता और
सुन्दरता की तीव्रतम अभिव्यक्ति हुई है।

तु रे राहु हौँ ससि अजिबारी

बिन्हि के पूरै भिसि अधियारी ।

(४४० ७)

अथवा

उपस नूर अस देखिऊ बाँव क्यै तेहि रूप
जैसे सबै जाहि छपि पदुमावति क रूप ।

६२ ८-९)

विरोधात्मक वस्तुओं को एक साथ रखने से भाव एवं रूप निश्चर ठठा है।
नागमती की कुख्याता और पद्यावती का वैजोमय सौन्दर्य राहु अग्नि रात-दिन और
सूर्योदय के रूपक में तीव्रतम रूप में व्यञ्जित हुआ है। बिम्बों द्वारा यथा रूप की प्रतीति
साधारण से कहीं अधिक होती है। नागमती और पद्यावती क्रमशः धमाधारण दमो-
न्दर्य का रूप हो जाती है।

विरोधात्मक वस्तुओं में सबैब ही भाव तीव्रतर हो जाता है। बिम्ब से प्रसु-
न्दर और मलिन पद्यावती के लिए बाँव के पीत की उपमा आई है जो उसके पहले

ज्योतिष रूप के समझ भक्ति कुछ धति निकृष्ट स्वरूप को उपस्थित करती है और इस प्रकार क्षुद्रता और भ्रमस्वरता को तीव्र बनाकर प्रस्तुत करती है।

मय लै मयऊ रतन सब जोती, कंचन कया काँच भै पोती

(५८१ १)

पद्मावती की बिरह प्रथम मजिनता को बायसी ने इसमें चित्रित कर दिया है।

प्रतिप्रयोजित का प्रसंग प्राने पर भी बिम्ब भाव को तीव्र करने के कारण छफल कहे जा सकते हैं। यद्यपि प्रतिप्रयोजित में बिम्ब निर्मित नहीं होता और हो भी तो बिम्बुमन्त्रित ही हो जाता है परन्तु प्रतिप्रयोजिता का हल्का सा प्रामास उसे लोकोत्तर एवं अपूर्व ही बना देता है पर उपहासास्पद नहीं बना पाता। जैसे—

बेनो भार छार जो केसा, रंजि होइ अप बीबक मैसा।

सिर दूत सौहर बरहिं भुइ बारा लगेर बेस होइ अघियारा।

(५७० १२)

इस वर्णन में पद्मावती के बेशों की बनी स्वामता का पूरा प्रामास मिलता है जो उसे प्रयोजन न बनाकर सोकीतरता की धोर से जाता है। इसी प्रकार कोचित राजा का बिम्ब वेठ मास के तपते हुए सूर्य से पिया है।

मुनि के रिसि रत्ता सुनवानु असे बिई बौठ कर भानु।

लहलौं करा रोस तत भरा, बेहि बिसि बसे सो बिसि बरा।

(५६५ ५१)

जिबेर देसा उबर ही बलने लया से प्रयोजनता नहीं था पाई है बरन उसके बिनासकारी प्रेम की तीव्र स्पंजना हुई है। सनिक प्रयास पर राजा के पिर प्राने की कस्यता में भी प्रतिप्रय के कारण तीव्रता आई है।

हय यय देन बलाइ अप पूरी परबत दूटि पड़हिं होई धूरी।

रैनु रदनि होइ रबिहिं मरासा जागुस पंजि जेहिं फिरबासा।

(१५ २१)

कुलसल पर बनबीर बर्पा के रूपक भी बिनासकारी स्वभाव और मयातलता की सजता के कारण पुत्र की भयंकरता को तीव्र रूप में प्रस्तुत करते हैं। बायसी ने इसी कारण कुछ स्वतः पर बर्पा और प्रलम के लम्बे २ रूपक दिये हैं।

परिस्मितपत एकटा होने के कारण बिरह दाह से मन्म भागमती का हृदय और धीम के तप्त सूर्य की दाह से मन्म सरोवर की मुनि से सहज ही धामजस्व करने में सक्षम हो गया है।

सरबर हिका घडत निज बाइ दूनि दूकि होइ होइ बेहराई

बिरहल हिवा करहु निज देका कीठि बंजपरा मेरबहु एका।

(११५ १-७)

संक्षिप्तता एवं व्यथकता के कारण भी बिम्ब में तीव्रता का मुक्त भाव जात है। इसी कारण मुहाबरे के रूप में प्रयुक्त बिम्ब प्रथम ही सफल होते हैं। जायसी ने भी कहीं कहीं बिम्बात्मक मुहाबरे दिये हैं

तपि के पाव उमरि करि फूसा पुनि तेहि जोइ तेहि पंच भूसा

(४१२ २)

‘उमर का फूस’ प्रति असम्बन्ध पद्यावली के लिए उचित उपमान है। राजा की तप साधना धीरे-धीरे सहेने के परिणाम मिलने वाली रानी का मोह-समी इस रूप में अभिव्यक्त हो रहे हैं। भाव की प्रत्यक्ष उत्कृष्ट व्यंजना यह मुहाबरा कर सका है। कर्मकों के प्रतिरिक्त कहीं-कहीं प्रस्तुत चित्रों में भी ऐसे उर्ध्वों का संयोजन होता है जहाँ भाव तीव्र हो जाता है। जैसे

या धीरज बहु बेसि हिलोरा जनु भकास डूटै चहुँ घोरा
उठै लहर परबत की तारै हाई किरै जोबन लख तारै
बरती जेत सरग भेति बाझा सकल समुद्र जातहु भा ठाड़ा।

(११५ २४)

यहाँ पर्वत के समान उठती लहरें कहने से सम्भवतः कवि को संतोष नहीं होता इसी कारण वह समुद्र के लगे हो जाने का रूप प्रस्तुत करता है जो विस्तार को स्पष्ट कर देता है। इस प्रकार मयंकरता की भी चरम सीमा कवि देना चाहता था वह भाव जाती है। यहाँ ‘ठाड़ा’ शब्द कवि के भाषा को तीव्रतम रूप में प्रस्तुत कर सका है धीरे-धीरे बिम्ब की सफलता का मूल कारण भी है। जायसी के सभी बिम्ब भाव की अभिव्यक्ति करण में समान धीरे-धीरे इस कारण सफल बड़े जा सकते हैं।

(३) नबीनता धीरे-धीरे—बिम्ब की नबीनता धीरे-धीरे भी उसकी सफलता का एक बड़ा सोपान है। प्राचीन बिम्ब प्रयुक्त होते-होते इतने रुब हो जाते हैं कि भावोद्बोधन की तकनीक भी सामर्थ्य उतने नहीं रहती न वह अनुभूति का संकलन कर पाते हैं। इस पर भी कवि लगातार उग्रे-उग्री शब्दों में उसी मन्त्रा के भाव रखते चले जाते हैं। ऐसे बिम्ब सफल नहीं कहे जा सकते हैं। बिम्ब में नबीनता भी इतनी आवश्यक नहीं जितनी लाजगी। पुराने उपमान की लगे शब्दों में मये से मयते हैं। धीरे-धीरे काव्य में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त करते हैं। जायसी में यद्यपि नबीनता की धीरे-धीरे शब्दावली कम है पर कहीं कहीं वह सुन्दर धीरे-धीरे नबीन बिम्ब भी प्रस्तुत कर सके हैं

मुबलि परी बनुभावती रानी कहुँ बिऊ कहुँ विउ घसै न जानी
जानु बिउ मुरति गहि तारै पाटा परी बही तति चारै।

(३६७ १२)

‘बिउ मुरति’ के रूप में पद्यावली के मीथर्वपूर्व निष्प्राण सटीर की बड़ी उत्कृष्ट व्यंजना हुई है। यहाँ बिम्ब नबीन है धीरे-धीरे भाव एवं कल्पित क शब्दों में घाने के कारण विशेष सफल हुआ। बन्तुग नबीनता की शक्ति में कवि कभी-कभी ऐसी

मीन प्रस्तुत वस्तु एवं व्यापारों का बिडियापर उपस्थित करते हैं जहाँ कोई भी की हमारे नाम का नहीं होता। बायसी ने ऐसी नवीनता का पस्ता कहीं नहीं ठका है। इसके स्थान पर उन्होंने पुरानी वस्तुओं को नवीन नाम सज्जा में प्रस्तुत या है जिससे वह ताजगी के कारण प्रथम दृष्टि प्रभाव डालने में समर्थ हो सकी है। केस के लिए सर्व धारण्य प्राचीन उपमान हैं परन्तु बायसी ने उसे नवीन रूप से पुनः किया है।

मलयगिरि की पीठ संभारी बेनी भाग चढ़ा अनु कारी।
नहीं बत पीठि अनु पढ़ा भीर घीहावा कम्बुकि मङ्गा।

कंचुमी मङ्गा हुषा मय जो धावरण से युक्त बेनी का उपमान है नवीनता (१११ ४)

धीर ताजगी दोनों ही सुवर्ण स युक्त है। यद्यपि ताजगी का सम्बन्ध नवीनता से है परन्तु नवीनता उसके लिए एकान्त प्रावश्यक नहीं है। मन्मन्गल उपयोगिता के कारण भी बिम्ब जीवन्त धीर मण्डल कहे जा सकते हैं। जैसे गर्मबटी माँ के हृदय के उन्माय का व्यञ्जक मह बिम्ब

जस धीवान पुर होइ तामू दिन दिन हिये अथिक परगासू
जस अंचल शीने मंह दिया तस जजियार बेकार्य हिया।

(१२ ६-७)

व्यञ्जकता धीर ममय भाव की तत्कालिक अनुपुष्टि करा देने के कारण भी बिम्ब ताजे धीर सपन प्रतीत होते हैं—

तर्प बीज जस परतो सूख विरह कं बाय।
रज सुबिदि की बरसं तत तिनपर हो बाय।

(१११ ८ १)

पर्याप्त शाह बरती में दीप्य रूपी विग्रह से दग्ध होते बीज की भाँति रागी की मुरटि की बर्पा की प्रतीक्षा कर रहा था जिससे उसका प्रेम भाव अनुचित हो जाता। नवीनता मन्वयं धीर समग्र परिस्थितिको एक साथ प्रकट कर देने के कारण बिम्ब विशेष मण्डल हुआ है। बायसी ने प्रस्तुत बच्चों में भी ताजगी का पर्याप्त धामास निमित्त है। अनु बाल्य इन दृष्टि से विशेष उन्मत्तनीय है।

रिनु पाबस बरत पिउ पाबा सावन नारी अथिक सीहावा
जमई बीजू बरति जल सोना शानुर धीर सवन मुठि सोना
रंय रागो विप सप निसि प्रापी गरज गवन चौक मरलापी
सोतस डू ब डू क चौबारा हरिधर मध बदिगी संतारा।

(११७ १ १)

उसी प्रकार माममरोध तास तनाव समुद्र प्रादि के बर्चन भी सुन्दर एवं ताजगी से परिपूरित है। समन्ति से यद्यपि बायसी ने नवीन बिम्बों की धीर बधि

नहीं है पर वह नबीनता का शृंगार करम में समर्पण हुए हैं। ठानपी और नबीनता की बिभूति उनके बिम्बों की एक विशिष्ट महत्त्व का अभिव्यक्ति बनावटी है।

(४) परिचितता— बिम्बों का परिचित होना उसकी प्रेयनीयता में सहायक होता है। बिम्बों के उपकरण जीवन और जगत में माधारणतः प्रचलित और परिचित होने चाहिये। जायसी का प्राग्रह समाप्त साई गई नबीनता के सिवा बिम्बुस नहीं था इसके कारण उसके सभी बिम्बों के उपकरणों से समाज परिचित है। कुछ उपकरण उसके कुछ प्रामीण हृदय की मझी भी देखे हैं जो प्राचिनिक नागरिक पाठकों के लिए उसी रूप से आकर्षक एवं प्राज्ञ नहीं हो सकते जैसे स्वयं कवि के लिए थे। जैसे

(१) मर बै नैन रहट की परी
भरी से डारी सु छी मरी।

(४३ ७)

(२) सरबर हिया घटत मित जाई
दुकि दुकि होइ होइ बैहराई।
बिरह हिया करतु पिछ टैका बीठि
बचगरा भेकहु एका।

(१४५ = ६)

(३) बरिसी मया भकोरि भकोरी मोर
दुइ नैन सुबहि जस घौरी।

(१४६ ५)

(४) बितबर हिनूहु कर अस्वाभू
सतुठ सुक हठि कीन्ह पयानू।
साबा सम ब रही नहीं बाबा मैं
होइ मेइ मार सिर बाबा।
पुरबइ भाव मुम्हार बड़ाई
नाहि त सब गी जाइ पराई।
जो लपि मेइ रहे मुस साबा
दुटै बार जाइ नहि राजा।

(१ १ ४-७)

आदि। परन्तु हमारा नागरिक जीवन भी सम्भवतः सभी प्रामों से इतना दूर नहीं गया है कि रहट, मेइ, सरोबर, मया की बर्षा आदि उसके लिए अपरिचित हो जाय। अतः अपरिचितता का दोष जायसी पर नहीं लगाया जा सकता और वैयक्तिक अनभिज्ञता के लिए कवि को उत्तरदायी भी नहीं ठहराया जा सकता।

जायसी के सभी बिम्ब जीवन और जगत के जीवन में उठाए गए हैं। नावमती के बिरह बचन में कवि ने कई बिम्ब एक साथ प्रस्तुत किए हैं। कहना न होना कि वह सभी हमारे परिचित हैं।

नैन सुबहि जस माहुट नीव

दुटहि बू ब परहि जस घोला बिरह पवन होइ मारें मोसा

केहिक सिमार को पहिर पटोरा, गिय नहीं हार रहीं होइ डोरा

तुम्ह बिन कता मनि हरइ तज तिनबर मा डोस

तेहि पर बिरह जराइ कै चहैरे उड़ावा मीस।

(१५१, ५-६)

यहाँ सभी प्राकृतिक व्यापार हमारे परिचय हैं। इसी से भाव को सहज प्राप्त बना देते हैं। मानवोप उपकरणों में दीपक प्रादि क बहुत प्रयुक्त बिम्ब भी हमारे परिचय हैं। प्रकृति से दृष्टित सूर्योदय और सूर्यास्त के पर्यन्त ब्यांजक बिम्बों से भी हम अनभिज्ञ नहीं हैं। सूर्य किरण जो पद्यावती का प्रतीक है हमारी परिचय की परिधि में ही है।

भवे इस मास पुरि में घरी पनुमावति कम्पा घोठरी।
 जानहु सुवज किरण हुति काड़ी मुरज करा घटी बहु बाड़ी।
 मा निति माह बिमक परगामू सब उजियार भयऊ कबितासू।

(११ ११)

कमल पुष्प मधुकर बेल गुल सभी की शाहसा का कारण इमाय उनसे निकट का रासात्मक परिचय है। माधारण जीवन में भी हम इनस माबाबिभूत होते हैं। काव्य म प्राकर भी उनका यह काय चलता है। बसन्त और पतझड़ जीवन में भी उत्थान उतन साम और शय क प्रतीक हैं। जिस प्रकार काव्य में केशवहू नितहि बेंद नब साजा कबट न साज परै घरा राबा साज बाहि प्राबहि हुद साजा करहि सरहि उपहि नौ साजा

(१२२ ४५)

इसी प्रकार बर्षा पमासान वृष्टि प्रादि भी जायसी में बहुत प्रयुक्त की हैं। परिचय ही हैं। बसामान वृष्टि के मागरूपक जीवन म भी विनाय और शय के प्रतीक होने के कारण कवि मुद बर्षानो म लाया है।
 घोन घटा बहु शिति ठसि घाई चला कछि छरण बानि मर साई
 हापहू मई करय हिरबागो कमकहि सेल बीज की बानी
 तत्रे बान जानहु घोड़ गाबा बासुकि उरै सोस जनि बाबा

(१३० १५)

पनु पत्रियों में निह मृग छारय चाठन छंजन कोइम्मा घादि भी हमारे परिचय हैं और पद्यावत में बहुतायत से घाय हैं। कोइम्मा का बिम्ब जायसी को रूप मादत्य के कारण बिनेय प्रिय रहा है।
 रैन कीडिया भे मङ्गरागी विरकि मारि नै घाबहि जाही
 बन बबरा होइ कबस कसेरी होइ करजिया न जानहि हैरी।

(४०१ ६-७)

कोइम्मा मन्के में पानी से मछली उठाना । उस समय उमकी कोंच में दबी मछली क हागों घोर से पानी ऐसे टपकता है जैसे नेत्रों म प्रभु रूपक रहे हों। मछली घोर उमक बीच में जबु घायों घोर मानिषा का मादत्य भी करतायी हैं। इसी कारण यह बिम्ब बटा इत्यात्मक निज हुआ है। जायसी ने लोक कथाओं को चोखियों एव मुहावरों क रूप में भी बिम्ब दिए हैं। जो समाज के बीच से

उत्पन्न हुए हैं। जो समाज की ही सम्पत्ति है और समाज ही जिनका निर्माता है। समिति में जायसी के सभी बिम्ब परिचित हैं। इसी कारण असीम प्रभाव उत्पन्न करते हैं और सफल कह जा सकते हैं।

(२) उर्ध्वरता और व्यञ्जकता व्यञ्जकता और उर्ध्वरता में पूर्ण बिम्ब काव्य में सबसे अधिक कहे जा सकते हैं। जायसी में व्यञ्जना के द्वारा धर्म देने की प्रवृत्ति बहुत है। उसने बिम्बा का भी बहुधा व्यञ्जनात्मक प्रयोग किया है। उसके उपमान इतने उचित और व्यञ्जक हैं कि भावों की परम्परा ही निर्मित कर देते हैं। अस्मिन् प्रभाव रचिमयी उसमें से विचित्र हीरी दिखाई देती है जो काव्य के सौन्दर्य को कई गुना अधिक कर देती है। उर्ध्वरता व व्यञ्जकता जायसी के अनेक उपमानों से प्रकट होती हैं। यथा

बोबल भर भावो जस गंगा लहर बह समाइ न धंया ।

(१७ ७)

यह साधारण सा उपमान भी व्यञ्जना की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। अमलता तरलता जाति उन्नतता याद किठनी ही बाता की व्यञ्जना बाइ धाई गवा से हो जाती है। बाइ में भी न अपने किनारों में नदी समाकर सीमा उल्लंघन कर देती है यौवन भी सीमाओं के प्रति विरोधी है और उसके सीमोस्संजन का भी समाज पर उठना ही बुरा प्रभाव पड़ता है जितना बाइप्रसन्न प्रवेशो पर क्या का। इस प्रकार किठनी ही दृष्टियों से यह उपमान व्यञ्जक प्रतीत होता है। साधारण सी उपमा में व्यञ्जना की इतनी शक्ति रखने की सामर्थ्य जायसी में ही है। उसकी अनेक उपमाएं इस रूप से दृष्ट्य हैं। एवं रूपकों में भी व्यञ्जना की अपूर्व सामर्थ्य है

जस मुइ बिहि असाइ पनुहाइ परहि हूब औ लीम बसाई
प्रोही भाति पनुही सुल बारी उठे करिस नब कोप लबारी ।

(४२३ ४५)

बिरह बिबग्धा रानी की (प्रिय आश्रम पर) तुलना आशा मास की भूमि की है। रानी ताप में जल कर बीसे ही मुख और शयन भी जिस प्रकार सरोवर तल की भूमि। राधा का आश्रम अथाह मास है। जो रानी अपनी भूमि के लिए सुल आश्रम का विधान करता है वह सुनम्ब से पूर्ण हो जाती है। उठे करिस नब कोप संबारी धारीरिज उन्नति और मानसिक सुखात्मक भावनाओं की वृद्धि दोनों ही रूपों में लिया जा सकता है। भूमि प्रीत्य के बाद आशाइ न जिस मुख का अनुभव करती है बही मुख रानी बिरह ताप सहने के पन्नास प्रिय आश्रम पर प्राप्त करती है। स्पष्ट कहा भी है :

नापमती कहै अमय बनावे नै तो तपति बरका, रितु आवा

(४२३ १)

यहां से तो तपति बरका रितु आवा पर नै व्यञ्जक है। वर्षा ऋतु मुख की

धनक रूपों में व्यञ्जक है। पहले की गई धार्मिक व्याख्या हम पर में भी समा सकती है। मूर्धास्त धीर मूर्धास्त क भी धनक रूपक व उर्ध्व धीर व्यञ्जक है। जीवन धीर बुद्धि का व्यञ्जक यह रूपक भी मर्म-स्पर्शी है :

उठत कोप तरवर बत तस जोवन तोहि रात
 ली सहि रंग सैहि रवि पुनि ली विवर होइ पात ।

(११४ ८९)

महीन कोपसे जीवन क मुख की प्रतीक है धीर पीमा पता जीवन की कृपता धीर मृत्यु की समीपता को प्रकट करता है। मर क्लेशमय क्षण होते हैं धीर क्षण रंग धनुष का प्रतीक है जो जीवन की एक विशेषता है धीर पीमे पते का पीमा रंग मम धीर निराशा का प्रतीक है। मृत्यु का मय धीर जीवन की निरपेक्ष बुद्धिबद्धि म पर्याप्त रंग बतों है। इस कारण मरकलक्षण में जीवन धीर उमय है। पीमा पता होने पर केवल मृत्यु की राह देखनी ही योग्य रह जाती है। बुद्धिबद्धि की बड़ी उच्छ्रित व्यञ्जना हम रूपक द्वारा होता है। मर क्लेशमय धीर पाते पतों द्वारा मुख धीर बुद्धि की व्यञ्जना जायसी को प्रिय है

विमर पलत बुध भरे निशमे मुख पालो अपने होइ राते

(११३ ७)

यहां भी पठन के पदवाच समस्त भागमय पर बतस्पर्शियों के स्वरूप द्वारा बुद्धिबद्धि के मुख की व्यञ्जना हुई है।

जायसी ने विरोधात्मक वस्तुओं धीर भावों के द्वारा धार्मिक व्यञ्जना की है। जीवन धीर बुद्धिबद्धि की व्यञ्जना केवल अमर, धन धीर हम बक धार्मिक क रूप में केवों का धर्म परिवर्तन करने से की गई है। जैसे

जोवन अत दिन दिन पस बरा,
 भंवर उपाइ, हंत बरपटा ।

(११३ ३)

भंवर धीर हम व्यामना धीर संवेष्टा के कारण जीवन के क्षण क्षणों धीर बुद्धि क संवेष्ट के लिए प्रयुक्त हुए हैं। व्यञ्जना की दृष्टि से ऐसे विरोधात्मक स्वरूप सदा ही बंध सक्षम हुए हैं। प्रयत्नता धीर बुद्धि एवं रंग की व्यञ्जना विजली धीर मेव (बर्षों) से हुई है।

यहां हंतहि नू जीसी दिये धीर ली नेतु ।
 तोहि नुस बरके बोहुरी मोहि नुस बरिसे नेतु ।

(४२७ ८९)

विजली बरके धीर उच्छ्रितता के कारण प्रयत्नता धीर मुख की प्रतीक है धीर क्षण-पानी की बुद्धि टपकाने के कारण बरन की। यहां व्यञ्जना के कारण उच्छ्रित रूप के उच्छ्रित मर से हा रूप की मुख प्रतीति हा जाती है। इनी प्रकार धीर (बुद्धि)

सेते पर साहू के लौकरों का घाव स पानी बन जाना कहा गया है, जो बड़ा ब्यंजक है। पहले वह अपने कर्तव्य पर अडिग थे अपने विरोधियों को वह घाव की भाँति बसा बैठे थे पर बूस लेकर वह पानी की तरह बल गए, उन्हें बिस कम में बाहो रख सकते हो। दड़ठा और निष्ठा समाप्त हो गई और पानी की भाँति उनके अस्तित्व का कोई अपना कम न रह गया बिस पात्र में रखी वह उसी प्रकार का हो जाता है इसी भाँति वह भी उल्टे छोड़ बैठे और राजा के पक्ष में बल गए। घाव और पानी सब विरोधात्मक सौम्य को सफलता से ब्यभिठ करते हैं।

प्रस्तुत कर्मों में आयसी न कही कही बड़ी सफल प्रमिष्यवना की है। उनके मत से द्रव्य या धन ब्यर्थ है। उसका उपभोग करना तो ठीक है पर उस पर ही ध्यान केन्द्रित रखना उचित नहीं है। उसका त्याग अपना धर्म ही उचित है। इसका वर्णन आयसी यू करते हैं

दान दाहि सब बरख कबूक तातु लान छोड़ बाँचे सूख।

(३८७ ४)

बड़ेह जो न संता और पाड़ा देखा भार बू वि कँ छाड़ा।

(४११ ६)

अर्थात् दान बन का सार है बड़े प्रबवा महान पुत्रों से उसे धोन किया पर बार बानकर अर्थात् ब्यर्थ और स्कूल बानकर उपभोग करके ही छोड़ दिया जहाँ देखा भार बू वि कँ छाड़ा 'अव्य बड़े ब्यंजक है। ऐसा प्रतीत होता है कि जन अस्थिरता से बेव्या सदृश्य है जिसका बुम्बन तो सब चाहते हैं पर गहिता के कारण भार उठाना उता करना कोई नहीं चाहता है। जन के प्रति निहृष्ट भावनाओं को उद्दीप्त करने के कारण यह सब काष्प में बड़ा ब्यंजक सिद्ध होता है। इसी प्रकार राजब भेतन की किञ्चित् आश्चर्यपूर्ण प्रमिष्यवित पद्मावती के सौम्य की बड़ी सफल ब्यजना करती है

आबा राधी शैतनि औराहुर के पास।

अस न जाने हिरवी बिबुटी बसे अकास

(४२ ८)

औराहुर यहाँ बाबल और बिबली पद्मावती के रूप का उपमान है। बाबल में बमकती बिबली से रागी के लेज ऐश्वर्य अपूर्व सौम्य उरग्वलता सभी की अंगु-जुति हो जाती है।

संतिपता एवं सुमठितता से भी ब्यंजना में बुद्धि हुई है। मुहाबरे के रूप में ब्यंजना सबसे बड़ी सफल रही है। पना

भे निति धनि बस तासि परगसी राजी बेदि बहूनि फिर बसी

(३३३ १)

यहाँ मुहाबरे 'पुत्रिय फिज बनी घस्मिक उर्बर है। मरमगत्र घनेसिता के कारण इसमें ब्यंजना की बड़ी शक्ति पा गई है। धाकभगकायी गजा जिस भूमि को परलु छिटा कर जात है पुन धामन पर बहु उर्हे हरी मगी एव पस्मवित मिसली है किञ्चित् धारधर्म के साथ उनकी पल्लु छिटा करने की कामना फिर उहीन्त हो जाती थी। यह सम्पूर्ण भाव यहाँ प्रकट है। उनकी मिलनोरपन्त स्थिति राजा की धारधर्म मिश्रित मीचपूर्व दृष्टि धीर वस्मावती का समूह मीचूर्ण मगी इसमें मुकर हो उठे हैं। एक बिम्ब कई भावों की सकल ब्यंजना कर सका है। घस्मव मी मुहाबरे में ब्यंजक है।

ईके भाग हाट लें घोड़ी मोल रतन मानिक जहूँ होई
मुघा का पूछ पठय मंधारे बसत देखि बाछे मर मारे।

(७६ २३)

बहा मुग्गे को मगर का पतम (कीडा) कहा गया है। मगर पर चित्तौली का केंद्र कि निगर खूता है जो बड़ा बड़ा होता है। कुक्षुपता के कारण यह सुष्ठता का ही प्रतिकारी है पर कामाखर में उठी से सुन्दर चित्तौली निकलती है। मुग्गा भी बहो प्रमुख वस्तुओं के बीच मंधार के कीडे जैसा निहृष्ट बना हुआ था पर उनी के प्रस्तर में घेठ मुग छिप हुए थे जो कामाखर में राजा धीर वस्मावती का निमग कराए। उनके प्रस्तरगुण धीर बाह्य कपीनता एवं कबा का साथ स्वस्म यहाँ एक साथ स्पष्ट हो उठा है। कबा की ब्यंजना के कारण यह बिम्ब बड़ा सज्ज है। इसी प्रकार बिम्ब धीर बोधी पीरा बालक के लिए घाल में सिरे सिह की रूपमा, बनहीन ब्यक्ति की पठय बृज से मुक्ता भी बड़ी ब्यंजक है। पठय बृज की समस्त घोमा उन्की हरी धीर मुक्तीनी पतिनी है पतिपा म्द जाने पर पत्र का मुखा ठूठ भदा धर्मिय धीर निहृष्ट प्रतीत होता है। बनहीन ब्यक्ति मी घोमा के धमाव म कुर प्रतीत होता है। इसी प्रकार राजा के पहरेदारों के हारव का भी कहना भी बड़ा ब्यंजक है। अस्तिरता धीर निगर ही इस जाने का गुण उसमें भी मुख स्पष्टित हुआ है। समष्टि में जायनी के मगी बिम्ब बाई बहु रूपमा रूपक या मुहाबरे कुछ भी क्यों न हो सबैक सकल धर्मब्यंजना करने में समर्थ हुए हैं।

(६) धीबित्य—धीबित्य बिम्ब की सकलता वा सकले बड़ा कारण है। बहना व होया की जायनी में इस धीबित्य की सभैक रक्षा की है। माव मरम कब घादि सबको सम्यक्त रूप से प्रस्तुत करने में जायनी सज्ज है। रूपगत धीबित्य की रसा पचावती में मर्दन हुई है। वस्तुओं के अनमान साकार—प्रकार में समान ही है। हाथी घादि विपलदाय बोधी की रूपमा पहाड या मेघ घादि से भी गई है। त्रिममें रव कब बनों का सादर्य है।

हस्ती सिपनी बाँके बाटा अनु लकीक लव टाड पहरा
कडनी मल बीत रतनारे कबनों हरे दूय मीं कारे।

बरतहि बरन पयन अस मेघा श्री तिन्ह गवन पीठ अनु ठेबा ।

(४२ १३)

इसी प्रकार पद्मावती के सम्बन्धित श्लोकों के लिए मुख्यतः तीन उपमान लिए गए हैं—

(१) रात्री सुख सुना सब पयन

एहूँ नहीं खाँ कं करा घाँसु बयन अनु नखतनु मरा

(४७ १४)

(२) नैन सीर मोती मरि घाँसु दूठि दूठि परहि करहि तन बासु ।

(५० १)

(३) मये बे नैन रहुँट की धरी मरी ते डारी कूछी धरी ।

(५१ ७)

इसमें प्रथम वर्ष साम्य पर आधारित है। दूसरे में प्राकार की समानता है और तीसरे में बर्ण वर्णार्थ क्रिया की। यह तीनों बिम्ब बायसी की बिम्ब चयन की बाधकता के परिचायक हैं। हृदयियों के लिए बायसी में एक कंबल की तुलना बोरी उपमान दिया है वस्तुतः हाथ कमल सदस्य होते भी नहीं हैं कमल के धर्मभाग के सदस्य ही होते हैं। बायसी की कल्पना यथार्थ के बहिष्कृत है और रूप का प्रीवित्य भी स्पष्ट हुआ है। इसी प्रकार गुना का वर्णन कवि यों करता है

कनक बट नुच बनी कसाई डोड़ी कंबल वैरि अनु लार्ह

(५०२ १)

धर्मात् गुनाए कमल की माल के सदस्य भी जिनको केरकर (उलट कर) लगाया गया था। माल में कमल ऊपर होता है पर गुनाओं में कमल कनी हाथ नीचे होते हैं। धरा कमलमाल को मसतकर लयाने की बात कही गई है। यह सब बायसी की प्रीवित्यगत बाधकता का परिचय देते हैं। रूपगत प्रीवित्य का एक सुन्दर उदाहरण नङ् वर्णन में भी है। बाणों से रोम रोम पर बिभे मङ् के लिए बायसी में लाही भी उपमा भी है। जो प्राकार और रूप को स्पष्ट करती है। पक्ष गुनाए बँडा मरु भी मङ् का उपमान है और रूप को हस बनाने में सहायक है। यह दोनों ही उपमान बड़े संगत हैं। प्राकार और रंग धाँस के साथ साथ मात्रा का ध्यान भी बायसी को रहता है। राजा के साथ सहस्रों राजकुमार योगी बन कर महस से निकल पड़ते हैं। मरु बरुओं से बके इन योगियों को देखकर कवि को हेमू याव धा बाते है

बला कटक प्रोसिह कर कं पैवघा सब भेतु,

बीघ बीठ बारहुँ बिसि बालनु पुना देतु ।

(११४ ८-९)

यहा रंग साम्य के साथ साथ मात्रा का भी साम्य है। प्रसक्त्य शीघ्रियों की गुना के लिए टाक का पुत्र बन ही रचना उचित था ।

बायसी की प्रीतिव्यक्त सजगता के सबसे बड़े उदाहरण उनके परिस्मितपत्र साम्य में मिलते हैं। बायसी की यह प्रवृत्ति है कि वह बर्षन करत हुए प्रस्तुत बर्षन के ही उपमान प्रयुक्त करता जाता है। समय वस्तु या परिस्मिति का साम्य होने से विम्ब सङ्ग ही साह्य और आकर्षक बन जाता है। जैसे साधन मात्र में नागमठी के देवों से रक्त अथ रूप में बीर बहूटियां टूटने लगती हैं। पारो घोर पानी ही पानी बिकाई देता है मन भयरी सा भ्रमित हो जाता है और नागमठी की जीवन रीया कृष्णने बरखले की प्रयत्न करते करते पक जाती है।

सावन भरति मेघ अतिबानी भरति भरत हौं बिरह कुरानी
रक्त क धातु परं भुईं डूटी, रेगि चले जनु बीर बहूटी
बाट प्रभुम प्रपाहू गनीरी जिउ बाहुर भा बई पम्नीरी।
जग जल बुझि जहो जनि तापी घोर बाब संबक बिनु बाकी।

(१४५ १-७)

घाटी मास में नागमठी के नेत्र धोसाती बार से महज ही सादृश्य स्थापित कर लेते हैं। घोर पानी की अतिव्यक्तता से भरी घाटी पृथ्वी उलको अपने जीवन क्षम में डूबन का सा सामान्य होती है।

भर जातीं डूबर अति भारी कंसे भारी रीनि अघियारी।
बर्षक बीहू घन परजि तरसा बिरह काल होइ बीउ परसा।
बरिले मया भयोरी अचोरी घोर नैन बुबहि जल घोटी।
जल जल भरे प्रपूर सब पपन भरति मिलि एक।
पनि बोधन घोमाहू मैं ई डूइत विउ टेक।

(१४६ १-८)

प्रस्तुत मास में घड़ी नागमठी होनी के साथ अपने बिरहसाह में जलत हृदय का सादृश्य देखती है।

दागुन पवन भरीरे बहा बीगुन सीउ बाइ जिनि सङ्ग,
बाग करहि सब बाबरि ओरी मोहि तन लाइ रीगु जल हूरी

(१४७ १-४)

घोर प्रीत्य (बीमान) में नागमठी के रक्त हृदय की उपमा प्रीत्य के साथ से तरक तरक कर प्यत सरोवर में ही गई है। परिस्मिति का यह साम्य उपमानों के प्रभाव को कई गुना बढ़ा देता है। घोर बायसी की प्रवृत्ति से सङ्ग ही सम्बन्ध स्थापित कर लेने वाली पारामिका वृत्ति का परिचय देता है। परिस्मिति से ही विम्ब सङ्ग करने की प्रवृत्ति का सुन्दर रूप साह्य और राजा के सारथ के क्षम के समय पामा है। साह्य सारथ एक विषय जनोवृत्ति—राजी को देखने की लालसा में जल रजा वा। उनके दोनों घोर पारो में बर्षन रखे वे जिनमें पद्मावती का प्रतिबिम्ब पाने की सम्भावना थी। कलत्र साह्य का प्यास सारथ की घोर रूप दर्शन की घोर प्रतिक

बा । चूँकि यह वर्णन की धीरे-उन्मुखता से देस मकन के लिए स्वतन्त्र नहीं वा घट-
बहु विख्याचार निर्वाह के लिए जामने तो राजा के साथ घटरज खेल रहा वा पर
कमबियों स दर्शन को देखता जाता वा । जायसी उनकी इस घबस्था को विम्बित
करण के लिए कहीं दूर से बस्तु नहीं साते बरन् उनके खेल घटरज से ही पैदा माहुरें
की तुमना घटे हैं

प्रेम क मुहब पपारै पाऊ

धर्म भीह ताके कोल हौऊ ।

(११७ १)

अर्थात् प्रेम का मोमी साह पैदा की तरह है बलता तो सीधा है धीरे मारता
बाये बाए पाशों में है । यहाँ इसी स्वतन्त्र से उद्गीत होने के कारण यह बिम्ब बड़ा
व्यञ्जक है । धीरे साथ ही परिस्थिति के साम्य के प्रति जायसी कितने अधिक संजग हैं
उसका परिषय देता है ।

जायसी ने प्रभावगत धीरचित्त का भी ध्यान रखा है । यद्यपि प्रभाव साम्य की
धीरे उनका मुकाब कम है । पर कहीं कहीं रूप रस क साथ साथ बहु धनायास ही धा
पया है । जैसे

घाऊ कटक तुमतानी पवन छिया धसि साँझ

परत घाब जप करि, होत घात बिन साँझ

(१२७ ४६)

यहाँ साह की सेना की अपारता धीरे नयकरता साँझ होती घाती है इस पक्ष
से स्पष्ट है । साथ निराशा धीरे बेचना देने के कारण पीड़ा धीरे नयकरता का जो
रूप सेना बेटी है वही साँझ का काला रस भी । अचानक दिन का अस्त हो जाना भावी
अनिष्ट की सूचना भी देता है । इसी प्रकार राजा की मृत्यु क अपराध राजी के
केपों से मोतियों की सड़ पिरन पर कबि ने उत्प्रेक्षा की है

छोरे केत मोति सर पूरे जानहु रैन नखत सब इतै ।

लँकुर परा जो सीस जघारी सावि सावि धनु जय घबिबारी ।

(१४० ३४)

यहाँ नखत टूटना धीरे धाग सबला बानों ही अमंगल सूचक हैं । जो बिनाश
को स्पष्ट करत है । प्रभावगत धीरचित्त के यह लक्ष्य उदाहरण है । समष्टि में जायसी
ने (हारमनी) संभठन क सोख्य की सबैद रभा की है धीरचित्त के सभी रूप उनमें
मित बाटे हैं ।

(७) कथा में भोगदान—जायसी के बिम्ब विधान की सफलता का बहुत बड़ा
धेय उसके कथा में बौग देने की शक्ति को है ।

पद्यावत की कथा प्रतीकारत्मक महत्त्व रखती है । कथा के अंत में कबि ने
स्वयं समस्त प्रमुख पात्रों के प्रतीकारत्मक धर्म की ध्यंजना की है । उसने पद्यावती को

हृदय या आत्मा, रत्नसेन को मन नागमती को मोरखबधा भ्रमाउहीन बापसाह को माया व दैतान राजन भेतन को दूत धादि-धादि रूपों में स्वीकृत किया है। इन पानों के लिए प्रयुक्त बिम्ब विधान धनैक स्वसों पर इसकी प्रतीकारत्मकता में सहायता हाँकर कथा में योय रखा है।

पद्यावती को कवि ने आत्मा या परमात्मा का स्वरूप माना है यद्यपि सबल उसका सौख्य्य इन रूप में व्यक्त हुआ है कि उससे धर्मीकृता और धनुर्यता का एक स्पष्ट धामास मिलता है। उसके बन्म के सबसर पर ही कवि उसे सूर्य किरण कहता है जिसके उचित होते समस्त संसार में प्रकाश छा जाता है

अए बस मास पुरि भै धरी पदुमावति क्य्या घौतरी ।

आनहु सुवज किरन हुति काड़ी सुकज करा घटी बहु बाड़ी ।

मा निसि बाँह दिनक परमासु सब उबिधार भएउ कबिलासु ।

(११ १३)

यह बिम्ब विधान उसके प्रतीकारत्मक धर्मीक स्वरूप की स्पष्ट व्याख्या करता है। इसी प्रकार मानसरोयक बड में उसके लिए चंद्र का बिम्ब धाया है जो उसकी प्रतीकारत्मकता में सहायक है

सरबर तीर पकुमिनि घाई बाँपा छेरि कैस भोकराई ।

ससि मुख धंग मलै पिरि रानी नायगु मापि लोनु भरपाती ।

घोमए मेघ परी जय छाहाँ ससि की सरन लीस बसु राहाँ ।

मूनि बकोर विस्ति तहुँ नाबाँ मेघ घटा मंहु बाँद बिलावा ।

सरबर रूप विमोहा हिय हिलोर करेइ

पाप दुखे महु पाबै तेहि मिसु महर मेइ ।

(११ १६)

पद्यावती के लिए प्रयुक्त बिम्ब-योजना सर्वत्र उसके प्रतीकारत्मक धर्मों को व्यक्त करती है और इस रूप में कथा में प्रयुक्त योय वैसी है।

नागमती का अरिज और उसका प्रतीकारत्मक रूप दोनों ही उसके लिए प्रयुक्त बिम्ब विधान से स्पष्ट होते हैं। कवि ने उसके लिए नागिन का बिम्ब दिया है जो उसके बिम्ब अरिज और मोरखबधे के प्रतीकारत्मक धर्मों को व्यक्त करता है

नागमती कहँ धायम जनाबा येँ सो तपनि बरला रितु धाबा ।

घरी जो भुइ नागिन बसि लबा जिउ पाएँ तन महु भ लबा ।

पब कुज बसु केंवलि ना छूटी बनि निबरी बेउ बोर बहूटी ।

(१२१ १३)

इस प्रकार स्पष्ट है कि जायसी के पद्यावत का बिम्ब विधान उसकी प्रतीकारत्मक कथा में पूर्ण योय देता है। इसका व्यापक अध्ययन हमसे अप्प्याय में किया जायगा।

(८) भाव एवं विचारों के प्रकाशक—कवि के बिम्ब उसक सिद्धांतों भावों एवं विचारों को भी सम्मुख प्रत्यक्ष कर देते हैं। इससे काव्य में उनके महत्त्व की नृति होती है। भावों का पूर्ण प्रकाशन बिम्ब की सफ़सता को विस्तार देता है। बायसी ने अपने भावों और विचारों को बिम्ब के माध्यम से ही स्पष्ट किया है।

वे जीवन की शक्ति मागत हैं। अशुक्रता की अनुभूति पानी के बुलबुले से मनी भाँति व्यञ्जित हो जाती है।

पानी मँह बस बुझला तस यह बप उतराई
दकहि भाबत देखिए एक है बात बिलाई ।

(अल ३२)

बुलबुले का क्षणिक अस्तित्व मानव जीवन की अशुक्रता और निस्तारता को तैयों के सम्मुख प्रत्यक्ष कर देता है। इसी अशुक्रता की अनुभूति के लिए चूट की परिया का बिम्ब प्राया है यहा चरिया के क्षणिक साक्षात् पर कवि की दृष्टि रही है।

मनुम्व जीबन बलजरम रहत परी की रीति ।
परी जो भाइ सो परी हरी जनम गा बीति ।

(४२ ८-९)

बायसी प्रेम को जीवन का मनु मानते हैं। इसी के कारण मनुष्य स्वयं का अधिकारी हो सकता है, अथवा प्रेम हीन जीवन एक मुट्ठी रास के सदस्य है :

मानुस पैम बयऊ बँकू ठी नाहि ली कहु छार एक मुठी ।

(१११ २)

प्रेम ही जीवन के संघकार को हटा कर ईश्वरीय ज्योति के वर्तन बघटा है। वह परमात्म ज्योति घट बट में व्याप्त है जैसे पुष्प में सुमन्त्र :

बस तन तस यह परती बस मन तँस अकाठ ।

परम हस सिंह मानस बीस फुलि महुँ बास ।

(अल १४)

परन्तु यह अदस्य होन के कारण सबैव प्रबलधीन रहने पर भी अलम्ब बनी चूती है।

धनुठ हास तन सरवर हिपा कबल सिंह माँह

ननम्ह जानहु निपंटे, कर यहु बत प्रबगाह ।

(१११ ८-९)

यहाँ फूल की सुबन्धि और खरोबर के कमल के हाथ उस परमात्मा की सर्वत्र व्यापकता और अलम्बता को स्पष्ट किया गया है। इसी प्रकार धान प्रादि भावों की बीपक के बिम्ब द्वारा व्यञ्जित किया गया है।

आगे के अध्याय में बायसी के बिम्बों द्वारा प्रकट भावों और विचारों का विस्तारपूर्वक विश्लेषण किया जायगा यहाँ संकेत रूप में इतना ही धनम् है। अग्रलिखित

में यह कहा जा सकता है कि जायसी के भावों एवं बिचारों को सम्यक रूप से व्यञ्जित कर सकने के मूल के कारण भी बिम्ब सफल हुए हैं। इससे उनमें बिचारों की गहराई घाई है और सौन्दर्य एवं उपयोगिता में वृद्धि हुई है।

अंत में स्पष्ट है कि भावों का उल्लिखित करने तीव्र करने और स्पष्ट व्यञ्जित करने काव्य में नवीनता एवं ताजगी का बिभाज करने कथा में योग देने बिचारों एवं भावों की सम्यक प्रतिबिम्बित करने व साथ ही धीरचित्त की पूर्ण रक्षा करने के कारण जायसी के लक्ष्य सभी बिम्ब सफल कहे जा सकते हैं।

(२) असफल बिम्ब

बिम्बों के असफल प्रयोग भी काव्य में बराबर प्राप्त होते हैं सभी बिम्ब सफल नहीं कहे जा सकते भाव प्रपकार सबम की उपेक्षा बहिष्कृता घाई के कारण अनेक बिम्ब काव्य को प्रेक्षणीय और सफल बनाने में कोई योगदान नहीं कर पाते। जायसी में भी कुछ बिम्बों के प्रयोग इस प्रकार के मिस जाते हैं जो काव्य की सौन्दर्य वृद्धि में सहायक नहीं हुए हैं। उनके उन बिम्बों की असफलता के कुछ कारण हैं आगे उन्हीं की बर्षा होगी।

१—भाव प्रपकारता—पद्यावत में अनेक बिम्ब इस प्रकार के आ गए हैं जिनमें कथा-र घाई की ओर तो ध्वनि की रचि है पर यह भाव की स्पष्ट और सम्यक प्रतिबिम्बिता कहाँ तक कर सकेंगे? इस ओर उनका ध्यान नहीं गया है। शृंगार के प्रयोग में अहाँ मधुरता और रमणीयता का साहाय्य है अहाँ कवि अक्सर रचि घाई की कीमरसता को सामने रख गया है। रूप और रंग काव्य पर उसकी दृष्टि है भाव व्यञ्जना पर नहीं। जैसे

सुख करि जल मगम बिलेखी जमुना मांस सरसुतो बैखी
साईं घार रहिर अनु भरा कण्ठत नै बैनी कर परा ;

(१०० ४२)

यहाँ शृंगार के संदर्भ में पद्यावती की कामीपाटियों के बीच मांस की बीषक, स्वर्ण रेशा सरस्वती घाई जपों में उन्मत्त करने के परभाव उसी के लिए रचि से सनी लम्बाय का बिच दिया है जो शृंगार के माधुर्य को एकदम बिहृत कर देता है रचिपूर्वित लक्षण किनी को भी प्रिय नहीं हो सकती उनमें सौन्दर्य की वृष्टि नहीं होती कीमरसता का भाव ही जागृत होता है। इसी प्रकार घाई की रक्तवर्ण बताने के लिए रचि पूर्ण होने की बचाना और हुबेनियों के सहज मुसाफी रूप के लिए रक्त नदी और हृदय को विकार कर रक्त सनी बहना भी सौन्दर्य में बिहृति ला देता है

कनक बंध बुड मुखा कनाईं बालु केरि कूड़ेरं भाई ;

बानी रक्त हुनोरी बुड़ी, रचि बरनात तात बहु बुड़ी ;

दिया काइ अनु लौकैसि हाबा रक्त भरी अंगुरी तैहि ताबा ;

(११२ १४)

जायसी में मुगल प्रभाव के कारण सासरण के लिए रक्त की कल्पना बहुत आई है। मुगल कविता में बिरही सबैस रक्त के घासु ही रोते हैं। प्रसिद्ध शायर गालिब ने स्पष्ट ही कहा है

रणों में बौड़ते फिरने के हम नहीं कामस ।

ओ घाँसों ही से न टपका तो फिर लहू क्या है ।'

तब मुगल कविता से प्रभावित और स्वयं मुसलमान होने के नाचे जायसी में भी यह कल्पना प्राची स्वाभाविक ही है। रसनसन के घ्युधों के लिए कवि ने घबघर प्रभाव बुद्धि के लिए रक्त के मिरन का उपमान दिया है

तस रोमे बस अर बिज पर रक्त घो मांसु ।

रोब रोब सब रोवहि सीत सीत भर घांसु ।

(२२३ ८६)

सम्भवतः फारसी और उर्दू कविता में यह उपमान और यह रूप बिना भिन्न रहे हों जैसे गालिब साहब की कविता से बाहिर होता है। पर हम हिन्दी पाठकों के लिए तो यह धीरव्यय का विधान न करके बुगुप्सा की भावना ही बाहुल्य करते हैं। इसी प्रकार बिरह में शरीर के क्षीय होने पर एक घासुधों के निरन्तर गिरत रहने पर सीख कबाब बनने का रूपक भी भाव की अभिव्यञ्जना को सुन्दर और हृदय प्राप्ति रूप में न प्रस्तुत करके बुना और विकृति का विधान ही करता है

बिरह सरगान्हि भुजे घांसु मिरगिर परहि रक्त के घांसु ।

(२२४ ७)

हमारे हिन्दी और संस्कृत के साहित्य में हाइ मास मन्था रक्त प्रादि सब ही बीमत्स रस घबबा बुगुप्सा भाव के उपकरण रहे हैं इसी कारण हम शृंगार में इनके घा जाने से भाव तीव्रता की अनुभूति न करके बुगुप्सा की अनुभूति ही करते हैं। सम्भवतः जायसी ने इन रूप बिरों से भावाविव्यय का ही अनुभव किया है परन्तु हम हिन्दी के पाठकों के लिए यह बिम्ब बैसा उत्कृष्ट नहीं है और विकृति की अनुभूति होने से हम तो इसको जायसी की बिम्बयत घसफमता ही कहेंगे। घम्य सोयो के निबब हम से भिन्न भी हो सकते हैं।

इसी प्रकार जायसी में कुछ स्वतः ऐसे भी घाए हैं जहाँ बीज भाव की व्यञ्जना के साथ साथ शृंगारपरक बिम्ब दिया गया है। जैसे सास्रानुसार बीर और शृंगार विरोधी नहीं है और घबघर सहोष्ण की भाति छाब-खाब पाठे रहे है। कालिदास ने रजका बड़ा सुन्दर सतीकरण प्रस्तुत किया है पर भाव का उपकार करन के लिए ऐसे बिम्ब मरे मत से विद्वेष उत्कृष्ट नहीं है और जहाँ शृंगार अधिक स्वूल हो जाता है वहाँ तो स्पष्ट ही वह भाव का उपकार ही करता है उपकार नहीं। कम से कम जायसी के शृंगारिक और बीर के छाब-खाब प्रस्तुत होने का स्वतः के लिए तो यह

कमल उपयुक्त ही है। युद्धस्वसों पर जायसी ने शृंगार परक रूपक बिये हैं जो बड़े स्पृह हैं। केवल रूप साम्य तक ही कवि की दृष्टि पहुँची है और भाव का वैसा व्याप नहीं रहा गया है बरन उससे भाव की प्रकल्पना हो जाती है। तोपों धारि के लिए बड़ा धार्मिक स्पृह नागे रूप को सामने लाया गया है वहाँ भाव की बहि न होकर हानि ही हुई है। यथा

क्यों सिंघार मो बँसी नारी बाण पिपाहि सहज मतधारी ।
जठे धारि जो छाड़हि स्थासा तेहि उर कोउ रहे नहि पासा ।
सँदुर धाग सीस उपराही, पहिया तरजन धमकत जाती ।
कुच गोला होइ हिण्डव साए धवल घुमा रहि छिटकाए ।
रतना पूंवि रहि मुज कोलहि लफा धरि सो जहू के बोसे ।
धसक साँवरि इस्तिग्न घोडा साँवत इरहि मगई मुठि बीवा ।
बीर सिंगार दुबी एक टाऊ, तुलर साज गदमजन नाऊ ।
निलक पसीता तुफक तन बहु विनि बज्य के बाल
अहू हेरीई तह परं भगाना हलहि लकेहि कमाल ।

(२०७ १-६)

यहाँ बीर भाव बच सा गया है और शृंगार ही प्रधान हो गया है। युद्ध स्वत को ममानकता के बीच इतनी स्पृह शृंगारिक कल्पना पाठक को प्रमित कर देती है। यहाँ बीर भाव की कोई प्रभावबुद्धि नहीं हुई है बरन रमासाय सा हो जाता है और के साथ इतना स्पृह शृंगार पुनुप्सा ही उत्पन्न करता है। बीरता की अनुभूति नहीं कराता है। इसी प्रकार शृंगार के स्वसों पर भी बीर की कल्पना हुई है। बावल की नवविवाहिना पत्नी घरने को शृंगार की नायिका के माध-माध युद्धबीर भी मानती है

जो तुम्ह कुमि जाती पिय बाजा टिहँ मिकार कृति में साजा ।
जोवन घाइ सौहू होइ रोषा बलरा बिरह काम बल कोषा ।
भयऊ बीर रत सँदुर माँघा रता इतिर धरग बस माँघा ।
धोई धनुक मैन सर बाँधे काजर पनब धरनि बिल बाँधे ।
यै कटाय ली राज नंबारै धी नल सेल भात धनिपारे ।
धमक कोल पिय मैलि धसुसा धपर धपर लो बाहुँ कृसा ।
कु मलबल कुड कुच मँघता मैमो सही संमारो कंता ।

(२१६ १-७)

यहाँ भी शृंगार में बीर का धारोत्पन्न प्रभावनीय नहीं है। शृंगार भी यहाँ स्पृह है और बीर का धारोत्पन्न इसी कारण भावबुद्धि न करके केवल कमलार की प्रतीति ही कराता है यहाँ वैसी बिह्वि तो नहीं होती पर मात्र कमलार की धमि मंत्रक होने के कारण यह भाव का उपकार नहीं करते और इस दृष्टि से यह धमरक

ही कहे जाएंगे। इसी प्रकार मूत्र वर्णनों में शीतल के श्लेष का रूपक भी कवि ने दिया है जहाँ शृंगार भी अपने अति स्वल्प रूप में आ गया है।

गोह मँवान परी अब गोई खेन हान बुज काकरि होई ;
 बोवन तुरै बड़ी तो राती बली जोति अति खेम समानी ।
 तट सोमान गोह कुछ साजी हिय मँवान बली नँ बाजी ।
 हान ली करै गोह ली बाझा कुरी पुहँ बीच ली काझा ।
 मए पहार बुबो बैकुरी बिलिखि निवर पंहुअत सुठि हुरी ।
 ठाड़ बान अरु आतहुँ बोज़, सासँहँ हियकि कइँ कोऊ ।
 सासँहँ तेहि न आसु हिय ठाड़े सासँहि तानु बहै घोह कइँ ।
 (६२८ १-७)

यहाँ भी बीर पीछे रह गया है और शीतल का श्लेष शृंगारमयी कल्पना के साथ उभर कर आया है ऐसे स्वल्प भी भाव के सहायक नहीं हैं बल्कि भाव का अतिकार करते हैं इसी कारण असफल हैं।

(२) कङ्कितता—बिम्बों की असफलता का दूसरा प्रधान कारण है कङ्कितता। अधिकतर बिम्ब आधिक्य से आद्य तक उसी संवर्ध और उसी रूप में प्रयुक्त होते होते इतने बड़े बन चुके हैं कि पाठक अब उनमें अति प्राचीनता के कारण कोई सौन्दर्य नहीं पाता और इस तरह वह काम्य का किसी प्रकार का भी उपकार कर सकने में समर्थ नहीं होते। जहाँ बिम्ब का उपकरण या संवर्ध की नवीनता के कारण कङ्कित बिम्ब में भी सौन्दर्य आ जाता है वहाँ वह सफल कहे जा सकते हैं पर जहाँ उसी रूप और उसी संवर्ध में उनका अस्तित्व होता रहता है। जिस रूप में विगत कई शताब्दियों से हो रहा है वहाँ वह भाव की अभिव्यक्ति में कोई नूतन नहीं करते, पाठकों पर उनका कोई प्रभाव ही नहीं पड़ता ऐसे बिम्ब अभावजनक होने के कारण असफल कहे जा सकते हैं। जायसी कुछ अंशों में परम्परा के पोषक कवि हैं। अतः उनमें सभी परम्परागत कवियों की भाँति प्राचीन उपमान एवं रूपक मिल जाते हैं। शृंगार वर्णन में ऐसे रूपकों की प्रयुक्तता है।

नेत्र मुख केस पीषा नति आदि क लिए जायसी ने अक्सर वही परम्परागत उपमान अपने उसी रूप में दिए हैं। मलखिल वर्णन के आधिक्य से उपमान परम्परा से दूरी है। उनमें नूतनता का अभाव या सौन्दर्य भी नहीं है।

सक सिबनी तारग ननी हुँस पापिनी कोकिल बेनी ।
 केत मैपावरि तिर ता पाई अमकहिँ इतल बीजु की नाई ।
 कनक कसत मुस बंद विपरीँ रहस कोड लो धाबँहँ जहाँ ।
 आ लोँ के हेरहिँ बज मारी बाँध नैन अगु हनहिँ क्यारी ।
 (१२, १-७)

यहाँ उपमान रुढ़िगत होने के कारण शीघ्र्यं वृद्धि में सहायता नहीं करते । वस्तुतः यह उपमान इतने बड़ हो चुके हैं कि इनसे कोई बिम्ब ही नेत्रों के सम्मुख नहीं आता । काव्य के ये अनावश्यक अंग से लगते हैं । इसी प्रकार राक्षस भेदन द्वारा बर्णित परमावती का रूप बिम्ब भी रुढ़िगतता के कारण रूप या शीघ्र्यं को चित्रित करने के लिए सर्वथा असमर्थ है

केहरि लंक कुमरपत्न हिया यीश संजूर घनक रचि बिया ।

कंचल बचन धी बात समीक संसन नैन नासिका कोठ ।

भोहैं अनुप सति बुद्धन नितान्द्र, सब रात्रिन्हुं ऊपर बहु पद्म ।

(१०४ १२)

यहाँ एक ती केवल रूप साम्य तक ही कवि की दृष्टि भी पहुँच है दूसरे रूप भी बड़ हैं घट यह बिम्ब काव्य की धी वृद्धि करने में तनिक भी याग नहीं दे पाया है और अपनी रुढ़िगतता के कारण असफल कहा जा सकता है ।

इसी प्रकार लक्ष्मिस्त बर्णन में भी कवि ने बहुत से बड़ उपमानों का प्रयोग किया है । नेत्रों के लिए भ्रमर या समुद्र भर्तों के लिए अनुप वंशों के लिए अथवा भ्रमर बामसी ने कई बार रखे हैं । माल के लिए बहु प्रयुक्त उपमान पाद बायसी में भी उपलब्ध है ।

कहाँ नितान्द्र बुद्धन के जोनी बुद्धिहि जोति कहाँ जग धोती ।

का तरवर तेहि बेह भयजू पाँव कसंकी बहु निजलजू ।

धी बाँधहि पुनि राहु परासा बहु बिनु राहु सदा परपासा ।

तेहि नितान्द्र वर तिलक दईठा बुद्धन पाठ जानहुं बुब डीठा ।

कनक बसत अनु बैठक राजा, सबै सिपार घन लै साजा ।

घोहिं घागे फिर रहे न कोऊ बुहु का कही घन कुरा सकोऊ ।

(१०१ १०)

यहाँ मस्तक के लिए प्रयुक्त समी रूप — बाह प्रभु राजा परम्परागत है इनमें कोई बिघिष्टता प्रतीत नहीं होती । इस कारण यह काव्य का कोई बिघेप उपचार नहीं करते इस दृष्टि से यह असफल तो धार्य नहीं है पर अनावश्यक अथवा है और इसी कारण बाँधिका असफल भी कहे जा सकते हैं । बायसी ने रुढ़िगत उपमानों का पर्याप्त मात्रा में प्रयोग किया है । स्वर्ग्य परमावत में ही बार रूप अथवा बिघेद रूप में आया है । दोनों बार ही बड़ उपमानों का प्रयोग है । इन दोनों वर्णनों में बहुत अधिक साम्य है । केवल नेत्रों की बाँधिका के नियम नहीं उपमान जो पहले नलदिल वर्णन लख में था चुके है वही फिर से अनावती रूप अथवा लख में भी आया है । मल ताय वर्णन में उपमानों में यदि नहीं नवीनता है भी यह भी पुन रूप अथवा लख में भी उसी रूप में दिखाई देती है । इनसे प्रतीत होता है कि रुढ़ि अथवा पुनरावृत्ति के इति बायसी का कोई विरोध नहीं था रुढ़िगत उपमानों को यह ब, सहज रूप में

प्रयुक्त कर गये हैं। यह बहिष्कृतता भाव का कोई विशेष उपकार करती प्रतीत नहीं होती। इस रूप में यह काव्य का कोई प्रयोजन न सिद्ध कर सकने के कारण असफल ही कहे जायेंगे।

(३) संदर्भ की उपेक्षा संदर्भ की उपेक्षा घर्बात् कथा चरित्र या बटना के प्रति विरोधी भावनाएँ बाधित करने बाम उपमान भी काव्य में असफल कहे जा सकते हैं। आयसी ने अपने चरित्रों (पात्रों) कथा एवं बटनाओं की सदैव रक्षा की है। उसने कहीं भी ऐसे उपमान प्रयुक्त नहीं किये हैं जो पूर्वभारता पर आघात करें। बरन् कदाता होगा कि आयसी इस विषय में बड़े सतर्क हैं चरित्र के विषय में पाठक की धारणा को वह उपमानों के माध्यम से ही बनाते हैं। पव्मावर्ता के लिए प्रयुक्त ज्योति एवं प्रकाशपूज उपमान—मूर्ध्न्य चरित्र प्रादि उसकी नाशोत्तरता की धार सेवत करते हैं नाशमयी के पवित्रता का प्रथमक होने पर भी कवि ने ऐसी अड्डा धीर ऐसी भावना बसक प्रति प्रकट नहीं की है बरन् उसको 'नाग' कहा है जो उसकी कथा की स्वका स्वकटा (एमेपरी) को पुष्ट करता है। स्पष्ट है कि आयसी उपमानों की संदर्भ—धनुकृतता के प्रति बड़े जाबक है।

परन्तु फिर भी किन्हीं स्थलों पर संदर्भ की उपेक्षा हो ही गई है। जैसे इस रूपक में

बिरह संसूर नाग बहु मारी
तु मंजार कब क्षेपि बीहारी।

(३९६, ९)

घर्बात् नागमयी नागिन है धीर बिरह मोर है जो उस लियत जाने के लिए प्रयत्नशील है। राजा तु बिसाव बन कर घा घीर इस मोर लपी बिरह को नष्ट करके नागमयी की रक्षा कर। महा रूपक की पूर्ति के लिये कवि राजा को बिलाव कह गया है जो उपयुक्त प्रतीत नहीं होता। न युग न बर्ष न प्रकृति न रूप धर्मवा धर्म किसी प्रकार का साम्य इसमें है। राजा के चरित्र पर दृष्टिपात करें तो यह उपमा एकबल मुटिपूर्व प्रतीत होती है। यहां कवि केवल रूपक की पूर्णता के प्रति जाग रक है संदर्भ के प्रति नहीं।

संदर्भ की उपेक्षा उन स्थलों पर भी हुई है जहां कवि उपमान रूप में किसी लोककथा को रचता है पर उसका रूप सही न होने के कारण वह संदर्भ की विरोधी सी बन जाती है। ऐसा धर्मिकतर रामकथा के साथ हुआ है। आयसी मुसलमान के धीर पंडित श्री न के सम्भवतः रामकथा उनके पास उस मौलिक रूप में न पहुंची होगी जैसी हिन्दुओं एवं विद्वान पंडितों के पास रही होगी। उनका पाठ वह लोक कथाओं की भाँति भ्रष्ट रूप में ही पहुंची होगी धीर उन्होंने उस कथा का उसी रूप में प्रयोग कर दिया परिणामतः हम हिन्दुओं के लिए वह भ्रंतिपूर्व प्रतीत होती है धीर धनर वह स्पष्ट भी हो तो उसका पात्रों धीर कथा न साथ विरोध प्रतीत होता है। ऐसा एक बड़ा स्पष्ट उदाहरण पव्मावत में है।

तब लवि भवति न लै सका राबन तिय एक छाव ।

घब्र कौन भरोसे रिपु कही, बीर पराये हाव ।

(१४२ ८६)

पद्मावती कहती है, 'रावण और सीता जब एक साथ थे तब स्वतन्त्र होने पर भी वह उसका भोग न कर सका घब्र में बिबस हू और रात्रपुत्र में हू तब किस विरवाध के सहारे कुछ कहूँ । यहाँ कवि कथा का अन्तर्भाव विन्मृत कर बैठा है कबल परिन्विति तब ही उसकी दृष्टि पई है । रावण और सीता में क्या प्रेम न था क्या रात्रा और पद्मावती में है न वह परस्पर अनुकूल थे । प्रेम न होना का कारण उनका मानसिक विरोध था पर अन्तेत और पद्मावती में ऐसा नहीं है । वह अनुकूल है, और प्रेम के अतिभाषी है, रावण और सी । क भाग न हुने क कारण उनका मानसिक विरोध था और उनसे प्रेम न हुना का कारण बाह्य (परिन्वितियों) का विरोध है । वहाँ क्या का वर्म मिल है, कवि यहाँ रावण की उपमा कर गया है इस कारण यह विन्ध सफल नहीं कहा जा सकता । संवर्ष का विरोध विन्ध का एक बड़ा दोष है और उसकी असफलता का प्रधान कारण है ।

(४) प्रति नवीनता—प्रति नवीनता अर्थात् संवर्षा अपरिचित उपमाओं का प्रयोग भी अधिकतर असफलता में वृद्धि करता है । कवि को नवीन उन्हीं वस्तुओं एवं वटनाओं को उपमान रूप में भाषा चाहिए किन्तु साथ उनसे पाठक का समान्यक सम्बन्ध हो सकता है अथवा परिचय के अभाव में अनेक सुन्दर उपमान भी असफल हो जाते हैं । बहुत से नये कवियों की बहुत ही सरसलुत योजना इसका श्रावण के सफटी है । वायसी में नवीनता के प्रति ऐसा भोह नहीं भी नहीं है । उसने घनेक नवीन विन्ध दिये हैं पर वह सभी हमारे परिचित हैं और सहज ही हमारे हृदय में सामंजस्य स्थापित कर सते हैं अतः प्रति नवीनता का दोष वायसी की विन्धपत्र अतः फलता के लिये अर्थों में भी उत्तरदायी नहीं है ।

(५) शीघ्रिकता—शीघ्रिकता के कारण भी भाव से दूर हो जाने क कारण विन्ध अधिकतर असफल हो जाते हैं । वायसी के विन्ध भी कहीं कहीं भावाद्बोधक न होकर विभागी बनाने से हो गये हैं । अधिकतर उल्लेख्य धारिक के विन्धों में बहुत श्रावणत साम्य विस्तृत नहीं है पर कवि श्रावणतुषक अनेको प्रस्तुत करता है, वहाँ विन्ध साथ साथ न होकर वृद्धिपत्र हो गया है और एत प्रकार भाव का कोर्य रूप कार न कर सकने के कारण का अनाद्यक प्रसंग अतीत होता है, यही उसकी असफलता है । रसावनसावक के विन्धों में अति अघागान साम्य भी अतः है पर विगिष्टता के कारण वह रसावन सावक के अतिप्रसन्न अस्मि के लिये अति अतीत होता है और वह वृद्धि में अत्यधिक ही अथवा अनाद्यक कर सकता है । अनेकों के अर्थों में विदोषत अन्तरेक के अर्थ में कवि ने अतीत वृद्धिपत्रक साम्य रखा है जो बड़ा अतः है पाठक के अत्युक्त वस्तु का कोई अर्थ अतः विन्ध नहीं था सकता । अथवा

धीसे रत्नकुंवर नहीं मल्लो खेनु सारि पासों तो जानी ।
 कन्हे बारहु बार फिरासी पबकं तो फिर बिर न रहासी ।
 रहै न भाठ घठारहु—भाक्का सोरहु सतरहु रहै सो राधा ।
 सतए बरै तो रँसनि हारा ठाठ इम्पारहु जासि न मारा ।
 तु लीहै मा घाछसि बुवा श्री कुय सारि यह रिपुनि छुवा ।
 हीं नब नेहु र्वौं तोहि पंहा बसी दाऊ तोरे हिय मांहा ।
 पुनि औपर खेनो के हिया जो तिरहेस रहे सो सीमा ।

(११२, १-७)

यहाँ रत्नसेन पद्मावती के मिसन प्रसंग का कोई मगध चित्र सामने नहीं आता कवि ने स्नेह के बल पर एक दाऊ के दो-दो तीन-तीन धर्म निकामने की कोशिश की है। पर यह प्रयत्न इतना कठिन भाव से बुर हो गया है कि बटना या प्रसंग का कोई स्पष्ट चित्र नहीं दे पाता। इस रूप में बलात् आरोप किया गया यह शतरंज के खेल का रूपक नितास्त असफल है। काम्य का कोई उपकार इससे नहीं हुआ है बल्कि रसता का सर्वत्र ही दुष्प्रभाव है।

इसी प्रकार कवि ने युद्ध स्वप्न पर अकर्मक धीर सोहे का भी एक रूपक दिया है जो रसायन-शास्त्र से मूढांत है। यहाँ भी पाठक को बुद्धिपूर्वक रूप चित्र सामने लाना पड़ता है

अकर्मक धनी वैलि नै बाइ विरिष्ट तसि जायि ।

छुद होइ जो सोहै बई मंसि उठि जायि ।

(१२, ८-९)

यहाँ तो राजा की सेना अकर्मक के समान भी उसके देखत ही सोहे के समान शाह की सेना की दृष्टि उद्यमे घिसी उससे लोहे धीर अकर्मक के टकराने के समान युद्धाग्नि प्रज्वलित हुई जिससे सेना के बीच युद्ध की घाम बर्न के समान बल उठी थी। यहाँ राजा धीर शाह की सेना का धामन-नामने लड़े हुए का-चित्र है जिसके टकराने से युद्धाग्नि प्रज्वलित होती है। यहाँ सेना का कोई स्पष्ट रूप नामने जब तक नहीं आता तब तक रसायन-शास्त्र का यह विधि-विधान पाठक को भात न हो। इसके साथ ही यह रूपमा भाव उत्पन्नता में उतनी सहायक नहीं होती। यहाँ कवि ने बुद्धि बल से इस रूप को दिया है सहृदय कवि का रूप यहाँ सब-ज्ञा गया है। यद्यपि बौद्धिकता का आग्रह जायसी में घबिच नहीं है फिर भी कुछ उपमाल तनके बुद्धिबल को प्रबल्य स्पष्ट करने हैं जो काम्य का कोई विवेक उपकार नहीं कर पाते।

(६) धनीचित्त—धनीचित्त काम्य की सबसे बड़ी अक्षमता है विन्ध में भी धनीचित्त अक्षमता का सर्वप्रधान कारण है। उपरोक्त सभी अक्षमता के कारण किसी न किसी रूप में धनीचित्त के अन्तर्गत ही भात हैं। भाव घपकार भी धनी चित्त का ही एक रूप है और संदर्भयत उपेक्षा बौद्धिकता घारि भी किसी न किसी

रूप में धनीचित्त के प्रस्तुत या जाते हैं। धनीचित्त के धीर भी रूप बापसी में यथा क्या मिस पाठ है। उनमें रूपमत्त धनीचित्त कई बार या गया है जिसके लिए बापसी ही नहीं बरन फारसी एवं लोककथाओं की परम्परा भी कारण है। रूपगत धनी-चित्त का एक स्पष्ट उदाहरण पद्मावती की शोष कटि क मृ गि धीर वना क उपमान में है जो मुख्यतः मनी प्रेमाख्यानों एवं लोककथाओं में प्रचलित रही है

लंक पुत्रुमि अक्ष प्राहि न काहु केहरि कही न प्रोहि सर ताई ।
बसा लक वरलै बाग भीमी सेहि त अचिक संक बहु खीनी ।
(११६ १२)

धीर

अगि लक अनु मांस न जागा बुद्ध खंड नलनि मांस बस सागा ।
(४८४ १)

यही मृ गि धीर दया भी कटि की क्षीमता पद्मावती की कटि का कोई उप-पुत्र धीर सुन्दर चित्र नहीं देती बरन धर्मोक्ति के कारण उस उपहासार्थक ही बना देती है। इसी प्रकार करोड़ों के लिए 'खिरीय' धारि भी रूप का सुन्दर न बनाकर प्रमुन्दर धीर अनुपपुत्र हा बनाते हैं। इसी प्रकार धीरा का बर्चन भी उपयुक्त नहीं बन पाया है

बरलौ धीरब बुद्ध के रोसी अंज भार अनु सागेऊ सीसी ।
मिऊ मंशूर लकचूर जो हारा यह पुकारहि सप्त सकारा ।
पुनि किऊ ठाऊ परी तिर रैपा पू एत पीऊ भीक लब देजा ।
(१११ १६)

यहाँ धीरा की पारदर्शिता सुन्दर न बनकर हास्य का उपकरण बन गई है पर इसके लिये भी धारमी साहित्य धीर प्रेमाख्यानों का अन्तर्भाव ही है। पद्मावती धारि काव्यों में भी इस प्रकार की कल्पना बराबर आई है। रूपगत चित्रकाय का प्रकटीकरण बापसी में ही बहु सनी मुख्यतः फारसी साहित्य की वन है। रक्त क अशु-रक्त—धुंधली धारि भी धारमी साहित्य क कारण ही बापसी क काव्य में आई है।

सोक कबा के तमत्त प्रयोग धारि भी धनीचित्त के प्रस्तुत ही पाठ है। रूप के प्रति बापसी अत्र भी धनीचित्त के पूर्ण रूपन करत है वहीं बहु रूप की धनीमूर्ति अंगन में सहायक नहीं होते जैसे राजमहल के बचनबूझ के वर्णन में।

अंजन विरति एक तेहि पासा बस कसपतब इन्द्र कबिसासा ।
मूल पतार सरय प्रोहि साता अमर बेल जो पाष को बासा ।
बाद पात धीर फूल ठरई होई अविपार नवर बहु ताई ।

(८३ ४-६) ३

यद्यपि चित्र में मञ्जुरता एवं सौन्दर्य है पर ऐसी विद्याभता की कल्पना सहज प्रायः नहीं है। इसी कारण यह बिम्ब आयसी के श्रेष्ठ बिम्बों में नहीं माना जा सकता।

समष्टि में आयसी के प्रसफ़्त बिम्बों में से अधिकतर आरसी साहित्य एवं लोक कथाओं की परम्परा से ग्रहीत उपमान हैं उनमें सिये आयसी लतने उत्तरदायी नहीं है परम्परा द्वारा यह उपमान स्वीकृत हो चुके हैं अतः उनका ग्रहण भी स्वाभाविक ही था। इस रूप में आयसी की बिम्बगत प्रसफ़्तता प्रायिक ही है और उसका समस्त बोध भी उनको नहीं दिया जा सकता।

३—परंपरागत बिम्ब

प्रत्येक कवि चाहे वह किसी काल का हो या किसी देश का हो परम्पराओं से किसी न किसी रूप में प्रभावित प्रभावित होता है। नवीन वस्तु विज्ञान और नवीन कल्पना विज्ञान में भी परम्परा से प्राप्त अनेक धारणाएँ, अनेक रूप निहित होते हैं। कोई विचार या भाव निरन्तर प्रयुक्त होकर अर्थात् समय के साथ बल प्राप्त करता है अतियों तक वह विचार मनीषियों के मस्तिष्क में जमा रहता है और फिर समाज उसे परम्परा के रूप में पाता है। परन्तु यहाँ ध्यान देने योग्य बात है कि विचार या भाव केवल अमूर्त ही कर जीवित नहीं रहते, समाज उन्हें सर्वत्र मूर्त रूप में ग्रहण करता है। इस कारण कोई परम्परागत विचार या भाव केवल अमूर्त अस्तित्व नहीं होते बरन उनके साथ साथ परम्परागत बिम्ब भी रहते हैं। समाज बिम्बों द्वारा ही परम्पराओं के विचारों और धारणाओं को जान पाता है। जैसे सृष्टि में किसी अतस्वर सत्ता परम ब्रह्म की धारणा हमें परम्परा से प्राप्त है यह मान्यता वैदिक काल से चलती आई है पर साथ ही साथ इस अमूर्त ब्रह्म के रूप (ज्योति रूप वहि निराकार है तो अम्यवा ब्रह्मा-बिष्णु-महेश आदि) भी हम परम्परा से प्राप्त हुए हैं। इस प्रकार प्रकट होता है कि सुदृढ़ और पक्के विचारों के लिए सर्वत्र सुदृढ़ उपमान ग्रहीत होते हैं जो परम्पराओं के साथ साथ बल पाते हैं। और सर्वत्र उस विचार या भाव को प्रकट करते रहते हैं। काव्य में भी ऐसे परम्परागत उपमान बहुतायत से ग्रहीत होते हैं। कवि प्राचीन माध्यमों और विचारों को बहुरूप अर्थात् बिम्बों के माध्यम से प्रकट करता है जिस माध्यम को वह विचार रूप में पहने स्वीकार कर चुके होते हैं। ऐसे परम्परागत उपमान प्रत्येक अर्थों में एक ही होते हैं। परन्तु उनमें अतीव व्यंजनात्मकता विचार को समझता से प्रस्तुत करने की सामर्थ्य भी होती है। जिसके कारण वह काव्य में विशेष महत्व के अविद्यारी होते हैं और प्रायः परम्परागत होन पर भी जीवन्त बन रहते हैं।

आयसी सुधी कवि या और बहुमत या अल्पतः उसके काव्य में अनेक परंपराओं के बल हो जाते हैं उसकी उपमान योजना भी परम्परागत उपमानों से बहुत अंशों से दूरित है। आयसी के बिम्ब और भावों के साम्प्रदायिक उपमान सुधी कवियों

के परम्परागत उमान साहित्यिक व लोक जीवन की परम्पराओं के उपमान एवं आत्मी साहित्य प्रपञ्च उन्मूलन मसलतियों से युद्धित उपमान बरामबर मिल जाते हैं।

किसी भी कवि के परम्परागत उपमानों की खोज करना एक अत्यन्त कठिन कार्य है क्योंकि कवि मिन मिन छोटो से प्रभावित होता है जिन सबका स्पष्ट परिचय किसी भी पाठक को नहीं हो सकता। अनेक उपमानों की परम्परा से प्रभावित न होने के कारण पाठक तबीन समझ सेता है जबकि उसे कवि ने किसी विशिष्ट परम्परा से प्रभावित होकर प्रयुक्त किया होता है। कवि पर पड़े समस्त प्रभावों और परम्पराओं को स्पष्ट करना सबका असम्भव है फिर भी अनेक परम्पराओं को लक्षित किया जा सकता है जिनमें कवि विशेष रूप से प्रभावित हुआ होता है। परम्परागत बिम्बों में हम केवल मियित बिम्ब (कम्प्लेक्स इमेज) को ही न ले सकते हैं साधारण बिम्ब (सिम्प्लु इमेज) को नहीं क्योंकि साधारण प्रतिमाएं प्रपञ्च बिम्ब कवि के कारण—प्रवाह में स्वतः ही प्रभावित होते रहते हैं उन पर किसी का विशेष अधिकार नहीं कहा जा सकता। परम्परागत बिम्ब नहीं कहे जा सकते हैं जो किसी बिम्ब रचारा में पुष्ट रूपक हैं या जो सर्वत्र उसी विधेय संदर्भ में आते हैं। छोटी २ उपमाएं—साधारण प्रपञ्च तुलना परम्परागत नहीं कही जा सकती।

जायसी की परम्परागत उपमान योजना का विश्लेषण एक अत्यन्त कठिन कार्य है क्योंकि उन पर अनेक प्रभाव पड़े व बहुधृत होने के कारण उनके अनेक स्रोतों का ज्ञान अती हिन्दी साहित्य का नहीं है। मुसलमान होने के कारण मसलती धर्म में लिखने के कारण व मुस्ली मान्यताओं से प्रभावित होने के कारण उन पर फारसी काव्य का भी पर्याप्त प्रभाव पड़ा है जिसका पर्याप्त परिचय हिन्दी साहित्य का नहीं है न ही उन साहित्य से संबंधित कोई-साधनी ही उपलब्ध है। इस कारण जायसी पर पड़े मुस्ली काव्यों के प्रभाव को स्पष्ट करना एक कठिन कार्य हो गया है। इसके साथ ही सिद्ध व नाथ एवं भारतीय प्रभावधारकों से युद्धित बिम्ब भी जायसी में पर्याप्त मात्रा में मिलते हैं परन्तु अभी तक सिद्ध और नाथ साहित्य व प्रभावधारक साहित्य के समय के विषय में भी दृढ़ मत स्थापित नहीं हुये हैं। योरननाथ जायसी से कितने प्रभावों से? और क्या समस्त गोरखबानी गोरखनाथ द्वारा ही निर्मित है? इन मूलभूत प्रश्नों का भी कोई निश्चय नहीं हो पाया है। जायसी से प्रभावित बहुत सा साहित्य मात्र ही अन्वेषण के गर्भ में पड़ा है। जायसी द्वारा उल्लिखित बहुत सी पुस्तकें भी अभी तक अनुपलब्ध हैं। ऐसी परिस्थितियों में जायसी पर पड़े परम्परागत बिम्बों के प्रभाव का स्पष्ट करना एक दुष्कर कार्य बन गया है। ध्यान को भी प्रभाव व पुस्तकें उपलब्ध हैं इन्हीं के साधारण पर यहाँ जायसी द्वारा युद्धित परम्परागत बिम्बों का विश्लेषण किया जायेगा।

१—सिद्ध और नाथ सम्प्रदायों से

सिद्ध और नाथों का साहित्य जायसी का परभावित और परम्परागत साहित्य का है।

सिद्धों और नाबों ने अपनी साधना पद्धति का व्यापकता धारि से प्रभाव को बहुत अधिक प्रभावित कर रखा था। आयसी पर भी सिद्ध और नाबों की विचारधारा का प्रभाव पड़ा। परन्तु कितना सिद्ध साहित्य अपना नाब साहित्य आयसी से पहले लिखा जा चुका था यह प्रमाण पूर्वक नहीं कहा जा सकता। इसके अतिरिक्त उनका साहित्य उनके समय में ही लिपिकृत हो चुका था या उसे उसके पश्चात् उनके सिष्यों ने लिपि कृत किया यह भी स्पष्ट नहीं कहा जा सकता इस कारण उनके साहित्य में भाषा और भावगत अनेक अन्तर आ जाने की बहुत अधिक सम्भावना है। यहां उनके प्रायः और बहुत अर्थों में अतिरिक्त साहित्य के आधार पर ही आयसी के कुछ विन्वों की परम्परा को खोज करने का प्रयत्न किया जायगा। आयसी पर सिद्ध और नाब परम्परा का प्रभाव कुछ रूपों से स्पष्ट लक्षित हो जाता है। परन्तु उनकी अल्पता अधिक नहीं है कुछ ही रूपों की उनमें ज्यों का त्यों ग्रहण किया जा। इनमें प्रथम है चार और सूर्य का रूपक जिस अनेक नाब सिद्ध साहित्य से ग्रहण करके अपनी कल्पना के धनु धार विकसित किया है

चार और सूर्य का रूपक सिद्ध और नाब साहित्य में अनेक स्थलों पर पाया है। अर्थात् में अत्र और सूर्य प्रजा तथा उपाय के प्रतीक माने गये हैं और उनका संबंध सधना तथा रसना से है परन्तु इनका प्रापह वहां उनका भेद करने से न होकर उनकी इयता का परिष्कार करके एकत्र अर्थात् सहज अद्वैतावस्था की धोर है।^१ मुष्करीपा सरहपा गोरकनाथ धारि ने इसका पर्याप्त प्रयोग किया है। मुष्करीपा कण्ठपा और सरहपा की अवस्थाएं इस प्रकार हैं

मुष्करीपा : चारि सुख वैचि पला अल।^२

कण्ठपा : रवि धारि कु डल किङ्ग धामरखे।^३

सरहपा : नाद न विदु न रवि धारि संवल।^४

गोरकनाथ ने इसी धारणा को अधिक समग्रता के साथ एक रूपक में प्रस्तुत किया है

चरि सूर भी मुष्करी कौग्री धरवि मैरम जल वेला।

नाबी ध्यंद सीपीं धाकासी धलज गुव ना वेला।^५

प्रेम काव्यों से कुछ अर्थों में सौन्दर्य के उपमान और कुछ अर्थों में इस धारणा से प्रभावित होने के कारण अत्र सूर्य के रूपों का पर्याप्त व्यवहार हुआ है। आयसी में अपनी अन्त कल्पना दृष्टि से इसे धारणत भावपत समृद्धि के साथ प्रस्तुत किया है।

१ सिद्ध-साहित्य : भा० अर्थोपर मारत ४ ४२६

२ अर्थोपर : १ ११

३ " : १ १२

४ " : १ १३

५ गोरकनाथी १० ११०

इसका विस्तृत विवेचन अगले अध्याय में प्रस्तुत किया जायेगा। यहाँ हम मुख्यतः अपने का रूपक के उन्हीं प्रसंगों से सम्बन्धित रखेंगे जो सिद्ध नाम विचारधारा का भी प्रस्तुत करते हैं।

सिद्ध नाम साहित्य में इन रूपक से प्रजा धीर उपाय हुएसे अथवा मस्तिष्क का धर्म किया जाता है धीर उनके द्वारा योग साधना के संकेत बिम्ब जाते हैं। जायसी ने उस कहीं कहीं इसी रूप में रखा है। यथा पद्मावती के स्वप्न विचार के समय

देव पुनि अरु धर्मज्य काली सपन एक भिति देखैऊ घामी।

अनि सति उरी पुण्ड बिनि कीगहा धीर रवि उरी पछिब बिनि लीगहा।

पुनि अनि सुदज बाँर पहुँ घाबा बाँर सुदज बुड होइ भेराबा।

(१६७ ३३)

इसी रूपक को पद्मावती—रत्नसेन के विवाह के समय धीर अधिक प्रसार प्राप्त हुआ है। जायसी के विवाह प्रसंग में सबत्र इन्हीं प्रतीकों का प्रयोग किया है यै

बाँर सुदज बुडी निरभल बुडी संजोग धनुष।

पुण्ड बाँर सो मुसा बाँर सुदज के रूप।

(२२३ ८६)

पारत रूप बाँर देखराई बैघत सुदज गयऊ सुरछाई।

सोरत करा बिस्ति सति कीन्हीं, सहती करा सुदज कहू लीन्हीं।

या रवि घसत तराइन हूँसे, सुदज न रहा बाँर परपसे।

घाड सुर सतिघर घर घाबा बाँर सुदज बुड होइ भेराबा।

(२८ ७)

इन सभी स्वप्नों पर कवि ने सिद्धनाथ सपनायों की युगनद्ध या समरस भावना को उन्हीं के प्रतीकों द्वारा व्यञ्जित किया है। कवि की दृष्टि यहाँ सौन्दर्यपरक नहीं है बल्कि सिद्ध नामों की युगनद्ध या भावना को समरस इन परम्परागत बिम्बों द्वारा व्यञ्जित करना चाहता है। यद्यपि जायसी ने अग्र सूत्र के रूपक का सबत्र परम्परागत प्रयोग नहीं किया है परन्तु उपरोक्त कुछ स्वप्नों पर यह स्पष्टतः सिद्धनाथ साहित्य से वृत्त प्रतीत होते हैं उनका संभव उनकी भाव व्यञ्जना सिद्ध नाम साहित्य के अनु रूप हो है।

सिद्धनाथ साहित्य से वृत्त एक अन्य रूपक है धीर का। धीर के धर्मो का रूपक सिद्धनाथ साहित्य में बहु प्रयुक्त है। बहा प्रत्येक धीरतांग के प्रतीकात्मक धर्म लिए गये हैं। जायसी ने उन्हीं व्यर्थों का रसों ग्रहण किया है। सिद्धनाथ साहित्य में 'बाया को मगर, मन को डार' बतना को कीतबाल इन्द्रियों को नव रंज कहा गया है। मोरसनाथ ने कहा

काया हुमार सहूर बोलिऐ, मन बोलिग हुम धार ।
 पेलनि पहर कोठबास बोलिऐ, तो बोर न शकै डार ।
 सोनोस साठि बीरा पड़ रधिने सोहस पाबीने पाई ।
 नब दरबाजा प्रगठ बीस बसबा लप्या न जाई ।'

उन्होंने नब रघों म नबोडाए, त्रिकुटी में जगन्नाथ वसमहार (पहा रघ) में
 कबारनाथ धारि तीर्थों का स्नान माना है । गोरजनाथ ने कहा है
 नबो डारे नब नाथ तुबेभी जगन्नाथ संसब डार कैदार
 भोग सुपति सार ली मौ तिरिये पार
 कबतं गारयनाथ बिचार ।'

जायसी ने भी धरीर के रूपक का यह पर धारोपित किया है धीर इसी प्रकार
 के साधनात्मक संकेत दिये हैं

नइ तस बांक अस तोरि काया भरखि देख तै घोहि की छाया ।
 पाइअ माहि जूस हठि कोन्हें खेई पाबा तेई धापुहि बीगै ।
 नो पौरि सिद्धि गइ मंसिधारा धी सिद्धि फिरहि पांच कोटधारा ।
 संसब दुभार मुपुत एक नांकी धयम अड़ाव बांड मुठि बांकी ।
 (२१२ १४)

यहां गइ को धरीर, नब पौरी को नब चक पांच कोटबालो को पंच विषयों
 मुपुत बसबां डार को कुण्डलनी का प्रतीक बनाया गया है जो पूर्व हो इन विषयों क
 लए स्वीकृत हो चुके न । यह रूपक जायसी ने सिद्ध-नाथ साहित्य से ज्यो का त्यो
 ग्रहण कर लिया है अतः इसे निश्चय ही परंपरागत माना जा सकता है । अन्य स्वर्णों
 पर भी जायसी ने सिद्ध धीर नाम संशय से मूहीत माय्यताओं के संकेत दिये हैं
 परन्तु यहां स्वीकृत कि बिधान को नहीं प्रयुक्त किया है, बहा धपनी रूपका दृष्टि से
 उभिन न मनीनता बनाये रखी है परन्तु इन कुछ स्वर्णों पर बिचारबाटाओं के साथ
 साथ कवि ने बही प्रतीक बिधान स्वीकृत कर लिया है । इस कारण अग्र-सूय धीर
 धरीर के रूपकों को सिद्धनाथ साहित्य की परंपरा से मूहीत माना जा सकता है ।

२— भारतीय सूफी प्रमास्यानका स

मध्यकाल में सूफी प्रेमास्यानको का प्रथम पर्याप्त मात्रा में लुधा है । परन्तु
 प्रेमास्यानक परंपरा में सर्वप्रथम जायसी का परमावत ही प्रामाणिक प्रथम कहा जा
 सकता है कुतबन मझन उसमान का जायसी ने उस्तक किया है परन्तु वह उससे पूर्व
 वर्ती ही वे यह सदिग्ध है । मझन की मधुमालनी उसमान की बिनाबनी कुतबन की
 मृपावती धारि प्राप्य हैं परन्तु उनकी प्रामाणिकता सदिग्ध है । प्रेमास्यानक परंपरा में
 सर्वप्रथम धीर सर्वप्रौढ़ प्रथम जायसी का परमावत ही प्राप्त होता है । जा किसी निरं

उपर बसती हुई काव्य परंपरा का एक प्रौढ़ ग्रन्थ सपत्ता है। पद्मावत को देखकर बनीत होता है कि सूफी विचारों से प्रभावित प्रेमाख्यानों की परंपरा पुरानी की भाँव उसके ग्रन्थ उपलब्ध नहीं है सम्भवतः जायसी कोपे बनावत से पूब कई ग्रन्थ मिसे जा चुक के। बहु काव्य परम्परा पर्याप्त प्रौढ़ रही होयी। उसमें केबल उक्त विचार ही नहीं होन बरन उनके साथ उपमान भी निर्मित हो चुके होंगे भाव के माध-साध पसकी धनिष्कर्मि भी रूप से चुकी होयी धर्मात् बहु साहित्य के स्तर तक पहुँची हुई काव्य परंपरा भी क्योंकि परबर्ती साहित्य में भाव और विचारों के साथ-साथ उनकी धनिष्कर्मि भी क्यों की क्यों प्रहल कर भी गई है। बहुत से बिब जायसी कृतकन ममल और परबर्ती सूफी कवियों में क्यों के क्यों मिस जाते हैं जो किसी प्रौढ़ बसती जाती हुई काव्य परंपरा का आभास देते हैं। उनकी बिब योजना विचारों और भावों से इतनी परिपक्व है कि बहु यमायास उद्भूत हो जाने वाली कल्पना नहीं लगती बरन किसी प्रौढ़ काव्य परंपरा का संकेत देती है। सभी सूफी प्रेमाख्यानों में बहु कल्पना धपन उसी रूप में प्राप्त होती है जिसके कारण उसे परंपरागत कहा जा सकता है। यहाँ हम जायसी के पूर्वबर्ती और सामयिक सूफी काव्यों के आचार पर उसके परंपरागत बिबों का बिबचन करेगे जो उसने सूफी काव्य परंपरा में प्रहल मिये हैं।

सूफी विचारों में प्रेम का महत्त्वपूर्ण स्थान है। प्रायः सभी सूफी कवियों ने प्रेम की बीबन में धनिर्धार्यता को स्वीकार किया है। बहु उसे बीबन का प्रकाश बीबन की उज्ज्वलता स्वीकार करते हैं बीबन में सुबू बियों और धज्जान के धनककार को दूर करने के लिए बहु दीपक है। बीबन प्रेम के लिए सूफी माय्यताओं द्वारा स्वीकृत बिम्ब है। प्रायः सभी कवियों ने इसका उल्लेख किया है। पद्मावत की में बरन न प्रेम के लिए दीपक का बिम्ब कई बार दिया है

प्रेम बिबा आके घर धारा, तेहि लम धादि प्रंत उजियारा।^१

वह बलसा के प्रेम बीप भँह परी बेमि होइ धाई।

बाये पाँव मयु धरसागी रहु निकति महि धाई।^२

विभावनी में भी उसमान प्रेम को बीपक कहाँ है प्रेम कपी बीपक की ज्योति ने लमस्त मूटि को संभारा मया है। प्रेम ही बीपक है और प्रेम ही पतंग है जो उसमें धपने प्राणों की धाहुति देता है

बहिसे उरध येम बिबि हिये, उपजो जोति पैब की बिदे।

बही जोति पुनि किरन पसारी किरन किरन सब सिद्धि संभारो।^३

बीपक जोति प्रेम उजियारा, प्रेम पतंग धादि तँह कारा।

^१ पद्मावती : पंजन नं० धरान्जय दुष्ट नं० २६

^२ बरी, ल ३६९

^३ विभावनी : उज्जय नं० कुरवरीनन बर्या ५ ६

^४ बरी, १ =

— जायसी ने भी प्रेम विषयक यह चारणा इमी बिम्ब द्वारा व्यञ्जित की है। प्रथम सख्त में ही यह परम्परागत बिम्ब प्रयुक्त हुआ है।

सैसा हिया येम कऱ बिधा जठी कोलि ना निरमर हिया । —
मारम हुत अपियार भसुसा भा अंकोर सब जाला बूसा ।

(१८ २१)

प्रेम के सिद्धी बीपक का यह बिम्ब परवर्ती साहित्य में भी पाया है। जायसी ने इस परम्परागत बिम्ब का बड़ा सफ़ल प्रयोग किया है। यह स्पष्ट है।

जायसी ने प्रेम के सिद्धी समुद्र का रूपक भी दिया है जो परम्परागत है। मूफ़ी साहित्य में प्रेम सदैव समुद्र का प्रतीक द्वारा व्यञ्जित हुआ है।^१ मधुमाधवी काय मञ्ज न प्रेम को समुद्र कहा है

पाइ प्रेम समुद्र मंह बेसु बीरि बंति सेऊ ।
कै मालकि सै निकरौ कं प्रोहि पंथ सेऊ रेऊ ।^२

जायसी ने भी प्रेम का समुद्र कहा है

परा सो येम समुद्र अपारा अहरहि सहर होइ बिसमारा ।

प्रेम के एक पक्ष बिरह के लिए भी समुद्र का उपमान सर्व स्वीकृत है। बिरह को प्रथम सूफ़ी कवियों ने समुद्र कहा है जिसमें धबकाहन करने के पश्चात् विस्तार सम्भव नहीं है बिबावलीकार उसमान ने कहा

बिरह समुद्र जानु प्रति बझा को यहि मुक जल बूझत काड़ा ।^३
बिरह समुद्र प्रति प्रथम अपारा बाज अपार बूझ मंसपारा ।
अहु बिति हेरहु हितु कोऊ नाहीं बूझत काह जंघाली बाही ।

मञ्ज ने भी बिरह को समुद्र कहा है पर बड़ा उसकी दृष्टि इसमें सिद्ध समुद्र से मोटी बूझने से मरजीबा के व्यापार पर केन्द्रित है

बिरह समुद्र अपाहु प्रति जप जान सभ कोइ ।

मानिक सो सै जमरे को मरजीबा होइ ।^४

परन्तु जायसी ने बिरह कथन में पूर्वत बिबावलीकार की भाँति समुद्र के उपमान का प्रयोग किया है। प्रेम समुद्र में डूब कर उनकी नायिका विस्तार की कामना करती है

बूझत हीं बूझ जदवि बंभीरा तुन्ह बिनु कंठ साव को तोरा ।

करबत सही होत होइ प्राया सही न जाइ बिरह कं बापा । (२८१४)

१ जायसी के परवर्ती सूफ़ी कवि—का करता तुलना १ २

२ मधुमाधवी नंजन सख्या १५१

३ बिबावली : कसयाम १० ६१

४ वही १ १ १

५ मधुमाधवी : मंजन, संख्या १२४

बिरहा सुमर समुद अर्धभारा भंवर मेलि जिऊ लहरहि मारा ।

(१७२ ३-४)

उह रूपक परम्परा द्वारा ही कवि न प्राप्त किया है। यद्यपि प्रयोग में नायिक धन्तर आ गया है परन्तु भाव और उसका रूप समान होने के कारण यह परम्परागत कहा जा सकता है।

हृदय के सिये सरोवर का रूपक भी परम्परागत है सूफी कवियों ने बराबर इस रूपक का प्रयुक्त किया है। बिनाबली में उलमान ने कहा है बिरह व्यथित हृदय सरोवर है जिसमें बुझ-जल मरा रहता है

निजि को धरै गा पीतम मुरा हिय सर रहा दुल जलपुरा ।^१

मनुमासती कार ने बिरह व्यथित हृदय का विरीच सरोवर कहा है

येहि संताप बुज रुब नापि में जगा जीयत रहति ।

त्रिनि सरजल बिनु कबंय उरभ फाटि मरि जाति ।

बायमी ने इसी रूपक को एकदम इसी रूप में प्रस्तुत किया है परन्तु उसकी दृष्टि इसके अधिक समग्र है

रतः करमुखे नन भये जीब हरा जैहि बाद ।

सरवर मोर बिछाह बेडं तरकि तरकि हिय फाट ।

(४२४ ८-९)

सरवर हिया यदत्र गित बादं इकि होइ होइ बेहराई ।

बिहुरी हिया करहु पिउ देका बीठि बंभगरा मेलहु एका ।

(१२४ १-३)

विरीच सरोवर के साथ साथ वह यहाँ 'बंभगरे' का उल्लेख भी करता है विरह रूपक की समझता के कारण व्यंग्यता में बृद्धि हो जाती है।

बायमी द्वारा प्रयुक्त पद्यावली का उपमान शक्ति भी परम्परागत है। यद्यपि अपना रूप सर्वत्र एक नहीं है परन्तु उसका मूल धर्मस्य परम्परागत है। सूफी कवियों ने अपनी नायिका के लिए सर्वत्र शक्ति का बिम्ब दिया है। चन्द्र उपमान यद्यपि माहित्य में मीन्दर्व के सिये स्वीकृत है परन्तु वहाँ उसका प्रयोग केवल मुल मीन्दर्व के लिये हुआ है मधुसूय नायिका के लिए नहीं साथ ही रहस्यात्मकता का जो पूरा सूफी कवियों के चन्द्र के रूपक में मिलता है वह भी इतर माहित्य में नहीं है। यही सूफी कवियों ने अपनी नायिका को परमात्मा का रूप दिया है जिसके कारण शक्ति-रूप में संसार को प्रकाशित करने का 'बनें' उल पद प्राप्त है। बिनाबली मनुमानती सभी में इस रूपक को प्रयुक्त किया गया है। बिनाबली में अनेक स्थानों पर यह बिम्ब प्रयुक्त हुआ है

१ बिनाबी उलमान १ ०१

२ मनुमानती मन्दम मंदा १ १

राजा गेहूँ बिम्बापति घारी सहस्र कला बिम्बि सति धौतारी ।
 हुसर कोठ न पाव तेहि कोरा एक बीप बहु खंड धंजौरा ।'
 बिम्बापति झरोखे घाई, सरय जाव अनु बीन्हु देखाई ।
 भयो धंजोर सकल संसारा भा घसोप विन कर मनिमारा ।

मधुमासती में भी इस उपमान का प्रयोग हुआ है

खंड पर मुल बुहु कर गहा जो हुत बुल राह ।

पुनिब मे परगास तस मुनि मधुमासती चाह ।'

धनुषाम बांसुरी में भी इस उपमान का प्रयोग हुआ है

अबहो घई नबल तन धति मुहुमार ।

मनहु सीन्हु भरती पर सति अबतार ।

बायसी में घनेक स्वर्णों पर पद्मावती के लिए चन्द्र के रूपक का प्रयोग किया है ।

पद्मावति सो झरोखे घाई, निहकलंक जस सति देखाई । × ×

पहिर सति नबलन्हु के मारा भरती सरय नचऊ धजिमारा ।

(४५१ १३)

पुष्पिमा के चन्द्र का उपमान भी बायसी में घनेक स्वर्णों पर दिया है

बीसे

पद्मावति जे बुनिब कला बीबहु जांड उए सिबला ।

(३३५ २)

पद्मावति जो सबई सीन्ही बुनिब रस बीप धति बीन्ही ।

(२६७ १)

बायसी में पद्मावती के शशि रूप के साथ साथ उसकी उलियों के तापगन रूप की कल्पना की है यह भी परम्परागत है । बायसी में महीन मस्त्रियों को चन्द्र के साथ तराई का रूप दिया है

पीरहुर तर बीन्हे बालू सल खंड जहिवा कबिलातू ।

सको सहस बुइ सेवा घाई अननु जांड संय नजत तराई ।

(२५५ ५-६)

पद्मावति सब लखी बोलाई पीर पटोर हार पहिराई । × ×

जामहु कबल संय पूनी कुई के सो जांड संय तराई उई ।

(३३२ १४)

१ बिम्बापति उपमान १ १५

२ वही १ ३६

३ पद्मावती : संस्कृत संख्या १५२

४ महीन मस्त्र : सं० धनुषाम बांसुरी १ १७१

यह परम्परा मृगावती और अन्य भूषी काव्यों में भी लोबी जा सकती है। मृगावती के रचयिता कुठबन ने हरबार के बीच बैठी मृगावती को ताराओं के मध्य बन्ध कहा है

घाणु जाहि धो बैयइ ताही तारन मांत बनु बनु घाही ।

छेरे सरग कचपथी घाई, ताल मांस पुत्ती जस कोई ।

विभावती में भी उसक व उसकी सलिया ने लिए यह बिम्ब धाया है

सकस सजो भारति ले घाई ससि सनीप बनु मिति तराई ।

बड़ी छटारि हैछहि रनिवाता बनु ससि तपत सरप परगासा ।^१

इस प्रकार यह बिम्ब भी परम्परा द्वारा स्वीकृत प्रतीत होता है।

बायसी की राजनगरी क किये कबिलास की कल्पना भी परम्परागत है।

गनी कवियों में राजनगरी को कैलास कहा है।

उपमान ने कारीपूर के लिए कहा

पुनि कति जुग यह समसति भई जानहु अमरपुर बसि गई ।

लिपि लिखि खिच बिबिध संभारा बनु पुट्टमी कबिलास उतारा ।^२

बचिदम देस जान जिन्हु देखा उप नगर कबिलास बिलेखा ।

उप नगर सो उत्तम देसा, बनु कबिलास घाई मुइ देसा ।^३

मधुमावती में भी राजनगरी को कैलास कहा गया है

कोरि कोरि लम घर घर, नगर धनैव हुलात ।

कलितुम में जस प्रमिनी उत्तरि बसी कबिलास ।^४

गढ़हु कर्नैनिरि नगर सौहाबा बनु कबिलास उत्तरि मुइ लाया ।^५

छिटार्ई-नातों कार में भी यह उपमा यी है

राजन रंग कोरि रमणीक सामबद मुई नकत अकीक ।

घट छप्पर सतलमे धवास कंचन जलस नगहि कबिलास ।^६

बायसी में भी इन परम्परागत उपमान को अनेक स्थलों पर इसी रूप में प्रयुक्त किया है। निम्नलिखित उन्हें उदाहरण के तौर पर प्रतीत हुआ है

१ मृगावती : मृगी काव्य संग्रह १ १००

२ विभावती : उपमान, १ १२

३ विभावती : उपमान, १० १२१

४ वही, १ ६

५ वही, १ १२

६ वही १० ४७

७ मधुमावती : कंचन सं १४ -

८ वही

९ विभावती : उपमान १ १०

बर्बाह् बीप नियरबा जाही अनु कबिलास नियर भा घाई ।

(२७ १)

साहि मंदिल मरा बेजा अस कबिलास अनुप ।

जाकर अस बीराहर सो रानी कैत्रि रूप ।

(५२२ ८-९)

बरनी राव धंदिर रनिबासू प्रछरिह मरा जानु कबिलासू ।

(५३ १)

स्पष्टतः इस रूपक को भी उन्हींनि परम्परा से प्राप्त किया है ।

राजपुत्रियों घपबा उगकी मलियों के सामूहिक रूप में फुसवारी कहने की परम्परा भी सूफ़ी काव्य में भी इससे रग बिरंग बस्तों में डकी आसाम्रा का रूप साकार हो जाता है । बिजाबसी में सखी-महेलियों को फुसवारी कहा गया है

सखी सहेली सीम्ह हुंकारी घाई सब जानहु फुलवारी ।^१

बामसी में भी ऐसे प्रयोग मिल जाते हैं

पद्मबावति सब सखी बोलाई अनु फुलवारि सबे बलि घाई ।

(३३ १)

बई घोतत पद्मबावति बारी धब बोरे सब करी संबासी ।

बय बेबा तेइ धंग मुबासा बंबर घाई मुहुबे अनु पासा ।

(५५ १२)

बामसी में नेत्रों के लिये मरा रुबा समुद्र का उपमान हिलोरे लेने के साम्य के कारण दिया है । पद्मबावती के नेत्रों को बह समुद्र ही कहता है

सुमर समुद्र अस भंग बुह मानिक भरे तरंग ।

घांस्त तीर बाहि छिरि काल बंबर तेम्ह संब ।

(१०२ ८ ९)

- बिरहाबस्था में भी नेत्रों को रक्त के घाँसू रूपी मानिक उपमेत हुए समुद्र कहा गया है

घलबि समुद्र अस मानिक भरे राइ र्हिर घाँसू तस बरे ।

(६०८ २)

यह दोनों रूप समबत परंपरा में घा चुके थे । क्योंकि बिजाबसी और मधुमावती में यह उपमान वही बर्न के कारण प्रहीत हुआ । रक्त है क घाँसू भरे नेत्रों को मधुमावती में भी समुद्र कहा गया है

रयत घाँसू तस पेमा रोबा, बैई रे मुगा तई हिया करीबा ।

भन बहुबर हिय छठेऊ घंघोर, भब समुद्र रे रात हिलोरा ।^२

१ बिजाबसी अंगमल ३ ३५

२ मधुमावती अंगमल ५ ११०

उसमान ने भी हिंसोरे सेने व सहरो के कारण नेरों को समुद्र कहा है । नेत्र
दर्शन में यह कहता है

रोऊं रामुइ अनु उठहि हिलोरा, पम मंडू बाहुत जमत सब बोरा ।^१

रोऊ नतन अनु सपुई अपारा उमड़ि कत राबो को पारा ।^२

इन प्रयोगों से यह बिंब परंपरा द्वारा स्वीकृत प्रतीत होता है ।

प्रेमी के लिये प्रयुक्त उपमान अमर घोर पतंग त्रिमला उन्मत्त जायसी ने
बहुतायन से किया है सूखी परंपरा द्वारा स्वीकृत उपमान व । यह इतन बड़ हो चुके
थे कि बहुधा इनका प्रयोग प्रतीकबन्ध हुआ है । अमर घोर पतंग व उन्मत्त सभी
सूफी काव्यों में मिलते हैं ।

हु मर कहा मुनि राजकुमारी हो जोगी बस भंवर दुगारी ।^३

बिम्ब पतंग घट छाहा जो मोरा जाइ करेऊ सेंऊ प्रम भंजोरा ।^४

कर मन मोहू कित बसिहारी बीपक पर पतंग मयी बायी ।^५

जायसी ने भी अनन्यता की इस प्रतीति के सिद्ध अमर घोर पतंग का बार
बार प्रयोग किया है

हीराजन जो कमल बागाना मुनि राधा होइ भंवर भुलाना ।

छागे छाऊ कवि उजियारे, कहहि सो बीप पतंग सँ सारे । × ×

को राजा कत बीप उतगु, बहि रे सुगत मत भयऊ कतगु ।

मुनि सो समुद सपु भं बिसकिता कबंसीहि कपुँ भंवर होइ भिता ।

(२५ १२)

स्पष्टतः जायसी द्वारा प्रयुक्त यह बिंब भी परंपरागत है ।

समष्टि में जायसी ने मौलिक कल्पना होते हुए भी अनक उपमानों को
परंपरा से ग्रहण किया है घोर अनका उनी रूप में प्रयोग किया है । जायसी की
पूर्ववर्ती बिबाबनी महुमासती आदि सूफी—प्रभाव्यात्मक कथाओं में यह बिंब व्यो के
रवों प्रयोग किये हुए मिल जाते हैं । इन प्रयोगों के लिये कवि एक दूसरे से प्रभावित
थे ऐसा नहीं कहा जा सकता जब कि ऐसा हो सकता है क्योंकि जायसी का सरोवर
पर पर्यायों के स्नात करने का बयन बिबाबनी में भी बहुत कुछ उनी रूप में
आया है परन्तु ज्योत संभव नहीं लगता है कि यह सभी उपमान किसी प्रीड़ काव्य
परंपरा में प्रतीत हैं जो उन सूफी काव्यों की रही होंगी जिसमें छात्र बहुत से
आप्राण्य हैं । इसी कारण उनके रूप प्रायः काव्य में समान मिल जाते हैं ।

१ बिबली प्रकाश ४ ५-

२ शब्द १ ११

३ बिबली १० १५

४ महुमासती संस्करण ५ १०-

५ ईश कविता : कविम रा. ४, शब्द काव्य संस्करण ५ ११५

४—साहित्यिक व लोक परम्पराओं से

कवि एक सामाजिक और साहित्यिक प्राणी होता है। साहित्य में निरन्तर प्रयुक्त होने वाले उपमानों की अपनी एक धारा परम्परा होती है प्रत्येक काव्य में वह बहुत कुछ उन्हीं रूपों में मिल जाते हैं। उपमानों की इस साहित्यिक परम्परा में प्रत्येक कवि न्यूनाधिक रूप में प्रभावित होता है। लोक साहित्य की परम्पराएं भी इससे साब हो कवि को बराबर प्रभावित करती रहती हैं। कवि के अनेक उपमान उसके इन परम्परागत प्रभावों को व्यक्त करते हैं।

जायसी में भी ऐसी उपमान योजना बहुमता से आई है जिसे हम साहित्यिक धारणा लोक साहित्य की परम्परा से ग्रहीत कह सकते हैं। लोक साहित्य का बामती कालीन कोई स्वरूप यद्यपि इस समय उपलब्ध नहीं है परन्तु कवि के प्रयोगों से उसका अनुमान लगाया जा सकता है।

नक्षत्रिय बर्नन में जायसी प्रायः परम्परागत उपमानों का प्रयोग करते हैं। केछों के लिए सर्प मूल के लिए चन्द्र नासिका के लिए सड़ग भौह के लिए बनप प्रीबा के लिए मुराही दाँतों के लिए बाड़िम मोठी धबरो के बिचफन कमर के लिए मू कि केहूँ गति के लिए हूँगी घादि को बराबर प्रयुक्त किया गया है। उदाहरणार्थ

प्रथमहि सीस कस्तूरी केसा बलि बानुकि को भोव नरेसा।

भंबर केन बहु मानति रागी बिसहर मुरहि लेहि धरपानी

बेनी छोरि भाव को धारा सरग पतार होइ प्रंचियारा।

कोरल कुटिल केस मम कारे नहरनिह मरे म प्रंग बिसारे।

बेने जानु मरैगिरि बास। सीस बड़े भोटहि बहु पास।

(११ १-५)

सति मुख धंग मरैगिरि रागी नाबहु क्षापि लोभु धरबागी।

(११ २)

नासिक सरग फूल सुवतारा भोई बनुरु गयन को पारा।

(४४१ १)

बरती मीब कुब के रीसी बन्ध मार अनु सागेऊ सीसी।

कुब केरि जानु गिय काङ्को हरी पुसारि टगी अनु टाङ्गी।

अनु हिय काङ्गि परेबा टाङ्गा लेहि से अचिक भाउ गिउ बाङ्गा।

(१११ १३)

हसन पीरु बेटे अनु हीरु, यो बिच बिच रंग स्वाम जंभीरा।

अनु भावों निति बामिनी बीसी धमकि छठी तन भीब बतोसी।

(१०७ १२)

हसन स्वाम पातलु रघ पाके पिहूसन कंबल म बर धत ताके।

बमतकार मुख भीतर होई, जत बाँरिब झौट स्वाम मकोई।

बमक बोक बिहुँत जो नापी, बीज बमक जस निजि भविष्यापी ।
 सेठ स्याम घस बमके बोठी स्याम हीर बुइ पाति यईठी ।

(४७७ १४)

घघर सुरप अविघ्न रस घरे, विन्ध सुरप लागि बम परे ।
 फूल बुपहरो मानहु राता फूल सरहि जब बब कहू पाता ।
 हीरा गई सो बिहुम बारा बिहुसल जगत होइ उजिपारा ।

(१०६ १३)

प्रियि सरु कलु मांस न सागा, बुइ चंड भनिनि मांस जस तागा ।
 बब किरि पसी घपघरा पाउ घाठरि इंद्र केरि जस काटे ।

(४८४ १२)

प्युम राब तेगह रांग बसाही भवर सायि तेगह रांग किराही ।
 भंक सिहनी सारंग नैनी हुंम पामिनी कोनिल बैनी ।

कम सिद्ध के लिए प्रयुक्त यह सभी उपमान पूर्णतः परम्परागत हैं । मध्य
 वासीन घीर परवर्ती काव्य में यह उपमान बराबर इसी रूप में प्रयुक्त होते रहे हैं ।
 नरपति नाम्नु ने भीमभदेव रासी में मुक्त के लिए चन्द्र दातों के लिए वाङ्मि मति के
 लिए नयंद घीर बाली के लिये कोकिसा को प्रयुक्त किया है

बत वाङ्मि कुली जी सी ।

मुझो प्रभूत बाँयो बाँके के बीज ।

रासि घरनी जो ह्यो ना परंद ।

घात्रहिष्या रतनालिया ।

बौहरा जाले भमर भघ्राव ।^१

द्वितीयवाग्मिार भी कहता है—

डूटिस केस मिर सोहुइ बास कब कवारि अनि मयुकर मान ।

बोती मान मरन की बाद रात्र भीष्ट सल तिलक निलस ।

मरर सोम सति बदन प्रदाय मरन चाप लम नहुइ तामु ।

मयु सावक सोहुइ सोम उपइ कंचन तितो कपोल ।^२

यहाँ भी वेदों के लिए यौनों मुक्त के लिए चन्द्र घादि उपमानों की योजना
 है जो गायत्री में भी इसी रूप में बिज बानी है इन काटल उहे परम्परागत कहा जा
 सकता है ।

संभव है भी इन उपमानों का इसी रूप में प्रयोग किया है । उसने केशों को
 पं नलाई को दुख का चार घादि घादि कहा है :

१ शिवदेव राम । रासि । १०८

२ द्वितीयवाग्मि । मरुका राम

समबगाहि परसिद्ध मनिपारे परल भरे बिबबबर हतिपारे ।^१

निहकमंक ससि बुइब निसारा भौ खंड तीन न वन उजियारा ।^१

सूर तुमसी आदि में भी यह उपमान ज्यों के त्यों मिल जाते हैं। इस प्रकार नकलिय वर्या में प्रयुक्त जायसी के प्रायः सभी उपमानों को परम्परागत कहा जा सकता है।—

जायसी ने प्रेमी के लिए प्रेमर घोर पतंग के रूपका का बहुधा प्रयोग किया है। रत्नसेन के लिए यह बिम्ब बहुप्रयुक्त है

हीरामनि जो कंबल बजाता सुनि राजा होइ भबर भुलाना ।

(१५ १)

मासति लागि भबर बस होई होइ याजर निसरा सुनि छोई ।

कहेसि पतंग होहि ससि मेळं सिपल शीप जाइ निब बैल ।

(१७८, १५)

तुम्ह नित मयक पतंग के करी सिपल शीप घाइ उड़ि परा ।

(३०७ ५)

प्रेमी के लिए पतंग घोर प्रेमर के यह उपमान परम्परागत है। प्रायः सभी प्रेमाख्यातक काव्यों घोर प्रेमर साहित्य में इसका पर्याप्त प्रयोग हुआ है। सारंग पाठक घोर अकोर आदि के उपमान भी परम्परागत हैं। प्रेमी के लिए यह साहित्यिक परम्परा द्वारा स्वीकृत प्रतीक है। जायसी ने इसका बराबर प्रयोग किया है

जातसि सबे पबस्था सोरो, जस बिछुरी सारस की जोरी ।

(५०८ ५)

नीन रात निसि मारम जाये अनित अकोर जानु ससि लारी ।

(१६७ १)

सूरज परस बरस की छाई पितबे बंद अकोर की माई ।

(१७८ ७)

तुमसी ने भक्त घोर प्रेमी के लिए आठक का उल्लेख किया है जो पर्याप्त प्रसिद्ध है

एक भरोसो एक बस एक आस विस्वास ।

एक राम धनस्याम हित आठक तुमसीबास ।

इस प्रकार स्पष्ट है कि प्रेमी के लिए आठक या अकोर परम्परा द्वारा स्वीकृत उपमान है।

जायसी ने प्रेमी के लिए पानी से विपुक्त विरहाग्नि से तपती हुई मछली का रूपक दिया है

१ मधनाली : मंजुम मर्या ७४

२ की संख्या ३२

अन बिद्योय-अस मीन बुहेला, वस हुन कादि घयिनि महु मेला ।
(२०० १)

(यह उपमान नी साहित्यिक परम्परा द्वारा स्वीकृत हो चुका था । मनुमातलीकार संस्कृत में यह उपमान आया है

मधुमासति मुख कु बर निहारति बैलि रूप भयङ्ग सीन ।
ताराचक्र कु बर बिम्ब अटपटि बिम्बि अल बिपुरे मीन ।^१

तरपति मासू न भी यह उपमान दिया है—

आज निराइल सोध पड़यो ।
ध्याति पहर मीही नू मीली धल ।
उछछ पापी रूयू माछसी ।
बिम्ब बागू तिब उठुहु सापि ।^२

मुस्ता दाठर के बंशायन में भी यह है । बिच्छू पीड़िता मीना क लिए कवि कहता है

निस बिन भुल्लै प्राप्त बे भासी रोइ रोइ बिन बिन होइ बिनसी ।
मीर मीर कहि बिन घर आबै धकर बबन हुर मुझहि न आब ।
पति त अन्न ही रैन सुमाई अस मछरी बिन मीर घुरछाई ।^३

बम्पसी नु मुदस्वन्न म बर्पा धीर बादलों क अनक समय चित्र दिये हैं का साहित्यिक परम्परा से सूचित है ।

आबहि आइ शुरहि बहु ठाठ बेखत अंस गमन धन घडा ।
अमकहि करय सो बीउ समाना, गल गाबहि धुम्बरहि निसला ।
बरसहि सेल बाज धन घोरा पीरज पीर न बापहि तोरा ।
(६१३, ५-६)

विशवली क सेखक उममान में भी इस बिम्ब को इसा संदर्भ में प्रस्तुत किया है

बली फउल अनु सायन घटा अमकहि नरण सस र्यौं छटा ।
बाज बुद अनु धन घहराई, मेत पडा रूप पाति सोहाई ।
अई तंहु माध ते मुर पुरा बलि घटा अनु कुहुक ममुरा ।
हायिन पीठि धंकारी करनी आबहि अनु सरप सो बली ।
मिनि लख असहि मुरगम बसी पोन मकार घटा अनु बली ।^४

बायली ने प्रमौ को मरजिया क रूपक से प्रस्तुत किया है जो पय अनु में दूर कर मय रूप मोठी प्राप्त करवा है

१. मनुमातली संस्कृत ५ २०
२. वैशुदेवधरोः अणुति नन्द, ५ ४०
३. शिवदत्तः तुष्यो वापः, १ १५
४. विशवलीः उममान, ६ ६०

नव प्रमोद तैगह तालगह बिनाहि बरहि बनु बीप ।
जो मरबिआ होइ तह सो पाबहि बह सोप ।

(३३, ५-६)

मन्मथ ने भी मद्दुभासती में इस रूपक को प्रेमी के लिए प्रयुक्त किया है, जो बायसी के रूपक के परम्परागत होने का प्रतीक है

बिरह समुद्र अथाह अति जल जानै सन कोइ ।
मानिक लौ लै उनरै जो मरबीबा होइ ।^१

बायसी न मसिन या बिरह व्यथित नामिका के लिए पहल प्रस्त रूपक दिया है

बैसठु बिरह न छमै भा ससि बहल गरास ।
नखत बहु बिसि रोबै अंबियर परति प्रकास ।

(२४६ ५६)

बाँद बैस बनि उजप्रति अही भा पिठ रोस पहल अस्त बही ।

(५६ १)

यह रूपक भी परम्परागत है प्रायः सभी प्रेमाख्यानों व परबतों और समास मयिक साहित्य में यह विन्म मिल जाता है । छिट्टाई बाठा में छिट्टाई के बिरह व्यथित रूप के लिए कहा गया है

पातसाहि बिय अति पछताई तिर मीचो सुबहन कुम्हलाई ।
बदन भलिन बेखियै कयाह बनु ससि गगन बन्पी राह ।^२

बदानन कार मुल्मा बाउद मी मैना के लिए कहते हैं

मना बात बिप्र जो कही सुनतै बाँद राह बर बही ।

पूनेठ कुच निधि बिपत जो अहा मी लौ जोतिकार होइ राह ।^३

बीसमरेव रासो में भी यह उपमान आया है

बाँद बहन बीठी धन नाह, सीध हरब जमैलौ पसीयो छ्य राह ।^४

स्पष्टतः बायसी का यह उपमान भी परम्परागत है ।

जामसी ने मुठ स्वप्न पर औमान का विन्म दिया है । मुठस्वप्न मीरान है एवं उँडा है और धिर पेंद है साह और पोरु—बादन इध बस के लिखाई है । बिभा वली में भी यह उपमान आया है ।

बाइ कहुँ साबर कहुँ हाप सिह औमल ।

हाल अउ जो अएब, याहै मोड मीरान ।^५

१ यमुनाली : दंका १२५ २४५

२ किराँवली : अरुण ५ ५

३ अंगदन : मुल्मा बाउद ५ ३३

४ बीसमरेव रासो : मरबि नख १ ३

५ बिजबी अरुण, ० ६०

संभवतः यह विन्धन सामायिक का उद्योगिक पारिजाती में भी किञ्चित् भाग परिवर्तन के साथ यह धामा है

अबकू मानसा हनारी यौद बोलिए सुरत बोलिए बीपान ।

अनहृष मे खेमिबा साया तब ययन भया मैदान ।^१

समष्टि में यह सन्धी—मसष्टिप्र धौर उरस इतर विन्धन साहित्यिक परम्परा से दृष्टित है क्योंकि वह सन्धी काश्मों में उषी रूप में प्राप्त हो जाठ है ।

४—फारसी मसनवियों और इतर साहित्य से

आमसी मुसलमान या धौर सूफी का इस कारण फारसी मसनवियों का उच पर विशेष प्रभाव पड़ा था । यद्यपि फारस में लिखी गई फारसी मसनविया से बहु विशेष परिचित रहा होया एसी कल्पना नहीं की जा सकती परन्तु भारत में लिखी गई फारसी मसनवियों का उसको ज्ञान था यह स्वीकार किया जा सकती है । यह ज्ञान सूफी परम्परा द्वारा ही उच प्राप्त हुआ था ।

फारसी साहित्य से आर्यसो के विन्धनो का सर्वप्रथम ज्ञानता एक व्यक्त बुद्धि कार्य हो गया है क्योंकि हिन्दी साहित्य को अभी तक उनका विषय परिचय नहीं है । हिन्दी फारसी मसनवीकार की कृति का अनुवाद हिन्दी साहित्य में नहीं है यहा तब कि सम्प्रकासीन साहित्य का बहुत धलो में प्रकाशित करने वाल धमीर कुसरो से भी हिन्दी पाठक विषय परिचित नहीं है । किसी का व्यक्तिगत रूप में अध्ययन अभी तक उपलब्ध नहीं है सामूहिक रूप से सूफी मसनवीकारों का परिचय ठसम्बूध और सूफी मत-शासना और साहित्य धारि कुछ पुस्तकों में मिल जाता है पर विधिष्ट न होने के कारण यह हमारे विषय उपयोग का नहीं रहा है उससे सूफी मसनवियों की परम्परा से ज्ञान प्राप्त फारसी कवियों का मात्र परिचय पाया जा सकता है । मसनवियों के विषय में कुछ विषय जन्ने नहीं है । इन प्रकार हिन्दी साहित्य एक प्रकार से सूफी मसनवियों और इतर साहित्य से अपरिचित ही है । इस कारण ही आर्यसो के विन्धनों में सूफी मसनवियों के प्रभाव को स्पष्ट करना व्यक्त कठिन हो गया है । हिन्दी में का अनुवाद उपलब्ध न होने के कारण भाषा समस्या भी बहुत बड़ी बन गई है । यहाँ आर्यसो के कुछ विन्धनों का उद्यम फारसी मसनवियों में साक्षात गया है । जो मुख्यतः अरबी अनुवादों की शतावस्था ग है ।

वैसा पहले कहा जा चुका है आर्यसो को फारस में लिखी गई फारसी मसनवियों का ज्ञान था यह अनुमान नहीं किया जा सकता संभवतः भारत में लिखी गई फारसी मसनविया से भी बहु परिचित न रहा हा परन्तु गुफा साहित्य की धारती परम्परा की शिष्य पुस्तकें तथा धनप्रविषा—के प्रभाव से उरस धारता अरब्य परिचित रहा होया । अरबी शब्द पद्धति युक्त फारसी मसनवियों में सूफी है । अतः पर इस प्रकार धनप्रविषा या प्रोत्साहनका का माये पण कर स्थिी धार्यायिक धार को देना वा सर्वप्रथम धारता फारसी ११ की ली के प्रीध धौर धार 'सूफी' कवि मन्मन रूप पर्येउत्तीन धार्या

ने किया था। अन्तार में अपने 'मल्लिकार्जुन' में पक्षियों की कथा द्वारा साधक के मार्ग की कठिनाइयों और अरुण लक्ष्य तक पहुँचने का वर्णन किया है।^१ सूफियों की अर्थोक्ति की यही परम्परा बायसी तक बनी भाई है। सूफियों के सुरा, प्रिय, केस, मछली घाबि' के प्रतीकों का प्रयोग नी सूफी प्रमास्थानकों में बराबर मिलती है। बायसी भी इससे वास्तव नहीं रहे हैं। उनमें भी सूफी प्रतीक योजना का बराबर प्रयोग हुआ है। यहाँ हम उनके कुछ बिम्बों पर अरबी काव्यो मुख्यतः मसनवियों के प्रभाव का विश्लेषण करेंगे।

बायसी ने अनेक स्थलों पर पश्मावती के लिए अश्रु उपमान का प्रयोग किया है। सिद्ध और माध साहित्य में अश्रु का प्रति जो चारणा है वह बायसी के अश्रु—उपमान में सर्वत्र नहीं है, कहीं कहीं ही वह साधनात्मक प्रतीक के रूप में आता है वह मुख्यतः सौन्दर्य की अनुभूति कराने के लिए है। इस चारणा में उस पर सूफी साहित्यिक मान्यताओं का प्रभाव भी रहा है। हिन्दी साहित्य में यद्यपि अश्रु उपमान का बहुतायत से प्रयोग हुआ है। पर वह कबल मुख के लिए है, समग्र भाविका के लिए नहीं। बायसी ने दोनों ही रूपों में इसे किया है। जिसमें समग्र भाविका के लिए ही इसका प्रयोग मुख्य और अधिक है। अरबी साहित्य में यह उपमान बराबर प्रयुक्त हुआ है। अनीर कुसरो ने अपनी मसनवी—इबन एनी—बिन्ब खान' में इस रूपक का प्रयोग बेबलरानी के लिए किया है। बेबल एनी मानो चाँद की जिसमें सारे संसार की ज्योति धाकर समा गई थी घाबि' घाबि कबि ने उसकी उपमा विचार से भी की है।^२ बायसी ने इस उपमान का बहुधा प्रयोग किया है। रूप वर्णन में अनेक स्थलों पर इसका प्रयोग मिल जाता है। जैसे

घरी तोर सब छोपक सारी सरबर मंह पैठी सब बारी ।
 सरबर नहि समाइ संसारा चाँद नहाइ पैठि मेह सार ।
 पनुमावति सो झरोखे घाई निहकलक अच सति बैखराई ।
 ततखान रायी बीन्ह घसीता जगहुँ बंद पत्तोर मुप बीसा ।

१. सुखमल-सुखना और सुखस्य दम्पकल तिर व २१४

२. उस-सुख और सुखमल : अश्रुकी पवित्र व १०२ ११

३. शब्द-शब्द अन्वय व र बरे रोख म्हे सु अकलान अन्वय परोख
 फल = मूर कि मिर्द अलु वा अकलान अन्वय सु व नरामा रा अर
 न मूर अन्वय म्हे सु १०४ अन्वय सुमल वर अन्वय वर
 न्हे सुखीर वन अन्वय मूर अन्वय हु पैसा वाग्द व न्हे सुखीर
 सित वर के रे मूर अन्वय पोर फल म्हे गो अन्वय पर्वत म्हे पोर
 म्हे अन्वय अन्वय अन्वय वर व वरने अन्वय वर अन्वय वर
 इबन एनी बिन्ब खान : परिच्छेद, व १० व ११

४. व पर म्हे म्हे वाग्द लम सल न्हे सुख अन्वय, व वरने वर अन्वय ।

पहिरं ससि मसतमहू क मारा, धरती सरप भयङ्क उचिपारा ।
(४२१ १३)

भे निशि ससि भीराहर बड़ी सोरहू करा बंस बिचि यड़ी ।
बिहंस मरोसे भाइ सरैली निरक छाहि बरपन मंह देखी ।
होतहि बरस परस भा लोना बरती सरप भयङ्क सब सोना ।
(४६६ २४)

बाब संपुरन जनु होइ लपी पारस रूप बरस बी छपी ।
(४७१ ६)

इन प्रयोगों से प्रतीत होता है कि जायसी सूफ़ी परम्परा में प्रयुक्त चन्द्र के इस प्रयोगों से अक्सर परिचित और प्रभावित रहा हुआ ।

जायसी ने सृष्टि के लिए बरस का उपमान विना है जिसमें संबंध पचाबनी क रूप का प्रतिबिम्ब पड़ता है वह कहता है

कहा मानसर बाहू सो पाई पारस रूप इहां लगि भाई ।
भा निरसर तेहू पावगह परस, पाबा रूप रूप के बरसै । × ×
पाए रूप रूप बस बहे ससि मुक सब बरपन होइ रहे ।
(६५ १-७)

सृष्टि को रचना करने की यह चारणा मधुमालती भादि सूफ़ी प्रेमाप्यात्मक में भी प्राप्त है । मन्त्र कहता है

होतर न कतहू तुब जोरा बरपन तिसि छब मुक तोरा ।^१
तोरा रूप तिरनुबन खंजोरा सकल तिसि मुस बरपन तोरा ।^२

इन उपमाओं का मूल भी सूफ़ी मसनविया आत जाती है । सूफ़िया न माना कि कृद्धि दर्शन के सदरक है जिनमें परमात्मा क गुण प्रतिबिम्बित होत है । आमी कहता है 'तुब परम सता हा और ममो कुछ मरीबिना भाव है कयाचि तुम्हारी सृष्टि की समी बस्तुए एक है । सम्पूर्ण सृष्टि को मुग्ध करने वाला तुम्हारा हीन्दप अपनी पूणता को प्रकाशित करने के लिए हजार वर्षों में प्रतिभासित होता है । सबिन् बहू एक ही है ।' सम्भवत बिबाधे के साथ साथ यह उपमान भी जायसी ने सूफ़ी मसनवियों से ग्रहण किया था ।

प्रेम के लिए प्रयुक्त जायसी का समर बेत का बिम्ब भी परम्परागत है । जामती प्रेम को समर बेत कहता है जो एक बार बर घाने पर फिर नहीं बरती जो घबेरी ही बर कर छा जाती है और जित्ता दूसरे को नहीं पतपन देती । इसका साथ धपार दुःख बढ़ता ही जाता है

१ मधु-५० । ईन्दक सं ६

२ वही ७० ३ ।

३ दि शिरोती बिन्दी कक वरिष्य । ६ भी आम्ब ६ ४०६

पहु फुलवारी सो घोहि की बातो कहू बहु केत भंवर संग बातो ।

(५६१ २)

कंबस सहाम बतौ फुलवारी, कर फुलगु के इच्छा बाधि ।

(१८६ २)

कुमुदो ने भी इस उपमाल का प्रयोग किया है । सामूहिक सीन्धर्व्यं की धनुर्दृष्टि दबस राती लिख खां में इसी प्रकार करायी यमी है ।^१ यहाँ उसका रूप पूर्णतः बापसी के इस छंद की भांति है

एक बिबस कोनिम तियि छाई मान सरोवर बतौ धम्हाई ।

पहुमाकसि सब सर्वाँ योलाई, अनु फुलवारि सब बलि छाई ।

कोइ बपा कोइ कु ब सहेली कोई मुकेल करमा रस बेली ।

कोई मु पुतास सुबरसन राती कोई बसोरि बकबनु विहसली ।

कोइ मु योतसरि पहुमावली कोई बाछो बहो सेबाती ।

(५१ १-७)

धमीर सुसरी ने मध्यकाल में जन जीवन को विषय रूप में प्रभावित किया था । बापसी न सम्मेलन जन जीवन के द्वारा ही सुमरा क इस बिम्ब को ग्रहण किया था । फुलवारी की यह कल्पना समस्त प्यारसी साहित्य में बहुसता से व्याप्त है । बापसी में इसका ग्रहण परम्परागत ही कहा जायगा ।

बापसी ने मुर के लिए "दिय" का बिम्ब दिया है । उसने गुद को संसार मार्ग की प्रकाशित करने वाला दीपक कहा है । बाधिरी नखाम में बहु बहुरा है

साबिक एक पायऊ उत्रियारा मैदर असरफ पीर पियारा ।

जहाँपीर पियानी तिरजरा कुम जय मां बीरक जिधि बरा ।

(भा १)

मुहम्मर साहब के लिए भी इस बिम्ब का प्रयोग हुआ है

कौहेसि बुरप एक निरमरा नां मुहम्म पुनिब कर ।

प्रबस कोति बिपि तेहि के सानी प्रीनेहि प्रीति सिस्ट उपराबी ।

बीपक तेसि अगत कहू बीकर ना निरमत जय मारव बीकर ।

^१ सु सुन पर कल्पना कर कानद कर हाथ हाथकर गरा मरिज बरने सुदर्य
दरुण रर सु बनारे ररके हाथकर निगा ३ सुदी ।

परीने कः सु रर र लपर र ररके लो ररने कः रर ।

रर रर गगन ररी र ररर र र रर रर र र रर ।

रर रर रर रर रर रर रर रर रर रर रर रर रर ।

रर रर रर रर रर रर रर रर रर रर रर रर रर ।

रर रर रर रर रर रर रर रर रर रर रर रर रर ।

रर रर रर रर रर रर रर रर रर रर रर रर रर ।

प्रीति देखि जनि पच्छी कोई, धरमं मुए न छूई सोई ।
 प्रीति बैलि घेसे तनु ठाढ़ा पनुहल सुख बाढ़त सुख बाढ़ा ।
 प्रीति बैलि संय बिछु अषारा सरण पतार जरै देखि सारा ।
 प्रीति देखि कहू अम्बर बोई दिन दिन बाढ़ै जीन न होई ।
 प्रीति अकेली बैलि अड़ बाबा बोसरि देखि न पसरै पावा ।

(२१४ ३-७)

यही मायका एसी रूप में फारसी काव्यों में भी छाई है । सियर अल-प्रोतिया में कहा गया है कि 'सुल्तान मधायक ने कहा कि इस्क मुहम्मद का आखिरी रत्न है और मुहम्मद इस्क का पहला रत्न है' । और कहा कि इस्क 'इस्क' से सिया गया है । यह इस्क एक बास है जो बानों में उगती है और दररत पर बढ़ जाती है । पहल आपने बीघ को जमीन में उखाड़ती है । फिर उसकी शाखें निकलती हैं और दररत पर सिएट जाती हैं और इस तरह ऊपर तक जाती हैं । यहाँ तक कि पूरे दररत को ढक जाती है और उसको इस तरह चिकड़ी में पकड़ लेती हैं कि दररत की रों में ठरी बाकी नहीं रहती । हर हवा जो उसके (इस्क के) नाम से होकर उस दररत को पहुँचती है दररत को बरबाद करती है यहाँ तक कि वह दररत सुख हा जाता है' इस्क के यही मुख अमर वेन में है इससे जायसी ने उन्हीं विषाणों को इस्क म न रखकर अमर बेस के रूप में कल्पित कर लिया है पर इस कल्पना का मूल इस्क की बही भावना रही है इस्क का अरस प्रदेश की एक परोपजनी बास है और अमर बेस भारत की । उनमें नामों के अतिरिक्त विशेष अन्तर नहीं है । जायसी ने केवल नाम परिवर्तन करके इस बिम्ब को ज्यों का त्यों ग्रहण कर लिया है ।

जायसी द्वारा प्रयुक्त फुसगारी का उपमान भी फारसी काव्य परम्परा से लुप्त प्रतीत होता है । सामूहिक सौन्दर्य की अनुभूति कराने के लिए हिन्दी साहित्य में फुसगारी का उपमान नहीं गयी मया है । फारसी और उर्दू में अल्प कवियों को बचीब और अमन से विशेष प्रेम रहा है । जायसी ने भी सामूहिक सौन्दर्य को टरफ बनाने वाला यह उपमान फारसी काव्य परम्परा से ग्रहण किया है उसने सखियों के लिए फुसगारी शर का प्रयोग बार-बार किया है

(अर्थ) अमर वेस को आखिरा बरान्प्रानिब सुख उन नर मानती
 अकला दरमन सि : २१४ । (प्रयोग) इस्क का पहला इस्क-
 अमर वेस दरमन गला अत कि नर मया अमर व बरान्त
 दर रत अमन नीचे खेरा दरम । दर । फुसक अत रा गला
 दर अमर व कर दररत वेकन डम सु गी मी अत हा मुगला गला
 रा फला गला व सुवा मला दर गिरीया अमर कि म । दर रा अमर
 दररत मनमर इत बने कि प नसे अमोड बने ली प । दररत
 गी रात त गला हा कनुव ली अगला कि दररत सुक दी शर
 सियर : अल प्रोतिया ३० ४३३ ७

जो न होत अत पुष्य उजियारा सुभ न परत पप अंधियारा ।
(११ १५)

तब मा पुनि अफूर सिरजा दीपक निरमला
रवा मुहम्मद नूर जगत रहा उजियार होइ ।

(अक्ष २)

यह विम्ब भी परम्परागत है। फारसी साहित्य में यह उपमान बराबर प्रयुक्त होता रहा है। तुल्यते से घरेने मगना प्रक प्रनबर म वेनम्बर के लिए घमा का रूपक दिया है। जा दीपक का ही एक रूप है। पैगम्बर घमा है जो संसार को प्रकाश देता है। 'मही मान्यता जामनी न भी इनी रूपक म वी है जिससे यह परम्परागत कहा जा सकता है।

घामु के लिए मोतियों का उपमान भी आयसी ने अत-अत प्रयुक्त किया है। यह भी फारसी साहित्य-परम्परा से लुहीत है

मैनहू डरहि मोति धौ मु गा अत गुर जाइ रहा होइ नु गा ।

(१२५ २)

फारसी के प्रभावबल उसमें एक के घामुओं का उल्लेख भी बहुत है जिसकी समता उसल माजिन्य आदि से वी है। फारसी साहित्य परम्परा के कबि अमीर खुसरो में भी यह उपमान प्रयुक्त हुआ है। यह रोत हुए नेत्रों को मोती उबसते हुए घामर कहता है। स्पष्ट यह उपमान भी परम्परागत है।

अमष्टि में आयसी का फारसी साहित्य विशेषत जो फारस में लिखा गया से बिलेप परिचय नहीं था परन्तु सूफी संप्रदाय में आकर और जन बीबन से प्राप्त कर जामनी ने कुछ उपमानों को फारसी सूफी काव्यों की परम्परा से बिचारों के साथ-साथ बयो का ल्यो ग्रहण कर लिया। इन उपमानों को संख्या यद्यपि बहुत नहीं है परन्तु यह आयसी पर पने परम्परागत प्रभावों का पर्याप्त बिस्लपण कर सकते हैं।

अत में कहा जा सकता है कि आयसी ने परम्परा का सफ़ल प्रयोग किया है। उसने अपनी मौलिकता से अतक मधीन उपमानों की योजना की है परन्तु परम्परा के प्रति बिद्रोह उसमें नहीं था। उसल पर्याप्त परम्परागत उपमानों का प्रयोग किया है जो उसक ब्यक्तिरूप का परिचय भी देते हैं।

मवीन विम्ब

परम्परागत होने के उपरान्त भी कबि की विम्बयोजना पूर्णतः लु नहीं होधी उसमें नवीनता के तत्व भी अतक समाहित रहते हैं। कबि की कल्पना दृष्टि कहीं से

१ सू कि नव घामु निजातुगी आरे अत क न निजायन लीर ।

मउला : अत-अतक व >

२ सुई अत अया अतक दर जोत सु दुगेनल व नोअर इयोरा ।

दिल अत कअने मोराय अ-कूजा अतकत हु अरन्ता अत सु मोराय वर गोहर गरत ।

दकक लभी दिज ली : अरिपक, हु अ ।

सादृश्य के लिए नवीन उपमाओं को माती है और कही प्राचीन उपमाओं को नवीन संवर्ध में प्रयुक्त करके उनमें नवीनता की सृष्टि करती है। जायसी के उपमानों में भी पर्याप्त नवीनता है।

किन्ती कवि के नवीन उपमानों की कोज करना अत्यन्त कठिन कार्य है क्योंकि कवि से पूरा रहे गये गमी काव्यों का अध्ययन करना अथवा अत्यन्त है। उससे पूर्व के अनेक प्रथम प्रमाण हैं और अनेक संश्लेष हैं। इस स्थिति में समस्त पूर्ववर्ती काव्य परम्परा से परिचित न होने के कारण उसमें प्रायः सभी नवीन दिम्बों को खोजना अत्यन्त दुष्कर है। अतः यहाँ नवीन दिम्बों को मात्र समावृत्ता ही की जा सकती है। जायसी से पूर्ववर्ती किन्ती प्रथम में यह उपमान नहीं आया ऐसा प्रमाण और विश्वास प्रकृत कहना असम्भव है। अतः यहाँ प्राप्त साहित्य और सम्भावनाओं के आधारे पर ही जायसी की दिम्बगत नवीनताओं का अध्ययन किया जायगा।

प्रचलित काव्य-परम्परा से काफी दूर और आगे हाने के कारण जायसी में दिम्बगत नवीनताएं अधिक आई हैं। उसने अनेक नवीन उपकरणों का प्रयोग किया है और अनेक प्राचीन उपकरणों से नवीन भाव व्यञ्जना की है। इस प्रकार नहीं तो नवीन बन्पुए मानने पड़ती हैं तो कहीं उनके नवीन प्रयोग। इस प्रकार जायसी की दिम्बगत नवीनता को हम दो रूपों में देना सकते हैं एक तो बन्पु की नवीनता दूसरी प्रयोग की नवीनता।

१—परन्तु की नवीनता

जायसी उन्मत्त कल्पना दृष्टि का महद्वय कवि था। साहित्यिक परम्पराओं से यद्यपि वह भली भाँति परिचित था परन्तु उनसे इतना अधिक प्रभावित नहीं था कि उसकी कल्पना दृष्टि परम्परा के प्रतिरिक्त किसी अन्य तरह को देख न पाती। उसने जीवन का समग्रता और रागरमकता-क आश्रय अध्ययन किया था-अन्त में उसके काव्य में जीवन के अनेक पहलू अनेक रूप मानने आये हैं जो प्राचीन परम्पराओं में नहीं थे।

वस्तुस्थितीय दिम्बों में जायसी ने टैग के फूलों, पत्तों बीज के अफुरित होने जूमि धारि के अनेक नवीन दिम्ब दिये हैं। रंग और साका साम्य के आशारे पर योगियों के कठक के लिए टैग के फूलों का उपमान प्रयुक्त हुआ है टैग की अकारता और रंग व कटक की बिनासता और योगियों के देरए बन्पु की अफुरित कराई गई है।

जन्म कटक योगिन्नु कर के देरया लख भेयु।

- कोट बीत बारहु रिति जानहु कुला देयु।

(११४ ८-२)

जन्म का प्रयोग भी अत्यन्त नई बीजे बने जियया भी बीजा व भाव अन्तः

वियर पात कुछ भरे निपाते, मुच पामों उपमे होइ राते ।

(१८३ ७)

बनारस में जायसी की दृष्टि पलम वृक्ष पर भी गई है । उसने पतंग को इच्छ-
हीन पुरुष कहा है जिसका बन स्त्री पक्षियों का सौम्य समाप्त हो चुका हो घोर घब
बह मात्र दूठ ख गया हो—

छाठ रह सुधीनता निसठे धायरि मुच ।

बिनु मय पुरुष पतम ज्यों टाड़ डाड़ पे मुच ।

(४२० ८-९)

बिरह दाह मनाउगीन के लिए भी एक नवीन बनस्पतीय बिम्ब दिया है ।
बिरह दाह मनाउगीन को वह पृथ्वी में तप्त जीव कहता है जो रानी की मुद्रादि की
बर्षा से संकुरित हो सकता है

तर्प बीज जल भरतो मुच बिरह के घाय ।

कय सुबिन्दि के बरिसे सन लिनबर होइ जाय ।

(३६१ ८ ९)

कवि ने रानी नागमती के लिए प्रापाद मास में पस्तवित होने वाली भूमि का
बिम्ब दिया है जो नवीन है ।

ममय प्रीग मौमम के जायसी के समो बिम्ब नवीन प्रठीठ हस्ते हैं । जायसी
ने मुद्र के लिए होली का रूपक दिया है जो नवीन है

द्वरहि कब कबम नितारे माठ मंजीठ जानु रग बारे ।

पेनि फग सेंदुर छिरिबाब बांजरि पेनि प्राणि रग पारं ।

इस्ती धोर घाइ जो डूका, उठे बैह तिमहु रक्षिर ममुका ।

(६११ १-७)

मौसम सम्बन्धी हुतरा बिम्ब प्रापाद मास का है । राजा खलगेन के जितौड़
जीवन का कवि ने प्रापाद मास का प्राममा कहा है जो नवीन

पसटा के पुरकारण राजा जस घसाइ घारं बर साजा ।

बेति सो छत्र मई जग छाहा ,रति मिय डोनए जय मीहा ।

सैन पूरि घाय घन घोर खस बाऊ बरिर्न बहु धोर ।

बच्छी सरण घब होइ मेराबा भरि घरि पोघर तान लमाबा ।

मइक उठा सब मुभिमा गाना टावाहि टाब डूब घस जामा ।

बाबुर मोर कोकिमा बोसे हते असोम बोम सब जोसे ।

(४२१ १-७)

मुसामरक अनुभूति को व्यक्त करने के लिए प्रयुक्त प्रापाद का यह समय बिब
प्रापादकार की नवीन वस्तु-वचन की प्रकृति का परिचायक है ।

पद्य-व्यभिची में यद्यपि कवि की विधेय रचि मही है परन्तु कुछ नवीन पक्षियों
का काव्य से परिचय उसने प्रकर करवाया है । वह नवीन पक्षी हैं कंकून साही गरद

दि। कबूत का उल्लेख जामसी के किसी पूर्ववर्ती काव्य में नहीं मिलता। कबूत के जीवन भर बिरही रह कर मृत उबाला उत्पन्न कर उस जाने के कर्म के कारण कवि राजा के लिए इमका प्रयाग किया है। जामसी ने काव्य परम्परा से अपरिचित शहीपगु का उल्लेख भी किया है। साही के घागणित कांटों से अरे सरीर को रूप के रूप कवि बापों से बिठ गड के निण देता है

मगत गमन जस बेखिष घने तस मड फाटहि बागमह हने ।

जातहु बेधि साहि क राखा गड मा गकर फुलाए पक्षा ।

(१०५ ४२)

यहां मडक का प्रयोग भी नहीं है। कवि ने उस जीव मगर का भी एक चित्र दिया है। समुद्र में पद्यावती के बिसय हो जाने के पश्चात् कवि निरवस समुद्र को अवर कहता है जो जीव को जाने के बाह बिनारे घाकर निम्नित पेट खाता है

नीस रहा घब डीलि होइ पेटि पवारण मेसि ।

को उजियार कर जग सांवा चड उधेसि ।

(४६० ८-९)

शेरु जीवन ने मुहीत उपमाओं का प्रयोग भी जामसी की नहीं मिलता है। अपने घोसी रस्मी मेंड भाइ में मुनछ जाने घादि क बड़े व्याकक विम्ब दिये हैं जो सर्वथा नहीं है। घयु बरसाने हुए नेचों के लिए उसने घोसी का विम्ब दिया है जो वस्तु को हत्य बना देता है। उसने रहुँ की घरी का विम्ब भी दिया है। छाण-क्षण पानी उधेसने के व्यापार के कारण उसे अश्र के साम्य के लिए किया है और क्षणिकता के कारण उसे जीवन के छाह्य के लिए प्रयुक्त किया गया है

मुहम्मद जीवम जस भरन रहुँ घरी की रीति ।

घरी जो घाई सो भरी डरी जलम गा बीति ।

(४२ ८९)

बिरहूनी रानी के लिए कवि ने भाइ में मुनछे जाने का रूप दिया है उसकी बिरहू व्याप में तन्त्र प्रवस्था इसमें अनुभूतिगम्य बन गई है। कवि ने मेंड का रूपक भी दिया है। उसकी पानी को रोक्ने की शक्ति के आधार पर इसका निर्माण हुआ है

बितरर हिडुगु कर घास्थानु, सतह तुचक हठि कीनु भवानु ।

घावा समुद रहे नहि बांध, में होइ मड भाक मिर कांधा ।

(१०१, ४१)

जीवन उसकी घनेक विम्ब भी कवि ने प्रयुक्त किए हैं उसने पिट्टी के बर्तन, टठियाँ, दूधरा रहायत मम्बणी घराब बनान की किया भौगीतिक ज्ञान मम्बणी, येना मम्बणी विम्ब दिए हैं जो कि नहीं है। मिट्टी के बर्तनों में कवि ने जीवन की क्षमता व क्षमिता की व्यक्त की है। पगराब में बहू कहता है।

तय बेंबा में यह ससारा बस सब भांजा-कड़े कोहरा ।
 कहुँ मांस पांड भरि धरई कहुँ मांस जो मोबर मरई ।
 (प्रथ ४८)

राजी के लिए कवि ने ठठियार, बाठी रखन बाणी का बिम्ब दिया है जो नवीन है। कवि ने रसायनशास्त्र के बिम्ब भी दिये हैं उसकी समोनी धारि फियाओं को बहु बराबर प्रयुक्त करता है। यह काव्य परम्परा में एक नवीन उपकरण है अंशवति जो रूप उत्त माहा पनुमावति क बोति मत छंहा ।
 मैं बाहूँ प्रति कया समोनी मिडी न जाइ सिखी बस होनी ।
 (२० १२)

-सराब बनाने का बिम्ब भी विरह ब्यथा क लिए दिया गया है
 बिरहूँ बगप कीन्ह तन नाठी हाइ बराइ शीन्ह घस काठी ।
 नीन नीर सो पोती किया तस मब बुधा धरं जनु बिया ।
 (१२४ २-७)

कवि ने बलस्वस के लिए स्याम (सीरिया)—रमा (ड्रुस्तुसुनिया) व अरुस की पहाड़ियों के बिम्ब दिये हैं जो नवीन हैं—

हे कामिनी बिरह सताइ बसी प्रयाग धरइस बिब धाई ।
 (११४ ९)

सेना के प्रयाग का बिम्ब कवि ने अपनी अनुकरण कृति क लिए दिया है जो नवीन है। ब्रुहा पाहुना धारि भी पद्यावतकार ने प्रयुक्त किये हैं जो कवि की बिम्बपत नवीन बस्तु चयन की प्रकृति का स्पष्टीकरण करत हैं।

समष्टि में जायसी में बिम्ब रूप में पर्याप्त नवीन उपकरणों का प्रयोग हुआ है। उसन लोक बीबड़ से संबंधित अनेक बिम्ब दिये हैं जो सभी काव्य परम्परा से अपरिचित होने के कारण नवीन कह जा सकते हैं।

२ प्रयाग की नवीनता

जायसी ने प्राचीन उपकरणों का नवीन प्रयोग भी किया है। अनेक उपमान जो निरन्तर काव्य परम्परा में प्रयुक्त होते रहते हैं उनको भी कवि ने नये संदर्भों में प्रयुक्त किया है और उनसे नवीन भाव-व्यवस्था की है। यह उपमान भी प्रयाग की नवीनता के कारण नवीन उपमान कहे जा सकते हैं।

बासीय उपमानों में कवि ने समुद्र को बहुतायत से प्रयोग किया है। प्राचीन भाषों के धारिस्त इसको नवीन सादृश्यता के लिए भी भाया गया है। उन्नतता और हिलोरो के कारण इस जीवन का उपमान बनाया गया है।

तोर पीवन बस समुद्र हिलोर, देस देस जिउ बूई मोरा ।

(१२९ ९)

बन बल भरे अपूर सब पगन धरति मिलि एक ।

बनि जोबन प्रीयाहू में से ब्रह्म पित्र ऐकि ।

(३६६ ८६)

बिद्यासठा के आचार पर ग्राह की धनुष सेना का उपमान भी समुद्र ही है ।
मरीचर से कवि ने हृषं भाव की व्यंजना कराई है जो नवीन है

बिरह अपस्तो बिपयी भयऊ सरपर हरप सुति सब यमऊ ।

(२४७ ४)

छाड़ गयहु सरबर बंध मोही सरबर सुखि नयऊ बिनु लोही ।

केति जो करत हस उड़ि गयऊ बिनपर भीत सो बंदी भयऊ ।

(१४३ २३)

जायसी ने लरी को भी बचकना और उन्नतता के कारण यौवन का उगमान
बनाया है यह भी सम्भवतः लरी का नवीन प्रयोग है ।

जायसी में मूर्धास्त और मूर्धाशय के बहुत अधिक और भाव अत्यन्त बिम्ब दिए
हैं सम्भवतः प्रयोग की दृष्टि से यह उपमान इस रूप में पहले कभी नहीं आये हैं ।
जायसी के काव्य में मूर्धाशय से लेकर मूर्धाशय भाविक की धनुषुति हुई है और मूर्धाशय से
दुःख निवृत्ति और पीड़ा की । मूर्धास्त के बिम्ब इस प्रकार हैं

राज पाव बर परपहू सब तुमट लीं उजियार ।

बैठ भोय रस जानहु री न बलहु धरियार ।

(१२६ ८-९)

घानु सुर दिन धनुबा घानु रवि सति ब्रह्मि ।

घानु बाबि जिउ बीजिय घानु घानि हम ब्रह्मि ।

(१४९ ८६)

जायसी ने मेघ उगमान को भी नवीन रूप में प्रस्तुत किया है । मेघ की क्षण
क्षणा के आचार पर बहु उमे संसार में क्षणिक धनितर उगने वाला मूठ कहता है ।
मूठ भी मेघ की भाँति धन तर में बिबीन हा जाता है

यहु सत्तार भूठ बिर नाहीं कटत मेघ जिऊ बाहि बिमारी ।

(पद्य २१)

जायसी ने ईश्वर-कर्मों को भी मेघ कहा है जिसकी परछाही पृथ्वी पर पड़ती
है जो यथाथ प्रतीत होती है पर उसको यथायथा मनु के कारण है उसी की शक्ति से
परछाही प्रतिमान होती है । संसार में व्यक्तित्व की परछाया लगी मेघ की परछाही है ।
उसकी शक्ति से संसार अनिष्टक होगा है

के सब निपु बगता निपु मानी जगे जगते मेघ परछाही ।

(पद्य १)

जायसी ने बच के आचार पर उगमान को बाला यादग बना है । जायसी
बिम्बों के यह नवीन प्रयोग है ।

जनस्वस्वीय बिम्बों में कवि ने फूल और कांटे के उपमान से नवीन भाव-व्यवस्था की है। कांटा वहाँ कविता की फूल के साथ सजा रहने वाली दखिला का प्रतीक बन गया है

बहू लखिठ बाजर मति मंघी काँडई कुटिल पुहुप के सघी ।

(४४१ ७)

पशु पक्षियों में कवि ने प्रधानतः बड़े उपमानों को ही प्रयुक्त किया है। परन्तु कहीं-कहीं उसमें नवीन धर्म स्पष्टता भी पाई है। बिस्वी पद्यावत में मृत्यु का प्रतीक बन गई है सर्वप्रथम सुग्गे के संवर्ष से मृत्यु को बिस्वी कहा गया है पर कालान्तर में यह प्रतीक बन गई है यह प्रयोग नवीन है। रासस के लक्ष्मण के व्यवहार को बुरा बनाने के लिए ब्रह्मण का बिम्ब दिया है जो नवीन प्रयोग है। जायसी ने पतिगा उपमान को भी नवीन धर्मों में प्रस्तुत किया है। मूठ की धम्मि में साहस पूर्वक जल जाने वाले हिन्दू संनिकों के लिए यह पतिगा उपमान को लाया है

रतनसेन है जीहर साजा हिनुद माह घई बड़ राजा ।

हिनुगुह केर पनिप कर मेघा, बीरे परहि घास बहू बेका ।

(५२ ४५)

जायसी ने रानी नागमती के लिए सर्व उपमान का प्रयोग किया है जो एक नवीनता है यद्यपि उसका आधार उसका प्रतीकात्मक रूप और कुछ घंशों में नागमती नाम में 'नाग' शब्द का घाता है परन्तु फिर भी प्रयोग की दृष्टि से यह एक नवीनता ही कही जायगी। नाम के बड़े समग्र बिम्ब नागमती के लिये प्रयुक्त हुए हैं—

नागमती कहुँ प्रथम जनाबा गे सो तपनि बरका रितु घाबा ।

घड़ी जो मुई नाबनि बसि तथा बिम्ब पाई तन महू मी सबा ।

सब बुल जतु कौनुमो गा पूतो बनि गितारी बौऊ बीर महुदी ।

(४२१ ११)

जायसी ने जीवन के प्रत्येक उपकरणों को भी नवीन सदृशों में प्रयुक्त किया है। दीपक काव्य में एक बड़ा प्रयुक्त उपमान है जायसी ने उसे बड़े धर्मों में प्रयोग करने के साथ-साथ नवीन रूपों में प्रयोग किया है। यह दीपक को बात के लिए लाए है। जो संघार के संघकार को बुरा कर प्रकाश फैलाता है। बिम्बमूर्ति कागज की पुतली स्वर्ण बिम्ब कपूर आदि जीवन संबंधी वस्तुएँ भी नवीन धर्मों में की हैं। कागज की पुतली का प्रयोग कबीर और 'उसमान' न भी किया है पर वहाँ उससे जीवन की घसाराटा व्यक्त की गई है। जायसी ने भूछिता रामी के सोठे शीश्वर्य को व्यक्त करने के लिए कागज की पुतली का प्रयोग किया है

कागर पुतरी बंस तरीरा पवन उड़इ बरा मंस भीरा ।

उड़हि शाकीरि सहरि जलमीजी तबहू रूप रंग नाहीं जौसी ।

(११८, २१)

कवि ने रानी के लिए बिम्ब-मूर्ति का उपमान भी दिया है। बिम्ब का उपमान प्राई बाठारकार ने बिम्बकारों के लिए दिया है^१ पर त्रायमी ने इसे मूर्च्छित रानी लिए दिया है

सुसिद्ध परी पशुयावति रानी कहं बिउ कहं पिउ घरी न जानी ।
बाहु बिउ मुरति गहि लाई पाठा परी बही तस जाई ।
(३६७ १०)

स्वर्भ—बिम्ब उपमान का प्रयोग जन में तैरन स्वर्भर्षी पत्रियों के लिए हुआ । जो नवीन प्रयोग हैं ।

घरन घरन में मुष्पत नर प्रयोग ही है परन्तु एक स्थान पर कवि ने बापी के पर नद उपमान का नवीन प्रयोग किया है

कवि क नाम लख्य हिरबानी एक दिशि भाग खोतर दिशि पानी ।
(८०४ २)

छाबार म छाति घोर युद्ध दोनों की मन्थि होनी है कवि की कविता में भी छद घोर छाति दोनों का निवास है इसी छाबार पर त्रायमी ने इसे प्रयोग किया है ।

बाद्यर्षी में कवि ने माग्मी उपमान का नवीन प्रयोग किया है। बिम्ब केदरवा रानी के लिए बह मारपी को माया है त्रिमन मईब प्रिय नाम की चुन उठनी है

हाइ भए मब कीमरी नल बई मब ताति ।
रोब रोब तन पुनि उठे कही बहुमु बिपा केहि भाति ।
(३६१ ८-९)

बलदूरी में कवि ने छातरज घोर बीमान को बहूपायत से लिया है। कृष्ण धर्मों के प्रतिरिक्त उनसे नवीन घब स्पन्दना भी हुई है। छातरज के वैरन (मोहरा) को बह प्रेम सोमी गाइ घलाउहीन के लिए प्रयोग करना है

वेम क लुबुब पयाई पाऊ खरी लोह ताके कोनहाऊ ।
(३६७ ३)

उमर सामने छातरज घबल घोर दावब मे प्रतिबिम्ब देखने के लिए दर्शन को भावन के व्यापार वैरन मोहरे की उपमा म दम्ब हो गय है। बायसी न बीमान को भी प्रेम मीम्प्य के संदर्भ में म रसा है जो नवीन है। इसके प्रतिरिक्त कवि ने बिम्बनी बाष्म कपूर बैल घारि को भी कम्पात भाव घदन जान घोर टनी के नवीन संदर्भों में प्रयोग किया है। प्राचीन उपमानों के पर मधी नवीन प्रयोग कवि की कविता को उन्मृष्टता घोर मुष्मता का परिचय देने हैं ।

कवि द्वारा मादस्य के लिए प्रयुक्त नवीन उपकरण घोर कृष्ण उपकरणों के नवीन प्रयोग कवि की कविता दृष्टि की उम्पनता के परिचायक हैं ।

१. दिवर्ष बापी : लल्लुबायन सं मन्थन्यन पुण १ १४

समष्टि में कवि की बिम्ब योजना का परीक्षण अनेक दृष्टियों से करने के उपरान्त कवि की मूर्ति-विभावनी कल्पना की उत्कृष्टता को स्वीकार किया जा सकता है। उसकी उपमान योजना की सफलता बिम्बगत अनेक मुक्तियों के धाम्धार पर की जा सकती है। उसको उत्तेजकता तीव्रता नवीनता अनौचित्य कथा में योजमान धारि अनेक मुक्तियों के कारण सफल कहा जा सकता है। परन्तु अनेक कारणों से उनकी उपमान योजना कहीं कहीं असफल भी हो गई है। इसमें भावानुपकारकता अनौचित्य धारि अशुभ धा गये हैं। जायसी सूफी कवि था। साहित्यिक परम्पराओं से भी उसका अज्ञान परिचय था। इस कारण उसमें अनेक परम्परागत उपमान धा गये हैं। उसमें फारसी मसनवियों भारतीय प्रेमाख्यातकों साहित्यिक व सिद्ध नाचों की परम्परा से वृहीत उपमान सहज ही खोजे जा सकते हैं। परन्तु प्राचीन और परम्परागत उपमानों का सम्यक् प्रयोग करने के साथ-साथ उसने नवीन उपमानों का बहुतायत से प्रयोग किया है। यह नवीनता सादृश्य के लिए नवीन उपकरणों का चयन और वृद्ध उपमानों के नवीन प्रयोग दोनों रूपों में देखी जा सकती है। समष्टि में जायसी की समस्त बिम्ब योजना उसकी कल्पना दृष्टि की परिचायक है।

अध्याय ७

विन्ध्य एव भावों के सम्बन्ध का विचार

प्रस्तुत अध्याय में जायसी के विन्धों के स्रजन से उनके विचारों एवं भावों का अध्ययन किया जायगा। यहाँ विन्ध्य में भाव की वास्तुतियों उनके कारण विन्धों द्वारा मान्यताओं का प्रकाशन और पद्मावत की रूपक योजना पर विचार प्रस्तुत किए जायेंगे।

१ विविध स्थलों पर विन्ध्य का प्रयोग और उसका कारण

प्रत्येक कवि नाटककार या महाकाव्यकार अपने कृतिरत्न में विन्धों का प्रयोग करता है और बहुतायत से करता है परन्तु यह धारण्यक नहीं कि प्रत्येक कवि उन्हीं निश्चित चरित्रों स्थलों और निश्चित भावों में विन्धों का स्रजन करे वरन् विन्धों के स्वरूप और उसके प्रयोग के स्वतन्त्र का चयन उसको अपनी रचि के आधार पर होता है। वह मामदण्ड प्रत्येक कवि में भिन्न भिन्न होता है। कोई कवि उदय होते वा घटते होते सूर्य को देखकर घनेक रूपों की कल्पना करता है और अपने काव्य में विन्धों में उसकी प्रतिबिम्बित करता है पर कोई कवि साधारण स्थलों में घस कह मर जाता है। ऐतिहासिक कवि ज्ञाना संध्या प्राणि भावि का कोई चित्र नहीं देते वे पर छाया वाली कवि उसको मानवीकरण रूप में प्रस्तुत करना धारण्यक सा समझते हैं। मध्य कालीन कवि समाज के मध्यम या निम्न वर्ग की ओर दृष्टिपाठ भी नहीं करते वे पर निरासा निष्कामी मजदूरिनी भावि तक का विन्ध्य देना चाहते हैं। जायसी पद्मावती के विन्धों में धार्मिकता का अनुपम आभास देते हैं पर उसी प्रेमाख्यामक परस्पर के मकर मधुमासली का एक भी एसा चित्र नहीं देते जहाँ मोरोतरता को घमण्ड छाया भी पड़ती हो। वह भिन्नता प्रत्येक युग और प्रत्येक कवि में देखी जा सकती है। उसका प्रमुख कारण है, वैयक्तिक भिन्नता जो उनके संस्कार, रचि वैविध्य विचार, माननात्मक प्रकाश, जीवन के साव साधारण्य करने की क्षमता प्राणि घनेक कारणों से उत्पन्न होती है।

प्रत्येक कवि के लिए यह धारण्यक नहीं कि वह एक निश्चित भाव में निश्चित सीमा तक या निश्चित आकारण में निश्चित स्थिति तक भाव विधोर हो मर वरन् प्रत्येक कवि के भाव और सीमाएँ भिन्न होती हैं। भूषण मिठे और रम में ही विन्ध्य के स्रक और मधिराम विहारी प्राणि कैवल्य गुमार में इसका कारण उनके हृदयगत, प्रधान भाव की भिन्नता है। वस्तुतः कवि का 'प्रकृतित्व भाव' विन्ध्य से उसे जीवन् में

सबसे अधिक प्रभावित किया है या सबसे अधिक अनुभव उसने किया है उसको काव्य में भी भाव बिभोर कर सकता है और प्रतायास ही उसके सुन्दर बिम्बों की सर्जना करवा सकता है। इसी प्रकार बहूँ घटनाएँ परिस्थितियाँ और बातावरण उसके काव्य में भी बिम्ब प्रस्तुत करवात हैं। जिससे जीवन में भी कवि ने रागात्मक सम्बन्ध स्थापित किया है जिसका समान तीव्रता से अनुभव किया हो प्रकटा जिसने उसके सामने पटक पर एक घमिष्ट बिम्ब बनाया हो। इस तरह उसकी कथा में बिम्बों का प्रयोग उसके प्रकृतितन्त्र भाव और रागात्मक सम्बन्ध के आधार पर हम कविके व्यक्तित्व की कल्पना सहज ही कर सकते हैं। उसके बिम्बों के प्रयोग स्पष्ट करते हैं कि वह निराशावादी है या आशावादी है मुक्तजोशी है या प्रेम पीरसे पीड़ित है नीतिकतावादी है या रहस्यवादी भक्त है प्रकटा साधक आदि। प्रस्तुत अध्ययन में हम आमसी में बिम्बों के प्रयोग के आधार पर उसकी रागात्मकता एवं उसके व्यक्तित्व के स्वरूप का अध्ययन करेंगे।

आमसी ने उन्हीं स्थलों पर एवं जन्ही भावों क सर्जना में श्रेष्ठ और अधिक बिम्ब बिब हैं जिससे उसके जीवन की कुछ बिषय निकटता थी। बिम्बों के उत्कृष्ट प्रयोग द्वारा उसने किन्हीं बिषयों घटनाओं को इसीलिए प्रकटाती थी कि उनका उसने जीवन में तीव्रता से अनुभव किया था और उन घटनाओं में उसके जीवन की एक घमिष्ट स्मृति तीव्रतम अनुभूति दी थी। पद्मावती की कथा में बिभ्रिष्ट स्थलों पर प्रयुक्त बिब इसको स्पष्ट करते हैं। पद्मावती की कथा के अनुसार निर्माकित स्थलों पर आमसी ने सफल और उत्कृष्ट बिम्बों का प्रयोग किया है।

(१) द्वीप बर्जन में और बहूँ के लाल लालाबो बहूँ मानसरोवर वादि के बर्जन में।

(२) पद्मावती के जन्म के समय।

(३) पद्मावती का सनियों के साथ मानसरोवरक गमन और स्नान पर।

(४) आमसी द्वारा अपने सौन्दर्य के बिषय में पूछे गये प्रश्न के उत्तर स्वरूप सुगो के उत्तर के समय।

(५) सुगो द्वारा राजा क समक्ष पद्मावती की बर्णा करत समय और मख दिला का बर्जन करने में।

(६) प्रेम पूरित बिच्छी राजा की प्रकटा के बर्जन में।

(७) राजा के बेष में प्रकटा करत समय।

(८) समुद्र बर्जन में।

(९) राजा के सिद्धलद्वीप प्रागमन पर द्वीप का स्वरूप बर्णित करने में।

(१०) राजा के बर्जन के उपरान्त पद्मावती का प्रेम उत्पन्न होत पर बिब किन्हीं राजा के बर्जन में।

(११) राजा का सौन्दर्य देख कर सुगो के प्रागमन पर राजा की प्रकटा के बर्जन में।

(१२) वसन्त बचन में ।

(१३) महादेव द्वारा गङ्ग के वर्णन में ।

(१४) रत्नसम और पद्मावती के विवाह के वर्णन में ।

(१५) संयोग के समय पट शूलु वर्णन में ।

(१६) नागमती के विरह-वर्णन में ।

(१७) पत्नी द्वारा राजा को सन्देश देते समय नागमती व समस्त वेष की

निराशा व दुःख के वर्णन में ।

(१८) समुद्र यात्रा में राजस के ध्यायन पर ।

(१९) नाब डूब जाने पर पाटे व सहारे सागर में बहती रानी के वर्णन और

उसके विरह का बणन करने में ।

(२०) रत्नसम के पिताई ध्यायन पर नागमती की प्रसन्नता और सपत्नी

के प्रति द्वेष का वर्णन करने में ।

(२१) राघव बेतन द्वारा प्रथम दर्शन पर रूप वर्णन और असाठहीन के

समय पद्मावती का रूप वर्णन करने के समय ।

(२२) बावसाह की बर्बाद और राजा के युद्ध के समय ।

(२३) बावसाह की गङ्ग दिखाने के समय ।

(२४) इस मित्रता पर गौरा बाबल के क्रोध और विषघाता के वर्णन में ।

(२५) राजा और बावसाह के छठरज खेसने और पद्मावती के भरोख से

झांझने व बावसाह की प्रवस्था के वर्णन करने में ।

(२६) रत्नसम के बचन पर नागमती और पद्मावती के विरह वर्णन में ।

(२७) पद्मावती का गौरा बाबल की दुःख प्रकट करना व गौरा बाबल का

धावसासन देना ।

(२८) गौरा बाबल के युद्ध के समय ।

(२९) रत्नसम के ध्यायन पर पद्मावती के पुन मिलन के समय ।

(३०) राजा की मृत्यु और दोनों रानियों के बिलाप और दुःख बणन

करने में ।

इन बिम्बों के प्रयोग के स्वार्थ को देखने से स्पष्ट होता है कि जायसी ने मुख्यतः इति सौन्दर्य विरह प्रेम और करुणा एव शान्ति व म्पना पर घण्टी बिम्ब योजना की है । इनमें विरह बचन में सबसे अधिक और उत्कृष्ट बिम्ब है । भावों के साधारण पर बिम्बों के अध्ययन में भी हममें देना था कि जायसी ने विरह और संयोग शृंगार में सबसे अधिक बिम्ब लिपे व यहाँ भी बपावस्तु में भी बहु शृंगार—सवाग और विषय के स्वभा पर ही उत्कृष्ट बिम्ब याचना कर्ता प्रतीत होता है बन्धु-प्रेम या शृंगार जायसी का प्रकृतिय भाव है जायसी का हृदय उमरम मरम अविच्छिन्न रमता है और वही जायसी के मरम निकट भी है । विरह और प्रेम व स्वप्नों पर हुई

पहिरें ससि नसतन्हु के मारा बरती सरय मयऊ उबियारा ।

(४५१ १)

धीर

का बरती घामरन जर हारा ससि पहिर नसतन्हु के मारा ।

धीर बाब धौ बम्बल बोला हीर हार नप साप घमोला ।

(२११ १२)

नसतन्हु के प्रतिरिक्त बाब को छपि मंडल की पूठभूमि में भी बिबिठ किया गया है। मिलनोपरान्त रामी के पास बिजासा बहा घमस्त रनिबास इस प्रकार बैठा है जैसे घमि मंडल छपि को बेरे हुए हो

सब रनिबास बंड बहु पांछा ससि मंडल जनु बठ प्रकासा ।

इस पूठभूमि के प्रतिरिक्त भी बायसी ने कम्बल बाब के रूप में पद्मावती का उल्लेख किया है। वहाँ कहीं उसे लोकोत्तर सौम्यमें कहीं निष्कलकटा कहीं प्रहल घस्त मसिगता का रूप दिया है। सर्वप्रथम मान शरीरक बांड में पद्मावती का बन्ध रूप धारा है

सरबर तीर पडुमिनि घाई जौपा छोर केस मोकराई ।

ससि मुक खन मसैमिरि रागी नगन्हु छापि लीन्हु सरबानी ।

घोनए मेघ परी जय छाहा ससि के सरन लीन्हु जनु रग्या ।

छपि भी बिन्हि भानु के बसा ले निंसि नसत बाब परपसा ।

भूल बकोर बिंसि तहू सांवा, मेघ घटा मंहु बंद बिजाबा ।

सरबर रूप बिमोहा क्षिपा हिलोर करैई ।

पांघ शुर्ब मकु पावे पडु मिसु लहरै लेई ।

(११ १-७)

यहाँ कवि की दृष्टि पद्मावती के बन्ध रूप के साथ उसके प्रभाव पर भी गई है। वहाँ पद्मावती के रूप को लोकोत्तरता का प्रतिपादन है। सम्भवतः यहाँ कवि के मन में बन्ध के प्रकाश से पूजिमा के दिन प्यार धा जाने की सम्झना रही है। यही पूरा बिबि कवि यहाँ प्रस्तुत करना चाहता है जिसे हम रूप की लोकोत्तरता के अन्तर्गत रखते हैं। पूजिमा के बन्ध के रूप में पद्मावती की सम्झना कई स्थलों पर हुई है

तेहि मंडल मुरत में बैसी बिनु तन बिनु बिय बाल बितेसी ।

बाब लंपुरन जनु होइ लपी बारस रूप बरत ई छपि ।

(२७१ २१)

धीर

पद्मावती में पूजिब कला बाबहु बाब उर्ये सिंहसा ।

(११८ २)

पद्मावती की संवरे लोहरी पुनिब रात ईप अस बीहरी ।
(२६७ १)

राजा की मृत्यु के उपरान्त वही पुनिमा के बाद सदस्य रानी प्रमावत्या के कारण मलिन हो जाती है

सुरज क्या रनि होइ यह पुनिब लति सो प्रमावत भई ।
(२६८ २)

पद्मावती के कसक रहित सौन्दर्य को भी निष्कर्षक अन्त के सदस्य बताया गया है । संयोग के उपरान्त मलिन हुई रानी के लिए प्रायसी ने अन्त का रूपक दिया है

बाब बंस पनि बैठ तरासी सहत करा होइ सुरज गरासी ।
सेहि की झार महन अस गही भ निरंग मुख जोति न रही ।
(३२८ ४५)

सौन्दर्य की कति प्रकटा प्रकाश के लिये भी बाब उपमान माया गया है । प्रायसी की कल्पना है कि पद्मावती प्रकाशमान अन्त है जिसके आलोचन प्रकटा सदस्य होने से अन्त में प्रकटा छा जाता है । समुद्र में पद्मावती के डूब जाने पर राजा क्लेश है

सीत रहा धर डील होइ देति पवारण मैलि ।
की अजियार करे जग सांपा बाब जयैलि ।
(४०६ ८-९)

दूरी कुमुदनी भी रानी से कहती है
कुमुदनी कंठ लामी मुठि रोई पुनि भी रोग बारि मुख जोई ।
तु सति रूप जगन अजियारी मुख न सांपु निशि होइ अजियारी ।
(४०८ ८९)

यहां एक और रानी के अपूर्व सौन्दर्य की प्रकटा होती है दूरी की ओर उसकी लोकोत्तरता प्रकटा के प्रमाव में अन्त के अज्ञान प्रकटा प्रकटा की अविभक्तता भी होती है । इसी कारण यह रूपक विधेय सफल है ।

स्पष्ट है कि प्रायसी ने अन्त का रूपक पद्मावती के लिए अनेक स्थलों और अनेक रूपों में दिया है । यहां ध्यान देने की बात है कि अन्त का यह रूपक कवि की अपनी कल्पना को ही अधिक प्रस्तुत करता है किसी विशेष परम्परा को नहीं । इसके निर्माण में कवि के अनेक संस्कारों अनेक प्रभावों एवं अनेक विचारों का योगदान है । हमारे साहित्य में अन्त उपमान एक बहु प्रयुक्त रूप उपमान है परन्तु प्रायसी में उसका प्रयोग कम है । हमारे साहित्य में यह नहीं है परन्तु प्रायसी ने पद्मावती के रूप के लिए ही उपमान रत्ना समय मायिका का नहीं । परन्तु प्रायसी ने पद्मावती के रूप के लिए ही रूप नहीं कहा है परन्तु उसकी कल्पना में पद्मावती स्वयं अन्त का रूप है । यह कवि

पहिरे ससि नक्षत्रम् के मारा भरती सरग मयक उधिपारा ।

(४५१ १)

धीर

का भरती आभरन घर हारा ससि पहिरे नक्षत्रम् के मारा ।

धीर बाब मी बन्धन बोला हीर हार नय भाग प्रमोला ।

(२६६ १२)

नशाबों के प्रतिरिक्त बाब को ससि मंडल की पुंठभूमि में भी बिहित किया गया है । मिलनोपरान्त रामी ने पास बिजासा बच समस्त रनिबास इस प्रकार बैठा है जैसे ससि मंडल ससि को घेरे हुए हो

सब रनिबास बठ बहुतोता ससि मंडल अनु बंड धकाता ।

इस पुंठभूमि के प्रतिरिक्त भी आपसी ने केवल पाँच के रूप में पद्मावती का उल्लेख किया है । वहाँ कही उधे लोकोत्तर सौम्य कही निष्कसंका कही बहुम प्रस्त मतिनता का रूप दिया है । सर्वप्रथम मान सरोवर बाँध म पद्मावती का चन्द्र रूप प्राया है

सरवर तीर पदुमिनि घाई जोंवा छोर कैस मौकराई ।

ससि मुस्र ग्रंम मसैपिरि रामी भागम् छापि लीगु घरघाली ।

घोनए मैय परी जग छाहा ससि कै सरन लीगु अनु राही ।

छपि घे बिनहि भागु के बला से निसि नक्षत्र बाँध परपता ।

भूम बकोर बिस्ति तह लीजा, मैय घटा मंह बंध बिजावा ।

सरवर रूप बिमोहा हिया क्षिलोर करेई ।

पाँच शुर्ष महु पावे महु मिनु लहरै लैई ।

(५१ १-७)

यहाँ कवि की दृष्टि पद्मावती के चन्द्र रूप के साथ उसके प्रभाव पर भी गई है । यहाँ पद्मावती के रूप की लोकोत्तरता का प्रतिपादन है । सम्भवतः यहाँ कवि के मन में चन्द्र के प्रकाश से पूरिमा के दिन बहार आ जाने की कल्पना रही है । यही पुन बिच कवि यहाँ प्रस्तुत करना चाहता है जिसे हम रूप की लोकोत्तरता के धारणा रखते हैं । पूरिमा के चन्द्र के रूप में पद्मावती की कल्पना कई स्थानों पर हुई है

तेहि नंदल मुरत में देखो बिनु तन बिनु त्रिव जान बिसेबी ।

बाँध संपुरन अनु हीइ लपी पारस रूप बरत ई छपि ।

(३७१ २६)

धीर

पद्मावती के पू निब कला बीरह बाँध उई सिंहला ।

(३३८ २)

ब

पद्मावती भी संवर लीगहीं, पुनिब रात ईय घस लीगहीं ।
(२१७ १)

राजा की मृत्यु के उपरान्त वही पुनिमा के बाद सदस्य रानी अमावत्या के कारण मलिन हो जाती है
सुरज छपा रनि होइ गई पुनिब सति सो अमावस भई ।

पद्मावती के कसक रहित सौन्दर्य को भी निष्कर्षक चन्द्र के सदस्य बताया गया है । संयोग के उपरान्त मलिन हुई रानी क लिए जायसी ने चन्द्र का रूपक रिया है
(१४८ २)

बाद बंस बनि बँठ तरासी सहस करा होइ सुरज परासी ।
तेहि की शार गहन घस गही भ निरंग मुल बोनि न रही ।

सौन्दर्य की कांति अथवा प्रकाश के लिये भी बाद उपमान साया गया है । जायसी की कल्पना है कि पद्मावती प्रकाशमान चन्द्र है जिसके आलोक अथवा सदस्य होने से ससार में अंधकार छा जाता है । समुद्र में पद्मावती के डूब जाने पर राजा बहवा है
(३२८ ४५)

लील रहा घब डील होइ देटि बरारय मैलि ।
की जजियार कर बग साया बाद जपेलि ।

डूटी डुमुदनी भी रानी से कहती है
डुमुदनी कंठ लागी मुठि रोई पुनि ली रोय बारि मुल घोई ।
(४१८ ८६)

तु सति रूप बगन जजियारी मुल न सायु भित्ति होइ अजियारी ।
(४०८ ८६)

यहाँ एक घोर रानी के अपूर्व सौन्दर्य की व्यक्तता होती है डूमरी घोर उसकी ज्योत्स्ना आत्मप्रकाश के अभाव में ससार के अज्ञान अथवा अन्धकार की परिधमना भी होती है । इसी कारण यह रूपक बिधेय सफल है ।

रूपक है कि जायसी ने चन्द्र का रूपक पद्मावती के लिए अनेक स्थलों पर अनेक रूपों में दिया है । यहाँ ध्यान देने की बात है कि चन्द्र का यह रूपक कवि की अपनी बस्यता को ही अधिक प्रस्तुत करता है किसी बिधेय परम्परा को नहीं । इसके निर्माण में कवि के अनेक संस्कारों अनेक प्रभावों एवं अनेक विचारों का योगदान है । हमारे साहित्य में चन्द्र उपमान एक बहु प्रयुक्त रूप उपमान है परन्तु जायसी में उसका प्रयोग नई है । हमारे साहित्य में वह मदीव में आदिका के केवल मुल का उपमान रहा अथवा आदिका का नहीं । परन्तु जायसी ने पद्मावती के मुल के लिए ही चन्द्र नहीं कहा है बरन् उसकी बस्यता में पद्मावती स्वयं चन्द्र का रूप है । यह कवि

की मौमिकता है। वैसे पहले कहा जा चुका है कवि की इस मौमिकता इस नवीन उद्भावनाओं का कारण उसके कई गुम्फार विचार और भाव है यह उन सबका एक मिश्रित निर्माण है।

मूमत यह भी चन्द्र सूर्य के बिराट रूप का एक घस है। योगिया और सिद्धों की परम्परा में ही सूर्य चन्द्र पुरुष और स्त्री के उपमाएँ बने हैं अगमना ऐसा कही नहीं हुआ है। जायसी ने उसके प्रतीकों की इस परम्परा से प्रभावित होकर अपने काव्य में इसका स्त्री पुरुष के रूप में (पद्मावती व रत्नसेन) प्रयोग कर दिया है। परन्तु उसका व्यक्तित्व मिश्र और मागिमो की भाँति व्यथा की भाँति उन्मुख न होकर सरसता का प्रतिपादन का बहु सम्भव घसों में कलाकार कवि का इसी कारण उसने अपनी उत्कृष्ट कल्पना के द्वारा इस बेबल योगिया और सिद्धों की कई परम्परा के रूप में प्रयोग न करके उसमें समग्रता लोकोत्तरता और सौन्दर्य का समावेश किया। उसकी मशरफ और चन्द्र की कल्पना का पद्मावती और उसकी सजियों के लिए काव्य में बार-बार धाई है उनका कलाकार रूप को प्रकट करती है जिसमें पृष्ठभूमि के प्रति जनता मोह उसकी नायिका के रूप सौन्दर्य मावध्य को पृष्ठभूमि के बिना (कन्स्ट्रास्ट) या उसके संवर्धन में रखकर कई गुना बढ़ा मठा है। चन्द्र और तारावर्षा के मधी में स्नान करने का दृश्य स्वागिक सजता है। सारा धारावा ही पृष्ठी पर उतर धामा है। इस पृष्ठभूमि के कारण पद्मावती के सौन्दर्य में अपूर्व वृद्धि हुई है। रत्नसेन के रूप में गुण को मान के अन्तर्गत भी कवि की कलाकार कृति का परिचय मिलता है। उसका मूल यद्यपि चन्द्र मूम के बिनाट रूप में ही है परन्तु उसने प्रबोध में उसे नवीन बना दिया है। राजा की महला उसके प्रेम का प्रकाश धारि उसका च्चलित हुए हैं।

पद्मावती की चन्द्र के रूप में कल्पना एक और कवि की मौमिकता को प्रकट करती है दूसरी ओर उसके विचारों का भी सम्पूर्ण विश्लेषण स्पष्ट करती है। इसका मूल भी सिद्ध शोधियों के प्रभाव से सुहीत उस रूप में है पर जायसी ने उसका वैसे प्रयोग कम किया है। इस बिम्ब को जायसी ने अपना मलकाहा मौसिक रूप दिया है। च- सबै से ही प्रेम का प्रतीक रहा है। पावसात्य और प्राच्य दोनों ही साहित्यों में अपनी स्तिगता और सीतल मीन्दय के कारण वह जीवन की मनोरम कृतियों का प्रतीक है। वह रूप सौन्दर्य और प्रेम का एक भावर्ग रहा है। जायसी के प्रेम का धारण भी चन्द्र है

रहे जो विपु के घासुर्य धी बरतें होइ मीन।

सोइ चाह घस निरमर करम न होइ मनीन।

(६० c-२)

अन्तर्गत रूप सौन्दर्य और प्रेम का धारण बिगाने के लिए ही जायसी ने पद्मावती के लिए यह रूप दिया है। जायसी के लिए हुए रूप के अनुहार भी

पद्मावती की जीवन की उन्मत्तगामी मयलकायी ब्रूति कहा जा सकता है जो स्वयं ब्रह्म स्वरूप है। ब्रह्म के रूप में कवि की पद्मावती विषयव सौकरान भावना का भी मूर्तर प्रकाशन हुआ है। अष्ट रूपों वाली का सरोवर पर धामा और सरोवर का उद्देशन माना वह उसका पाँच का स्पर्श करता बाहता है मत्र कवि की लोकोत्तर भावना का परिचय देते हैं जो रूपक प्रथमा हिन्दू द्वारा ही प्रकट हुई है। समष्टि में ब्रह्म मूल का रूपक कला म सुमठित और विचारों की परम्परा से पुष्ट है। यह कवि के हीन्दुत्व सञ्जन और सिद्धांता की शक्ति दोनों का ही प्रकट करता है। रूपक ध्वन समग्र स्वरूप में बड़ा बिराट है और धारा रूप में धनक लक्ष्यों का प्रकाशन करने हुए भी एक ही मूल उद्देशन से निम्न है। बन्धुन यह जायसी क विचारों और धर्मिष्ठति दोनों ही दृष्टियों से एक बड़ा (कल्पेकम इमेज) मिश्रित रूपक है।

(२) ज्योति क बिंब

जायसी ने पद्मावती के लिए ज्योति के बिंबों को घनेक रम्यों पर प्रयुक्त किया है। पद्मावती के लिए दीपक मूर्ध-किरण अष्ट मूर्ध बिंबनी धारि उपमान बराबर ही प्रयुक्त हुए हैं। महा ध्यान देन योग्य बात यह है कि जायसी ने मायमती के प्रति हार्दिक सहानुभूति रखते हुए भी एक ही स्थल पर उसके लिए ज्योति या प्रकाश का कोई रूपक नहीं लिखा है। इससे प्रकट होता है कि जायसी ने पद्मावती के ये प्रकाश के बिम्ब सप्रयोजन रखे हैं चाहे यह प्रयोजन कवि क सम्मुख बैसा स्पष्ट न रहा हो जैसे उसके सिद्धांता रूपानक धारि परम्प्रा उनके मानन में इनका रूप धारण ही बड़ा स्पष्ट रहा होगा। जायसी ने पद्मावती का बुद्धि का प्रतीक प्रथमा धामा या ब्रह्म का रूप माना है। उसके प्रकाश के बिंब उसके इस स्वरूप का धामान देन है बिंब क सभी साहित्यों और सभी रूपों में ब्रह्म प्रथमा धामान शक्ति के स्वरूप क सिद्ध वेकम एक ही रूप एक ही बिंब धामाने धामा है और वह है—धनस्त प्रकाश का। संभवतः सभी दासतियों प्रथमा धामिनी बिंबोंने इस धनस्त तत्त्व को देखने की जायना की उसे बरस धनस्त ज्योति क रूप में देख पाए। वैदिक काल : प्रायः तब क सभी मानव उस धनस्त तत्त्व को ज्योति रूप ही मानते आए हैं। भारतीय धर्मों धामि में भी यही मान्यता है। हमारा मा ज्योतिगमय' हमारा वेदवाचक है। उदितवर वेदान्त धारि में भी यही कहा गया है। हमारे प्रायः देवता प्रथमा महान पुराण के निर के चारों ओर बना नेत्रोपय बन भी इसी कारण है सम्भवतः वह उनके धनस्त ज्योति के पाँच का प्रतीक है। इस्लाम मन के धनुषावी मूना को तूर पर धनस्त प्रकाश के हो धारि हुए व।

धातुनिध धंध जी कवि बर सबक भी धनस्तता के लिए उन ज्योति की बन्धना करता है जो न कृष्णो वर है न मयुड में।^१ धनस्तता की धनुषुति करने वाला कवि

^१ The light that never was on sea or land—quoted by C M Bowra
—Inspiration and poetry p 12

की मौलिकता है। जैसा पहले कहा जा चुका है कवि की इस मौलिकता इन नवीन उद्भावनाओं का कारण उसने कई संस्कार विचार और प्रभाव हैं यह उन सबका एक मिश्रित निर्माण है।

मूलतः यह भी चन्द्र सूर्य के विराट रूपका का एक घट है। योषियों और सिद्धों की परम्परा में ही सूर्य चन्द्र पुरुष और स्त्री के उपमागत बने हैं अन्यथा ऐसा कहीं नहीं हुआ है। जायसी ने उसने प्रतीकों की इन परम्परा में प्रभावित होकर अपने काव्य में इनका स्त्री पुरुष के रूप में (पद्मावती व रत्नसुत) प्रयोग कर दिया है। परन्तु उसका व्यक्तित्व मिश्र और यागिकों की भाँति रदता की धार उन्मुक्त हो होकर मरुतता का प्रतिपादक या बहु सञ्चन घटों में कलाकार कवि या इसी कारण उसने अपनी उत्कृष्ट कल्पना के द्वारा इसे बेबस योषिया और सिद्धों की उच्च परम्परा के रूप में प्रयोग न करने उसमें समग्रता लोकोत्तरता और सौन्दर्य का समावेश किया। उसकी लक्ष्य और चन्द्र की कल्पना या पद्मावती और उसकी सज्जियों के लिए काव्य में बार-बार आई है उसका कलाकार रूप को प्रकट करती है जिसमें पृष्ठभूमि के प्रति उनका मोह उसकी नायिका के रूप सौन्दर्य नायक्य को पृष्ठभूमि के विरोध (कन्ट्रास्ट) या उसके सदस्य में रचकर कई गुना बढ़ा देता है। चन्द्र और तारागणों के नदी में स्नान करने का दृश्य 'स्वार्थिक' सकता है। सारा धाकास ही पृष्ठी पर उतर धावा है। इस पृष्ठभूमि के कारण पद्मावती के सौन्दर्य में घपूह बढ़ि हुई है। रत्नसुत के रूप में सूर्य को ज्ञान के अन्तगत भी कवि की कलाकार कृति का परिचय मिलता है। उसका मूल यद्यपि चन्द्र सूर्य के विराट रूप-रू में ही है परन्तु उसके प्रयोग में उसे नवीन बना दिया है। राजा की महत्ता उसके प्रेम का प्रकाश धारि उससे स्थानित हुए हैं।

पद्मावती की चन्द्र के रूप में कल्पना एक और कवि की मौलिकता को प्रकट करती है दूसरी धार उसके विचारों का भी सम्यक विवेचन स्तुत करती है। इसका मूल भी सिद्ध योषियों के प्रभाव से सृष्टित उस रूप में है पर जायसी ने उसका वैसा प्रयोग नम किया है। इस बिम्ब को जायसी ने घपना मतवाहा मौलिक रूप दिया है। जो सदैव से ही प्रेम का प्रतीक रहा है। पारश्चात्य और प्राच्य दोनों ही साहित्यों में अपनी निगमता और शीतल सौन्दर्य के कारण बहु जीवन की मनोरम कृतियों का प्रतीक है। वह रूप, सौन्दर्य और प्रेम का एक धारण रहा है। जायसी के प्रेम का धारण भी चन्द्र है

रहे जो रिपु के घण्टुस परी करतें होइ बीन।

तोइ बार घत निरमर, नरम न होइ मसीन।

(६० ८-९)

लम्बवत रूप सौन्दर्य और प्रेम का धारण दिखाने के लिए ही जायसी ने पद्मावती के लिए यह रूपक दिया है। जायसी के लिए हुए रूपक के घण्टुस भी

पद्मावती की बीभन की उष्णगामी मयसकारी वृत्ति कहा जा सकता है जो स्वयं ब्रह्म स्वरूप है। वायु के रूप में कवि की पद्मावती विषयक मोकोत्तर भावना का भी सुन्दर प्रकाशन हुआ है। वायु रानी रात्री का सरोवर पर घाना घीर सरोवर का उद्वेगन मानो बह उसके पांव का स्पर्श करना चाहता है सब कवि की मोकोत्तर भावना का परिचय देते हैं जो रूपक धरवा बिम्ब द्वारा ही प्रकट हुई है। समष्टि में वायु सूर्य का रूपक कसा से सुमण्डित घीर बिचारों की परम्परा से पुष्ट है। यह कवि के सौन्दर्य सृजन घीर सिद्धान्तों की दक्षिण दोनों को ही प्रकट करता है। रूपक धरवे समग्र स्वरूप में बड़ा बिराट है घीर धंध रूप से घनेक तथ्यों का प्रकाशन करते हुए भी एक ही मूल उद्गम से निरगत है। सम्पुष्ट यह जामसी के बिचारो घीर धमिष्पत्ति दोनों ही दृष्टियों से एक बड़ा (कम्प्लेक्स इमेज) मिश्रित रूपक है।

(२) ज्योति क विव

जामसी ने पद्मावती के लिए ज्योति के बिम्बो को घनेक स्वतों पर प्रयुक्त किया है। पद्मावती के लिए दीपक सूर्य-किरण वायु सूर्य बिजली घाबि उपमान बटबर ही प्रयुक्त हुए हैं। यहाँ ध्यान देने योग्य बात यह है कि जामसी ने जामसी के प्रति हासिक सहाय्यवृत्ति रखते हुए भी एक ही स्थल पर उसके लिए ज्योति या प्रकाश का कोई रूपक नहीं दिया है। इससे प्रकट होता है कि जामसी ने पद्मावती के ये प्रकाश के बिम्ब सप्रयोजन रखे हैं चाहे यह प्रयोजन कवि के सम्पुष्ट रीता स्पष्ट न रहा हो जैसे उसके सिद्धान्त कथामक धावि परम्पु उनके मानस में इसका रूप धरन्व ही बड़ा स्पष्ट रहा होया। जामसी ने पद्मावती को बुद्धि का प्रतीक धरवा धारमा या ब्रह्म का रूप माना है। उसके प्रकाश के बिम्ब उसके इस स्वरूप का धामान देते हैं बिम्ब के सभी साहित्यों घीर सभी दर्शनों में ब्रह्म धरवा बिराट धरण्ड दक्षि के स्वरूप क लिए केवल एक ही रूप एक ही बिम्ब धामने धाया है घीर बह है—धरन्व प्रकाश का। संभवत सभी साहायिकों धरवा धामिकों जिन्होंने इस धरन्व तत्व के देवने की कामना की उसे केवल धरन्व ज्योति के रूप में देख पाए। बिम्ब काल ? धार तत्व के सभी मानव उस धरन्व तत्व को ज्योति रूप ही मानते धाए हैं। भारतीय धर्मों धावि में भी बही मान्यता है। तमसो मा ज्योतिष्यमय' हमारा अंतर्भाव है। उपनिषद वेदान्त धादि में भी यही कहा गया है। हमारे प्रायेक देवता धरवा महान पुण्य के निर के चारों घीर बना तेजोमय वृत्त भी इनी कारण है सम्भवत बह उनके धरन्व ज्योति के धंध का प्रतीक है। इस्लाम मत के धनुषायी मूमा की तूर पर धरन्व प्रकाश के ही दर्शन हुए ने।

धाधुनिक धंध जी कवि बह मयध भी धरन्वता के लिए उम ज्योति की बखना करता है जो न पृथ्वी पर है न मयुत्र में।' धरन्वता को धनुष्युनि करने जाता कवि
 1 The light that never was on sea or land—quoted by C.M Bowra
 —Inspiration and poetry p 12

हैनरी वेंगन भी कहता है

I saw Eternity the other night
Like a great Ring of pure and endless light
All calm as it was bright,
And round beneath it time in hours days years
Driven by the spheres
Like a vast shadow mov'd in which the world
And all here train were hurl'd.^१

संभवतः परमात्मा के ज्योति स्वरूप होने की यह कल्पना प्रत्येक बेध धीर प्रत्येक जाति में है धीर रही है। इस तरह यह चारणा एक सोक परम्परा है। जायसी ने भी परमात्मा के ज्योति रूप होने का यह विचार अपने संस्कारों में पाया होगा। उनके संस्कारों के घटिरिक्त भी सूफ़ी बर्म जिसके सिद्धान्तों को उन्होंने अपने जीवन के सबसे निकट पाया था में भी परमात्मा की कल्पना ज्योति के रूप में की गई है। जुदा का मूर धमका प्रकाश मुसलमानों का एक धारणीय धर्म है। जुदा में भी जुदा को प्रकाश रूप कहा गया है। जुदा कहता है 'बहु परमात्मा प्रकाश धीर पृथ्वी की ज्योति है। धासे में रहे हुए बीपक की भाँति उसका प्रकाश है। यह बीपक एक धीसे के भीतर है धीर बहु धीसा मानो एक बमकटा तुभा सितारा है परमात्मा जिसे चाहता है अपनी ज्योति की धीर धमसर करता है।^२ जायसी की पद्मावती विषयक ज्योति रूप की कल्पना सूफ़ी बर्म से भी प्रभावित रही है कुछ सूफ़ी बर्म के बिम्बों का जायसी ने ज्यों का त्यों प्रयोग किया है। इसके घटिरिक्त जायसी स्वयं भी पद्मावती के लिए जो कि उनके मत से ब्रह्म का प्रतीक है ज्योति के उपमान ही चुन पाये हैं। ज्योति के बिम्बों में सर्वाधिक प्रसुत बिम्ब अग्नि का है, जो रूप की अपूर्णता के साथ साथ सोकोत्तरता की रक्षा भी करता है। अग्नि के बिम्ब का अध्ययन पहले ही सूर्य अग्नि के संघर्ष में हो चुका है घट-महां इसका विवेचन व्यर्थ होगा। प्रसुत अध्ययन में हम ज्योति के प्रथम रूपों बीपक सूर्य सूर्य किरण धीर बिजली धादि का अध्ययन करेंगे।

जायसी ने पद्मावती को बीपक रूप में प्रस्तुत किया है। बीपक के रूप में यह इस्लाम की उन चारणा के बहुत निकट है जिसके अनुसार परमात्मा वा जुदा के प्रकाश को धासे में रहे हुए बीपक की भाँति कहा गया है, बीपक के ऊपर धीरा है इस कारण यह धरपट्ट है केवल हम ज्योति का प्रामास ही कर सकते हैं बीपक का नहीं। जायसी की पद्मावती भी जन्म से पूर्व धरपट्ट ब्रह्म के रूप में माँ के उदर में प्रविष्ट हुई, उसकी ज्योति भी जन्म के हृदय में जमी भाँति प्रकाशित होती है जिस भाँति

१ H. Vaughan Inspiration and poetry, C. M. Bowra p. 10

२ मूदा मत मत्मा धीर सारित्व : रमनूजम जिबरी, १ २४६

विश्व एवं मारों के सम्बन्ध का विचार

प्राणन की घोट से बीरक का प्रकाश—

बस घोषण पुर होइ तासु दिन दिन हिय होइ परणामु ।
बस धांचत शोने महुं दिया तब उजियार देखावे दिया ।

(१० १७)

यहाँ भी वही अस्पष्ट ब्रह्म का प्रामाण्य है, जो बीरक के रूप में है, वह वर्णन में ब्रह्म हुआ है, इसी प्रकार केवल ज्योति के प्रामाण्य से हम पद्मावती की लोकोपगता को ग्रहण कर सकते हैं। बीरक की श्रुति स्पष्ट रूप से ब्रह्म प्रकाश परमाणु का प्रतीक है, जिस ज्ञायत्री ने पद्मावती के परमाणु रूप का प्रामाण्य देने के लिए प्रस्तुत किया है। सम्भवतः कवि के मान्य में यह कार्मिक रूप बिज ग्ना ही धीर कवि ने अपने प्रभावित होकर ही यह विश्व दिया था, क्योंकि सम्पूर्ण पद्मावती में किसी अन्य स्वयं पर पद्मावती के लिए बीरक का विश्व नहीं था है। कवि ने यहाँ पद्मावती की लोकांतरता का प्रामाण्य देने के लिए कार्मिक रूप बिज का प्रयोग किया है।

पद्मावती के लिए मूल धीर मूल किरण का उदयमान भी था है। मूल किरण का बिज केवल एक बार है धीर पूर्व का केवल दो बार है। पर यह सभी पद्मावती के लोकोत्तर स्वरूप का प्रामाण्य देने के कारण ज्ञायत्री के विचारों को पुष्ट करत है। ज्ञं भी ज्योति स्वरूप होने से सहज ही परमाणु या धारणा का प्रतीक बन गया है। इसका प्रकाश भी धारणाप्रकाश की शक्ति सर्वत्र फैला दिखाई देता है। जगत् के समय पद्मावती के लिए कवि ने मूल किरण का रूप दिया है। मूल किरण के मध्यमावती के पृष्ठी पर प्रकटित होने के साथ ही सब्रत प्रकाश छा गया।

मए हन नाम पुरि अं धरी पद्मावति जग्या घोषारी ।
जानहु मुरख किरण हुनि काई मुरख करत धरी वह बाड़ी ।
या निधि माहू दिन क परणामु सब उजियार भयहु कबितासु ।

(११ १३)

हीगमन द्वारा पद्मावती का रूप वर्णन मुनकर भी राजा का प्रतीति हुई मानो मूल उदय हो गया हा धीर सब्रत प्रकाश छा गया हो।

मुड मुरख मुरनि बहु कगी बिलत मंह लायि बिज्र होइ धरी ।
जबु होइ मुरख घाड मन बनौ तब घट पुरि तिये बरपती ।

(१६ २३)

ऐसे लोकोत्तर प्रकाश के समय संसार के जगत् रूप शरीरक दृष्टिगत होने समय है।

उपल मूर बस बैलिक बरि लपै घोडि मूष ।
धने सबै कात्रि धरि पद्मावति क रूप ।

(११ ८-९)

इस प्रकार स्पष्ट है कि मूल धारणा पूर्व किरण के दो रूपक पद्मावती के लोकोत्तर स्वरूप को प्रकट करते हैं धीर ज्ञायत्री की कथा की प्रतीकात्मकता को पुष्ट

हेमरी बेचन भी कहता है

I saw Eternity the other night
Like a great Ring of pure and endless light
All calm as it was bright
And round beneath it time in hours days years
Driven by the spheres
Like a vast shadow mov'd in which the world
And all here train were hurl'd.^१

संभवतः परमात्मा के ज्योति स्वरूप होने की यह कल्पना प्रत्येक बेचन और प्रत्येक जाति से ही घीर रही है। इस तरह यह धारणा एक भोक परम्परा है। जायसी ने भी परमात्मा के ज्योति रूप होने का यह विचार अपने संस्कारों में पाया होगा। उनके संस्कारों के प्रतिरिक्त भी सूफी धर्म जिसके सिद्धान्तों को उन्होंने अपने जीवन के सबसे निकट पाया था में भी परमात्मा की कल्पना ज्योति के रूप में की गई है। कुषा का गुर अथवा प्रकाश मुसलमानों का एक धारणीय छव है। कुषान में भी कुषा को प्रकाश रूप कहा गया है। कुषान कहता है 'बहु परमात्मा प्रकाश और पृथ्वी की ज्योति है। धामे में रखे हुए दीपक की भाँति उसका प्रकाश है। बहु दीपक एक दीपे के भीतर है और बहु दीपण मानो एक जमकता हुआ सितारा है परमात्मा जिसे बाह्यता है अपनी ज्योति की ओर घमसर करता है।' जायसी की पद्मावती विषयक ज्योति रूप की कल्पना सूफी धर्म से भी प्रभावित रही है कुछ सूफी धर्म के बिम्बों का जायसी ने ज्यों का त्यों प्रयोग किया है। इसके प्रतिरिक्त जायसी स्वयं भी पद्मावती के लिए जो कि उनके मत से बड़ा का प्रतीक है, ज्योति के उपमान ही चुन पाये हैं। ज्योति के बिम्बों में सर्वाधिक प्रबुद्ध बिम्ब जम्ब का है जो रूप की अपूर्वता के साथ साथ भोकोत्तरता की रखा भी करता है। जम्ब के बिम्ब का अध्ययन पहले ही सूर्य जम्ब के संदर्भ में हो चुका है यहाँ इसका विवेचन व्यक्त होगा। प्रस्तुत अध्ययन में हम ज्योति के अन्य रूपों दीपक सूर्य सूर्य किरण और बिजली आदि का अध्ययन करेंगे।

जायसी ने पद्मावती को दीपक रूप में प्रस्तुत किया है। दीपक के रूप में बहु इस्लाम की अरब आरबा के बहुत निकट है जिसके अनुसार परमात्मा या कुषा के प्रकाश को धामे में रखे हुए दीपक की भाँति कहा गया है, दीपक के ऊपर दीपण है इस कारण बहु प्रसिद्ध है, केवल हम ज्योति का धामास ही कर सकते हैं, दीपक का नहीं। जायसी की पद्मावती भी जम्ब से पूर घण्टा बड़ा के रूप में माँ के उदर में प्रविष्ट हुई उसकी ज्योति भी अनन्त के हृदय से उनी भाँति प्रकाशित होती है जिस भाँति

१ H. vanhan Inspiration and poetry C. M. Bowra p. 10

२ पृचा मठ सभला और सभिल सन्स्कृत लिपिरी १ २४६

घांचल की घोट से बीपक का प्रकाश—

जस घीबल पुर होइ तासु बिन बिन हिय होइ परमासु ।

जस घांचल सीने महुं बिया तस उबियार बेजाबे हिया ।

(१० ६-७)

यहाँ भी वही अस्पष्ट बह्य का आभास है जो बीपक के रूप में है वह दर्पण से बना हुआ है इसी प्रकार केवल ज्योति के आभास से हम पद्मावती की लोकोत्तरता को प्रकृत कर सकते हैं। बीपक की ज्योति स्पष्ट रूप से बह्य अथवा परमात्मा का प्रतीक है जिसे जायसी ने पद्मावती के परमात्मा रूप का आभास देने के लिए प्रस्तुत किया है। सम्भवतः कवि के मानस में यह धार्मिक रूप चित्र रहा हो और कवि ने उससे प्रभावित होकर ही यह बिम्ब बिया हो क्योंकि सम्पूर्ण पद्मावत में किसी अन्य स्वयं पर पद्मावती के लिए बीपक का बिम्ब नहीं आया है। कवि ने यहाँ पद्मावती की लोकोत्तरता का आभास देने के लिए धार्मिक रूप चित्र का प्रयोग किया है।

पद्मावती के लिये सूर्य और सूर्य किरण का उपमान भी आया है। सूर्य किरण का बिंब केवल एक बार है और सूर्य का केवल दो बार है। पर यह सभी पद्मावती के लोकोत्तर स्वरूप का आभास देने के कारण जायसी के विचारों को पुष्ट करते हैं। सूर्य भी ज्योति स्वरूप होने से सहज ही परमात्मा या आत्मा का प्रतीक बन गया है। उसका प्रकाश भी आत्मप्रकाश की भाँति सर्वत्र फैला विचारों में होता है। जगत् के समस्त पद्मावती के लिए कवि ने सूर्य किरण का रूपक दिया है। सूर्य किरण के सदृश्य पद्मावती के पृथ्वी पर अवतरित होने के साथ ही सर्वत्र प्रकाश छा गया।

मए बस मास पुरि नं धरी पद्मावति कया ओतारी ।

जानहु सुख किरन हुति काही सुख करा घटो बहु बाही ।

भा निशि माह बिन क परमासु तब उबियार मयहु कबिलासु ।

(११ १३)

हीरामन द्वारा पद्मावती का रूप वर्णन सुनकर भी राजा को प्रतीति हुई मानो सूर्य उदय हो गया हो और सर्वत्र प्रकाश छा गया हो।

तुइ सुरंग पुरति बहु कही बिल महुं जाबि चित्र होइ रही ।

जगु होइ सुख साह मल बसी सब घट पुरि हिये परपसी ।

(१६ २१)

ऐसे लोकोत्तर प्रकाश के समस्त संसार के अन्त्य रूप रूपहीन दृष्टिगत होने समये है।

जसत पुर जस बैकिऊ जाब कय घोहि पूप ।

सैस सबे जाहि कपि पद्मावति क कय ।

(१५, ८-९)

इस प्रकार स्पष्ट है कि सूर्य अथवा सूर्य किरण के ये रूपक पद्मावती के लोकोत्तर स्वरूप को प्रकृत करते हैं और जायसी की कथा की प्रतीकप्रकृता को पुष्ट

करते हैं। ज्योति के विन्मों से सर्वथ ही इन विचारों का प्रकटीकरण होता है। अन्त रूप में भी उसका प्रकाश सर्वव्यापी है। राजब चेतन उसके रूप से घरती से स्वर्ग तक ज्योति का आभास करता है। और बादशाह मलाइहीम भी रूप में पद्मावती का प्रतिविम्ब पाकर समस्त सत्ता को प्रकाशित और स्वर्जस्वर्ज का समझने लगता है।

भे निजि ससि खीराहुर बड़ी खोरह कर बंस बिधि पड़ी।

बिहसि झरोके भाइ सरेखी निरसि साहि बरपन मह बेखी।

होवहि बरस परस मा सोना घरती सरन भयऊ सब सोना।

(२१६ १४)

पद्मावती के लिए एक स्वप्न पर बिजली का रूप भी आया है, राजब चेतन उसको महसूस करी गगन में चमकती हुई बिजली के सदस्य पाता है

घापी राखी चेतनि खीराहुर बी पात।

घरत न जाने हिरवे बिजुरी बसि घकास।

(४५० ८६)

यहाँ बरपि कवि का कसाकार रूप प्रयुक्त है परन्तु यहाँ बहु मुक्तता उसकी शीथिल से प्रभावित है। लोकोत्तरता का वैसा आभास यहाँ नहीं है परन्तु ज्योति स्वरूप होने के कारण यह भी उसी श्रुतता की एक कड़ी है।

समष्टि में जायसी के ज्योति के सभी विन्म पद्मावती के आत्मरूप को प्रकट करते हैं। कवि इन विन्मों में प्रकरण ही परम्पराओं और संस्कारों से प्रभावित रहा है परन्तु उसकी कल्पना का भी इसमें योगदान है। अस्तुत स्वयं जायसी भी धर्म दार्शनिकों आदि की भांति आत्मा के प्रतीक पद्मावती के मोक्षोत्तर रूप के लिये प्रकाश प्रथमा ज्योति के प्रतिरिक्त और कोई विन्म कल्पित नहीं कर पाया है। ज्योति के विन्म जायसी की कथा की कल्पनावस्था के मुहड़ सोपान हैं।

(३) कमल का बिब—

जायसी ने कमल का विन्म पद्मावती के लिये अनेक स्थलों पर दिया है। कमल एक अत्यन्त प्राचीन उपमान है और कुछ धर्मों में बड़ प्रथमा मृत उपमान हो चुका है परन्तु नवीन प्रयोगों के द्वारा यह आज तक जीवंत बना हुआ है। आज कवि भी कमल को उसी शौन्दर्यपूर्ण दृष्टि से देखता है जिस दृष्टि से कालिदास या वात्सीकि ने देखा है परन्तु उनके दृष्टिकोणों में अन्तर था चुका है। जायसी ने भी इस परम्परागत उपमान प्रथमा बिब को अनेक स्थलों पर प्रयुक्त किया है।

मध्यकालीन साहित्यिक और धार्मिक परम्परा में 'कमल' का बड़ा महत्त्वपूर्ण स्थान था। लिख और नाच योगियों ने इसका बड़ा प्रचार कर रखा था। इनके अनुसार कमल 'सतजन कमल' का वाक्य था जो बड़ा प्रियता के मध्य में स्थित है और बड़ा सहृदय चक्र में समुत् का नाम है। सतजन कमल तक पहुंचना ही योगी की चरम प्रथमा थी, यही उसका मध्य होता था। जायसी ने बरपि लिख और नाच

योमियों से बहुत कुछ ग्रहण किया परन्तु कमल राज्य के विषय में ऐसा नहीं कहा जा सकता। कमल का प्रयोग साहित्यिक परम्परा से दूरीत किया गया है। कमल का बिम्ब उनकी अपनी कल्पना की। यद्यपि कहीं कहीं जायसी के प्रयोग से ऐसा प्रतीत होता है कि उनका कमल का बिम्ब पद्मावती के आत्म राज्य की प्रकट करता है परन्तु उनके अन्य प्रयोग इसे प्रमाणित नहीं कर पाते। एक स्थान पर जायसी कहते हैं

घट्ट हाय तन सरवर, क्षिपा बंजल तैहि भाह ।

नैतहू जातहु निघरै, कर पहुँचत घबगाह ।

(१८१ ८-९)

यहाँ कमल की हृदय घबरा आत्मा का प्रतीक बनाया है। इससे प्रम हो सकता है कि सम्बन्ध कवि के अक्षेपण में कमल आत्मा का प्रतीक ही बन गया है और इसी कारण वह बार बार पद्मावती के लिए कमल के बिम्ब का प्रयोग करता है परन्तु पद्मावती के लिए प्रयुक्त कमल के अन्वय सभी बिम्ब इस तथ्य की ठीक भी पुष्टि नहीं करते। अतः कमल के बिम्ब के पीछे चाहे कोई भी परम्परा या कोई भी कारण रहा हो पर अिद्ध और नाय योमियों की परम्परा नहीं की बिम्बों के प्रयोग के आचार पर यह स्पष्ट कहा जा सकता है।

बन्धुः जायसी ने यह बिम्ब प्राचीन साहित्यिक परम्परा से ग्रहण किया है। साहित्यिक परम्परा में सर्वत्र से ही कमल सौन्दर्य और प्रेम के लिए ग्रहण किया गया है। जायसी ने भी सौन्दर्य और प्रेम की प्रतीति कराने के लिए इस रूपक का प्रयोग किया है। पद्मावती का प्रेम और सौन्दर्य दोनों इस रूपक में प्रकट हुए हैं। पद्मावती के प्रेम की अमिथ्यक्ति अनेक स्थलों पर इसी बिम्ब के द्वारा हुई है। प्रिय के विषय में सभी मन्त्रिण और कुछ ही बाणी है। जायसी ने उसके तिन सूर्य के प्रकाश से रहित कमल बेत का उपनाम दिया है।

ओ सूरज तिर ऊपर आवा, तब तो बंजल सुख छात ।

नाहि ली भरे सरोवर, सुखे पुरान वात ।

(१४० ८-९)

कमल बन्धुः प्रेम की अनम्यता का प्रतीक है।

सुवर सरोवर हूँत जल भरतहि गएऊ बिछोहू ।

अबल प्रीत गही परिहरी लूकि पर बर हीह ।

(४१० ८-९)

बिछिनी रानी के प्रेम की कमल घबरा कमल पत्र के सहाय कहा गया है जो निरन्तर जल में खूँ पर भी उसका भोग नहीं करता निमित्त ब तन्मय खूँता है। राजा के विषय में रानी भी सुख सरोवर में कमलपत्र की भाँति निमित्त खूँती है

जैसे कबल सुख के घासा नीर कंठ बहि मरै पियाता ।
बिछरा भोग सेज सुख बास जहाँ अंबर सब तहाँ हुलासु ।

(२२६ २३)

प्रिय विधोय में वह प्रिय सागिमध्य की कामना करती है बिछरे प्रेम रस पाकर
मुरझई कमल बेस भी पल्लवित हो सकती है ।

कबल जो बिन्सा मानसर छारहि मिसे सुखाइ ।

घबहु बेनि फिरि पहुलै जौ पिय धीचिंहु धाइ ।

(३३४ ५६)

जायसी ने कमल के इन्हीं रूपों तक घपने को सीमित नहीं रखा है बरन्
अपनी कल्पना से उसमें बिकास भी किया है । एलसेन को सूर्य रूप में प्रस्तुत करके
कमल और सूर्य के रागात्मक सम्बन्ध द्वारा पद्मावती और एलसेन के प्रेम को व्यं
जित किया है । कमल और सूर्य का यह रागात्मक सम्बन्ध भी परम्परा से प्राप्त हुआ
है परन्तु कवि ने इसके द्वारा प्रेम का आदर्श प्रस्तुत करके इसे नवीन रूप दिया है ।
पद्मावती और एलसेन के मिलन पर कवि ने पद्मावती के प्रेम को सूर्य के प्रकाश से
प्रस्फुटित हो जाने वाले कमल के बिम्ब द्वारा प्रस्तुत किया है

पबिक पदारथ जौन जो होती सुनतहि रतन बड़ी सुख जोती ।

जानहुँ सुख कीन्हु बरगासु, दिन बहुरा भा कबल बिगासु ।

(४१८ १२)

मिलन पर इस प्रकार के बिम्ब बार बार धाये हैं—

छिपा न रहै सुख परयासु बैनि कबल मन भया हुलासु ।

(२७६, २)

अथवा

नलिन निखंर कोम्ह सकुच उठा कबल जयवा मुनि सुख ।

पुण्डन पुरि संबारे पाता पुनि बिधि भान बरा सिर छाता ।

(६३८ ३४)

पद्मावती की मूर्च्छित अवस्था पर भी सलिया सूर्य रूपी एलसेन के बाधुत हो
जाने के कारण उसे प्रस्फुटित होने के लिये कहती हैं

कबल करी तु पवुमिनि पै निसि भयऊ बिहात ।

घबहु न संपुट जोसहि, जो रे उठा जय मल ।

(२३० ८६)

प्रेम का प्रतीक यह बिम्ब कवि के क्लेशकार रूप के कारण है ।

कमल का बिम्ब एक और रूप में भी धाया है । जायसी पृष्ठभूमि के प्रति
सदैव अचेष्ट है पृष्ठभूमि में वातु का सौन्दर्य उमर कर घाता है इसका जायसी को
खूब ज्ञान है । एतद्वत् पद्मावती के कमल रूप की अस्फुटता का प्रबलित करने के

लिए बहु सखियों के लिये उपमान लाया है। कुमुदों के बीच में लिप्ता हुआ एक कमल अपने रूप और सौन्दर्य से कहीं अधिक आकर्षित करता है। जायसी ने धनेक स्वर्णों पर यह समग्र रूपक प्रस्तुत किया है

घी बीन्हीं सब संम सखी सहेमी ओ संम करहि एहस रस किसी ।
सहै कबल पिय संग न छोई कंबल पास अनु बिपसई कोई ।
(१४ १-७)

घोर

बाबि पिपाइ सखी मुई कोई, पवुनिनि जानु कबल संग कोई ।

जायसी ने कमल के समग्र रूपक जिसमें प्रेम का व्यंजक कमल उसका प्रिय मय को इस रूपक को प्युट करता है और समग्रता का द्योतक कुमुद बाबि के पुरे वर्णों का भी एक स्वस पर प्रयोग किया है

पयन सरीबर लति कंबल कुमुद तराई पास ।
तु रवि जवा सी मंबर होइ, पयन मिसा ना बास ।

(१५०, ८-९)

यहां समग्रता की बड़ी सुन्दर अभिव्यक्ति है। कमल के इतने अधिक बिम्ब होने का सम्बन्ध एक का न और भी है। जायसी को अपने पार्श्वों के नामों से बड़ा मोह है। अधिकतर नामों को बहु श्लेष के रूप में प्रयोग करता है। 'रठन' और 'नाक' को लेकर उसने धनेक श्लेषात्मक बिम्ब ब्रिंहि हैं। सम्बन्ध पदमावती में 'पदम' शब्द के कारण कवि कमल की घोर इतना आकृष्ट है। धनेक स्वर्णों पर कथा भाष में भी कवि पदमावती के लिये 'कमल' शब्द का प्रयोग कर गया है।

समष्टि में कमल का बिम्ब जायसी की प्रेम और सौन्दर्य विषयक बारम्बारों को स्पष्ट करता है। साथ ही कवि की आकृष्ट कला का भी (पृष्ठभूमि के कारण) परिचय देता है और कवि के नाम के प्रति मोह को भी स्पष्ट करता है।

(४) इन्द्र का बिम्ब

जायसी का इन्द्र का बिम्ब बहु धातुल बिम्ब है। जायसी ने यह बिम्ब राजा के लिये दिया है, राजा चाहे बहु रत्नसेन हो या पदमावती का पिता या रत्नसेन का पिता प्रत्येक सुख उपृष्टि से परिपूर्ण राज्य का राजा उसकी दृष्टि में इन्द्र है। इसी कारण चाहे भगवान् श्रीन के धर्म और प्रताप का बखान करते हुए भी कवि उसके राज्य से प्रीणित होने के कारण उसके लिये इन्द्र का बिम्ब प्रस्तुत नहीं कर सका। सुराज्य का राजा ही वस्तुतः उसकी दृष्टि में राजा है और वही इन्द्र का भी उपमेय बन सकता है, और धातुल नहीं।

राजा के लिये इन्द्र की यह कल्पना बड़ी प्राचीन है। पृथ्वी के राजा के लिये 'नरेन्द्र' शब्द न जाने कब से प्रचलित रहा है। देवताओं का राजा इन्द्र होने के कारण मानवों के राजा को भी 'नरेन्द्र' समझने की कल्पना बन पड़ी। वास्तविक रामायण में भी इन्द्र की कल्पना राजा के लिये आई है।

नलेक्याइबापीइव ये बाग्गे बन दीलान्तबासिन ।

उपासाबकिरे सर्वे तं देवा बासबं पचा ।'

वस्तुतः इन्द्र की उपमा राजा के शौर्य प्रताप बीरता सौन्दर्य सबको एक साथ प्रकट कर देती है इस कारण भारतीय जनमानस में भी यह धारणा बस गई है। जायसी ने अपने समाज और अपने संस्कारों से ही इस कल्पना को लिया होगा। इन्द्र का बिम्ब जायसी के सिद्धान्तों विचारों प्रायः का कोई विशेष प्रकाशन नहीं करता फिर भी इस बिम्ब की अनेक बार प्राप्ति हुई है और 'राजा' के लिए कवि केवल यही एक बिम्ब ले सका है। परन्तु यह बिम्ब केवल रत्नसेन या पर्मावती के पिता नवर्ष सेन के लिए ही प्रयुक्त हुआ है। अज्ञातहीन बापसाह के लिए जायसी ने एक बार भी यह कल्पना सामने नहीं रखी है। स्पष्टतः सोम्य राजा के लिए यह कल्पना कवि को अपने संस्कारों में ही प्राप्त हुई थी। इन्द्र की यह कल्पना रत्नसेन के प्रतीकात्मक धर्म में विशेष सहायता नहीं करती। यों हो सकता है मन ओ रत्नसेन है वह इन्द्रियों का स्वामी है देवताओं के स्वामी होने के साम्य के कारण कवि इन्द्र को रत्नसेन के लिये साया हो जिससे प्रतीकात्मक धर्म 'मन' की पुष्टि होती है। परन्तु ऐसा प्रतीत नहीं होता कि कवि नाम बुझ कर इसे बिसिष्ट धर्म में साया है। वरन् कवि इसको अत्यन्त सद्गुण रूप से केवल राजा (नरेश्वर) के कारण साया है। इन्द्र के रूप का समग्र रूप भी है जहाँ कविमास अन्धराओं ऐरावत प्रायः की भी कल्पना है। वह प्रतीकात्मक धर्म में किसी भी रूप में सहायक नहीं हो सकत वह कवि की संस्कार प्राप्त बारबा का स्वरूप ही कट करते हैं।

जायसी ने अनेक स्थलों पर राजा को इन्द्र और राजनगरी को कबिलास कहा है। कबिलास कैलास शब्द का रूप है जो महादेव का निवास माना जाता है, जायसी ने स्वर्ग के धर्मों में इस शब्द को लिया है। पंचवर्षेन का वर्णन करते हुए कवि कहता है

का राजा है वरनों तासू सिंघनवीप प्राप्ति कबिलासू । × ×

पंचवर्ष सेन तहाँ बड़ राजा अछरगिह माह इन्द्र बिधि साजा ।

(२३ १५)

पंचवर्षेन का श्रेष्ठ इन्द्र के समान है योगियों से दृष्ट होकर वह इन्द्र की भाँति बलबल सञ्चित करवाता है

उजगह सरलाछाहमा सूरज मयऊ अमोपि ।

बिनहिं रात अत बैबिऊ, बड़ा इन्द्र अत कोपि ।

(२४१ ८-९)

जायसी ने रत्नसेन के लिए भी इन्द्र का उपमान दिया है। पर्मावती के मिलन के अवसर पर कवि कहता है कि आज रत्नसेन कभी इन्द्र अन्धरा से मिलने

भाषा है और सारे कबितास (राज नगरी) में पान हो रहे हैं। इस रूप में राजा स्वर्ग में बाघत सजाकर लाया है।

शानु इन्द्र होइ धाएँ, सै बरात कबितास।

शानु निर्ल मोहि घाएरी पुत्र मन की प्राप्त।

(२८२ ८-९)

शानुरा कपी पद्मावती के पान होने से उस प्रतीत होता है मानो स्वर्ग ही उसके अधिकार में आ गया है।

तहँ धाएरि पद्मावति रतनेन के पाल।

माती तरन हाय शानु धाएँ श्री साती कबितास।

(२८२ ८-९)

पद्मावती की कल्पना अनेक स्थलों पर शानुरा के रूप में हुई है। इससे उसके रूप सौन्दर्य का भी अण्डा धामान ही जाता है।

बैरिण शीठि सोहू मोहि पाँउ शानु विरि बली अणुरा काटे।

(१३५ १)

पद्मावती की सखियाँ भी स्वयं की अक्षय अणुराएँ प्रतीत होती हैं—

(१) काज कटाज हरे चित हरनी, एक एक सँ धाएरि करनी।

बाँतहु इन्द्र लोक सँ काफ़ी पलहिँ पाँउ मये सब ठाही।

(२१० १-४)

(२) लँ संन सली कीन्हू तहँ केरा, जोनिहँ धाएँ शानु घाएरिहँ येरा।

(१९४ १)

(३) ये कबितास तुनी घाँउरी कंह हुन धाई परमेस्त्रिरी।

(१९० ३)

यहाँ तक कि पद्मावती और शानुवती का इन्द्र भी कवि को ऐसा प्रतीत होता है माना अणुराएँ अलाड़े में लड़ रही हों। इसी कल्पना को पूर्ण करने के लिए कवि ने मङ्ग के हाथियों को ऐसाबत हाथी कह दिया है

शात सहू हस्ती सिधली जिनि कबितास ऐरावति बली।

(२६ २)

राजसी में राजनयणी को स्वयं कहा है जिसमें यह समस्त उपकरण उसके पूरे शिर को सामन रख बैठ है। राजनयणी को कम से कम १० स्थला कबितास अर्थात् स्वयं कहा गया है। राजनयणी की बनी अमराइयाँ राज ठाठान राजनयिनि महूब ऊँचे ऊँचे शीरधर कवि को कबितास का स्मरण करा बैठे हैं। कुछ स्थल अन्वेषणीय हैं

(१) अँच पररि अँच अवासा, शानु कबितास इन्द्र कर बासा।

राऊ रँक सब धर धर सुखी, जो देखा जो हँसता सुखी। × ×

सब औपारिन्हु अम्नन अम्ना धौंठेहि सभापति बँठे समा ।
अनु समा बेबताम्ह के कुरी परी बिरिट इन्कासन पुरी ।
धौंठिक पंच संवारहि अस सिबलोक अनुप ।
पर धर नारी पडुमिनी मोहहि दरसन रूप ।

(१२, १-७)

- (२) जबहि बीप नियरबा आई, अनु कबिलास नियर भा आई । × ×
(२७ १)
- (३) साहि मंदिर अस बेबा अस कबिलास अनुप ।
जाकर अस धौराहार सो रानी केहि न्य ।
(२२२, ८-९)
- (४) बाहि गढ़ ऊपर बगसलि बेबी इन्ड पुरी सो आग बितेबी ।
ताम तलाब सरोवर मरे धौर धंवरक बहू बिसि करे ।
(२२४ १२)
- (५) × × × × बित्ति परा सिहल कबिलासु ।
बे जो मेष पड़ जायि अकासा बिहारी के न कोठ अहुं बासा ।
तेहि पर सति जो कबपहि मरा, राज मंदिर सोने नप जरा ।
धौर जो नमत कहसि अहुं पासा सब रातिन्हु के धाहि अबासा ।
(१६ ४-७)
- (६) राजसमा पुनि बैल बईठी, इन्ड समा अनु परि गई बीठी ।
(४७ १)
- (७) साबा राज मंदिर कबिलासु सोने कर सत्र पहुमि अकासु ।
(४८ १)
- (८) गह्वर नैन बापु नरि धांसु, छाडुब यह सिघल कबिलासु ।
(१०८ २)
- (९) सात पंडु साती कबिलासा का बसी अस उत्तम बासा ।
हीरा हीरि कपूर गिलाबा, मलयापिरि बंदन सब साबा ।

इन छंदरगों में कवि की कल्पना कहीं समग्र रूप में आई है वहीं अप्सराओं प्रादि सबका उल्लेख है कहीं अंश रूप में आई है वहीं कवि केवल कबिलास ही प्रस्तुत करके रह जाता है। बन्सुल यह अंध भी उसकी समग्र कल्पना को इंगित करते हैं। यह कल्पना स्पष्ट रूप से पुरानी परम्पराओं और संस्कारों से कवि को प्राप्त हुई है। एतसेम पद्मावती सखियां राजनगरी सत्री चण्डी कल्पना में स्वयं और स्वयं के बासी हैं। यह कल्पना अपनी समग्रता में कवि के व्यक्तित्व—उसके संस्कारों एवं परम्पराओं की अच्छी व्याख्या है वही कवि की अपनी मौलिकता का भी योग रहा है।

५) सरोवर का विद—

सरोवर का चिम्ब भी जायसी के प्रिय चिम्बों में से एक है। जायसी ने पद्मा-
त में छ बार इसका प्रयोग किया है। जायसी का सरोवर, प्रेम और सुख का प्रतीक
। सदैव प्रेम (वियोग) सुख आदि के प्रसंगों में इसका उल्लेख हुआ है। मुसलमानी
रम्यता में सरोवर का प्रयोग बड़ा प्राचीन है सम्भवतः जायसी भी इससे कुछ अंशों
प्रभावित रहा हो। सरोवर सूफ़ी कवियों में प्रेम का प्रतीक है। जायसी के परवर्ती
फ़ी कवियों में यह प्रेम का ही प्रतीक है।^१

वियोग व्यथित और सन्निहत हृदय के लिये जायसी ने अक्षर धीप्य की
आशा से सुखे धीर बहारें पड़े हुए सरोवर का चित्र दिया है। नाममती बिरह में
झूठी है

सरोवर हिया बरत नित जाई टुकि टुकि होइ बेहराई ।
बिहरत हिया करहु पिउ टैका शीठि बखंगरा मेरबनु एका ।
(१२४ १-७)

पद्मावती के बिच्छु बर्षन में सरोवर का पूरा चित्र सामने आता है जहाँ सुखे
सरोवर को छोड़कर सुख और प्रसन्नता का हर बिह्व उड़ जाता है

नीर मनीर कहाँ ही बिया सुम्ह बिनु काट सरोवर हिया ।
गवळ हैराइ बिहू के हाबा बसत सरोवर लीनु न साया ।
बरत जो पंछि कैलि के नीरा नीर घटै कोळ भाव न तीरा ।
कबल सुखि पंछरी बिछानी, कनकन होइ मिलि छार पड़ानी ।
विरह रैति कबल तनु साबा बून बून के येह मिलाबा ।
कनक जो कन कम होइ बिहराई, पिय वं छार सकेटे घाई ।
बिहू पवन यह छार सरीक छारहु आनि मिला बहु नीक ।
(१८२ १७)

पद्मावती के रूप को देखकर मोहित और धारचर्य अक्षित वियोगी के रूप में
एक बेतन के लिए भी कवि ने यही रूपक लिया है। पद्मावती मिलन के उपरान्त
राजा से अपना पूर्ण बिरह निवेदित करती है जहाँ सरोवर सुख और आनन्द का
प्रतीक बन कर प्रस्तुत हुआ है

छाड़ि परळ सरोवर यह मोही, सरोवर सुख गवळ बिनु तोही ।
कैलि जो करत हुल छड़ि यहळ दिनघर नीत सो शीरी गवळ ।
गई नीर तबि पुरहन पाता सुखय पूप तिर रछा न काता ।
भयळ नीन लल ललके सागा बिरह घाइ बैठ होइ कपया ।
(१४३ २३)

१. जायसी के परवर्ती सूफ़ी कवि का० सरला तुलना, १ २२

अन्वय भी सरोवर मुक्त का प्रतीक बना है

बिरह भगवती जिसभी भयङ्क सरवर हरल सुनि सब पयक ।

(२४७ ४)

मुक्त धीर समृद्धि का प्रतीक बरग होने के कारण जायसी ने राजा रत्नसेन के लिए भी सरोवर दम्ब का प्रयोग किया है

पद्ममावलि मन भाहि जो नूरी ।

मुनत सरोवर हिय गा पुरी ।

(१३० १)

इन प्रयोगों से स्पष्ट है कि जायसी का यह बिम्ब बहुत अर्थों में उनकी कल्पना की मौलिकता को प्रदर्शित करता है। सरोवर प्रेम सुख व आनन्द का प्रतीक रूप बन कर आया है।

समष्टि में यह सभी परम्परित बिम्ब जायसी की उत्कृष्ट कल्पना के परिचायक तो हैं ही उसके बिचारों संस्कारों धीर परम्पराओं का भी अच्छा परिचय प्रस्तुत करते हैं। अपने सन्दर्भ में अनेक बिचारों धीर धारणाओं को रखने के कारण इनका महत्व काव्य में विशिष्ट है। बिचारों का संघर्ष इन परम्पारित बिम्बों की एक विशेषता है जो काव्य की कथा उसके रूपक धीर कवि के बिचारों सिद्धान्तों धारि में विशिष्ट महत्व रखती है।

बिम्बों द्वारा भावों धीर विचारों का प्रकाशम

बिम्बों द्वारा जायसी के बिचारों एवं भावों का बड़ा स्पष्ट परिचय मिल जाता है। भावों एवं बिचारों को प्रदर्शित करने वाले बिम्ब कवि के कव्य से कहीं अधिक व्यञ्जना हाथ हैं। कवि भावों एवं बिचारों (एबर्ट्रुफ्ट वादस) को बिम्बों के माध्यम से ही प्रकट करता है। बिम्ब में गृहीत वस्तुओं के प्रति उनका अपना भूजाव (पेटीभूज) उसक बिचारों धीर सिद्धान्तों को पुष्ट करता है। बिम्ब द्वारा यह भी जात हो जाता है कि वह भाव के किस विरोध धरा किस विरोध तत्व को अधिक महत्व देता है। उदाहरण के लिए संसार विषयक कवि जायसी की माय्यताएँ उसके बिम्बों में प्रकट हुई हैं। उसक बिम्बों में जिस धारणा को प्रतिपादित किया हो वस्तुतः वही धारणा उस बिम्ब के विषय में कवि के मानस में रखी है। संसार के प्रति अनेक कवियों के अनेक प्रकार के दृष्टिकान रहे हैं। किसी में उस जीवन की रासवमी माना है किसी में आनन्द का दुह किसी में दुख का सागर पर जायसी के बिम्ब प्रदर्शित करते हैं कि कवि ने मुक्त दुख की दृष्टि से संसार को नहीं देखा है। उसकी दृष्टि एक दार्शनिक की दृष्टि रखी है संसार में आनन्द के अन्वेषक की नहीं। फलतः उसके समस्त बिम्ब संसार की क्षणिकता अस्थिरता धारि को प्रतिपादित करते हैं। बुलबुले कुम्हार के बर्तन धारि के रूपकों द्वारा यह क्षणिकता व अस्थिरता प्रतिपादित की गई है। स्पष्ट है कि कवि के सभी बिम्ब, धीर बिम्बों के द्वारा प्रकट होते हैं। यह इन जायसी की कुछ प्रमुख माय्यताओं का बिम्ब के धारण पर अध्ययन करेंगे।

(१) गुरु की महत्ता

जायसी न जीवन के समुद्र को पार करने के लिए गुरु की कृपा आवश्यक समझी है। गुरु की महिमा उचरित है। मध्यकालीन परम्पराओं में प्रायः सभी ने गुरु को विशेष महत्त्व दिया गया है। कबीर ने भी मोक्ष के साधक गुरु को माना था। जायसी ने भी जीवन के अचरित कर्म को प्रशस्त करने के लिए गुरु कृपा की महत्ता का प्रकाश प्रतिपादित माना है। परमात्मतम अपने गुरु सैयद अहमद खानवीर की प्रशंसा में यह कहते हैं

तपस अहमद कीर पिपारा तिह मोहि पंच बीन्हु उजियारा।

सैसा शिवा देम कर दिया उठी जोति भा निरमर हिया।

(१८ १२)

बीपक की ज्योति जिस प्रकार अंधकार की प्रकाशित करके मार्ग दर्शन करती है उसी प्रकार गुरु की कृपा ज्योति भी जीवन के अंधकार को दूर करके ईश्वर प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त करती है। आखिरी काल में भी जायसी न कहा है

मानिक एक पापक उजियारा सैयद अहमद कीर पिपारा।

खानवीर बिस्ती निरमर, कुल जग मा बीपक बिधि बरा।

(भा ६)

गुरु ईश्वर रूप होता है इसीलिए जायसी जब ऐसा बीपक बताते हैं जिसे स्वयं ईश्वर ने प्रवर्तित करके ससार के अज्ञानान्धकार को दूर करने के लिए रखा है।

जायसी ने गुरु के लिए मानिक का रूप भी दिया है यह अपने शिष्य को पापों का समुद्र पार करा कर ईश्वर तक ले जाता है कबि के अनुसार यही जीवन का अर्थ है

जान समुद्र पाप मोर मैसा, मोहित मोन्हु परम कह बेसा।

उन्हु मोर करिष जोड़ कर पड़ा पापज तीर माट जो प्रहा।

जो कहँ घइत होहि अङ्गहाप सुरति बैगि ली बाबह पारा।

(१८ ४६)

असंभव में भी कबि ने यही रूपक फिर दिया है—

कही लोपत बिस्ती पीब उजरित अहमद धौ खानवीर।

तेहि क नाव बड़ा हौं माईं देखि लमुद जल जिह न उरार्ई।

जेहि क ऐसन दीपक जला जाईं उतर निरमर लीं जला।

राह हृदीकत परै न कही वैठि मारपत मार सुदुकी।

दूहि उठै नैद मानिक मोती जाईं समाई जोति नहुं जोती।

जेहिं कह उन्ह अस माव बढ़ावा, कर यहि तीर खेहि सेइ प्रावा ।

(अस २६)

जायसी ने गुरु को प्रकाश स्वरूप होने के कारण और जीवन के धर्मकार को प्रकाशित करने के कारण अन्न कहा है स्वयं गुरु भी उतना ही निर्मल और निष्कलक है बितना चाँद

बहागीर घो बिस्ती निहकलक अस चाँद ।

मोइ मखडूम जयत खे हों पन्हु के घर बाँद ।

(१६ = ६)

स्पष्ट है कि जायसी अपने गुरु से सब अक्षरफ बहागीर का बड़ा प्रामाण्य मानते हैं। उनकी कृपा से ही वह पाप का क्षार ममूँद पार कर सके और उनकी ज्योति से ही जीवन को प्रकाशित कर सके। गुरु मोहरी या मेहरी के विषय में भी कवि की यही माय्यता रही है। बहा मछनि कवि रूपक को समझता से प्रस्तुत नहीं कर सका है पर ज्योति या प्रकाश से मार्ग बर्धन होने का उल्लेख उसके हृदयस्थ पुरे रूपक का आभास देता है

पान-पाएऊ गुरु मोहरी मीठा पंच मिला सी दरसन बीसा ।

(अस २७)

जायसी ने गुरु की उपमा अन्न से भी दी है। अन्न की भाँति गुरु भी संसार कपी छत के टिकने के लिए एक स्तम्भ है उनके प्रभाव में संसार की छत के बराबारी होने की सम्भावना है। इसी से संसार में गुरु का अस्तित्व होना ही चाहिये

बीन्ह ज्योति भी रूप गुसाईं, बीन्ह खाम बुद्ध जगत खँताई ।

हुहु खाम बैकि सब मही बुद्ध के मार सिद्धि बिर रही ।

(१६ १७)

यह बिंब जायसी की गुरु विषयक एक धात्वा का परिचय देता है। जायसी गुरु को ही शिष्य का सबत्व कहते हैं। जैसा गुरु चाहता है वैसा शिष्य करता है इस विचार को कवि ने काठ के बोड़े के माध्यम से बिया है। शिष्य काठ का बोड़ा है जो गुरु कपी आलक के संकेतों पर नाचता है

गुरु मोरे मोरें हित बीन्ह तुरंनहि ठाठ ।

भीतर करे ओलाई बाहर नाच काठ ।

(२४५ ८-९)

अनुकरण बृत्ति होने के कारण गुरु को जायसी बसुबा और शिष्य को मछली कहता है शिष्य सबैब गुरु का अनुकरण करता है

बैला परहिं न छाड़हिं पाए, बैला मँछ गुरु अस पाए ।

(२३८ ५)

गुरु का रूप बने के हृदय में सदैव विद्यमान रहता है बिम्ब की भाँति वह जम जाता है। जैसे कोई द्रव्य डेलने पर उसका रूप हृदय पर प्रकृत हो जाता है। उसी प्रकार बने के हृदय पर गुरु का रूप प्रकृत रहता है।

गुरु बने को धरने धनुष्य बना लेता है जैसे भूमि पतिते को भी पुकार करता सिखा देती है। इसी प्रकार गुरु बसभूषण शिष्य को भी ज्ञान सिखा देता है।

तब एक होइ रहा धरैसा गुरु बस भूमि फनिग बस लेता।
भूमि प्रौहि पौलहि वी सेई एकहि बार छुष जिज वेई।
ताकह गुरु करै बसि भया नथ धरतार वेइ नं क्या।

(१८२ १-७)

गुरु के प्रभाव में शिष्य मटकता है वही उसका भाग दानक है परन्तु शिष्य में कोई गुण न हो ऐसा नहीं है। जायसी शिष्य की पात्रता को भी स्वीकार करता है। गुरु शिष्य के हृदय में ईश्वर प्रप की चिन्तायी रख देता है पर उसको प्रवर्धित कर धर्मि रूप में ज्ञान देना तो बने पर ही निर्भर करता है। इसी कारण जायसी कहत है

गुरु बिरह चिन्तायी वी लेता, जो धुलगाइ लेइ ली लेता।

(१२२ ९)

इस प्रकार जायसी ने गुरु की ज्योति धीर मार्ग दर्शन के लिए शीपक बन्ध संसार में दृढ़ता के लिये लम्ब मार्ग दर्शन कराने के लिए नाबिक विद्येपत्न के लिए बसुने काठ के बोड़े के नासक धारि के रूपक दिए हैं जो जायसी की गुरु महत्ता को स्पष्ट करते हैं। इन बिम्बों से स्पष्ट है कि जायसी गुरु को साधना का परम धरमन्त्र जीवन का धर्तित्व बनाए रखने वाला जीवन को उर्ध्वगामी पथ की धोर ले जाने वाला जीवन के धम्भकार को प्रकाश देने वाला शिष्य को धात्मज्ञान कराने वाला धरने धनुष्य बना देने वाला माधते हैं। जायसी के बिम्ब उनके गुरु विषयक विचारों को पूर्णता से स्पष्ट करते हैं निम्नांकित मारिणी से उनके बिम्ब व विचारों को धार स्पष्टता से समझ पा सकता है

- | | | | |
|----|---------------|---|--|
| १— | बिम्ब
शीपक | धर्म्य धर
धम्भकार को दूर कर
प्रकाश (ज्ञान) प्रदान
करना। | निष्कर्ष
१ गुरु शिष्य के
धर्मात्मकार को
हटा कर धात्म
ज्योति देता है। |
| २— | नाबिक | संसार के समुद्र को पार
करा कर ईश्वर के पाध
दूसरे किनारे तक ले
जाता है। | २ गुरु संसार के
पाप पुष्पों को पार
कराकर शिष्य को
ईश्वर धरमना धात्मा |

१२०

१२१

होण्डर की स्तिरता व
कण्ठ का ध्वनित्व
है।

का ज्ञान करता
है।

ईश्वर की प्राप्ति
के माय अर्थात्
जीवन में साधना
का प्रबन्धन मुह
है।

१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९ १० ११ १२

अपने अनुसर दिव्य
को काउ के बोड़े का
बातें रख करता है।

दिव्य में बहु धारमा
रूप में स्थित रहता
है उरी के संकेतों
पर दिव्य बनता
है।

१ २

बल्लो को माय बर्तन
करता है।

जिस प्रकार मछली
कछुए का अनुसरण
करती है उरी
प्रकार दिव्य भी
मुह का करता है।

१—

१ २

पठितों (दिव्य) को
अपनी कृपा से स्व रूप
कर सेता है। अर्थात्
दिव्य को ज्ञान देता है।

दिव्य को धारम
ज्ञान मिला कर
अपने बीसा ज्ञानी
या साधक बना
२— ३.

है धन्यवा जीवन व्यर्थ है। यही विचार उपरोक्त छार की उपमा से व्यक्त किया गया है। प्रेम के लिये कामसी में दीपक का रूपक दिया है क्योंकि प्रेम जीवन का प्रकाश है। प्रेमी हृदय उस प्रकाश से निर्मल हो जाता है और सत्ता का समस्त रहस्य उसके सम्मुख एक शुद्धी पुस्तक की तरह प्रेम हो जाता है। प्रेम का दीपक ही संसार के अन्दरे रास्ते को उजला बनाता है। उसी के द्वारा मनुष्य ज्ञानी बनता है

जैसा दिया बस कर दिया उठी जोति भा निरमर हिया ।

माण्य हुत अंधियार असजा भा अंधोर सब जाना बुझा ।

(१२ = १)

परमात्मा का अस्तित्व होना ही प्रेम के अभाव से मानव उसके स्वरूप का आभास नहीं प्राप्त कर पाता। प्रेम ही हमको परमात्मा का ज्ञान कराता है दीपक का बिम्ब यही विचार प्रकट करता है। वस्तु का अस्तित्व होते हुए भी दीपक के प्रकाश के अभाव में हम उसे नहीं देख सकते और प्रकाश होते ही देखने लगते हैं यही बात प्रेम पर आरोपित है।

कामसी की मान्यता है कि प्रेम जीवन का ऐसा भाव है जिसके अभाव में सभी भाव बर जाते हैं। ईर्ष्या द्वेष आदि प्रेम के क्षेत्र में पम्पकित नहीं हो सकते। प्रेम जीवन की अपराधेय धर्मिता है इसके सम्मुख धन्य कोई भाव स्थिर नहीं रह सकता। प्रेम के इस एकलव्य साम्राज्य को कावली अमर वेस के रूपक से प्रस्तुत करते हैं, जो अपने आन किसी धन्य वेस को पमपने नहीं देती—

प्रीति बैलि कोई अमर बोई विन विन जाई जीन न होई ।

प्रीति अकेलि बैलि अइ जाया, दोसर बैलि न पसरै पाया ।

(२५४ ६-७)

प्रेम का भाव सय बैल की भांति है जिसमें फसकर व्यक्ति कभी मुक्त नहीं हो सकता

प्रीति बैलि अनु अबाई छोई, अबाई मुए न सूई सोई ।

प्रीति बैलि असे तनु बाड़ा पमुटल मुक बाड़त बुक बाड़ा ।

प्रीति बैलि अंय विरह अघारा तरम अतार अरै तैहि जारा ।

(२५४ ३५)

यहाँ प्रेम की अविद्या और विरह की अनिर्वास उपस्थिति भी व्यक्तित्व है प्रेम सहाय नहीं है वह कष्ट की साधना है।

कामसी प्रेम को अघार अबाह और पहाए पापते है जिसमें बुझकर निस्तार सम्भव नहीं। प्रेम को वह समुद्र कहते हैं जिसमें एक मात्र अबावाहन करके फिर पार पाना कठिन है

वेम अमुद को अत अबावाहा, बुई अगत न पाई बाहा ।

{ अत १२ }

			का ज्ञान कराता है।
१—	ब्रह्म	जीवन की स्थिरता व ससार का अक्षय्य है।	ईश्वर की प्राप्ति के माग अर्थात् जीवन में साधना का अक्षय्य गुरु है।
४—	काठ के बोड़े का नामक	अपने अनुसार सिष्य कपी काठ के बोड़े का मार्ग दर्शन कराता है।	सिष्य में वह आत्मा रूप में स्थित रहता है उसी के सकेतों पर सिष्य बसता है।
५—	कसुबा	मछली को मार्ग दर्शन कराता है।	बिना प्रकार मछली कसुए का अनुसरण करती है उसी प्रकार सिष्य भी गुरु का करता है।
६—	भूँगि	पतिव्री (सिष्य) को अपनी कृपा से स्व रूप कर सेता है। अर्थात् सिष्य को ज्ञान देता है।	सिष्य को धारम ज्ञान सिखा कर अपने वीसा ज्ञानी मा साधक बना सेता है।

(२) प्रेम और बियोग

प्रेम आयसी की काव्य साधना का मूल स्वर और प्राण तत्व है। प्रेम के अभाव में जीवन की कल्पना ही असम्भव है। प्रमहीन जीवन को कवि छार टाल कहता है—

मानस प्रेम भयङ्क हैकु ठी नहिं तो कहा छार एक मुठी।

(१६६ २)

आयसी के काव्य का सिद्धान्त वाक्य है। जीवन में प्रम और बियोग ही सबसे बड़ी उपसंधियाँ हैं। सभी मूर्खियों की भाँति आयसी भी प्रेम को परमावस्थक मानते हैं मूर्खी सिद्धान्तों से परिपक्व होकर उनकी कल्पना ने इसमें बड़ा विकास किया है।

विन्ध के माध्यम से उनकी प्रम बिययक माध्यताएं अनेक स्वतों पर प्रकट हुई हैं। उनकी दृष्टि में प्रेम ही वह तत्व है जो जीवन को स्वर्गिक धामन्य से भर देता

है अथवा जीवन स्वयं है। यही विचार उपरोक्त छार की उपमा से व्यक्त किया गया है। प्रेम के लिये जायसी ने दीपक का ब्यक्त किया है क्योंकि प्रेम जीवन का प्रकाश है। प्रमी हृदय उस प्रकार से निर्मल हो जाता है और अज्ञान का सम्पूर्ण रहस्य उससे सम्मुख एक क्षुभी पुस्तक की तरह अंग हो जाता है। प्रेम का दीपक ही संसार के अंधेरे अन्ते का उद्घाटन बनाता है। उसी के द्वारा मनुष्य ज्ञानी बनता है

मैला हिमा वेम कर दिया उठी खोति भा निरन्तर हिमा ।

भारम हुत अंबिवार धनुसा भा अंजोर सब जाता हुआ ।

(१० ८६)

परमात्मा का अस्तित्व हाथ हुए भी प्रेम के प्रभाव से मानव उसके स्वरूप का आभास नहीं प्राप्त कर पाता। प्रेम ही हमको परमात्मा का ज्ञान कराता है दीपक का विश्व यही विचार प्रकट करता है। बस्तु का अस्तित्व होने हुए भी दीपक के प्रकाश के प्रभाव में हम उसे नहीं टल सकत और प्रकाश होने ही पहले लपटे हैं यही बात प्रेम पर आरोपित है।

जायसी की भावना है कि प्रेम जीवन का ऐसा भाव है जिसके समस्त धर्म सभी नाश कर जाते हैं। हियों द्वय धारि प्रेम के क्षेत्र में पल्लवित नहीं हो सकत। प्रेम जीवन की अपराधैय शक्ति है उनसे सम्मुख अंग्य कोई भाव स्थिर नहीं रह सकता। प्रेम के हम एकछत्र साम्राज्य को जगत्सी अक्षर बेम के ब्यक्त से प्रस्तुत करते हैं, जो अपने साथ किसी अन्य बेम को मगलने नहीं देती—

प्रीति बैलि केई अम्बर बोई विम विम बाई धीन न होई ।

प्रीति अटेनि बैलि अइ छावा बोलर बैलि न परने पावा ।

(२४ १-७)

प्रेम का भाव उस बल की भाँति है जिसमें एककर स्थिति कभी मुक्त नहीं हो सकता

प्रीति बैलि अगु अरभे कोई अरभं मुए न छूटै लोई ।

प्रीति बैलि अंत तगु डाइया वनुहत सुख बाइत सुख बाइया ।

प्रीति बैलि संय विरह अघारा तरण फतार करै लेहि आरा ।

(२२४ ३२)

यहाँ प्रेम की असीमता और विरह की अनिर्वाह उपस्थिति भी व्यक्त है प्रेम सहज नहीं है वह कष्ट की साधना है।

कामसी प्रेम को अघार, अघार और सहारा मानने है जिसमें दुबकर निम्नार सम्भव नहीं। प्रेम को वह समुद्र कहन है जिसमें एक बार अचगाहल करके फिर पार पाना कठिन है

वेम तगु व को अत अचपाहा कुई अगत न पाई बाहर ।

(अंक १२)

बायसी प्रेम की साधना को सहज नहीं बरन कष्ट की साधना मानते हैं इसी लिए वह सहज सुखम नहीं है। बायसी के मत से जो जीवन में अपार कुछ घोर कष्ट सहते हैं वही प्रेम को प्राप्त कर सकते हैं। प्रेम को वह मधु सदस्य कहते हैं मधु को मधुमक्खियों के दस्तों का अपार कष्ट सहने पर ही पाया जा सकता है प्रेम भी इस प्रकार कष्टकारी साधना का परिणाम है। बायसी कहते हैं

बुझ भीतर जो प्रेम मधु राधा मंजल मरण सहे तो बाबा।

(१८ १)

बायसी के प्रेम के प्रतीक भ्रमर चातक शीपक की बालिका घोर पतिगा है जो निरंतर पीड़ा घोर व्यथा को ही प्रेम के नाम पर सहन करते हैं। शीपक की बालिका जो धूमि में निरंतर बसती रहती है भ्रमर वा रात्रि में कबस में बह होकर बांस तक कष्ट डालने की क्षमता रखत हुए भी कर्मल पत्रों को काट कर अपने को मुक्त नहीं कर पाता

भबर बाग पे कर्मल विरीली जहुं सह बिचा पैम की बीली।

(१४२ ४)

घोर शीप जो बस में रह कर भी स्वास्ति के एक बूद बल की धास में प्यासी रहती है—बायसी के प्रेम के उत्कृष्ट स्वरूप हैं। इन कर्मकों से प्रकट है कि बायसी प्रेम को भोग-बिलास नहीं बरन् साधना समझते हैं ऐसी साधना जिसमे प्रेमी प्रिय के लिए अपना तन-मन-सर्वस्व सब धपित करने की तत्पर रहता है। प्रेम की साधना सहज नहीं अत्यंत कठिन है। उनका प्रम बियोगा का ही दूसरा नाम है।

प्रेम के साथ-साथ प्रेमी घोर प्रिय के सम्बन्ध म भी बायसी की स्पष्ट मान्यताएं हैं जो कर्मकों में प्रकट हुई हैं। बायसी के मत से प्रेमी साधक का धारण कर्म है जो प्रिय क स्वरूप में स्वयं को मुक्त कर देता है। जो प्रम में अस्मयविस्तृत हो जाता है। बायसी प्रेमी को पानी कहते हैं जो जिस रंग में मिसता है उसी रंग का हो जाता है। प्रेमी भी अपनात्म को छोड़कर प्रिय के स्वरूप में ही विसीन हो जाता है।

जेहि प्रिय पैम पानि जा सोई जेहि रंग मिले तेहि रंग होई।

(२४३ ३)

प्रेमी प्रिय के संकेतों पर ही जीवन व्यतीत करता है सांसारिक प्रभावों से बह परे हो जाता है संसार के लिये वह बहुरा घोर संघा होता है। उसके हृदय में सदैव प्रिय विद्यमान रहता है इतनीति बायसी प्रेमी को नाठ का बोझ बताते हैं जो प्रिय के संकेतों पर ही चलता है।

प्रेम क लुब्ध बहिर घी संघा, नाथ कोइ जानहु सब संघा।

जानहु काठ नचावै कोई जो प्रिय नाथ न परमठ होई।

(२५७ २६)

प्रेम धपार हुए धीरे पीड़ा का स्वरूप है परन्तु प्रेमी को वह स्वर्ग-पाताम तक हम कर देने वाला बिम्ब कुछ कारक नहीं होता प्रेमी स्वयं भी धपार धारण कर ही घनुमुति करता है धीरे धीरे इसी पीड़ा से पीड़ित होना चाहता है। इसीलिए माग मती के लिए भाङ में भुनते बने का बिम्ब दिया गया है

सागेरु जरै जरै बल भाव फिर फिर भू बसि लखहि न बाक ।

(३५४ ९)

यह मान्यता बौद्धिक मन्त्रों की नहीं है बल्कि साधक मुष्ठी सवों की है। जो प्रेम की साधना करत हैं। धनेक कष्ट सह कर ही प्रेमी उम प्राप्ति कर सकता है उस कष्ट में भी वह धान्य की घनुमुति करता है। भाङ में भुनते बने क बिम्ब से इसी बात को स्पष्ट किया गया है। जायसी की मान्यता है कि प्रेम को साधना से वा सख्ये हैं सोम ने नहीं। सोम बिसास में लिप्त धसाठहीन का प्रेम साधक का प्रेम नहीं वा उसकी दृष्टि लोभी की वी उम प्रेम मुष्ण के लिए प्रेम कभी सुलभ नहीं धसाठहीन का पूष चरित्र हमको स्पष्ट करता है। प्रेम लोभी साह के लिए कवि ने प्यारे का उपमान दिया जिसमें प्रेम का धसठ रूप प्रकट हुआ है

प्रेम क लुबुध पयारे पाँऊ, बसे सोह ताकं कोमहाऊ ।

(३९७ २)

जायसी का प्रिय भी लोकिन नहीं बल्कि पलीकिन है। सभी मुष्णों की भाँति वह किसी पापिक रूप का प्रेमी न होकर धसीन्द्रिय धीरे धपारिब का प्रेमी है जिसके प्रकाश से सारा जग प्रकाशित हो जाता है धीरे जिसके बास स्रङ्गने से समस्त संसार में धँबेरा छा जाता है

बैनी छोरे छाय जो केता रंजि होइ जय डीपक सेछा ।

सिर होत सोहरि परई मुई बारा सगरै बैत होइ धँपियारा ।

(४७ १२)

प्रिय के साधककार हो जाम पर सर्वत्र उसका रूप ही बुद्धिमत् होता है उनके धामोक से ही प्रकाश धीरे धँपकार का धस्तित्व है।

निष्कर्म रूप में जामरी का प्रेम विषयक दृष्टिकोण साधनारमक है। प्रेम का

बहु जीवन के लिए पतिकाम मागते हैं। प्रेम बिहीन मानव जनकी दृष्टि में एक मुट्ठी बूत से धबिक कुछ नहीं है। परन्तु यह प्रेम सहज सुलभ नहीं है बल्कि मनु की भाँति धसर्पत कष्ट सहने के पश्चात् इसकी प्राप्ति होती है। इसीलिए विषेण प्रेम का एक धावश्यक तत्व है। बहा प्रेम का साधनारमक दृष्टिकोण को स्पष्ट करते हैं। प्रेमी धीरे नहीं छूटा। धसर बैत के रूपक से यही भाव ध्वनित है। समष्टि में जामरी के बिम्ब प्रेम विषय उसके उदात्त धीरे साधनारमक दृष्टिकोण को स्पष्ट करते हैं। प्रेमी धीरे प्रिय की मान्यताएँ भी बिम्बों में प्रकट हुई हैं। उनका प्रेमी साधक का स्वरूप है धीरे प्रिय स्वयं ईश्वर का। निम्नांकित सारिबी द्वारा उनके प्रेम विषयक विचारों का स्पष्टीकरण किया जायवा

विद्य	व्यंग्यार्थ	नित्यार्थ
१—दीपक	जीवन को प्रकाशित करता है और अपने घासोक से परमात्म जान कराता है।	प्रेम जीवन के घबरे को दूर कर ज्ञान का प्रकाश देता है और इस प्रकाश में ईश्वर की प्राप्ति कराता है।
२—घमर बेस	एकछत्र साम्राज्य रखती है धन्य भावों को पनपने नहीं देती।	प्रेम अपने से विसंग किसी भाव को सम्पन्न नहीं होने देता सबैव धकसा ही विस्तार प्राप्त करता है।
३—बेत	व्यक्ति को अपने में फंसा लेती है उससे मुक्त होना असम्भव है।	प्रेम में व्यक्ति अपनेतरफ की ओर बैठा है प्रेम से विसंग नहीं रह सकता बरन् अधिकधिक फसता जाता है।
४—समुद्र	अत्यन्त गहरा और विद्याम होता है।	प्रेम अत्यन्त गहन विस्तारमय एवं घाँठ होता है वह अधीम है।
५—मधु	अत्यन्त कष्ट साम्य व अतीव मधुर भी है।	प्रेम यद्यपि मधुर है पर सहज सुखम नहीं है वह कष्ट की सामना है।
६—पानी	सहज ही अपनेतरफ को विस्मृत कर बैठा है दूसरे रंग का हो जाता है।	प्रेमी ध्यात्म विस्मृत हो प्रिय के स्वरूप में लीन हो जाता है।
७—काठ का मोड़ा	बुलाने के मकितों पर बनता है अपना अस्तित्व नहीं होता।	प्रेमी प्रिय की इच्छा अनिच्छा पर अपना अपनेतरफ भूल कर निरर रहता है।
८—प्यावा	घातरेज का एक मोहरा जो सीसा बनता पर बापे बापे मारता है	प्रेम सोभी अस्त स्वल्प है छल पूर्ण है।
९—ज्योति	अपने आप में अन्त प्रकाश की घोरक है संसार उसमें ही प्रकाशित है।	प्रिय ज्योति नय अर्थात् परमात्म रूप है वह अन्त और अन्त का अंत है।

(३) संसार

संसार विषयक उनका दृष्टिकोण प्राय विन्धों के माध्यम से ही प्रकट हुआ है। संसार के प्रति उनका दृष्टिकोण प्रतिविम्बवादियों से मिलता जुलता है। साधनपूरा और अज्ञानता के कारण वह संसार को अज्ञान मानते हैं। कबीर की भाँति वह

जीवन को बुलबुला मानते हैं जो क्षण भर के अस्तित्व के बाद विसीन हो जाते हैं हर क्षण एक बुलबुला भावा है एक भाषा है

पानी में छल बुल्ला तब यह जग उतराई ।
एकहि भावत बेकिध, एक है जग विताई ।

(अष्ट १२)

क्षय ममुरता की व्यंजना के लिए एक अन्य बिम्ब भी प्राया है वह है खूंट की बरिया का । जीवन खूंट की बरिया है या एक क्षण पानी से भर कर घाटी है डूमेरे जल क्षामी हीटी है । पानी भरी बरिया का एक क्षण एक जीवन है जो डूमेरे ही क्षण पत को प्राप्त हो जाता है

महुम्मद जीवन जल भरत खूंट घरी को रीति ।
घरी तो घाई ज्यों भरी डरी जलम या नीति ।

(४० ८६)

बायली की मान्यता है कि जीवन अजित मुक्त का नाम है जीवन में तिल होकर मानव मुक्त भोग करता है पर वह अजित है, अतः सबका एक ही है । इस कारण जीवन स्वप्नवत् है । स्वप्न में कल्पना का मुक्त समार अजित होता है स्वप्न के समाप्त होत ही मनुष्य फिर पर्यार्थ के कष्ट संसार में धा जाता है । इस प्रकार अजित मुक्त प्रदान करने वाला यह संसार भी स्वप्न ही है

बहु संसार लपन कर लेखा विपूरि मये जालहु नहि देखा ।

(१३२ ३)

अन्यत्र भी कहा गया है

यहु संसार लपन कर लेखा, माणत बदन नैन भरि देखा ।

(भा ११)

जीवन की अजितता का प्रतिपादन कवि न कुम्हार के सिद्धी के बर्तन के बिम्ब से किया है । समार का निर्माता ईश्वर कुम्हार है, जो मनुष्य रुपी बर्तनों का निर्माण करता है । कभी सिद्धी के ये बर्तन क्षण भर अपना अस्तित्व रक्त कर कभी भी समाप्त हो सकते हैं । अक्षराक्षर में कवि कहता है

भाँडी कर लन भाँडा, भाँडी मेंहु लब खँड ।

के केउ केरुं जादि मेंहु भाँडी प्रेम प्रखँड ।

(अष्ट २१)

४

अत क्षाम है सब मेंहु को लब भाँडहि सोड ।

होँ कोहार कर भाँडी जो बाहे तो होड ।

(अष्ट १७)

सिद्धी के बर्तन की यह कल्पना परमावृत्त में भी मनुष्यों के लिए धारि है । कवि अपनी अजितता का स्मरण करत कर उन्हें जाहृत होने के लिए कहता है । समार

के मस्वर स्वस्म ने कवि को सर्वाधिक उद्देसित किया है उसने स्वस स्वस पर कुलकुले बरिया मिट्टी के बर्तन धादि से इस क्षणिकता को रूप दिया है।

कवि की माय्यता है कि कल्पनी मिट्टी के इन पात्रों में विधि ने पदार्य भी भिन्न भिन्न भरे हैं। संसार में सभी मानव एव ईश्वर का निर्माण होकर भी एक समान नहीं है। प्रत्येक में कुछ गुण सबगुण बेबल्य बानबल्य है यह प्रभुत्विया भी ईश्वर का निर्माण है वस्तुतः विधि ने ही उन्हें अलग अलग प्रकार से निर्मित किया है

तस देखा मैं यह संसार जस सब मांडा बड़ कोहार।

कहुं मांस खाइ जरि धरई कहुं मांस जो मोबर भरई।

(अक्ष ४८)

यहाँ विन्म द्वारा जीवन की विविधता ध्वनित है।

कवि की माय्यता है कि संसार का रचियता ईश्वर है और उसके प्रत्येक निर्माण में निर्माता का प्रतिबिम्ब पड़ता है। प्राणी मात्र में भेद के बीच एक नहीं अन्वेष तत्त्व है। प्रत्येक हृदय वर्णन है जिसमें एक सत्ता का प्रतिबिम्ब दिखाई देता है

जस बरपन मंह बरसान देखा क्षिप गिरमल सिंह मंह जन देखा।

(अक्ष १५)

इसी विचार को प्रकट करने के लिए कवि ने बृष में निहित भी समुद्र में छिपे रत्न धादि के उपमान दिये हैं

बृष मांडा जस बीरु है समुद्र मांडु जस मोति।

नेन मीज जो देखाऊ, जमकि उठै तसि मोति।

(अक्ष १३)

समष्टि में आयसी के उपमान उसकी माय्यताओं को स्पष्टता से प्रतिपादित करण है। संसार की क्षणिकता स्वप्नवत् सुख उनको धार्मिक प्रभावित करते हैं संसार के प्रति उनका दृष्टिकोण धाम्पारिमक है। प्रतिबिम्बवादियों की भांति यह संसार को ईश्वर का स्वरूप मानते हैं। ईश्वर अपने हर निर्माण में निहित है हिरण्यमय पात्र से उसका मुख इका हुआ है पर फिर भी उसका धामास होता है। संसार का प्रत्येक कण उसकी प्रकट करता है जैसे धनक वर्षणों में एक ही वस्तु का प्रतिबिम्ब पड़ रहा हो। परन्तु संसार में ईश्वर का यह बिंब सर्वत्र एक सा नहीं पड़ता। कहीं वानवी प्रभुत्विया उभरती हैं तो कहीं मानवी। यह अंतर स्वयं विधि ने उत्पन्न किया है पात्रों की पात्रता के अनुसार उन्हें भिन्न भिन्न बनाया गया है। स्पष्ट है कि कवि जीवन की क्षणिक और अस्थाय मानता है, संसार में ईश्वर सर्वोपरि और सर्वत्र व्याप्त है उससे ही जीवन मतिधीन है।

विश्व

व्यप्यार्थ

निष्कर्म

१ कुलकुला

क्षणिक अस्तित्व रखता है
पल-पल में घाटा-जाता है।

संसार क्षणभंगुर है एक पल
का जीवन है। एक क्षण ब्रह्म
पीद बूझते जान बरप्य।

२ परिव्या	एक पल में बसपूर्ण होकर दूसरे पल खाली हो जाती है।	संसार क्षणिक है। जीवन अस्तित्व कुछ पलों का ही है।
३ स्वप्न	अधिक मुक्त होता है और प्रसन्न है।	संसार क्षणिकमुक्त होता है और प्रसन्न है छत नहीं है।
४ मिट्टी का बर्तन	कुम्हार गड़ कर मलमाले रूप में बानता है और कभी भी टूट सकते हैं।	संसार में विविधता है कुम्हार गुण, वैश्व दानवत्व धर्म है वह क्षणिक भी है, कभी भी जीवन समाप्त हो सकता है।
५ दर्शन	दर्शन अन्य वस्तु को प्रति विवक्षित करता है।	संसार में इस एक निर्मिता का रूप झलकता है। वह संसार में सर्वव्यापी है।
६ दूध	पी दूध में घटस्थ रूप से छिपा रहता है।	संसार में वह घट्ट है पर उभरी छता है अक्षय।
७ समुद्र (४) ईश्वर	समुद्र में पल छिपे रहते हैं।	ब्रह्म संसार में अक्षय है।

आपसी के ईश्वर विषयक विचार भी इनक बिम्बों के माध्यम से प्रकट हुए हैं। आपसी ने सभी चतुर्विधियों एवं शार्दणिकों की भांति ब्रह्म को ज्योति रूप माना है उसको बीपक के बिन्न द्वारा प्रस्तुत किया है जिससे संसार का ध्वंस प्रकाश में परिवर्तित हो जाता है।

कीर्ति पुरुष एक निर्द्वारा तब महम्मद पुनिब करा।
 प्रथम ज्योति बिधि तेहि के साथी जो तिहु विरीत सिद्ध अपराजी।
 बीपक तेति अग्रत यह बीभू ना निरमल अग माग्य बीभू।
 जो न होत अक्ष पुरुष अत्रिपारा, तूत न परत पंच अत्रिपारा।
 (११ १४)

अन्य भी बीपक के प्रकाश से इस ब्रह्म की ज्योति का आवास करमा गया है। सबदावट में कवि कहता है

तब भा पुनि अक्षूर तिरवा बीपक निरमला।
 रवा महुम्मद बुर अवत रहा अत्रिपार होइ।

(अक्ष २)

ब्रह्म ज्योति रूप है उसके कारण ही संसार प्रकाशमान है। ब्रह्म की ज्योति के प्रभाव में सम्भव संसार अक्षकारण ही रहता है जैसी में जो ज्योति धाई है वह भी उसी के कारण है। आपसी उसे विज्ञानी की रोशनी के समान मानते हैं जो अक्षकार में कवि कर वस्तु का दर्शन कर जाती है, ईश्वर भी अपने प्रकाश से संसार का आन करता है।

के लक्षण स्वरूप ने कवि को सर्वाधिक उद्देधित किया है उसने स्वतः स्वतः पर बुनबुने, धरिया मिट्टी के बर्तन धारि से इस अविद्यता को रूप दिया है।

कवि की मायता है कि कच्ची मिट्टी के इन पाशों में विधि ने पवारं भी मिन्न मिन्न भरे हैं। संसार मे सभी मानव एक ईश्वर का निर्माण होकर भी एक समान नहीं है। प्रत्येक में कुछ गुण अथवा गुण देवत्व मानवत्व है वह प्रकृतियों भी ईश्वर का निर्माण है वस्तुतः विधि ने ही उन्हें अलग अलग प्रकार से निर्मित किया है

तस देखा में यह संसार जत सब मांजा बड़ कौहर।

कहू मांस जाँव भरि बरई कहू मांस जो मोर भरई।

(अक्ष ४८)

यहाँ विन्म द्वारा जीवन की विविधता व्यक्तित है।

कवि की मायता है कि संसार का रचिवता ईश्वर है और उसके प्रत्येक निर्माण में निर्माता का प्रतिबिम्ब पड़ता है। प्राणी मात्र म भेव के बीच एक वही अन्धेव तत्व है। प्रत्येक हृदय दर्पण है जिसमें एक सत्ता का प्रतिबिम्ब दिखाई देता है

जस बरपन मंह बरसन देखा हिम निरमस तेहि मह जग देखा।

(अक्ष १५)

इसी विचार को प्रकट करने के लिए कवि ने ब्रूच में निहित भी समुद्र में छिपे रत्न धारि के उपमान दिये हैं

ब्रूच मांजा जत बीऊ है समुद्र मांह जत मोति।

मैन मीज जो देखाऊ, जमकि उठी तति जोति।

(अक्ष १५)

समष्टि में आत्मसी के उपमान उसकी मायताओं को स्पष्टता से प्रतिपादित करते हैं। संसार की अविद्यता स्वप्नवत सुख उनका अविद्य प्रभावित करते हैं संसार के प्रति उनका दृष्टिकोण आध्यात्मिक है। प्रतिबिम्बादियों की भाँति वह संसार को ईश्वर का स्वरूप मानत है। ईश्वर अपने हर निर्माण में निहित है हिरण्यमय पात्र से उसका मुख उका हुआ है पर फिर भी उसका आभास होता है। संसार का प्रत्येक कण उसको प्रकट करता है जैसे अनेक दर्पणों में एक ही वस्तु का प्रतिबिम्ब पड़ रहा हो। परन्तु संसार में ईश्वर का यह बिम्ब सर्वत्र एक सा नहीं पड़ता। कही मानवी प्रकृतियाँ उभरती हैं तो कहीं मानवी। यह अन्तर स्वयं विधि ने अल्पत किया है, पाशों की पावता के अनुसार उन्हें मिन्न मिन्न बनाया गया है। स्पष्ट है कि कवि जीवन को दार्शनिक और असत् मानता है, संसार में ईश्वर सर्वोपरि और सर्वत्र व्याप्त है इससे ही जीवन यतिधीन है।

विधि

व्याख्या

निष्कर्ष

१ बुनबुना

दार्शनिक दृष्टिकोण रत्नवा है, पम-पल में धाता-जाता है।

संसार अणुमणु है एक पल का जीवन है। एक अणु अणु पीछे बूझते अणु मरण।

१ बरिया	एक पल में बसपूर्व होकर दूसरे पल खाली हो जाती है।	संसार क्षणिक है। जीवन प्रतिफल कुछ पलों का ही है।
२ स्वप्न	वह एक मुख देता है और प्रसन्न है।	संसार क्षणिकमुख देता है और प्रसन्न है सत नहीं है।
४ मिट्टी का बर्तन	कुम्हार यह कर भगमाने रूप में कामता है और कभी भी टूट सकते हैं।	संसार में बिबिधता है गुण प्रबन्ध देखते जानकर सब है वह क्षणिक भी है, कभी भी जीवन समाप्त हो सकता है।
५ वर्षण	वर्षण धन्य वस्तु को प्रति बिबध करता है।	संसार में सब एक निर्माता का रूप भक्तकता है। वह संसार में सर्वभ्यापी है।
६ दूध	भी दूध में घट्टय रूप से छिपा रहता है।	संसार में वह घट्टय है पर उसकी सत्ता है प्रबन्ध।
७ समुद्र	समुद्र में रत्न छिपे रहते हैं।	बड़ा संसार में प्रदूय है।

(४) ईश्वर

जायसी के ईश्वर विषयक विचार भी उनके विन्धों के माध्यम से प्रकट हुए हैं। जायसी ने सभी धर्मग्रन्थों एवं वाचनिकों की भाँति ब्रह्म की ज्योति रूप माना है, उसको बीपक के विद्य द्वारा प्रस्तुत किया है जिससे संसार का अंधेरा प्रकाश में परिवर्तित हो जाता है

बीपकै पुष्य एक निरमरा नाँव महम्मद पुनिब कर।

प्रथम ज्योति बिबि लेहि के साबी धो तिन्ह पिरित तिरख उपराबी।

बीपक लेति जात कह बीन्हा ना निरमल जय नारय बीन्हा।

जो न हुमेत अठ पुष्य ज़िबारा, तुस न परत बंय ज़िबारा।

(११ १४)

अन्ध भी बीपक के प्रकाश से उस ब्रह्म की ज्योति का आभास करपा यमा है। प्रकाश में कवि कहता है

तब ना पुनि प्रभूर तिरखा बीपक निरमला।

रबा महम्मद भूर, जयत रहा ज़िबारा होइ।

(धन २)

बड़ा ज्योति रूप है उसके कारण ही संसार प्रकाशमान है। ब्रह्म की ज्योति के आभास में सम्भवतः संसार अन्धकारमय ही रहता है नेत्रों में ना ज्योति धाई है वह भी उसी के कारण है। जायसी उसे बिबिभी की रोशनी के सदृश्य मानते हैं ना अन्धकार में जीव कर वस्तु का वर्णन कर जाती है ईश्वर भी अपने प्रकाश से अन्धकार का ज्ञान कराता है

बा बिनु बिन्दु तन बस बंभियारा, जो नहि होत नयन उभियारा ।
उही बोति नैनन्हु मंह बाबं बमक उठै बस बीनु रिखावै ।
(पद्य २९)

कवि कहता है कि बाबं मूर्ख रात्रि बिबस प्राप्त संप्या—सब उसके हृदय
बिषय बाबरन-निद्रा आदि के स्वल्प है

बाबं सुक्य हुनौ सुर बसहि, सेत मिलार नबत मिलमिलहि ।
बागत बिन निसि सौबत मध्या हरक नीर बिसम्य होइ सासा ।
(पद्य ३०)

बामसी की मान्यता है कि संसार के प्रत्येक कण में उस अनन्त ब्रह्म का
अस्तित्व है परन्तु वह भीतिव संसार में प्रत्यक्ष नहीं है उसका रूप स्मृत नहीं बरन
सूक्ष्म है । वह बुद्धिगत नहीं होता पर उनको अनुभूत किया जा सकता है । कवि इस
बिचार को प्रतिपादित करने के लिए पुनः की मय का उपमा देता है जो प्रबुद्ध है
सूक्ष्म है साथ ही आभासित भी होती है

बस तन तस मह परती बस मन तैत अकास ।
परम हंस तेहि मानस बँत पूस मह बास ।
(पद्य ३४)

ब्रह्म अदृश्य होने के कारण कभी मानव के छोटे हाथों के समीप नहीं रहता ।
उसका आभास होता है पर उसे प्राप्त नहीं किया जा सकता । इसके लिए भी कवि
पुनः मय की उपमा देता है जो परमात्मा की अदृश्यता और सूक्ष्मता को प्रकट
करती है

पुष्टप बास बस हिरबप रहा नैन भरि पुरि ।
नीयर ते सुठि नीयरे, मोहट ते सुठि बुरि ।
(पद्य ४१)

संसार में सर्वत्र उसकी सत्ता व्याप्त है पर वह प्रकट नहीं है । उसका अस्तित्व
प्रत्येक पदार्थ में निहित है उसी प्रकार जिस प्रकार बूझ में भी और काठ में अग्नि ।
महाँ उसकी अनिर्वाय सत्ता और अप्रत्यक्ष रूप ध्वनित है :

सुमहि मंह मन इन बस काया में जोऊ ।
काठी पास अयि बस बूझ पास बस बीऊ ।
(पद्य ३०)

ईश्वर का रूप संसार में नामा रूपों में भासित होता है जीवन का समस्त
व्यापार उसी के संकेतों पर चलता है । बामसी ने ईश्वर के इस कर्ता रूप को
प्रदर्शित करने के लिए बड़ा व्यंजन बिम्ब दिया है । वह संसार और ब्रह्म का मय और
उसकी परछाही के द्वारा प्रस्तुत करता है

ये सब किछु करता तिसु नहीं ।
 जैसे जैसे मेघ बरछाहीं ।

(अक्ष १)

मेघ की परछाही मेघ का अनुसरण करती है । वह मतिमान प्रतीत होती है पर उसकी मति का कारण मेघ है उसके अस्तित्व में स्वयं यह विशेषता नहीं है । इसी प्रकार सृष्टि का प्रत्येक कण मतिशील मानित होता है पर उसकी मति उसके अपने अस्तित्व के कारण नहीं है बल्कि ब्रह्म के कारण है, वही सब कर्मों का कर्ता है । इस बिम्ब में ईश्वर का कर्ता रूप बड़ी स्पष्टता से प्रकट हुआ है ।

असृष्टि में वह बिम्ब जागती के ईश्वर विषयक मात्पठार्था को स्पष्टता से प्रदर्शित कर देते हैं । ईश्वर का अनुपम प्रकाश अनोखरता सर्वव्यापी रूप सृष्टि के प्रत्येक कर्म में कर्ता रूप आदि समस्त विचार कवि ने बिम्बों द्वारा स्पष्ट किये हैं । निम्नांकित चारिणी से यह बात धीरे धीरे स्पष्ट हो सकती है

बिम्ब	व्यंग्याय	निदर्शय
१—दीपक	संसार के संभकार को दूर कर प्रकाश देता है उस प्रकाश से व्यक्ति निर्मल होता है ।	ईश्वर प्रकाश स्वरूप है उसकी कृपा से व्यक्ति आत्मज्ञान प्राप्त करता है जीवन का संभकार दूर करता है ।
२—प्रकाश	संभकार को दूर कर अंधार्य भवस्था धर्मांत सत्य का दर्शन कराता है ।	ईश्वर अस्त भजान भावि को दूर करके व्यक्ति को आत्मज्ञान सत्य भावि का रूप दिखाता है ।
३—पुष्पबंध	नामकीय सूत्रम अमरत्वस्य प्रवृष्ट होती है पर मोक्षर है अनुकूलि की जा सकती है ।	ईश्वर अदृश्य अमरत्वस्य धीरे सुदम है । यद्यपि यह अक्षय है परन्तु सृष्टि के कण कण से उसका आभास मिलता है ।
४—धामि	काठ में धामि अदृश्य रहती है । पर उसका अस्तित्व है अक्षय ।	ईश्वर सृष्टि के कण कण में व्याप्त है वह दृष्टिगत नहीं होता है पर उसका अस्तित्व कण कण में निहित है ।
५—बी	दूध में बी निहित है । पर दृष्टिगत नहीं होता ।	ईश्वर सर्वव्यापी है उसका रूप छिपा रहता है ।

६—मेघ

मेघ आकाश में चलता है पर
उसकी परछाही जल पर
पड़ती है। मेघ से ही उसकी
परछाही है।

ईश्वर से ही जीव का
अस्तित्व है उसी के इशारे
पर मनुष्य चलता है वही
सबका कर्ता है।

(५) जाव

जायसी के जीव सबकी विचार मुख्यतः अज्ञानता में प्रकट हुए हैं। पशुपति में
क्या संकृतता के कारण उतना प्रकाश नहीं था पर अज्ञानता मुख्यतः उनके दर्शन की
ही अतिशक्ति है। पशुपति में प्रेमी जीव और प्रिय ईश्वर का स्थापना है वहाँ जीव
विषयक मान्यताएँ प्रकाश रूप में प्रेमी तरंग को स्पष्ट करती हैं, जीव और ईश्वर के
सम्बन्धों पर भी उनसे सम्बन्ध प्रकाश पड़ता है। प्रेमी विषयक मान्यताओं की पिछले
पृष्ठों में विस्तृत चर्चा हो चुकी है वही सम्बन्ध जो प्रेमी और प्रिय का है जीव और
इश्वर का भी माना जा सकता है। अब पुनः उस की चर्चा यहाँ प्रभावशाली है। यहाँ
उससे इतर विचारों को बेजा जायता।

जायसी सृष्टि के प्रत्येक तरंग में ईश्वर का निवास मानता है यद्यपि जीव और
इश्वर अलग नहीं हैं पर जीव में इश्वर का आभास सर्वत्र मिलता रहता है। पुण्य पंथ
काठ में छिपी अग्नि शक्ति की उपमाएँ जीव में स्थित इश्वर की प्रतीकता एक वायवी
पता की ही ध्वजता करती हैं। जीव में प्रकट इश्वर इश्वर का वह अन्य उप
मानों से भी स्पष्ट करते हैं। वह कहते हैं कि बूझ में समुद्र के समान प्रत्येक पंथ में
अपना सृष्टि के प्रत्येक कण में वह महाशक्ति निहित है। जीव पानी की एक वृक्ष है
जिसमें सागर के तरंग हैं जो सागर की समता रखती हैं।

बूझ में समुद्र समान यह अज्ञानता कातो कहों।

जो हेरा सो हरान मनुमन आधुनि प्राय मेह।

(पद्य ७)

संसार में जीव का अपनी सत्ता प्रकट करने के लिए शरीर रूपी आवरण की
आवश्यकता होती है। जायसी कहते हैं कि यह शरीर एक सराय के समान है जिसमें
आत्मप्रकाश या इश्वर प्रकाश फैला रहता है। परन्तु पार्थिव शरीर को शरीर मृत्यु का
मय रहता है अभी भी मृत्यु का एक भोका भाकर इश्वर प्रकाश के दीप को बुझ सकता
है और सराय फिर अंधेरी हो सकती है।

तन सराय मन जानहु दिया धसु तेल बम बसती दिया।

दीपक मेह बिबि जोति समानी आधुनि बरि बाल मिरवानी।

निघटे तन भूरि गई जाती या दीपक बुझि अंधियार रसती।

(पद्य १३)

आधु समाप्त हो जाने अज्ञान मानव शरीर के इश्वर प्रकाश के अभाव में निर्जीव
हो जाने का भाव सराय के इस विन्म में बड़ी स्पष्टता से प्रकट हुआ है। जीव की

स्थिति बड़ा का स्थान धारि सभी विचार इसमें प्रत्यक्ष हो उठे हैं। जायसी बड़ा को जीव में प्रबल रूप से स्वीकार करते हैं इसलिए जीव की स्थिति को निरूप मानते हैं परन्तु जीव को अभिव्यक्ति देने वाला पिछ उनकी दृष्टि से अनित्य है। स्पष्ट है कि जायसी के जीव कपी विचारों में उसकी नित्यता परमात्मा के प्रथम रूप होने की भावना परमात्मा में विलीन हो जाने की भावना प्रधान है जिन्हें सराय पानी की बूँद धारि क रूपों द्वारा व्यक्त किया गया है।

बिम्ब

व्यप्याय

निष्कर्ष

१—पानी की बूँद

पानी की बूँद समुद्र से बिलग होत हुए भी उठी का एक प्रथम है उठी में समा जाती है।

जीव का अस्तित्व यद्यपि निरग्न है पर वह बड़ा का एक प्रथम है धीरे धीरे में उठी में लीन हो जाता है।

२—सराय

धरीर कपी सराय में जीव कपी दीपक बड़ा प्रकाश बतता है, समय क अन्त से दीपक बुझ जाता है, धरीर

जीव में धरीर का अस्तित्व है पर धरीर की तरह वह अनित्य नहीं है। समय क साथ धरीर समाप्त हो जाता है पर जीव अपने उठी धरत रूप में जाकर मिस जाता है समाप्त नहीं होता। जीव अन्ततः परमात्मा का ही एक प्रथम है।

निर्जीव हो जाता है धीरे धीरे बड़ा में प्रकृत दीपक की ज्योति परम ज्योति में विलीन हो जाती है।

(६) दान

जायसी दान को अत्यन्त भावस्पक समझते हैं। दान सम्बन्धी मायताभा का भी बिम्ब क माध्यम से स्पष्ट अभ्ययन किया जा सकता है। पद्यावत में लीन स्थलों पर दान की महिमा का वर्णन है। पञ्चरात्रत धीरे धारिणी कला में ऐसा कोई प्रसंग ही नहीं पाया है।

दान को जायसी जीवन का सार मानते हैं। पारिव धरीर से मनुष्य दान जैसा अपाबिध कर करता है जो कभी भी नष्ट नहीं होता। व्यक्ति क समाप्त हो जाने पर भी उसके दान क कारण उसकी कीर्ति बनी रहती है। इस रूप में वह दान को जीवन का कपूर कहते हैं जिसकी गन्ध परदाय के समाप्त हो जाने पर भी विद्यमान रहती है। दान कीर्ति कभी क्षय को प्राप्त नहीं होती

बरबहि दान वैद बिधि कइ दान मोख होइ सोल न रहा।
दान प्राहि तब बरक कबूच दान नाम होइ बाबि भूब।

(३८७ ३४)

दान ही जीवन को ज्योतिष करवाता है। दीपक की भाँति वह संसार माय को प्रकाशित करता है, जिससे जीवन माना सहज हो जाती है। वहाँ धरीर कपी इह में

दान का बीपक नहीं प्रकृतित हाथा वही पाप और धर्मपद के चोर गृह के जन को चुरा ले जाते हैं।

दिया करे घाते उद्विगारा जहाँ न दिया तहाँ उद्विगारा ।

दिया मरिज निसि करे घमोरा दिया नाहि घर सुसहि चोरा ।

(१८५ २९)

दान के इस बीपक से ही जीवन का पथ धालोकिट है धन्यवा सर्वत्र धर्मकार छा जाता है। रत्नसंन की दान वृत्ति न होने से कवि ने उसके पथ में घाभी और दुष्पन्न का उल्लेख किया है। दान के बीपक के बुझ जाने पर कवि कहता है—

दिया घुस सत न रहा हुत निरमल लेहि रूप ।

बहु घाभी उड़ि घाइ क मारि किया घंभरूप ।

(१८५ ८२)

दान का बीपक ही रूप को उरग्वमता और प्रकाश प्रदान करता है। यहाँ बीपक के बिम्ब द्वारा कवि की दान विषयक मायताएँ प्रकट हुई हैं बीपक का प्रकाश जितना घाबपयक और जितना लाभकारी है दान भी उतना ही अनिचार्य व लाभदायक है। बीपक के बुझ जाने पर छा जाने वाला धर्मकार पाप और दुष्टियों के धर्मकार प्रकृत घमान को प्रकट करता है। निम्न तारिखी से इन बिम्बों के संदर्भ में बिम्बों की सम्यक विवेचना हो जाती है

बिम्ब	व्यप्यार्थ	निष्कर्ष
१—कपूर	पदार्थ के लय हो जाने पर भी सुगन्ध बनी रहती है सुगन्ध धराय्य और धरर है।	दान जीवन का सुगन्धि तत्व है जीवन समाप्त हो जाने पर भी दान की कीर्ति व्यक्ति को धरर बना देती है।
२—बीपक	बीपक संसार के धर्मकार को दूर कर प्रकाशमान बनाता है।	दान प्रकृत वृत्तियों को दूर करता है और उदात्त भावों से जीवन को पूरित कर देता है।

(७) द्रव्य

द्रव्य धर्मका घन संबंधी मायताप्रा की अभिव्यक्ति भी जायसी के बिम्बों द्वारा ही हुई है। धर्मराज और धार्मिक कलात्म में द्रव्य की कहीं कहीं नहीं है पद्मावत के कथा संग्रह कही कही कवि ने द्रव्य विषयक बिम्बों को प्रस्तुत किया है।

जायसी जीवन पापन करने के लिए द्रव्य को प्रकृत घाबपयक समझता है। द्रव्य के न होने पर प्रत्यक्ष अदृष्ट गुण भी संसार में उपेक्षणीय समझा जाता है। द्रव्य की अकारणता से मणि रत्नों के बीच पड़ चुकी सुन को संसार उपेक्षणीय समझ रहा था। जायसी ने द्रव्य के कारण गुण की उपेक्षा गुणों के प्रलय में प्रतिपादित की है। गुणों को बहु महार का पर्वना कहते हैं जो यों तो मन्दर तिलसी का कैंटर पिपर होता है पर बुझपता के कारण उपेक्षित होता है गुणी गुणा भी बाहरी अकारणता में उपे

सिद्ध समझ गया है

जैसे साय हूट लें छोड़ी मोल रहम मानिक बहु होई ;

सुधा को पूंटे पतिय मसारे, जलन बेज घाटे मम मारे ।

(७६ २३)

इस तरह स्पष्ट है कि जीवन को घण्टी प्रकार जीने के लिए इच्छा आवश्यक है। जाबसी इच्छा को व्यक्ति को बाह्य विवेकता धारणक रूप सज्जा समझते हैं। यह बाह्य सौन्दर्य समाप्त है जाने पर व्यक्ति उसी प्रकार निरुद्ध और भद्रा प्रतीत होता है जितना पतियों मड़ जाने पर परतम बृद्ध

साठे रहू सुधीनता निसठै धायरि भूख ।

बिनु गब पुदक पर्ये ज्यो टाङ्क टाङ्क वी सुख ।

(४२० ८६)

परतम बृद्ध का समाप्त सौन्दर्य उसकी पतियों में निहित होता है। उनके मड़ जाने पर वह एक दृढ़ मान रह जाता है जो भद्रा और उपेक्षणीय होता है। इच्छा से रहित व्यक्ति भी इस मड़ और उपेक्षणीय दृढ़ की भाँति होता है। व्यक्ति का बाह्य सौन्दर्य कम ही है।

जाबसी जीवन यापन के लिए मन का आवश्यक हो मानते हैं पर व्यक्ति की सत्ता मन से ऊँची न उठे वह उन्हें स्वीकार नहीं है। वह मन के उपयोग को उचित नसते हैं पर उससे धाम भी जीवन के विकास का मानते हैं जिससे लिए इच्छा को छोड़ देना चाहिए। वह कहते हैं

बड़ोहू औ न सेता औ पाड़ा देसा मार बूज के टाड़ा ।

(४११ ६)

मानो मन कोई मगर बहू है जिसका उपयोग उचित है पर जिस पर पूर्ण अनु रक्ति उचित नहीं है। घट इच्छा का उपयोग करके भी जससे मिलित रहना चाहिए। यहाँ एक शब्द 'बूज के छाड़ा' के बिब द्वारा मन के उपयोग परमू त्याग की भावना बड़ी सुन्दरता से व्यक्त हुई है। मन संवधी जाबसी की सभी मामूलाएँ बिम्ब के द्वारा प्रकट हुई हैं। मसारे के पतने और परतम बृद्ध द्वारा वह निर्बन्ध व्यक्ति की निरुद्धता और उपेक्षित अवस्था को व्यक्त करते हैं और बूजि के छाड़ा से उसक सीमित उपयोग की भावना को व्यक्त करते हैं

बिम्ब

व्याख्या

निष्कर्ष

१—मसारे का पतने जगहीन व्यक्ति मसारे का परतम है जो घण्टर में घुम्बर होयै हुए भी बाह्य सौन्दर्य के समान ही उपेक्षणीय समझा जाता है।

मन व्यक्त का सौन्दर्य है सुधी व्यक्ति भी मन के समान में उपेक्षित होते हैं।

- २—पतंग बृज समस्त सौन्दर्य बाह्य रूप भन बाह्य रूप सज्जा है। भनहीग
 प्रयात् पत्तियों में है। व्यक्ति संसार में क्रूर्य घोर निद्रुष्ट
 पत्ररहित होने पर भद्रा समझ जात है।
- ३—नगरबधु उपभोग उचित है पर घन का भोग उचित है पर
 उसका भार नहीं उठाना भासक्ति प्रनुचित है। इसकी
 जा सकता। सीमाएं हैं।

इस समझ अध्ययन के पश्चात् हम यह कह सकते हैं कि जायसी की सभी प्रमुख धारणाएं विन्म के माध्यम से अभिव्यक्त हुई हैं और विन्म के अध्ययन से ही उन्हें उचित रूप से समझा जा सकता है। विचार और भाव प्रमूर्त होने के कारण प्रेयणीय बनने के लिए सर्वत्र विन्म का माध्यम चुनते हैं। इस कारण विन्मों के अध्ययन से ही भावों और विचारों को समझ कर कवि के चिंतन का सम्यक ग्रहण किया जा है। उपरोक्त विवेचन में जायसी के चिंतन पर सम्यक प्रकाश पड़ा है और उसका विश्लेषण भी हुआ है।

विन्म एवं पद्मावत का रूपक (Allegory)

जायसी के पद्मावत के सर्गों में उसके रूपक (Allegory) की चर्चा करना भी अनिवार्य सा है। काव्य का महत्त्व उसके प्रभाव में बहुत कम रह जाता है। पद्मावत का रूपक एक और काव्य की सांख्यिक पृष्ठभूमि को तो पुष्ट करता ही है दूसरी ओर जायसी पर पड़े सूखी गिद्धांतों के समस्त प्रभावों को भी स्पष्ट करता है।

जायसी के प्रास्तावकों ने सभी तक उसके रूपक पर धन्योक्ति भ्रमवा समासोक्ति के अंतर्गत काफ़ी विचार विमर्श किया है और इस विचार-विमर्श के अनेक परिणाम भी प्रस्तुत किये हैं। भद्र व सुख भी वे लेकर आज तक जायसी के सभी प्रास्तावकों के लिए पद्मावत की रूपक योजना चर्चा का एक प्रमुख विषय बनी रही है। कुछ विद्वानों ने उस धन्योक्ति माना कुछ ने समासोक्ति और इसके विपरीत किसी ने उसके अंतर्गत किसी सांख्यिक धर्म होने की सम्भावना तक को न माना। प्रमुख रूप से उतकी समासोक्ति के रूप में महत्त्व दिया गया। डा. सूर्यकांत शास्त्री के द्वारा प्रस्तुत मान्यता कि पद्मावत की समस्त कथा एक धन्योक्ति है आज निराचार सिद्ध हो चुकी है। उसके विषय में अब कुछ कहना आवश्यक नहीं है। समासोक्ति रूप में उसे सुकल जी माताप्रसाद जी चम्बरी पांडे डा. बहूप्रसाद डा. चयदेव और शिवसहाय पाठक आदि ने मान्यता दी है और पद्मावत की कथा में किसी सांख्यिक धर्म को अंतर्गत स्वीकार कर लिया है। परन्तु उसकी रूपक योजना के संबंध में फिर भी फिर भी विन्म मन रहे हैं। कुछ व्यक्तियों ने उसके रूपक को महत्त्व दिया जैसे सुकल जी आदि ने और इनके विपरीत कुछ विद्वानों ने स्पष्ट कहा कि 'पद्मावत की कथा न रूपक के रूप में अपना कोई धर्म रखती है न धन्योक्ति के रूप में अपना

कोई प्रतिफल ।^१ हिन्दी धारोचना के क्षेत्र में मुख्यतः आधुनी के प्रामोदकों में इन व्योम-रूपक और समासोक्ति-को सकर बड़ा महत्त्व बना हुआ है। कुछ व्यक्ति उसके रूपक और समासोक्ति दोनों को मान्यता देते हैं और कुछ उनके रूपक को प्रतीकार करते हुए शब्द समासोक्ति को मान्यता देते हैं अर्थात् उनके किन्हीं स्थलों पर निहित सांकेतिक किंवा प्रतीकिक अर्थ को मानते हुए भी आधुनी द्वारा प्रस्तुत उस सांकेतिकता को प्रतीकार करते हैं जिसे कवि स्वयं मत में इन व्योमों में प्रकट कर गया है।

मैं ऐहि धरत बंदिताहूँ ब्रह्मा कहा कि हूँहि किछु और न सुभा ।
 औरहूँ मुदत के तर उपराही ते सब मानुष के घर माही ।
 तन बितरत मन राधा कीगहा हिय तिपल ह्युपि पदुमिनी कीगहा ।
 गुरु मुपा ब्रह्म पंथ विसाधा गुरु बिनु अन्त को निरगुन बाधा ।
 नाममती यह बुनिया पंथा बाधा सोइ न ऐहि बित बंधा ।
 पाप ब्रत सोइ सतापु, माया प्रतापेन मुक्ततापु ।
 प्रेम बधा ऐहि भाणि विचारहुँ कृमि कैहि को कृमिहि पारहु ।

इस छंद को अनेक विद्वानों ने मुख्यतः माताप्रसाद गुप्त वामुदेवसरय प्रथमतः सिद्धसहाय पाठक धारि ने प्रसिद्ध माना है। इसके अन्तर्गत विद्ये गये रूपक से अनेक विद्वान-डा० बड़बवाल डा० ए० विद्यमन शिरेक धारि अग्रगण्य हैं। उनके अनुसार रामे की वह कृ भी उससे ठीक नहीं बैठती ।^२

इसके विपरीत सुकन भी चम्बली पाठ्य धारि रूपक से सहमत हैं और उन्होंने इस छंद को प्रामाणिक भी माना है। आधुनी के विष्णु विद्वान द्वारा उसके रूपक का प्रतीकार करने पर हमको पाठ्यकी और सुकन की का मत ही अधिक लची भीम जान पड़ा है। पदुमावत के अन्तर्गत यद्यपि अन्वयित नहीं है परन्तु उसके अन्तर्गत रूपक योजना प्रबन्ध है। जिसे कवि ने बराबर अपने पाठों एवं बटनाओं के अर्थों में प्रोत्प्रेत किया है। परन्तु कहीं-कहीं रूपक को वह किन्हीं विविध कारणों से बिसा नहीं प्रस्तुत कर सका है वैसे उसके मस्तिष्क में था। कवि भी किन्हीं अर्थों में एक व्यक्ति है जो सदा परम्परा संस्कार विचार धारि के पाठों में बंधा रहता है। आधुनी के रूपक का टूटा-भूटा हिस्सा उनकी इस व्यक्तित्व विवगता का ही परिणाम है। अस्तु, आधुनी ने अपनी कृति में कोई रूपक योजना की है या नहीं और उसका रूप क्या है ? इसका परीक्षण उसके विष्णु के आधार पर भी किया जा सकता है।

१ अमरक का अर्थ संभव : सिद्धसहाय पृष्ठ ४ • १२६

२—*I doubt very much whether he (the poet) had any definite allegory presents to his mind through out, the key which he gives us in the first stanza of the envoy does not by any means fit the lock-padmavati. A G Shireph p. 8.*

कवि की मानसी सृष्टि का प्रमुख भाग है। वह उसके घंटर का प्रच्छा साम्य है। यहाँ हमारा यही प्रयत्न है। नीचे कवि के पात्रों के लिए जो बिंब प्रयुक्त हुए हैं उनके आधार पर कवि की पात्रों के प्रति आस्था का पता लग जाता है। यहाँ सर्वप्रथम पद्मावती का अध्ययन प्रापेक्षित है।

(१) पद्मावती

पद्मावती को जायसी ने बुद्धि भवना आत्मा का प्रतीक माना है। वही वह मन्त्र है जिसके लिए रहस्येन स्त्री मन व्याकुल होकर नाममती स्त्री गोरक्ष बने को छोड़कर निकल पड़ता है। पद्मावती आत्मा भवना परमात्मा का प्रतीक है। यहाँ यह देखना है कि पद्मावती के रूप बिंबों भवना बिम्बों में जायसी की यह भाव्यता कहा तक प्रकट हुई है।

पद्मावती के लिए अविनाशित ज्योति या प्रकाश के बिम्ब आने हैं जो परमात्म तत्व को प्रकट करते हैं। हम पहले ही ज्योति भवना प्रकाश के बिम्बों का अध्ययन प्रस्तुत कर चुके हैं। यहाँ संयोग में ही उस पर प्रकाश डाला जायगा। ईश्वर या ब्रह्म के लिए सभी देशों के साहित्य एवं दर्शन में ज्योति या प्रकाश का उपमान कल्पित है। यह एक सार्वभौमिक उपमान है जिसे सभी ने इसी रूप में सहज ही स्वीकार कर लिया है। मूफ़ी सिद्धान्तों में भी परम तत्व को ज्योति स्वरूप माना गया है यह पहले ही कहा जा चुका है। पद्मावती भी जायसी के मानस में प्रकाश का रूप लेकर ही बनी है अनेक स्थलों पर कवि न उस ऐसे रूप में प्रस्तुत किया है जो उसके ब्रह्म स्वरूप को स्पष्ट करते हैं। कवि ने अनेक स्थलों पर उसके रूप की सोफोसतरता द्वारा भवना प्रकाश के प्रसारण द्वारा उसके ब्रह्म स्वरूप की खोजना करायी है। यहाँ उसका ध्येय ज्योति के उल्लेख में उसके परमात्मा रूप को प्रकट करना ही रहा है अथवा परम्परा का पासक कवि जायसी मुख की शीघ्रि घाति के लिए स्वीकृत चंद्र धीर सूर्य के उपमान को केवल मुख के लिए न लेकर समस्त पद्मावती के लिए क्यों देता? इसके मुख में उसकी रूपक की भाव्यता निहित है। जायसी के मानस में पद्मावती का रूप है। जो स्वयं प्रकाश या ज्योति का स्वरूप है। इसीलिए पद्मावती का मुख ही केवल चंद्र या सूर्य नहीं है बल्कि समस्त पद्मावती रानी सूर्य धीर चंद्र के प्रकाश की भांति प्रकाश मयी है। अनेक स्थलों पर उसके रूप की सोफोसतर खोजना हुई है जहाँ ब्रह्म प्रकाश की भांति उसके प्रकाश में समस्त पृथ्वी पर फैला दिगान् देता है। उसके अंग के अवसर पर ही कवि संसार में प्रकाश के अवतीर्ण होने की कल्पना करता है जिससे समस्त सिद्धम यह प्रकाशित हो जाता है

भए इस मास पुरि भँ घरी पद्मावति कव्या घोटरी ।

जानहु मुखज किरन हुति काड़ी मुखज करा बरी यह बाड़ी ।

भा निशि माह दिन क बरपातू सब जगियार भयऊ कबिलातू ।

इसी प्रकार मानसरोवरक खंड एवं महाविजय खंड में उसके रूप की सोकोत्तर व्यंजना उसके परमात्म स्वरूप को प्रकट करने के लिए है। मानसरोवरक पर कवि कहता है कि उसका धर्तीन्द्रिय रूप देखकर स्वयं सरोवर उसके पाव धूने के लिए उन्नत द्विभोरें सिना गया

सरवर तीर पशुमिति धाई लोना छीरि केस मोकराई ।

सति बुज भग मर्ल गिरि रागी नामहू ज्ञापि लोहू धरघानी । × ×

सरवर रूप बिमोहा हिणू हिसोर करैइ ।

पाव कुबै महु बाबी पैहि विमु सहरै बेइ ।

(११ १७)

रूप की यह सोकोत्तरता उसके सांकेतिक धर्मों को ध्वनित करती है। अन्वय रूप वर्णन में भी कवि कहता है।

पहिरे सति नक्षत्रहू कै मारा, धरती सरप भएउ उजियारा ।

(४२१ ३)

उसके रूप से ससार में प्रकाश फैल जाने की यह कल्पना उसके सांकेतिक धर्मों को प्रतिपादित करती है। ऐसे सोकोत्तर वर्णनों के लिए पाठक की ने कहा है कि कई बार प्रसंग घाने पर उसने (कवि ने) जब मौकिक रूप के माध्यम से धर्मीक सीन्दर की ओर इशारा किया है तो ऐसे स्वर्णों में अत्रस्तुत इशारा ही प्रधान ही जाता है और अत्रस्तुत प्रसंग गीन हो जाता है। यह काव्यगत होय है।^१ यहाँ पाठक की जिस सोकोत्तर व्यंजना की काव्यगत होय कहते हैं मेरे मठ में वह आयाती का महान महत्वपूर्ण गुण है जो आयाती के मूर्खी हास्यनिक से स्वस्व को धामने रहता है और उसके सिद्धांतों का प्रतिपादन करता है। पद्मावती का सोकोत्तर स्वरूप उसके परमात्म तत्त्व को प्रकट करने के लिए ही है। यहाँ ध्यान देने योग्य बात यह है कि कवि नागमती के प्रति सहाय्युक्ति और सहाय्यता रखते हुए भी उसके रूप की एक स्वस पर भी सोकोत्तर व्यंजना नहीं कर सकता है जब कि वह भी पद्मावती के प्रमुख धर्मों में ही है। नागमती कवि की सहाय्यता का प्रमाण है। उसका विरह वर्णन हिंदी साहित्य की एक महत्वपूर्ण विभूति है फिर भी कवि के हृदय में उसका वह सोकोत्तर रूप नहीं है जो पद्मावती का है। नागमती के प्रति कवि उदासीन नहीं है वह पूरा सहाय्यता से उसको प्रस्तुत करता है पर नागमती के लिए परमात्मा का स्वरूप होने की माध्यता न होने के कारण रूप वर्णनों में सर्वत्र ज्योति और प्रकाश के विम्वों का अभाव है। एक ही स्वतः पद्मावती में एगा नहीं है जिसमें नागमती के ज्योति रूप का उत्प्रेषण या उसके प्रकाश के प्रसारण का उत्प्रेषण हो। कारण स्पष्ट ही है पद्मावती कवि के मानस में बह्य की प्रतीक है जो स्वतः ही ज्योति या प्रकाश से समन्वित है। और इसके विपरीत नागमती जीवन का मोरज बंधा है जो जीवन के संस्कार परत की

१ शिखरदास शर्मक : पदमावती का काव्यवर्णन

प्रस्तुत करती है। मोरख भंघे में बहू ठेज बहू प्रकाश कइयें ? पद्मावत के दो प्रमुख नारी पात्रों में रूप का यह मेख कवि के प्रसन्न मन में निहित रूपक का ही परिचय है। एक के रूप की सर्वत्र लोकोत्तर ध्वजना और दूसरी में उसका गितान्त प्रभाव रूपक योजना के कारण ही है।

पद्मावती के प्रकाश या ज्योति के बिम्ब इस्लामी विचारधारा का प्रतिनिधित्व भी करते हैं जिसे सूफियों ने भी अपनाया था। यह विचारधारा परमात्मा के 'गुर' मानने की है। परमात्मा का प्रकाश इस्लाम धर्म और सूफी सिद्धान्तों दोनों में स्वीकृत है। जायसी ने भी पद्मावती को इस्लाम के गुर के रूप में प्रस्तुत किया है। प्रथम बार बसंत पूजा के समय रानी के लोकोत्तर स्वरूप को देखकर साहू का मूर्च्छित हो जाना राजा का झरोखे पर से रानी को देखकर धारम विस्मृत होना और साहू का भी रानी का प्रतिबिम्ब देखकर मूर्च्छित होना रूप की लोकोत्तरता को ध्वनित करता है। प्रति बिम्ब में क्या पाकर साहू की प्रवस्था जायसी इस प्रकार प्रकट करते हैं

भे निसि तसि जोरहूर बड़ी सोरहू करा सहस बिधि पड़ी।

बिहंसि झरोखे धाइ सरेकी निरसि ताहि बरपन महू देखी।

होतहि बरस परस भा लोना भरती सरप मयठ सब सोना।

(३९६ २४)

इस धार्मिक प्रकाश का दर्शन पाकर साहू मूर्च्छित हो जाता है। वस्तुतः यह घटनाएँ जायसी के मानस में बैठी उस इस्लामी विचारधारा की प्रतीक हैं जिसके अनुसार मूसा को तूर पर्वत पर लुबा के धार्मिक 'गुर' के दर्शन हुए के तूर पर्वत उस धार्मिक प्रकाश में जातकर मस्म ही गया और मूसा उस रूप की देख सकने की क्षमता न रखने के कारण मूर्च्छित हो गये थे समष्टि में यह कि ईश्वर का धासोक देख सकने की क्षमता साधारण जन में नहीं है, यही मान्यता जायसी ने इन घटनाओं से प्रकट की है। इससे पद्मावती का ब्रह्म रूप स्पष्ट हो जाता है।

संक्षेप में पद्मावती के ज्योति या प्रकाश रूप होने की कल्पना रूप की लोकोत्तर अभिव्यंजना मानसरोवरक धारि के प्रसंग उसके ब्रह्म रूप को प्रकट करते हैं। इन बिंबों से यह परमात्म तत्त्व का प्रतीक ही प्रतीत होती है और इससे पद्मावत के रूपक में निहित उसके ताकैतिक धर्म की पुष्टि होती है।

२—रत्नसेन

पद्मावत की कथा का दूसरा प्रमुख पात्र है रत्नसेन। रत्नसेन बिलौड़ का राजा है और अपनी पहली स्त्री माकमती को छोड़कर पद्मावती को प्रयत्न पूर्वक प्राप्त करता है। सांकेतिक धर्मों में जायसी ने उसे मन कहा है और उसके गढ़ को तन। मन (राजा) के निवास स्थान बिलौड़गढ़ को तन मानने में तो कोई आपत्ति हो ही नहीं सकती क्योंकि वही राजा का निवास है, और यों भी जायसी ने गढ़ को घरीर धरवा काया के रूप में देखा है :

गड़ तस बाँक बेसि तोरि कम्पा परिल बैसु त मोहि क छाया ।

(२१२ १)

एलसेन भी मन का प्रतीक स ब ही बन जाता है । पद्मावती कपी ब्रह्म की धात्रा पर सभी सांसारिक प्रसंगों (नाममती) को छोड़ देता है और साधना के दुर्लभ स्वर्गों को पार करता ब्रह्म का नैकदय पाने के लिए चल देता है । यही ब्रह्म को पाने की मन की कठिन साधना है । माय के कष्ट-गूढान धोबी घादि-मन की टहता की परीक्षा के हेतु है । इस प्रकार एलसेन की मन की प्रतीकारत्मक स्थिति स्पष्ट है ।

राजा के मन के प्रतीकारत्मक धर्म को स्पष्ट करने में उमका घटना बरिच बड़ा महत्वपूर्ण है। मन रूप में यह मानव का प्रतीक है जो निम्न (दुनिया बधा-नाममती) और ऊर्ध्व (ब्रह्म पद्मावती) प्रकृतियों के बीच सर्वत्र इन्द्रात्मक स्थिति में रहता है । पुत्र (मुग्धे) द्वारा ब्रह्म (पद्मावती) का ज्ञान प्राप्त करके (एक बर्षन सुनकर) वह उसकी ओर उन्मुख हो जाता है और धनैक कष्ट सहकर उसे प्राप्त करता है परन्तु पुत्र वहीं बन (राजा) दुनिया के मोह व प्रपञ्च (नाममती) का लीय मा धाह्वान (पक्षी द्वारा बरिच पाकर) पाकर ठीकी में निपट होना उसको ही पाना चाहता है । उसकी यह अमशक स्थिति मन के अन्तर्द्वन्द्व का अन्वया स्पष्टीकरण करती है । कभी यह ब्रह्म (पद्मावती) को पाकर अतृप्त की स्थिति में स्वयं का प्रकाश और ब्रह्म (पद्मावती) को छाया करने लपता है और इसके विपरीत कभी साधारण मोह की मुक्ति करते ही उसकी धबस्था नामिन के उमे व्यक्ति भी हो जाता है । इस स्थिति में ब्रह्म भी उमे मूल जाता है

तन तिमल मन बितर बला विर विरभार अनु नामिन बला ।

बेसि तारि हृति पुर्त घादिघ्न बखन बिनि निर ।

रस उतरा तो बड़ा बिरल न मोहि बित न मित ।

(१०६ ७-९)

मन कपी राजा की यह इन्द्रात्मक स्थिति विश्व द्वारा प्रकट हुई है और राजा के प्रतीकारत्मक धर्म को पुष्ट करती है । यहाँ बायनी ने ब्रह्म प्राप्ति (पद्मावती से विवाह हो जाने) के पश्चात् उसका गौरवबर्षे (नाममती) के प्रति मोह प्रणवित किया है जो अनुचित-सा प्रतीत होता है परन्तु ही संकष्टा है कि कवि की पारखा हो कि मन सर्वत्र बचस है उनका एक अन्न प्रधान है इन्द्रात्मक है स्वर्ग उममे नहीं है और एहीलिए कवि ने उसका यह रूप रखा है । मन के इन्द्रात्मक रूप पर ही उनका विरोध ध्यान रहा हो । अन्तिम रूप से यहाँ कुछ कहना कठिन है ।

एलसेन की यह इन्द्रात्मक स्थिति यहाँ अपने प्रतीकारत्मक धर्म को स्पष्ट करती है वहाँ मुक्ती मायता के अनुसार मनुष्य के स्वकप को भी प्रकट करती है ।

मुक्ती मायता के अनुसार मनुष्य हाँत और अन्त का नियत रूप है । उक्तमें मृत्यु और अमृत्यु दोनों तत्त्वों का समावेश है । एक ओर यह मानव है और उममें देवत्व

प्रस्तुत करती है गोरख धर्म में वह तेज वह प्रकाश कहाँ ? पद्मावत के दो प्रमुख नारी पात्रों में रूप का यह भेद कवि के अन्तर्मन में निहित रूपक का ही परिणाम है। एक के रूप की सर्वत्र लोकोत्तर ध्वनिना और दूसरी में उसका नितागत अभाव रूपक योजना के कारण ही है।

पद्मावती के प्रकाश या ज्योति के बिम्ब इस्लामी विचारधारा का प्रतिनिधित्व भी करते हैं जिसे सूफियों ने भी अपनाया था। यह विचारधारा परमात्मा के 'नूर' मानने की है। परमात्मा का प्रकाश इस्लाम धर्म और सूफी सिद्धान्तों दोनों में स्वीकृत है। आयसी ने भी पद्मावती को इस्लाम के नूर के रूप में प्रस्तुत किया है। प्रथम बार अर्धत पूजा के समय रानी के लोकोत्तर स्वरूप को देखकर राजा का मूर्च्छित हो जाना राजा का अरोहण पर से रानी को देखकर धारम विस्मृत होता और शाह का भी रानी का प्रतिबिम्ब देखकर मूर्च्छित होना रूप की लोकोत्तरता को ध्वनित करता है। प्रति बिम्ब में दर्शन पाकर शाह की अवस्था आयसी इस प्रकार प्रकट करते हैं

मैं निजि सति बौराहर बढ़ी सीरुह कर सख्त बिभि मड़ी।

बिहसि शरोखे भाद सरेसी निरखि साहि बरपन मह बेसी।

होतहि बरस परस भा लोला, बरती सरग भयज सब लोला।

(५६१ २४)

इस धार्मिक प्रकाश का दर्शन पाकर शाह मूर्च्छित हो जाता है। वस्तुतः यह बटनाई आयसी के मानस में बैठी उस इस्लामी विचारधारा की प्रतीक है जिसके अनुसार मूसा को तुर पर्वत पर बुला के धार्मिक 'नूर' के दर्शन हुए वे तुर पर्वत उस धार्मिक प्रकाश में बसकर भस्म हो गया और मूसा उस रूप को देख सकने की क्षमता न रखने के कारण मूर्च्छित हो गये वे समष्टि में यह कि ईश्वर का आलोक देख सकने की क्षमता साधारण जन में नहीं है, यही मायता आयसी ने इन बटनाई से प्रकट की है। इससे पद्मावती का ब्रह्म रूप स्पष्ट हो जाता है।

संक्षेप में पद्मावती के ज्योति या प्रकाश रूप होने की कल्पना रूप की लोकोत्तर अधिभ्यन्तना, मानसरोवर आदि के प्रसंग उसके ब्रह्म रूप को प्रकट करते हैं। इन बिम्बों से वह परमात्म तत्त्व का प्रतीक ही प्रतीत होती है और इनसे पद्मावत के रूपक में निहित उसके सांकेतिक धर्म की पुष्टि होती है।

२—रदनसेन

पद्मावत की कथा का दूसरा प्रमुख पात्र है रदनसेन। रदनसेन बिलकि का राजा है और अपनी पहली स्त्री मामती को छोड़कर पद्मावती को प्रथम पुरुष प्राप्त करता है। सांस्कृतिक धर्मों में आयसी ने उसे मन कहा है और उसके गढ़ को ठग। मन (राजा) के निवास स्थान बिलकिगढ़ को ठग मामले में तो कोई आपत्ति हो ही नहीं सकती क्योंकि वही राजा का निवास है और यों भी आयसी ने गढ़ को छोड़ कर कथा के रूप में देखा है।

एतत्तु वाक् शैलि तौरि काया परिक्क वेत्तु त मोहि क छाया ।
(२१२ १)

एतत्तु वाक् शैलि तौरि काया परिक्क वेत्तु त मोहि क छाया । पद्मावती कवी ब्रह्म की छाया पर सभी सांसारिक प्रसंगों (नायमती) को छोड़ देता है और साधना के दुर्मम स्वर्गों को पार करता ब्रह्म का नैक्यम पाये के लिए बस देता है । यही ब्रह्म को पाने की मन की कठिन साधना है । मार्ग के कष्ट-तूफान घाँबी घाबि-मन की टकता की परीक्षा के हेतु हैं । इस प्रकार एतमेम की मन की प्रतीकारत्मक स्थिति स्पष्ट है ।

राजा के मन के प्रतीकारत्मक धर्म को स्पष्ट करने में उसका प्रथम चरित्र बड़ा सहायक है। मन रूप में वह मानव का प्रतीक है जो निम्न (दुनिया बन्धा-नायमती) और ऊर्ध्व (ब्रह्म पद्मावती) प्रवृत्तियों के बीच मर्त्य इन्द्रात्मक स्थिति में रहता है । बुद्ध (सुमे) द्वारा ब्रह्म (पद्मावती) का ज्ञान प्राप्त करके (रूप वर्धन मुक्कर) वह उसकी धोर इगुक्त हो जाता है और धमेक कष्ट सहकर उसे प्राप्त करता है परन्तु पुन वही मन (राजा) दुनिया के मोह व प्रबंध (मायमती) का शीघ्र सा घाह्वान (पसी द्वारा खिन्न पाकर) पाकर जमी में मिल्त होना उसको ही पाना चाहता है । उसकी यह अमात्मक स्थिति मन के प्रत्यर्हम्ह का सन्धा स्पष्टीकरण करती है । कभी वह ब्रह्म (पद्मावती) को पाकर अमहत्त्व की स्थिति में स्वयं को प्रकाश और ब्रह्म (पद्मावती) को छाया कहने लगता है और इसके विपरीत कभी सांसारिक मोह की मुक्ति करते ही उसकी अस्तित्वा नायिन के उसे स्थिति ही हा जाती है । इन स्थिति में ब्रह्म भी उसे भुक्त जाता है ।

तत सिम्मत मन चित्तउर वत्ता जिउ चित्तभार जगु नायिन वत्ता ।

शैलि नारि हृति पूर्णं धामिध बचन जिमि नित्त ।

एत उत्तरा सो च्छा विध न मोहि नित्त न नित्त ।

(३७२ ७-२)

मन रूपी राजा की वह इन्द्रात्मक स्थिति बिम्ब द्वारा प्रकट हुई है और राजा के प्रतीकारत्मक धर्म को पुष्ट करती है । यहाँ वायसी ने ब्रह्म प्राप्ति (पद्मावती से विवाह हो जाने) के पश्चात् उसका मोरधर्म (नायमती) के प्रति मोह प्रदलित किया है जो अनुचित-सा प्रतीत होता है, परन्तु हो सकता है कि कवि की चारणा हो कि मन धर्म बंधन है उसका रूप अम प्रधान है इन्द्रात्मक है स्वयं उसमें नहीं है और इसीलिए कवि न उसका बह रूप रत्ना है । मन के इन्द्रात्मक रूप पर ही उसका विशेष ध्यान रहा हो । अन्तिम रूप से यहाँ मुक्त कहना कठिन है ।

एतत्तु वाक् शैलि तौरि काया परिक्क वेत्तु त मोहि क छाया । पद्मावती कवी ब्रह्म की छाया पर सभी सांसारिक प्रसंगों (नायमती) को छोड़ देता है और साधना के दुर्मम स्वर्गों को पार करता ब्रह्म का नैक्यम पाये के लिए बस देता है । यही ब्रह्म को पाने की मन की कठिन साधना है । मार्ग के कष्ट-तूफान घाँबी घाबि-मन की टकता की परीक्षा के हेतु हैं । इस प्रकार एतमेम की मन की प्रतीकारत्मक स्थिति स्पष्ट है ।

राजा के मन के प्रतीकारत्मक धर्म को स्पष्ट करने में उसका प्रथम चरित्र बड़ा सहायक है। मन रूप में वह मानव का प्रतीक है जो निम्न (दुनिया बन्धा-नायमती) और ऊर्ध्व (ब्रह्म पद्मावती) प्रवृत्तियों के बीच मर्त्य इन्द्रात्मक स्थिति में रहता है । बुद्ध (सुमे) द्वारा ब्रह्म (पद्मावती) का ज्ञान प्राप्त करके (रूप वर्धन मुक्कर) वह उसकी धोर इगुक्त हो जाता है और धमेक कष्ट सहकर उसे प्राप्त करता है परन्तु पुन वही मन (राजा) दुनिया के मोह व प्रबंध (मायमती) का शीघ्र सा घाह्वान (पसी द्वारा खिन्न पाकर) पाकर जमी में मिल्त होना उसको ही पाना चाहता है । उसकी यह अमात्मक स्थिति मन के प्रत्यर्हम्ह का सन्धा स्पष्टीकरण करती है । कभी वह ब्रह्म (पद्मावती) को पाकर अमहत्त्व की स्थिति में स्वयं को प्रकाश और ब्रह्म (पद्मावती) को छाया कहने लगता है और इसके विपरीत कभी सांसारिक मोह की मुक्ति करते ही उसकी अस्तित्वा नायिन के उसे स्थिति ही हा जाती है । इन स्थिति में ब्रह्म भी उसे भुक्त जाता है ।

तत सिम्मत मन चित्तउर वत्ता जिउ चित्तभार जगु नायिन वत्ता । शैलि नारि हृति पूर्णं धामिध बचन जिमि नित्त । एत उत्तरा सो च्छा विध न मोहि नित्त न नित्त । (३७२ ७-२)

प्रस्तुत करती है गोरल धये में बहु ठेक बहु प्रकाश कहाँ ? पद्मावत के दो प्रमुख नाटी पात्रों में रूप का यह भेद कवि के प्रारम्भ में निहित रूपक का ही परिणाम है। एक के रूप की सर्वत्र लोकोत्तर ध्वजता और दूसरी में उसका मिटाग्न घनाब रूपक योजना के कारण ही है।

पद्मावती के प्रकाश या ज्योति के बिम्ब इस्लामी विचारधारा का प्रतिनिधित्व भी करते हैं जिसे सुफियों ने भी अपनाया था। यह विचारधारा परमात्मा के 'मुर मानने की है। परमात्मा का प्रकाश इस्लाम धर्म और सूफी सिद्धांतों दोनों में स्वीकृत है। जायसी ने भी पद्मावती को घन्साह के मुर के रूप में प्रस्तुत किया है। प्रथम बार बसंत पूजा के समय रानी के लोकोत्तर स्वयं को देखकर राजा का मूर्च्छित हो जाना रामक का झरोखे पर से रानी को देखकर घातम विस्मृत होना और साह का भी रानी का प्रतिबिम्ब देखकर मूर्च्छित होना रूप की लोकोत्तरता को ध्वनित करता है। प्रति बिम्ब में बसंत पाकर साह की घबस्था जायसी इस प्रकार प्रकट करते हैं

भै निसि ससि बौराहर बड़ी सौरु करु सहस बिधि गड़ी।

बिहूसि झरोखे साह सरोखी गिरखि साहि बरपन मंह देखी।

होतहि बरस परस भा लोना, बरती सरय भयद सब सोना।

(३६३ २४)

इस धर्मीक प्रकाश का वर्धन पाकर साह मूर्च्छित हो जाता है। वस्तुतः यह बटमाएँ जायसी के मानस में बैठी उस इस्लामी विचारधारा की प्रतीक है जिसके अनुसार मूसा को तुर पर्वत पर लुवा के धर्मीक 'मुर' के वर्धन हुए वे तुर पर्वत उस धर्मीक प्रकाश में जलकर बस्म हो गया और मूसा उस रूप को देख सकने की क्षमता न रखने के कारण मूर्च्छित हो गये वे समष्टि में यह कि ईश्वर का आलोक देख सकने की क्षमता साधारण जन में नहीं है, यही मान्यता जायसी ने इन बटमाओं से प्रकट की है। इससे पद्मावती का ब्रह्म रूप स्पष्ट हो जाता है।

संक्षेप में पद्मावती के ज्योति या प्रकाश रूप होने की कल्पना रूप की लोकोत्तर धर्मिध्वजना, मानसरोवरक धादि के प्रसंग उसके ब्रह्म रूप को प्रकट करते हैं। इन बिंबों से यह परमात्म तत्त्व का प्रतीक ही प्रतीत होती है और इनसे पद्मावत के रूपक में निहित उसके सांकेतिक धर्म की पुष्टि होती है।

२—रत्नसेन

पद्मावत की कथा का दूसरा प्रमुख पात्र है रत्नसेन। रत्नसेन बितीरु का राजा है और अपनी पहली स्त्री नागमती को छोड़कर पद्मावती को प्रयत्न पूर्वक प्राप्त करता है। सांकेतिक धर्मों में जायसी ने जैसे मन कहा है और उसके बड़ को तन। मन (पजा) के निवास स्थान बितीरुमड़ को तन मानने में तो कोई आपत्ति हो ही नहीं सकती क्योंकि वही राजा का निवास है और भौं भी जायसी ने बड़ को सटीर घबथा काया के रूप में देखा है।

जागु जागु जीव जड़ जोहूँ जग आदिनी
 बेहू मेहू मेहू जावि बसे धन-आदिनी ;
 सोबत सपनेहु सहे संकृति संताप रे
 बुझयो नृपचारि जायी बेबरी के ताप रे ।'

धीर

मैं अपराध सिद्ध कस्माकर जानत प्रतर-आमी ।
 तुलसीदास मन्-व्यास प्रसिद्ध तब तरन बरग रिपु पायी ।'

सूरदास में भी संसार को सर्व मानने की कल्पना था। भारतीय दर्शन धीर योग धारि में भी यह कल्पना बराबर रही है। संसार को सभी ने सर्वत्र निदनीय धीर अपेक्षणीय माना है। वायसी के मानस में इन मान्यताओं का किसी न किसी रूप में प्रभाव पड़ा होगा जिससे उन्होंने वायमती के मोरबाबू के रूप को प्रकट करने के लिए अनेक स्थलों में नाम के रूपक प्रस्तुत किये हैं

१—बेहि दिन कहुँ ही निठ बरौ रैन छिपावौ सूर ।

नै बहूँ डीगु कबल कहु मो कहु होइ संसूर ।

(८२ ८-९)

२—नायमती नायिन कृपि तम्, नुमा संसूर होइ नहि काळ ।

(८६)

३—मोहि सोहि कारन भई भं बारा रही नाम होइ बरन धारा ।

बिरहु संसूर नाय बहू मारी तु मरार कब बेगु मोहारी ।

(३६८)

संसार सबका जीवन के मोह नाम धीर प्रपंच की प्रतीक होने के कारण मुग्धा उसकी निरा करता है धीर ब्रह्म की स्तुति करता है

का बु छहि तिपल की बारी विनहि न पुर्म भिति धरिवारी ।

पुहुक तुपंच तो तिगु के कया बहूँ माव का बरनी पाया ।

(८४ ९-७)

वायसी के मानस में वायमती का बर्ण भी काला ही गया है। वायमती का यह रूप बहुत संघों में उसके सांकेतिक धर्मों को ध्वनित करता है।

वायमती को बुनिया बंवा न मानने के पक्ष में उसके बिरहु बर्णन की विराधता धीर योगीश्वर को दिया जाता है। वायमती का बिरहु बर्णन धार्मिक है धीर यह पुर्यंत लौकिक धर्मों को ध्वनित करता है। यह बिरहु बर्णन स्फात्मक धर्मों व भेष माव धी सहायता नहीं देता देता अनेक विभागों का मंत्र है। परन्तु एक प्रश्न यहाँ उठ सकता है कि कवि ने वायमती का इतना विचार धीर कथन बिरहु बर्णन क्यों

* विश्व धर्मिका गुणसो. १० (३३)

* विश्व धर्मिका : गुणसो. १ * *

का निवास है तो दूसरी धोर उसी में वागत्व का धंध भी प्रकट हो उठता है । प्रेम से पवित्र होकर ही वह अपने स्मृत सीमा भाव से मुक्ति पाता है । प्रेम की साधना से मानवी धोर ईवी स्वल्प के बीच का प्रस्तर समाप्त हो जाता है ।^१ कहना न होगा कि रत्नसेन का अरिज सूखी मायता की मनुष्य विषयक भारणा के बहुत निकट है यद्यपि उसके लिए कोई बिम्ब ऐसा नहीं धाय है जो उसके प्रतीकात्मक धर्ष को स्पष्ट करे पर प्रस्तुत रूप बिधान में प्रमुक्त उसकी प्रवस्था का बर्नन उसके भ्रमपूव रूप को प्रकट करता है । वह प्रेममार्ग का पथिक है धीर सर्वैव धर्ष धीर निम्नगामी प्रवृत्तियों के मध्य भूमता है । समष्टि में रत्नसेन जायसी के सांकेतिक धर्षों की बहुत धर्षों में रखा करता है ।

१—नागमती

पद्मावत का तीसरा प्रमुख पात्र है नागमती । नागमती राजा रत्नसेन की पहली रानी है जिसे त्याग कर राजा पद्मावती को प्राप्त करता है । नागमती को जायसी ने गोरखबंधा धर्षित जीवन की साधारिक वृत्तियां मोह प्रबंध धारि । यह मन को सर्वैव धर्षने मोह से बरुने रूठा है । उसको केवल जीवन में सीन किये रहते है धीर व्यक्ति के ऊर्ष विकास धर्षित परमात्मा की प्राप्ति में बाधा डालते हैं ।

नागमती का ऐसा रूप पद्मावत में कहीं नी स्पष्ट रूपन द्वारा प्रकट नहीं हुआ है । पाठकों की सहानुभूति बराबर नागमती के साध बनी रहती है । इधलिए बहुत से विद्वानों ने उसे रूपकार्ष का मंग माना है । परन्तु सूक्ष्म दृष्टि से देखने पर पद्मावत कार की नागमती उसके रूपक के सर्वैव विपरीत नहीं है । वह किन्हीं धर्षों में रूपक को पुष्ट करती है धीर उसी सांकेतिक धर्ष की व्यंजना करती है जिसे जायसी ने अंतिम छन्द में प्रस्तुत किया है ।

गोरखबंधे के रूप में नागमती मन रूपी राजा को धर्मित करती है धीर पद्मावती रूपी ब्रह्म की प्राप्ति के प्रेम माग में बाधा डालती है । जब राजा नागमती रूपी गोरखबंधे को त्यागकर प्रेम मार्ग पर अग्रसर हुआ है तभी वह पद्मावती रूपी ब्रह्म को प्राप्त कर सका है । नागमती के लिए कवि ने धनेक स्वर्णों पर नाम उपमान दिया है जो उसकी सांकेतिकता को धर्मित करता है । नाग उपमान पद्मावती के कोर्षों के लिए भी धाय है परन्तु नागमती के समग्र रूप के लिए धाय है । नागमती के लिए प्रमुक्त यह उपमान उनके नाम में धाय 'नाग' शब्द के कारण भी संभव हुआ है पर यह कवि की रूपक योजना में भी सह्ययता करता है । जीवन के अंजाल प्रबंध धारि की निम्न प्रवृत्तियां नाम के बिम्ब से धर्मित हैं । 'नाग उपमान बराबर जीवन के अंजाल के लिए प्रमुक्त होता रूठा है । तुमसी ने संवार को सर्व माना है

जागु जागु जीव बढ़ जोहँ जाग जागिनी
 देह देह नेह जागि बसे धन-जागिनी ।
 सोबत सपनेहु सहे संसृति संसाप रे
 बुझ्यो भृगुवारि जायी बेबरी के साप रे ।'

धौर
 मैं प्रपराय सिद्ध कबनाकर जानत प्रतर-जामी ।
 तुलसीदास भव-भ्याल प्रति तब सरन उरय त्रिपु गामी ।'
 प्रपराय में भी संसार को सर्व मानने की कल्पना धौर । भारतीय दर्शन धौर
 योग धामि में भी यह कल्पना बराबर रही है। संसार को सभी न सर्वत्र मिश्रणीय धौर
 उपेक्षणीय माना है । जायसी के मानस में इन मान्यताओं का किसी न किसी रूप में
 प्रभाव पड़ा होगा जिससे उन्होंने नागमती के गोरखबारे के रूप को प्रकट करने के लिए
 अपने स्वप्नों में नाग के रूपक प्रस्तुत किये हैं

१—बोहि दिन कर्ह ही नित डरौ रैन छिपावौ सुर ।
 नै बहँ बीन्ह कबँल कर्ह, मो कह होइ मँसूर ।

२—नागमती नागिन बुधि तारु, मुया मँसूर होइ नहि कारु ।
 (८२ ८६)

३—बोहि तोहि कारण मई भँ बारा रही नाग होइ पवन बपारा ।
 बिरह मँसूर नाग बह नारी तु मजार कब बैगु दोहारी ।
 (८६)

संसार बपवा जीवन के मोह बाल धौर प्रपंच की प्रतीक होने के कारण मुय्या
 उसकी निधा करटा है धौर बहल की स्तुति करटा है
 (३६८)

का पु छहि सियल की नारी बिनहि न पुर्न निति बपिपाटी ।
 पुठप सुपंच सो तिग्ह के जाया जहाँ माव का बरनौ पाया ।

जायसी के मानस में नागमती का रूप भी काला डी गया है । नागमती का यह
 रूप बहुत रम्यों में उसके सांकेतिक रम्यों को ध्वनित करता है ।
 (८४ ९-७)

नागमती को बुनिया बंधा न मानने के पक्ष में उसके बिरह रम्य की विशयता
 धौर रम्यीयता को दिया जाता है । नागमती का बिरह रम्य प्रतितीय है धौर यह
 पूर्वत लौकिक रम्यों को ध्वनित करटा है । यह बिरह रम्य बपात्मक रम्यों न लेख
 मात्र भी सहायता नहीं देता ऐसा प्रत्येक विद्वानों का मत है । परन्तु एक प्रश्न यहाँ
 उठ सकता है कि कवि ने नागमती का इतना विशय धौर कवन बिरह रम्य रम्यों

१. द्विज पत्रिका : अगस्त १ १३१
 द्विज पत्रिका : अगस्त १ १३१

किया ? पद्मावती के संदर्भ में भी बिरह का घबकाव या पर बहाने उसकी सेसिनी का वैभव कु ठिठ क्यों है ? क्या के स्मृति में बिरह के घनेक स्वप्न से पर कवि ने नागमती को इतना व्यापकत्व क्यों दिया है ? यह ठीक है कि कवि बिरह का मुख्यतः प्रेम पीर का कवि है और बहुत संघों में परम्परा पालन के लिए उसने इतना विस्तृत वर्णन किया है पर यह विचरता पद्मावती के बिरह वर्णन में भी तो आ सकती थी ? उसके बिरह को कई स्पष्ट भाए है पर वह न मम/पक्षी है न विचर सम्भवतः कवि जानबूझ कर उसकी उपेक्षा कर गया है। कवि के मानस में पद्मावती बड़ा स्वल्प है एवं वह स्थितिप्रज्ञ है। मन (रत्नसेन) के प्रति बैसा जयाव उसमें नहीं हो सकता। बैसा नागमती (मोह प्रपञ्च का) है क्योंकि वह स्वयं जीवन का जाल गोरल बना है। पद्मावती बहुत संघों में लोकोत्तर है सुख-दुख बिरह संयोग भादि से उसका बैसा मोह नहीं है राजा का बियोग पद्मावती को इतना व्यथित नहीं करता बितना नागमती को। प्रेम की भावना नागमती में अधिक है प्रेम की भावना नागमती में अधिक है प्रेम की पीड़ा उसे ही अधिक पीड़ित करती है। जायसी के प्रेम का धारण नागमती है पद्मावती नहीं।

समष्टि में कहा जा सकता है कि नागमती रूपक में निहित धर्म को यद्यपि सबैव व्यक्त नहीं करती उससे इतर भी उसका उज्ज्वल रूप दृष्टिगोचर होता है पर वह रूपकार्य के एकत्र विरोध में भी नहीं है और कुछ संघों में रूपक का निर्वाह उसके द्वारा होता है।

(४) हीरामन

हीरामन तीरे को जायसी के सांकेतिक धर्मों में बुर माना गया है। बुर का सूक्ष्म सिद्धांतों में बड़ा महत्व है। वही परमात्मा के प्रेम की चिनमारी विन्ध के हृदय में प्रकृतित करता है। उसके सहारे ही विन्ध ब्रह्म को प्राप्त कर सकता है। जायसी स्पष्ट कहते हैं

गुण विनु जनत को निरगुन पावा ।

हीरामन में बुर की यह सब विशेषताएं आरोपित हैं। वह रत्नसेन का पत्र प्रदर्शक है। वह उसे पथावती रूपी ब्रह्म का ज्ञान करवाता है और उसके हृदय में ब्रह्म को पाने की सासना की चिनमारी डाल देता है। तदनन्तर ब्रह्म का मार्ग उसको प्राप्त करने की युक्ति भी बही बताता है। विन्ध को ब्रह्म से मिलाने के लिए बही अधिक प्रयात्नशील है। वह पथावती (ब्रह्म) का संदेह (किया पादेह) रत्नसेन (साधक) तक पहुंचाता है। समग्र क्या में इस प्रकार तीरे का रूप बुर का ही है। परन्तु उसके लिए प्रयुक्त विन्ध योजना में प्रतीकात्मक धर्मों की संघटन धर्मव्यक्ति भी नहीं है। स्वयं जायसी ने बुर के लिए शीपक नाविक धारिक के बड़े संयुक्त उपमान दिये हैं पर हीरामन के लिए ऐसा कोई विन्ध प्रस्तुत नहीं हुआ है जो उसके बुर रूप की व्याख्या करे। परन्तु बटना क्रम में समके महत्व को देखते हुए उसे बुर रूप में निर्मकोच स्वीकार किया जा सकता है। इस प्रकार हीरामन सांकेतिक धर्मों को प्रकट करता है।

(३) बादशाह

पद्यावत का एक धर्म्य पात्र साहू घमावडीम है, बहु रूपसोमी है और रत्नसेन की पत्नी को प्राप्त करने की निम्ननीय चेष्टाएं करता है। साकेतिक धर्मों में बहु माया का प्रतीक है। परन्तु कथा की घटनाओं और बिम्बों में बहु कहीं ऐसे धर्मों को ध्वनित नहीं करता। उसके लिए बहु प्रमुख बिम्ब सूर्य है जो उसके माया रूप की व्यंजना में निरूपण भी सहायता नहीं करता। इस प्रकार बादशाह का साकेतिक धर्म माया निरूपण धर्मप्रति प्रतीक होता है।

(६) राघव चेतन

राघव चेतन बिलौड़ का निष्कासित व्यक्ति है जो साहू को पद्यावती का रूप सौन्दर्य मुनाकर बिलौड़ पर चढ़ाई के लिए धामधित करता है। पद्यावतकार ने अपने रूपक में उसे दूत कहा है। माया (साहू) को मन (राजा) को प्रमित करने के लिए धामाह्वन करने के कारण बहु दूत धमका घैठान को प्रतीक होता है परन्तु बहु और भी (पद्यावती व रत्नसेन) के मिसन के पश्चात् उसकी उपस्थिति की कोई उपयोयिता प्रतीक नहीं होती। राघव चेतन का पद्यावत में विशेष उल्लेख नहीं है। धामसी ने उसके लिए एक भी उल्लेखनीय बिम्ब नहीं दिया है। कुछ रूप चित्र प्रत्यक्ष हैं या पद्यावती के रूप के प्रति उसकी भावप्रति, मूर्च्छित होने की अवस्था को प्रकट करते हैं। उसके बिम्बों में उसके साकेतिक धर्मों की तनिक ध्वनि भी नहीं है धामप्रति में बहु घैठान या दूत का प्रतीक नहीं प्रतीक होता।

इसके परिचित धर्म्य गीत पात्र भी हैं बिनका रूपक में उल्लेख नहीं है ना ही बहु किसी प्रकार की साकेतिकता को प्रकट करते हैं।

निष्कर्ष

इस प्रकार प्रतीक होता है कि पात्रों एवं कथा में कुछ धर्म तो रूपकात्मकता की पुष्टि करते हैं पर इसके विपरीत कुछ धर्म ऐसे हैं जो काव्य के समस्त रूपकार्य को तबली में बाधा डालते हैं। और उसका साकेतिक रूप बिम्बुसहित हो जाता है।

पद्यावती मद्यपि बिम्बों की दृष्टि से एक लोकोत्तर पात्र प्रतीक होती है और उसकी घटनाएं धामि भी उसे लोकोत्तरता प्रदान करती हैं परन्तु उसके धनेक रूप ऐसे हैं जो उसे एकदम सौक्यिक बना देते हैं। पद्यावती का विवाह रत्नसेन से मिलन, नामवती से विवाह राजा के जटोरपराप्त बिसाप धामि से धामौकिकता की गंध भी नहीं धाती। रत्नसेन और पद्यावती का मिलन उच्च स्तर का नहीं है बिस स्तर का बहु भी का ही संकटा था, कवि ने बहो एक ही लोकोत्तर धमका धाम्यात्मिक संवेद्य नहीं दिया है। बहु धरयस्त सामान्य स्तर पर साधारण ली पुण्य का मिसन ही प्रतीक होता है। उसे योग धामि की बाती के प्रसंग से एक और कर दिया गया है। पद्यावती व नामवती का विवाह भी धाम्यात्मिकता के विपरीत है। रत्नसेन के बंदी होने व करण के उपरान्त पद्यावती का बिसाप भी इसी प्रकार का है। मद्यपि कवि ने

पद्मावती का बिभोग नाममती की अपेक्षा कम दिखाया है पर वह भी उसकी धार्म्यारिभक्तता के पक्ष में नहीं है। इस प्रकार अनेक रूपों में पद्मावती की सांकेतिकता में असंगतियाँ प्रतीत होती हैं। उसके कमल भादि के बिम्ब भी उधे लौकिक ही प्रकट करते हैं धार्म्यारिभक्त नहीं।

नागमती के 'नाग' भादि के कुछ उपमाओं को छोड़कर सामान्यतः वह एक धार्म्य प्रेममयी नारी प्रतीत होती है। वह एक भावार्थ वृहिली और धार्म्य प्रेमिका समती है गोरख बंधा कम ही लगती है। पाठक की भावनाएं भी उसके साथ गोरखबंधे जैसी नहीं रहती हैं बरम् पाठक की सहानुभूति बरखर नाममती के साथ रहती है। पद्मावती की अपेक्षा नागमती अधिक सरस है हृदय को मोहित करने की अधिक सामर्थ्य रखती है जो उसके सांकेतिक धर्मों के विपरीत है।

इसी प्रकार राजा रत्नसेन के लिए प्रयुक्त बिम्बों में उसका धर्म्य रूप भी सामने आता है वह है एक ठेकवाल क्षीर्यपूर्ण और प्रतापी राजा का। राजा के लिए बहु प्राकृत उपमान सूर्य और इन्द्र हैं जो राजा के ठेक प्रताप और रूप की शीष्टि के लिए आते हैं। इन्द्र का बिम्ब पीतलजिह्व है जो उसके परम्पराग्रस्त धार्म्यवीर्य रूप को प्रकट करता है। राजा के चेतन धराजहीन बाधधाह भादि के प्रतीकारत्मक धर्मों में भी अनेक असंगतियाँ रह जाती हैं जिनका उल्लेख पहले किया जा चुका है।

बस्तुतः बायसी के पाठों के जो रूप हमारे समक्ष आते हैं जहाँ एक में वह प्रतीकारत्मक धर्मों को प्रकट करते हैं और दूसरे में कथा के लौकिक धर्मों में सहायक होते हैं। पद्मावत में अनेक पात्र और अनेक स्थल ऐसे हैं जिनकी प्रतीकारत्मकता को धर्मीकार नहीं किया जा सकता। पद्मावती का बहु रूप रत्नसेन रूपी मन का बुनियाद बने (नाममती) को त्यागकर प्रेम मार्ग की साधना-सकल प्रतीकारत्मक धर्मों के पोषक हैं। परन्तु कुछ बिम्बों में इस प्रतीकारत्मकता को धर्मीकार किया है। डा. बड़म्बाम ने लिखा है कि नाममती को बुनियाद बंधा मानना सर्वथा असंगत है हम तो नाममती की धर्मीकता कर पद्मावती के प्राप्त करने के प्रबल को उही दृष्टि से देखते हैं जित दृष्टि से नाकर्षणी मछररनाथ को सिंहल जाकर पद्मिनी स्थियों के जाल में पड़ जाने को यह पठन है उत्तम नहीं। परन्तु इस प्रकार की मान्यताएं उचित नहीं हैं, यह कवि के प्रति धर्मीक है। बायसी की प्रतीकारत्मकता कुछ धर्मों में काव्य में पूरी उत्तरती है। यद्यपि स्वयं-स्वयं पर उसका रूप बिम्बुलमित हो गया है। ऐसा प्रतीत होता है कि रूपक कवि के मानस में था पर वह काव्य में उसका सम्यक निर्वाह नहीं कर सका। प्रतीकारत्मकता के अनुसार पद्मावती और रत्नसेन के मिलन के उपरान्त कथा को समाप्त हो जाना चाहिए था पर ऐसा नहीं होता कथा बहुत आगे तक चलती है और कवि उसमें इतिहास का समावेश भी कर बैठा है। इस प्रकार स्पष्ट है कि बायसी की प्रतीकारत्मकता की कुछ सीमाएं हैं जो उसकी सांकेतिकता को

पुर्बत प्रतिपादित नहीं करती है।

परन्तु कवि की इन सीमाओं और रूपक की असमर्थता के भी घनेक कारण हैं जिनको समझ लेना आवश्यक है। वस्तुतः कवि का व्यक्तित्व मिथित (कम्पोज़ेड) होता है। वह धार्शनिक व्योतिपी रहस्यवादी गणितज्ञ सभी हो सकता है। कवि सिर्फ कवि नहीं है वरन् वह अपने समाज परिस्थितियों संसार और स्वयं अपने व्यक्तित्व का एक मिथित प्रकाशन होता है। अतः काव्य में केवल कवि रूप का प्राण ही अनुपयुक्त है। जामसी भी ऐसे ही मिथित रूप में हमारे सामने आया है। जामसी बहुमूर्त वा फलतः जिन-जिन मठ मिल मिल विचार उसमें एक साथ प्रकट हुए हैं। रूपक की असमर्थता बहुत कुछ इसी के कारण है। जामसी एक ओर तो सूक्ष्म महगवियों के प्रभाव से कथा में रूपक देना चाहता है दूसरी ओर वह लोककथाओं के प्रभाव से प्रेम कथा भी देना चाहता है और रूपक से कथा को विद्वत करना भी उसे अभीष्ट नहीं है वह कथा को बराबर सरल बनामं रखता है। उसका सहृदय कवि सरस व प्रभावपूर्ण घटनाओं को किसी नृस्य पर भी छोड़ना नहीं चाहता चाहे उससे रूपक क्यों न विद्वत हो जायें। पद्मावती की विधा का प्रसंग ऐसा ही है। रहस्यवादी कवि रूपक को भूल कर स्वयं रम जाता है और तबीन उद्भावनाएं करने लगता है जो रूपक की विरोधी होती हैं।

जामसी का एक धर्म्य रूप इतिहासकार का है। यद्यपि वह घटनाओं का प्यारा नाम देने वाला इतिहासकार नहीं है पर कवि होते हुए भी वह इतिहास की अपेक्षा नहीं कर पाया है। इसी कारण बादशाह को पत्नी कहते हुए भी कवि उसके प्रति जैसे भाव व्यक्त नहीं कर पाया है। जैसे माया के प्रति होने चाहिए। बादशाह एक धार्मिक और शक्तिपी राजा के रूप में ही हमारे सम्मुख आता है क्रूर और उग्रद्वेषीय व्यक्ति के रूप में नहीं। कारण कि कवि की सामान्य रचि को लोक सामान्य में व्याप्त उसके धर्म और प्रथाप के कारण बनी थी चाहे की अपेक्षा नहीं कर सकी। पद्मावती व रत्नसेन का प्रतीकात्मक धर्म भी इतिहास के भा जाने सं समाप्त हो जाता है। इस प्रकार प्रतीत होता है कि पद्मावती की कथा का इतिहास उसकी रूपकात्मकता की सबसे बड़ी अड़चन है। इतिहास की प्रकृतता करना कवि को इष्ट नहीं था न सम्भव हो सकता था इस कारण वह अपने रूपक की समग्र रूप में प्रस्तुत नहीं कर सका है।

बिम्बों के अध्ययन से तो यह प्रकट होता है कि पद्मावती और रत्नसेन के मिलन तक ही काव्य में कवि की रचि रही है उत्तरार्द्ध में तो वह कथा को पूरा करने का प्रयत्न करता प्रतीत होता है। पूर्वार्द्ध में ही अधिक और प्रभावशाली बिम्ब योजना है। उत्तरार्द्ध में कवि की रचि का अन्त होने से उसकी कल्पना भी सुप्त-सी हो गई जाल पड़ती है। पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध की यह बिम्ब योजना की मिलनता प्रकट करती है कि संभवतः कवि को विद्वानों का प्रकाशन ही कथा के माध्यम से

पद्मावती का बियोग नागमती की अपेक्षा कम दिखाया है पर वह भी उसकी धार्म्यात्मिकता के पक्ष में नहीं है। इस प्रकार अनेक स्थानों में पद्मावती की सांकेतिकता में असंगतियाँ प्रतीत होती हैं। उसके कमजोर धारिक के विन्ध भी उसे लौकिक ही प्रकट करते हैं धार्म्यात्मिक नहीं।

नागमती के नाग' धारिक के कुछ उपमानों को छोड़कर सामान्यतः वह एक धारार्थ प्रेममयी नारी प्रतीत होती है। वह एक धारार्थ वृद्धिणी और धारार्थ प्रेमिका लगती है। गौरव तथा कम ही लगती है। पाठक की भावनाएं भी उसके साथ गौरवार्थ जैसी नहीं रहती हैं बल्कि पाठक की सहामुमुक्ति बराबर नागमती के साथ रहती है। पद्मावती की अपेक्षा नागमती अधिक सरस है। हृदय को मोहित करने की अधिक सामर्थ्य रखती है जो उसके सांकेतिक धारों के विपरीत है।

इसी प्रकार राजा रत्नसेन के लिए प्रमुख विन्धों में उसका अल्प रूप भी सामने आता है वह है एक तेजवान शौर्यपूर्ण और प्रतापी राजा का। राजा के लिए वह प्राप्त उपमान सूर्य और इन्द्र हैं जो राजा के तेज प्रताप और रूप की शक्ति के लिए आते हैं। इन्द्र का विन्ध पौराणिक है जो उसके परम्परागत धारार्थीय रूप को प्रकट करता है। राजा रत्नसेन अनादहीन आश्चर्य धारिक के प्रतीकारत्मक धारों में भी अनेक धारपरतियाँ रह जाती हैं जिनका अस्सेस पहले किया जा चुका है।

बस्तुतः बायसी के पात्रों के दो रूप हमारे सामने आते हैं जहाँ एक में वह प्रतीकारत्मक धारों को प्रकट करते हैं और दूसरे में कथा के लौकिक धारों में सहामुमुक्ति होते हैं। पद्मावती में अनेक पात्र और अनेक स्वतन्त्र ऐसे हैं जिनकी प्रतीकारत्मकता को धारार्थीकार नहीं किया जा सकता। पद्मावती का बड़ा रूप रत्नसेन स्त्री मन का बुनियाद बंधे (नागमती) को व्यापकर प्रेम मार्ग की साधना-संयुक्त प्रतीकारत्मक धारों के पोषक है। परन्तु कुछ विद्वानों ने इस प्रतीकारत्मकता को धारार्थीकार किया है। डा. बड़वांस ने लिखा है कि नागमती को बुनियाद बंधा मानना सर्वथा असंगत है हम तो नागमती की धारार्थीयता को पद्मावती के प्राप्त करने के प्रयत्न को उसी दृष्टि से देखते हैं जिसे दृष्टि से नागमती मछरमाच को सिंहत जाकर पद्मिनी स्त्रियों के पास में पड़ जाने को यह पठन है उत्पन्न नहीं। परन्तु इस प्रकार की माध्यताएं उचित नहीं हैं, यह कवि के प्रति धारार्थ है। बायसी की प्रतीकारत्मकता कुछ धारों में काव्य में पूरी उतरती है। यद्यपि स्वतन्त्र-स्वतन्त्र पर उसका रूप विन्धुलसित हो गया है। ऐसा प्रतीत होता है कि कविक कवि के मानस में था पर वह काव्य में उसका सम्यक निर्वाह नहीं कर सका। प्रतीकारत्मकता के अनुसार पद्मावती और रत्नसेन के मिलन के उपरान्त कथा को समाप्त ही जाना चाहिए था पर ऐसा नहीं होता कथा बहुत धारों तक चलती है और कवि अंत में इतिहास का समावेश भी कर देता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि बायसी की प्रतीकारत्मकता की कुछ सीमाएं हैं जो उसकी सांकेतिकता को

पूर्वतः प्रतिपादित नहीं करती है।

वरन्तु कवि की इन सीमाओं और रूपक की प्रसमर्थता के भी अनेक कारण हैं जिनकी संज्ञक लेना आवश्यक है। वस्तुतः कवि का व्यक्तित्व मिथित (कम्पोज़ेड) होता है। वह शारीरिक व्योक्तिपी रहस्यवादी यन्त्रितम सभी हो सकता है। कवि सिर्फ कवि नहीं है वरन् वह अपने समाज परिस्थितियों संसार और स्वयं अपने व्यक्तित्व का एक मिथित प्रकाशन होता है। अतः काव्य में केवल कवि रूप का प्राप्ति अनुपपन्न है। जायसी भी ऐसे ही मिथित रूप में हमारे सामने आया है। पायसी बहुपुत्र का पञ्चत भिन्न-भिन्न मत भिन्न भिन्न विचार उषों एक साथ प्रकट हुए हैं। रूपक की प्रसमर्थता बहुत कुछ इसी के कारण है। जायसी एक और तो सूखी नवनवियों के प्रभाव से कथा में रूपक लेना चाहता है दूसरी ओर वह लोककथाओं के प्रभाव से प्रेम कथा भी देना चाहता है और रूपक से कथा को विद्वृत करना भी उसे प्रधीसित नहीं है वह कथा को बराबर सरस बनाये रखता है। उक्त सद्बन्ध कवि सरस व प्रभावपूर्ण बटनाओं को किसी मूल्य पर भी छोड़ना नहीं चाहता चाहे सबसे रूपक क्यों न विद्वृत हो जाये। पद्मावती को विद्या का प्रसंग ऐसा ही है। रहस्यवादी कवि रूपक की मूल्य कर स्वयं रम जाता है और महीन उद्भावनाएँ करने लगता है जो रूपक की विरोधी होती है।

जायसी का एक अन्य रूप इतिहासकार का है। यद्यपि वह बटनाओं का खोरा मात्र लेने वाला इतिहासकार नहीं है पर कवि होते हुए भी वह इतिहास की अपेक्षा नहीं कर पाया है। इसी कारण बाबरशाह को माया कहते हुए भी कवि उसके प्रति वैशेष भाव व्यक्त नहीं कर पाया है। जैसे माया के प्रति होते चाहिए। बाबरशाह एक शीर्षकान और प्रतापी राजा के रूप में ही हमारे सम्मुख आता है और अनेकजीव व्यक्तित्व के रूप में नहीं। कारण कि कवि की सामान्य दृष्टि जो लोक सामान्य में व्याप्त उसके शीर्ष और प्रताप के कारण बनी की चाह की अपेक्षा नहीं कर सकती। पद्मावती व रत्नसेन का प्रतीकात्मक धर्म भी इतिहास के वाचक से समाप्त हो जाता है। इस प्रकार प्रतीत होता है कि पद्मावती की कथा का इतिहास उसकी रूपकारणकता की सबसे बड़ी प्रकृति है। इतिहास की प्रकृति बनना कवि को इष्ट नहीं था न सम्भव हो सकता था इस कारण वह अपने रूपक को समग्र रूप में प्रस्तुत नहीं कर सका है।

विन्धों के सम्बन्ध से तो यह प्रकट होता है कि पद्मावती और रत्नसेन के भिन्न एक ही काव्य में कवि की दृष्टि रही है अतः 'अतः' में तो वह कथा को पुनः करने का प्रयत्न करणा प्रतीत होता है। पूर्वार्द्ध में ही शक्ति और प्रयासवादी विन्ध योजना है। अतः 'अतः' में कवि की दृष्टि का अर्थ होने से उसकी कल्पना भी सुप्त-सी हो गई जान सकती है। पूर्वार्द्ध और अतः 'अतः' की यह विन्ध योजना की भिन्नता प्रकट करती है कि अन्ततः कवि की विचारों का प्रकाशन ही कथा के माध्यम से

अधीनस्थित था। उत्तरार्द्ध में बटनाए प्रयोज्यता अन्वी-बन्धी घाई है और यह वर्णनात्मक (डिस्क्रिप्टिव) न हाकर कथारमक (मरैटिव) हो गई है। इससे कवि की रूपक के प्रति रुचि प्रकट होती है। इसी कारण कुछ विद्वानों ने पूर्वार्द्ध के लक्ष्यों तक ही रूपक योजना मानी है।

बायसी के प्रासोचकी ने उनकी रूपक योजना पर विभिन्न मत प्रकट किये हैं। डा कमल कुमभट्ट ने लिखा कि 'सम्भवत यह ध्यास्या कवि ने काव्य लिखने के बाद का भी है। काव्य रचना करते समय उसके मस्तिष्क में यह रूपक नहीं था।' और सिखसहाय पाठक ने लिखा कि पश्चात् में न कोई धार्मिक सिद्धान्त प्रतिपादन प्रमुख विषय बनाया गया है और न उसमें किसी रूपक का आरोप किया गया है। भारतीय चिन्ता धारा में उसके साहित्यिक सौन्दर्य का मूल्यांकन होना चाहिए। इतिहास धार्मिक सिद्धान्त या किसी रूपक के रूप का आरोप उसके प्रति अयोग्य होगा। उसका सम्पूर्ण सौन्दर्य काव्य का है वह कवि मुहम्मद जाबरी के धारण की सर्वोत्तम धर्मव्यक्ति है। परन्तु यह मत पूर्वोक्त तर्क समर्थ नहीं है। बायसी के काव्य में रूपक योजना प्रथम है पर वह उसका रूप पूर्णतः नहीं दे पाया है जिसके कारणों का उल्लेख किया जा सका है। पश्चात् की काव्योक्ति का विन्ध मायमती का नाम का विन्ध राजा की इन्द्रात्मक स्थिति का विन्ध्यात्मक वर्धन घादि कथा के ऐसे रूप हैं जिसके कारण उसकी रूपक योजना को स्वीकार करना पड़ता है। यद्यपि सर्वैक विन्धों ने रूपकारमकता की रक्षा नहीं की है और रूपक को विगुणलित कर दिया है फिर भी विन्ध की दृष्टि से कथा में रूपक का स्वरूप स्वीकार किया जा सकता है। समग्रता में होने से यह रूपक धर्मोक्ति की अंगी में ही नहीं आता पर समाप्तोक्ति इसे प्रथम ही कह सकते हैं। समष्टि में कवि के विन्ध उसकी कथा की रूपकारमकता को ग्रंथ रूप में सिद्ध करते हैं।

समष्टि में इस अध्याय में हमने जाबसी के विन्धों के माध्यम से उसके विचारों एवं भावों का प्रकाश सिद्धान्तों को समझने का प्रयत्न किया है। सर्वप्रथम उन स्थलों का परीक्षण है जिसमें कविने सर्वाधिक और सर्वस्पर्शी विन्धविय हैं और उनका कारण क्या है? जाबसी ने संयोग विधाय करण और घात स्थलों पर सबसे अधिक सफल विन्ध योजना की है। इससे कवि के व्यक्तित्व पर प्रकाश पड़ता है। इस निष्पत्ति प्रकार की विन्ध योजना से सिद्ध होता है कि बायसी का प्रधान रूप प्रेम और के शायद कवि का है और फिर उसके व्यक्तित्व में सूफी साधक का रूप प्रधान है। उतने उन्हीं स्थलों पर विन्ध योजना उरकृष्ट की है जो उसके व्यक्तित्व से मेल खाते हैं प्रथम जिनमें उसकी रुचि है और जो उसके धार्मिक निष्ठ हैं।

बायसी के कुछ विन्ध बहु धातुत हैं उनमें विचारों की एक सचन परम्परा है

१. धार्मिक मुहम्मद जाबरी : डा कमल कुमभट्ट, १ : ४

२. पश्चात् का काव्य सौन्दर्य : सिखसहाय पाठक १ : ११

जो उसके चिन्तन को स्पष्ट करती हैं । ये पद्यावत के प्रमुख विम्ब हैं जो बहुधा एक ही पात्र धीर एक बटना के लिए घाते रहे हैं । इनमें जगद्विहीर सूर्य ज्योति कमल धीर इन्द्र के विम्ब प्रधान हैं ।

विम्बों द्वारा जायसी के भावों विचारों एवं सिद्धान्तों का भी अच्छा प्रकाशन हुआ है । जायसी की प्रमुख साम्यताओं जो मुख्यतः गुरु प्रेम संसार ईश्वर, जीव ब्रह्म द्रव्य धादि विपक्ष हैं का सम्बन्ध विम्ब योजना के द्वारा किया गया है ।

सन्त में परमावत की रूपक योजना का विम्बों के माध्यम से सम्बन्ध है जिससे रूपक का अस्तित्व होते हुए भी उसकी विभूतता पर दृष्टि जाती है । रूपक योजना कवि के मास में ही कर जसका सम्बन्ध प्रकाशन नहीं हो सका है जिसके प्रमेक कारण है । उसमें उसके इतिहासकार लोक कथाकार धीर सङ्घस्य कवि के रूपों की प्रमुखता है । समष्टि में जायसी की विम्ब योजना उसके विचारों एवं भावों का सम्बन्ध प्रकाशन करती है । विम्ब योजना से भाव धीर विचारों का सम्बन्ध व्यक्त निकट का है ।

मध्यकालीन विन्व योजना और जायसी

कवि एक सामाजिक प्राणी है। काव्य में वह अपने समय अपने समाज और और अपनी परिस्थितियों को प्रतिबिम्ब करता है। इसीलिए काव्य का युगानुक्रम विभाजन किया जा सकता है। परन्तु काव्य में कवि के केवल बाह्य जीवन की मूलक ही नहीं मिलती बल्कि उसमें कवि का अन्तर भी स्पष्ट होता है उसकी दृष्टि-दृष्टान्तों संस्कारों माननाओं आदि की व्यक्तिगत विधिष्ठताओं का प्रकाशन भी रहता है। और इस कारण एक ही समय परिस्थिति या समाज का प्रतिनिधित्व करने पर भी काव्य विभिन्न हो जाते हैं। उनकी यह विधिष्ठता कवि के आंतरिक और बाह्य जीवन की अन्तर्गत उसके विन्व-विधान से मिलती है। एक युग के होने पर भी सभी कवि एक से नहीं होते उनमें कुछ मूलभूत मिल्नताएँ होती हैं जो उनकी अभिव्यक्ति को निरन्तर प्रभावित करती रहती हैं। इन मूलभूत मिल्नताओं का प्रकाशन काव्य में विन्वों द्वारा होता है।

मध्यकालीन कवि यद्यपि एक ही प्रकार की सज्जन या निर्दुष की शक्ति परम्परा को लेकर बने हैं और एक ही प्रकार के समय और परिस्थितियों का प्रतिनिधित्व करते हैं फिर भी मूर तुलसी कबीर और जायसी आदि में कुछ मूलभूत विधिष्ठताएँ हैं जिन्होंने उनके काव्यों को विधिष्ठ अर्थात् मिल्न बनाया है। उनकी भावनाएँ, उनके विचार और उनकी अभिव्यक्ति—सभी उनके व्यक्तित्व के अनुसार अपने ढंग की हैं। उनके काव्य के विन्व उनकी विधिष्ठता या उनके व्यक्तित्व के प्रकाशक हैं। उसी प्रकार जायसी के विन्व उनके काव्य की भाँति विशेष प्रकार के हैं, जो विशेषतः धर्मवा व्यक्तित्व को भी प्रकट करते हैं। यहाँ हम मध्यकाल के कुछ प्रमुख कवियों के साथ जायसी के विन्वों और उनके निष्कर्षों का अध्ययन करेंगे। मध्यकाल के ये प्रमुख कवि हैं—कबीर, मूर, तुलसी देव बिहारी मतिराम और बलराम।

कवि के विन्वों का तुलनात्मक अध्ययन कई आधारों पर किया जा सकता है। इनमें प्रथम है

१—विन्व की उपात्त वस्तु

विन्व के चयन का क्षेत्र कवि की दृष्टि-दृष्टान्तों की व्यक्तिकता के कारण विन्व हो जाता है। सभी कवि एक ही वस्तु के चित्र नहीं देते और देते भी हैं तो

उनमें मुक्त-धर्म धारि के आधार पर निम्नता या जाती है। अर्थात् एक ही वस्तु को बहु भिन्न २ रूपों में प्रस्तुत करते हैं। जिस जीवन को कवि न व्यतीत किया है और जिसका उस पर प्रभाव पड़ा है वह जाने अनजाने उसके काव्य को प्रभावित करता रहता है। कवि जहाँ वस्तु को विन्ध के द्वारा प्रस्तुत करता है जिससे उसके हृदय का सामाजिक सम्बन्ध होता है अथवा जिसने उसको जीवन में भी प्रभावित किया है। इस प्रकार कवि के विन्ध उसके जीवन के परिचायक होते हैं।

साम्यवादी विन्ध-योजना में जायसी के विन्धों का स्थान विशिष्ट है। उनके विन्धों की उपास वस्तु उसके व्यक्तित्व का पूरा प्रतिनिध करती है। यही बात कबीर पुनरी, मूरु, बिहारी धारि के विषय में भी कही जा सकती है। उनकी उपासवस्तु उनके ज्ञानी भक्त श्रृंगारी धारि रूपों को स्पष्ट प्रकट करती है। सभी साम्यवादी कवियों में जायसी का विन्ध अथवा विनिष्ट है जो उनके प्रेमी हृदय की धर्म स्मरणा करता है। उनमें मुख्यतः अमर, दीपक-वर्तप मासती अमर भीप स्मरि वाक्य-स्मरि धारि के विन्ध बहुतायत में दिये हैं जो सब प्रेम व्यापार के कारण कहीत हैं। इनका प्रेम उसके नायक-नायिका पर आरोपित है। जायसी का प्रेमी हृदय सर्वत्र प्रेम की अनुभूति करता है। हुए पर पड़ी रस्ती उस विधिपूर्वक एकाकीपन की प्रतीक प्रतीत होती है सरोवर का छटा तम प्रेमी हृदय को विधीर्ग अथवा का संकेत करता है और जीर्ण-शीर्ष पीत-पत्र या बाल से टूटा हुआ पत्रा भी उसे प्रेमी के पीड़ित और दुःखित हृदय का आभास देता है। अमर वर्तप धारि अस्मरवत् प्रेम प्रतीक है जायसी ने उन्हें कुछ प्रयुक्त किया है पर नाच ही उसने जीवन के अनेक क्षण व्यापारों से भी प्रेम का संकेत पाया है जो उसके जीवन में प्रेम की प्रधानता को प्रकट करता है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि उसके प्रेम में किरह का बीड़ा की प्रधानता है जिसके कारण वह सृष्टि में किरह का प्रभाव ही अधिक महिष कर सका है। सयोग ने कवि को कम प्रभावित किया है इसलिए सयोग मुख्यतः विन्ध भी उसमें कम दिये हैं।

इसके विपरीत कबीर धारि सब कवियों का विन्ध अथवा उनके साम्यात्मिक रूप को स्पष्ट करता है। कबीर ने नाच और सिद्ध सम्प्रदायों के परम्परागत प्रतीकों का बहुतायत से प्रयोग किया है जो उनके ज्ञानी संत के रूप को अधिक स्पष्ट करते हैं। उनके साम्य प्रतीकों व विन्धों में भी साम्यात्म-ज्ञान की प्रधानता रही है। नसिनी उनके काव्य में आत्मा का प्रतीक है :

काहे पी नसिनी तू कुम्हलानी तेरे बाल सरोवर बानी ।
 जल में जतपति जल में बाल जल में नसिनी तोर निवास ।
 न जल स्वप्ति न उबर धानि तोर हेतु कुट्टु बँतनि नागि ।^१

१ अमर संस्कृती

मध्यकालीन विन्व योजना और जायसी

कवि एक सामाजिक प्राणी है। काव्य में वह अपने समय अपने समाज और और अपनी परिस्थितियों को प्रतिबिम्ब करता है। इसीलिए काव्य का बुगानुसूत विभाजन किया जा सकता है। परन्तु काव्य में कवि के केवल बाह्य जीवन की झलक ही नहीं मिलती बरन् उसमें कवि का अन्तर भी स्पष्ट होता है उसकी रचि-रचनानों उत्कारों भावनाओं आदि की व्यक्तिगत विशिष्टताओं का प्रकाशन भी रहता है। और इस कारण एक ही समय परिस्थिति या समाज का प्रतिनिधित्व करने पर भी काव्य विशिष्ट हो जाते हैं। उनकी यह विशिष्टता कवि के दार्शनिक और बाह्य जीवन की झलकी उसके विन्व-विधान से मिलती है। एक युव के होने पर भी सभी कवि एक से नहीं होते उनमें कुछ मूलभूत भिन्नताएँ होती हैं जो उनकी अभिव्यक्ति को निरन्तर प्रभावित करती रहती हैं। इन मूलभूत भिन्नताओं का प्रकाशन काव्य में विन्वों द्वारा होता है।

मध्यकालीन कवि यद्यपि एक ही प्रकार की संयुक्त वा निर्दुःख की मूर्ति परम्परा को लेकर जन्मे हैं और एक ही प्रकार के समय और परिस्थितियों का प्रति निधित्व करते हैं फिर भी मूर तुमसी कबीर और जायसी आदि में कुछ मूलभूत विशिष्टताएँ हैं जिन्होंने उनके काव्यों को विशिष्ट अर्थात् भिन्न बनाया है। उनकी भावनाएँ, उनके विचार और उनकी अभिव्यक्ति—सभी उनके व्यक्तित्व के अनुसार अपने ढंग की हैं। उनके काव्य के विन्व उनकी विशिष्टता या उनके व्यक्तित्व के प्रकाशक हैं। उसी प्रकार जायसी के विन्व उनके काव्य की भाँति विशेष प्रकार के हैं, जो विशेषतः धर्मवा व्यक्तित्व को भी प्रकट करते हैं। यहाँ हम मध्यकाल के कुछ प्रमुख कवियों के साथ जायसी के विन्वों और उसके निष्कर्षों का अध्ययन करेंगे। मध्यकाल के ये प्रमुख कवि हैं—कबीर मूर, तुमसी देव बिहारी मतिराम और बनागन्ध।

कवि के विन्वों का तुलनात्मक अध्ययन कई भाषाओं पर किया जा सकता है। इनमें प्रथम है

१—विन्व की उपास वस्तु

विन्व के अर्थ का क्षेत्र कवि की रचि-रचनानों की वैयक्तिकता के कारण विन्व ही जाता है। सभी कवि एक ही वस्तु के चित्र नहीं देते और देते भी हैं तो

उसमें युव-धर्म आदि के आचार पर मितलता या जाती है। अर्थात् एक ही वस्तु को बहु मित्त्र २ रूपों में प्रस्तुत करते हैं। जिस जीवन को कवि ने व्यतीत किया है और जिसका उस पर प्रभाव पड़ा है वह जाने मनवाने उसके काम्य का प्रभावित करता रहता है। कवि उसी वस्तु को बिम्ब के द्वारा प्रस्तुत करता है जिससे उसके हृदय का आत्मिक सम्बन्ध होता है अथवा जिसने उसको जीवन में भी प्रभावित किया है। इस प्रकार कवि के बिम्ब उसके जीवन के परिचायक होते हैं।

मध्यकालीन बिम्ब-योजना में जायसी के बिम्बों का स्थान विभिन्न है। उनके बिम्बों की उपात्त वस्तु उसके व्यक्तित्व का पूर्ण प्रतिनिधित्व करती है। यही बात कबीर, तुलसी मूर, बिहारी आदि के विषय में भी कही जा सकती है। उनकी उपात्तवस्तु उनके ज्ञानी भक्त भूगारी आदि रूपों को स्पष्ट प्रकट करती है। यही मध्यकालीन कवियों में जायसी का बिम्ब अथवा विभिन्न है जो उनके प्रेमी हृदय की अति व्यञ्जना करता है। उनमें मुख्यतः अमर-अमर, दीपक-पतंग आसती अमर मीप स्वाति आरुत-स्वाति आदि क बिम्ब बहुतायत में दिये हैं जो सब प्रेम व्यापार के कारण गूँथे हैं। इनका प्रेम उसके मायक—नामिका पर आगेरित है। जायसी का प्रेमी हृदय सर्वत्र प्रेम की अनुभूति करता है। कुछ पर पकी रस्सी उम बिरहिली के एकाकीपन की प्रतीक प्रतीत होती है। सरोवर का फटा तन प्रेमी हृदय की विहीन धक्का का संकेत करता है और जीर्ण-शीर्ण पीत-यत्र या शान से टूटा हुआ पत्ता भी उसे प्रेमी के पीड़ित और दुःखित हृदय का आभास देता है। अमर, पतंग आदि परम्परागत प्रेम प्रतीक हैं जायसी ने उन्हें नूतन प्रयुक्त किया है परन्तु ही उनमें जीवन के अनेक काम्य व्यापारों से भी प्रेम का संकेत पाया है जो उनके जीवन में प्रेम की प्रधानता को प्रकट करता है। यहाँ वह उल्लेखनीय है कि उसके प्रेम में बिरह या पीड़ा की प्रधानता है जिसके कारण वह सृष्टि में बिरह का प्रभाव ही अधिक लक्षित कर सका है, संयोग ने कवि को कम प्रभावित किया है इसलिए संयोग नूतन बिम्ब भी उसमें कम पाये हैं।

इसके विपरीत कबीर आदि सत कवियों का बिम्ब अथवा उनके आध्यात्मिक काम्य की स्पष्ट करता है। कबीर ने नाच और सिद्ध सम्प्रदायों के परम्परागत प्रतीकों का बहुतायत से प्रयोग किया है जो उनके ज्ञानी सत के रूप को अभिव्यक्त करते हैं। उनके काम्य प्रतीकों व बिम्बों में ही आध्यात्म—ज्ञान की प्रधानता रही है। नलिनो उनके काम्य में आत्मा का प्रतीक है :

आहे री नलिनो तू कुम्हलानी तेरे जाल सरोवर पानी ।
जल में उत्पति जल में जाल जल में नलिनो तोर बिबास ।
न जल तपति न उपर आधि, तोर हेतु कुहु कंसनि नाधि ।'

यहाँ उसका मुरझाना पल्लवित होना—सब उन्हें जीव के प्राण्मात्मिक व्यापार प्रतीत हुए हैं सम्भवतः जायसी की कल्पना यहाँ उस पर प्रेम—पीर या बिरह व्यापार का आरोपण करती परन्तु कबीर के काव्य में उसके व्यक्तित्व के धनुःकूल उसका रूप प्राण्मात्मिक हो गया है। यह बिम्ब अथवा उसके सन्त या ज्ञानी के रूप को प्रकट करता है।

तुमसी का हृदय एक मल्ल कर्मि का हृदय है पर वह सूर के मल्ल हृदय से भिन्न है। तुमसी जहाँ वैदिक संस्कृति का ज्ञाता और पंडित है वहाँ सूर मुख्यतः भाव विमोह मल्ल ही है। जायसी के बिंब विधान से इन दोनों कवियों का बिंब विधान पृथक् है। तुमसी ने ज्ञानी और पंडित होने के कारण अपने धार्मिक ज्ञान का परिचय अपने बिंब अथवा में भी दिया है। यहाँ इन कवियों के बिंब अथवा का विस्तार से वर्णन करना तो कठिन होगा क्योंकि उनका श्लोक अत्यन्त विस्तृत है। अतः केवल एक भाव या वस्तु के वर्णन के बिंब-अथवा का परीक्षण कर उनकी तुलना की जायसी और उनके निष्कर्ष निकाले जा सकेंगे यहाँ हम सभी कवियों के रूप वर्णन विषयक बिम्बों को ही लेते और उनकी भिन्नता पर प्रकाश डालने का प्रयत्न करेंगे।

तुमसी राम और सीता का रूप वर्णन इस प्रकार करते हैं

इतह राम सीय इतही री ।

अन रासिन बर-बरन हुरन नन सु बरता नकसिक निबही री ।

म्याह बिनुपन बसन-विभुपित सखि अचली मखि ठगि सी रही री

कीजन-अनम नाहु सोचन कन है इतनोइ लहूँ घाबु लही री ।

मुकमा सुरमि सागर और बुहि मयन अमियमय कियो है बही री ।

मखि माकन सिय राम सवारे सकल मुबन छबि मनहु मही री ।

तुलसिदास बोरी बेकत मुक-सोभा धनुन न जात कही री ।

रूप रासि बिरंभि नरो, सित्ता लबनि रति-काम लही री ।^१

सूर ने कृष्ण का रूप वर्णन इस प्रकार दिया है—

बैको पाई सु बरता को सागर ।

बुधि बिबेक मन पार न पावत ममन होत मन नापर ।

तनु अति स्वाम अयाब धम्बु निधि कदि पड पीत तरंग ।

चितवन चलत अचिक बधि उपजत बबर बरत सब अण ।

कनक अक्षित मनिमय धामुवन मुल जय कम कुल देत ।

अनु कलनिनि मयि प्रकट मयो सति थी धर सुधा समेत ।

बैलि सक्य सकल गोपीजन रही बिचारि बिचारि ।

तरवि सूर तरि लकी न लोभा रही प्रेम बधि हारि ।^२

१ भोक्तव्यः १ १६६-६७, ६८ १ २

२ सुरमन्त्र १५ ४८२, ५ ६४४, ६८ ६२४

ब्रह्मकाशीन विन्ध योजना और जायसी

और जायसी इस प्रकार

भै निशि तसि बीराहर बड़ी सोएह करत बंति बिधि गड़ी ।
बिहुंस मरीजे भाई सरोखी निरप साहि बरपन महु देखी ।
होतहि बरस परस भा लोना परती सरम भयझ सब सोना ।
(२१६ ७३)

यहां तुलसी मूर और जायसी ने बाह्य रूप से कोई विशेष अन्तर नहीं जान पड़ता परन्तु उनका विन्ध विधान उनकी प्रांश्रिक विशेषताओं को प्रकट कर देता है। तुलसी के रति और काम के उपमान उसके बर्म—पंडित रूप को प्रकट करते हैं। महु उमान तुलसी ही दे सकते थे जायसी नहीं क्योंकि रति—काम यादि देवी देवताओं की जो नामिक मान्यता उन्हें प्राप्त थी वह जायसी में न थी। उसका बह्य निर्गुण है। तुलसी का माञ्जन और मट्टे का रूपक भी उनके भक्त रूप को प्रकट करता है वह राम को परम बह्य मानते हैं और समस्त संसार उनकी दृष्टि में हैय निहृष्ट है इस रूपक से यही प्रतिपादित होता है। इसके विपरीत जायसी प्रतिबिम्बवाद के निकट है वह संसार में सर्वत्र उसका (बह्य का) धामोक बिकीर्य होया हुआ देखता है। उनके प्रकाश से सारा संसार उजासा हो जाता है। इसीलिए वह पद्मावती को शक्ति कहते हैं। मूरदास मुख्यतः भाव बिभोर कवि है उससे सीम्बर्य व्यंजक उपमान बिधि हैं और अन्त तक वह भक्ति भाव में प्रवगाहन करते प्रतीत होते हैं। इस प्रकार स्पष्ट है कि तीनों कवियों का रूप बचन उनके बिबों के बचन के धाबार पर भिन्न हो जाता है। मूर और भक्ति के धमिक निकट हैं उनमें वैदिक संस्कार हैं इसीलिए वह रति काम भक्ति-ज्ञान यादि के उपमान बराबर लाते रहे हैं। जायसी भी यद्यपि भक्त हैं परन्तु रूप इन निर्गुण भक्तों से बहुत भिन्न है वह मुख्यतः सूफी साबक हैं। तुलसी ने मनु और शतक्या के लिए मानस में भक्ति और ज्ञान का उपमान दिया है

बसहि तहां मुनि सिद्ध समाजा तंह शिप हरिब बनेउ मनु राजा ।
एब अन्त ओहहि मति धीरा प्यान भयति अनु बरी तरीरा ।'

ये उपमान उन पर पड़े वैदिक बर्म के संस्कारों को धमिभ्यस्त करते हैं इसके विपरीत जायसी मुसमान या धीर उसने इस्लाम बर्म और कुपान से प्रभाव ग्रहण किये हैं उसके उपमान इसका प्रमाण देते हैं पद्मावती के समय वह कहता है
अस धीवान पुरि होइ तासु विन विन किए धमिक परतासु ।
अस अंचल हीने मंह शिवा तल बजियार देखाई शिवा ।
(२० ६-७)

यहां कुपान की उस मान्यता का प्रभाव है जिसके धनुसार परमात्मा का प्रकाश धामे में रहे दीपक की भांति है। धीर वह दीपक एक धीमे के भीतर है।

तुलसी यह बिम्ब कभी नहीं ले सकता था। जायसी के बिम्ब यजन की यह विशेषता है जो उसके व्यक्तित्व के कारण है।

शृंगारी कवि देव मतिराम बिहारी धारि हृदय से शृंगार प्रिय है। बीजन में भी शीघ्र्य और शृंगार के वर्धन ही अधिक करते हैं। उनका स्वरूप जायसी की भाँति प्रेमी या साधक का नहीं है जो सर्वत्र बिरह की अनुभूति या धनीकिक प्रकाश की छाया पाता है बल्कि वह शृंगारिक है और मुख्यतः बीजन के बाह्य शीघ्र्य के उपासक है। उनका बिम्ब यजन इसको स्पष्ट करता है। धामी हमने भक्त कवियों के रूप वर्धन में सुहीत उपमाओं के आधार पर उनके अन्तर को स्पष्ट किया था वहाँ भी रीति कवि का रूप वर्धन स्पष्ट है। आधार्य देव बिरह व्यक्तित्व नायिका का स्वरूप इस प्रकार प्रस्तुत करते हैं

सखी के सकोच गुन सोच नून लोचनि
रिसानी पिय सों जो उन नेकु हँसि कुमो गाल ।
बैव वी सुनाय सुसिकाय उठि नये यहाँ
सिसकि सितकि मिसि जोइ रोय पायी प्राल ।
कौन जानै रे बीर ! बिनु बिरही बिरह ब्यथा
हाय हाय करि पछितासि न कसु मुहाल ।
बड़े बड़े नैनन सों घासु मरि नरि कारि
गोरो गोरो मुख धाज गोरो सो बिनोनी जात ।^१

यहाँ कवि ने शीघ्र शीघ्र्य होते मुख के लिए घोसे के पुलने का बिम्ब दिया है जो केवल बाह्य रूप साम्य को ही प्रकट करता है। इनके विपरीत जायसी की दृष्टि प्रेमी की दृष्टि है शृंगारी की नहीं इसलिए सम्भवतः वह ऐसे स्वरूपों पर रूप के शीघ्र होने तक ही न सीमित रहती बल्कि हृदयगत भावनाओं का उल्लेख भी करती। परन्तु देव की शृंगारिकता उनको हृदय तक नहीं जाने देती। जायसी में बिरह का कोई स्मृत ऐता नहीं है वहाँ उनके प्रेम पीड़ित हृदय की छाया न हो। उनके बिरह के समस्त उपमान रीतिकवियों के बिरह रूप साम्य पर आधारित न होकर मुख्यतः बर्ष साम्य पर आधारित हैं। स्पष्टतः जायसी का बिम्ब यजन उनके प्रेम पीर के माता भुंकी साधक स्वरूप से प्रभावित है और इसी कारण अग्य समस्त मध्यकालीन कवियों से पृथक है।

जायसी के बिम्ब यजन में एक अग्य तत्व भी बड़ा स्पष्ट है वह है उनके बिम्बों में उनके धामीण हृदय की झलक। पद्मावत में जायसी ने अनेक ऐसे उपमान दिये हैं जो प्रकट करते हैं कि जायसी धामीण जीवन से और गान के बाठावरण से बहुत अधिक प्रभावित थे। उन्होंने रस्सी घोमाती घाट, रहूँट की बरी नरोबर कुम्हार के

वर्तमान काल के इतने समय और व्यापक बिम्ब बिये हैं जिससे उनके प्रति कवि के विशेष धारणा का भाव होता है। मूरदास को छोड़कर अन्य किसी मध्यकालीन कवि में ऐसी बिम्ब योजना नहीं है। मूरदास में नाब और मुत्पत प्रतीकों के जीवन से उठाए गए धार्मिक उपमान मिस जाते हैं जिसका कारण कवि को उनके प्रति रागात्मकता भी है और कृष्ण के जीवन के प्रसंग में उनके उल्लेख की प्रावण्यकता भी। कृष्ण स्वयं ग्यास व घत कवि न उनके जीवन को समझता से प्रस्तुत कर सकने के लिए उनके 'पय पाग पतुली' धारि रूप बिम्ब हैं साथ ही यह उनके ग्रामीण जीवन में प्रभावित हृदय का प्रकाशन भी है। उनके नायक स्वयं ग्रामीण थे घत ग्राम जीवन के उपमान धारि प्रस्तुत करने में मूर को यह अनुभूति मिल गई है कि जिनसे स्वयं में संघ का काम किया है। परन्तु वापसी को ध्यान बर्धन विषय के कारण यह अनुभूति न मिल सकी इसलिए उन्होंने स्वयं-स्वयं पर विरह व्यथिता रानी मायमती के लिए भी ग्रामीण उपमान बिम्ब हैं। उनके वरमंत मेरों को उससे माहृत नीरव मोलाती धार कहा है और उनके मूल हृदय के लिए छन्दे हुए मरोबर के लस का सामने लाया है

तरवर हिया घटल मित जाई टूकि टूकि होइ होइ बिहराई ।

बिहरत हिया करहु विर डैका बीठि बबगरा मेजहु ऐका ।

(१३४ १-७)

वापसी में इस प्रकार के प्रभावित ग्रामीण जीवन में इहीत धार्मिक उपमान मिस जाते हैं।

वापसी के बिसकुल विपरीत है ऐतिहासिक के कवि। उनके वर्णनों में उनके नागरिक और दरबारी जीवन की छाया स्पष्ट मिलती है। उन्होंने सम्भवतः एक ही ग्रामीण उपमान अपने काव्य में नहीं दिया होगा। उनके नायक-नायिका की नाति उनके उपमान भी राजसी ही हैं। राजपरानों और दरबारों से उनका भीषा सम्बन्ध है। यहाँ बिहारी का एक पद इच्छा होया। कवि ग्रामीण नायिका का नौन्दर्य इस प्रकार बर्णित करता है

सहज लेख पबतीरिया पहिरत प्रति छवि होति ।

बल बाहर के बीप सौ जगमगाति लम जोति ।'

सहज श्वेत पंचतोमिया हाड़ी पहने से उसकी छवि कुछ बिन्धेय है। जाती है। बल बाहर के पीछे एक हुए दीपकों की भाँति उनके लम की उजोति जगमगाती है। यहाँ बल बाहर के पीछे रने हुए दीपकों का उपमान बड़ा सविध और व्यंग्यक है, साथ ही यह कवि के दरबारी जीवन का मुसर स्वयं भी है। बल बाहर का धर्म रत्नाकर भी इस प्रकार बेटे है। 'बल बाहर—बलिनों के उद्योग में किसी किसी ऊँचे स्थान से बल का मीना तथा बिल्लूत प्रवाह गिराया जाता है। यह बल बाहर

कहता है। किसी-किसी जल चादर के पीछे गबाल बनाकर दीपकों की पंक्तियाँ बना दी जाती हैं। रात्रि के समय जल चादर के पीछे से बहू जगमगाती हुई दीपावली बड़ी खोमा देती है। इसी दीपावली को बिहारी ने 'जल चादर के दीप' कहा है। यह दृश्य प्रत्यक्ष ही कवि बिहारी ने कभी अपने प्रायश्चित्त राधा के महल या अग्राम में देखा होगा और उससे निम्नलिखिते चीन्चर्य की अपूर्व प्रमुमुति की होगी जो काव्य में उसकी नायिका के रूप का सादृश्य बनकर था गई है। राजसी जीवन से अलग कवि इस प्रकार की बिम्ब योजना कर ही नहीं सकता। जायसी ने कुछ बिम्ब राजसी जीवन के बिये हैं पर वे बड़े सामान्य हैं। वह बिम्ब उस जीवन के भोछा के महीं केवल पूर बढ़े दर्शक के बिम्ब ही प्रतीत होते हैं। उदाहरण के लिए तिलक की उपमा सिहासनासीम राजा से दी गई है।

तैहि तिसाठ पर तिलक कईठा बुझल पाठ जानहु बुब डीठा।

कनक पाठ जतु बँडेऊ राजा सब तिलार अत्र से साजा।

(१०१ ५६)

यह राजसी जीवन का एक अत्यन्त सामान्य बिम्ब है। जो केवल राजसी जीवन के भोछा की ही कल्पना में था सकता हो सामान्य प्राणी की नहीं ऐसा नहीं है। कोई भी सामान्य वर्तक ऐसी कल्पना कर सकता है। जायसी में सेना आदि क कुछ बिम्ब ऐसे भी हैं जो उनके बिधिष्ट ज्ञान का परिचय देते हैं परन्तु प्रधानतः वह प्राणीक हैं और राजसी जीवन से उनका कोई निकट परिचय नहीं है। मध्यकालीन बिम्ब योजना से इसी कारण उनका बिधयत्व है।

जायसी का बिम्ब बिधान पर्याप्त परम्परागत है। मध्यकालीन सभी कवि परम्परा के समर्थक हैं। परम्परागत उपमाओं का सभी कवियों ने पर्याप्त प्रयोग किया है। मुख्यतः जो कवि साहित्य साम्प्रदाय प्राचीन संस्कृत और हिन्दी साहित्य से परिचित रहे हैं उनमें परम्परागत उपमाओं का बाहुल्य है। देव और बिहारी ने प्राचीन परम्पराओं से पर्याप्त उपमान ग्रहण किये हैं। बिहारी में भार्या लपटसरी पाषाणलपटरी और प्रमदकषटक के बहुत से उपमान ज्यों के त्यों मिल जाते हैं। डा० परमसिंह वर्मा कमलेश इन विषय में पर्याप्त संकेत दे चुके हैं। गूर और तुमसी ने भी प्राचीन परम्पराओं और साहित्यिक कृतियों से पर्याप्त ग्रहण किया है। कबीर ने भी सिद्ध और नाय साहित्य से बहुत से उपमान और प्रतीक ग्रहण किये हैं। गोरलबानी क कुछ ज्यों के त्यों अनुबाव कबीर में मिल जाते हैं। उदाहरण के लिए गोरलनाथ की का एक पर सीजिये

गगन महल में अंधा कूबा तहाँ प्रमृत था जाता।

सगुरा होइ सो भरि भरि पीरै निगुरा जाइ पियाता।'

इसी नाम को इन्हीं जैसे छन्दों में कबीर ने भी बिबा है
 भाकासे सुन धौबा कुबा पातासे पविहारि ;
 ताका परबी को हुंसा पीबे, विरला प्रावि विचारि ।^१

यही शून्य या ब्रह्म रस के लिए भाकाया मंडल सहस्रार ऋक के लिए धौबा कुबा प्रावि प्रतीक कबीर ने गोरखनाथ जी से ग्रहण किये हैं। इन सभी कवियों की भाँति जायसी ने भी परम्पराओं का बराबर प्रयोग किया है। उनसे प्राचीन साहित्यिक परम्पराओं को कम्पास और फारसी मसनवियों प्रादि से दृष्टीत धनेक बिम्ब निकल जाते हैं। परन्तु यदि मध्यकालीन कवियों ने परम्परामुक्त बिम्ब विधान करने वाले कवियों को सिवा बाब ही उनमें भी जायसी का स्थान उल्लेखनीय होया। जायसी ने बन्धु मद्यपि परम्परा से दृष्टीत की है। परन्तु उनको अपनी कल्पना द्वारा मनीष परिचाय दिबे हैं। उनके बिबों में उनकी स्वानुभूति की भस्मक संबंध प्राप्य होती है। उनके सूत्र बह सरोवर प्रादि के उपमान ऐसे ही हैं। मधुमातलीकार मम्मन ने भी बिरह अर्पित हृदय के लिए सरोवर के फटने का रूपक दिया है।

वेहि सेताप बुझ कब लागि मैं जल बीयत रहुबि ।
 जिनि सर जल बिनु कबंज उरज फाटि मरि जाय ।^२

और जायसी ने भी

सरोवर क्षिया घटत गित जाई हकि हकि होइ होइ बेहराई ।
 बिहरत क्षिया करारह पिड डैका वीठि बबयरा मैकडू ऐका ।

(११४ ९५)

परन्तु दोनों ही कवि को सूत्रम धतरदृष्टि और कल्पना की समृद्धता के कारण पर्वतित मिलन हो गये हैं। सरोवर सूफी काव्य में प्रेम का प्रतीक है जायसी ने भी उसे वही रूप में लिया है परन्तु उनकी कल्पना ने इसका सर्पका मनीष अर्थ से प्रणयन किया है। उन्होंने मुक्यत प्राचीन उपमान और प्राचीन मुहावरों में बिम्ब विधान करवाया है जो काव्य में मनीष प्रतीत होते हैं। इस प्रकार उनका बिम्ब विधान मध्य मध्यकालीन कवियों से अलग परम्परामुक्त होते हुए भी पर्याप्त स्वतन्त्र है।

समष्टि में जायसी का बिम्ब अमन उनकी अपनी विशेषताओं के कारण विशिष्ट प्रकार का है और सभी मध्यकालीन कवियों से भिन्न है। उनका व्यक्तित्व एक प्रेमी सङ्घर्ष का था जिसने उनका काव्य में प्रेम और बिरह नियमक उपमानों का बाहुल्य कर दिया है। इसके प्रतिरिक्त बह एक सङ्घर्ष प्राचीन हृदय रखने में जिसने उनके बिम्ब विधान को बराबर प्रभावित किया है। प्राचीन उपमान जितने जाबसी में हैं उतने किसी अन्य कवि में नहीं हैं। मूर और यमानन्द ने मूत्रमत्त प्राचीन शोको-कित्तियों का प्रयोग है प्राचीन उपमानों का नहीं। परम्परा का प्रभाव भी जायसी के

^१ कबीर नाम्ने सार : म० उल्लेखनाथ शर्मा व रामचन्द्रिय १ १२, पं ५२

^२ मधुमातली मम्मन संस्कृत मालाप्रकाश पुस्तक, पं २१

विम्ब विधान पर है जो श्रुताधिक रूप में प्रत्येक मध्यकासीन कवि पर लक्षित होता है। परन्तु यह अनानन्द की भाँति साहित्यिक परम्पराओं के अधिन निरूप न होने के कारण पर्याप्त परम्परामुक्त भी है।

(२) विम्बगत सवदना—

विम्ब की सफ़सता का ध्येय बहुत अंशों में उसकी समेकता प्रदान करने की दक्षिण पर निर्भर करता है। काव्य में दृश्य स्पर्श प्रायः स्वाह मध्य सभी सवितनाएँ मिल जाती हैं। परन्तु जीवन में ज्ञान-स्वापार की प्रधानता होने के कारण दृष्टि-परक विम्ब सबसे अधिक प्राप्त होते हैं।

मध्यकासीन कविता में भी दृष्टिपरक विम्ब सबसे अधिक प्राप्त होते हैं। रूप रंग से पूर्ण चित्रों के लिए सूर बिहारी और जायसी प्रायः का नाम उल्लेखनीय है। तुलसी में भी दृश्य चित्रों की प्रधानता है परन्तु उनमें केवल रूप ही रंग नहीं है। उनके अधिकांश चित्र केवल रेखाचित्र हैं रूप का वह बाहुल्य रंगों की वह चटक उनमें नहीं है जो बिहारी और मूर में है। बिहारी के अधिकांश चित्र प्राकृतिक चित्रकला के संकेतों से रंगों और विचारात्मकों में बने हैं जबकि तुलसी में अधिकांश रेखाएँ ही हैं। जायसी में दोनों प्रकार के चित्र उपलब्ध हो सकते हैं। परन्तु उनके अधिकांश चित्र छाया और प्रकाश के द्वारा निर्मित हैं। तुलसी में इस प्रकार के रंगों प्रायः का उल्लेख बहुत कम है। मुख्यतः उनके चित्रों में रेखाएँ मात्र ही स्पष्ट हैं। उदाहरण के लिए

दक्षिण सवय गिरि मंच पर रघुबर बास पतंग ।

बिगसे संत सरोज लव हरये मोचन भुय ।'

इस चित्र में केवल रेखाएँ ही हैं। कवि चाहता तो इसमें रंग भर सकता था पर उसकी प्रवृत्ति इस ओर नहीं है रंगों का उल्लेख तुलसी ने बहुत कम किया है। प्रकाश और छाया का उल्लेख भी उनमें कम है। इसके विपरीत जायसी के अधिकांश चित्र प्रकाश और छाया द्वारा निर्मित हैं। उनके सूर्योदय और सूर्यास्त के बहुत प्रयुक्त विम्ब हैं जो सर्वत्र प्रकाश और छाया को प्रस्तुत करते हैं। उदाहरण के लिए पद्मावती का रूप वर्णन दृष्टव्य है

उद्यत सूर जस देखिए धार छर्वं लेहि पूष ।

छीसे सबे चाहि छवि पद्मावति क रूप ।

(२५ ८९)

यहाँ कवि ने पद्मावती के जयमघाटे शीश्वर्य के लिए सूर्य के उदय होने का रूपक दिया है। साथ ही अन्य रूपों के अभाव में छवि जान घबका मग्न हो जाने से प्रकाश की अपूर्वता की व्यंजना भी हुई है। जायसी के अधिकांश चित्र इसी प्रकार के हैं यद्यपि रंगों का प्रयोग भी उन्होंने कभी कभी किया है पर इस ओर वे विशेष

प्रयत्नशील नहीं हैं। रंगों और बर्णों का वास्तव्य सूर के काम्य में अपने समस्त जीवन के साथ धारा है। सूर ने राधा कृष्ण के रूप रंग से पूर्णतः अनेक विषय विद्ये हैं।
उदाहरणार्थ—

बेरे हिय सारं मन मोहन के पये री बित्त-बोरि ।
धबड़ी इहि मारग से निकसे छबि निरकत लून तोरि ।
मोर मुहुट झबननि मनि कुः सम जर बनमास पिछोरि ।
इसन बचक उपरन परनाई देकत परी ठगोरि ।^१

डा० शाबिबी सिन्हा इस पद की रंग योजना का विवेचन करती हुई लिखती हैं, 'मोर-मुहुट के अनेक बर्णों के साथ मनि-कुः सम की धारा तथा सतरंगी बनमास के साथ पीताम्बर के एक पीत बर्ण की योजना के अनुरूप बर्णों का विश्वास तो है ही ऐसा विश्वास नहीं होता कि सूर की धात्री धात्रियों को बहुरंगी बर्णों के सौन्दर्य को निकारने के लिए उसे एक बच की पृष्ठभूमि में रखने का रहस्य भी ज्ञात था।^२ बस्तुतः सूर की उत्कृष्ट बर्ण योजना उनके कल्पना शील और असाधारण व्यक्तित्व का अनूठा धामास देती है। बामसी में पृष्ठभूमि से बस्तु का उभारने को कलात्मक प्रयास तो सर्वत्र है पर वह रंगों धात्री बर्णों के धात्रा पर नहीं है। उनके चित्रों में छाया प्रकाश के चित्रों की ही बहुलता कही जा सकती है।

रीतिकानीय कवियों में रंगों की प्रधानता है बरन् रंगों के प्रति उनका विशेष मोह है। बिहारी बच मतिराम सभी रूप के साथ साथ रंगों पर भी विशेष ध्यान देते हैं। रंगों की यह भाग्यकता बहुत घण्टों में उनके दरबारी जीवन के कारण है। उन्होंने दरबारों में रूप रंग का यन्त्रीसा स्वरूप देखा था। उन्होंने जिष्ठ सौन्दर्य का दर्शन जीवन में किया था वह तापस ब्रह्मर्षियों का साथ साथ सत्त्वा से रहित सौन्दर्य नहीं था बरन् उस रंगों धात्रि के द्वारा (विभिन्न बस्तुओं धात्रि से) निरय नया रूप दिया जाता था। इस प्रकार रूप रंग के प्रति हमके हृदय में एक सच्च ब्रह्मर्षक उपसृत ही पया था जो काम्य में बर्णों के द्वारा प्रकट हुआ है। बिहारी कठसई का प्रथम पद ही देखिये यह रंगों की मोहकता से ओतप्रोत है और बिहारी के राजसी जीवन का सुन्दर प्रतिबिम्ब है—

मेरी भव बाबा हरी राधा मामरि तोह ।
जा तन को लाई परी स्याम हरित बुलि होइ ।^३

राजसी जीवन से सूर तुलसी वा बायली ऐसी रूपना कर ही नहीं सकते थे। यह कल्पना कवि की अपनी अनुभूति है उसके जीवन का सुन्दर प्रतिबिम्ब है। इस प्रकार स्पष्ट है कि रीतिकाल के दरबारी कवियों के विभिन्न स्वतः ही रूप रंग से पूर्णतः

१ अक्षर ३ बरन रंजन संख्या ६०

२ अक्षर ३ के रूप मतिराम में अधिष्ठाता शिव : वा सिन्हा १० १०४

३ बिहारी कठसई १०१

हो गये हैं जो उचित ही है। रीति-कवि भगवानन्द के चित्र भी टेकनीकसर हैं। उनकी रूपरंग की जागरूकता का कारण केवल दरबारी जीवन ही न था बल्कि उनकी नायिका मुखाभा' भी थी। वह रूप रंगों के सौन्दर्य से पुरित एक जीवित व्यक्तित्व की संभवतः वह नायिका थी। उसका रूप सदैव साज सज्जा रंगों की षटक-मटक से जयमगाता रहता होगा। उसके रूप की मही धनुमूठ जगमगाहट कवि ने अपने चित्रों में भी दी है—

भाबनि भपेठी चित्तबनि भेद-भाय भरी ।
 भसति ललित भोज बल तिरछानि में ।
 छवि को सदन मोरो बदन दबिर भाल
 रस निचुरत मुहु मीठी मुखवयानि में ।
 बसन बमक कति किये मोती नाल होति
 पिय सो लड़कि प्रेम-पगी बतरानि में ।
 धामंभ की निधि जगमगति छत्रीसी बाल
 धंयनि धमंग-रंय कुरि मुरि जानि में ।'

यहां कवि ने नायिका के गौरव वर्णों की बमक धीर रूप की जगमगाहट का वर्णन किया है। यह सब दृश्य बिम्ब है। रूप की यह प्रतिम रसि कवि ने स्वयं जीवन में देखी थी यह कोरी कवि कल्पना नहीं है बल्कि स्वानुभूति है। इस प्रकार स्पष्ट है कि मध्यकालीन कवियों में भक्तिकाशीन कवियों की अपेक्षा रीतिकालीन कवियों में रूप रंग के प्रति सजगता अधिक है जो बहुत अंशों में उनके व्यक्तित्व के कारण है। जायसी ने उनकी सहृदयता के धनुमार छायात्मक चित्र ही अधिक मिलते हैं। यद्यपि उनमें रंगों की बिबिधता भी मानसरोवरक ताल धारि के वर्णन में मिल जाती है। परन्तु उनके चित्रों में छाया प्रकाश की ही प्रधानता है।

दृष्टि-परक बिम्बों के प्रतिरिक्त स्पर्श ध्राज अक्षय धारि से सम्बन्धित भविष्य नाम भी मध्यकालीन कविता में मिल जाती है परन्तु उनकी संख्या घटत्यस्य है। स्पर्श बिम्बों में मुख्यतः सुन्दर और शीतल स्पर्श का प्रयोग हुआ है जो प्रायः सभी मध्य कालीन कवियों में है। तुलसी ने राम की शीया के सुन्दर और कोमल स्पर्श का उल्लेख किया है

तहू तब चित्तलय मुनन मुहाये लछिमन रवि निज हाप उताये ।
 ता पर बहिर मुहुल मुगछाला तैहि धासन धासीन हुपाना ।'

बिहारी ने भी बसुना तट के समन कुर्बों की शीतलता का उल्लेख किया है -
 सघन कुब्ज छाया सुन्दर शीतल मंद लबीर ।
 मन हृष्य जाल धर्यी बहै उहि बसुना के तीर ।'

१ कविवर्य कविचन्द्र : कविचन्द्र संख्या १

२ दृश्यचित्रमाला : संस्करण १ पृ ७६६

३ बिहारी रत्नकर : भाग ६२१ पृ १०१-२

धर्यात यमुना की के उस धीर पर (जहाँ हृण के साथ विविध विहार किये थे) प्रथमी (उनके उपस्थित न रहने पर भी) मन (उनके स्मरण में निमग्न होकर) बही (बैसा उनकी उपस्थित में रहता था बैसा ही) हो जाता है (घट) सपन कुंज की छाया (तथा) गुरभि समीर (जो बिरह में दुःखकारक या ताप कारक होते हैं) सीतल (हो जाते हैं) यहाँ कवि ने यमुना की के वर्णन में उसकी शीतलता व गुरभित समीर का विशेष उल्लेख किया है जो क्रमशः स्वर्ण और धातु बिम्ब के उदाहरण हैं। प्रायः सभी कवियों में स्वर्णपरक बिम्बों में ऐसे ही स्वर्णों का उल्लेख है। जायसी ने भी सभन धमराइयों की शीतलता का उल्लेख किया है

जबहि दीप निपरबा जाई, बनू कबिलास निपर भा भाई ;
 बन धरंराऊ लाम बहू पासा जठै पुहुनि हुति लाम दकाता ;
 तरबर सब मलमागिरि लाए, भे जग छाड़ रंनि होई छाए ;
 जमं समीर सोहाई छाहा जैठ जाइ लाम तेहि माहा ।

(२० १४)

यही प्रवृत्ति मध्यकाल के सभी कवियों में प्रमुख रही है। कठोर स्वर्णों की बर्णना बहुत कम हुई है, सर्वत्र स्निग्ध कोमल यमून धारि स्वर्ण ही उल्लेखनीय रहे हैं। कारण कि सभी मध्यकालीन कवि जीवन के यथार्थ से दूर थे जीवन के हीम धीर कटु पक्ष पर उनकी दृष्टि कभी नहीं गड़ी है। वह सर्वत्र धारि वस्तुओं की बर्णना ही करते हैं। घट कठोर सुरदरे धारि स्वर्ण समग्र मध्यकालीन काल में गहरी के बर बर धामे हैं। स्पष्ट स्वर्णपरक बिम्बों की विविधता के बर्णन मध्यकालीन कविता में नहीं होते।

एक अथवा धीर स्वादपरक बिम्बों के विषय में भी यही कहना ही सकता है मधुर रंभों मधुर बर्णों धीर मधुर स्वादों का उल्लेख ही प्रभावशाली मध्यकालीन कविता में मिलता है। रंभों में अधिकतर सुगन्धियों बीबा, जन्मन, बसुरसम आदि का ही उल्लेख है। अधिकतर जगतों और लेपों की भीगी रंभों का ही उल्लेख है। जायसी ने इस प्रकार की रंभों का सर्वत्र उल्लेख किया है। उनकी नायिका पद्मावती स्वतः ही पद्म-रंभ से युक्त है। इस मन्त्र स भ्रमर उसके साथ जये रहते हैं। यही गहरी समस्त पद्मिनी नायिकाओं में कवि ने पद्मरंभ की कल्पना की है—

पानि भरई धारहि पानिहारी, जप छप पद्मिनी नारी ।
 बह्य रंभ तेम्ह जप बसाही, जंवर लानि तेम्ह लम फिराहि ।

(३२, १२)

बिहारी ने पद्मिनी नायिका के धरि में केसर की पत्र का उल्लेख किया—

कर्चन—लम बन—बरन, बर रट्टी रंगु मिलि रंग ।
 जानी जाति सुबाह ही केसरि जाई रंग ।

हो गये हैं जो उचित ही है। रीति-कवि यमानन्द के चित्र भी टेल्मीकसर हैं। उनकी स्मरण की आगच्छता का कारण केवल बरबारी जीवन ही न था बल्कि उनकी नायिका 'सुखाना' भी थी। वह रूप-रंभों के सौन्दर्य से पुरित एक जीवित व्यक्तित्व भी संभवतः वह नायिका थी। उसका रूप सर्वत्र साज सज्जा रंगों की चटक-मटक से बसमगाता रहता होगा। उसके रूप की यही अनुभूत बसमगाहट कवि ने अपने चित्रों में भी की है—

साक्षि सपेटी चितबनि भेद नाय भरी।

ससति ललित लोच बस तिरछानि में।

छवि जो सबन गोरो बदन बहिर भाल

रस निचुरत म्हु मीठी मुतवयाति में।

रसन बनक छैमि हिये मोठी माल होलि

पिय सौ लङ्कि प्रेम-पबी बतरानि में।

धामर की निधि अपमपति छबीली बाल

अंनति धामर-रंभ बुरि मुरि आनि में।^१

यहाँ कवि ने नायिका के गौर बरुँ बातों की बमक धीर रूप की जगमगाहट का वर्णन किया है। वह सब दृश्य बिम्ब है। रूप की यह अप्रतिम राशि कवि ने स्वयं जीवन में देखी थी यह कोरी कवि कल्पना नहीं है बरन् स्वानुभूति है। इस प्रकार स्पष्ट है कि मध्यकालीन कवियों में भक्तिकासीन कवियों की अपेक्षा रीतिकालीन कविता में रूप रस के प्रति सजगता अधिक है जो बहुत अंशों में उनके व्यक्तित्व के कारण है। बायसी में उसकी सहृदयता के अनुसार छायात्मक चित्र ही अधिक मिलते हैं। यद्यपि उनमें रंगों की विविधता भी मानसरोवरक ताल धारि के वर्णन में मिल जाती है। परन्तु उनक चित्रों में छाया प्रकाश की ही प्रधानता है।

दृष्टि-परक बिम्बों क प्रतिरिक्त स्पर्श प्रायः अलग धारि से सम्बन्धित भवित पाएँ भी मध्यकालीन कविता में मिल जाती हैं परन्तु उनकी संख्या अत्यल्प है। स्वयं बिम्बों में मुख्यतः सुन्दर और शीतल स्पर्श का प्रयोग हुआ है जो प्रायः सभी मध्य कालीन कवियों में है। तुमरी ने राम की बीबा के सुन्दर और कोमल स्पर्श का उल्लेख किया है

तह तब किसलय मुमन सुहाये लछिमन रवि निज हाथ उसाये।

ता पर बहिर मुहुस मुगछासा तेहि घासन घासीन हुपाना।^२

बिहारी ने भी यमुना तट के सखन कुबों की शीतलता का उल्लेख किया है -

सखन कुब छाया सुन्दर शीतल मंत्र सबीर।

मन हूँ जात अग्यो बहूँ उहि यमुना के तीर।^३

१ कवलींद्र कविचंद्र कविचंद्र संख्या १

२ रामचरितमानस लंकाकांड १ ७६६

३ बिहारी रत्नाकर : बाग ६८१ १ १ १ १

प्रबोधत यमुना जी के उस तीर पर (जहां कुण्ड के साथ विविध बिहार किये थे) धब भी (उनके उपस्थित न रहने पर भी) मन (उनके स्मरण में निमग्न होकर) बही (जैसा उनकी उपस्थित में रहता था वैसा ही) हो जाता है (धत) समन कुण्ड की छाया (तथा) सुरभि सपीर (जो बिरह में कुन्बकारक या ताप कारक होते हैं) पीतस (ही आते हैं) यहाँ कवि ने यमुना जी के बर्धन में उसकी सीतलता व सुरभित सपीर का विशेष उल्लेख किया है जो कल्प स्यर्ष्य और प्राण बिम्ब के उदाहरण है। प्रायः सभी कवियों में स्पर्शपरक बिम्बों में ऐसे ही स्पर्शों का उल्लेख है। जायसी ने भी सबन धमराइयों की सीतलता का उल्लेख किया है

जबहिं बीप निपरबा जाई जनु कबिसास निपर ना जाई ;

जब धबंरारु साथ बहु पासा पठै पुहुमि हुति लाग धकासा ।

तरबर सब जलपाविरि साए, भँ जप छाहि रँनि होई जाए ।

मझे समोर सोहाई छोहा बँठ जाइ लारं तैहि माहा ।

(१७ १४)

यही प्रवृत्ति मध्यकाल के सभी कवियों में प्रमुख रही है। कठोर स्पर्शों की बर्णना बहुत कम हुई है। खरब लिख कोमल मधुम प्रादि स्पर्श ही उल्लेखनीय रहे हैं। कारण कि सभी मध्यकालीन कवि जीवन के प्रबोध से दूर थे जीवन के हीन और कट्ट पक्ष पर उनकी दृष्टि कभी गई ही नहीं है। वह खरब धारण वस्तुओं की बर्णना ही करते हैं। धत कठोर सुरबरे प्रादि स्पर्श समस्त मध्यकालीन काव्य में नहीं के बराबर प्राये हैं। स्पष्टतः स्पर्शपरक बिम्बों की विविधता के बर्णन मध्यकालीन कविता में नहीं होते।

प्रायः धबल और स्वाधपरक बिम्बों के विषय में भी यही कहा जा सकता है मधुर गंधों, मधुर बसों और मधुर स्वादों का उल्लेख ही प्रधानतः मध्यकालीन कविता में मिलता है। गंधों में धबिकठर सुगन्धियों बीबा, बन्दन बपुरसम प्रादि का ही उल्लेख है। धबिकठर उबटनों और मेपों की भीगी गंधों का ही उल्लेख है। जायसी ने इस प्रकार की गंधों का सर्वत्र उल्लेख किया है। उसकी नायिका पद्मावती स्वतः ही पद्म-गंध से युक्त है। इस गंध से प्रमत्त उसके साथ कये रहते हैं। यही नहीं समस्त पद्मिनी नायिकाओं में कवि ने पद्मगंध की कल्पना की है—

पानि मरई धारहि पनिहारी कप सजप पद्मिनी नारी ।

बहुम रंज तैम्ह धम बसाही बंजर लागि तैम्ह संग किराहि ।

(१२, १२)

बिहारी ने अपनी नायिका के शरीर में केसर की गंध का उल्लेख किया—

कबंधन—तन बन—बरन, बर रह्यो रँगु मिति रंग ।

जानी जाति सुबाह ही केसरि जाई रंग ।

प्रायः सभी कवियों ने इसी प्रकार की गन्धों का उल्लेख किया है। यन्त्र की दृष्टि से जायसी के वर्णन भी विशिष्ट नहीं है। मध्यकाल के प्रायः सभी कवियों की भाँति वह भी इन सामान्य मञ्जुर पार्श्वों का उल्लेख ही कर पाव है।

ध्वनियों का वैविध्य भी मध्यकालीन कविता में कम ही दिखाई पड़ता है। मुख्यतः वाद्यों के गम्भीर मर्जन गगाड़ों आदि वाद्यों के गम्भीर बोधों की धोर ही इन कवियों की दृष्टि अधिक रही है। जायसी ने पक्षियों की बोलियों का उल्लेख प्रायः किया है परन्तु वह अनुरक्तात्मक न होने से विशेष सफल नहीं हो पाया है जैसे—

भोर होत बासहि कुहकुही बोलहि पांडुक एकै तुही ।
 सारो तुबा सो रहूँ कह करहि गिरहि परेबा प्री करबरहि ।
 पिउ पिउ साय कर पपीहा तुही तुही कह कुहक बीहा ।
 कुह कुह कोइल करि राखा प्री भिग राख बोल बहु भाखा ।
 बही बही क महरि पुकारा हारिल बिनबे धापनि हारा ।
 कुहकहि मार सुहावन लाग होइ कोरहर बोलहि कावा ।

(२१ २-७)

यहाँ रहूँ कह करमर कुह कुह पीक कुह कुहमा आदि ध्वनियाँ हैं परन्तु वह ध्वनिपरक बिम्बों का उल्लेख नहीं प्रस्तुत करती। तुलसी ने भी इसी भाँति ध्वनियों का वर्णन किया है। पदा सरोवर के बदन में बहु कहते हैं—

जिससे सरलित माना रंगा मञ्जुर मुञ्जर प्रजत बहु भु पा ।
 बोसत जसकुचकट कसहसा प्रभु बिलोक जनि करत प्रसंसा ।
 तब पस्तक कुसुमित तब माना बँजरीक पाठनी कर माना ।
 सीतल मद सुगंध सुभाऊ, संतत बहई मनोहर बाऊ ।
 कुह कुह कोकिल भुन करहीं तुन रब सरस ध्यान मुनि ठरही ।^१

यहाँ सरोवर के तट पर जसकुचकट, इस कोयल भ्रमर आदि घनेक जीव-जंतुओं की सुकल ध्वनियों का उल्लेख है। प्रायः सभी कवियों में इसी प्रकार के वर्णन हैं। कम कटु ध्वनियों के प्रति इनकी विशेष रुचि नहीं है। तुलसी ने ध्वन्य मुद्र स्वर्णों में कर्ण कटु एवं भीषण ध्वनियों की चर्चा की है जैसे—

मल-भद्र, मुकुट-बसकंठ-साहस सहस
 नृग-बिछरनि जनु बज-टाँकी ।
 बसन बरि परनि बिबकरत बिगल कसहु
 सेब संकृदित संदित पिताकी ।^२

यहाँ हनुमान की भयाणक 'हाँक' का वर्णन है जिससे भयभीत हाकर बरती बोलन लपटी है और बिघाड़ों के हाथी बिबाड़ने समय है। जायसी ने भीषण ध्वनियों

१ रामचरितमण्डल : अरण्यकांड १ ३४१ ।

२ कवित्त.वन्दी : अरण्यकांड १ ३४

में केवल मेष का गर्जन उल्लेख किया है। घुड़स्वनों पर वह ध्वनि बराबर तुनी या छफ्फी है।

घास्ट धातु के दोला फूटहि, गिरि पहार पर्वे सब फूटहि।
 फूटं कोट फूट जस तोता घोहरहि बुझ परहि कीसीसा।

(४२२ ६७)

सर्पादि में जायसी अन्य मध्यकालीन कवियों की भांति ध्वनि कंकड़म सामान्य बिम्ब ही ले सका है। ध्वनि बिम्बों की दृष्टि से मध्यकाल की कविता बिशिष्ट नहीं है, जायसी भी सामान्य ही है। स्वारपरक बिम्बों का वैविध्य भी मध्यकालीन कविता में नहीं मिलता। किसी भी कवि ने स्वारों का विशेष उल्लेख नहीं किया है। जायसी ने स्वारों में मधु के स्वार का उत्तम प्रत्येक स्वरों पर किया है। घमूठ का उल्लेख समस्त मध्यकालीन कविता में पर्याप्त मिलता है। तुलसी ने राम सीता तथा अन्य पात्रों के प्रिय बचन के लिए घमूठ का उल्लेख किया है वहाँ मार्ग में मिलने वाली स्थियों के बचनों की भी 'बुधा-रसतामे' कहा गया है।

तुमि तु धर बैन बुधारत ताने सयासी भानी है, जानकी भनी।

सर्पादि में स्वार की दृष्टि से मध्यकालीन कविता सामान्य है। जायसी में भी कोई विशेषता दृष्टिगत नहीं होती।

मध्यकालीन बिम्बों में इस बिम्बों की प्रभावता है। जायसी में भी दृष्टिपरक बिम्बों का बाहुल्य है। बावली के बिम्ब की छायात्मकता 'जगदी अपनी विशेषता है, जो किसी अन्य कवि में उपलब्ध नहीं है। सुर और तुलसी में प्रायः रेखाओं का उल्लेख है। सुर में बरों का ब्रज भी मिल जाता है परन्तु तुलसी में उसका सामान्यतः प्रभाव ही है। रीतिकालीन कविता में रंघों का वैविध्य पर्याप्त प्रकट होता है वह सभी रंघों का प्रति संक्षेप और जाणरूप है। परन्तु जायसी का छाया प्रकाश का प्रयोग जगदी अपनी विशेषता है। अन्य संवेदनाओं में मध्यकालीन संवेदनाओं की भांति जायसी का काम्य भी सामान्य है।

३—भाव और बिम्ब

किसी विशेष भाव में बिम्बों की अधिकता और मार्मिकता उच्च भाव के प्रति कवि की विशेष उपकारकता का परिचय देती है। जिध भाव के प्रसंग में कवि अधिक और मार्मिक बिम्ब देता है वही कवि का प्रकृतिस्व भाव होता है। कवि का उसी भाव में अधिक निरक्षर होता है और उसी में कवि का हृदय रमण करता है। इस प्रकार बिम्बों की बहुलता और मार्मिकता कवि की भाव विशेष के प्रति विशेषरूप से चोखक है। मध्यकालीन कविता में बिम्ब बिम्ब कवियों के उपकारक भावों की विविधता का परिचय देता है।

प्रायः सभी कवियों ने इसी प्रकार की मन्त्रों का उल्लेख किया है। मन्त्र की दृष्टि से जायसी के वर्णन भी विशिष्ट नहीं है। मन्त्रकास के अन्वय सभी कवियों की भाँति वह भी इन सामान्य मन्त्र गणों का उल्लेख ही कर पाया है।

ध्वनियों का वैविध्य भी मन्त्रकासीन कविता में कम ही दिखाई पड़ता है। मुख्यतः बावलों के गम्भीर मर्जन नपाड़ो आदि वाच्यों के गम्भीर चोपों की धोर ही इन कवियों की दृष्टि अधिक रही है। जायसी ने पलियों की बोलियों का उल्लेख प्रायः किया है परन्तु वह अनुरात्मक न होने में विशेष सफल नहीं हो पाया है जैसे—

मोर होत बावहि बहबही बोलहि पाँइक एकै तुही ।
 लारी मुबा सो रह बह करहि गिरहि परेबा भी करबरहि ।
 पिब पिब साबं करं पपीहा तुही तुही कह गुइक जीहा ।
 कुहु कुहु कोइस करि राखा भी भिग राख बोल बहु भाखा ।
 बही बही कं महरि पुकारा हरिल किनबं आपनि हारा ।
 कुहकहि मोर तुहावन लया होइ कोराहर बोलहि कावा ।

(२६ २-७)

यहाँ रह बह, करमर कुहु कुहु पीऊ कुहु कुहना प्रायः ध्वनियों है परन्तु वह ध्वनिपरक बिम्बों का उगम रूप नहीं प्रस्तुत करती। तुससी ने भी इसी भाँति ध्वनियों का वर्णन किया है। पंचा सरोवर के वर्णन में वह कहते हैं—

बिगसे सरसित्त नामा रंगा मन्त्र मुपर मूअत बहु मूपा ।
 बोलत लसकुनकट बलहँसा प्रभु बिलोक बनि करत प्रसंसा ।
 तब पससव कुमुनित तब नाला खंभरीक पाठसी कर पाता ।
 सीतल मद सुपंच मुभाऊ संछत बहई मनोहर बाऊ ।

कुह कुह क्यकिस भुग कर्छी, गुम रब सरस ध्यान मुनि बरछी ।^१

यहाँ सरोवर के तट पर जलकमुए, इस कोबल अमर आदि अनेक जीव-जंतुओं की सुखर ध्वनियों का उल्लेख है। प्रायः सभी कवियों में इसी प्रकार के वर्णन हैं। कर्म कट्ट ध्वनियों के प्रति इनकी विशेष रुचि नहीं है। तुससी ने अथवा मुख स्वप्नो में कर्म कट्ट एवं भीषण ध्वनियों की वर्णा की है जैसे—

मल-भद्र, मुकुट-बसकट-साहल लहल
 गुण-बिछरनि बनु बज-डांकी ।

बसन बरि धरनि बिकरत विगस कबहु
 सेव संकुचित संकित विनाकी ।^२

यहाँ हनुमान की मयातक 'हांक' का वर्णन है जिससे तयनीठ हाकर बरती डोलन सयती है और बिलाभा के हाथी बिबाड़ने जपते हैं। जायसी ने भीषण ध्वनियों

१ रामचरितमन्स : अक्षरकवि १ १०७ ।

२ कवितामयी लंकाकांड १ ४४

में केवल मध का पर्यन्त उल्लेख किया है। मुद्रस्पर्शों पर यह ध्वनि बराबर सुनी जा सकती है।

घट्ट घातु के गोसा छुटहि विरि पहार पर्व सब फूटहि।

फूट कोट फूट जत सीता धोररहि बुद्ध बरहि कौसीता।

(५२२ ६७)

समष्टि में जायसी अन्य मध्यकालीन कवियों की भांति ध्वनि के केवल सामान्य हिन्दू ही ब सका है। ध्वनि चित्रों की दृष्टि से मध्यकाल की कविता विविष्ट नहीं है जायसी भी सामान्य ही है। स्वादपरक हिन्दू का वैविध्य भी मध्यकालीन कविता में नहीं मिलता। किसी भी कवि में स्वादों का विषय उल्लेख नहीं किया है। जायसी ने स्वार्थों में मधु के स्वाद का उल्लेख प्रथम नबलों पर किया है। धर्म का उल्लेख समस्त मध्यकालीन कविता में पर्याप्त मिलता है। तुमसी में राम सीता तथा अन्य पात्रों के प्रिय बचनों के लिए धर्म का उल्लेख किया है वहाँ मार्ग में मिलने वाली स्त्रियों के बचनों को भी 'मुधा रसदान कहा मया है।

सुनि तु बर बिन सुबारस साने सयानी जानी है जाननी भली।

समष्टि में स्वाद की दृष्टि से मध्यकालीन कविता सामान्य है। जायसी में भी कोई विशेषता दृष्टिगत नहीं होती।

मध्यकालीन हिन्दू में दृश्य हिन्दू की प्रधानता है। जायसी में भी दृष्टिपरक हिन्दू का बाहुल्य है। जायसी के विरों की छायात्मकता उतनी अपनी विशेषता है जो किसी अन्य कवि में उपलब्ध नहीं है। सूर और तुमसी में प्रायः रसार्थों का उल्लेख है। सूर में रसों का बसव भी मिल जाता है परन्तु तुमसी में उसका सामान्य प्रभाव ही है। रीतिकालीन कविता में रसों का वैविध्य पर्याप्त प्रकट होता है वह सभी रसों के प्रति सचेष्ट और जायसक है। परन्तु जायसी का छाया प्रकाश का प्रयोग उतनी अपनी विशेषता है। अन्य संविदनाओं में मध्यकालीन संविदनाओं की भांति जायसी का काव्य भी सामान्य है।

१—भाव और हिन्दू

किसी विशेष भाव में विरों की अधिकता और मायिकता उस भाव के प्रति कवि की विशेष रागात्मकता का परिचय देती है। जिस भाव के प्रसंग में कवि अधिक और मायिक हिन्दू देता है वही कवि का प्रकृतिक भाव होता है। कवि का उही भाव में अधिक नैकट्य होता है और उही में कवि का हृदय रमन करता है। इस प्रकार विरों की बहुलता और मायिकता कवि की भाव विषय के प्रति विशेषरूप की ओरक है। मध्यकालीन कविता का विर विधान कवियों के रागात्मक भावों की विविधता का परिचय देता है।

तुमसी सूर, जायसी व कबीर सभी भक्तिवादी कवि हैं परन्तु प्रकृतिस्वभाव भिन्न होने से उनके काव्य में अनेक बिम्बगत विभिन्नताएँ पाई गई हैं। कबीर ने सर्वाधिक बिम्ब योजना सम भाव में की है जो उनके रहस्यवादी और संतस्वरूप को प्रकट करती है। उनके बिम्ब सर्वत्र किसी रहस्यात्मक सत्ता प्रकटा किसी सत्य को प्रकट करते हैं। जैसे निम्न उदाहरण में ब्रह्मा-सुम्हिन के बिम्ब द्वारा ब्रह्म और जीव के संबंधों को व्यक्त किया गया है

ब्रह्महनि पाबहु मंपमाचार

हम घर धामे हो राखा राम भरतार ।

तन रत करि में मन रत करहुँ पंच तल बराती ।

रामदेव मोरे पाहुर्न प्राए मैं बोबन मद माती ।

यहाँ बिबाह के पुरे रूपक द्वारा ब्रह्म-जीव के संबंध का स्पष्टीकरण हुआ है। कबीर ने सर्वत्र रहस्य व अध्यात्म के अटिप्त तथ्यों को संप्रेषणीय बनाने के लिए बिम्ब का आशय लिया है। उनके अधिकांश और मार्मिक व अर्थनात्मक बिम्ब ऐसे ही स्वप्नों पर धारण हैं। जो रहस्य और पर्यंत के प्रति उनकी विशेष रागात्मकता का परिचय देते हैं। जायसी ने भी जीवन की कठिनाई आदि का प्रतिपादन बहुत कुछ कबीर के समान ही किया है। जीवन की परिच्छा को वह बुसबुसे और रहस्य की परिया के बिम्ब द्वारा प्रतिपादित करते हैं परन्तु उनका रहस्यवादी कवि का रूप महत्त्वपूर्ण होते हुए भी प्रभाव नहीं है। यही कारण है कि बिम्बों में प्रयुक्त उनके बिम्ब अधिकांश मार्मिक अर्थक व भाषा में भी अधिकांश हैं। बिम्बों ही उनका प्रधान रस है। कबीर और जायसी के अन्वयार्थ विषयक बिम्बों में भिन्नता भी है। कबीर की बिम्ब योजना नाम और छंद साहित्य से बहुत अधिक प्रभावित है अतः उनमें कुछ और एक बिम्ब बराबर प्रयुक्त हुए हैं जबकि जायसी प्रधानतः विधानी होने के कारण सर्वत्र सरस रहें हैं। हठ्याग आदि के उदाहरण उनमें बहुत कम हैं। जायसी और कबीर की रहस्यात्मकता में उनकी बिम्ब योजना के कारण ही अन्तर पाया गया है।

तुलसी मध्यकाल का प्रथम ऐसा कवि है जिसका सभी भावों पर समानाधिकार है। तुलसी ने प्रेम, बुद्धि, शोक, निराशा आदि के सभी स्वरूपों पर उत्कृष्ट और अर्थक बिम्ब योजना की है। फिर भी भक्ति का रस उनमें सबसे महत्त्वपूर्ण है। शृंगार आदि के स्वरूपों पर भी उनका महत्त्वपूर्ण रूप प्रकट हुआ है। उनका प्रकृति वर्णन इसका स्पष्ट संकेत देता है। प्रकृति वर्णन में कवि की दृष्टि उसके सौन्दर्य पर इतनी नहीं रहती, बितनी उससे व्यक्तित्व ज्ञान और भक्ति के संकेत पर। अनेक प्रकृति वर्णनों में उन्होंने ज्ञान और भक्ति-परक बिम्ब दिये हैं। जैसे पद्मा सरोवर के इस वर्णन में—

संत हृदय बस निरजस बारी बाँधे घाट मनोहर बारी ।

बंद तहूँ किमहि बिबिध मृग नीरा बनु उबार सुहूँ जाबक भीरा ।

पुराण सत्य घोट जल बेगि न पाइय मर्म ।

मायाजन्म बेनिर्ण संसे निरगुन बह्य ।^१

यहां वत हृदय वाली के घर याचकों की भीड़ और निगुण बह्य के विचार उनके ज्ञानी स्वरूप को प्रकट करत हैं । जायसी में ऐसी बिब योजना कही नहीं है । वह रहस्यवादी है घट रहस्य और प्रमात्म के संकेत तो उन्होंने बिय पर पांडित्यपूर्ण व भासिक कर्मकांडों से संबंधित बिबों का उनमें प्रभाव है । तुलसी की विनयपत्रिका तो उनके मस्त हृदय का ही उद्गार है । उसकी भासिक और व्यंग्य बिब योजना उनकी भक्तिभाव के प्रति विशेष रागात्मकता की परिचामक है । भक्तिभाव से कवि ने अपने ईश्वर जीवन की प्रसन्न प्रवस्था और प्रभु की महिमा को बहुधा बिब द्वारा ही प्रकट किया है । जैसे

राम रामु रटु राम रामु रटु राम रामु बपु बीहा ।

राम नाम नब मेहु मेघ को मन हठि होहि पपीहा ।

सब सावन-फल रूप सरित-सर-सायर सतिल निरासा ।

राम नाम रति स्वाति-बुबा बुभ सीकर प्रेम पियाता ।^२

५

बाबली नसामो घब न नसीही

रामरुपा नब निबा तिरामी बापी पुनि न रसीही ।^३

भक्ति भाव के यह भासिक और व्यंग्य उपमान तुलसी के मस्त हृदय के प्रमाण हैं । जायसी इस रूप में तुलसी से एकवचन मिले हैं । उनका बह्य तुलसी के बह्य की भांति सखुन न बा ना ही वह भारतीय मर्म साधना से परिचित व घट ईश्वर-प्रद र्थन धारि का उनम प्रभाव है । साथ ही प्रभु के प्रभुत्व का भी प्रभाव है । वह रहस्यवादी पार्थक्य है जो सृष्टि के प्रत्येक क्षण में जबकी अनुभूति करते हैं और उसके विरह में सृष्टि को पीड़ित देखते हैं । यह उनके बिब विज्ञान की भावगत मिलाता है जिसने उनके काव्य को पुष्क पुष्क रूप दिया है । सूरदास भी मस्त कवि हैं । उनमें संयोग—विद्योग की भी प्रधानता है । कृष्ण की रूप माधुरी बाल लीला धारि के उन्होंने प्रमेक व्यंग्य बिब दिये हैं । कृष्ण क रूप वर्णन में बिबों की बहुलता है और विविधता भी । उन्होंने प्रमेक परम्परागत उपमानों का प्रहण किया है साथ ही बहुत से मौलिक उपमान भी दिये हैं । विद्योग का क्षेत्र उनका प्रिय है । प्रभरनीत सूरदास की प्रत्यन्त उत्कृष्ट काव्य कृति है जिसमें गोपियों के विरह को बापी मिली है । गोपियों का विरह वर्णन प्रत्यन्त व्यंग्य और भासिक

१ रामचरितमानस : परस्परकांड ३ ३४४

विनयपत्रिका : १० १४३ अं ३४ ।

३ वहीं, १० १४२ अं १०२

बिम्बों के द्वारा हुआ है। बिम्ब में कृष्ण का मनोहर रूप उनकी तिष्ठुरता और अपमा पुष्प बिम्ब बिम्ब सविदनीय माध्यमों से स्पष्ट हुआ है। गोपियों के बिम्ब में अग्नि के माध्यम से कृष्ण और उज्ज्वल पर किये गये अग्नि के प्राधान्य है। कृष्ण के रूप का अलग अलग सुन्दर बिम्बों में प्रस्तुत हुआ है।

नयनन बहु रूप भी देख्यो ।

तो अयो यह जीवन जग को साधु सफल करि लेख्यो ।

सोचन चाह अपन जंजन मनरजन हृदय हमारे ।

बिचर नमन नु य मीन मनोहर, स्वेत धवन धरु कारे ।

रतन अटित कु उल यजननि बर यह कपोलन हाई ।

मनु दिनकर-प्रतिबिम्ब मुकुन्द यह दू डत यह अवि पाई ।

मुरली धमर बिच्छ भौहँ करि ठाड़े होत बिभंस ।

मुकुन्दमान उर मीमसिद्धर तँ बंसि बरनी क्यो मग ।'

भ्रमर पीठ में अंग्य और उपासकों का प्राधान्य है। अपनी प्रपुर्ण पीठ और कृष्ण की तिष्ठुरता का गोपियों को उन्मत्त करती है। आयसी का बिम्ब वर्णन मूर से भिन्न है। आयसी के बिम्ब वर्णन में प्रियतम के रूप का उन्मत्त कही नहीं है। कारण कि समुल मार्गियों से भिन्न उतना प्रिय निगुल और निराकार है। उसका रूप बिम्ब-रूप स्मरण-समन्वित है इसके विपरीत गोपियों का लज्जित को प्रेमी समुल है। वह निगुल का उपहास तक करती है। आयसी के बिम्ब वर्णन में सम्भवतः अरसी प्रभाव के कारण भी केवल मात्र प्रेमी की बीन-हीन दशा का बिम्ब है प्रिय का नहीं। यह अत्यन्त व्यापक है। मूर के बिम्ब वर्णन में एकाकीपन पीड़ा और मर्मन्तिक व्याथा का बहु रूप नहीं है जो आयसी में है क्योंकि बिम्ब पीड़िता गोपिया अत्यन्त है और वह प्रपुर्ण पीड़ा को व्यक्त करन में अधिक कृष्ण को उपासक होने में रुचि रखती है। आयसी के प्रेम के प्रतीक पतंगा भ्रमर आतक सारम आदि है। मूर में भी इनको दिया है परन्तु वह आयसी की भाँति बिम्बियों से उनका धर्म साम्य नहीं देता परन्तु यह बहुकर 'कि इन्होंने भी प्रीति करके गमती को' वह कृष्ण की तिष्ठुरता और उनके प्रेम को अंगित करता है। इसी कारण गोपियों के बिम्ब में व्यापकता और अन्वयता तो है परन्तु वह बहुराई मर्मन्तिक पीड़ा की वह अनुभूति नहीं जो मरगमती के बिम्ब वर्णन में है। आयसी के बीप की आठिका सरोवर, पतंग भ्रमर, सारस आतक आदि के बिम्ब इस पीड़ा को व्यक्त बनाते हैं। इन बिम्बों के कारण ही आयसी का बिम्ब वर्णन मूरदास से पुष्प और बिम्बित बन गया है।

१ भ्रमरपीठमान १ २१ सं ७२

२ मीन कवि कहु हार म लख्यो

रीतिकामीन कवियों के प्रमुख भाव भी सयोप और वियोग हैं। परन्तु जायसी के विन्धु उन्हें सबसे विशिष्ट बना देते हैं। रीतिकामीन कवियों ने रूप लीन्दवें के घनेक उत्कृष्ट विन्धु रिये हैं उनको नायिका चन्द्र वीप घादि जैसी ज्योतिमयी है। बिहारी ने अपनी नायिका के लिए घनेक उपमान रिये हैं जैसे—

नीकी सखतु तिलार पर टीकी जरिनु बर्राइ ।
छर्बिहि वड़ावतु रबि मनौ सति मंडम में घाइ ।

धीर

सखतु सेत सारो ह्यपी तरम तरयीना काव ।
पदयो मनो सुरसरि सतिम रबि प्रतिबिम्बु बिहान ।

यहां मुख के लिए चन्द्र का उपमान धाया है धीर टीके के लिए मूर्य व घाड़ी से ठके तरयौने (आन के आभूषण) के लिए यमा में प्रतिबिम्बित रबि का चित्र लिया गया है जो व्यंजक व उत्कृष्ट है परन्तु रूप की इस अधिकता में भी जायसी के विन्धु इससे विशिष्ट हैं जायसी ने भी पद्यावली के लिए मूर्य चन्द्र वीपक घादि के विन्धु रिये हैं परन्तु उनमें जो लोकोत्तरता है वह इनमें कहीं मद्यित नहीं होती। जायसी की पद्यावली बहू का प्रतीक है। उसका रूप प्रतीकिक है मूर्य रूप में उसका प्रकाश ही संसार में सबको फैला बिखारी देता है वीपक रूप में वह परती से सकर स्वयं तक सबको जगला बना देती है। इस प्रकार एक ही से विन्धु होने पर भी उनमें प्रबोध की भिन्नता के कारण फरक धा गया है। जूंगारी कवियों का लीन्दव घामल स्कूल है। कहीं-कहीं तो वह उपहासास्पद भी बन गया है जैसे इस बर्धन में रूप की अधिकता से सबैव पुष्पिमा होने की बात कही गई है या लीन्दव के धार से उसक लीने न चम सखने की बात कही गई है।

- (१) यमा ही तिकि पाइयै वा बर के बहु पास ।
मित प्रति नुम्बोई ही रई घामन धोप जगत ।^१
- (२) नुयन भाव संभारिहै क्यों इहि तन मुकुमार ।
सुपे पाइ न पर परत लोभा ही की धार ।^२

जायसी में ऐसी उपहासास्पद उक्तियां कहीं नहीं आई हैं। जायसी का वियोग बर्धन भी इन कवियों से पृथक है। जायसी के बिरह बर्धन में नहूपाई और गम्भीरता है जबकि इन रीतिकामीन कवियों में न नहूपाई है न गम्भीरता। उनका बर्धन बिरह-व्यंजना के लिए नहीं है, उनमें बिरह का भाव और बड़ा हलका-पुलका रूप ही सामने धाया है। बिरह के विन्धु में रूप की लीपता घादि का उत्प्रेष तो है पर गम्भीरता घादि हृदय गत भावनाओं का चित्रण तनिक भी नहीं है। रीतिकामीन

१ बिहारी रत्नाकर : सं १०५ : १०३ प ४६

२ बिहारी रत्नाकर : सं ७३ : १० : ३३

३ वही सं ११४ : १० : १३१

कवियों में बनानेव विरह-वर्णन की दृष्टि से सर्वश्रेष्ठ है। उसकी धनुभूतियां प्रत्यन्त तीव्र और मार्मिक हैं। कवि ने विरह में बायसी की भांति स्वानुभूति का विश्रव किया है। उदाहरण के लिए

बिध मैं बिसाएयो तन कैं बिसासी घापघाएयो ।
 बाय्यो हुतो मम तैं सनेह बसु खेल सो ।
 घब ताकी ब्याल में पजरिबो रे भली भांति ।
 नीके भाहि प्रसह जडेप-भुज सेम सो ।
 एए जड़ि तुरत पखेह सी सकम सुक
 पद्यों घाय घीचक बियोग बैरी खेल सो ।^१

यहा बियोग को उस पत्थर क समान बताया गया है जो संयोग सुख के घनेक पहियों के बीच घचानक घा पड़ा। संयोग के नाश भाव (पत्नी) किससे उड़ गय समाप्त हो गये। पीड़ा की वह धनुभूति बहुत अर्थों में नाममती की विरहानुभूति से मिलती है। नाममती ने भी सरोबर (सुख) के मुलने (समाप्त होने) के साथ ठट पर रहने वाले पहियों (सुख के नाश भावों) के उड़ने (समाप्त होने) का बख्सेल किया है। परन्तु बनानेव के विरह वर्णन में वैयक्तिकता अधिक है। रीतिकामीन कवियों से वह इसीलिए बिलेप रूप से पृथक है। बायसी क विरह वर्णन में ब्यापकता और पहुराई बिलेप है। जिसके कारण वह सभी मध्यकामीन कवियों से पृथक हो जाते हैं।

समष्टि में विन्धगत भावों के आचार पर बायसी का मध्यकामीन विन्ध योजना में प्रमुख स्थान है। उनके प्रधान भाव बियोग संयोग और धम हैं जिनमे वह अन्य कवियों से पृथक और विशिष्ट स्थान रखत है।

(४) धमूरत अथवा मूर्त बिब विधान

मध्यकामीन कवियों में प्रायः सभी कवियों की प्रवृत्ति मूर्तता की ओर है। उन्होंने मूर्त भावों को तो मूर्त रूप दिया ही है, धमूरत भावों का भी मूर्तीकरण किया है। बायसी की प्रवृत्ति भी मूर्तीकरण की ओर है। धमूरत विन्ध विधान यदि प्रांचिक रूप से किसी म है भी तो वह है तुलसी। उन पर भक्ति और ज्ञान आदि का पर्याप्त प्रभाव है जिससे वह स्थल-स्थल पर धमूरत उपमानों के रूप में उन्हें स धाय हैं। मनु और शतक्या के वन प्रस्थान करते समय वह उनके लिए ज्ञान और भक्ति धमूरत उपमाएं देते हैं

बसहि तहां मुनि लिख लभाज, तंह हिय हरिय जलेउ मन राबा ।

पंच बात सोहहि मति बीरा ध्यान भयति अनु धरे सरौरा ।^२

राम की बापत के समय सब मुनियन आदि के प्रस्थान करते समय भी कवि

१ बनानेव-कवि, सं १७

२ रामचरितमाला ४७७

ने ऐसी धमूर्त उपमान योजना की है। वह शाहजहाँ की पवित्रता के कारण बेद-संभ कहता है

बाह्य धर धनेक बिधाना सिन्धिका सुभग सुधासन नामा ।

तिहु बहि बले विप्रवर बुडा अनु तनु धरे सकल मति संबा ।^१

यम महम्मद भरत धबुष्ण के लिए भी कवि धम धम काम भोज धमूर्त उपमान साधा है

रामहि वैसि बरतत लुङ्गानी प्रति क रीत न बात जसामी ।

गुप लमीप लोडहि मुत चारी अनु धनु बरमाहिक धवलतरी ।^२

धम्मद बघरब के चारो पुत्रों को चारो मोत कहा गया है जो धमूर्त उपमा है

साहु समाज तग महिबेबा अनु तनु धरे करहि मुक सैबा ।

सोहत साम तुलय मुत चारी, अनु धपवरय मरत तनुधारी ।^३

तुलसी ने कौक्यी के लिए भी निष्ठुरता का धमूर्त उपमान दिया है कवि कहता है कि कौक्यी के रूप में स्वयं निष्ठुरता धपवर कर बीबी भी बहा राजा के रूप में साक्षात् स्नेह पा—

सास समय सानेव गुप गयेऊ बेकयी गैह ।

मजन निठुरता निरख किय अनु बरि देह सनेह ।^४

यहाँ राजा का भी स्नेह धमूर्त उपमान प्रयुक्त हुआ है। इस प्रकार स्पष्ट है कि तुलसी ने कहीं-कहीं धमूर्त उपमान योजना की है। जायसी में ऐसी उपमान योजना नहीं क बराबर है इन्होंने मृत्यु प्रादि एक दो ही धमूर्त उपमान प्रयुक्त किये हैं।

धम्म मध्यकासीन कवियों की दृष्टि भी मूर्त उपमानों पर अधिक रखी है। धमूर्त उपमानों की परम्परा ही उस काल में नहीं थी और धार्मिक रूप में समुप नकत और धार्मिक मृत (कुछ श्रमारी कवियों के) होने के कारण भी मूर्तकरण की धौर इनका आग्रह धार्मिक है। धमूर्त वस्तुओं को भी इन्होंने मूर्त बनाकर प्रस्तुत किया है जिससे वह दृश्य होने के साथ-साथ सहज प्रेयसीय हो जाती हैं। जायसी ने प्रेम बिरह धाम प्रादि के लिए मनु सरोवर दीपक प्रादि के मूर्त उपमान दिये हैं। कबीर ने रूस्मात्मक तत्त्वों को संश्लेषणीय बनाने के लिए मूर्त उपमानों द्वारा व्यक्त किया है। संसार में जीव की स्थिति वह एक कयबिली के माध्यम से व्यक्त करते हैं जिससे वह सहज प्राण्य हो जाती है

१ राजतरंगिणीसप्त बालकण्ड ५ १०-

२ श्लो. ५ १५५

३- श्लो. ५ ११५

४- श्लो. मयोन्वाच्यं ५० ११५

काहे री नतिनी तु कुम्हसानी तेरे माल सरोबर पानी
जल में उतपति जस में बास जल में नमनी तोर निबास
न जल तपत न ऊपर प्राप तेरे हेत कुछ केसन लाप ।
कहँ कबीर बे उचिह समान ते नहीं मुए हमारे जान ।^१

जीवन की प्रसारता को बुसकुने प्रमात के तारे के मूल उपमानों से व्यक्त किया है। स्पष्टतः कबीर ने धनेक रहस्वपूर्ण धार्मिक तत्वों को बिम्ब द्वारा प्रदर्शित किया है। धम्य कवियों ने भी धर्मूल के लिए मूल उपमान योजना की है।

रीतिकामीन कवियों और भक्तिकामीन कवियों-मयी ने धर्मूल उपमानों का प्रभाव-सा है परन्तु धर्मूल के लिए मूल उपमान उन्होंने पर्याप्त विधे है। माग के लिए सुरदास न जहर का मूल उपमान बार-बार दिया है

लोककानि कुल को भ्रम प्रमु मिति मिलि को धर बन सेली ।
अब तुम धूर सिखावन प्राए, जोग जहर की बेली ।^२

और

मुक्ति भरि जाय जर नहि तिनका सिंह को यह सुभाब रे ।
सबत सुधा-मुरली के पोये जीम जहर न जबाब रे ।^३

योग के लिए 'निर्मल गाठी'^४ ठगरी^५ छेप^६ आदि मूल उपमान भी बराबर दिये हैं। बिहारी बनानंद आदि न भी धर्मूल वस्तुधा के लिए मूल उपमान विधे हैं। बिरह को घनानंद ने ऐसे व्यक्ति का रूप दिया है जो बिरहिनिया से फल लेस रहा है—

पर ही पर बीजद आंचरि बें यह जातिन रग रचाय रहयो ।
भरि नैन द्वियं हरि सुसि संहार सब करि नाक नचाय रहयो ।
घनघानंद वे ब्रह्म योरिनि को नक ते सिख लीं जरचार रहयो ।
लज्जि तुमो सक छित रावरो हृषे बिरहा नित काय मचाय रहयो ।

बिरह को उन्होंने मुख के पशियों के बीच धा पड़ने वाला पत्थर भी कहा है जिससे मुख के सारे पक्षी उड़ गये हैं। महा भी धर्मूल सुध और विभोग के लिए क्रमशः पक्षी और पत्थर का मूल बिम्ब धाया है।^७ घनानंद ने बिरह को समीर और

१. बीजक कबीर

२. अनुरागमय १ १ में ६

३. बड़ी, सं० ३२ पृ ११

४. बड़ी सं० १३१ पृ २२

५. बड़ी, सं २४ पृ ३

६. बड़ी सं ३६ पृ ६

७. घनानंद कवित सं० ७२

८. बड़ी

हृदय को पतन के मूर्त उपमान से भी प्रस्तुत किया है—

बिरह समीर की झकोरनि धपीर नेह—
तीर नीरवो बीच, तऊ बुड़ी सी उड़्यो रहे ।^१

बिरह को बहू-नेह-मदी की विषम लहरों और बिरह दूर करने के प्रयत्नों को कागज की नाव के मूल उपमानों से भी प्रकट करा है—

भए कागज नाव उपाव सबै, धनधानंद नेह-मदी पहरै ।
बिन धान संजीवन कीन हरै सबनी बिरहा विष को लहर ।^२

बनानंद में धमूल का मूर्तीकरण करने की प्रकृति मध्यकालीन सभी कवियों की अपेक्षा अधिक है। यह बनानंद की धीमी का ही एक घण बन गई है। बिहारी मठिराम आदि में धमूल का मूर्तीकरण कम है। कारण कि उनकी दृष्टि स्थूल वस्तुओं पर ही गई है धमूल विषयो प्रेम बिरह आदि का उन्होंने कम दिया है। उनकी दृष्टि मुख्यतः नावक-नायिकाओं पर ही रही है इस कारण धमूल के मूर्तीकरण का प्रश्न ही नहीं उठता। इसके विपरीत बनानंद में धमूल भावों का पर्याप्त वर्णन है इसलिए उनके मूर्तीकरण का प्रयत्न भी बराबर हुआ है जायसी में भी प्रेम बिरह आदि का पर्याप्त वर्णन है जिसके कारण धमूल के मूर्तीकरण की प्रकृति उनमें पर्याप्त प्रसार पा गई है।

मध्यकालीन कवियों में धमूल के मूर्त हिन्दू देवों के धाम-धाम मूर्त के मूल विषय भी बहुत अधिक दिये हैं। रीतिकालीन कवियों की तो यह प्रमुख धीमी है। यद्यपि कहीं कहीं उनमें धमूल उपमान धोखा मिल जाती है जैसे प्रस्तुत स्वप्न पर मठिराम ने 'सुहास' धमूल भाव को 'हुँस' मूर्त उपमान से प्रस्तुत किया है—

रोऊ मनव सो धावन नांन बिबाजं घसाइ की सरस सुहाई ।
प्यारी क बूझत और तिया को प्रबानक भाव लियो रतिकारै ।
धार्ई वनै मुह में हुँसी कोह लिया, पुनि जाप सी नाईं धर्दाई ।
धाँधिन तें गिरे प्रीत के बूँड, सुहास भयो उड़िहंत की नाईं ।^३

परन्तु उनमें मूल की मूल से उपमा देने की प्रकृति ही अधिक है। बनानंद बिहारी देव और सूर तुलसी आदि में ऐसे मूर्त बिर्तों का आहुत्य है। मूल बिर्तों में बनानंद का एक हिन्दू पर्याप्त होगा—

कसबो सबुर लामे काको विष धंग धये
बाहि देल रस हूँ मैं कटुता बलति है ।
बाके एक मुज ही तें काइत बिकार लम
यह सरबन धानि प्राननि बलति है ।
सुबर मुमान बूँ सजीवन तिहारो प्यान
तासीं कोदि मुनी हूँ जहरि सरबति है ।

१ कलानंद कविच, सं १०

२ कवी सं० १२

३ मठिराम बिर्ता संस्करण १। कविचन्द्रा राज में उद्धृत, प ११४

पापिनि इचारी भारी सापिनि निसा बिसारी
 बैरिन बनोकी मोहि बाहन बसत है ।^१

यहाँ मूर्त रात्रि का प्रभाव और रूप के आधार पर नागिन मूर्त बिम्ब दिया गया है। ऐसी उपमान योजना प्रायः सभी कवियों में बहुलता से है। इस प्रकार स्पष्ट है कि मूर्त उपमान योजना मध्यकालीन कविता की सामान्य प्रकृति है। प्रमूर्त उपमान योजना कुछ कवियों में तुलसी में ही मिलती है अन्य कवियों में इसका प्रभाव सा है। प्रमूर्त की मूर्त उपमान योजना भी मुख्यतः जायसी और घनार्थ में ही है जो जायसी के काव्य की विशेषता है। मूर्त की मूर्त उपमान योजना सामान्यतः सभी में है। बामसी में भी पर्याप्त मात्रा में है।

(५) बिम्बगत गुण

बिम्बगत कवियों के आधार पर भी कवि की विशेषता को परखा जा सकता है। बिम्ब के कवियों का स्वरूप विभाजन इस प्रकार है—

(१) व्यञ्जकता (२) उर्ध्वगता (३) तीव्रता (४) गभीरता (५) परिचितता (६) घौषिरय।

(१) व्यञ्जकता—बामसी के बिम्बों की व्यञ्जकता की चर्चा पहले ही छठे अध्याय में हो चुकी है। यहाँ अन्य कवियों के बिम्ब विधान की व्यञ्जकता के सदर्भ में उनके इस बिम्बगत गुण को देखने का प्रयत्न किया जायेगा।

भक्तिकाल के मूर और तुलसी का बिम्ब विधान व्यञ्जकता की दृष्टि से समृद्ध है। मूर ने कृष्ण की बान लीला और रूप दर्शन में ऐसे उपमान दिये हैं जो चित्रारमक तो पर्याप्त है परन्तु व्यञ्जना उनमें अधिक नहीं है। व्यञ्जना की दृष्टि से प्रमर नीत के बिम्ब अत्यन्त सुन्दर हैं। यहाँ बिरह की व्यञ्जना कभी मधुवन कभी काचिरी के माध्यम से की है जिसके कारण उन बिम्बों में पर्याप्त व्यञ्जकता सा गई—

हेतियत काचिरी घति कारी।

कहियो पबिता जाय हरि सों ब्यों भई बिरह सुर जारी।

मानो पसिका वै धरी धरति बंति सुरंग तलक तनु भारी।

तटबाह उपचार चूर मनो स्वद प्रबाह पनारी।

दियमित जब कुस कास भजित मनो पशु कश्यप सारी।

अमर मनो मति भ्रमल चहुँ बिति फिरत है धंग बुजारी।

निरादिन बकई—ध्याज वदत मुझ दिन मानहुँ घनुहारी।

सुरबास प्रभु जो बसुना—गति सो गति भई हमारी।^२

यहाँ यमुना के ध्याज में योपियों की व्यथा को प्रस्तुत किया गया है। यहाँ यमुना का मानवीकरण है जो योपियों के बिरह—विदग्ध रूप को प्रस्तुत करता है। अन्य कवियों में भी व्यञ्जनारम्यता पर्याप्त है।

१ बनारस कवि स ०३

२ अमरगोपार में तुलसी १ ३८, १० १००

गैतिकाल के शृंगारी कवियों में व्यञ्जना तो पर्याप्त है पर हिम्बगत व्यञ्जनात्मकता (सुजेन्टिवनेस) बहुत कम है। उनके हिम्ब अधिकतर धर्मकार्यों के रूप में आये हैं स्वतंत्र या मुहाबरे के रूप में कम। परत हिम्ब केवल हस्यता उत्पन्न करते हैं किसी भाव की उत्कृष्ट व्यञ्जना कम करते हैं। अधिकतर हिम्ब स्पृह सौम्य को प्रतिपादित करते हैं। भाव या किसी महान विचार का संकेत नहीं देते। इस प्रकार आध्यात्मिक की हिम्ब व्यञ्जना की व्यञ्जकता उगकी एक विशेषता प्रतीत होती है। आध्यात्मिक रहस्यवादी है और कथा में प्रतीकारमक धर्म देने के लिए वह प्रायः ऐसे हिम्ब प्रस्तुत करते हैं जो किसी मोक्षोत्तर सत्य की व्यञ्जना करता है। प्रेम प्रसंगों में जहाँ कवि एकत्रम लौकिक है वहाँ भी परिस्थिति आदि के कारण अपूर्ण व्यञ्जनात्मकता धरा गई है। व्यञ्जकता की दृष्टि में समष्टि में मध्यकालीन कविता में आध्यात्मिक का स्वाम महत्त्वपूर्ण है।

उत्तरता - उत्तरता का गुण संक्षिप्तता पर आधारित रहता है आध्यात्मिक में प्रत्यक्ष शब्दों में बिना विधान कराम की प्रवृत्ति है जिसके कारण उसके कवियों में अपूर्ण उत्तरता धरा गई है।

भक्तिकाल के कवि मूर तुलसी आदि में भी उत्तरता पर्याप्त मिलती है। तुलसी ने प्रयोगवादात्मक में कौक्यी और हसरक के प्रसंग में प्रत्यक्ष उत्तर विधियों की सर्जना की है। परिस्थितिकत वैषम्य के कारण धीरे प्रसंग की भासिकता के कारण कवि प्रत्यक्ष उत्कृष्ट बिबो का सर्जन कर सका है उदाहरणार्थ—

आर्यो वीरि भरत रिश भारी मंत्रु रोप तरवारि प्रधारी ।

मृति कुबुद्धि धार निहुराई धरी कुबरो लान बनाई ।

धर्मात् प्रकण्ड क्रोध में जलती कौक्यी तलवार के समान रिखाई दे रही थी जिसकी कुबुद्धि मृत् की निहुरता धार की और जो कुबड़ी कपी धान पर चढ़कर टैक हुई थी। यह बिना प्रत्यक्ष व्यञ्जक है कौक्यी की भासिकता उसकी भयकरता तलवार के रूपक से स्पष्ट है कुबरी कपी धान का उन्मेष करके उसकी परिस्थितियों को भी स्पष्ट कर दिया गया है। रामचरितमानस में परिस्थितियों के सचर्म के कारण उत्तर वर्तमान व्यञ्जना प्रायः हुई है। शृंगारी कवियों के हिम्ब स्पृह होने के कारण अपेक्षाकृत कम उत्तर है। यह वस्तु को हस्यता बना देते हैं पर हस्य पर उत्तका एक धर्मिक प्रभाव नहीं छोड़ते। कुछ ही बिना ऐसे मिलते हैं। बिहारी के इस बोधे में पर्याप्त उत्तरता है

नहिं पराण नहिं मधुर मधु नहिं विकास इहि काल

धर्मि कलि ही लो बंधी धा गैरीन हवाल ।^१

आध्यात्मिक के कवियों में शृंगारी कवियों से अधिक उत्तरता है। मध्यकालीन कवियों में भक्तिकाल के बिना ही अधिक व्यञ्जक और उत्तर है। आध्यात्मिक का बिना विधान भी उत्तरता व व्यञ्जकता के गुण में धीरेप्रतीत है।

१ रामचरितमानस बबोलाकांड, १ ३५६

२ बिहारी रत्नाकर, १० २९ ६० ३८

३—तीव्रता—तीव्रता का गुण बहुत ग्रंथों में व्यंजकता और नवीनता पर आधारित रहता है। संक्षिप्त होने पर विषय प्रायः तीव्र भावाभिव्यक्ति करते हैं। भाव को तीव्रता प्रदान करने में मध्यकास के सभी कवियों ने बिम्ब श्रुताधिक रूप में सफल हैं। परम्परा से मुक्त होने के कारण भवानन्द जायसी और तुलसीदास कवियों में बिम्बगत तीव्रता श्रुतारी कवियों से अधिक है। श्रुतारी कवियों ने प्रधानतः रूप रंग से पुरित स्मृत चित्र दिये हैं जो भाव को अपेक्षणीय बनाकर ठस्कारिक प्रभाव डालते हैं और रूप को दुस्य बना देते हैं परन्तु स्मृत होने के कारण उनमें भाव को तीव्र करने की शक्ति अधिक नहीं है। उनका प्रभाव एक सैडस्केप पेंटिंग को देखकर पढ़ने वाला प्रभाव है जबकि जायसी के बिम्बों का प्रभाव आइडियलिस्टिक पेंटिंग का प्रभाव है।

४—नवीनता—समस्त मध्यकासीन कविता में विषयगत नवीनता अधिक नहीं आई है। सभी कवि परम्पराओं के श्रुताधिक रूप में समर्पक हैं। अपने काव्य में वह प्राचीन उपमाओं का बराबर प्रयोग करते रहे हैं। सूर तुलसीदास सभी में परम्परा प्रस्तुत उपमाग पर्याप्त रूप में मिला जाते हैं। परन्तु उनके प्रयोग के कारण उनमें रोज कता आ गई है। वह प्राचीन होते हुए भी सरस कल्पना से पुरित हैं। सूरदास का पद द्रष्टव्य है—

हरि कू कि बाल-छवि कहीं बरनि
सकल लुक की सीख कोटि मनोद-सोभा-हरनि ।
भुज भुजंग सरोज नैननि बदन विषु मिल सरनि ।
रहे बिबरनि सलिल नम उपमा धपर डुरि डरनि ।
मंजु मैचक जुहुल ननु धनु हरन भुवन भरनि ।
भनहु सुमग सिगार सिमु लख फर्यो प्रबसुल करनि
बसत पद-प्रतिबिम्ब मनि धागय घुटुबनि करनि ।
पुम्य फल धनुमबति मुनहि विलोकि कै मंत्र धरनि ।
सूर प्रभु की उर बारी कलकनि ललित लरसरनि ।

यहां परम्परागत उपमाओं को कवि ने नवीन रूप में प्रस्तुत किया है। इस प्रकार की बिम्ब योजना प्रायः सभी कवियों में है। मध्यकास के कवि परम्परा के पोषक हैं बिद्रोही नहीं। फलतः नवीनता के प्रति उनका बलात् धारण नहीं है। सहज रूप से उनकी कल्पना ने जो सरस रूप निर्माण कर लिया है उसको ही वे स्वीकृत कर लेते हैं। परम्परा से दूर होने के कारण जायसी और भवानन्द में अपेक्षाकृत नवीन रूपमाएं आई हैं। जायसी ने प्राचीन जीवन में प्रितने बिम्ब दिये हैं वह सभी सरस और नवीन हैं। समष्टि में नवीनता की दृष्टि से जायसी सामान्य हैं नवीनता के प्रति उनका धारण बिद्रोह नहीं है।

२. परिचितता—मध्यकाल के सभी कवियों का बिम्ब विधान नवीनता के बजाय प्रायः के प्रमाण के कारण पाठकों के परिचय की सीमा में ही रहा है। उन्होंने प्रायः ऐन उपमान दिए हैं जो हमारे जीवन के बीच से दृष्टिगत हैं जो कवि के साथ साक्षात्क सम्बन्ध रखने के साथ साथ हमारी साक्षात्कता के केन्द्र भी हैं। मध्यकाल के सभी उपमानों में यह गुण पर्याप्त है। जायसी के उपमान भी परिचित हान के कारण विशेष प्रामाण्य हो सके हैं।

३. शीघ्रिय—मध्यकालीन कविता शीघ्रिय गुण से श्रोतप्रिय है। केवल के प्रतिरिक्त श्रम किसी कवि की बिम्ब योजना शीघ्रिय के साथ से प्रसिद्ध नहीं है। मूर, तुमसी बिहारी आदि सभी में बिम्ब के समस्त गुणों का उचित सम्मिश्रण मिलता है। जो उनकी कविता को बिम्बगत शीघ्रिय गुण से परिपूर्ण करके विशेष महत्त्व बना देता है। जायसी में शीघ्रिय का सर्वोच्च बिम्ब विचार हुआ है। भाव शक्ति प्रतीकारमकता सबका विचार उनके बिम्बों में रखा गया है जो शीघ्रिय का स्पष्ट प्रमाण प्रस्तुत करत है।

संक्षेप में बिम्बगत गुणों के आधार पर जायसी का काव्य उनके रूपों में अन्य मध्यकालीन कवियों के समान होते हुए भी विद्यमान है। व्यक्तता उर्ध्वता और तीव्रता का उच्च प्रत्यक्ष मूल्य सम्मिश्रण हुआ है जो अन्य मध्यकालीन कवियों के बिम्ब विधान में उच्चको विद्यमान बना देता है।

समष्टि में मध्यकालीन बिम्ब विधान में जायसी का स्थान विशेष है। इसकी बिम्बों की उपासक वस्तु उसके अपने व्यक्तित्व की प्रकाशक है और उसके व्यक्तित्व की विद्यमानता के साथ साथ उसके बिम्ब विधान भी विद्यमान है। भावों के आधार पर भी जायसी का बिम्ब विधान विद्यमान कहा जा सकता है। उसने प्रेम और विरह भावों में सर्वाधिक शीघ्र शक्ति बिम्ब दिए हैं जो उसके सहृदय प्रेम और कृपा रूप को प्रकट करत हैं। संबन्धनाश की दृष्टि में मध्यकालीन कवियों की शक्ति वह सामान्य ही है। दुर्गम चित्रों की छाया प्रकाशमय योजना उसकी एक प्रथमी विशेषता है जो किसी मध्यकालीन कवि में इतनी स्पष्टता से नहीं मिलती। प्रभुत्व को मूल्य प्रदान करने की विशेषता भी जायसी की प्रथमी है। भावनाओं का विचार करने वाले बनाने जैसे अन्य एक दो कवियों में भी यह गुण है परन्तु मध्यकाल के सभी कवि सामान्यतः नायक-नायिका उच्च सीमित रहें हैं उनकी भावनाओं तक नहीं, इस कारण प्रभुत्व के मूर्त्तिकारण का प्रदान ही नहीं मिली उल्टा है। उनका प्रायः मूर्त्तता के लिए विशेष है। जायसी में भी मूर्त्तता पर पर्याप्त ध्यान दिया गया है। बिम्बगत गुणों का शीघ्रिय पूर्ण आकलन भी जायसी की एक विशेषता है। उसने प्रतीकार लक्ष्यता कथा शक्ति प्रसंग आदि सभी तत्वों की रक्षा करत हुए प्रत्यक्ष भाव व्यक्त उपमानों की योजना की है जो उसकी शीघ्रियप्रद आकलनता का स्पष्ट प्रमाण है। समष्टि में जायसी के व्यक्तित्व की शक्ति मध्यकालीन कविता में उसका बिम्ब विधान विद्यमान प्रकार का है।

जायसी का व्यक्तित्व

कवि के व्यक्तित्व का विस्मयन बाह्य-सादर्यों के आभास पर ही नहीं बरम्बन्तर-साध्यों के आभास पर भी किया जा सकता है। इन अन्तर साध्यों में कवि काव्य में स्वयं को ही प्रस्तुत करता है। उसका जीवन समाज उसकी परिस्थितियों उसके संस्कार, उसके दृष्टि दृष्टान्त-सभी उसके बिम्बों से प्रकट हो जाते हैं। इस प्रकार बिम्बों द्वारा हम कवि के व्यक्तित्व की बड़ी स्पष्ट झलक पा सकते हैं। उसके जीवन का प्रत्येक संभावित रूप उसके बिम्बों में प्रकट हो जाता है। कवि उन्हीं वस्तुओं के चित्र दे सकता है जिसकी उसने जीवन में अनुभूति किया हो। प्रकृति जिसने उस आर्तपित किया हो और जीवन ने किसी सत्य की अनुभूति कराई हो। बिम्ब की अद्विष्टता और मार्मिकता उसके मानस के मार्गों का साक्षात्कार कराती है और उसकी रागात्मक सम्मयता का परिचय देती है। अर्थात् जीवन में उसके स्नेह का प्रसार किन किन क्षेत्रों में कितना कितना हुआ है इसका परिचय उसके बिम्बों द्वारा ही होता है। इस प्रकार कवि के व्यक्तित्व का एक समग्र चित्र बिम्ब द्वारा निर्मित किया जा सकता है। किसी भी कवि के बिम्ब-विधान के अध्ययन से हम उसका आत्मसाक्षात्कार सहज ही कर लेते हैं।

जायसी के बिम्बों में भी उसका व्यक्तित्व निहित है। बिम्ब-विधान के अध्ययन में कवि जायसी का एक चित्र हम कल्पित कर सकते हैं। उसके दृष्टि दृष्टान्तों संस्कारों परंपराओं जीवन स्तर, धारि का अनुमान किया जा सकता है। यहाँ कवि के बिम्बों के अध्ययन से हम उसके व्यक्तित्व के विषय में जो निष्कर्ष निकाल सके हैं उन्हें प्रस्तुत करेंगे।

जायसी के व्यक्तित्व के विषय में उसके आलोचकों में अभी तक कुछ विवेक नहीं मिला है। मुख्यतः सभी आलोचक उसके अरुण-मरण के समय का निरूपण करने में ही व्यस्त रहे हैं। उसके वैयक्तिक मुगों की ओर उनकी दृष्टि नहीं गई है। कुछ आलोचकों ने उसके बहुमुख होने की चर्चा प्रशंस्य की है परन्तु वे भी उसके व्यक्तित्व के विषय में कुछ भी उल्लेखनीय नहीं कह पाए हैं। इस प्रकार जायसी के व्यक्तित्व को समझने में बाह्य सादर्य कोई महत्वपूर्ण योगदान नहीं देते। हम उसके व्यक्तित्व का अनुमान केवल उसकी बिम्बमय कल्पना से आभास पर ही कर सकते हैं।

जायसी अत्यन्त कल्पनाशील और संवेदनशील प्राणी थे। उन्होंने पचासत अक्षरात्मक धादि काव्यों में बिम्बों की एक बड़ी श्रृंखला प्रस्तुत की है जो उनकी कल्पना शीलता का स्पष्ट प्रमाण है। उन्होंने कल्पना के द्वारा अपने प्रत्येक पात्र और प्रत्येक भाव के साथ रागात्मक संबंध स्थापित किया है। जिसके कारण वह प्रत्येक पात्र के अनुभूत और प्रासंगिक बिम्ब विधान कर सका है। जो पात्र की प्रतीकात्मकता अतिरिक्त धादि में योग देने के साथ साथ तथा में भी सहायक होते हैं। प्रत्येक भाव और प्रत्येक स्थान पर मार्मिक और व्यक्तनापूर्ण बिम्ब-योजना उनकी संवेदनशीलता का भी परिचय देती है।

जायसी के विषय में प्रकट होता है कि वह एक सत्य हृदय शायीय प । गाँवों के बुरे वातावरण और उपकरण उनके काम में बहुतजगत् में प्राय है । घोनाती धार मरोबर, रस्ती-बुए मड़ माड म धुमत्त बन रहू की बरिया धारिक रूपक इतने समय है कि किसी धाम-जीवन में धननिष्ठ के लिए वह सबमा मर्दान प्रतीत होते हैं । कवि ने उन्हें इतनी रापात्मकता और उपयुक्तता में प्रस्तुत किया है कि वह सब उसके प्रभुत्व में प्राय और उसके जीवन में बड़ी निकटता से देख गये प्रतीत होते हैं । यह सब प्रकट करता है कि कवि हृदय से शायीय है । वह शायीय जीवन से बहुत अधिक प्रभावित है । शायीय जीवन के लिए उसके हृदय में एक प्रेम है जिसके कारण वह अपने वैदिक जीवन की बस्तुओं को भी सादृश्य के लिए सामा है । जायसी सम्भवत किसी मरोबर (पोखर या झील) के किनारे किसी म्भारकी में छूठ हैंगे । मरोबर के इतने सुन्दर और समय बिना कवि के बहुत निकट जीवन में बड़ी समझता से देखे हुए प्रतीत होते हैं । कवि ने उसे हर मौसम में हर रूप में देखा था । उसका कृता नम बंभार से था जलें बारीक मुसमपता छट पर कसरत करते पसी—नभी उनकी यकी निशट से दली मई बस्तु प्रतीत हुयी है । यह किसी प्रेक्षक (विश्लेषक) की दृष्टि मही बनू बहो के निबानी के धनुनव है । घोनाती-धार उसकी भोरकी के बाहर में उठाई हुई-सी लगती है । शायीय हान के साथ ही जायसी राजसी जीवन से धननिष्ठ भी था । राजबघनों महलों धारि से उसका कोई परिचय नहीं था । उसके काव्य में राजसी जीवन का कोई सामिक विषय नहीं है जो उसकी राजसी जीवन से धननिष्ठता का परिचय देते हैं । कवि ने राजसी जीवन के जो विषय दिये हैं वे धान्य सामान्य हैं या किसी भी साधारण श्रांिक के हो सकते हैं । छनपारी राजा धारि के बिना इसको प्रमाणित करता है । उनके चित्रों में स्व-राज की बटक-मटक का प्रभाव भी उनके सरल शायीय व्यक्तित्व को प्रकट करता है । उनकी राजसी जीवन का केवल सेना के प्रयाप का रूपक सामिक है जो उनके विशिष्ट ज्ञान का परिचय भी देता है । हा सकता है सेना के साथ जायसी का कोई सम्बन्ध रहा हो । सम्भवत सेना में वह कभी रहे हों या वैदिक व्यवहारों को बड़ी निकटता से देखा-सुना हो ।

शायीय होने के साथ साथ जायसी निर्बन भी थे । एक स्थल पर अपनी निर्बनता की उम्हने बड़ी स्पष्ट धनियक्ति की है ।

बहु लक्षि बाहर कवि तोई शैहि सरमुती सजिष्ठ कित होई ।

कविता संम बरिह मति भंगी कोई कटिल रूप के लगी ।

(४४६ ६-७)

धर्मात् पून के साथ कोटा इसी प्रकार हुआ है जैसे कविता के साथ दक्षिण सम्भवत कवि होने से उम्हने कनामात्र में हुआ हो सहा हो और कविता के नियन्त्रण के साथ साथ रहने की यह धारण बनाई हो । यह माण्डता उनकी निर्बनता का स्पष्ट संकेत देती है । काव्य में दोष (ठंडा) के प्रति भी जायसी के हृदय में एक धन

है जो उनसे व्यक्तिगत का बिबलपत्र करता है। उन्होंने प्रत्येक स्थलों पर शीत के मय और उससे बचने के उपाय रूप में सूर्य की गर्मी का उल्लेख किया है।

ऐ बग सूर सीढ मोहे लाया। (५९५, ३)

शीत से मय और उससे बचने का उपाय सूर्य की गर्मी कवि की निर्बलता को व्यक्त करती है। सामान्यतः मय रूपों आदि की व्यवस्था से सम्पन्न किसी व्यक्ति के हृदय में यह मय नहीं समा सकता और न उसको दूर करने के उपाय रूप में सूर्य की गर्मी ही उसे धाड़ुष्ट कर सकती है। सम्पन्न कवि ऐसी बिम्ब योजना नहीं कर सकता। यह बिम्ब उसकी निर्बलता के मुख्य प्रतिबिम्ब है।

निर्बलता की अनुभूति के साथ-साथ कवि ने प्रेम की पीड़ा की अनुभूति भी जीवन में की है। उन्होंने प्रेम को इतना व्यापक रूप दिया है। जो उनके प्रेम भावना के प्रति विशेष धारण को प्रकट करता है। प्रेम को उन्होंने असाध्य मधु कहा है। जिससे प्रेम के साथ पीड़ा की अनिवार्यता भी व्यक्त हुई है क्योंकि मधु को मधु मस्त्रियों के दर्शनों के बाह ही पाया जा सकता है। उनका प्रेम जीवन का सार है। प्रेम बिहीन जीवन को वह 'छर' सद्बुद्धि निर्गमक कहते हैं। उनका प्रेम जीवन की साधना भी है। वह सहज सुखमय भाव भोग विनाश नहीं है। बिरह उसका एक अनिवार्य अंग है। प्रेम का यह साधनात्मक स्वरूप सम्भवतः उन्होंने सूफी सम्प्रदायों से परिचय में आकर प्राप्त किया था। प्रेम की मार्मिकता अनिवार्यता और पीड़ा को यह जीवन में पहले ही अनुभव कर चुके होंगे। बाद में उनका प्रेम-नीहित हृदय सूफी मिठाखों के माध्यम से प्रेम को साधना के अधिक परिष्कृत रूप में व्यक्त कर सका है। प्रेम में बिरह की प्रधानता उनके प्रेम पीर के ज्ञाता रूप को प्रकट करती है। बिरह में उनके सर्वाधिक और मार्मिक बिम्ब आये हैं। जो बिरह में उनके विशेष रागात्मक धारण का संकेत देने हैं। जायसी के बिरह में तो कवि के प्रेम-नीहित हृदय का स्पष्ट सागान्कार ही जाता है। कवि ने इतनी साधनात्मक उन्मत्तता से उसका वर्णन किया है कि वह कवि की स्वानुभूति प्रतीत होगा है। जायसी के बिरह का व्यापक और मार्मिकता कवि के प्रेम-नीहित रूप की स्पष्ट अभिव्यक्ति है। काम्य में उन्होंने पुनर्मिलन के अक्षर को बड़ी मार्मिकता प्रदान की है जो उनकी पीड़ा को प्रकट करती है पुनर्मिलन के अक्षर उस ही विशेष धारण कर सकते हैं जिससे मिलन के पश्चात् बिरह को सहन किया हो अर्थात् बिरह की मार्मिक अनुभूति की ही जीवन में सुख-संघास के भोक्ता को पुनर्मिलन इतना धारणित नहीं कर सकता। शायली ने पुनर्मिलन का कोई स्थान नहीं छोड़ा है मर्याद कल्पना का उल्लेख बीमब वहाँ इच्छित होता है। पुनर्मिलन का उन्होंने धारण बेम के पम्सवित होन, दुःख के बाह्य हट कर धारण के निर्मल होने के अनेक समग्र रूपों द्वारा प्रस्तुत किया है। जो कवि की विरापता है। पुनर्मिलन या तो उग धारण कर सकता है जिससे अक्षर बिरह के बाद इस पुनर् की अनुभूति की हो या मिलन के पश्चात् पुनर्मिलन जिसकी धारणा जिसका स्वप्न रहा ही। जायसी ने लिए दोनों ही रूप

सम्भव हो सकते हैं। जो भी हो जीवन में बिना ही मामिक अनुभूति उन्हें ही यह स्वीकार किया जा सकता है और सूखी सम्प्रदायीयों के क्षेत्र में आकर यह सम्भारण व रहस्यवाद की ओर उन्मुख हो गयी है।

वापसी एक सामिक प्राणी है। निश्चय ही वह भी उन्होंने शान की महिमा को स्वीकार किया है। शान को वह जीवन का दीपक कहते हैं जो घ घरे पप को उज्ज्वल बनाकर जीवन को धानन्द प्रपणा परमानन्द की ओर ल जाता है। उसके प्रकार के प्रभाव में जीवन घ प्रकार-प्रज्ञान और कुर्वतियों में लिप्त हो जाता है। जीवन का मन्दिर्य मन् हो जाता है। निश्चय ही वह भी उनकी यह चारणा उनके बर्नमीय स्वस्य को प्रकट करती है। उनकी सामिकता व सम्प्रदाय विपयक बुद्धता उनकी गुरु-सम्बन्धी माग्यताओं में भी प्रकट हुई है। यह बुद्धता मन्ध काल में सामयिक थी। सूखी सिद्ध-माय नियुक्त सगुण—सभी ने इसे एक मत् से स्वीकार किया था। वापसी ने भी गुरु को जीवन मानर पाण कर देन बासा कर्ण धार कहा है। वह पाप के बारे में समुक्त का नाबिक है।

कार समुक्त व पाप मोर मेला बोहित लीगु धरम कंह बोसा।

उन्हु धोर करिष पौड कर गहा पायड तोर घाड जो घहा।

जो कहु घइस होइ कहुहारा तुरत बेयि सो पावइ पारा। (१० ४ १)

जीवन में गुरु की स्थिति उनके मत में अनिवार्य है। गुरु को दीपक कहकर उन्होंने इन अनिवार्यता को प्रकट किया है। यह विन्धु उनकी सामिकता व साम्प्रदायिकता को प्रकट करते हैं। गुरु की धारण्यकता सामिक या साम्प्रदायिक व्यक्ति को ही माग्य हो सकती है अन्य को नहीं।

वापसी बहुभूत है। जीवन में सम्भवतः वह काफी घूम फिरे व जिससे विभिन्न प्रकार के व्यक्तियों और विभिन्न प्रकार के जीवनों में उनका परिचय हो गया। मुगलमान होत हुए भी उन्होंने अनेक हिन्दू-कथामें वी है जा उनक बहुभूत होने का स्पष्ट प्रमाण देती है। हिन्दू जीवन क प्रति धावर भी इन लोक कथाओं से प्रकट होता है। फिर भी उनका मुसलमानी संस्कार इन कथाओं के बीच भी प्रकट होता रहा है। उनका मुसलमानी संस्कार कई स्वसों पर प्रकट हुआ है। प्रकटि का रूप बर्नन करते समय उन्होंने इस प्रकार का धिज लिया है जिससे उनकी मुसलमानी संस्कृति की म्दकत मिसती है। बसत बर्नन में कवि कहता है।

रितु पावस बरिसँ पिऊ पावा सावन भासँ धनिक सोहावा।

धीतल वू व ऊ व जोबारा हरिधर सब देखइ सतारा। (३३७ १ ५)

यहाँ हरिधर सब देखई मंगारा' उम वर्मक की अनुभूति को व्यक्त करता है जिसका कभी मुसलमानी परम्परा के अनुसार गबासो (छठरी) धारि स बर्पा का धामन्ध लिया हो और पूषी को हरा मरा देला हो। मुगल राज परिवारों में रातिया धारि बर्पा काल में इसी प्रकार पबासों धारि में बैठ कर प्रकृति निरीक्षण करती थी व हरिधर सब देखई मंगारा की अनुभूति भी करती है। वापसी इस परम्परा से

परिचित रहा होगा। यदि उसने इस तरह गवाश में बैठकर वर्षाकाल की वर्षा को न भी देखा होगा तो भी परम्परा से परिचित होने के कारण वह इसकी कल्पना कर सका है। यह मुसलमानी परम्परा उसने अपने हिन्दू-नायक-नायिका पर आरोपित की है जो उनके मुसलमानी संस्कारों के कारण है। इस संस्कार का स्पष्टीकरण पद्यावली के रूप-वर्णन में भी हुआ है। बेनी बघन करता हुआ कवि कहता है ममदागिरि के पीठि सवारी बेनी नाग बड़ा बनु कारी।

सहर बेत पीठि बनु घड़ा बीर घोड़ाबा कबुकि मड़ा। (११५, २३)

यहाँ भीने बस्त्र के नीचे डंकी हुई बेनी को कवि ने कबुकि मड़ा सर्प कहा है। सीम बस्त्र या डशी होने से यह स्पष्ट नहीं दिख रही है। उसकी केवल रेशायें घोर ग ही भासित हो रहे हैं जिससे कवि उनके लिए कंबुमी मड़े सर्प की कल्पना करता है। यहाँ भीने बस्त्रों के नीचे बेनी का यह स्वरूप कवि ने मुख्य दरबारों या राज्य परिवारों की नायिकाओं से लिया है। इस प्रकार के भीने बस्त्र पहनने का प्रचलन हिन्दू समाज में नहीं था। यह परम्परा मुगलों की ही थी। बायसी ने कभी इस प्रकार के रूप का देखा-सुना होगा जो आसानी से उनकी हिन्दू राज्य परिवार की नायिका के लिए कल्पित हो गया है। स्पष्टतः हिन्दू संस्कृति और हिन्दू कथा का ग्रहण करने पर भी उसका मुसलमानी संस्कार उससे काव्य में विन्ध विधान के काव्य में सदैव प्रकट हुआ है।

बायसी जीवन में सौन्दर्य-द्रष्टा रहें हैं। मरु सिव सुन्दरम् की उम्होने अपने काव्य में उचित व्याख्या प्रस्तुत की है फिर भी विन्धों का विद्वेषण करने पर प्रकट होता है कि जीवन में सुन्दरम् का तब उम्हें विद्वेष धारणित करता था। जीवन में सर्वत्र सुन्दर सुसुन्दर और प्रिय रूप की कल्पना ही उम्होने की है। इसी कारण उनके काव्य में भीमत्स और धमुन्दर रूप कही मिलते ही नहीं। सुयचिर्बो कठोर स्वर्गो कषट्टु दाय्यो का उल्लस पूर पद्यावत में कही नहीं हुआ है। उनमें भीमत्स और धृणास्वर वस्तुओं का एकत्रण प्रभाव है। सर्वत्र सुयचि और प्रियता का भाव उनमें प्रधान रहा है। सुन्दर दर्यों मोहक गन्धों मधुर स्वारों व होमल स्वर्गों का ही उनमें उल्लेख है जिससे उनकी परिष्कृत रचि का परिचय मिलता है।

बायसी के व्यक्तित्व की एक विशेषता उनकी गम्भीरता भी है। जीवन में ऊपरी बिलावे धोना प्रदक्षन भूट बाबालता आदि से वह कौता दूर रहे होंगे। उनमें रहस्यवादी होने की एक परिमाण एक उल्लेख है जिसने शृंगार के वृत्तान्तों में भी उन्हें ऊपर उठाए रखा है। उनके शृंगार के विन्ध किसी भीमत्स के भीमत्स जीवन का संकेत नहीं देते बरन् वह उनके उदात्त और उदस्य व्यक्तित्व का परिचय देते हैं। यद्यपि शृंगार में उनका हृदय लूब रमा है परन्तु उद्योग में मित्त नहीं हुआ है उनमें एक उल्लेख है। एक विन्ध के विवेचन से यह प्रकट स्पष्ट हो सकती है। विरानीप रात पद्यावली की व्याकुल स्थिति के लिए कवि ने पद्य पद्य का विन्ध

दिया है—

बीब बस पनि बंठि तरातो सहस कर होइ सुख परासी ।

तेहि क बार पहन बस गही भं निरंग मुख जोति न रही । (३२० × ३)

सूर्य की किरणों (पति क तेज) में उसका सारा रूप समाप्त कर दिया या और धन वह मलिन—ग्रहण ग्रस्त चंद्र की भांति हो गई थी। इसी परिस्थिति का ऐतिहासिक विन्ध सीबिय । बहूँ कमी बहूँ ग्रस्त चंद्र का उल्लेख नहीं है उसकी बयह मरगजी मास या फूल का उपमाग धारा है । मासा या फूल और चंद्र में जीवन से मैक्रेम का अन्तर है । एक जीवन का भोग्य है दूसरा भोग्य । चंद्र में सर्वत्र एक बुरी बनी रहती है वह अप्राप्य है जबकि मासा या फूल जीवन में सहज प्राप्य है । एक विन्ध उदात्ता प्रकृत करता है और दुष्टता सिद्धा । यही उन कवियों के व्यक्तित्व का अन्तर है । भू पार विन्धों में भी जायसी का हृदय सिद्ध गही है । उनके विन्धों में रहस्यवादी कवि की परिभा है । इसी परिभा के कारण वह सदा उष्ण और गम्भीर है । हास्य का कोई स्वतः कोई उपकरण उनके काव्य में नहीं धारा है जिससे प्रतीत होता है कि जीवन क अधिक पहन गम्भीर स्तर पर उनकी दृष्टि थी घटपटापन या कौतुक का हास्य का कारण बन सक उनके व्यक्तित्व में था ही नहीं इसी कारण काव्य में भी उसका प्रभाव है ।

जायसी प्रभावत रहस्यवादी कवि है । उनके काव्य में अत्यन्त क प्रेम का बड़ा प्रसार है । कथा के अतिरिक्त उन्होंने इसके अनेक संकेत भी दिये हैं । उनकी कथा की प्रतीकात्मकता इसके रहस्यवादी रूप को प्रकट करती है । साव ही पद्यावती की विदा धारि के स्थल पर भी उन्होंने अख्यात्मिक के संकेत दिये हैं अथवा मह संके-
तिष्ठा कथा की प्रतीकात्मकता में बाधक हाती है परन्तु इस कवि क रहस्यवादी रूप की स्पष्ट व्याख्या हो जाती है ।

जायसी को रसायन शास्त्र क ज्योतिषशास्त्र में विशेष रुचि थी । दोनों और सुहावे के उपमान इसको मनीमोहि अर्पित कर बत है । पद्यावती क अन्त को उन्होंने रसायन की समोनी प्रक्रिया के माध्यम से स्पष्ट किया है—

अपारति जो रूप बत मंगु, पदमारति के जोर मन छांनु

भं बाहे धरि कथा समोनी मिटी न जाइ लिखी बस होतो । (३० १ २)

रसायन की क्रोश जनित विरक्ति को प्रेम रूप कथन में सीसा मिस जाने क रूपक से अर्पित किया है जो रसायन प्रक्रिया से ही दृष्टित है । ज्योतिष शास्त्र से सम्बन्धित विन्ध भी उनमें पर्याप्त है । ज्ञानों और धारों के विन्ध उन्हें विशेष प्रिय रहे हैं जो ज्योतिष के प्रति कवि की विद्वता का परिचय बते हैं ।

जायसी पर अनेक धार्मिक सम्प्रदायों क प्रभाव भी क वह मुख्यत मूठी के परम्पु नाथ सिद्ध साहित्य लोक साहित्य धारि से भी उन्होंने पर्याप्त ग्रहण किया था । मसनवी ऐसी और प्रतीकात्मकता उन्होंने फारसी साहित्य क प्रभाव से भी है परन्तु सूर्य-चन्द्र धारि के रूपक नाथ और सिद्ध साहित्य के प्रभाव से प्रयुक्त किय

प्रबन्ध परिचित रहा होगा। यदि उसने इस तरह समाज में बैठकर सर्पाकाल की पृथ्वी का न भी देखा हाथा तो भी परम्परा से परिचित होने के कारण वह इसकी कल्पना कर सका है। यह मुसलमानी परम्परा उसने अपने हिन्दू-नायक-नायिका पर आरोपित की है जो उसका मुसलमानी संस्कारों के कारण है। इस संस्कार का स्पष्टीकरण पद्यावली के रूप-वर्णन में भी हुआ है। बेणी बचन करता हुआ कवि कहता है

मलयागिरि के पीठि सवारी वेनी नाप बड़ा बनू कारी ।

सहरं देत पीठि बनू बड़ा धीर घोड़ाबा कबुकि मड़ा । (११५ २-३)

यहाँ भीत बरन के नीच बंधी हुई बेणी को कवि ने कबुकि मड़ा सर्प कहा है। भीत बरन से डभी होने से यह स्पष्ट नहीं दिख रही है। उसकी बेबस रेखायें धीरे धीरे भासित हो रहे हैं जिससे कवि उसके लिए कँचुसी मढ़े सर्प की कल्पना करता है। यहाँ भीत बरन के नीच बंधी का यह स्वल्प कवि ने मुगल दरबारों या राज्य परिवारों की नायिकाओं से लिया है। इस प्रकार के भीते बरन पहलू का प्रचलन हिन्दू समाज में नहीं था। यह परम्परा मुगलों की ही थी। जायसी ने कभी इस प्रकार के रूप को देखा-सुना होगा जो कालांतर में उनकी हिन्दू राज्य परिवार की नायिका के लिए कल्पित हो गया है। स्पष्टतः हिन्दू संस्कृति और हिन्दू रूपा का ग्रहण करने पर भी उसका मुसलमानी संस्कार उसके काव्य में बिम्ब विधान के माध्यम से सबैध प्रकट हुआ है।

जायसी जीवन में मौल्य-रूपा रहू है। नरव छिब सुन्दरम् की उन्होंने अपने काव्य में उचित व्याख्या प्रस्तुत की है। फिर भी बिम्बों का विश्लेषण करन पर प्रकट होता है कि जीवन में सुन्दरम् का उल्लेख उन्हें विशेष प्रार्थित करता था। जीवन में सबैध सुन्दर सुनकर धीरे धीरे प्रिय रूप की कल्पना ही उन्होंने की है। इसी कारण उनका काव्य में भीमत्स और प्रसुन्दर रूप कभी मिलते ही नहीं। बुगन्धियों कठोर स्पर्शों कचकटु दास्यों का उल्लेख पूरे पद्यावली में नहीं हुआ है। उनमें भीमत्स और बुगास्वर वस्तुओं का एकदम प्रभाव है। सबैध सुन्दरि और प्रियता का भाव उनमें प्रधान रहा है। सुन्दर दृश्यों मोहक गन्धों मधुर स्वादों व कोमल स्पर्शों का ही उनमें उल्लेख है जिससे उनकी परिष्कृत रचि का परिचय मिलता है।

जायसी के व्यक्तित्व की एक विशेषता उनकी मन्मीरता भी है। जीवन में ऊपरी निम्नारे प्रोला, प्रबर्धन मूत्र बाबालता आदि से बहू कोशों दूर रहे हान। उनमें रहस्यवादी होने की एक परिभाषा एक उच्छता है जिसने शृंगार के कृताभों में भी उन्हें ऊपर उठाए रखा है। उनमें शृंगार के बिम्ब किसी भोक्ता के भोगलियत जीवन का संकेत नहीं देत बरनू बहू उनका उदात्त और उदात्त व्यक्तित्व का परिचय देने हैं। यहाँ शृंगार में उनका हुबहू पूरा रमा है परन्तु उसमें निष्ठ नहीं हुआ है उनमें एक उच्छता है। एक बिम्ब के विवेचन से यह प्रबिक स्पष्ट हो सकती है। मिलताप रास पद्यावली की व्याकुल विधि के लिए कवि ने पद्य प्रस्त बहू का बिम्ब

दिया है—

बाँध बस ममि बँडि तरासो सहस कर होइ सुख पराती ।

तेहि क बार महन घस यही भे निरग मुल जोति न रही । (३२८-४३)

सूर्य की किरणों (पति के देख) ने उसका सारा रूप समाप्त कर दिया था और अब वह मतिन—ग्रहण प्रसन्न चंद्र की भाँति हो गई थी। इसी परिस्थिति का ऐतिहासिक विन्धु जीविमं । यही कभी ग्रहण प्रसन्न चंद्र का उल्लेख नहीं है उसकी जगह मरमयी मान या फूल का उपमान आया है । माना या फूल और चंद्र में जीवन से नैकद्वय का अंतर है । एक जीवन का योग्य है दूसरा अभोग्य । चंद्र में सर्वत्र एक बूँद बनी रहती है वह अभोग्य है जबकि माना या फूल जीवन में सहज प्राप्य है । एक विन्धु उदात्ता प्रकट करता है और दूसरा लिप्टा । यही उन कवियों के व्यक्तित्व का अंतर है । शू गार विन्धु में भी आगमी का हृदय लिप्ट नहीं है । उनके विन्धु में रहस्यवादी कवि की गरिमा है । इसी गरिमा के कारण वह सदा उच्च और गम्भीर है । हास्य का कोई स्वतः कोई उपकरण उनका काम्य में नहीं आया है जिससे प्रतीत होता है कि जीवन के अधिक महन गम्भीर स्तर पर उनकी दृष्टि थी, घटपटापन या कौतुक या हास्य का कारण बन सक उनके व्यक्तित्व में था ही नहीं इसी कारण काम्य में भी उल्लेख का अभाव है ।

आयती प्रभावण रहस्यवादी कवि है । उनके काम्य में मध्यमत्र के प्रेम का बड़ा प्रसार है । कथा के अतिरिक्त उन्हीं इसके अनेक संकेत भी दिए हैं । उनकी कथा की प्रतीकारत्मकता इसके रहस्यवादी रूप का प्रकट करती है । साथ ही पद्यावली की बिदा आदि के स्वस पर भी उन्होंने अन्वैतिक के संकेत दिए हैं यद्यपि यह अति-तिव्रता कथा की प्रतीकारत्मकता में बाधक जाती है परन्तु इस कवि के अन्वैतिक रूप की स्पष्ट व्याख्या हो जाती है ।

आयती को रसायन घासन व ज्योतिषघासन में विधाय रचि थी । मान और सुहाव के उपमान इसका जलीमाँति व्यक्त कर दत है । वधावती व अग्न का उन्हीं रसायन की सलोनी प्रक्रिया के माध्यम से स्पष्ट किया है—

अपावति जो रूप जत महि, पद्मावति के जोस मन छोरी

मे बाँधे घति कथा सलोनी मिठी व बाँध तिजो बम होनी । (३३-१-२)

रसायन की क्रिया अति विरक्ति को प्रेम रूप कथन में प्रतीति निवृत्त के रूपक से व्यक्त किया है जो रसायन प्रक्रिया से ही प्राप्त है । अन्वैतिक रूप से सम्बन्धित विन्धु भी उनमें पर्याप्त है । मसलों और टारों के विन्धु अन्वैतिक प्रिय रहे हैं जो ज्योतिष के प्रति कवि की विद्वता का परिचय देते हैं ।

आयती पर अनेक आत्मिक अन्वैतिकों के प्रभाव से ही वह स्पष्ट रूप से परन्तु भाव-सिद्ध साहित्य लोक साहित्य आदि में ही उन्हीं अन्वैतिकों के अभाव में मसलों की ही और प्रतीकारत्मकता उन्हीं अन्वैतिकों के अभाव में ही स्पष्ट रूप से आयती आदि के रूपक भाव अन्वैतिकों के अभाव में स्पष्ट रूप से

वे। प्राचीन साहित्यिक परम्पराओं से भी उनका परिचय था। उन्होंने बहुत से प्राचीन उपमाओं को उन्हीं के समय में ज्यों का त्यों प्रयुक्त किया है। इस प्रकार वह एक परम्परा से प्रभावित कवि थे परन्तु मौलिकता का अभाव भी उनमें न था। पसलकी सैमी से उन्होंने प्रतीकारम्ब पद्यति भी परन्तु उसका विकास अपने मौलिक ढंग पर किया। पद्यावली रत्नसेन की कहानी भी यद्यपि उन्होंने साक साहित्य से ग्रहण की थी परन्तु बिम्बों के विभापत्व के आधार पर उनकी पद्यावली एक असीमित पात्र बन गई है। सोन कथाभा में पद्यावली का यह रूप नहीं है। यह कवि की अपनी मौलिकता है। सिद्ध और नाप साहित्य से बहूत बिम्बों (चन्द्र-सूर्य) के लोच जीवम के बिम्बों (कंजाश आदि) में भी यह मौलिकता बराबर परिमिशित होती है। इस प्रकार उनके बिम्ब विधान से स्पष्ट है कि वह परम्परागत होते हुए भी एकदम कविबद्ध नहीं हैं बरन् स्वच्छन्द हैं। परम्परा का प्रयोग उन्होंने मौलिक रूप से किया है जो उनकी बिम्ब योजना को और अधिक व्यञ्जक बना देता है। जायसी के परम्परा प्रस्त इन्द्र के रूप में भी उनकी मौलिकता द्रष्टव्य है। वहाँ जायसी पर पड़े संस्कारों की छाया है पर उसका विकास भी नूतन है। उनसे राजा के संस्कार प्राप्त व परम्परागत रूप इन्द्र को ही नहीं देखा है बरन् वहाँ उनकी कल्पना ने कसास-स्वर्ग का एक सम्पूर्ण चित्र निर्मित कर लिया है जहाँ राधिया अप्सरायें हैं राजमहल स्वर्ग की अट्टमिकाएँ हैं हाथी एरावत हैं घाबि आदि। यह सब कल्पना कवि की मौलिक है। इस प्रकार स्पष्ट है कि यद्यपि कवि परम्पराओं से प्रभावित है पर उसके कारण उसकी प्रतिभा कहीं कुछ टिठ नहीं हुई है परम्पराओं का सम्यक प्रयोग करना कवि जानता है।

बिम्बों के अध्ययन से वह भी स्पष्ट हो जाता है कि जीवन में कवि की पर्याप्त कवि थी। उसने जीवन के प्रत्येक पहलू को बड़ी निकटता से देखा था। सामान्यतः प्रकृति में उस मानवीय जीवन में अधिक आकर्षण किया था। प्रकृति में उस सूर्योदय और सूर्यास्त के दृश्य विशेष प्रिय थे। आकाश की पहल नीमिमा तारा गलों आदि न भी कवि को प्रभावित किया था। बनस्पतों में सताओं और पुष्पों में उसकी विशेष कवि थी। पक्षियों के कसरत से बूझती सतायें उसे विशेष कवि कर होती थी। सरोवर में भी उस बहुत आकर्षित किया है। उसका प्रत्येक रूप उस प्रिय है। शीघ्र में बिलीर्ण तप्त वर्षा में मृगण मिट्टी जलपूरित रूप और तट पर कीड़ा करते पक्षियों का स्वरूप-सभी उसे प्रिय है। पत्तियों में उसकी कवि थी हीरा मोती मूमा आदि उसे रंग और मूल्य के आधार पर आकर्षण करते हैं। पक्षियों में जलपरी उसे विशेष प्रिय थे। सारस कौड़िसा हास आदि उसकी दृष्टि को सबैक आकर्षित करते हैं। पशुओं में उसकी कवि रूप थी पर जंतुओं में उसकी कवि थी। सर्प का वस्त्र उसने बार-बार किया है। नैलपूरों में वह शतरंज को विशेष पसंद करता था। सम्भवतः वह शतरंज के खेल का शरीर रहा हो अथवा किसी खेलकूद में उसकी विशेष कवि नहीं है।

इस प्रकार स्पष्टतः जीवन को अपने पूरी समझता के साथ देखा था उसका प्रत्येक सम्भावित पहलू उसके वाक्य में था गया है।

समष्टि में यह है बिम्ब विधान के माध्यम में जायसी के व्यक्तित्व का स्वरूप।

अध्याय ६

उपसंहार

काव्य एक अनिर्वचनीय सृष्टि है। परन्तु उसमें किस तत्व में अनिर्वचनीयता झमझटा और उपलब्धा निहित है? इस प्रश्न की धारण्यता ने अनेक पार्श्वों मर्तों मायताओं भावि को जन्म दिया। भारतीय द्वितीय और संस्कृत के काव्य समीक्षकों ने पाठक की दृष्टि से इस पर विचार किया और सौन्दर्य धर्मिभ्यक्ति प्रभाव और जीवन मीमांसा को काव्य का प्रमुख तत्व स्वीकार किया। सौन्दर्य के अन्तर्गत धर्मनकारवादी रीतिवादी बन्धोक्तिवादी और धर्मिभ्यक्तिवादी मायताओं को रक्ष सकते हैं। सौन्दर्य को इन सभी ने बाह्य सौन्दर्य के रूप में देखा है। केवल धर्मिभ्यक्ति सम्प्रदाय ही व्यापक सौन्दर्य का बोध कराने में सफल हो सका है। धर्मिभ्यक्ति के अन्तर्गत हम ध्वनि सिद्धान्त को रक्ष सकते हैं। उन्होंने ध्वनि के रूप में वस्तुतः काव्य के बाह्य धर्मिभ्यक्ति धर्मन माया का अध्ययन किया है परन्तु मात्र ये भी वह अनिर्वच्य रूप में सम्बद्ध है। प्रभाव के अन्तर्गत हम रम सम्प्रदाय की यचना कर सकते हैं। उसमें काव्यात्म्य में पाठक की स्थिति को अनिर्वच्यता प्रदान कर उस स्थिति की सम्भावना प्रस्तुत की गई है। वस्तुतः रम सम्प्रदाय काव्य के प्रभाव का ही विस्तार करता है। जीवन मीमांसा को धात्र की संघर्षशील सामाजिक और वैयक्तिक परिस्थितियों ने काव्य-तत्व के रूप में स्वीकृत करवाया है। इसमें हम प्रवृत्तिवादी और प्रयोगवादी मान्यताओं को रक्ष सकते हैं। भारतीय दृष्टि से स्वीकृत यह काव्य तत्व यद्यपि स्पष्ट रूप से बिम्ब की उपयोगिता और अनिर्वच्यता का उल्लेख नहीं करते परन्तु बिम्ब का सम्बन्ध प्रत्येक मायता से रहा है और व्यापक रूप से स्वीकृत रम सिद्धान्त के मूल में ही बिम्ब की मायता रही है। इस प्रकार बिम्ब की अनिर्वच्यता के प्रच्छन्न उल्लेख ही यहाँ मिल सकते हैं। पारश्वात्य समीक्षा में काव्य के चार प्रमुख तत्व—मात्र, विचार, कल्पना और भावा स्वीकार किये गये हैं। तिनको तीन विभागों में रखा जा सकता है मात्र-विचार, कल्पना व भावा। पारश्वात्य समीक्षकों की मायता बाह्य वह मात्रवादी रही हो या धर्मिभ्यक्ति पर चल देती हो कल्पना और बिम्ब विधान के महत्व से प्रचलित है। वहाँ सर्वत्र कल्पना और बिम्ब विधान को काव्य का अनिर्वच्य तत्व स्वीकृत किया गया है। बिम्ब विधान को यहाँ इसी कारण गर्भप्रथम पारश्वात्य समीक्षा में हुई। उन्होंने

स्पष्ट विन्म की अनिवार्यता को स्वीकार किया है। यद्यपि भारतीय और पारश्चात्य दृष्टि में पर्याप्त अंतर रहा है परन्तु विन्म की अनिवार्यता दोनों में अस्ति है। वस्तुतः वही एक ऐसा तत्व है जिसे वेद काद्य समय और जाति की सीमाओं में परे काव्य का एकमात्र प्राण तत्व कहा जा सकता है।

इस रूप में विन्म काव्य का प्राण है उसका महत्त्व निर्विवाद है। विन्म अर्थ का प्रयोग बड़े व्यापक रूप में होता है। मनोविज्ञान और अध्यात्मशास्त्र में होता है। मनाविज्ञान और अध्यात्मशास्त्र में इस पर विशेष चर्चा उपलब्ध है। परन्तु उसका रूप साहित्यिक विन्म से भिन्न है। साहित्यिक विन्म कवि-कल्पना का एक महान् निर्माण है। इसी कारण प्रत्येक रूप के कवियों आलोचकों प्रादि न इसके महत्त्व को स्वीकार किया है। विन्म के स्वरूप के विषय में विद्वानों में स्पृणाधिक मतभेद रहा है। प्रायः सब उससे पूर्य अनुभूतियों एवं काव्यमय भावनाओं का भूर्तीकरण माना है जिसमें ऐतिव्यता अपेक्षित है। भावना सवेग और भावना इसकी अन्य भाव स्वकृतार्थे हैं। यह धनकारों मुहाबगे उपमाओं या इन सबसे पूर्य होकर भी अभिव्यक्त हो सकता है। विन्म में कविपय गुण भी अपेक्षित हैं। उसमें भाव को उसे जित करने की यत्न तीव्र करने की शक्ति तबीयता परिचितता उबरता और यौचित्य अपेक्षित है। इन्हीं गुणों के आधार पर उसका काव्य में महत्त्वपूर्ण स्थान है। विन्म काव्य का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण और उपयोगी तत्व है। इसकी उपयोगिता अथवा उसके काम को हम कई रूपों में बतल सकते हैं। वह काव्य में गहनतात्मकता लाता है उसका अस्वरूप करता है प्रमद्विप्लुता लाता है उसे प्राणवान बनाता है उसमें कम्बडता माना है भाव ही बाह्य वस्तु जगत के साथ कवि के पाठक का भावनात्मक सम्बन्ध स्थापित करता है अमूर्त एवं ममस्पर्शी भावों को अभिव्यक्ति देता है। इस रूप में उसकी महत्ता सबस्वीकृत है। यहां विन्म की निर्माण प्रक्रिया पर दृष्टि जाना भी अनिवार्य एवं स्वाभाविक है। विन्म निर्माण की प्रक्रिया वस्तुतः काव्य निर्माण की प्रक्रिया है। वह कवि के मानसिक पुनर्निर्माण की कहानी है। वह कवि के चेतन और अचेतन मन का निर्माण है। आचार्य शुक्ल न विन्म निर्माण के तीन मोड़ों का उल्लेख किया है वह हैं प्रत्यक्ष रूप विधान स्मृत रूप विधान और कल्पित रूप विधान। इन्हीं को हम प्रत्यक्ष विन्म स्मृत-विन्म और कल्पित विन्म कह सकते हैं। उल्लेखित विन्म ही साहित्यिक विन्म है। प्रत्यक्ष और स्मृति इसके विधान के गोपान हैं। साहित्यिक विन्म की भाषा में चिन्त्रि भी चिन्त्रनीय है। विन्म भाषणा काव्य पदवा वाक्यांशों मयी में प्राप्त हो सकता है। अथवा एक विद्या मंत्रा या विनयन ही विन्म निर्माण में समर्थ होने हैं। इस प्रकार स्पष्ट है कि साहित्यिक विन्म कल्पना का निर्माण होने हुए भी भाषा के आधार की आधारकता रखते हैं। वस्तुतः वह भाषा और भाव के बीच की स्थिति है। जिसे हम व्यापक रूप में कल्पना कह सकते

है। कल्पना ही बिम्ब का निर्माण करती है।

बिम्ब निर्माण कल्पना का एक प्रमुख कार्य है परन्तु इसके इतर भी वह अनेक कार्य करती है उसका रूप बड़ा व्यापक है। कल्पना के विषय में भारतीय साहित्यशास्त्री मौन रहे हैं। राजशेखर न वाचस्पिनी और भावविनी प्रतिभा न ही उस समाहित कर दिया है। संस्कृत समीक्षा में कल्पना पर स्वतन्त्र विचारों का प्रभाव है। कल्पना को पादशास्त्र विद्वानों ने विशेष महत्त्व दिया है। वह एक ऐसी सूक्ष्म शक्ति है जो सरय-नाद्य और धाम्तरिक-का प्रकाशन करती है और काव्य के माबोद्रेक में सहायक होकर नूतन सृष्टि का निर्माण करती है। पादशास्त्र शास्त्रियों ने कल्पना के कई भेद किए हैं काव्यरिज ने उसे प्राथमिक और प्रतिनिधि कल्पना के दो भेदों में विभाजित किया है। इसके प्रतिरिक्त कल्पना का एक धर्म भेद भी है वह है विकल्पना। विकल्पना कल्पना का ही एक धर्म है जिसमें गम्भीरता सबम संयोजन और नियंत्रण कम रहता है। काव्य में कल्पना और विकल्पना दोनों ही बिम्ब निर्माण कर सकती हैं। काव्य में कल्पना के कई कार्य हैं इसका उल्लेख किया जा चुका है। कल्पना के ये कार्य काव्य की कला चरित्र और अभिव्यक्ति से सम्बन्धित हैं। यहाँ हम उसके अभिव्यक्ति में प्रकट होन वाले रूप की ही चर्चा करेंगे। अभिव्यक्ति में वह तीन रूपों में प्रकट होती है वह है बिम्ब प्रतीक और उपमान। यद्यपि यह तीनों कल्पना के ही निर्माण हैं परन्तु समानताएँ होने से धाम-धाम इनमें अनेक असमानताएँ भी हैं। प्रतीक काव्य में विशिष्ट स्थान रखता है। इनका क्षेत्र पर्याप्त व्यापक है। साहित्यिक प्रतीक के विषय में प्रायः सभी विद्वानों ने कुछ न कुछ लिखा है। प्रतीक किसी धर्म्य या धर्म्यक्त सत्ता के दरम और व्यक्त रूप होते हैं। यह नाम उपमान और बिम्ब भी कर सकते हैं बस्तुतः वह उपमान या रूपक के संश्लिष्ट संस्करण ही है। काव्य में प्रतीकों के कई रूप दृष्टिगोचर होते हैं वह परम्परागत और स्वच्छन्द दोनों हो सकते हैं। परन्तु दोनों रूपों में वह धर्म्य और धर्म्य को प्रतिबिम्बित कर हाय व्यक्त और मूर्त बताते हैं। इस रूप में वह बिम्ब के बहुत निकट जा जाते हैं। बस्तुतः प्रतीक मूल में बिम्ब ही होते हैं प्राकृतिक और समय के साथ धाम वह रूप हो जाने पर प्रतीक बन जाते हैं। उनका धर्म्य बिम्ब से ही होता है परन्तु फिर भी वह एक नहीं है उनमें कुछ मौसिक अन्तर है। प्रतीक भारतीय चेतना हाय निर्मित होते हैं जबकि बिम्ब वैयक्तिक चेतना का निर्माण है। प्रतीक का उद्देश्य प्रतिनिधित्व है जबकि बिम्ब का उद्देश्य मूर्तीकरण है। इस प्रकार एक कल्पना के निर्माण होते हुए भी दोनों भिन्न हैं। कल्पना का कुछ ही प्रमुख निर्माण है उपमान। उपमान जो हम समानता का सहज प्रकाशन कह सकते हैं। धाम्य धर्म्य और प्रतिधाम के रूप में धर्म्यमूलक रूप से जो भी हमारे सामने धाम्य जाता है उसे हम उपमान कह सकते हैं। मूर्तता और ऐन्द्रियता उपमानों में भी हो सकती है परन्तु समान उपमान बिम्ब नहीं हो सकते। उपमान का क्षेत्र बिम्ब का क्षेत्र

नहीं है न ही बिम्ब उपमान है। यद्यपि दोनों में पर्याप्त साम्य है परन्तु कछ स्पष्ट अन्तर भी है। उनमें प्रस्तुत-अप्रस्तुत का और भावगत अन्तर है। उपमानों के चार प्रयोग मूर्त के लिए अमूर्त अमूर्त के लिए मूर्त मूर्त के लिए मूर्त और अमूर्त के लिए अमूर्त स्वीकृत हैं परन्तु इनमें सर्वत्र बिम्ब विधान नहीं होता। इसी प्रकार रूप, गुण धर्म प्रभाव और काव्यनिक साम्य में भी सर्वत्र बिम्ब विधान नहीं होता। बिम्ब ऐन्द्रियता और भाव पर आधारित है। उपमान योजना जहाँ भी इन गुणों से पूज्य होती है वही बिम्ब विधान हो जाता है। इस रूप में स्पष्टतः पर्याप्त साम्य गम्यतं हुए भी उपमान और बिम्बों को एक नहीं कहा जा सकता। उपमान रूपक आदि अलंकारों में यद्यपि बिम्ब की सम्भावना रहती है। परन्तु बिम्ब विधान उन्नी प्रतिभाव पर्यत नहीं है। इस प्रकार स्पष्ट है कि कल्पना के अनेक रूपों में पर्याप्त साम्यता और मिलनता है। यद्यपि बिम्ब का दाय बहुत व्यापक है फिर भी वह कल्पना के सभी रूपों से पृथक् है और विशिष्ट है।

बिम्ब विधान का भाव के साथ भी अनिवार्य सम्बन्ध है। भाव वस्तुतः काव्य का प्रधान तत्त्व है। भाव की अभिव्यक्ति ही बिम्ब का जन्म बती है। भावहीन बिम्ब की कल्पना ही असम्भव है। भाव की अस्पष्टता को भी बिम्ब ही रूपायित करता है। भाव की अलम्बता और भाव की प्रेपचीयता की रक्षा भी बिम्ब द्वारा ही होती है। भाव की तन्मयता ही बिम्ब की जन्मदात्री होती है। भावात्मक तन्मयता की स्थिति में ही वही बिम्बविधान करता है। इसलिए बिम्ब विधान कवि के हृदय के निकटतम भाव अर्थात् प्रकृतिस्य भाव का परिचय भी बताता है। वस्तुतः बिम्ब और भाव का सम्बन्ध अग्रगणी का सम्बन्ध है। काव्य में दोनों अयो-व्यापित हैं। भाव की जन्म परिणति रम में भी बिम्ब विधान का महत्वपूर्ण स्थान है। उस सामग्री-विभाव अनु भाव और अभिव्यक्ति भाव के आधार पर बिम्ब की आवश्यक्ता को स्वीकार किया जा सकता है। उस के पूर्व परिपाक का कोई भी स्थल ऐसा नहीं हो सकता जहाँ बिम्ब विधान न हो। इस प्रकार उस और भाव में अभिव्यक्ति के कारण बिम्ब की अनिवार्यता को स्वीकार किया जा सकता है। बिम्ब भाव और भाषा के बीच की मूल्यता है। भाव में जन्म लेकर वह भाषा में अभिव्यक्त होता है। बिम्ब भाषा में भी कुछ विशेषताएँ सा देता है। ये विशेषताएँ हैं रूपकारमकता अकार हीनता अर्थजकता और सरसता। इस प्रकार बिम्ब में भाव और भाषा में सम्बन्ध का स्पष्टीकरण हो जाता है।

जायसी का बिम्ब विधान हमारा प्रमुख विषय है। बिम्ब के सम्बन्ध में इन मूलमूल तत्वों को जानकर अब हम जायसी के बिम्ब विधान का परीक्षण करेंगे। जायसी मध्यकाल के चोखे कवियों में से हैं। उनकी भाषा बिम्ब के प्रयोगों से शोधप्रोत है। उनके पदमावत का आद्ये में अधिक भाग बिम्बारमक भाषा में अभिव्यक्त हुआ है। बिम्ब के प्रति उनमें विशेष रसि है। सम्भवतः काव्य की विभात्मकता में वह

परिचित व इसलिए स्वयं स्वयं पर उम्होंने वाग्म्य के विषयवत् होने के उल्लेख किये हैं। कवि की बिम्ब योजना का विद्वान्-विस्मयेय कई धाराओं पर किया जा सकता है। यही हम सर्वप्रथम उसको बिम्ब योजना का विभिन्न धाराओं पर वर्गीकरण करते हैं।

वर्गीकरण का प्रमुख धारा है उपात्त वस्तु। अर्थात् वह वस्तुएँ जिनको कवि बिम्बविधान के लिए माया है वस्तुतः कवि की उपात्त वस्तु उसके जीवन का मूलर प्रतिबिम्ब होनी है उसकी परिस्थितियाँ रहन सहन जीवन स्तर कवि इष्टान सस्कार सब उसको उपात्त वस्तु से प्रकट हो जाते हैं। उपात्त वस्तु के दो प्रमुख भेद हैं—प्रकृति और प्रकृतीतर जीवन। जायसी ने जीवन से अधिक प्रकृतिते बिम्ब लिए हैं। प्रकृति में जतीय धाकातीय बमस्थसीय पर्वतीय अनिज समय और मौसम जीव-जतु सभी से सम्बन्धित बिम्ब उसमें उपलब्ध है। उनके धाकातीय बिम्बों की बड़ी संख्या और मार्मिकता एक विस्मय की वस्तु है। जीवन में भोक जीवन मानव जीवन विद्याएं लेखनूय सानपान घस्र घस्र— अर्थात् जीवन के सभी सम्भावित पहलुओं पर उनकी दृष्टि गई है। वर्गीकरण का दूसरा धारा है सवेदना जो कवि की सवेदनात्मकता का परिचय देती है। सवेदनाभी में हम दृष्टि, स्पर्श प्राण भ्रमण और स्वाद परक सबेद भाषों को ले सकते हैं। जायसी के दृष्टि परक बिम्ब उसकी विशिष्ट सवेदनात्मकता का संकेत देने हैं। वर्गीकरण का तीसरा धारा है भाव। बिम्ब की अधिकता मार्मिकता और व्यंग्यता उस भाव के प्रति कवि की विशेष रसात्मकता को परिचायक होती है। जायसी के भाषों में हम रति (समाग विषाग) उन्हाहूँ शोब अय धारधर्म शोक राम और निरब को ले सकते हैं। हास्य का उल्लेख जायसी में नहीं है। इनमें रति भाव और विशेषतः विद्येय पर म प्रयुक्त बिम्ब विज्ञान ही अधिक और मार्मिक है जो उनके प्रति कवि की विशेष रसात्मकता का परिचय देता है। वर्गीकरण का चतुर्था धारा है बिम्बों की प्रकृति। कवि बिम्बों का प्रयोग कई कारणों से करता है। बिम्बों के ज्ञान रूप काव्य में मिला सकते हैं। किन्हीं कवियों में मूर्त्तता का धारह विशेष रहता है किसी में अमूर्त्तता का तो कोई अमूर्त्त का मूर्त्तीकरण अपनी हीनी बना सता है। जायसी की भी यही हीनी है यद्यपि उसमें मूर्त्तता का धारह भी है पर अमूर्त्त बिम्ब विधान की प्रकृति नहीं के बराबर है। वर्गीकरण का अन्तिम धारा है अति व्यक्तित्व के रूप अर्थात् भाषा में बिम्ब किस रूप में अभिव्यक्त हुए हैं। अभिव्यक्ति के प्रमुख रूप ये हो सकते हैं—अभिधा सज्जा अलंकार मानवीकरण, मुहावरे व शोकीस्तियाँ और प्रतीक। इनमें जायसी ने प्रायः सभी रूपों का सफल प्रयोग किया है। मानवीकरण की प्रकृति अत्यन्त उच्चमें कम है। इस प्रकार वर्गीकरण से जायसी की बिम्ब योजना के क्षेत्रों और जायसी का एक सम्बन्धन हो सकता है।

इसके अतिरिक्त अन्य अनेक धाराओं पर भी कवि की बिम्ब योजना का परीक्षण हो सकता है। बिम्ब की सफलता असफलता प्रभाव परम्परा धारि इसके द्वारा प्राप्त हो जाती है। जायसी के प्रायः सभी बिम्ब सफल हैं क्योंकि वे अनेक मुद्दा से पूरित हैं। उनकी सफलता के वे गुण हैं उत्तेजकता तीव्रता नवीनता, परिचयता

व्यंजकता औचित्य तथा में योगदान और भावों का प्रकाशन । परन्तु कहीं कहीं बिम्ब योजना असफल भी है जिसका कारण बिम्ब विधान के कतिपय दोष हैं ये दोष हैं भाव अनुपकारिता वक्रिगताता सर्वत्र की उपेक्षा प्रति नवीनता बौद्धिकता और अनौचित्य । कवि एक सामाजिक प्राणी होता है । अपने समाज में प्रचलित परम्पराओं और इतर साहित्यिक परम्पराओं से वह किसी न किसी रूप में प्रबन्ध प्रभावित रहता है । परन्तु साथ ही वह नवीन कल्पना दृष्टि से मुक्त भी होता है । इस कारण उसमें परम्परागत और नवीन दोनों प्रकार की उपमान योजना प्राप्त हो जाती है । जायसी समसामयिक प्रवृत्ति पूर्ववर्ती सिद्ध और नाव साहित्य की परम्पराओं प्रेमा स्वात्मक प्रयोगों की परम्परा पद्यगी मसनवियों की परम्परा व साथ ही प्रचलित साहित्यिक परम्पराओं से श्रुताधिक रूप से प्रभावित था । फलतः उसमें इन सभी परम्पराओं से गृहीत उपमानों की योजना प्राप्त है । किसी का विशेष प्रभाव उस पर दृष्टिगोचर नहीं होता परन्तु प्रत्येक परंपरा से भावों के साथ-साथ कुछ उपमानों का ग्रहण भी उसने कर लिया है । जायसी परंपरा से बहुत प्रभावित नहीं हैं वरन् उनसे दूर और प्रकृष्ट है और उत्कृष्ट कल्पना दृष्टि से संपन्नित है इस कारण उसमें नवीन उपमानों की योजना बहुत अधिक हुई है । उसने अनेक नवीन उपकरणों को सादृश्य के लिए प्रस्तुत किया है जिनमें लोक जीवन से गृहीत उपकरणों का महत्त्वपूर्ण स्थान है । साथ साथ ही उसने प्राचीन उपकरणों व नये प्रयोग करके उनसे नवीन भाव व्यंजना करकर भी नवीनता की सृष्टि की है ।

बिम्बों के वर्गीकरण और परीक्षण के उपरान्त जायसी के भावों और बिम्ब के सम्बन्ध का विचार आवश्यक है क्योंकि भाव या विचार बिम्ब की एक अनिवार्य आवश्यकताएँ हैं । कवि बिशिष्ट स्वभावों पर ही बिम्बों का प्रयोग करता है तथा और सर्वत्र नहीं जिसका कारण होता है उस स्वभाव के भाव विचार या वस्तु के प्रति कवि की समात्मकता जो उसके जीवन का नकेल देती है । जायसी में संयोग वियोग सौन्दर्य प्रादि के विशेष स्वभावों पर ही बिम्ब विधान किया है तथा और सबत्र नहीं । उनके बिम्ब विधान के स्वभाव उनके प्रेम पीर के हाथा व सुफी साधक और सहायक कवि के रूप को स्पष्ट प्रदर्शित करत हैं । जायसी को अनेक रूपक विशेष प्रिय हैं उनका उसने बार-बार उन्हीं विचारों के सम्बन्ध में उल्लेख किया है । और अपनी उत्कृष्ट कल्पना से उनका व्यापक रूप प्रस्तुत किया है जो विचारों प्रवृत्ति भावों से भी परिपक्व है । ऐसे बिम्ब हैं चन्द्र-सूर्य ज्योति कमल इन्द्र सरोवर प्रादि के । जो कवि की मूर्ध्म परिदृष्टि में दृष्टान्त कल्पना के साथ-साथ उसकी बौद्धिकता भावकता एवं धार्मिकता का स्पष्ट परिचय देते हैं । ये परम्परित बिम्ब जायसी के विभिन्न ज्ञान और बिशिष्ट कल्पना दृष्टि के परिचायक हैं । बिम्बों द्वारा कवि जायसी ने अपने विचारों भावों और सिद्धान्तों का प्रकाशन भी किया है । भावों प्रादि के प्रकाशक यह बिम्ब उनके प्रति कवि की विशेष दृष्टि को प्रकट करते हैं । उनके इस रूप को स्पष्ट कर देते हैं जिसकी कल्पना

कवि ने की है। जायसी के बिम्बों के माध्यम से उनके गुरु प्रेम सत्कार, ईश्वर, जीवदान, द्रव्य धारि के प्रति विचारों का अध्ययन किया गया है और जायसी के दृष्टिकोण को स्पष्ट किया गया है। बिम्ब एवं भावों के सम्बन्ध विचार का प्रयत्न सोपान है पद्यात्मक की सांकेतिकता और पद्यात्मक का बिम्ब विधान। यहाँ पद्यात्मक कवियों के लिए प्रयुक्त बिम्ब विधान के आधार पर उनके प्रति जायसी के दृष्टिकोण और उनकी सांकेतिकता को परखने का प्रयास किया गया है। उसके पार्श्व-पद्यात्मकी रत्नसेन नायमती रामन चेतन धमाउड़ीग धारि की सांकेतिकता किन्हीं भावों में उनके बिम्बों द्वारा सिद्ध हो जाती है फिर भी उसकी प्रवस्था संश्लेष है। सम्भवतः सांकेतिकता की यह कल्पना कवि के मानस में की जिस वह किन्हीं कारणों से पूरा नहीं कर पाया है। जायसी के विचारों तथा एक बिम्ब का सम्बन्ध इस प्रतीकारण-कता का कोई विशेष निष्कर्ष नहीं निकाल सका है।

इस अध्ययन से जायसी के बिम्ब विधान की उत्कृष्टता प्रकट हो जाती है। वस्तुतः मध्यकालीन सभी कवियों में उनका बिम्ब विधान विशिष्ट है। मध्यकाल के प्रमुख कवि हैं कबीर मूर तुलसी बिहारी देव मठिराम और बनारस। इन्हीं की तुलना में जायसी के बिम्ब विधान का विश्लेषण किया गया है। तुलना के आधार हैं—बिम्बों की उत्पत्ति वस्तु, बिम्बगत संवेचना बिम्ब और भाव समुच्चय तथा मूर्त बिम्ब विधान व बिम्बगत मूल। इन सभी आधारों पर जायसी का बिम्ब विधान उसके व्यक्तित्व के अनुसार सभी मध्यकालीन कवियों से पृथक् प्रतीक होता है। उसका जीवन उसके बिम्ब विधान में निहित है। जिसके कारण एक युग के कवि होकर पर भी मूर तुलसी बिहारी बनारस धारि से उसका बिम्ब विधान विशिष्ट प्रकार का है।

इस प्रकार जायसी के बिम्ब विधान से हम उसके स्वरूप पर्याप्त व्यक्तित्व की भी कल्पना कर सकते हैं। अन्तिम अध्याय का दूसरा भाग जायसी के व्यक्तित्व को स्पष्ट करने का एक प्रयास है।

सहायक पुस्तक-सूची

हिन्दी ग्रन्थ

१	ग्रंथम	समाज और साहित्य
२	ग्रन्थेय स० ह्री० वात्स्यायन	छार सप्तक (सम्पादित)
३		दूसरा सप्तक (स०)
४		काव्य संग्रह (स०)
५		चिन्ता
६		हरी वास पर क्षण भर
७		घरी धी ककना प्रभामय
८		त्रिस्तम्भ
९	प्रद्युम्न डा. रामदेव घरण	पद्मावत मूक और सबीबनी टीका (सं व्यायन (स०)
१०		
११	उपाध्याय बलदेव प्रसाद	भारतीय साहित्य शास्त्र
१२	कुलभेठ डा. कमल	हिन्दी प्रेमाध्यात्मक काव्य
१३		मलिक मोहम्मद जायसी
१४	केवल	रामचन्द्रिका
१५	गुप्त माता प्रसाद	पद्मावत (सं०)
१६	"	मनुमानठी (सं०)
१७	गुप्त मधिसीघरण	साकेत
१८	गुप्त लीलाचर	पाश्चात्य भाषाभाषा के सिद्धांत
१९	गुप्ता डा. धारा	अड़ी वाली काव्य में प्रामिष्यजना सिद्ध
२०	गुप्ता डा० सुरेश	प्राचिनिक हिन्दी कवियों के काव्य सिद्धांत
२१	चतुर्वेदी परमुराम	मूफ़ी काव्य संग्रह (सं०)
२२	"	उत्तर भारत की मूल परम्परा
२३	चतुर्वेदी माकनलाल	साहित्य देवता
२४	अयदेव	मूफ़ी महाकवि जायसी

सहायक पुस्तक-सूची

- २५ तिवारी रामपूजन
 २६ तुलसी
 २७ बास ब्यामसुन्दर
 २८
 २९ दिनकर
 ३०
 ३१
 ३२
 ३३
 ३४ द्विवेदी महावीर प्रसाद
 ३५
 ३६ द्विवेदी हजायी प्रसाद
 ३७
 ३८ बीकित डा० भानन्द प्रसाद
 ३९ नगेश्वर
 ४०
 ४१ नरपति नाथ
 ४२ नायायन बास
 ४३ निराला
 ४४
 ४५ गीरज
 ४६
 ४७
 ४८
 ४९ पंत सुमिबानन्द
 ५०
 ५१
 ५२ प्रसाद अर्पाकर
 ५३
 ५४ प्रसाद बिहबलाच
 ५५ पाठक, सिवसहाय
 ५६ पांडेय अग्रवासी

- सूची मठ साधना धीर साहित्य
 रामचरित मानस
 कबीर प्रत्यावसी (स)
 साहित्यालोचन
 काव्य की भूमिका
 मिट्टी की धोर
 ब्रह्मनाम
 उबर्सी
 प्रबं नारीबन्ध
 प्राचीन पण्डित धीर कवि
 प्रसोक के फूल
 सिद्धों धीर नाथों की बानिया (स)
 कबीर
 रस सिद्धांत स्वल्प-विहलेपम
 भारतीय काव्यशास्त्र की परम्परा
 रीतिकाल की भूमिका
 बीसलदेव रासो
 छिटाई बाटी (सं०)
 अथवा
 परिमल
 दर्ब दिया है ।
 बाबर बरस मयो
 मीठ भी अमीठ भी
 प्राण गीत
 पस्तक
 गुन्धम
 पानुनिक कवि भाग—२
 कामायनी
 धांसू
 अनान्द कवित (सं०)
 पद्मावत का काव्य सीमर्यं
 तसम्पुठ धीर सूफीमत

५७	फिराक गोरखपुरी	उर्दू कविता पर बात चीत
५८	बङ्गवान पीताम्बरदास	Nirguna shcool of Hindi poetry
५९		गोरखवाणी
६०	भारती बर्मबीर	प्रगतिवाद एक समीक्षा
६१		चिन्त साहित्य
६२	माधुर गिरिजा कुमार	बूप के बान
६३	निध पण्डित रामवहिन	काव्य में अप्रस्तुत योजना
६४	रत्नाकर, जगन्नाथदास	बिहारी रत्नाकर
६५		उद्भव-सतक
६६	बर्मा भगवती चरण	भैसा-भाड़ी
६७	बर्मा महादेवी	अपवा
६८	बर्मा रामकुमार	साहित्य शास्त्र
६९	"	धार्मिक कवि भाग—३
७०	बर्मा लक्ष्मीकांत	नई कविता के प्रतिमान
७१	बर्मा सत्य जीवन	चित्रावली (सं०)
७२	बियोमीहुरि	विनय पत्रिका (सं०)
७३	बर्मा हरिदासीदास	काव्य और कला
७४	बर्मा डा० प्रोम प्रकाश	हिन्दी प्रसंगकार साहित्य
७५	सुक्त रामचन्द्र	गोस्वामी तुलसीदास
७६		चिन्तामणि
७७		रस मीमांसा
७८	"	अमर गीत की सूचिका (सं०)
७९	"	जायसी धन्वावली (सं०)
८०	"	त्रिवेणी
८१	"	सीतावली (सं०)
८२	"	हिन्दी साहित्य का इतिहास
८३	सुक्त डा० सरला	हिन्दी सूफ़ी कवि और काव्य (जायसी के परंबर्ती)
८४	सरदेन्द्र	कला कल्पना और साहित्य
८५	सांस्कृत्यापन राहुल	धार्मिक काव्य बाण
८६	सिन्हा डा० सावित्री	ब्रजभाषा के कवियों का अधिष्ठातृजीवना चित्त

सहायक पुस्तक सूची

- ८७ सिंह, केदारनाथ
 ८८ सिंह, रामसात
 ८९ सिंह धम्मूनाथ
 ९० सुमन
 ९१ हरिऔध
 ९२ श्रीवास्तव डा० हरिकान्त
 ९३ त्रिपाठी डा० जगदीश नारायण
 ९४ त्रिपाठी रामनरेश

- १ इषाम
 २ प्रबलिका
 ३ नई कविता
 ४ हिन्दी साहित्य कोष

- ५ देवत रानी विद्या झा
 ६ मल्ला प्रल प्रगवर
 ७ सिंघर प्रल धीनिया

- 1 Armstrong E.A.
 2 Barfeld Owen
 3 Bartlett
 4 Bowra, C.M
 5
 6 Brooks and Warren
 7 Brown Stephen J
 8 Browns, C.G
 9 Caudwell, C
 10 Clemmen W H
 11 Coleridge S. T
 12 Chifari Joseph
 13 Eliot TS
 14 Furlong ET
 15 Fogle R.H
 16
 17
 18 Ghiselin B
 19 Gibran, Khalil
 20 Gohean Robert F

४३९

कल्पना धीर छायावाच
 समीक्षा बर्षान
 छायावाच मुग
 माल भूमर
 रस कसय
 भारतीय प्रेमाभ्यासक काव्य
 प्राथमिक हिन्दी कविता में प्रसंकार
 विधान
 कविता कौमुदी

पत्रिकायें

उद्गू ग्रन्थ
 सुसरो

" BIBLIOGRAPHY

Shakespeare's Imagination.
 Poetic Diction
 Remembering
 Inspiration and Poetry
 Romantic Imagination
 Understanding poetry
 The World of Imagery
 The literary History of Persia
 Illusion and Reality
 The development of Shakespeare's
 Imagery
 Statesman's Manual (complete work)
 Biographia Literaria
 Realism and Imagination
 Selected Essays
 Uses of poetry and criticism.
 Imagination
 The Imagery of Keats and Shelley
 The Creative Process.
 Jesus the son of man.
 The Imagery of Sophocles's Antigone

- | | | |
|-----|--------------------------|--|
| 21 | Holmes, Elizabeth | Aspects of Elizabethan Imagery |
| 22. | Houser Arnold | Symbols and Values. |
| 23. | Hudson | Introduction to the Study of Literature |
| 24 | Hughes G | Imagism and Imagists |
| 25. | Hulme T E | Speculation |
| 26 | Hunt, J H L. | An answer to the question what is poetry |
| 27 | Kenneth Barnes | The Creative Imagination |
| 28 | Kermode Franko | Romantic Image |
| 29 | Lewis C Day | The Poetic Image |
| 30 | Lowes | The Road to Nanadu |
| 31 | Mascall E L. | Words and Images |
| 32. | Murry J M | Prbl m of Style |
| 33 | Pear T H | The place of imagery in Mental process. |
| 34 | Perry Bliss. | The Study of poetry |
| 35. | Pound Ezra | Make it New |
| 36. | Raghavan | Some Concepts on Alankar Shastra |
| 37 | Richards I A | Philosophy of Rhetoric. |
| 38. | " | Principles of Literary Criticism |
| 39 | " | Coleridge on Imagination. |
| 40 | Rosenthal and Smith | Exploring poetry |
| 41 | Sartre Jean Paul | The psychology of Imagination |
| 42. | Shipley Joseph T | Dictionary of World Literature |
| 43. | Shireph A G | Padmavati |
| 44 | Singh J B | A critical study of Shelley's Imagery and revaluation of his poetic arts (original thesis) |
| 46. | Spurgeon C.F | Shakespeare's Imagery and what it tells to us |
| 46. | Tindall, William | The literary symbol |
| 47 | Tolstoy Leo | What is Art |
| 48. | Tuve Rosemound | Images and themes in five poems in Milton. |
| 49 | " | Elizabethan and Mytaphisical Imagery |
| 50 | Underhill, C. | Mysticism |
| 51 | Urban W H. | Language and Reality |
| 52. | Weilck and Warren | Theory of Literature. |
| 53 | Whelley George | Poetic Process |
| 54 | Wordsworth | English Critical Essays, 19th Century |
| 55 | " | Poetical Works. |
| 56. | Encyclopaedia Britannica | Volume 12 14 14 21 |
| 57 | New English Dictionary | |

